गुणस्थान

शिबिर

-: वक्ता एवं लेखक :-

पं. दिनेशभाई शहा

एम.ए., एल.एल.बी.

-: संपादक :-

डॉ. श्रीमती उज्ज्वला दि. शहा

एम.बी.बी.एस., डी.सी.एच., डी.जी.पी.

-: प्रकाशक :-

वीतरागवाणीप्रकाशक

१५७/९, निर्मला निवास, सायन (पूर्व), मुंबई - ४०००२२.

टेलिफोन : ९७५७३ ९३६३७

Website : http://www.jainsiddhant.org

Mobile Application : JainSiddhant

गुणस्थान
शिबिर

प्रथम संस्करण **२६ जनवरी २०२४** **१००० प्रत**

-: प्राप्तिस्थान :-

वीतरागवाणीप्रकाशक

१५७/९, निर्मला निवास, सायन (पूर्व), मुंबई - ४०००२२.

टेलिफोन : ९७५७३ ९३६३७

हमारे प्रकाशन

१) जैनतत्त्व परिचय	- मराठी, हिन्दी, गुजराती, इंग्लिश	२५/-
२) जिनागम का कारण-कार्य रहस्य	- मराठी, हिन्दी, गुजराती, इंग्लिश	२५/-
३) करणानुयोग परिचय	- मराठी, हिन्दी, गुजराती	२५/-
४) पंचलब्धि	- मराठी, हिन्दी, गुजराती	२५/-
५) भक्तामर स्तोत्र प्रवचन	- मराठी	१५/-
६) स्वानुभव	- मराठी	६/-
७) परमात्मा कसे बनाल !	- मराठी	६/-
८) सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड एवं अर्थसंदृष्टि	- हिन्दी	१५०/-
९) सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड एवं अर्थसंदृष्टि	- हिन्दी	१५०/-
१०) सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका लब्धिसार-क्षपणासार एवं अर्थसंदृष्टि	- हिन्दी	१००/-
११) सर्वज्ञप्रणीत जैन भूगोल	-हिन्दी, गुजराती	५०/-
१२) सर्वज्ञकथित जैन सिद्धान्त (भाग १ और २)	- हिन्दी	२५०/-
१३) पंच परावर्तन	- हिन्दी	१५०/-
१४) गोम्मटसार कर्मकाण्ड शिबिर (भाग १ और २)	- हिन्दी	३५०/-
१५) गुणस्थान शिबिर	- हिन्दी	२००/-

मूल्य रु. २००/-

'उज्ज्वल' टीम - समय समर्पण

		निशा शेठ, अहमदाबाद	स्क्राइबर, प्रूफ रीडर, प्रबंधक
राजीव जैन, दिल्ली	स्क्राइबर, प्रूफ रीडर	पिनांग शाह, कोयम्बतूर	स्क्राइबर
सुषमा चाणेकर, नासिक	स्क्राइबर, प्रूफ रीडर	डॉ. कल्पना शाह, मुंबई	स्क्राइबर

-: दातारों की नामावलि :-

१०२००० विक्रम और हेतल शाह, नैरोबी
१००००० विवेक और खुशबू जैन, जयपुर
१००००० प्रवीण रहाटे, ऑस्ट्रेलिया
१००००० प्रशांत दोशी, पुणे
३५००० कुंथुकुमार शांतिनाथ मेहता, नेरूल
२१००० निशा जिनेश शेठ, अहमदाबाद
१५००० सुमेरचंद बेलोकर, खारघर
६००० आशा गाला, मुंबई
५१०० राजीव और अलका जैन, दिल्ली
५१०० नरेश मोता, मुंबई
५१०० विनीता जैन, उदयपुर
५००१ प्रवीण अंबेकर, चिखली
५००० पिनांग शाह, मुंबई/कोयम्बतूर
५००० नीता डेढिया, मुंबई
५००० श्रीपाल पारेख, मुंबई
५००० एक मुमुक्षु हस्ते गौतम जोधपुर
५००० सतीश और भारती बेलोकर, चिखली
५००० प्रभावती कृष्णा उखळकर, अहमदनगर
५००० मीना नंदकुमार फडे, अकलुज
५००० निमिषा जनकभाई शाह, वसई
५००० चेतन दोशी, नातेपुते
५००० सुनीता किरण सावला USA हस्ते टिकू
५००० तुषार और कीर्ति देसाई
५००० गीता गांगजी गाला, देवलाली
५००० शीलारानी रमेशचंद्र जैन, बड़ौदा
३९०० ताराबेन छगनलाल जैन, मुंबई
३१०० भोपाल मुमुक्षु समाज, ह. अशोक जैन
३१०० सुषमा दिगम्बर, होशंगाबाद
३००० अनुजा वृषल गांधी, पंढरपुर
३००० वृषभ संजय दोशी, अकलुज
२९०० रंजना जैन, भोपाल
२८०० भावेश महेता, अहमदाबाद
२५०० अे. पी. घिया, राजकोट
२२०० नरेन्द्रकुमार जैन, फरीदाबाद
२१०० क्रिशिता हार्दिक वधानी, वसई
२१०० नरेन्द्र दालावत, उदयपुर
२१०० मंजू जैन, भोपाल
२१०० स्व. सुरेशचंद सिंघई, भोपाल
२१०० विधान प्रिन्स जैन, भोपाल
२००० आराधना जैन, भोपाल
१९०० विजयालक्ष्मी जैन, होशंगाबाद
१५०० सत्पाल जैन, भोपाल
११०० सुषमा और पी. सी. जैन, भोपाल
१००० शुभकुमार जैन, भोपाल
११०० विजयकुमार फडे, पंढरपुर
११०० राजेश दोशी, मुंबई
११०० ऊर्मिला जैन, भोपाल
११०० सीमा सोगानी, इंदौर
१००१ मंगला सुरेश गांधी, सोलापुर
१००० आशा सिंघई, चित्तौढ़गड
१००० प्रतिभा रवीन्द्रकुमार दोशी, पुणे
१००० साधना जवाहर गांधी, नातेपुते
५०० दीपाली जैन, भोपाल
५०० राजश्री सुकुमार गांधी, नातेपुते

मनोगत

आदरणीय पं. दिनेशभाईजी शहा एवं डॉ. उज्ज्वलाजी शहा द्वारा देवलाली शिबिर में पढ़ाये गये जैनधर्म के मूलभूत सिद्धान्तों एवं करणानुयोग के जटिल विषयों को पुस्तकरूप देने की श्रृंखला में 'गुणस्थान शिबिर' पुस्तक का कार्य पूर्ण होने पर अत्यंत हर्ष हो रहा है।

'उज्ज्वल' टीम के राजीवजी, पिनांगजी, सुषमाजी और डॉ. कल्पनाजी ने बहुत ही कम समय में कार्य पूरा किया है। पिनांगजी तो सारे प्रवचन अकेले ही स्क्राइब करना चाहते थे ! यह विषय ही इतना रोचक है क्योंकि संपूर्ण मोक्षमार्ग जैसे प्रत्यक्ष दिखता है। राजीवजी ने स्क्राइब एवं प्रूफ रीडिंग के लिये अपना पूरा योगदान दिया है। सुषमाजी ने लब्धिसार-क्षपणासार स्क्राइब टीम को मार्गदर्शन देने के साथ-साथ प्रूफ रीडिंग का काम किया है। डॉ. कल्पनाजी ने भी अपना स्क्राइब बहुत जल्दी पूरा किया है। आपके स्टुडंट्स का आपके प्रति आदरभाव और समर्पण अद्वितीय है !

आ. पंडितजी की पढ़ाने की शैली बहुत ही सरल परंतु अत्यंत मार्मिक है। छोटी-छोटी वार्ता-कथाओं के माध्यम से हमारी कहां कौनसी भूल हो रही है, अपने लक्ष्य की और चलने का क्या तरीका है आदि बातें बिलकुल सहजता से समझाते हैं। आपके द्वारा दिये गये 'प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है', 'अपना लोटा छानकर पानी पीना', आदि तावीज तो जैसे दैनिक मार्गदर्शक हैं।

गुरुदेवश्री कानजीस्वामी एवं उनके नवरत्न शिष्यों से जो आपने सीखा है, उन्हीं की शैली से आप समझाते हैं वह बहुत ही सार्थक है। जैन सिद्धान्त की क्लास में मूलभूत सिद्धान्तों को आप इतना 'ठोक-पीट कर' समझाते हैं कि अपनी अक्ल से सोचना शुरू हो जाता है !

मुझे याद है जब पहली बार मैंने गुणस्थान विषय सुना था तब समझने की इतनी उत्सुकता थी कि युरोप पर्यटन के समय भी मैं नियमित ये प्रवचन सुनती थी। श्रावक का स्वरूप, अणुव्रतों का स्वरूप, महाव्रतों का स्वरूप, मुनिराजों का स्वरूप, श्रेणी आरोहण, परिणामों का फल इत्यादि पंडितजी ने बहुत ही स्पष्टता से समझाये हैं। उस समय पता भी नहीं था कि भविष्य में ऐसा स्वर्णिम अवसर आयेगा ! आप दोनों ने शिबिर को पुस्तकरूप देने के लिये अपनी अनुमति दी एवं उनके संपादन/प्रकाशन के

कार्य में आपके सहयोग की हम सभी आप दोनों की बहुत-बहुत सराहना करते हैं।

आप दोनों की जिनवाणी के प्रचार-प्रसार के लिये प्रतिबद्धता हमारे लिये प्रेरणादायी है। इस पुस्तक का कार्य शीघ्रता से पूर्ण होने में आपकी मेहनत और लगन की प्रंशसा करने के लिये शब्द भी कम पड रहे हैं। आप दोनों को शत शत नमन हैं !

सभी साधर्मी आत्मकल्याण हेतु अवश्य इसका स्वाध्याय करे यही भावना है।

- **निशा शेठ, अहमदाबाद**

JainSiddhant Mobile App

२०२३ की फाल्गुन मास की अष्टान्हिका में नवरंगपुरा, अहमदाबाद मंदिरजी में प्रवचन हेतु पधारे पंडित देवेन्द्रजी, हिम्मतनगर को हम jainsiddhant website पर पं. दिनेशभाईजी एवं डॉ. उज्ज्वलाजी के प्रवचन के बारे में हम जानकारी दे रहे थे। उन्होंने पूछा क्या इन प्रवचनों को सरलता से मोबाईल पर सुन सकते हैं ? इस प्रश्न ने हमें Mobile App बनाने का विचार सुझाया और सिर्फ २५ दिनों के अंदर हमने श्रुतपंचमी के दिवस (मई २४, २०२३) पर JainSiddhant Mobile App launch किया। इस प्रथम प्रयास में आप दोनों द्वारा देवलाली में पढ़ाये गये जैनधर्म के मूलभूत सिद्धान्त एवं करणानुयोग विषय के विभिन्न व्हिडिओ शिबिर उपलब्ध कराये गये।

वीर निर्वाण दिवस की पूर्वसंध्या (नवंबर १२, २०२३) पर इस Mobile App में करीबन २० विषयों पर ६७०+ घंटों के व्हिडिओ प्रवचन, करीबन ७० विषयों पर आद्योपांत स्वाध्याय के १५०००+ घंटों के ऑडियो प्रवचन, 'महाबंध के त्रुटित अंश' (२१५ पृष्ठों की PDF) सहित १७ पुस्तक जो विभिन्न छह भाषाओं में हैं वे उपलब्ध कराये गये हैं। श्रोताओं की सुविधा हेतु download, recently played, search जैसे features भी उपलब्ध कराये हैं। App को हिंदी भाषा में भी उपयोग कर सकते है।

करणानुयोग के धवला, जयधवला, महाबंध आदि ग्रंथ एवं पू. गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रवचन पुस्तकों सहित जैनदर्शन के चारों ही अनुयोगों पर विस्तृत एवं आद्योपांत स्वाध्याय **JainSiddhant** Mobile App पर उपलब्ध है। वस्तुस्वरूप समझकर निज कल्याण हेतु आप अवश्य ही इसका लाभ लेवें।

- **जिनेश शेठ एवं निशा शेठ, अहमदाबाद**

प्रकाशकीय

देवलाली में प्रतिवर्ष दो बार में होनेवाली हमारे विशेष शिबिरों की श्रृंखला में २१ मई २००९ से २५ मई २००९ तक पं. दिनेशभाई शहा द्वारा गुणस्थान विवेचन पुस्तक के आधार से शिबिर लिया गया था। सबको विदित ही है कि हम दोनों ने देवलाली में करीबन २५-३० शिबिर लिये हैं। ५ दिन के इन शिबिरों में हम दोनों में से एक ही वक्ता प्रतिदिन ६-६ घंटे सिखाता है।

वैसे तो पं. दिनेशभाई ने लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका पर देवलाली में ४-५ बार शिबिर लिये हुये हैं। देश-विदेश में इसी विषय को सिखाने के लिये उनसे मुमुक्षुओं की मांग रहती है। उसीतरह पं. ब्र. यशपालजी जैन द्वारा 'गुणस्थान विवेचन' पुस्तक के आधार से उन्होंने अनेक बार सामूहिक स्वाध्याय में यह विषय सिखाया है। गुणस्थान विषय आध्यात्मिक अभ्यासियों के लिये अत्यंत आवश्यक और उतना ही रोचक विषय है। उसके अभ्यास से पूरे मोक्षमार्ग का स्वरूप स्पष्ट रीति से ख्याल में आता है, अनेक भ्रांतियां दूर होती हैं। पं. बनारसीदास ने स्वयं लिखा है कि अध्यात्म ग्रंथ पढ़कर भी जब तक गुणस्थान का समुचित ज्ञान नहीं था तब तक वे स्वयं भी मिथ्याभ्रांति के अंधकार में भटकते रहे थे। इसीलिये उनके द्वारा रचित समयसार नाटक के अंत में गुणस्थान अधिकार की रचना करना उन्होंने उचित समझा।

गुणस्थानों के ज्ञान से मिथ्यात्व दशा से लेकर अयोगकेवली दशा तक के जीवों के परिणामों के विविध प्रकार - उनके भेद यानी व्हेरिएशन्स ख्याल में आते हैं। जीव की अंतरंग दशा, उस दशा के साथ-साथ विद्यमान कषायों का स्वरूप तथा उनके साथ पाये जानेवाले कर्म के निमित्त, शरीरादि की क्रिया इनका कैसा सुमेल होता है, कैसी सहजता होती है इन बातों का पता चलता है, उसके बारे में हमें नि:शंकता प्राप्त होती है।

लोग गुणस्थान के नाम से या करणानुयोग के नाम से ही बिना वजह डरते रहते हैं। इन शिबिरों का यही प्रयोजन है कि कम से कम दिनों में लोगों को किसी विषय के बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त हो, उनके प्रश्नों के उत्तर मिले, अध्यात्म की दृष्टि से आगम का ज्ञान कार्यकारी हो सके।

शिबिरों की पूर्व तैयारी भी अत्यंत नियोजित होती है। आजकल शिबिरों के लिये

हम जो चार्ट्स बनाते हैं वे कॉम्प्यूटर पर टाइप करके उसके फ्लेक्स बनाते हैं। उस जमाने में मैं ही घर में बड़े-बड़े ड्रॉइंग पेपर्स पर कलर्ड स्केच पेन्स द्वारा चार्ट्स तैयार करती थी। फिर उनके फोटो खींचकर झेरोक्स बनाकर देवलाली ले जाते थे। शिबिरार्थियों के लिये इनके सेट्स बनाना, पुस्तकें उपलब्ध करनी, फोटोग्राफर अरेंज करना आदि अनेक बातें पं. दिनेशजी स्वयं करते थे और आज तक करते आये हैं। शिबिर के एक दिन पहले जाकर वहां लाइट की अरेंजमेंट करना, वक्ता के बैठने की व्यवस्था करना, वक्ता के पीछे बड़ा पड़दा भी घर से लेकर जाते थे वह लगाना, बोर्ड की और चार्ट माउंट करने की व्यवस्था करना, फोटो के शूटिंग की तैयारी कराना आदि बातें तो वे करते ही हैं, फोटोग्राफर को योग्य मार्गदर्शन भी वे करते हैं, क्योंकि वे पहले फोटोग्राफी का व्यवसाय जो कर चुके हैं।

यह तो हुयी शिबिरों की बात। अब यह जो पुस्तक बनी है वह शिबिरों में जो व्याख्यान हुये हैं उनके बोले हुये शब्दों को अक्षररूप से उतारा गया है। इन शिबिरों के व्हिडिओज् यूट्यूब पर उपलब्ध हैं ही, उनको सुनकर, एक-एक वाक्य सुनकर उसे गुगल इनपुट पर जाकर इंग्लिश में टाइप करके उसको हिन्दी में रूपांतरित करने का अत्यंत बिकट काम हमारी स्क्राइब टीम निशा शेठ के निर्देशन में कर रही है। उनकी लगन, रुचि, मेहनत देखकर, जिनवाणी के प्रति उनका समर्पण देखकर अत्यंत प्रसन्नता होती है। कोई कार्य होता है तो अनेक निमित्त स्वयमेव सहज आ मिलते हैं यह बात प्रत्यक्ष दिखायी देती है।

हम दोनों ने भी पुस्तकों की १५-१५ बार प्रूफरीडिंग की है। बोलने में कहीं कुछ त्रुटियां रह गयी हो तो उसे सुधारा है। सुनकर समझना अलग बात है, पढ़कर समझने में सुविधा हो इसलिये कहीं वाक्य रचना में फेरफार किये हैं। विषय को और अधिक स्पष्ट करने के लिये मैंने कहीं-कहीं बीच में दो-चार वाक्य लिखे हैं।

हमारे स्क्राइब टीम की मेहनत और दातारों की मेहरबानी से 'गुणस्थान शिबिर' को पुस्तकरूप से प्रस्तुत करते हुये बहुत प्रसन्नता हो रही है।

वाचकगण इसका पुरेपूरा लाभ ले इसी भावना के साथ विराम लेती हूं।

- डॉ. उज्ज्वला दि. शहा

मेरी बात

इ.स. १९९२ में प्रथम बार हम जयपुर में पं. ब्र. यशपालजी जैन (अण्णाजी) की गुणस्थान की क्लास में बैठे। वास्तविक मेरे बड़े भाई गुजर जाने से हम जयपुर लेट ही पहुंचे। फिर भी करणानुयोग के बारे में कोई जानकारी नहीं थी लेकिन अण्णाजी के कारण मुझे इस विषय में अधिक रुचि उत्पन्न हुयी। हालांकि विषय बिलकुल हमारे लिये नया था उसमें हम लेट पहुंचे। चौथा गुणस्थान चल रहा था फिर भी हमने मन लगाकर अभ्यास किया और हम दोनों ही को पहला नंबर प्राप्त हुआ।

उसके आगे ४-५ साल तक गुणस्थान के विषय में हम परीक्षा देते रहे और हमेशा हम दोनों पहले नंबर से पास होते गये। उसके अगले साल हमने परीक्षा दी थी तब पं. ब्र. यशपालजी ने हमें बुलाया और कहा इसके आगे आप परीक्षा न दो तो अच्छा है। इस साल भी आप प्रथम नंबर पर हो लेकिन आप दोनों परीक्षा देते हैं तो इतर अनेक जन परीक्षा ही नहीं देते। इसलिए इस वक्त आपको प्रथम नंबर नहीं दे रहे हैं, बुरा मत मानना। इतने में पं. अभयकुमार बोलने लगे 'दिनेशभाई आप टेबल के उस पार बैठते हो अब से इस पार बैठना चालू करो।' इस आशीर्वादात्मक उद्गार से मन में धैर्य पैदा हुआ और मैंने एक नहीं, अनेक बार गुणस्थान अनेक गावों में भी सिखाना प्रारंभ किया और उसका अच्छा प्रतिसाद भी प्राप्त हुआ।

पं. ब्र. यशपालजी अण्णा भी उत्कृष्ट रीति से समझाते थे। लेकिन उनकी उपस्थिति में मैंने या विषय सिखाने का ढ़ाढ़स किया। गुणस्थान विषय पर मैंने देवलाली में शिबिर लिया था। हमारे स्टाइल के अनुसार प्रतिदिन ६-६ घंटे लेक्चर्स करते हुये विषय पूरा किया और बहुतों के आग्रहानुसार इस विषय को पुस्तकरूप दिया जो आपके समक्ष है।

एक किस्सा मुझे याद आया वह लिखता हूं कि हमारे यहां रोज स्वाध्याय में आनेवाले के रिश्तेदार ३ बच्चे माउन्ट आबू से आये थे। उनको हमारे यहां रोजाना आनेवाली उनकी मौसी ने स्वाध्याय में आने से मना किया और कहा 'यह विषय इतना कठिन है, हम मुश्किल से समझते हैं, आप तो छोटे हो हम आपको नहीं ले जायेंगे।' मैंने कहा वे स्वाध्याय करना चाहते हैं उनको कभी मना मत करना। मजे की बात यह है कि उन तीनों ही बच्चों को हिन्दी में लिखना भी नहीं आता था क्योंकि वे इंग्लिश

मिडियम में सीखते थे। वे गुणस्थान लिखते समय GUNSTHAN इस तरह से अपने नोटबुक में लिखते थे। उनके और इतर सबके आग्रह पर गुणस्थान विषय की हमने परीक्षा ली थी और आश्चर्य की बात उन बच्चों में सबसे छोटी लड़की जो सात साल की थी उसने ५० में से ४० मार्क्स इंग्लिश में पेपर लिखकर प्राप्त किये। बाकी के दोनों में से एक ने ४४ और सबसे बड़े लड़के ने ४६ मार्क्स प्राप्त किये। पश्चात् देवलाली शिबिर था तो वे वहां पर भी पहुंचे।

वहां गुणस्थान का विषय पं. ब्र. यशपालजी अण्णा ले रहे थे। वे जब भी कोई प्रश्न पूछे तो ये बच्चे तुरंत फटाफट सही उत्तर देते थे। यह देखकर उन्होंने पूछा आप किनसे सीखे हो ? तब उन्होंने कहा हम पं. दिनेशभाई के क्लास में सीखे हैं। अण्णाजी बोले तभी तो आप हमारी स्टाइल से उत्तर भी देते हो मुझे बहुत आनंद हुआ। मेरे लिये यह एक आशीर्वादसा रहा। ऐसे अनेक किस्सों का झमेला मेरे मन में उठ रहा है। उसे गौण करता हूं।

जिनागम के विषयों को बोल कर समझाना मेरे लिये आसान है लेकिन लिख कर समझाना मेरे बस की बात नहीं है। मेरे लेक्चर्स को पुस्तकरूप बनाने में निशा शेठ की लगन, मेहनत, हमारी टीम के सभी सदस्यों का सहकार्य ये बातें अमूल्य हैं।

पं. ब्र. यशपालजी की 'गुणस्थान विवेचन' पुस्तक में से जो-जो वाक्य मैंने पढ़कर सुनाये थे, वह मॅटर इस पुस्तक में बोल्ड अक्षरों में लिखा है। श्रोताओं ने बोले हुये वाक्य तिरछे अक्षरों में लिखे हैं।

हमेशा की तरह पुस्तक के प्रूफ रीडिंग, संपादन, प्रकाशन में मेरी पत्नी डॉ. उज्ज्वला ने मेरा पूरा-पूरा साथ दिया है। करणानुयोग की विशेषज्ञ होने से उसने इस पुस्तक में अनेक जगह टिप्पणियां लिखकर इस पुस्तक को आगमप्रमाण बनाने में अपना योगदान दिया है।

देश-विदेशों के दातारों ने हम पर भरोसा रखते हुये दिल खोलकर दान दिये हैं। उनके इस सहाय के बिना हम कहां आगे बढ़ सकते थे ?

आप सबको यह पुस्तक पढ़कर अवश्य फायदा होगा इस उम्मीद के साथ में अपने वक्तव्य से विराम लेता हूं।

- **पं. दिनेशभाई शहा**

– विषय सूची –

१. गुणस्थान परिभाषा, १४ गुणस्थानों के नाम १
२. गुणस्थान सामान्य चर्चा, विभाजन २०
३. गुणस्थान विभाजन ३७
४. मिथ्यात्व गुणस्थान ५५
५. मिथ्यात्व गुणस्थान - चारित्र और काल अपेक्षा विचार ७३
६. मिथ्यात्व गुणस्थान, गमनागमन ९०
७. मिथ्यात्व गुणस्थान में रहने के कारण १०८
८. सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान १२६
९. सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान, औपशमिक सम्यक्त्व १४३
१०. सासादनसम्यक्त्व - गमनागमन, विशेषता १६१
११. सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान १८०
१२. सम्यग्मिथ्यात्व – विशेषता, अविरतसम्यक्त्व १९८
१३. अविरतसम्यक्त्व २१६
१४. अविरतसम्यक्त्व २३५
१५. अविरतसम्यक्त्व – विशेषता, सम्यक्त्व के काल २५३
१६. अविरतसम्यक्त्व - काल अपेक्षा विचार, गमनागमन २७१
१७. अविरत गुणस्थान - विशेषता, देशविरत गुणस्थान २९०
१८. देशविरत गुणस्थान ३०७
१९. देशविरत गुणस्थान – विशेषता, गमनागमन ३२४
२०. प्रमत्तविरत गुणस्थान ३४३
२१. प्रमत्तविरत गुणस्थान, अप्रमत्तविरत गुणस्थान ३६१
२२. अप्रमत्तविरत गुणस्थान - गमनागमन ३७९
२३. अप्रमत्त गुणस्थान - विशेषता ३९७
२४. अप्रमत्तविरत गुणस्थान, अपूर्वकरण गुणस्थान १४१
२५. अपूर्वकरण गुणस्थान - चार आवश्यक ४३१
२६. अनिवृत्तिकरण गुणस्थान ४५०
२७. सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान, उपशांतमोह गुणस्थान ४६८
२८. उपशांतमोह गुणस्थान, क्षीणमोह गुणस्थान ४८७
२९. क्षीणमोह गुणस्थान, सयोगकेवली गुणस्थान ५०७
३०. सयोगकेवली गुणस्थान, अयोगकेवली गुणस्थान ५२५

१. गुणस्थान परिभाषा, १४ गुणस्थानों के नाम

ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः ।

ॐ शुद्धात्मने नमः ॥

णमो अरिहंताणं। णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं। णमो उवज्झायाणं। णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

वन्दौं ज्ञानानन्द-कर, नेमिचन्द गुणकंद।
माधव-वन्दित विमल पद, पुण्य पयोनिधि नंद ॥१॥
दोष दहन गुन गहन घन, अरि करि हरि अरहंत।
स्वानुभूति-रमनी-रमन, जग-नायक जयवंत ॥२॥
सिद्ध शुद्ध साधित सहज, स्वरस सुधारस धार।
समयसार शिव सर्वगत, नमत होऊ सुखकार ॥३॥
जैनी बानी विविध विधि, वरनत विश्व प्रमान।
स्यात्पद मुद्रित अहितहर, करहु सकल कल्यान ॥४॥
मैं नमो नगन जैन जन, ज्ञान-ध्यान धन लीन।
मैन मान बिन दान धन, एन हीन तन छीन ॥५॥
इह विधि मंगल करन तैं, सब विधि मंगल होत।
होत उदंगल दूरि सब, तम ज्यों भानु उद्योत ॥६॥

आज से हम गुणस्थान के बारे में जानना चाहेंगे। उसके पहले यह जो अभी हमने मंगलाचरण बोला है, वह पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक जो गोम्मटसार के ऊपर टीका लिखी है - जो सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक शास्त्र लिखा है, उसका यह मंगलाचरण है। इस मंगलाचरण की विशेषता ऐसी है कि यहां देव- गुरु-शास्त्र सबको नमस्कार किया है। उनके बारे में क्या कहें !

देखो, नीचे से दूसरा यानी पांचवां नंबर का श्लोक है उसमें आप देखेंगे, तो हर-एक अक्षर के बाद 'न' अक्षर आता है। 'मैं' इस अक्षर को छोड़ो...। उसके बाद 'न', मैं नमो नगन यानी एक-एक अक्षर के बाद 'न' अवश्य आता है और बहुत अर्थपूर्ण ऐसा

यह काव्य है। हम बाद में जब प्रसंग आयेगा तब उसका अर्थ करेंगे। लेकिन देखिये आप **मैं नमो नगन जैन जन, ज्ञान ध्यान धन लीन।** देखो हर-एक अक्षर के बाद 'न'-'न'-'न'-'न' आता है। **मैन मान बिन दान धन, एन हीन तन छीन।** यानी इस पर से हमें यह ख्याल में आता है कि पं. टोडरमलजी के ज्ञान का विकास कितना बड़ा था। वे तो बहुत उच्च प्रति के कवि भी थे, वक्ता भी थे, लेखक भी थे, आत्मानुभवी जीव भी थे। अब उन्होंने गुणस्थान के बारे में जो कुछ लिखा है, उसको हम देखने जा रहे हैं।

देखो, यह गुणस्थान क्या होता है ? ऐसा पहला प्रश्न हमारे दिमाग में उठना चाहिये या उठेगा ही। बात तो ऐसी है, हमने तो राजस्थान देखा है, हिंदुस्तान देखा है, पाकिस्तान देखा है, खालिस्तान देखा है, और तो और रेगिस्तान शब्द भी देखा है। लेकिन यह गुणस्थान क्या है, इसके बारे में हमें विशेष जानकारी होनी चाहिये, क्योंकि हम अगर गुणस्थान को सहीरूप से समझेंगे तो मोक्षमार्ग जो है वह हमारी आंखों के सामने बिलकुल आ जाता है और इसतरह से मोक्ष की प्राप्ति हम कर सकते हैं इस बात का हमें पूरा भरोसा होता है।

भाईसाहब आप कौनसे गांव से आये हैं ? *श्रोता: बुरहानपुर से।* बुरहानपुर से, तो बुरहानपुर से जब पहली बार आप देवलाली आये होंगे, मुझे मालूम है आप बहुत बार आ चुके हैं। लेकिन जब पहली बार आये तब आपने सोचा होगा कि बुरहानपुर से कौनसी रेल्वे जाती है ? कौनसा एअरोप्लेन जाता है ? कौनसी बस जाती है ? बीच में कितना टाइम लगता है ? वहां हमारे जैसे जैनियों के खाने-पीने की, कहीं रहने की, ठहरने की कोई व्यवस्था है कि नहीं ? जाने से पहले हमें यह पूरी मालूमात होती है, होनी भी चाहिये। वैसे जिसको अनंत सुखी होना है, जिसको मुक्ति प्राप्त करनी है, मोक्ष को हासिल करना है, तो मोक्ष कैसा प्राप्त किया जाता है ? उसमें बीच में कौनसे-कौनसे पड़ाव आते हैं ? इस बात का हमें सही ख्याल होना ही चाहिये। नहीं तो हम पहुंच जाये कन्याकुमारी और समझे हम कश्मीर पहुंच गये हैं। वैसी हमारी हालत नहीं होनी चाहिये। इसलिये यह गुणस्थान क्या है इसको हम जानने की कोशिश करेंगे।

देखो पहले में पहले एक बात तो हम अच्छी तरह से जानते हैं कि विश्व में सिर्फ तीन ही बातें होती हैं। इन तीन बातों के अलावा अन्य कुछ इस विश्व में है ही नहीं। आप कहेंगे क्या बात करते हो; इतनी सब चीज़ें दिख रही हैं और आप तीन ही की बात

करते हैं। हां बिलकुल। हम नहीं कहते हैं तो आचार्य कहते हैं, आचार्य तो कहते हैं लेकिन जिनेन्द्र भगवान भी यही बात कहते हैं। वे कहते हैं इस विश्व में द्रव्य, गुण और पर्याय, इन तीन के अलावा कुछ है ही नहीं, ख्याल में आया ? तो फिर यह गुणस्थान क्या है ? इसको हम देखेंगे। क्या वह द्रव्य है ? यह पहला प्रश्न हमारे मन में आता है। तो हम देखते हैं - क्या यह द्रव्य हो सकता है बहन ? *श्रोता: नहीं।* नहीं, क्यों नहीं ? क्योंकि देखो उत्तर तो दो ही हैं। हां या ना। लेकिन उसका रीझनिंग-कारण भी हमें मालूम होना चाहिये, तो हमारे हां कहने में जोर आता है, बल आता है और जैसा-जैसा हमारा बल बढ़ते जाता है वैसी-वैसी हमारी श्रद्धा भी उतनी ही पक्की हो जाती है।

तो आप कह पायेंगे कि द्रव्य क्यों नहीं है ? *श्रोता: द्रव्य छह ही हैं।* हां-हां कौन बोल रहे हैं साहब ? *श्रोता: द्रव्य छह ही हैं।* छह द्रव्य हैं। क्या-क्या नाम हैं उनके ? *श्रोता: जीव।* जीवद्रव्य, दूसरे, दूसरे का नाम क्या ? *श्रोता: अजीव।* अजीव, अच्छा-अच्छा ! *श्रोता: धर्म, अधर्म, आकाश, काल।* हां, आपने बताया जीवद्रव्य, अजीवद्रव्य, है न, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य, कालद्रव्य। तो मुझे यह पूछना है, यह आकाशद्रव्य है, वह चेतनद्रव्य है या अचेतनद्रव्य है ? *श्रोता: अचेतनद्रव्य है।* हां, तो आपने अजीव कहा न ! *श्रोता: जीव छोड़कर बाकी के सब अजीव हैं।* तो फिर आपके दो ही द्रव्य हो गये। जीव छोड़कर अन्य सब अजीव कहेंगे तो आपने दो ही द्रव्य बताये। हमें छह द्रव्यों के नाम चाहिये। एक मिनट, इनकी क्या भूल हुयी है कोई बता पायेंगे। पुरुषों में ? हां बोलो साहब। *श्रोता: पुद्गलद्रव्य।* आपको बोलना था 'पुद्गल' हां और आपने गलती से बोल दिया अजीव। देखो तत्त्व जब हम बोलते हैं न, तो जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व ऐसा बोलना चाहिये और जब हम द्रव्यों की बात करते हैं तब -जीवद्रव्य, पुद्गलद्रव्य। क्योंकि देखो ऐसी गड़बड़ी है कि नौ पदार्थों में भी जीव नाम आता है, सात तत्त्वों में भी जीव नाम आता है, छह द्रव्यों में भी जीव नाम आता है और पंचास्तिकाय में भी जीव नाम आता है। तो हम जिसका क्लासिफिकेशन कर रहे हैं, जिसका विभाजन कर रहे हैं वह नाम लेना जरूरी है। ख्याल में आया ?

अब हमने क्या देखा ? नाराज़ नहीं होना हां बहन, मेरी यह आदत है। क्योंकि हम कहीं छोटी-छोटी भूल कर देते हैं न, तो वह भूल आगे-आगे बहुत बड़ी हो जाती है। हम पहले उसको कर्टेल कर दें, खतम कर दें, तो आगे हमारी बात अच्छी-पक्की ध्यान में रहेगी। हमने देखा जीवद्रव्य, पुद्गलद्रव्य, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य

और कालद्रव्य ये छह द्रव्यों के नाम किसने बताये साहब ? बोलो-बोलो पटपट बोलो ! टाइम मत गंवाओ बेटा। हां, किसने बताये ? *श्रोता: केवली भगवान ने।* हां जी, केवली भगवान ने, जिनेन्द्र भगवान ने। जिनेन्द्र भगवान का कहा हुआ कभी भी झूठ नहीं हो सकता, क्योंकि वे तो वीतरागी भी हैं और सर्वज्ञ भी हैं, ख्याल में आया ?

तो अपनी बात क्या हुयी ? छह द्रव्यों में गुणस्थान नाम का कोई द्रव्य है नहीं। तो फिर गुण भी तो होना चाहिये कि नहीं ? यह हमारे मन में प्रश्न उठता है। हां, कौन बताना चाहेगा ? *श्रोता: गुण भी नहीं है।* गुण भी नहीं है, क्यों नहीं है ? *श्रोता: द्रव्य नहीं है तो गुण भी नहीं है।* ऐसा थोड़ी होता है ? ज्ञान क्या है ? *श्रोता: गुण।* ज्ञान क्या है ? गुण है। तो वह द्रव्य है क्या ? तो गुण है लेकिन द्रव्य नहीं है और द्रव्य नहीं है इसलिये गुण नहीं है ऐसा भी नहीं होगा। ख्याल में आया ? कोई बात नहीं, आप बिलकुल प्रयत्न करना। बोलना हो ! बिलकुल मौनव्रत लेकर आये हो तो छोड़ देना। क्यों बहन। तो गुण क्यों नहीं है; कौन बताना चाहेगा ? प्रवीणभाई आप बताना चाहेंगे प्लीज। *श्रोता: श्रद्धा और चारित्र गुण की अवस्थाओं का नाम गुणस्थान है।* हम वहां तक पहुंचे ही नहीं हैं। आप सही कह रहे हैं, लेकिन हम अभी तक वहां पहुंचे ही नहीं हैं। हमारा जो प्रीव्हियस-प्रायर नॉलेज है उसके आधार से हमें नक्की करना है।

देखो मैं बताऊंगा क्योंकि टाइम जाता है। गुण किसको कहते हैं ? जो द्रव्य के संपूर्ण भागों में और उसकी संपूर्ण अवस्थाओं में रहता है। लेकिन हमने तो सुना है कि गुणस्थान हमेशा पलटते हैं, छूट जाते हैं, लेकिन गुण तो हमेशा नित्य रहता है। गुण का और द्रव्य का कौनसा संबंध है ? तो कहते हैं, हांजी ? *श्रोता: नित्यतादात्म्य संबंध।* नित्यतादात्म्य संबंध और यहां गुणस्थान तो पलटता है। आपको आपका गुणस्थान पलटाना है कि नहीं साहब ? अब मान लेते हैं हम जिस किसी गुणस्थान में, जो भी होवे, यह तो निश्चित है कि आज की तारीख में अभी आप तो छठे-सातवें गुणस्थान में मुनि की अवस्था में तो नहीं हैं। क्या है ? है ? नहीं है। तो हमें वह गुणस्थान प्राप्त करना है। यानी हम जिस गुणस्थान में हैं वहां से हटकर उधर जाना है। यानी गुण तो वे ही हैं कि जो पलटते नहीं हैं, पलटते नहीं हैं इन द सेन्स बदलते नहीं हैं। यानी वे छूट नहीं जाते और कोई नया प्राप्त होवे ऐसा भी नहीं। इसलिये वह गुण भी नहीं है। तो अभी कौनसी बात रह गयी बहन ? *श्रोता: पर्याय।* पर्याय, तो यह पर्याय है कि नहीं ? तो अभी हमने जो देखा- विश्व में तीन ही बातें होती हैं; द्रव्य हो या गुण हो या पर्याय हो। तो हमने तो

यह निश्चित किया कि वह द्रव्य नहीं हो सकता और गुण भी नहीं है। तो क्या होना चाहिये ? तो कहते हैं, पर्याय।

फिर से हम देखते हैं, आपके पास पुस्तकें हैं न ? पृष्ठ क्रमांक है ५६। देखो यहां लिखते हैं, नेमिचन्द्र आचार्य जो हैं उन्होंने यह बताया है। अभी हम वह प्राकृतवाली गाथा न पढ़ते हुये डायरेक्ट उसका अर्थ देखेंगे। क्या लिखा है ? देखो, मैं पढ़ूंगा और आप भी वैसा ही रिपीट करें। जिनके पास पुस्तकें नहीं हैं तो यहां सामने लिखा है। देखो क्या कहते हैं ? मैं पढ़ूंगा और आपको मेरे बाद वह पढ़ना है। **मोह और योग के निमित्त से,** *श्रोता: मोह और योग के निमित्त से,* **जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण की,** *श्रोता: जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण की,* **होनेवाली तारतम्यरूप,** *श्रोता: होनेवाली तारतम्यरूप,* **अर्थात् हीनाधिक अवस्था को,** *श्रोता: अर्थात् हीनाधिक अवस्था को,* **गुणस्थान कहते हैं।** *श्रोता: गुणस्थान कहते हैं।* देखो कितना सरल है !

यहां क्या कह रहे हैं देखियेगा, यहां गुणस्थान कहते हैं। हम अभी पीछे से आगे की ओर जायेंगे। देखो यहां पर लिखा है न, गुणस्थान कहते हैं। तो गुणस्थान किसको कहते हैं ? तो यह जो हीन-अधिक अवस्था लिखा है न उसको हम भूल जाते हैं और थोड़ा और आगे जाते हैं। तो तारतम्यरूप अवस्था को। क्या लिखा ? तारतम्यरूप अवस्था को। यानी क्या हो गया, यह किसकी बात चल रही है ? अवस्था की। अवस्था का दूसरा नाम क्या है बहन ? *श्रोता: पर्याय।* और तीसरा नाम ? *श्रोता: दशा, हालत।* दशा, हालत, अवस्था। बहुत नाम हैं, परिणाम, जो भी है। लेकिन हमें यहां क्या देखना है - अवस्था। तो यह अवस्था किसकी है ? क्योंकि यहां तो कहा कि तारतम्यरूप अवस्था को गुणस्थान कहते हैं। यह तारतम्यरूप अवस्था यानी क्या ? जो हीनाधिक होती है। यानी कभी अलग उसकी कपॅसिटि है, कभी अलग है। इसतरह से उसमें हीन अधिकता है। जैसे हम ज्ञान गुण को देखते हैं, तो ज्ञान गुण में क्या था कि जब हम छोटे थे तब हमारे ज्ञान का इतना उघाड़ नहीं था और यहां कई लोग देखते हैं, इसके जैसे छोटे-छोटे बच्चे पटपट-पटपट कॉम्प्यूटर पर खेलते हैं या कॉम्प्यूटर चलाते हैं और हमको तो कॉम्प्यूटर क्या होता है यह मालूम नहीं है। तो उनके ज्ञान की अवस्था अधिक है और उस हिसाब से हमारी ज्ञान की अवस्था उससे कम है।

अभी हम यहां गुणस्थान सीख रहे हैं। कोई बाहर बैठे हैं उनको उसका कुछ

पता ही नहीं होगा। यानी ज्ञान में हीन अधिकता है यह हमें पता लगता है। जैसे पंचेन्द्रिय जीव है, उसके ज्ञान का क्षयोपशम अधिक है; एकेन्द्रिय जीव है, उसके ज्ञान का क्षयोपशम कम है। तो अभी यह बात निश्चित हो गयी कि यहां तारतम्य है। तारतम्य यह शब्द कैसे तैयार हो गया ? तरतम यह शब्द है। तर यानी अभी आपको जरा समझाना पड़ेगा क्योंकि यह संस्कृत शब्द है न, तो उसको हम देखते हैं। आप इंग्लिश तो अच्छी तरह से जानते हैं। गुड, बेटर और बेस्ट यानी कम्पॅरेटिव्ह और सुपरलेटिव्ह डिग्री जिसको हम कहते हैं। गुड से बढ़कर जो होगा, बहुत अच्छा होगा तो वह है बेटर और उससे अच्छा होगा तो बेस्ट वैसा तर और तम। यानी आपके परिणाम अभी कैसे हैं ? तो कहते हैं मंद हैं। क्यों मंद हैं ? क्योंकि हम शास्त्र पढ़ रहे हैं। शास्त्र पढ़नेवाले के परिणाम तीव्र नहीं हो सकते। ख्याल में आया ? लेकिन उसमें से ऐसे भी कई जीव होंगे कि उनके परिणाम मंदतर होंगे और कोई ऐसे भी होंगे कि उनके मंदतम भी हो सकेंगे, ख्याल में आया ? तो यह तारतम्य यह शब्द जो है यहां पर, उन्होंने यह बहुत अच्छी तरह से समझाया है। हीनाधिक अवस्था, हीनाधिक यानी क्या ? उसमें तरतमता है। ख्याल में आया ? तो यहां क्या कह रहे हैं कि तारतम्यरूप अवस्था को गुणस्थान कहते हैं। तो यह तारतम्यरूप अवस्था किसकी है ? कहते हैं जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण की होनेवाली तारतम्यरूप अवस्था। यानी यह बात निश्चित हो गयी, सारे जो गुणस्थान हैं वे किस पर आधारित हैं ? श्रद्धा और चारित्र गुण की तारतम्यरूप अवस्थायें जो हैं उनमें उनका डिव्हिजन हुआ है। किसका ? इन गुणस्थानों का।

तो क्या कहा ? जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण की होनेवाली तारतम्यरूप अवस्थाओं को गुणस्थान कहते हैं। इस पर से हम निश्चित कर सकते हैं हमारा जो ज्ञान गुण है, हमारा जो वीर्य गुण है, हमारे दो गुण के अलावा बाकी के अनंत गुण हैं इनकी अवस्थाओं से विशेषरूप से इस गुणस्थान में कोई कार्य नहीं है। योग गुण की अभी हम बात नहीं करेंगे। यह बात निश्चित हो गयी कि जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण की ही तारतम्यरूप अवस्थायें हैं उनमें गुणस्थानों को फिट किया है उन्होंने। अब यहां समझा रहे हैं कि यह अवस्था जीवों की है; तो गुणस्थान पुद्गल में नहीं होगा, धर्मद्रव्य आदि अन्य द्रव्यों में किसी में भी गुणस्थान नहीं होंगे। गुणस्थान होंगे सिर्फ जीवद्रव्यों में और जीवद्रव्य में भी श्रद्धा और चारित्र गुण की जो अवस्थायें हैं। वे कैसी हैं ? तारतम्यतारूप जो अवस्थायें हैं उनको यहां गुणस्थान कहा है। अभी यहां कार्य तो हुआ, हां साहब !

श्रोता: प्रश्न ऐसा है श्रद्धा यदि विपरीत होती है उसमें जो तारतम्यता आती है उसमें चारित्र गुण लगाकर कैसे देखते हैं ? आपका प्रश्न ऐसा है कि श्रद्धा गुण है उसकी या तो सम्यक्त्व या तो मिथ्यात्व ऐसी परिणति होती है, है न और उसमें तारतम्यता कैसी होगी ? बिलकुल आप तो धीरजवान हो और धीरज रखोगे तो इस प्रश्न का जब उत्तर आयेगा, मैं आपको जरूर बताऊंगा। बिलकुल निश्चिंत रहें। दे दूं अभी उत्तर ? हां कस्तुरचंदजी। अभी उत्तर दे दूं। सुनो-सुनो कोई बात नहीं, एक मिनट में। ऐसा नहीं होवे कि हम भाग रहे हैं। देखो द्रव्यानुयोग जो है न, वह जो श्रद्धा गुण है उसकी दो ही अवस्थाओं को पहचानता है। या तो चित या तो पट। चित-पट समझते हैं ? किंग या स्केल। वैसे या तो मिथ्यात्व या तो सम्यक्त्व। लेकिन करणानुयोग इसको ॲक्सेप्ट नहीं करता। करणानुयोग कहता है कि उसकी सासादन और मिश्र नामक भी अवस्था है; जो द्रव्यानुयोग को पता नहीं ऐसी बात नहीं, वह उनको रिफर नहीं करता, ख्याल में आया ? अब वह सासादन क्या है, मिश्र क्या है ? वह जरूर आनेवाला है। हर एक बात एक दिन में तो पूरी होगी नहीं। एक लेक्चर में तो बिलकुल नहीं और हमारे पास तो अभी २९ घंटे हैं, देखेंगे। अब हम इस विषय को यहीं विराम देते हैं, आगे बढ़ेंगे।

तो अपनी बात क्या हो रही थी, यह बात निश्चित हो गयी कि यह गुणस्थान सिर्फ जीव में होंगे, अन्य द्रव्यों में नहीं होंगे। यहां तो अवस्था पलटती है या उसमें हीन-अधिकता आती है, तो वहां कोई न कोई कार्य तो होता ही होता है। जब-जब कार्य होता है तब-तब क्या होता है ? तो कहते हैं निमित्त अवश्य होता है। यहां क्या लिखा है देखो, मोह और योग के निमित्त से। क्या कहा ? मोह और योग। निमित्त कौन है ? मोह और योग और किसमें गड़बड़ी हो रही है ? श्रद्धा और चारित्र गुण में। तो कार्य हुआ श्रद्धा और चारित्र गुण में और उसको निमित्त कौन है ? मोह और योग। तो यह मोह यानी मिथ्यात्व और योग तो आप जानते ही हैं। देखो अगर थोड़ासा हम और एक्स्प्लनेटरी देखना चाहेंगे तो इसमें बात तो ऐसी है कि जीव को हर समय कर्म बंधता है। उसको एक समयप्रबद्ध कहते हैं।

एक समयप्रबद्ध में जो कुछ बंध होता है वह बंध भी चार प्रकार से होता है। भाईसाहब आप जानते हैं चार प्रकार का बंध ? जानते हैं आप भूल गये होंगे। बाबूजी आप ? नहीं ? कोई बात नहीं, बहुत अच्छी बात है। *श्रोता: मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक् प्रकृति।* नहीं-नहीं, प्रकृतिबंध, हां चालू करो, प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, स्थितिबंध

और अनुभागबंध। चार ही प्रकार के बंध एक समय में होते हैं। अब मैं यह बात किस लिये उठा रहा हूं कि यह जो मोह है या मिथ्यात्व और उसके साथ-साथ कषाय भी है, इसके कारण से स्थितिबंध और अनुभागबंध होता है और योग के कारण से प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध होता है। यह प्रदेशबंध क्या है ? प्रकृतिबंध क्या है ? इसको भी थोड़ा देखेंगे। मैंने तो समझा था कि आप इसमें काफी माहिर हैं इसलिये मैं उसको छोड़कर आगे जाना चाहता था। अच्छा हो गया कि वह भी बात निकली।

तो क्या कहते हैं ? प्रकृतिबंध, यानी आज-कल की बात छोड़ो, पहले जब हम वैद्य के पास जाते थे तो वह नाड़ी देखता था। बोले आपकी प्रकृति उष्ण है। दूसरे को बोलता था आपकी प्रकृति शीत है। तो यह क्या प्रकृति यानी क्या ? स्वभाव, ख्याल में आया ? तो हमारे ज्ञान में कर्मों की कितनी व्हरायटियां हैं, कर्म कितने होते हैं ? *श्रोता: आठ।* आठ, इनमें से ज्ञानावरण है उसकी प्रकृति अलग है, दर्शनावरण है उसकी प्रकृति अलग है, स्वभाव अलग-अलग है। तो यह प्रकृतिबंध होता है। शॉर्ट में बताऊंगा आपको और प्रदेशबंध का अर्थ क्या है ? एक समय में कितने परमाणुओं को ग्रहण करके बंध होता है उसको प्रदेशबंध कहते हैं। जिसको हम दूसरी भाषा में कहेंगे नंबर ऑफ़ कर्म परमाणु जितने हम एक साथ में ग्रहण करते हैं, उसको कहेंगे प्रदेशबंध। स्थितिबंध यानी क्या ? मैं आपसे ही उत्तर चाहूंगा और आप जरूर देंगे। यह जो कोई मिथ्यात्व का बंध करता है, तो मिथ्यात्व का उत्कृष्ट बंध कितने काल का होता है ? विरेशभाई आप बतायेंगे ? *श्रोता: ७० कोड़ाकोड़ी सागर।* हां, सत्तर, गुजराती में सित्तेर, ७० कोड़ाकोड़ी सागर। तो यह क्या है ? एक समय में बंधा हुआ कर्म है ; वह कितने काल तक अपनी सत्ता में रहेगा ? तो कहते हैं ७० कोड़ाकोड़ी सागर। यहां हम स्थिति देखते हैं। स्थिति कितने काल की है ? ७० कोड़ाकोड़ी सागर की है, ख्याल में आया ? तो यह है स्थितिबंध। अनुभागबंध यानी उसकी फलदान की जो शक्ति है, फल देने की जो शक्ति है उसको क्या कहेंगे ? अनुभाग। अभी यहां हमने चार प्रकार के बंध देखे हैं। बहन कौन-कौनसे देखे हैं अभी आपने सुना न ? प्रकृतिबंध आदि। *श्रोता: प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, स्थितिबंध और अनुभागबंध।*

बहुत अच्छा ! देखो, कितना आसान है कि नहीं ? यहां जो चार प्रकार के बंध हमने देखे हैं उनमें से प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध है उसमें निमित्त कौन है ? तो कहते हैं योग और जो स्थितिबंध है और अनुभागबंध है उसमें निमित्त कौन है ? तो कहते हैं

मोह। इस मोह में मिथ्यात्व और राग-द्वेष के परिणाम दोनों को लेना। कषाय प्लस तीनों को मतलब मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद को। ख्याल में आया ? अब जब मिथ्यात्व निकल जाता है यानी चौथा गुणस्थान किसी जीव को प्राप्त होता है, तो उसके मिथ्यात्व कर्म का अनुदय होता है। तब वहां राग और द्वेष के जो परिणाम हैं, उसके कारण स्थिति और अनुभाग बंधते हैं। देखो मजे की बात ऐसी है प्रवीणभाई, हमने तो अनेकों बार सुना है और वह बात गलत है ऐसा नहीं बताना चाहता हूं मैं। गुरुदेवश्री कहते हैं कि 'चौथा गुणस्थाने अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ अने मिथ्यात्वनो अभाव थाय छे।' द्रव्यानुयोग ऐसा ही कहेगा लेकिन करणानुयोग की भाषा में कहेंगे कि इन सात कर्मों का अनुदय होगा यानी या तो उनका उपशम होगा या तो उनका क्षयोपशम होगा या तो उनका क्षय होगा। इनको मिलकर एक शब्द में अनुदय कह देना।

देखो हर अनुयोग की भाषा जुदी-जुदी होती है। ऐसी बात हुयी हो मौसी- हम किसीसे चर्चा कर रहे थे, तो वह बोलने लगे कि अभाव होता है, ऐसा तुम कहते हो यह गलत है। मैंने कहा ऐसा कैसा, हमने तो गुरुदेवश्री से सुना हुआ है और आप ना बोलते हो। अरे बिलकुल नहीं। वे तो करणानुयोग के स्पेशालिस्ट थे। तो उन्होंने हमको यह बात समझायी और जब हमने गुणस्थान आदि का अभ्यास किया, तो उसमें हमें पता लगा कि हम जो शब्द वापर रहे हैं 'अभाव हो गया', लेकिन वह बिलकुल ऐसा है नहीं। यह तो भाई मैं यह नहीं कहना चाहता हूं कि अभाव हुआ है, होता है, यह कहना गलत है। द्रव्यानुयोग में ऐसा ही कहा जायेगा। लेकिन देखो एक जनरल स्टेटमेंट होता है, सामान्य कथन और एक होता है विशेष कथन। आपको समझना है।

यह सुदर्शन मेरु पर्वत आपको मालूम है, हां बहन, सुदर्शन मेरु पर्वत किधर है मालूम है आपको ? नहीं। देखा है आपने ? नहीं। बहनजी ने देखा है, वे बतायेंगे। बोलो-बोलो ! पहले देखा है कि नहीं इतना तो नक्की करते हैं हम। अरे वहां अनंतों बार जन्म लिया है। ख्याल में आया? यह सुदर्शन मेरु की ऊंचाई कितनी है ? प्रमोदभाई आप जानते हैं ? हां-हां, कौन बोल रहे हैं पीछे से, जरा हाथ उठाना साहब। *श्रोता: एक लाख योजन।* एक लाख योजन, यह बात सही है क्या गलत है ? *श्रोता: एकदम सही है।* हां, सही है, एकदम सही है। बहुत अच्छा और विरेशभाई बतायेंगे। *श्रोता: एक लाख चालीस योजन।* क्या बताया ? एक लाख चालीस योजन। उसकी चूलिका है न भाई। लेकिन हम जनरल बोलते हैं एक लाख योजन। कोई गलती नहीं है,

सही है लेकिन एक लाख चालीस योजन यह बिलकुल सही है। विशेष जो है वह बिलकुल सही है। ख्याल में आया ? तो हम यह नहीं कहना चाहते कि तुम्हारा कथन गलत है, क्योंकि हमें आगेवाले चालीस योजन की बात मालूम नहीं है। शास्त्रों में भी लिखा है कि एक लाख योजन का है। ख्याल में आया ? वह गलत नहीं है, लेकिन उससे विशेष जो है वह सही है। ख्याल में आया ? इसीतरह यहां क्या कहा कि जो मोह और योग के निमित्त से यानी यह मोह जो है, यह मोहनीय कर्म है; यह योग जो है, वे कोई जीव को जबरदस्ती ऐसा काम करावे ऐसी बात नहीं है। यहां श्रद्धा और चारित्र गुण की जो अवस्थायें पलटती हैं वे अपनी स्वयं की योग्यता से, उस समय की योग्यता से जैसी जो होनी हैं होती हैं और उस समय वहां मोह और योग के निमित्त से ये बातें होती हैं।

चलो अभी हम आगे बढ़ते हैं। तो गुणस्थान किसको कहना इसको हम एक बार फिर से देखते हैं। आप भी रिपीट करेंगे और मुझे विश्वास है कि सबको अभी याद हो गया होगा। देखो नहीं तो मैं आपसे बुलवाऊंगा, आपको बोलना ही चाहिये। पहले तो अलाउड है कि आप बोर्ड पर से देखकर बोल सकते हैं, उसमें कोई चिंता नहीं है। अभी मैं जैसा बोलूंगा आपको रिपीट करना है, मैं जल्दी-जल्दी बोलूंगा और आपको भी जल्दी-जल्दी बोलना है, क्योंकि अपने को विषय और कव्हर करना है। तो कहते हैं मोह और योग के निमित्त से, *श्रोता: मोह और योग के निमित्त से,* श्रद्धा और चारित्र गुण की, *श्रोता: श्रद्धा और चारित्र गुण की,* होनेवाली तारतम्यरूप अवस्थाओं को, *श्रोता: होनेवाली तारतम्यरूप अवस्थाओं को,* गुणस्थान कहते हैं। *श्रोता: गुणस्थान कहते हैं।* तो पहले जो हमने निमित्त की बात देखी वह कौन बतायेगा ? निमित्त से जो बात हुयी थी। हां आप बतायेंगे ? *श्रोता: मोह और योग के निमित्त से।* बहुत अच्छा, मोह और योग के निमित्त से। और आगे कौन बताना चाहेगा ? हां बोलो साहब ? *श्रोता: जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण की होनेवाली,* जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण की होनेवाली तारतम्यरूप अवस्थाओं को। देखो भैया, यह तारतम्य यानी एक से अधिक अवस्था होनी चाहिये कि नहीं ? तो अवस्थाओं को यह सही है। एक अवस्था तो नहीं, अनेक अवस्थायें हैं, उसमें से हम गुणस्थानों को लेंगे।

देखो, कितनी आसान बात है, गुणस्थान किसको कहते हैं ? तो तारतम्यरूप अवस्थाओं को कहते हैं। ये किसकी तारतम्यरूप अवस्थायें हैं ? तो श्रद्धा और चारित्र

गुण की। ये किसके गुण हैं ? तो जीव के। ये श्रद्धा और चारित्र गुण की होनेवाली जो तारतम्यरूप अवस्थायें हैं उनको गुणस्थान कहते हैं। कार्य तो हुआ है उसमें निमित्त तो कोई होना चाहिये ? तो है न ! हां-हां है न, मोह और योग के निमित्त से। देखो गुणस्थान का यहां शिबिर चलनेवाला है, ऐसा सुनते हैं तो पहले से हमें घबराहट होती है। यह बहुत आसान चीज है। ख्याल में आया ? उसमें कोई कठिनाई नहीं है। अभी कौन, पूरी परिभाषा कौन बोलना चाहेगा ? दिलीपभाई आप बतायेंगे ? देखकर बोलो, घबराना मत। *श्रोता: मोह और योग के निमित्त से जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण की होनेवाली तारतम्यरूप अवस्थाओं को गुणस्थान कहते हैं।* बहुत अच्छा, कोई बताना चाहेगा ? अंजू आप बताओ। *श्रोता: मोह और योग के निमित्त से जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण की होनेवाली तारतम्यरूप अवस्थाओं को गुणस्थान कहते हैं।*

बहुत अच्छा ! यानी आपको अभी आ गया ऐसा समझकर मैं आगे बढ़ूंगा। ख्याल में आया न ? क्योंकि ऐसा है न कि हमारे पास तो बहुत शॉर्ट टाइम है, इसमें हमें आगे बढ़ना है और अभी तो आप सिर्फ समझना। जैसे गाय होती है न गाय, वह क्या करती है ? चारा खाती है और फिर बाद में जब टाइम मिलेगा तब जुगाली करती है। जुगाली समझ में आया न। वैसे अभी ३० घंटों में जो मिले वह आपको सिर्फ खाना ही खाना है। फिर घर में जाकर, हां क्या करे अपने पास टाइम नहीं है न, इधर दस दिन का शिबिर लगे तो लोगों को कहां फुरसत है ? चलो हां, आपका कुछ प्रश्न था ?

श्रोता: तारतम्य जो लिखा है न उसको वह शब्द... / आप लेट आये हैं मेरे ख्याल से। मैंने बताया था तरतम। तरतम यानी गुड, बेटर, बेस्ट। मंदतर, मंदतम यह भी बताया था। हां तो अभी उसमें क्या प्रॉब्लेम है ? *श्रोता: एक ही शब्द आया था विशेष गुण, समानार्थ से ?* यहां दिया है न, हीनाधिक अवस्था। पुस्तक है न आपके पास ? अब देखो, इसको हम समझने के पहले, हम गुणस्थानों के नाम पहले देखते हैं। हां, तो यहां बोर्ड पर आपको ये नाम दिखेंगे। आप देख लीजियेगा और आपको उनके नाम देखना हो तो हम यहां पर भी देख सकते हैं, पेज नंबर ५९। देखो यहां लिखे हैं गुणस्थान के भेद। वैसे तो जीवों के परिणाम अनेक होते हैं। कितने होते हैं जानते हैं आप ? जीवों के परिणाम कितने अलग-अलग व्हरायटिज में हैं ? तो कहते हैं असंख्यात लोकप्रमाण, जीवों के परिणाम जुदे-जुदे प्रकार के हो सकते हैं और वह भी कौनसे ? सिर्फ एक श्रद्धा गुण के लो या एक चारित्र गुण के लो या किसी भी गुण के लो। तो उसमें

व्हेरिएशन्स कितने होते हैं ? असंख्यात लोक।

असंख्यात लोकप्रमाण और लोकप्रमाण असंख्यात में क्या भेद है ? दिलीपभाई आप जानते हैं ? *श्रोता: नहीं।* हां, तो आपको पूछना चाहिये असंख्यात लोक क्या है हमको समझाइये साहब ! क्योंकि हम यहां समझने के लिये बैठे हैं न। देखो-देखो, अभी अपना यह जो लोकाकाश है, वह लोकाकाश यानी जो आकाशद्रव्य का एक पार्ट है। वह कितना ? बहुत छोटा पार्ट है उसका। वह कितना प्रदेशी है ? ऐसा जब हम देखते हैं तो उसको कहते हैं उसमें असंख्यात प्रदेश हैं। यह जो असंख्यात का प्रमाण हैं उसको कहेंगे लोकप्रमाण असंख्यात। जैसे घर में हम दो ही रहते हैं, तो हमारी इतनी छोटी कटोरी, उसमें चावल जितने आये उतना एक टाइम को हमको चावल चल जाता है। अब दस आदमी जीमने को आये, तो फिर क्या करेंगे। अभी कितना लेना ? अरे दो आदमी के लिये एक कटोरी तो दस आदमी के लिये कितने ? पांच। यह तो हम झट से हिसाब कर लेते हैं। तो हमने कितने चावल लिये। तो एक कटोरी में मान लो हजार चावल है, मान लो, तो पांच कटोरी में कितने होंगे ? ख्याल में आया ? इसीतरह से एक लोकाकाश जो है उसमें कितने प्रदेश हैं ? असंख्यात। तो वह असंख्यात कितने हैं ? तो लोकप्रमाण असंख्यात, लोकाकाश प्रमाण और ऐसे असंख्यात लोकप्रमाण। यानी हमने चावल लिये एक कटोरी, वह कितने ? हजार हैं और असंख्यात कटोरी लिये तो उसमें चावल कितने होंगे ? हजार गुणा असंख्यात। ख्याल में आया ?

वैसे यहां एक लोकाकाश में असंख्यात प्रदेश हैं, तो असंख्यात लोक में कितने प्रदेश होंगे ? ख्याल में आया ? असंख्यात लोकप्रमाण। इतने तो जीवों के परिणामों के व्हेरिएशन्स हैं भाईसाहब -तरतमता। अब उन सबको समेटकर चौदह गुणस्थानों में समेट दिया। क्योंकि असंख्यात गुणस्थान भी हो सकते हैं लेकिन वे याद किसको होंगे भाई ? ख्याल में आया ? चौदह को याद करते-करते तकलीफ होनेवाली है।

देखो यहां आप पढ़ सकते हैं। आपको बोलना है, क्योंकि जितना जल्दी-जल्दी हम बोलेंगे उतना जल्दी याद हो जायेगा। आपके सामने ५९ पेज पर है। **मिथ्यात्व**, *श्रोता: मिथ्यात्व।* **सासादनसम्यक्त्व**, *श्रोता: सासादनसम्यक्त्व।* **सम्यग्मिथ्यात्व**, *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व।* सब लोग बोलो, सबको बोलना चाहिये। देखो जिनेन्द्र भगवान की वाणी में जो बात आयी है वह बोलने में संकोच किस बात का और शरम किस बात की ?

ऐसा मत समझो कि हम के.जी. क्लास में बैठें हैं और कोई टीचर आया है और हम बुड्ढे, इसलिये वह हमारे से बुड्ढा है, ऐसा मत सोचना। हां, अब आगे, **अविरतसम्यक्त्व**, *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* **देशविरत**, *श्रोता: देशविरत।* **प्रमत्तविरत**, *श्रोता: प्रमत्तविरत।* **अप्रमत्तविरत**, *श्रोता: अप्रमत्तविरत।* **अपूर्वकरण**, *श्रोता: अपूर्वकरण।* **अनिवृत्तिकरण**, *श्रोता: अनिवृत्तिकरण।* **सूक्ष्मसाम्पराय**, *श्रोता: सूक्ष्मसाम्पराय।* **उपशांतमोह**, *श्रोता: उपशांतमोह।* **क्षीणमोह**, *श्रोता: क्षीणमोह।* **सयोगकेवली**, *श्रोता: सयोगकेवली।* **अयोगकेवली।** *श्रोता: अयोगकेवली।* ये **चौदह गुणस्थान** हैं।

१४ गुणस्थान	
१ मिथ्यात्व	८ अपूर्वकरण
२ सासादनसम्यक्त्व	९ अनिवृत्तिकरण
३ सम्यग्मिथ्यात्व	१० सूक्ष्मसाम्पराय
४ अविरतसम्यक्त्व	११ उपशांतमोह
५ देशविरत	१२ क्षीणमोह
६ प्रमत्तविरत	१३ सयोगकेवली
७ अप्रमत्तविरत	१४ अयोगकेवली

तो हमें पहले यह देखना है कि मैं इन चौदह गुणस्थान में हूं या नहीं ? पहले यह तो नक्की करो कि क्या मैं गुणस्थान में हूं या गुणस्थानातीत हूं। यह गुणस्थानातीत कौन होते हैं ? बहन आप जानती हैं ? आपके पास कोई गुणस्थान है क्या ? बोलो, घबराती क्यों है ? फर्स्ट टाइम आ रही है मेरे क्लास में ? *श्रोता: हां।* हां, तो तो घबरायेगी जरूर, कोई बात नहीं, बोलो साहब आप गुणस्थानातीत हैं या गुणस्थान में हैं ? तो हम गुणस्थान में हैं कि नहीं इसको तो पहले नक्की करें। देखो यहां चार्ट में हर एक को अलग-अलग कलर दिये हैं और वह क्यों दिये हैं वह भी हम देखेंगे। पहले में पहले यह तो देखो कि क्या हम अयोगकेवली हैं ? आपको केवलज्ञान है कि नहीं ? बोलना मत हो, नहीं तो। अपने को अपना गुणस्थान नक्की करना है। अपना गुणस्थान कौनसा है किसीको मत बोलना, लेकिन यहां उत्तर देना। क्या हमें केवलज्ञान है ? नहीं। तो ना हम हम अयोगकेवली यानी चौदहवें नंबर के गुणस्थान में हैं और ना हम सयोगकेवली यानी

तेरहवें गुणस्थान में हैं। चौदह गुणस्थान में से दो गुणस्थान हट गये।

अभी आगे क्या कहते हैं ? देखो, क्षीणमोह- क्षीणमोह यानी जिनका मोह नष्ट हो गया है। ऐसा हम किसीको देखते हैं साहब आप थोड़े क्षीण हो गये हैं। पहले तो बहुत अच्छी तबियत थी। वह क्षीणवाली बात यहां नहीं है हो। इस क्षीण का अर्थ है नष्ट हो जाना। जिनके मोह नष्ट हुये हैं वे कौनसे गुणस्थान में हैं ? क्षीणमोह, वह बारहवां गुणस्थान है। तो क्या आपका मोह नष्ट हुआ है ? *श्रोता: नहीं।* अच्छा, नहीं हुआ है। तो उपशांतमोह, यानी हमारे मोह उपशमित हुये हैं, क्या ऐसी बात है ? अच्छा मैं आपको थोड़ा ऐसा भी पूछूंगा- यह जो उपशांतमोह और क्षीणमोह जो ग्यारह-बारह नंबर के गुणस्थान हैं वे किनको होते हैं ? *श्रोता: मुनिराजों को।* मुनिराजों को। किसने उत्तर दिया ? *श्रोता: सबने दिया है।* सबने दिया, अरे वाह। यह बहुत बढ़िया। यह तो निश्चित हो गया कि हमारे जैनधर्म के अनुसार वस्त्र सहित कोई मुनि हो नहीं सकता। तो हम ना क्षीणमोही हैं और ना उपशांतमोही हैं। अब उसके और पीछे जायेंगे। तो सूक्ष्मसाम्पराय, सूक्ष्म यानी बिलकुल छोटा, है नहीं जैसा। साम्पराय यानी कषाय। तो हमारे कषाय कितने हैं ? ए बाजू हटो, कितनी देर से धक्का मार रहे हो। चुपचाप नहीं बैठ सकते क्या। तो हमारे उपशांतमोह, क्षीणमोह हुये हैं कि नहीं। ख्याल में आया ? वह दसवां गुणस्थान भी मुनिराजों के होता है। अब कहां होता है, क्या होता है, श्रेणी में होता है, कैसे होता है वह सब बात देखेंगे हम। किसीको छोड़ने का नहीं है। तो यह बात नक्की हो गयी कि हम दसवें गुणस्थान में नहीं हैं।

तो उसके पहलेवाला कौनसा है ? नौ नंबर अनिवृत्तिकरण। वह भी मुनियों का है, तो उसमें भी हम नहीं हैं। फिर उसके पहले अपूर्वकरण, वह भी हमारा गुणस्थान नहीं हो सकता है। तो उसके पहले है, अप्रमत्त गुणस्थान वह भी मुनिराजों का है। तो आप में से कोई होगा कि नहीं ? *श्रोता: नहीं।* किसीने दाढ़ी बढ़ायी हो तो, वह तो ? अरे हमारे मुनिराज केशलोच करते हैं, दाढ़ी नहीं बढ़ाते हैं। तो हम सातवें गुणस्थान में भी नहीं हैं और छठे में भी नहीं हैं; ख्याल में आया ? अभी यह हो सकता है हो- कि यह जो पांचवां गुणस्थान है। महेन्द्रभाई उसका नाम क्या है ? *श्रोता: देशविरत।* अरे अहीं लख्यु छे ने सांभळो ने ! यह देशविरत। तो देशविरत का अर्थ क्या है मालूम है ? पार्शल विरत, पार्शल यानी थोड़ासा। तो वह थोड़ासा बोलने के लिये आप इतना टाइम लेते हैं। देखो देशविरत। तो आप में से कोई यहां जो होंगे, हो सकता है कि वे पांचवें गुणस्थान

में हैं। लेकिन वह है कि नहीं उसको भी हम देखेंगे जब पांचवें गुणस्थान तक पहुंचेंगे। तब अपने को ही निश्चित करना है कि क्या मैं इस गुणस्थान में हूं ?

अब उसके पहले कौनसा है ? *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* अविरतसम्यक्त्व, तो क्या आपको सम्यक्त्व हुआ है क्या नहीं ? वह आप बोलना मत, नक्की करना। क्योंकि हमें हम कौनसे गुणस्थान में हैं यह नक्की करना है, बाजूवाले को नहीं बताना है। हां क्योंकि आप कहोगे हां मैं सम्यक्त्वी हूं, व्हॉट इस द प्रूफ ? चुप बैठो, कोई पूछनेवाला नहीं। ख्याल में आया ? लेकिन उसमें ऐसी गड़बड़ी मत करना। कौनसी गड़बड़ी ? कि हम मान बैठें कि हम सम्यक्त्वी हैं। तो आपने क्या कर दिया ? सम्यक्त्व की फाइल बंद कर दी। नहीं समझे ? यह फाइल कौन बंद करता है मालूम है ? *श्रोता: केस निपटाते हैं।* हां, यह कोई गुनाह करता है, खून करता है और वह खूनी मिलता नहीं है। एक दिन हो गया, दो दिन हो गये, महीना हो गया, दो महीने हो गये, साल हो गया, डेढ साल हो गया, दो साल हो गये। पुलिस क्या करते हैं ? फाइल क्लोज डाउन करते हैं, फाइल बंद कर देते हैं। यानी उसके आगे वह किसने खून किया ढूंढ़ते ही नहीं। वैसे अगर मैंने नक्की किया कि मैं सम्यग्दृष्टि हूं और बाय चान्स हम सम्यक्त्वी नहीं हैं, तो हमने हमारे पैर पर कुल्हाड़ी मार ली है। क्योंकि आप इतना-इतना करो तो आपको सम्यक्त्व हो गया ऐसा डिक्लेअर करनेवाले भी होते हैं। क्यों ? डिक्लेअर करनेवाले का क्या जाता है। मैं आपको एक डिग्री दे दूं, आप एम. कॉम. एल. एल. बी. हो। मेरा क्या जाता है और तुम समझो कि मैं एम. कॉम. एल. एल. बी. हूं, तो नुकसान किसका होगा ? देनेवाले का या लेनेवाले का। *श्रोता: लेनेवाले का।* वैसे आपको आज डिक्लेअर कर दें कि आप सम्यक्त्वी हो और आप मान जाओ कि वाह ! तो क्या होगा ? उस भव में जब तक तुमको सही ज्ञान नहीं होता है तब तक आपकी फाइल ? तो पहले में पहले यह नक्की करना कि क्या मेरे में सम्यक्त्व है ? तो वह अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान है। अभी अविरत क्या होता है ? वगैरह-वगैरह बातें हम देखेंगे।

अब यह जो तीसरा गुणस्थान है और यह दूसरा गुणस्थान है, अभी बहुत स्थूलरूप से मैं बताता हूं। वे गिरने के गुणस्थान हैं। स्थूलरूप से मैंने कहा हो क्योंकि आगे हम उसको सुधार करेंगे। यानी चौथे गुणस्थान की प्राप्ति के बाद वह जीव या तो तीसरे में आ सकता है या दूसरे में आ सकता है। तो जिसको सम्यक्त्व ही नहीं हुआ है, क्या वह सम्यग्मिथ्यात्वी हो सकता है? और उसका काल तो केवल एक अंतर्मुहूर्त है -

सम्यग्मिथ्यात्व का। और सासादन का ? वह भी छोटा ही काल है। वह कितना है बतायेंगे ? मिनिमम एक समय और अधिक से अधिक छह आवली। यह सिर्फ नाम आपको याद रखने हैं, फिर उसका अर्थ भी हम करेंगे। अभी हम चौदह गुणस्थान से नीचे उतरते-उतरते-उतरते यहां से यहां दूसरे तक पहुंचे हैं। तो इसमें तो अपना कोई गुणस्थान दिख नहीं रहा है। मैं तो इन जनरल बोल रहा हूं हो, कोई यहां सम्यग्दृष्टि जीव हो तो मुझे माफ़ करना। मैं उनके लिये नहीं बोल रहा हूं। तो अभी अपना कौनसा गुणस्थान रह गया यह नक्की करना। *श्रोता: मिथ्यात्व।* ख्याल में आया ?

यह बात ऐसी है कि जब हम चौदह गुणस्थान के नाम याद करते हैं, तो देखो यह याद करने का तरीका भी बहुत आसान है। ये पहले चार गुणस्थान हैं न, ये कौनसी स्याही में लिखें हैं ? *श्रोता: काले।* काले, तो इनकी देखो कैसी विशेषता है ? पहले का एण्ड है मिथ्यात्व, तीसरे का एण्ड है मिथ्यात्व। दूसरे का एण्ड है सम्यक्त्व और चौथे का एण्ड है सम्यक्त्व। अभी इसमें क्या बात है देखो। पहले गुणस्थान का नाम है मिथ्यात्व। तीसरे गुणस्थान का नाम है सम्यग्मिथ्यात्व। दूसरे गुणस्थान का नाम है ? *श्रोता: सासादन।* सासादन नहीं बोलना, सासादनसम्यक्त्व पूरा बोलना। और चौथे गुणस्थान का नाम ? *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* अविरतसम्यक्त्व। ये चार गुणस्थान तो याद हो गये न सबको ? भाईसाहब आप बताइये चौथे गुणस्थान का नाम ? *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* जोर से बोलना। बोलो - *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* बहुत अच्छा ! आपकी आवाज टेप में आनी चाहिये न भाई। दूसरे गुणस्थान का नाम ? *श्रोता: सासादनसम्यक्त्व।* सासादनसम्यक्त्व, पहले गुणस्थान का ? *श्रोता: मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व, और कौनसा रह गया ? तीसरा गुणस्थान ? *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व।* सम्यग्मिथ्यात्व।

अभी चारों ही गुणस्थान के नाम कौन बतायेगा ? अंजू आप बताओ। *श्रोता: मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अविरतसम्यक्त्व।* बहुत बढ़िया ! देखो यह लोग पहले टाइम गुणस्थान में आ रहे हैं हो, फिर भी सब फटाफट याद करते हैं। ऐसा सबको याद होना चाहिये। अब उलटे क्रम से कौन बताना चाहेगा ? हां बहन आप बोलो। *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* अविरतसम्यक्त्व, *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व।* सम्यग्मिथ्यात्व, *श्रोता: सासादनसम्यक्त्व।* सासादनसम्यक्त्व, *श्रोता: मिथ्यात्व।* बहुत अच्छा ! चौदह में से चार तो हमने याद कर लिये। कितना आसान है ?

अब उसके आगे क्या है ? देखो, देखो। यह जो है न एक, दो और तीन ये ब्लू अक्षर में लिखें हैं। क्योंकि हमारे पास काली इंक नहीं थी न, तो इसलिये हमने अलग इंक में लिखा- ऐसा नहीं समझना। यहां क्या लिखा है ? विरत, विरत, विरत। एक बार विरत याद हो गया तो तीनों में विरत आ गये। यानी आपका वन थर्ड काम तो हो गया। अब पहले में क्या है ? पांचवां नंबर जो है वह देशविरत। क्या नाम है साहब ? *श्रोता: देशविरत।* और छठे का नाम ? *श्रोता: प्रमत्तविरत।* अभी यह प्रमत्तविरत क्या होता है ? देशविरत क्या होता है ? यह तो हम जरूर समझेंगे ही, लेकिन पहले नाम को तो याद रखो। क्योंकि अभी हम जब देखेंगे कि पहले गुणस्थान से जीव कौन-कौनसे गुणस्थान में जा सकता है, तो पहला, दूसरा, चौथा ऐसा नहीं बोलना है। गुणस्थानों के नाम लेने हैं। हां इसलिये अभी आपको नाम याद करा रहा हूं। क्या कहा ? देशविरत, बोलो सब। *श्रोता: देशविरत।* प्रमत्तविरत, *श्रोता: प्रमत्तविरत।* अप्रमत्तविरत। *श्रोता: अप्रमत्तविरत।* अभी यह जो पांचवां गुणस्थान है जिसका नाम देशविरत है, वह देशविरत पंचम गुणस्थानवर्ती जीव यानी जिनको हम श्रावक कहते हैं उनको अवश्य होता ही है। देखो भैया शास्त्र में तो चौथे गुणस्थानवर्ती श्रेणिक राजा को भी श्रावकोत्तम कहा है, लेकिन वह उसको पदवी दे दी है। श्रावक जो होते हैं पंचम गुणस्थानवर्ती उनको ही श्रावक कहेंगे, ॲज पर रूल। अब प्रमत्तविरत यानी जिनमें अभी प्रमाद बाकी है लेकिन जो व्रती हैं ऐसा जो छठवां गुणस्थान है वह प्रमत्तविरत है। और जिनमें शुद्धोपयोग चल रहा हो ऐसे जो भावलिंगी मुनिराज हैं, उनका नाम है अप्रमत्तविरत।

अभी आगे आठ, नौ ये दो जो हैं उनमें दो बातें बिलकुल कॉमन हैं। कौनसी ? *श्रोता: करण।* करण, तो करण में क्या है ? एक अपूर्वकरण। यह करण यानी जीवों के परिणाम। वे कैसे हैं ? अपूर्व पहले कभी उसने, अनादिकाल से आज तक की ज़िन्दगी में कभी किये ही नहीं थे। ऐसे जो हैं उसका नाम है - अपूर्वकरण और उसके आगे का नाम है अनिवृत्तिकरण। यानी जिसमें भेद नहीं है, समान परिणाम होते हैं। वह क्या-क्या होता है हम अभी आगे देखेंगे। तो उसका नाम है अनिवृत्तिकरण। तो ये दोनों करण-करण हो गये। अभी एक अकेला रह गया सूक्ष्मसाम्पराय। दूसरे किसीके साथ उसकी कंपॅरिझन नहीं है। अब आगे कौनसे रह गये। मोह-मोहवाले। एक है जिनके मोह उपशमित हुये हैं, सत्ता में हैं, उदय में नहीं आ रहे हैं। वह क्या है ? उपशांतमोह और दूसरे कैसे हैं ? बारहवें गुणस्थानवर्ती, जिनका मोह नष्ट हो गया है वह क्षीणमोह।

जो तेरहवां और चौदहवां है वह तो सयोगी यानी केवली जीवों की वह बात है। देखो, सयोग यानी तेरहवां गुणस्थानवर्ती जो जीव है, वह कैसा है ? योग के साथवाला है। हां साहब, तो योग के साथ है इसलिये उनको सयोगी कहा और चौदहवें गुणस्थान में योग भी निकल जाता है, उनको कहेंगे अयोगी।

अभी यह अलग-अलग स्याही में लिखने का प्रयोजन यह है कि हमें जल्दी-जल्दी याद हो जायेगा। ग्रुप ऑफ फोर - मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अविरतसम्यक्त्व। फिर ग्रुप ऑफ थ्री - देशविरत, प्रमत्तविरत, अप्रमत्तविरत। फिर करणवाले दो - अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण। अब रह गया दसवां, वह कौनसा ? एकला चालो रे, अकेला है उसका नाम है सूक्ष्मसाम्पराय। फिर मोहवाले दो हैं। कौनसे दो हैं ? *श्रोता: उपशांतमोह और क्षीणमोह।* उपशांतमोह और क्षीणमोह। केवलीवाले कितने हैं ? दो कौनसे हैं ? *श्रोता: सयोगकेवली और अयोगकेवली।* सयोगकेवली और अयोगकेवली। अभी आंख बंद करके चौदह के चौदह कौन बोलना चाहेगा ? आंख बंद करने के लिये इसलिये बोल रहा हूं नहीं तो आपकी नजर इधर जावे और आपको आता हुआ भी आप भूल जावे। *श्रोता: मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अविरतसम्यक्त्व, पांचवां-देशविरत, छठवां-प्रमत्तविरत, सातवां-अप्रमत्तविरत, आठवां-अपूर्वकरण, नौवां-अनिवृत्तिकरण, दसवां-सूक्ष्मसाम्पराय, ग्यारहवां-उपशांतमोह, बारहवां-क्षीणमोह, तेरहवां-सयोगकेवली और चौदहवां-अयोगकेवली।* बहुत बढ़िया। भाईसाहब ने बहुत अच्छी तरह से बताया। देखो वे मेरे हिसाब से मेरे से भी उम्र में अधिक हैं। मेरे हिसाब से, मैं जानता नहीं हूं उनको, सेकंड टाइम मिल रहा हूं। लेकिन उनको देखो ऐसा नहीं कि मैं कैसा बोलू। उन्होंने बहुत अच्छी तरह से बताया। यह बताता है, इनको इस बात की रुचि है। हमें बोलने में कोई संकोच नहीं होना चाहिये अगर मैं गलती करूं तो ? करो न ! आज तक क्या किया है तुमने ? अगर हम गलती नहीं करते तो सिद्धों के पास बैठते और अभी कहां बैठे हैं ? गधों के साथ। कहने का मतलब यह है कि हम गलती करेंगे इस भय से ही आधे हो जाते हैं।

मैं आपसे पूछता हूं आप जब छोटे थे, एकदम इतने-इतने छोटे, तो चलते-चलते गिरते थे तो क्या करते थे ? वहीं पड़े रहते थे ? तो ? उठ खड़े होकर भागते थे। है न ! क्या हमें अगर हमारे से कोई गलती हो जाये तो सुधारने के चान्स नहीं है क्या ? हम कोई गलती करते हैं तो सुधर जायेंगे, उसमें क्या बड़ी बात है। बिलकुल ऐसा मत

सोचना। यह हम तो हमारे पं. बाबूभाई के चेले हैं। वे जैसा सिखाने में एक्स्पर्ट हैं वैसे हम भी कोशिश करते हैं। प्रश्नोत्तर में लोग जागरुक रहते हैं और उत्तर देंगे तो वह बात एक बार अंदर जायेगी तो कहीं बाहर नहीं निकलेगी। हमको तो लोग बोलते हैं तुम टीचर हो। हां भाई टीचर हैं, चल न ! तुम वक्ता नहीं हो। नहीं हैं भाई। तो हम तो अपने घर की बात नहीं बता रहे हैं। हम तो जिनेन्द्र भगवान की बात बता रहे हैं।

देखो-देखो, अभी मुझे पूछना है परमात्मा जिसको हम कहते हैं, वे परमात्मा कितने प्रकार के हैं ? कौन बताना चाहेगा ? हां बोलो बहन। *श्रोता: दो परमात्मा हैं।* दो परमात्मा हैं। कौन-कौनसे ? सकल परमात्मा और ? *श्रोता: निकल परमात्मा।* तो निकल परमात्मा किसको कहेंगे ? *श्रोता: सिद्ध भगवान।* सिद्ध भगवान और सकल परमात्मा ? हम कहते हैं अरिहंत भी दो प्रकार के हैं। हां, अरिहंत भी दो प्रकार के हैं। कौन बताना चाहेगा ? *श्रोता: केवली भगवान और तीर्थंकर भगवान।* सयोगकेवली और अयोगकेवली। तेरहवें गुणस्थानवर्ती जीव भी अरिहंत अवस्था के हैं और चौदहवें गुणस्थानवर्ती भी अरिहंत। हमने डिव्हिजन कैसी की ? अरिहंत और सिद्ध। निकल और सकल कहा न, तो सकलवाले जो हैं, स+कल, कल यानी शरीर और स यानी शरीर सहित हैं वे अरिहंत भगवान हैं। अरिहंत भगवान को देखेंगे तो उसमें भी सात प्रकार बताऊंगा मैं आपको। हमारे अमृतभाई आंख ऊपर कर रहे हैं, क्या बात है ? दिनेशभाई को जगह दी तो कुछ गड़बड़ी चल रही है। देखो पांच कल्याणकवाले, तीन कल्याणकवाले, दो कल्याणकवाले, एक सामान्य केवली, एक अंतःकृत केवली, एक ? *श्रोता: अनुबद्ध केवली।* अनुबद्ध नहीं, उपसर्ग केवली। और एक रह गया। *श्रोता: मूक केवली।* हां, मूक केवली। देअर यू आर, यह हो गये न, पहले तीर्थंकर के तीन प्रकार देखे न हमने। लेकिन हमें यह थोड़ासा मालूम होवें तो अच्छा लगता है आगे जाने के लिये। आगे ये सब बातें काम में आनेवाली हैं। यहां हमने देखा कि अरिहंत अवस्था के भी दो प्रकार के जीव हैं, एक सयोगकेवली और एक अयोगकेवली। अभी जो मुनियों की वगैरह जो अवस्था है, वे सारी बातें हम अगले लेक्चर में लेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

२. गुणस्थान सामान्य चर्चा, विभाजन

आज सुबह में हमने गुणस्थान किसे कहते हैं, इसको देखने की कोशिश की थी और मुझे विश्वास है कि आप लोगों को गुणस्थान किसे कहते हैं ? इसकी परिभाषा भी याद हो गयी है। कौन कह पायेगा गुणस्थान की परिभाषा ? हां, बोलो-बोलो, हां साहब कौन बतायेगा ? पहले में पहले तो निमित्त की बात की थी। हां, बोलो बेटा, *श्रोता: मोह और योग के निमित्त से,* मोह और योग के निमित्त से, *श्रोता: जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण की,* जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण की, *श्रोता: तारतम्यरूप अवस्थाओं को गुणस्थान कहते हैं।* तारतम्यरूप अवस्थाओं को गुणस्थान कहते हैं।

देखो जो हम पढ़ने जा रहे हैं न, वह हमको बाय हार्ट हो जावे तो आगे की बात समझने में बहुत आसानी होती है। क्योंकि जिसको हमें समझना है, गुणस्थान को समझना है और उसकी परिभाषा भी याद नहीं है तो हमें आगे बढ़ने में थोड़ीसी दिक्कत होगी। ये जो गुणस्थान हैं, उनको हमने चौदह में विभाजित किया था। तो चौथे गुणस्थान का नाम क्या है, हां बोलो बहन ? *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* अविरतसम्यक्त्व। बहुत अच्छा ! देखकर बोला न, बहुत अच्छा ! अभी बिना देखे चौदहवें गुणस्थान का नाम बोलो ? *श्रोता: अयोगकेवली।* अच्छा उधर भी देख लिया। बहुत अच्छा ! वह बच्चा कहता है, नकल करने को भी अक्ल की जरूरत है। आप हमारी नजर वहां से हटाओ तो हम पुस्तक के कव्हर पर देखेंगे, है न, बहुत अच्छा !

अभी हमने ये चौदह गुणस्थान देखे, उनके हम विभाजन करेंगे अलग-अलग अपेक्षाओं से। यानी ये चौदह गुणस्थान जो हैं वह किस अपेक्षा से उनके भेद किये गये हैं ? वह हम जानने की कोशिश करेंगे। अभी पहले चार गुणस्थान के नाम कौन बतायेगा ? हां बोलो बहन ? बोलो-बोलो, लिखा है, पढ़ो-पढ़ो, वांदा नहीं। मिथ्यात्व, *श्रोता: मिथ्यात्व।* सासादनसम्यक्त्व, *श्रोता: सासादनसम्यक्त्व।* सम्यग्मिथ्यात्व, *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व। श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* अभी देखो यह क्या कहते हैं ? पहला, दूसरा, तीसरा और चौथा गुणस्थान, ये चारों गुणस्थान जो हैं वे मोहनीय कर्म के उदय या अनुदय से उनका विभाजन किया है। मोहनीय कर्म यानी कौनसा ? मिथ्यात्व कर्म। मिथ्यात्व कर्म के उदय की अपेक्षा से उनका विभाजन किया गया है। ये जो चार गुणस्थान हमने देखे, उनमें कहीं दर्शनमोहनीय कर्म का उदय है और कहीं उसका

अनुदय है। उस अपेक्षा से उनका विभाजन किया गया है। पहले तो हमने देखा था कि चौदह के चौदह गुणस्थानों का मोह और योग की अपेक्षा से हमने विभाजन किया था।

अभी जो पांचवां गुणस्थान है, उसका नाम क्या है बहन ? *श्रोता: देशविरत।* हां देशविरत। तो देशविरत से लेकर बारहवें गुणस्थान, बारहवें गुणस्थान का भाईसाहब नाम क्या है ? *श्रोता: क्षीणमोह।* क्षीणमोह। तो यह कितने गुणस्थान हो गये ? ये पांच से लेकर बारहवें तक आठ गुणस्थान हो गये। इन आठ गुणस्थानों का चारित्रमोहनीय कर्म की अपेक्षा से विभाजन किया गया है। पहले हमें सिर्फ ये बातें सुननी हैं, उसका एक्स्प्लनेशन आगे आनेवाला है। पांचवें से बारहवें तक के गुणस्थान हैं, उनका विभाजन चारित्रमोहनीय कर्म के उदय या अनुदय की अपेक्षा से किया गया है। अब जो तेरहवां गुणस्थान है वह योग के सद्भाव से और जो चौदहवां गुणस्थान है वह योग के अभाव से उनका विवेचन किया गया है। यह बात ख्याल में आयी ?

फिर से मैं दोहराऊंगा क्योंकि यह बात नयी है न हमारे लिये, तो शायद समझने में थोड़ीसी... पहला, दूसरा, तीसरा और चौथा गुणस्थान जो हैं, ये चारों ही गुणस्थान दर्शनमोहनीय कर्म के उदय या अनुदय की अपेक्षा से उनका विभाजन किया गया है। यानी इन चारों में से किसी गुणस्थान में दर्शनमोहनीय का उदय है और किसी गुणस्थान में उसका उदय नहीं है उसको हमने अनुदय कहा। अब कौनसे गुणस्थान में उदय है और कौनसे गुणस्थानों में उदय नहीं है यह बात अभी हम डिस्कस नहीं कर रहे हैं। वह जैसे हम जिस-जिस गुणस्थान में प्रवेश करेंगे, यानी गुणस्थान के बारे में जानेंगे तो हमें वह बात ख्याल में आयेगी।

सुबह हमने ये गुणस्थान देखे हैं, तो मेरा एक प्रश्न पूछना रह गया था, अभी याद आया कि हमें गुणस्थान में प्रवेश करना है या हम स्वयं गुणस्थान में हैं ? *श्रोता: गुणस्थान में हैं।* हां साहब, हैं, तो हम कौनसे से गुणस्थान में हैं भाईसाहब ? *श्रोता: मिथ्यात्व।* हां-हां मिथ्यात्व यानी वह पहले नंबर का है। वहां भले ही पहला नंबर होवे लेकिन वह रॉयल गुणस्थान मत समझना। पहला नंबर तो विश्व में सबसे अच्छा बोलते हैं। यह पहला नंबर है, फर्स्ट क्लास फर्स्ट है। इनका मेरिट में फर्स्ट नंबर है। लेकिन यहां पहला गुणस्थान सबसे खतरनाक है। खतरनाक किस अपेक्षा से ? हमें मुक्तता पाने नहीं दे रहा है। अरे मुक्तता तो दूर की बात, अरिहंत अवस्था को भी प्राप्त नहीं

होने दे रहा है। अरिहंत तो छोड़ो, मुनि अवस्था को भी प्राप्त करने को नहीं दे रहा है। श्रावक भी नहीं बनने दे रहा है, अरे वह तो जाने दो, सम्यक्त्व भी नहीं होने दे रहा है। ऐसे गुणस्थान में रहना अच्छा या उसको छोड़ना अच्छा ? *श्रोता: छोड़ना अच्छा।* है न !

अभी हम देखेंगे कि यहां दर्शनमोहनीय कर्म का उदय हो, तो जीव सम्यक्त्व को प्राप्त नहीं करे और उसका अनुदय हो तो क्या-क्या होता है वह हम जाकर आगे देखेंगे। हमें तो अभी गुणस्थान जो हमारा है, रॉयल गुणस्थान, बादशाही गुणस्थान, उसको छोड़ना है। तो चौदहवें गुणस्थान को रखना कि नहीं रखना ? हां बोलो ? अंजू आप बोलो। *श्रोता: नहीं।* तेरहवां तो रखो ! वह तो, भाई उसमें तो अरिहंत अवस्था होती है, कोई तीर्थंकर भी हो सकता है। वह भी गुणस्थान रखना कि नहीं रखना ? *श्रोता: रखना।* हां रखना न ! हां, नहीं ? तो क्या होना है हमें ? हां जी ? *श्रोता: गुणस्थानातीत होना है।* गुणस्थानातीत होना है। यानी चौदह जो गुणस्थान हैं उन गुणस्थान से परे होना है। तो जिससे जुदा होना है, उसको जानकर क्या फायदा ? हमें मन में ऐसा ही लगता है कि जो हमारी वस्तु ही नहीं है, जो चीज हमारी है नहीं उसको हम क्यों जाने? वह तो छोड़नी ही है न ! अरे छोड़नी है, लेकिन वह क्या है, कैसे हैं और क्यों छोड़ने योग्य है ? इस बात को भी अगर हम नहीं जानेंगे, तो छोड़ने का विचार तक नहीं आयेगा। कल पं. बाबूभाईजी ने बहुत अच्छी बात की थी पहले में पहले श्रद्धा में तो यह पक्का करो कि यह छोड़ने लायक है। *श्रोता: जल्दी छोड़ेंगे।* हां, जल्दी छोड़ेंगे।

यहां तो जो गुणस्थान हैं उनका परिचय करके, वे क्यों छोड़ने लायक हैं ? वहां क्यों रुकने लायक नहीं है उस बात को नक्की करना है। देखो हम हमारी जिन्दगी का एकमेव कर्तव्य ऐसा मानते हैं कि हमें जिन्दगी में सम्यक्त्व होना ही चाहिये, सम्यक्त्व नहीं होगा तो यह जिन्दगी फिजूल है। लेकिन यहां कह रहे हैं भाई केवल चौथे गुणस्थान में ही तुझे रुकना है क्या ? क्यों ? हमें पहले में पहले कौनसी अवस्था चाहिये इस बात का हमें पक्का निर्णय नहीं होता है तब तक हम वहां नहीं पहुंचते हैं। हमें मुक्ति चाहिये, हमें सिद्ध अवस्था चाहिये, वह भी अवस्था है। फिर भी वह प्राप्त करने की जो रीति है वह बात जुदी है। लेकिन जो अवस्था है उस अवस्था तक पहुंचने के लिये वह क्या चीज है, वह जब तक हम नहीं जानेंगे तो हम वहां तक नहीं पहुंच पायेंगे। इसलिये पहले श्रद्धा में यह नक्की करो कि यह गुणस्थान नहीं है। क्या है ? दोषस्थान है। क्या कहा ? जब तक हमारे अंदर यह बात नहीं बैठती है कि अभी हम दोष...

देखो-देखो, मुझे आप सही बताना हो कि अरिहंत बड़े क्या सिद्ध बड़े ? *श्रोता: /सिद्ध बड़े/* सिद्ध बड़े। ख्याल में आया ? वह बनने के लिये हमें अरिहंत अवस्था की प्राप्ति तो करनी ही है। लेकिन अरिहंत अवस्था में भी अधिक से अधिक नहीं रुक सकते। अगर कोई जीव अरिहंत अवस्था में रुके तो आठ वर्ष कम एक कोटी पूर्व इतने काल तक रह सकता है; कोड़ाकोड़ी नहीं, एक कोटी पूर्व वर्ष में आठ वर्ष कम। क्योंकि कोई भी जीव अगर सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है कहो या केवलज्ञान की प्राप्ति करता है कहो, तो उसके उम्र के आठवें साल के बाद कुछ अंतर्मुहूर्त में करेगा। अभी एक करोड़ पूर्व यानी क्या है ? इस बात को भी हम समझेंगे। यह पूर्व यानी कितना होता है कोई जाने ? *श्रोता: ८४ लाख/* ८४ लाख क्या ? कोई बात नहीं, आप नजदीक आये लेकिन बहुत दूर हैं अभी। सुनना-सुनना, कोई बात नहीं। आपको यह कहना है आप आधे तक आये हैं। ८४ लाख वर्ष गुणा यानी इन टु ८४ लाख वर्ष। वह क्या होता है ? एक पूर्व होता है और उसके कितने वर्ष होते हैं ? सत्तर लाख छप्पन हजार करोड़ वर्ष। कितने हो गये ? सत्तर लाख यानी सेव्हन्टी लाख छप्पन हजार, इतने करोड़। और उतने करोड़ आपको पैसे मिल जावें तो ? हां देखो सबकी नींद उड़ गयी। पैसे मिल रहे हैं न ! अरे इतनी उम्र किसकी होती है ? ऐसा जीव अपने उम्र के आठ साल और कुछ अंतर्मुहूर्त में यदि केवलज्ञान प्राप्त करें, तो अधिक से अधिक इतने काल तक ही रुके। कौनसी ? अरिहंत अवस्था में और वह जीव नियम से सिद्ध होता है।

सिद्धों का काल कितना है, मालूम है भाई ? हां बहन आप होशंगाबादवाले बोलिये जरा। सिद्धों का काल कितना होता है? हां-हां, फिर से ? *श्रोता: सादिअनंत/* हां बहुत अच्छा, यहां बहनजी ने बताया। आज आप अभी सिद्ध है क्या ? तो अनादि से सिद्ध अवस्था नहीं है। जिसे प्राप्त होगी, बहुत अच्छा आपने उत्तर दिया, मुझे बहुत अच्छा लगा। क्योंकि हम जानना चाहते हैं। अभी किसीके सिद्ध अवस्था हुयी तो वह अनंतकाल तक सिद्ध, सिद्ध, सिद्ध, सिद्ध हर समय नयी अवस्था होगी। वही की वही नहीं होगी, लेकिन वैसी की वैसी अवस्था होगी और वह कब तक चलेगी ? तो कहते हैं अनंतकाल तक। इसलिये प्रवाह अपेक्षा से उसे कहते हैं कि सिद्ध अवस्था सादि अनंतकाल तक रहेगी और ऐसी अवस्था की प्राप्ति करने के लिये हमें अरिहंत अवस्था भी छोड़नी पड़ेगी। हम चाहते हैं कि हमें तीर्थंकर प्रकृति का बंध हो जाये तो कितना बढ़िया। अरे पर तीर्थंकर भी अधिक से अधिक इतने ही, एक करोड़ पूर्व में कुछ कम

अभी जो हमने देखा था, उतने ही साल तक रहेंगे। फिर नियम से वे सिद्ध होंगे।

हमें यह देखना है कि हम गुणस्थान में यानी दोषस्थान में हैं। यह सिद्ध अवस्था है वह निर्मल अवस्था है, शुद्ध अवस्था है। वहां कितने कर्मों का उदय है, सिद्ध अवस्था में ? *श्रोता: वहां हैं ही नहीं कर्म।* वहां हैं ही नहीं कर्म और अरहंत अवस्था में कितने कर्मों का उदय चल रहा है ? *श्रोता: चार।* तो वह उनके लिये अच्छा है ? देखो बात कैसी है। इस अपेक्षा से हम जब सोचते हैं, तब लगता है कि यह गुणस्थान को समझना आवश्यक है। अभी हमने क्या देखा कि पहले से लेकर चौथे तक जो गुणस्थान हैं उनका दर्शनमोहनीय कर्म के उदय और अनुदय की अपेक्षा से विभाजन किया गया है और पांचवें से लेकर बारहवें तक के गुणस्थानों का चारित्रमोहनीय कर्म के उदय और अनुदय की अपेक्षा से विभाजन किया है। अब आगे की बात कौनसी है ? तेरहवां गुणस्थान किसकी अपेक्षा से कथित है ? *श्रोता: योग के सद्भाव से।* योग के सद्भाव से। और चौदहवां गुणस्थान है वह योग के अभाव से। देखो यह हो गया मोहनीय कर्म की और योग की अपेक्षा से। हमने क्या देखा ? मोह और योग के निमित्त से, तो यह मोह और योग का निमित्त कहां है ? चौदहवें गुणस्थान तक, खल्लास। उसमें से मोह पहले निकल जायेगा, योग रहेगा। मोह और योग के निमित्त से जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण में होनेवाली तारतम्यरूप अवस्थाओं को गुणस्थान कहते हैं। देखो कितना आसान हो गया, समझने में भी आसान, बोलने में भी आसान, याद करने में भी आसान। आपको घर को जाकर कुछ नहीं करना है, यहीं याद हो जायेगा। ख्याल में आया ?

अब आगे कहते हैं, विरत और अविरत। विरत का अर्थ होता है व्रती, व्रत जिनके हैं और अविरत यानी जो व्रती नहीं हैं, जो असंयमी हैं, संयम जिनके नहीं है, उनको क्या कहा ? असंयमी, अविरत। अगर विरत और अविरत इनकी अपेक्षा से हम भेद करेंगे तो किसतरह से भेद हो सकते हैं ? यहां बता रहे हैं ये पहले चार गुणस्थान जो हैं एक, दो, तीन और चार- ये सारे कैसे हैं ? अविरत गुणस्थान हैं यानी असंयमी के गुणस्थान हैं। चौथे गुणस्थान का नाम क्या है साहब ? *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* अविरतसम्यक्त्व यानी वह असंयमी ऐसा जो गुणस्थान है, वहां संयम नहीं है, व्रत नहीं है और हम तो अभी हमारे में जो मिथ्यात्व है, उसको तो ऐसा ही साबुत रखना चाहते हैं। उसको तो हिला-डुला नहीं देते और हम तो व्रत धारण करते हैं और स्वयं को संयमी मानते हैं। यहां तो भैया नेमिचन्द्र आचार्य ने जिनेन्द्र भगवान की जो दिव्यध्वनि

खिरी उसके आधार से यह बात लिखी है कि चौथे गुणस्थान का नाम अविरतसम्यक्त्व है। इसलिये अविरत के गुणस्थान कितने ? तो कहते हैं चार। वे चार गुणस्थान के नाम क्या हैं बोलो बहन ? कौन बतायेगा ? बोलो-बोलो, जोर से बोलना। *श्रोता: मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अविरतसम्यक्त्व।* मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अविरतसम्यक्त्व। ये कैसे हैं ? अविरतवाले, मतलब व्रत नहीं हैं। देखो हम धोखे में रहते हैं। भाईसाहब आपको मालूम है हम ४० साल से रात का भोजन नहीं करते। तो क्या यह हमारा संयम नहीं है ? यह हमारे पास है तो निश्चितरूप से हम संयमी हैं। अरे बाबूजी तुमको सम्यक्त्व हुआ है कि नहीं ? अरे वह तो होगा, उसका क्या है, वह क्या है ? अभी इतना संयम पालना कोई मामूली बात है ! क्या समझते हो तुम ! तो वह कहां घूम रहा है, झूल रहा है ? समझ लेना हो।

देखो यह बनी हुयी बात है। डॉक्टर हुकुमचंदजी भारिल्ल जो अपने जयपुर के हैं, उन्होंने बतायी हुयी बात है हो भरी सभा में। उनके यहां एक व्यक्ति आये। बोले मैं प्रतिमाधारी हूं। आपके यहां यह बहुत अच्छा काम चल रहा है। यहां आप मेरी रहने की, ठहरने की, खाने की व्यवस्था करना। व्रतियों को आपको संभालना चाहिये नहीं तो जैनदर्शन डूब जायेगा। क्या साहब, मैंने इसका त्याग किया, उसका त्याग किया मैंने यह किया, वह किया, ऐसा वे बोलने लगे। बहुत अच्छी बात है कि आपने बहुत चीजों का त्याग किया है। लेकिन क्या मैं आपको पूछ सकता हूं ? वे बोले हां बोलो-बोलो, क्या है ? क्या मिथ्यात्व का आपने त्याग किया है ? अरे वह क्या चीज है ? कर देंगे, उसमें क्या है ? क्यों ? तो वह कौनसे गुणस्थान में है ? *श्रोता: मिथ्यात्व।* ख्याल में आया ? देखो बच्चे इतने भोले होते हैं, फट से उत्तर देते हैं और हमको लगता है हम कुछ बोल देवे तो। अरे घबराओ मत, तुम जितना फर्मली बोलोगे, उतनी तुम्हारी श्रद्धा भी अडिग हो जायेगी। ख्याल में आया ? तो अब उस व्यक्ति को वहां रखना कि नहीं रखना ? और नहीं रखा है तो क्यों रखा नहीं है यह तो समझ जायेंगे कि नहीं आप। तो क्या कह रहे हैं ? अरे भैया जो सम्यक्त्वी है, वे भी अविरत हैं।

फिर विरत के गुणस्थान कहां से कहां तक होंगे, हां कौन बताना चाहेगा ? गुणस्थान का नाम। *श्रोता: देशविरत।* हां देशविरत, वहां से लेकर। हां साहब, देखो जो बोले हाथ ऊपर उठाकर जोर से बोले। क्योंकि क्या है आपका क्या है ? तीन चार जन एकसाथ बोलते हैं न। बोलो बहन कहां से यानी कौनसे गुणस्थान से कौनसे गुणस्थान

तक ? *श्रोता: पांचवें से सातवें।* पांचवें से सातवें अच्छा और आप बोलते हैं बारहवें। हां बोलो बहन तुम कोल्हापुरवाले। हां-हां, क्या कह रहे हैं ? देखो जो संयमी और असंयमी ऐसे हमने देखे न - विरत और अविरत। अविरत के हमने चार गुणस्थान देखें। लेकिन पांचवें गुणस्थान का नाम क्या है ? *श्रोता: देशविरत।* देशविरत यानी वे संयमासंयमी हैं, पूर्ण संयमी नहीं हैं, वे पूर्ण व्रती नहीं हैं। तो उनको बाजू हटा दो। ख्याल में आया ? तो छठे गुणस्थान से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक के जीव नियम से व्रती हैं और जो पांचवें गुणस्थानवर्ती हैं वे विरताविरत हैं, संयमासंयमी हैं। तो जब हम व्रत की अपेक्षा से अगर सोचते हैं तो यह बात हमारे ज्ञान में आयेगी कि एक से चार जो हैं वे कैसे हैं ? अविरत। और पांचवें को छोड़कर आगे के व्रतवाले हैं और पांचवां जो है वह विरताविरत कहो, संयमासंयमी कहो, ऐसी उसकी क्वॉलिटि है। हां, क्या कह रहे हैं आप ?

श्रोता: अणुव्रती को संयमासंयमी कहते हैं ? हां अणुव्रती को ही संयमासंयमी कहते हैं और महाव्रती जो होते हैं वे छठे-सातवें से गुणस्थान के आगे तक होते हैं। तो यहां संयमी तो महाव्रती को ही कहा जाता है और जो पंचम गुणस्थानवर्ती होते हैं उनको संयमी नहीं कहेंगे, उनकी कॅटेगरी संयमासंयमी में है। वह भी बात आयेगी आगे, अभी तो हम पहले गुणस्थान तक नहीं पहुंचे हैं, पांचवें की बात कहां ? आ जायेंगे कल-परसों। तो अभी क्या कहा, अविरत और विरत की अपेक्षा से हम देखेंगे तो एक से चार तक अविरत और आगे छह से चौदहवें गुणस्थान तक विरत। कई जगह पांचवें को भी विरत में लेते हैं लेकिन डिटेल में देखा जाये तो उसके व्रत नहीं होते हैं।

यह तो हमने व्रत की अपेक्षा से देखा। अभी हम पूछते हैं ज्ञानी और अज्ञानी की अपेक्षा अगर हम इन चौदह गुणस्थानों का भेद करेंगे, तो उनमें से ज्ञानी कौन और अज्ञानी कौन ? यह हमें नक्की करना है। दिलीपभाई आप बतायेंगे ? *श्रोता: सातवें से आगे।* सातवें से आगे, आगे यानी कहां तक ? *श्रोता: चौदहवें तक।* चौदहवें तक। बहुत अच्छा और ? अज्ञानी किनको कहेंगे ? *श्रोता: एक से छह तक।* एक से छह तक, अच्छा, बहुत अच्छा। हां बहनों में कोई कहना चाहेगा ? हां कौन बोला ? *श्रोता: पहला और दूसरा अज्ञानी का।* पहला और दूसरा कौनसा है ? अज्ञानी का और आगे ज्ञानी, हां बोलो साहब- *श्रोता: पहला अज्ञानी।* हां, पहला अज्ञानी और आगे ? *श्रोता: बारह तक ज्ञानी।* बारह तक ज्ञानी और तेरहवां-चौदहवां ? देखो-देखो, हमें तो सबको सुनना हैं। कोई किसीको हंसे नहीं। भाई हर व्यक्ति को अपनी जो कोई सोच है, बतानी चाहिये।

हां, बाद में जो सत्य बात है उसे तो हम डिक्लेअर करेंगे न ! हां बोलो बहन ? *श्रोता: एक से तीन अज्ञानी।* एक से तीन अज्ञानी, *श्रोता: चार से चौदह ज्ञानी।* चार से चौदह ज्ञानी। और कोई कहना चाहेगा, आप कुछ बोल रहे थे।

श्रोता: मन और वचन यह दो ही अपने को निरंतर आस्रव किया करते हैं, इसलिये इनको मौन कर देना ज्ञान है बाकी मन और वचन के काल में होता है वह अज्ञान है। नहीं, अच्छा, तो जब छठे गुणस्थान में जीव शुभोपयोग में होते हैं तो उसको ज्ञानी कहेंगे कि अज्ञानी कहेंगे ? क्योंकि मन, वचन तो उनके अलग जगह, शास्त्र लिखने में लगा है, उपदेश देने में लगा है, तो उनको हम अज्ञानी कहेंगे ? और उन्होंने लिखे हुये शास्त्र हम पढ़े तो हम क्या हो गये, अज्ञानी से ? तो आपका जो लक्षण है ज्ञानी-अज्ञानी का वह गलत है। कोई बात नहीं, बोलो। *श्रोता: एक से तीन तक अज्ञानी बाकी सब ज्ञानी।* बहुत अच्छा, सही बात बतायी इन्होंने। अभी हम पहले देखते हैं।

देखो ज्ञानी और अज्ञानी की जब हम अपेक्षा से सोचते हैं तो उसको अलग-अलग अँगल से हम देखते हैं। जब तीर्थंकर उपदेश देते हैं तो तीर्थंकर के सामने जो गणधर बैठे हैं, वे भगवान ने जो कुछ बातें बतायी हैं, उसके माध्यम से ग्यारह अंग और चौदह पूर्व की रचना करते हैं। वे कहते हैं कि हे भगवन ! आपके सामने तो मैं अज्ञानी हूं। तो क्या वे अज्ञानी हैं ? देखो ज्ञानी और अज्ञानी की बात चल रही है। अब जो गणधर हैं, उनके सामने अन्य जो कोई मुनिराज हैं वे कहते हैं; कि आप ज्ञानी हैं, इतना बड़ा आपका ज्ञान का उघाड़ है, आपके सामने हम क्या हैं ? हम तो अज्ञानी हैं। अब छठे-सातवें गुणस्थान में झूलनेवाले जो मुनिराज हैं उनके सामने चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव, जो सम्यग्ज्ञानी हैं, वे भी ऐसा कह सकते हैं कि मैं तो अज्ञानी हूं। अब मैं आपसे पूछूंगा यह आपके सामने जो टेबल- मेज है, वह ज्ञानी है क्या अज्ञानी है ? *श्रोता: अज्ञानी।* क्यों। *श्रोता: क्योंकि वह अजीव है।* उसमें ज्ञान गुण है नहीं। तो मिथ्यादृष्टि भी ज्ञानी है। ख्याल में आया ? मिथ्यादृष्टि भी ज्ञानी है, क्यों ? उसमें ज्ञान गुण है। यहां तो हमें सम्यग्ज्ञान की अपेक्षा से विभाजन करना है ज्ञानी और अज्ञानी का। ज्ञानी का अर्थ क्या है ? जिस जीव ने आत्मानुभूति प्राप्त की है।

यह चौथे गुणस्थान का नाम क्या देखा था, हम भूल गये ? हां साहब ? *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* अविरतसम्यक्त्व यानी वह जीव सम्यक्त्वी है। जो जीव सम्यक्त्वी है

वह जीव सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र सहित है इसलिये उसको सम्यक्त्वी कहा है। ख्याल में आया ? अब यह कह रहे हैं कि चौथे गुणस्थान में ज्ञानी है, तो फिर आगे के सारे गुणस्थानों में ज्ञानी हैं। यानी केवलज्ञान भी ज्ञान की एक पर्याय है। चौथे में जो होंगे उनको सुमति, सुश्रुत और सुअवधि ऐसे तीन प्रकार के ज्ञान हो सकते हैं। लेकिन केवलज्ञानी में ? हां, कितने ज्ञान हैं ? केवलज्ञानी में ज्ञान के कितने भेद हैं ? *श्रोता: पांच।* पांच ? *श्रोता: एक।* एक। तो देखो गणधर को चार ज्ञान हैं। सभी सम्यक् समझना, मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय ज्ञान उनको नियम से होते हैं। तो वह अच्छा या एक केवलज्ञान होना अच्छा ? *श्रोता: एक केवलज्ञान।* हां, तो देखो भैया अगर हम ऐसा मानते हैं कि केवलज्ञान में पांचों ही ज्ञान समाये हुये हैं तो हम बहुत बड़ी गलती कर रहे हैं। क्यों-क्यों ? अभी आपको सिर्फ सुनना है, समझोगे कुछ दिन के बाद। तो क्या-क्या बात ? कैसे-कैसे समझाऊं ?

केवलज्ञान है उस ज्ञान को क्षायिकज्ञान कहते हैं। क्षायिकज्ञान यानी क्या ? ज्ञानावरण कर्म जो है वह सारा खतम हो गया है। तो ज्ञानावरण कर्म कितने प्रकार के हैं ? मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अभी कुमति को छोड़ो, मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण और मनःपर्ययज्ञानावरण। तो ये चारों ही ज्ञानावरण जो हैं उनके हिसाब से जीव को क्षयोपशमज्ञानी कहेंगे। क्षयोपशम ज्ञान जो पूरा ज्ञान नहीं है, कुछ अधूरा-अधूरा है। ख्याल में आया ? अभी हम बहुत स्थूलरूप से आपको बता रहे हैं। तो किसीके पास पूरा ज्ञान - केवलज्ञान भी है और अधूरा ज्ञान भी है, ऐसा हो सकेगा ? ख्याल में आया न ? क्षायिकज्ञान में क्या है ? पांचों ही ज्ञानों के आवरण नष्ट हुये हैं, तभी तो हम उसे क्षायिकज्ञान कह रहे हैं। इसलिये कहते हैं कि क्षायिकज्ञान है उसमें अन्य कोई ज्ञान नहीं हैं, जो अधूरे हैं, अस्पष्ट हैं। केवलज्ञान स्पष्ट है, परिपूर्ण है।

देखो हम आपको पूछते हैं कि कोई मेरे जैसा वृद्ध गृहस्थ होगा, उसको कॅटॅरॅक्ट हो गया। कॅटॅरॅक्ट समझते हैं न आप ? मोतिया, तो मोतिया हो गया तो क्या होता है ? बराबर स्पष्ट नहीं दिखता है। हमारे बम्बई में एक बहुत बड़ा अच्छा डॉक्टर था। उसने बोला आप मेरे पास आ जाओ, मैं आपका ऑपेरशन कर दूंगा। उसने ऑपेरशन कर दिया और मुझे बिलकुल साफ-साफ दिखने लगा। तो जब ऑपेरशन किया तो मुझे स्पष्ट भी दिखे और अस्पष्ट भी दिखे ऐसा होगा कि नहीं ? केवलज्ञान स्पष्ट ज्ञान है, प्रत्यक्षज्ञान है। केवली भगवान को प्रत्यक्षज्ञान भी है और परोक्षज्ञान भी है,

ऐसा नहीं होगा। बहुतों की यह भूल होती है कि केवलज्ञान में वे अन्य चार ज्ञान को भी इन्क्लूड कर देते हैं। क्योंकि अपना क्या जाता है, ले लो न ! ऐसा बिलकुल नहीं चलेगा। यहां पर अपनी कौनसी बात चल रही थी ? ज्ञानी किसको कहना और अज्ञानी किसको कहना? यह तो अपेक्षा से गणधर भी कहेंगे कि मैं अज्ञानी हूं, लेकिन वे सम्यग्ज्ञानी हैं। इसलिये हम देख रहे हैं कि चौथे गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक के जीव ज्ञानी हैं यानी सम्यग्ज्ञानी हैं और एक से तीन तक के अज्ञानी हैं। वह कैसा है; क्या है ? उसका भी और डिव्हिजन होगा। वह हम जैसे आगे के गुणस्थान सीखेंगे उस समय देखेंगे।

अब इसके बाद हम दूसरी बातों को देखेंगे। अभी यह तो हमने ज्ञान की अपेक्षा से बात देखी, अब चौदह गुणस्थानों में अल्पज्ञ के और सर्वज्ञ के गुणस्थानों का हमें डिव्हिजन करना है। तो कौनसे-कौनसे गुणस्थान होंगे अल्पज्ञ के ? हां बोलो बहन ? *श्रोता: एक से बारह अल्पज्ञ के।* एक से बारह कौनसे होंगे ? *श्रोता: अल्पज्ञ के।* और सर्वज्ञ के ? *श्रोता: तेरह और चौदह।* ख्याल में आया ? कितना आसान है। सिर्फ हम क्रायटेरिया बदलते हैं कि किस अपेक्षा से गुणस्थानों को हमें विभाजित करना है। तो हमने ज्ञान-अज्ञान की बात देखी। अभी अल्पज्ञ किसे कहना यह भी जरा मजे की बात है। इसलिये उसको भी हम देखना चाहेंगे। तो अल्पज्ञ किसे कहते हैं ? हां बोलो, अंजू आप जानती हैं ? अरे जिनके परिपूर्ण ज्ञान नहीं हुआ है, सर्वज्ञ नहीं हुये हैं।

यह अल्पज्ञ के लिये भी और एक शब्द आता है छद्मस्थ। क्या कहा ? छद्मस्थ। छद्म का अर्थ होता है आवरण और आवरण में जो स्थित हैं उनको छद्मस्थ कहते हैं। तो यह छद्मस्थ जीव कौनसे गुणस्थान तक होंगे दिलीपभाई ? *श्रोता: बारहवें गुणस्थान तक।* बारहवें गुणस्थान तक। क्यों उनको बारहवें गुणस्थान तक आपने रुकाया ? हां ठहरो, एक जन बोलो, हां आप बोलो। *श्रोता: तेरहवें सयोगकेवली और चौदहवें अयोगकेवली।* वह तो आपने बताया लेकिन यह बताना है, बारहवें गुणस्थान तक के जीवों को छद्मस्थ क्यों कहेंगे ? *श्रोता: बारहवें गुणस्थान तक के जीवों के आवरण होता है।* हां देखो बहुत अच्छा ! आवरण हमने बताया न, जो आवरण में स्थित हैं। तो उनके कौनसे आवरण हैं ? ज्ञानावरण भी है और दर्शनावरण भी है। बाकी कर्मों को आवरणवाले नहीं कहेंगे, वे दो तो आवरणवाले हमने देखे हैं शास्त्र में। एक और चारित्र आवरण भी होता है हो, लेकिन वह बात यहां नहीं है। यहां जो कह रहे हैं कि जिनके आवरण हैं, कौनसे ? ज्ञानावरण भी और दर्शनावरण भी हैं, इसलिये पहले से बारहवें

गुणस्थान तक के जीवों को हम छद्मस्थ कहेंगे और अल्पज्ञ को छोड़कर बाकी को सर्वज्ञ कहेंगे। यह बात आयी ख्याल में ? अभी आगे बढ़ते हैं।

देखो, इन चौदह गुणस्थानों में श्रावक के गुणस्थान कौनसे हैं और अन्य जो श्रावक के नहीं हैं ऐसे कौनसे गुणस्थान होंगे ? *श्रोता: एक से पांच श्रावक।* हां, एक से पांच श्रावक। और पांच से आगे ? *श्रोता: चार और पांच श्रावक के।* हां बोलो। *श्रोता: चार और पांच गुणस्थान।* चार और पांच, अभी मैं आपको एक रिक्वेस्ट करूंगा आप सब लोग किताब बंद कर दें। क्योंकि हम बैसाखी लेकर घूमते हैं न, तो हमारे पैरों में ताकत नहीं रहती है। वैसे हम पुस्तक का सहारा लेंगे तो अपना दिमाग काम नहीं करेगा। अभी तो आप उत्तर देंगे, सबके सामने होशियार दिखेंगे, लेकिन यह बात आपके गले नहीं उतरेगी। क्या ? इसलिये मैंने क्या कहा ? पुस्तकें यानी शास्त्र जो आपके हाथ में हैं उन्हें बंद रखें ताकी आपका उपयोग पूरा यहां आ जाये। यह आप घर पर जाकर पढ़ना, सारा शास्त्र में से ही मैं पढ़ा रहा हूं, इसमें सब बातें हैं, लेकिन हम जब क्वेश्चन-आन्सर्स करते हैं तब अपना उपयोग यहां विशेष लगा रहता है। हमने क्या देखा ? और एक दूसरी बात मैं बताना चाहता हूं यहां शास्त्र लेकर जो भी बैठते हैं वे साथ में स्टँड लेकर बैठे, पैरों पर शास्त्र रखना अच्छा नहीं है, हमें शास्त्र का भी विनय सहीरूप से करना चाहिये। यह आप करते हो इसलिये नहीं बोलता हूं, हो सकेगा किसीके हाथ से ऐसी गलती न हो। ख्याल में आया न ? अब आगे।

हमने क्या देखा कि श्रावक का गुणस्थान कौन-कौनसा है ? सच देखा जाये तो पांचवें गुणस्थानवाले को ही श्रावक कहेंगे। सुनना हो। लेकिन कहीं-कहीं शास्त्र में चौथे गुणस्थानवर्ती जीव को भी श्रावक कहा है। पहला, दूसरा, तीसरा जो गुणस्थान है वह श्रावक का नहीं है, उपचार से उन्हें श्रावक कहेंगे। जैसे कोई आप करोड़पति हो तो उसके घर में नौकर रखा है। वह घर का जो मालिक है उसको कहेगा सेठ-सेठ। उस सेठ का एक साल का बच्चा होगा और उसको बुलाना होगा तो क्या बोलेगा ? ए सेठ इधर आ। तो वह उपचार से सेठ है। उसके पास पैसा है क्या ? वैसा पहले, दूसरे, तीसरे, गुणस्थानवाले को भी श्रावक कहेंगे क्योंकि जो अन्य जगह नहीं जाते हैं, यहां जैनदर्शन का अभ्यास करते हैं उनको श्रावक कहेंगे। अरे आगे जाकर 'हे महानुभावों' ऐसा भी पुकारते हैं यानी संबोधन करते हैं। तो क्या उनको अनुभव हुआ है क्या ? फिर भी ऐसा उपचार से कहना यह गलत बात नहीं है, लेकिन वह सत्य बात भी नहीं है।

दोनों तरफ से समझना, गलत बात भी नहीं है और सत्य बात भी नहीं है। व्यवहार से कहे लेकिन निश्चय से समझना चाहे तो वह नहीं है। ख्याल में आया ?

अब आगे देखो, अभी हम देखते हैं कि मुनियों की अपेक्षा से हम गुणस्थानों को विभाजित करना चाहेंगे यानी गुरुपद की अपेक्षा से। तो मुनियों के गुणस्थान कहां से कहां तक होंगे ? एक मिनट, भाईसाहब आप उत्तर देंगे। हां बोलो साहब। श्रोता: छह से चौदह तक। छह से चौदह तक। आप क्या कहते हैं ? *श्रोता: छह से बारह तक।* छह से बारह तक। कोई और कुछ कहना चाहेगा ? हां जी ? *श्रोता: तेरह तक।* तेरह तक। अच्छा, *श्रोता: छह से तेरह तक।* छह से तेरह तक। चौदहवें को क्यों छोड़ा ? कोई बात नहीं, सुनना-सुनना । ऐसे सहीरूप से देखा जाये तो गुरु कहो या मुनि कहो तो गुरु का पद जो है तो इन जनरल छठे-सातवें गुणस्थानवर्तियों को मुनि कहेंगे। हम और थोड़ासा आगे जाते हैं तो छठे से लेकर बारहवें गुणस्थान तक के जीवों को भी मुनि कहेंगे। और डिटेल में जाओ तो हम छठे से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक के जीवों को भी मुनि कहेंगे। क्या आपके पास कोई शास्त्र का आधार है या खाली बोल रहे हैं आप ? आप पूजन करते हो कि नहीं सब लोग ? तो उसमें क्या लिखा है ? 'जय-जय नाथ परम गुरु हो।' परम गुरु किसको कहा ? जिनेन्द्र भगवान को कहा कि नहीं ? तो वे भी गुरु में हैं। अभी सुनना साहब, जो भी जीव मुनि अवस्था का है तब तक तो वह अंतरात्मा है और वह अपने स्वरूप में एकाग्र हो जाता है और स्वरूप में ऐसी लीनता होती है कि उस लीनता के कारण उनके परमात्मा पद प्राप्त हो जाता है। उनकी बाह्य में तो नग्न अवस्था ही है, पहले मुनि थे अब वे ही परमात्मा हुये हैं। तो उनको भी परम गुरु हम अवश्य कह सकते हैं।

इसलिये मुनि की अपेक्षा से जब हम उसका वर्णन देखते हैं तो समझना कि छठे-सातवें गुणस्थानवर्ती मुनियों को हम मुनि अवश्य कहेंगे ही, उसमें कोई गलत बात नहीं है। छठे से बारहवें तक भी कहो तब भी कोई चिंता नहीं है क्योंकि अभी तक वे श्रेणी में हैं, परमात्मा बने नहीं हैं, अंतरात्मा ही हैं। बहिरात्मा को तो कोई मुनि कहेंगे ही नहीं। बहिरात्मा को हम मुनि मानेंगे तो हम मुनियों का अवर्णवाद कर रहे हैं। ख्याल में आया ? देखो साहब आजकल क्या हो गया है ? बम्बई की बात कर रहा हूं। महिलायें यहां से वहां जाती हैं तो चेनस्नॅचर आते हैं, मतलब के गले का सोने का हार वगैरह उठा लेते हैं। तो क्या हो गया ? महिलायें भी ऐसी थोड़ी हैं, वे भी होशियार हैं। वे

पीतल का हार पहनकर घूमने लगी। अगर वे पीतल का हार पहनती हुयी ऐसा मानेंगी कि मैंने सोने का हार पहना है तो क्या वह मानना सही हो सकेगा ? देखो बनी हुयी एक बात बताता हूं बहन। माटुंगा में एक ऐसी ही महिला जा रही थी, तो एक उच्चक्का आया और उसने उसके गले की चेन खींच ली और भागा। वह महिला जोर-जोर से तालियां बजाने लगी और बोली देखो मूर्ख यह पीतल का हार लेकर गया। तो चोर ने वह सुना। वह आया और उसको एक तमाचा मारा और वह चेन वापस फेंक दी। यह बनी हुयी बात है। चुटकुला सुनकर हमें यह देखना है कि हम पीतल का पहनते हुये अगर उसको सोने का माने तो हम मूर्ख। जो बहिरात्मा है उसको हम अंतरात्मा माने, मुनिराज माने तो समझ लेना क्या है। ख्याल में आया ?

यहां हम मुनियों का पद देख रहे थे- छठे और सातवेंवाले तो मुनिपद में हैं ही, और आगे ८वें, ९वें, १०वें, ११वें और १२वें में जो हैं वे भी मुनिराज हैं जो श्रेणी में हैं और जो तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानवर्ती हैं वे भी हमारे महामुनि हैं, परम गुरु हैं, यह मुनियों की अपेक्षा से विभाजन है। उसके नीचे के, पहले से लेकर पांचवें तक के गुणस्थानवर्ती मुनिराज नहीं हो सकते, भावलिंगी मुनि नहीं हो सकते। अब वह भावलिंगी क्या है ? वह आगे बात आयेगी। लेकिन एक-एक पॉइंट तो आपके सामने रखूं। अब आगे कहते हैं, अभी यह तो बहुत आसान है। यहां जो हमने देखे न चौदह गुणस्थान, उनमें प्रमत्तवाले गुणस्थान कितने हैं और अप्रमत्तवाले कितने हैं ? यह हमें सोचना है। आप उत्तर देना चाहती हैं बहन ? बोलो। *श्रोता: एक से छठे तक प्रमत्त, सात से चौदह अप्रमत्त।* बहुत अच्छा ! आपका कहना ऐसा है, आप उससे सहमत हो ऐसा मेरा आग्रह नहीं है, आप भी अपना मंतव्य बता सकते हैं। उनका कहना है कि एक से लेकर छठे गुणस्थान तक के प्रमादी जीव हैं। कौन ? छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराज, भावलिंगी संत, वे भी कैसे हैं ? प्रमादी हैं और सातवें से लेकर चौदहवें तक के अप्रमत्त दशा के हैं। इसमें आपका कोई कहना है तो बोल दो भाई। कोई बताना नहीं चाहता है। तो इनका बिलकुल सही है। क्योंकि प्रमाद जो है, तो मुनिराज भी प्रमाद करते होंगे ? हां-हां, करते हैं, वे कैसे करते हैं, क्या करते हैं वह हम छठे गुणस्थान में पहुंचेंगे तब उसकी बात करेंगे। यानी प्रमाद सहितवाले गुणस्थान पहले से लेकर छठे तक हैं। उनमें अपेक्षा जुदी-जुदी है। सातवें से लेकर चौदहवें तक अप्रमत्त अवस्था के हैं वहां एक ही अपेक्षा है। वह हम देखेंगे आगे जाकर।

अब इसके बाद हम और देखेंगे। योग और अयोग की अपेक्षा गुणस्थानों का विभाजन करना है। तो सुरेशभाई आप हमें बताये, थककर आये हैं मैं जानता हूं, लेकिन बताने में कोई ऐतराज नहीं है। तो योगसहित के गुणस्थान और अयोग यानी योगरहित गुणस्थान कौनसे-कौनसे होते हैं ? *श्रोता: एक से तेरह तक योगसहित और चौदहवां योगरहित।* हां अच्छा, आपका यह कहना है और बिलकुल सही है। यह हमारे पुराने मित्र हैं। हम जानते हैं कि वे यह बात जानते हैं इसलिये तो उनसे पूछा। उन्हें ऐसा न लगे कि हमारी तरफ ध्यान ही नहीं दे रहे। क्यों ? तो क्या कहा ? कि एक से लेकर तेरहवें गुणस्थान तक के जो गुणस्थान हैं वे योग सहितवाले हैं। उनको हम कहेंगे सयोगी और जो चौदहवां गुणस्थान है वह है योगरहित। पहले तेरह हैं वे योग संयुक्त हैं और यह योग विरहित है वह चौदहवां गुणस्थान। चौदहवें गुणस्थान का नाम क्या है बेटा ? *श्रोता: अयोगकेवली।* अयोगकेवली, बहुत अच्छा। यहां तक तो सबको समझ में आया ? अब हम आगे बढ़ते हैं। देखो, यह हम इसलिये उसका अलग-अलग अपेक्षाओं से विभाजन करते हैं कि जब हम उन गुणस्थानों का अभ्यास करेंगे तो हमें यह बात बिलकुल झट से समझ में आयेगी। इसलिये पहले उनका विभाजन हम करते हैं तो आगे जाकर हम जल्दी समझेंगे।

अब दूसरी बात क्या है ? इसमें अभी हम ऐसा सोचते हैं, रागी और वीतरागी। यह वीतरागी क्या होता है जानते हैं साहब ? वीतरागी किसे कहना ? *श्रोता: रागरहित।* रागरहित तो द्वेष सहित ? राग तो निकल गया, द्वेष रह गया न। घबराना मत, मैं इसलिये आपको प्रश्न पूछ रहा हूं कि वह पक्का हो जाये अपना। आप क्या कहती हैं ? वीतराग यानी क्या ? ठहरो उनको बोलने दो, नो प्रॉम्प्टिंग प्लीज ! *श्रोता: राग-द्वेषरहित।* राग -द्वेषरहित। कोई बात नहीं, आप जरा खाना अच्छा खाना। जोर से बोलने को सीखना। तो हमने क्या देखा ? वीतराग, वीतराग यानी जिनके राग निकल गया है। तो जिनके राग निकलता है उनके पहले द्वेष निकल जाता है। अब कैसा बताये आपको कि राग जाने के पहले द्वेष जाता ही है। यह हम लौकिक उदाहरण के माध्यम से देखेंगे और आगम के आधार से भी उसको देखेंगे।

देखो, कोई एक गृहस्थ था, उसके चार बेटे थे और उनका आपस में झगड़ा हुआ। किससे ? पिताजी के साथ। क्यों ? कि वे कहते थे कि हमारा हिस्सा, जो कोई आपके पास पैसा है, उसमें से हमारा हर एक का वन फोर्थ पार्ट हमें दे दो। सभी बच्चें

कहने लगे मुझे पैसा चाहिये, मुझे पैसा चाहिये। पिताजी बोले जब तक मैं जिन्दा हूं, मैं किसीको एक भी पैसा नहीं दूंगा। जब मैं मर जाऊंगा तब मैं अपना विल लिखकर जाऊंगा। सभी बच्चे पिताजी से झगड़े और सब अपना-अपना, अलग-अलग घर करके बस गये। तो वे राग के कारण गये क्या द्वेष के कारण ? *श्रोता: द्वेष।* द्वेष, पक्का ? अच्छा द्वेष के कारण क्योंकि झगड़ा हुआ न, क्रोध हुआ पिताजी के साथ। फिर कुछ दिन गये और उनको न्यूज मिली कि पिताजी रास्ते पर से जा रहे थे, तो किसी कार ने उनको ठोकर दी और हॉस्पिटल में उनको दाखिल किया है। बच्चे सोचने लगे इनको हॉस्पिटल में दाखिल किया है तो चलो वहां जाये। अपने पिताजी हैं, झगड़ा हुआ तो क्या हो गया। उनके पास गये, उनकी देखभाल की और वह पिताजी अच्छे हो गये। तो उनका राग बाकी था और द्वेष निकल गया था। वैसे हम जब आगम के आधार से देखेंगे इसी बात को तो सूक्ष्मसाम्पराय नामक जो कोई दसवां गुणस्थान है, तो वहां सूक्ष्मलोभ बाकी है।

पहले में पहले इस बात को हम नक्की करते हैं; यह क्रोध, मान, माया, लोभ इनमें से रागरूप कौनसे हैं और द्वेषरूप कौनसे हैं ? बहन आप जानती हैं ? हां बोलो ! *श्रोता: माया और लोभ रागरूप हैं।* माया और लोभ रागरूप हैं और क्रोध और मान यह कैसा है ? *श्रोता: क्रोध और मान द्वेषरूप हैं।* द्वेषरूप हैं। तो दसवें गुणस्थान में क्या बाकी देखा है अभी हमने ? सूक्ष्मलोभ। उसके पहले ही नौवें गुणस्थान में क्रोध गया, मान गया, माया गयी और बादरलोभ भी गया। दसवें में सूक्ष्मलोभ बाकी है। यह बात इसलिये बता रहा हूं कि आगे ये सारी बातें आनेवाली हैं, लेकिन हम समझे तो सही। यह सूक्ष्मलोभ जो है, वह अभी भी मौजूद है। तो पहले में पहले द्वेष चला जायेगा और बाद में राग चला जायेगा, यह बात आगम के आधार से भी हम नक्की कर सकते हैं।

इसलिये जब कहते हैं वीतराग, तो उसका अर्थ है बीत गया है राग जिनका। राग के पहले जिनका द्वेष भी चला गया है। इस अपेक्षा से जब हम सोचते हैं, तो जो वीतरागी हैं, जो रागी हैं और जो रागी तथा वीतरागी दोनों एक साथ हैं, ऐसे गुणस्थानों को हमें डिव्हाइड करना है। क्या कहा ? रागियों के, रागियों-वीतरागियों के और पूर्ण वीतरागियों के गुणस्थानों का हमें विभाजन करना है। तो कौन कहेगा अभी ? *श्रोता: पहले से दसवें तक रागी।* पहले से दसवें तक रागी, *श्रोता: ग्यारहवें से चौदहवें तक वीतरागी।* ग्यारहवें से चौदहवें तक वीतरागी। जो रागी भी हैं और वीतरागी भी हैं ऐसे

कौनसे गुणस्थान होंगे ? तो आपने तो डिव्हिजन दो में ही कर दी न। हां, आप बता रहे थे, हां बोलो ? *श्रोता: ग्यारहवां और बारहवां रागी भी है और वीतरागी भी है।* अच्छा ग्यारहवां और बारहवां रागी भी हैं और वीतरागी भी हैं। अच्छा-अच्छा हां और पहले ? *श्रोता: एक से दस रागी।* एक से दस रागी। अच्छा-अच्छा कोई बात नहीं, तुम बोलना चाहते हो ? हां, बोलो, *श्रोता: एक से बारह रागी।* एक से बारह रागी,अच्छा। देखो यहां चौदह गुणस्थान हैं न, तो चौदह अलग-अलग उत्तर आवे तो भी वांदा नहीं है लेकिन पन्द्रहवां नहीं आवे। हां बोलो गांगजीभाई। *श्रोता: एक से दस रागी हैं और ग्यारह, बारह, तेरह, चौदह वीतरागी हैं और चार से दस तक रागी-वीतरागी हैं।* बहुत अच्छा ! देखो भाईसाहब ने समझाया हमें, बहुत अच्छी तरह से समझाया। उन्होंने इसतरह से डिव्हिजन की है कि रागी लोगों के गुणस्थान जब तक राग बाकी है तब तक की हम बात कर रहे हैं। तो पहले गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक का जीव रागी भी कहलायेगा और ग्यारह, बारह, तेरह और चौदह गुणस्थान वीतरागियों के हैं। वहां बिलकुल राग की मौजूदगी नहीं है।

अब आगे क्या कह रहे हैं ? लेकिन आपने तो पूछा था रागी और वीतरागी ? तो देखो चौथे गुणस्थान से किसी भी जीव के चारित्र गुण में दो धारायें चलती हैं - एक वीतराग धारा और एक सराग धारा। तो वह रागी भी है, कब तक ? दसवें गुणस्थान में सूक्ष्मलोभ का वहां सद्भाव है। इसलिये वहां तक राग धारा और वीतराग धारा दोनों हैं। अब उसमें प्रपोर्शन कम अधिक होगा। ख्याल में आया न ? ऐसे जीव जो हैं, कौनसे ? राग धारा और वीतराग धारावाले चौथे गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक हैं। तो आपने बताया वह बिलकुल सही है। रागी और वीतरागी; तो कहते हैं, पहले से लेकर तीसरे गुणस्थान तक के जीव पूर्ण रागी हैं। क्या कहा ? पहले से लेकर तीसरे गुणस्थान तक के जीव पूर्ण रागी हैं और चौथे से दसवें तक के रागी-वीतरागी हैं और ग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें, चौदहवें के परिपूर्ण वीतरागी हैं। *श्रोता: ग्यारहवें में, बारहवें में मोह है ऐसा बोर्ड पर लिखा है और आप उसको कह रहे हो वीतरागी ?* आपका पूछना ऐसा है ग्यारहवें में, बारहवें में मोह है ऐसा बोर्ड पर लिखा है, जो शास्त्र में लिखा है और आप उसको कह रहे हैं वीतरागी। देखो हमारा ग्यारहवां गुणस्थान आया नहीं न, तो आप इस बात को तब पूछे, जब हम ग्यारहवें में जायेंगे।

एक तो यहां कहूंगा कि वहां दर्शनमोहनीय कर्म जो है वह सत्ता में है लेकिन

वह उपशमित है, उसका उदय नहीं हो रहा है। इसलिये वहां पूर्ण वीतरागता है। जैसे केवली भगवान की पूर्ण वीतरागता होगी वैसे ग्यारहवें गुणस्थानवर्ती जीव के पूर्ण वीतरागता विद्यमान है, एक अंतर्मुहूर्त के लिये और बारहवां जो गुणस्थान है, वहां तो मोह है ही नहीं, नष्ट हुआ है। इसलिये जो आपका कहना है कि मोह है इसलिये वहां तो कुछ राग तो होना ही चाहिये ऐसी बात नहीं है। क्योंकि मैंने आपको अभी अभी बताया और आप जानते भी हो कि दसवें गुणस्थान में जो सूक्ष्मलोभ है उसका भी वहां नाश हो जाता है या परिपूर्ण उपशमित हो जाता है। अभी वह उपशमश्रेणी क्या है, क्षपकश्रेणी क्या है ? इसकी बात हमने अभी उठायी नहीं है। इसलिये मैं उसको विशेषरूप से आपको बता नहीं रहा था। आपने प्रश्न पूछा कोई बात नहीं।

अभी हमें दुःख और सुख की अपेक्षा से गुणस्थानों को विभाजित करना है, तो कैसा विभाजन होगा ? *श्रोता: एक से तीन तक दुःखी।* एक से यानी पहला गुणस्थान मिथ्यात्व, दूसरा सासादनसम्यक्त्व और तीसरा सम्यग्मिथ्यात्व ये परिपूर्ण यानी पूर्णतया दुःखी हैं और जिसके मिथ्यात्व बाकी है और वह अपने को ऊपर के गुणस्थानवर्ती मानता है तो महा दुःखी को हमें सुखी भी मानना पड़ेगा। बिलकुल सही कहा आपने - एक से तीन गुणस्थान तक जीव पूर्ण दुःखी हैं। और आगे ? *श्रोता: चौथे से चौदह तक पूर्ण सुखी हैं।* चौथे से चौदहवें तक ? *श्रोता: जीव पूर्ण सुखी हैं।* यहां कोई बताना चाहते थे ? *श्रोता: चार थी दस सुधी...* हां, बहनजी ने सही बताया, वे गुजराती में बोलती हैं, हम हिन्दी में ट्रान्स्लेट करेंगे। कि चौथे गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक के जीव दुःखी भी हैं और सुखी भी हैं। उसमें प्रपोर्शन कम-अधिक होगा लेकिन सुखी-दुःखी दोनों हैं वे। ग्यारहवां, बारहवां, तेरहवां और चौदहवां, वहां वे जीव पूर्ण सुखी हैं। उसमें भी अगर हमको डिव्हिजन करना है तो हम इसतरह से डिव्हिजन कर सकते हैं कि जीव ग्यारहवें और बारहवें में पूर्ण सुखी हैं और तेरहवें और चौदहवें में अनंत सुखी हैं। अब इसमें क्या डिफरन्स है वह हम आगे देखेंगे। यहां तक हमने कुछ-कुछ अपेक्षा से यहां गुणस्थानों का विभाजन देखा है। अब आगे की बात हम दोपहर में ३ बजे करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

३. गुणस्थान विभाजन

ये जो जीव के असंख्यात लोकप्रमाण परिणामों के भेद हैं, उनको इन चौदह गुणस्थान में समा दिया है और उन चौदह गुणस्थानों के हम अलग-अलग अपेक्षा से भेद कर रहे हैं। देखो यहां हमने जो गुणस्थान यह शब्द देखा है, वह तो पर्याय की अपेक्षा से गुण कहे गये हैं। जरा ध्यान देना। शास्त्रों में कई जगह द्रव्य को गुण भी कहने में आता है और द्रव्य को पर्याय भी कहने में आता है, गुण को द्रव्य भी कहने में आता है, गुण को पर्याय भी कहने में आता है। पर्याय को द्रव्य भी कहने में आता है और पर्याय को गुण भी कहने में आता है।

आप जानते हैं अरिहंत भगवान के यानी जो तीर्थंकर हैं ऐसे तीर्थंकर के कितने गुण प्रकट होते हैं ? बहन आप जानती हैं ? कितने गुण प्रकट होते हैं, जब उन्हें अरिहंत पद प्राप्त होता है ? *श्रोता: छियालीस।* हां जी ? छियालीस, जिसको हम हिन्दी में कहेंगे। सुनना भाई और सिद्धों को कितने प्रकट होते हैं ? सिद्धों को कितने ? देखो अरिहंत को छियालीस बताया आप लोगों ने, वह भी आगम के अनुसार है। उसमें कोई गलती नहीं है। उसमें पुद्गलाश्रित बयालीस हैं, आत्माश्रित चार हैं जो आपके हिसाब से अनंतचतुष्टयरूप जो आपने बताये हैं। और सिद्धों को ? *श्रोता: आठ गुण प्रकट होते हैं।* आठ गुण प्रकट होते हैं ? हां, साहब ? *श्रोता: अनंत गुण प्रकट होते हैं।* तो तुम्हारे में भी हैं न ! आपमें कुछ कमी है क्या ? हां प्रकट तो सभी हैं, विभावरूप परिणमित हो रहे हैं वह छोड़ दो। भाई, बहुत गड़बड़ी है हो। पहले में पहले यह ध्यान रखना प्रत्येक जीव में अनंत गुण हैं और उन अनंत गुणों में से कुछ अनंत तो स्वभावरूप से ही परिणमित हो रहे हैं और अनंत तो विभावरूप से परिणमित हो रहे हैं।

आपकी सत्ता है क्या नहीं ? यानी आप में जो सत्ता है, अस्तित्व नाम का गुण है वह स्वभावरूप से परिणमित हो रहा है क्या विभावरूप से ? *श्रोता: विभावरूप से।* क्यों ? अभी ऐसे कितने गिनाऊं ? सुनना और हमें विभावरूप से परिणमित होनेवाले तीन ही गुण मालूम हैं- श्रद्धा, ज्ञान और चारित्र और उनका स्वभावरूप परिणाम चालू हो गया तो सम्यक्त्व हो गया ऐसा हम मानते हैं। लेकिन वास्तव में क्या है ? अनंत गुण विभावरूप से हैं अब वे स्वभावरूप हो गये। हमारी कौनसी बात चल रही है ? सिद्धों को कितने गुण प्रकट होते हैं ? तो कहते हैं, आठ गुण प्रकट होते हैं। यह आगम के

अनुसार कथन है और उसमें कतई भी झूठ नहीं है। लेकिन मैं आपसे पूछता हूं गुण किसको कहते हैं ? जो अनादिकाल से अनंतकाल तक उस द्रव्य में रहते हैं। उसको हम क्या कहेंगे ? गुण कहेंगे। गुण प्रकट होते हैं यह बोलना क्या बात है ? यहां पर्याय को गुण कहा है; अघातिकर्म के नष्ट होने से सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व आदि जो चार पर्यायें सम्यक् रूप से परिणमित होती हैं, स्वभावरूप से प्रकट होती हैं, उनको गुण कहा है।

यह पूरा सारा इतना झमेला क्यों जानना ? यहां हम किसकी बात कर रहे हैं भाईसाहब ? गुणस्थान की। यहां गुण यह जो शब्द है वह पर्याय की अपेक्षा से कहा है। क्योंकि हमने क्या देखा था ? तरतमरूप होनेवाली जो अवस्थायें हैं, उसको गुणस्थान कहते हैं। अब पहले से नहीं लेंगे वह मोह वगैरह, वगैरह। यह तो आपको याद हो गया अभी। यहां क्या बात बतायी ? गुणस्थान और स्थान का अर्थ होता है भेद। जो अलग-अलग प्रकार के पर्यायों के भेद हैं उनको स्थान कहा गया है। मैंने तो आपको ऐसा बोला था ये गुणस्थान प्रकट नहीं होते, दोषस्थान प्रकट हो रहे हैं। क्योंकि जब तक तुम गुणस्थान में हो, तब तक सर्वथा स्वभावरूप से परिणमित नहीं हो रहे हो। देखो साहब आहिस्ते-आहिस्ते हम कुछ-कुछ आपको बताते जायेंगे, फिर उसके ऊपर सोचेंगे।

यह प्रश्न उठा कि पर्याय को द्रव्यरूप से भी कहा जाता है कि नहीं ? तो हां, कहा जाता है। अगर किसीको बुरा नहीं लगे तो मैं व्यक्तिगतरूप से आपको प्रश्न पूछूंगा, आपकी पर्मिशन हो तो। मैं आपसे पूछता हूं भाईसाहब आप सम्यग्दृष्टि हो या मिथ्यादृष्टि ? कोई भी उत्तर देना हो। *श्रोता: मिथ्यादृष्टि।* सम्यग्दृष्टि, हैं ? मिथ्यादृष्टि, जो आपको कहना है कहो उसमें क्या है। तो मिथ्यात्व जो है, मिथ्यादर्शन है वह द्रव्य है, गुण है या पर्याय है ? *श्रोता: पर्याय।* हां साहब ? पर्याय। हमने आपसे क्या पूछा ? तो आपने कहा कि मैं मिथ्यादृष्टि हूं। तो 'मैं' पर्याय है कि द्रव्य है ? यहां पर हम पर्याय को द्रव्य मान रहे हैं भाई और वह कोई गलत भी नहीं है। ख्याल में आया ? लेकिन ऐसा शास्त्र में अनेक जगह लिखा है गुण प्रकट हो गये हैं, वहां पर्याय प्रकट हुयी है भैया, लेकिन कह रहे हैं -गुण। कोई बात नहीं। 'ज्यां-ज्यां जे-जे योग्य छे, तहां समझवुं तेह।' ऐसा किसने बताया भाईसाहब, प्रवीणजी ? *श्रोता: श्रीमद् जी।* श्रीमद् जी ने बताया। यानी जहां जिसका जो यथार्थ अर्थ होता है, वह हमें ग्रहण करना चाहिये।

देखो एक बात बताता हूं आपको। एक माता थी, बहुत गरीब थी। वह घर-घर

में जाकर बर्तन मांजना आदि जो कार्य होता है न, वह करती थी। वह विधवा थी। मुश्किल से अपने इकलौते बेटे का पेट पालती थी। उसको स्कूल में भेजती थी, पढ़ाई करवाती थी। बच्चा थोड़ासा बड़ा हो गया। स्कूल में जाने लगा। शाम के पांच बजे रोज स्कूल छूटने के बाद घर पर आता था। एक दिन क्या हो गया, पांच बज गये, सवा पांच बज गये, साढ़े पांच बज गये, छह बज गये, बच्चा वापस नहीं आया। वह छह बजकर कोई दस पंद्रह मिनट में घर पर आया। माता ने पूछा बेटा तू कहां गया था ? वह बोला, यह मॉडर्न बच्चा था न, तो मम्मी मैं पिक्चर देखने गया था। कितना सयाना है मेरा लाड़ला, जा-जा और एक पिक्चर देखकर आ। तो अरे वाह, मां हो तो ऐसी। ऐसा समझकर वह दूसरे पिक्चर में - दूसरे शो में जाकर बैठेगा तो उसने यथार्थ जाना कि नहीं ? मां उसको कहती है तू बहुत सयाना है लेकिन उसको कहना था तू जो भी है समझ लो। जहां जिस अपेक्षा से जो कथन किया है, अगर हम उसको नहीं मानते, अपने मनगढंत कल्पनाओं के आधार से कहो या उसके बलबूते पर हम दूसरा अर्थ करते हैं, तो हम धोखे में आते हैं। वैसे आगम में जो बातें बतायी हैं वह जिस अपेक्षा से आचार्य भगवान हमें बात बताना चाहते हैं, वह अभिप्राय, वह अपेक्षा, वह बात अगर हम सही रूप से नहीं मानते हैं तो आचार्य खतरे में आ जाते हैं, क्यों ? क्या होता है ? हम तो खतरे में हैं ही और अंदर डूबते जाते हैं। क्यों ?

यहां हमने गुणस्थान देखा, यहां पर्याय की अपेक्षा से बात है। स्थान यानी उसमें व्हेरिएशन्स, अलग-अलग भेद हैं। यहां चौदह भेदों में सबको समा दिया है। इनका विभाजन करते-करते अलग-अलग अपेक्षा से हमने उनके विभाजन देखे थे। उसको रॅपिडलि मतलब जल्दी से देखते हुये आगे बढ़ेंगे। पहले हमने देखा था एक से चार गुणस्थान में दर्शनमोहनीय के उदय और अनुदय की अपेक्षा से उसके भेद किये हैं। पांच से बारह हैं वे चारित्रमोहनीय कर्म के उदय या अनुदय की अपेक्षा से भेद किये हैं और तेरहवां गुणस्थान योग के सद्भाव की अपेक्षा से; चौदहवां गुणस्थान योग के असद्भाव की अपेक्षा से उसका कथन किया है। फिर हमने विरत और अविरत की अपेक्षा से भी उनके भेद देखे। ज्ञानी और अज्ञानी की अपेक्षा से भी भेद देखे, छद्मस्थ और सर्वज्ञ की अपेक्षा से भी भेद देखे। ऐसे अन्य-अन्य प्रकार से भेद देखते हुये प्रमत्त, अप्रमत्त भी देखा था। अब और कुछ दो-चार बातें रह गयी हैं हैं उन्हें भी देख लेते हैं।

इसतरह से हमने अलग-अलग अपेक्षा से भेद किये थे। अब हमने यह भी देखा

था कि रागी, वीतरागी और रागी-वीतरागी एकसाथ यानी वे रागी भी हैं और वीतरागी भी हैं। यह जैसा हमने देखा था वैसे दुःख और सुख की अपेक्षा से भी देखा था। कई जीव हैं वे पूर्णतः दुःखी हैं। उनके गुणस्थान कौनसे होंगे बहन ? हां, बोलो, बोलो। *श्रोता: पहला, दूसरा और तीसरा।* हां पहला, दूसरा और तीसरा। अभी कुछ टाइम के लिये आपको गुणस्थानों के नाम से बोलना है। एक दफे नाम पक्के आ जाये तो फिर आप पहले से सातवें में और पहले से चौथे में ऐसा कुछ भी जो बोलना है बोल सकते हैं। तो क्या कहा हमने ? मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानवाले जीव कैसे हैं ? पूर्ण दुःखी हैं। देखो, क्या बात हुयी, हम हैं दुःखी, लेकिन दुःखी हैं यह महसूस नहीं करते और इसलिये दुःख से छूटना नहीं चाहते। अरे हमारा तो इतना तीन हजार स्क्वेअर फीट का बंगला है, दस नौकर हैं, खाली एक को बुलाये तो तीन हाजिर हो जाये, इतनी गाडियां हैं, इतने बच्चें हैं, इतनी कमाई है। उसमें इन संयोगों में हमने सुख मान रखा है। यहां तो कहते हैं पहले गुणस्थानवर्ती, दूसरे गुणस्थानवर्ती और तीसरे गुणस्थानवर्ती जो जीव हैं, वे सारे के सारे दुःखी ही हैं।

अब चौथे गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक के जीव कथंचित् दुःखी और कथंचित् सुखी हैं। ग्यारहवां और बारहवां जो है, वह पूर्ण सुखी जीवों का गुणस्थान है। जो तेरहवें गुणस्थानवर्ती और चौदहवें गुणस्थानवर्ती है वे कैसे हैं ? अनंतसुखी हैं। तो ग्यारहवें-बारहवें में जो कोई सुख है और तेरहवें-चौदहवें में जो सुख है, क्या उसमें कोई अंतर हैं ? ऐसा प्रश्न हमारे मन में खड़ा होना चाहिये। क्योंकि ग्यारहवां-बारहवां गुणस्थान भी पूर्ण वीतरागी गुणस्थान है। तेरहवां-चौदहवां गुणस्थान भी पूर्ण वीतरागी गुणस्थान है। फिर उसमें ऐसा भेद क्यों किया गया है ? कहते हैं अंतराय के उदय में अनंतसुख प्रकट नहीं हुआ है और बारहवें गुणस्थान तक का जीव छद्मस्थ है। अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख और अनंतवीर्य जो अनंतचतुष्टय है, उसका वह स्वामी नहीं है। इसलिये उसके पूर्ण सुख है और पूर्ण सुख होते हुये भी उसे अनंतचतुष्टय प्रकट नहीं हुआ है, अनंतसुख का वेदन करने में वह सक्षम नहीं है। इसलिये उसको अनंतसुखी नहीं है ऐसा कहने में आता है।

अब और एक बात देखेंगे हम। यहां कह रहे हैं कि श्रेणी अपेक्षा से उसमें दो भेद पड़ते हैं। तो श्रेणी यानी क्या ? जब यह जीव सातवें गुणस्थान में होता है, तो सातवें गुणस्थान के भी दो अलग-अलग नाम हैं, भेद हैं। अब वह किस अपेक्षा से है उसका

हम बाद में विवेचन करेंगे। लेकिन उसके दो नाम हैं, एक स्वस्थान अप्रमत्त और दूसरा है सातिशय अप्रमत्त। स्वस्थान अप्रमत्त का अर्थ क्या है ? कि जो जीव सातवें गुणस्थान से छठे गुणस्थान में, छठे गुणस्थान से सातवें गुणस्थान में, ऐसे छठे-सातवें, छठे-सातवें गुणस्थान में जिसको हम कहते हैं झूलते हैं। एक अंतर्मुहूर्त में छठा और एक अंतर्मुहूर्त में सातवां। इसतरह जो छठे-सातवें, छठे-सातवें गुणस्थान में रहते हैं, उन मुनियों को स्वस्थान अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती मुनि कहेंगे और जो सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान है उसमें जीव की स्वरूप में इतनी दृढ़ता हो जाती है, इतनी एकाग्रता हो जाती है, अपने अनुभव में इतना वह तल्लीन हो जाता है कि उसके ऊपर के गुणस्थानों की प्राप्ति होती है। वे श्रेणी सन्मुख जीव श्रेणी चढ़ते हैं। श्रेणी चढ़ना यानी श्रेणी आरोहण करना। श्रेणी का आरोहण करना यानी श्रेणी भी दो प्रकार की है। एक है उपशमश्रेणी और दूसरी है क्षपकश्रेणी। उपशमश्रेणी यानी वहां जो चारित्रमोहनीय कर्म की प्रकृतियां हैं उनका वहां वह जीव उपशम करता है। उपशम करते-करते वह आठवां गुणस्थान, नौवां गुणस्थान, दसवां गुणस्थान और ग्यारहवां गुणस्थान नियम से चढ़ेगा अगर मरण नहीं होता है तो हो। अब वह तो डिटेल में बात आगे आयेगी।

यह उपशम यानी क्या करता है ? उसकी सत्ता में जो चारित्रमोहनीय कर्म हैं उनको क्रमशः दबाते-दबाते यानी उपशमित करते-करते श्रेणी चढ़ता है। उसका मार्ग है ८वां, ९वां, १०वां, ११वां गुणस्थान उसको कहेंगे उपशमश्रेणी का आरोहण। अब जो क्षपकश्रेणी मांडनेवाला जीव है, उसके अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ और मिथ्यात्व आदि तीन ऐसे सात कर्मों का तो उसने क्षय कर दिया है। ऐसा क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव ही क्षपकश्रेणी चढ़ता है। द्वितीयोपशम सम्यक्त्वी भी और क्षायिक सम्यक्त्वी भी आयदर ऑफ देम उपशमश्रेणी चढ़ेगा। लेकिन द्वितीयोपशम सम्यक्त्व करनेवाला जीव क्षपकश्रेणी नियम से नहीं चढ़ सकता। क्षपकश्रेणी चढ़नेवाला क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव है वह आठवां गुणस्थान... अभी मैं गुणस्थान बोलूंगा, आपको नाम बोलना है। आठवां गुणस्थान। *श्रोता: अपूर्वकरण।* अरे वाह ! सबने बोला, बहुत अच्छा। नौवां गुणस्थान ? *श्रोता: अनिवृत्तिकरण।* दसवां गुणस्थान ? *श्रोता: सूक्ष्मसाम्पराय।* और बारहवां गुणस्थान ? *श्रोता: क्षीणमोह।* हां, अभी वह ग्यारहवें की तरफ नहीं जायेगा। लोग बोलते हैं अरे ग्यारहवें में जाते-जाते बारहवें में, नहीं, नहीं। उसका मार्ग ही जुदा है। क्यों साहब, क्यों जुदा है ? अरे दोनों ही मुनिराज हैं, दोनों को अलग-अलग क्यों ?

उन दोनों में झगड़ा है क्या दोनों को अलग रास्ता दिखाया आपने ? हमने नहीं दिखाया है। यह जिनेन्द्र भगवान के ज्ञान में जो बात आयी है। यह जीव तो कर्मों का उपशम करते-करते चढ़ रहा है और यह जीव तो कर्मों का क्षय करते-करते आगे जा रहा है। जो उपशमश्रेणी की अपेक्षा से और क्षपकश्रेणी की अपेक्षा से हमने भेद किये हैं, वहां ८, ९, १० और ११वाला उपशमश्रेणीवाला है और ८, ९, १० और १२वाला क्षपकश्रेणी चढ़नेवाला जीव है। इसतरह से हमने ये दो विभाजन उसमें देखे हैं।

अब आगे बढ़ते हैं। अभी किसी अपेक्षा से इन गुणस्थानों में तीन भेद करेंगे। जरा सतर्क रहना, मैं सबको प्रश्न पूछनेवाला हूं, उत्तर एक से ही चाहूंगा। देखो क्या कह रहे हैं ? तीन भेद बताये मैंने, उनके नाम बताऊंगा। एक है बहिरात्मा, दूसरा है अंतरात्मा, तीसरा है परमात्मा। हमारे पास चौदह गुणस्थान हैं उनके भेद हमें करने हैं। बहिरात्मा में कौनसे-कौनसे गुणस्थान आ सकते हैं ? *श्रोता: प्रथम तीन।* बराबर, लेकिन तीनों के नाम चाहिये साहब। *श्रोता: मिथ्यात्व, सासादन और सम्यग्मिथ्यात्व।* बहुत अच्छा ! आपने बीच में एक सम्यक्त्व शब्द छोड़ दिया। मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व। बहुत अच्छा। ये तीन गुणस्थान कैसे हैं ? किसके हैं ? बहिरात्मा के। बहिरात्मा का अर्थ क्या है ? जिसने अपने आत्मा का अनुभव नहीं किया है ऐसे जीव। जिसका उपयोग हमेशा बाहर में कहीं अन्य-अन्य वस्तुओं में लगा हुआ है, अपने स्वरूप का अनुभव नहीं हो रहा है, उसको शास्त्र में बहिरात्मा कहा है।

अभी अंतरात्मा यानी क्या ? जिसने अपने स्वभाव का, स्वरूप का अनुभव किया है। अंतरात्मा, उसका उपयोग स्व में लगकर वह बाहर आ जावे। कोई बात नहीं। ऐसे गुणस्थान कौन-कौनसे होंगे ? आप बता पायेंगे ? *श्रोता: नहीं।* नहीं, शाबाश, कोई बात नहीं, घबराना नहीं। डोन्ट बी नर्व्हस। आप बोलो बहन ? मालूम नहीं, कोई बात नहीं। अंतरात्मा के गुणस्थान कौनसे-कौनसे होंगे ? हां जल्दी-जल्दी बोलना। हां ? *श्रोता: चौथे से बारहवें तक।* चौथे से बारहवें तक। तेरहवें-चौदहवें को छोड़ देंगी आप ? आपका क्या कहना है प्रवीणभाई ? *श्रोता: वे परमात्मा हैं।* बहुत अच्छा, बहुत अच्छा ! देखो हमने अंतरात्मा पूछा है, तेरहवें और चौदहवेंवालों को हम परमात्मा की कॅटेगरी में डालेंगे। कौनसे गुणस्थानवर्ती परमात्मा हैं बहन ? *श्रोता: तेरहवें और चौदहवें।* तेरहवें और चौदहवें यानी आपको कहना है, सयोगकेवली और अयोगकेवली। वे कौन हैं ? परमात्मा हैं। तो यहां सिद्धों को लेना कि नहीं लेना ? *श्रोता: नहीं।* नहीं क्यों ? *श्रोता: वे*

गुणस्थानातीत हैं। हां वे गुणस्थानातीत हैं। हम यहां गुणस्थानों की बात कर रहे हैं। वे भले हमारे परम परमात्मा हैं फिर भी उनको अभी अलग रखेंगे।

चौथे गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान तक के जीव अंतरात्मा हैं और हमें तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानवर्ती जीवों के बारे में कहना है तो वे परमात्मा हैं। तीन प्रकार हमने देखे। आत्मा की पर्याय की अपेक्षा से तीन भेद किये, आत्मा के द्रव्य की अपेक्षा से नहीं क्योंकि हम तो बोलते हैं और याद भी है हमको 'मम स्वरूप है सिद्ध समान।' सिद्धों में और मेरे में कोई अंतर नहीं है। अच्छा ! क्योंकि द्रव्य से तो हम दोनों एक जैसे ही हैं। गुणों की अपेक्षा से देखो तो हमारे दोनों के गुण भी एक जैसे ही हैं और पर्याय में भी कोई भिन्नता नहीं है। क्या बात कर रहे हो ? प्रवचनसार नहीं पढ़ा तुमने ? अरे भैया उनकी भी पर्याय एक समय में पलटती है, हमारी भी पलटती है, हमने और कुछ बोला क्या ? अब वे स्वभावरूप से परिणमित हो रहे हैं और हम विभावरूप से, वह बात हमने कहां की ? उनकी भी पर्याय एक समय में पलटती है। इसलिये 'मम स्वरूप है सिद्ध समान' यह बात नहीं कही है। यह तो स्वरूप की भाषा है। मेरा स्वरूप और सिद्ध भगवान का स्वरूप, निगोद जीव का स्वरूप में कतई एक पर्सेंट भी अंतर नहीं है। यह तो स्वभाव की बात हो रही है। ख्याल में आया ? यहां तो कह रहे हैं कि ये परमात्मा जो हैं वे तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानवर्ती जीव हैं और चौथे से लेकर बारहवें तक के अंतरात्मा हैं और पहले से लेकर तीसरे तक के बहिरात्मा हैं।

अब यह बात देखने के बाद हम और थोड़ासा आगे बढ़ेंगे। अब ये जो चौदह गुणस्थान हैं, इन चौदह गुणस्थानों में उपयोग की अपेक्षा यानी कौनसा ? यह ज्ञानोपयोग, दर्शनोपयोग की अपेक्षा से हम भेद नहीं कर रहे हैं। तो कह रहे हैं अशुभोपयोग, शुभोपयोग और शुद्धोपयोग, इस अपेक्षा से अगर हम भेद करेंगे तो इन गुणस्थानों का कहां-कहां किसमें-किसमें नंबर लगेगा ? सुरेशभाई आप बतायेंगे ? *श्रोता: एक से लेकर तीन तक अशुभोपयोगी।* हां एक से लेकर तीन तक कौन हैं ? *श्रोता: अशुभोपयोगी।* अशुभोपयोगी, हां ? *श्रोता: चार से लेकर बारह तक शुभोपयोग।* हां चार से लेकर बारह तक अब उनका क्या होगा ? *श्रोता: शुभोपयोग।* हां शुभोपयोग अच्छा, अच्छा और ? *श्रोता: तेरह और चौदह शुद्धोपयोग।* तेरह और चौदह ? क्या आप इनसे सहमत हैं ? नहीं ? क्योंकि वह महाराष्ट्र के हैं और आप कर्नाटक के हैं इसलिये। हां बोलो, आप बोलो। *श्रोता: चार से जो सात तक हैं ज्यादा शुभोपयोग और सात से*

आगे जाकर बढ़ता हुआ शुद्धोपयोग। देखो आपको भी कुछ कहना है लेकिन आप बराबर क्लिअरलि नहीं बता पा रहे हैं क्योंकि आपका आधा ध्यान तो पुस्तक में क्या लिखा है यह पढ़ने में जा रहा है।

मैंने आपको हाथ जोड़कर विनती की थी पुस्तक मत खोलो। लेकिन हम बचपन से सीखते हैं न कि जो मास्टर कहेगा उसको कभी सुनने का नहीं। इसीको तो आयडियल विद्यार्थी कहते हैं। क्यों ? यहां देखो इधर सुनो, यहां देखो उधर सुनो, क्या, करूं क्या मैं ? ऐसा हमें लगता है। देखो मैं बताता हूं, आपको किसीको उत्तर देना हो लेकिन आप कहेंगे हमें कुछ पूछा ही नहीं ऐसा मत करो। हां बोलो साहब। *श्रोता: चार और पांच में शुभोपयोग और अशुभोपयोग दोनों होते हैं।* हां, *श्रोता: छह में भी शुभोपयोग और शुद्धोपयोग होता है।* छह में ? *श्रोता: छह और सात में।* छह में ? छह की बात करना आप। *श्रोता: छह में शुभोपयोग और शुद्धोपयोग दोनों होते हैं।* अच्छा ! आपने फ़रमाया छह में शुभोपयोग और शुद्धोपयोग होता है। अच्छा आगे। *श्रोता: सात में शुद्धोपयोग होता है। आगे के गुणस्थानों में शुद्धोपयोग ही होता है।* बरोबर। देखो अभी हम बहुत समय न बिताते हुये; आगे बढ़ेंगे।

देखो यह जो पहले तीन गुणस्थान हैं, मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इनमें क्या है ? घटता हुआ अशुभोपयोग है। क्या कहा ? घटता हुआ अशुभोपयोग। चौथे गुणस्थान से छठे गुणस्थान तक क्या है ? बढ़ता हुआ शुभोपयोग है। और जो आगे के गुणस्थान हैं कौनसे ? सातवें से लेकर बारहवें तक, वहां बढ़ता हुआ शुद्धोपयोग है। यहां क्या है ? अशुभोपयोग की मुख्यता पहले तीन गुणस्थान में है। क्या कहा ? अशुभोपयोग की मुख्यता पहले तीन गुणस्थान में है और उसके ऊपर के जो तीन गुणस्थान हैं वहां बढ़ता हुआ शुभोपयोग है। वहां शुभोपयोग की मुख्यता से कथन किया है और आगे के जो गुणस्थान अभी हमने देखे उनमें शुद्धोपयोग की अधिकता-अधिकता है। देखो वैसे देखा जाये तो सातवें से बारहवें गुणस्थान तक शुद्धोपयोग बढ़ता हुआ है और तेरहवां गुणस्थान जो है वह शुद्धोपयोग का फल है। वहां कोई शुद्धोपयोग वगैरह बढ़ता नहीं है हो। यह तो ऐसा ही जनरलि बताते हुये अब हम डिटेल में जा रहे हैं। क्या कहा ?

आपने जो बात बतायी न भाईसाहब कि छठे में शुभोपयोग भी है और

शुद्धोपयोग भी है, तो मुनिराजों के लिये यह खास विशेष व्यवस्था रखी है। कौनसी ? अगर वे शुद्धोपयोग में गये तो सातवें में जायेंगे, शुभोपयोग में आवें तो छठे में आयेंगे। और चौथे गुणस्थानवाले को या पांचवें गुणस्थानवाले को ? तुम अशुभोपयोग करो, शुभोपयोग करो या शुद्धोपयोग करो, गुणस्थान चौथा या पांचवां ही रहेगा। ख्याल में आया ? *श्रोता: एक से तीन बढ़ता हुआ अशुभोपयोग है कि घटता हुआ है ? कम होना चाहिये अशुभोपयोग।* घटता हुआ है। सही फ़रमाया आपने कि पहले से तीसरे गुणस्थान तक घटता हुआ अशुभोपयोग है यानी पहले गुणस्थान में मॅक्झिमम अशुभोपयोग होगा, दूसरे में उससे कम होगा, तीसरे में उससे कम होगा। सही बात है, आपने सही बताया। लेकिन चौथे, पांचवें, छठे में बढ़ता हुआ शुभोपयोग है।

देखो कई जीवों की ऐसी भी मान्यता है कि छठे गुणस्थान में अशुभोपयोग भी होता है। लेकिन वह मान्यता गलत है। मोक्षमार्गप्रकाशककार पं. टोडरमलजी ने तो ऐसा लिखा है कि छठे गुणस्थान में अशुभोपयोग होता ही नहीं। अगर आपको देखना है तो मोक्षमार्गप्रकाशक नामक जो शास्त्र है उसमें यह बात आती है। सामान्य साधुओं का स्वरूप, उसमें यह बात बिलकुल क्लिअर कट दी है। जरा देखना मोक्षमार्गप्रकाशक, वहां तो कहा है कि वहां तो अशुभोपयोग होता ही नहीं। ख्याल में आया ? लेकिन कई जीवों की ऐसी मान्यता है, जो भोले जीव हैं, वे कहते हैं कि पं. टोडरमलजी गलती कर रहे हैं। क्या कहते हैं ? पं. टोडरमलजी गलती कर रहे हैं। उनके अशुभोपयोग होता ही है। अब यह थोड़ासा कॉन्ट्रव्हर्शिअल है। आपका कितना अभ्यास है मुझे मालूम नहीं है क्योंकि यह जो छठे गुणस्थान में बंध की व्युच्छित्ति जो बतायी है, वे प्रकृतियां हैं असातावेदनीय, अयशस्कीर्ति, अस्थिर, अशुभ, अरति और शोक; उनका बंध वहां तक होता है - छठे गुणस्थान तक, तो किसीका ऐसा मानना है कि यह तो बंध रहा है न, तो इसका अर्थ उनको अशुभोपयोग हो रहा है।

पं. टोडरमलजी जैसे विद्वान के बारे में, वे कुछ जानते नहीं हैं, हम उनसे अधिक जानते हैं, ऐसे भ्रम में जो कोई हैं, ऐसे लोगों की बात कर रहा हूं। लेकिन बात ऐसी होती है कि जो सातवें गुणस्थानवर्ती जीव है वह जब छठे में आ रहा है तब वह क्या हो गया ? कि उनकी पहले जो विशुद्ध परिणति थी वह छूटकर संक्लेशरूप परिणति होती है तभी तो वे छठे में आते हैं और छठा गुणस्थानवर्ती जीव जो है उसकी जो परिणति थी वह अधिक-अधिक विशुद्ध होती जाती है तो वह सातवें में चला जाता

है। वह संक्लेश में थे। यह देखो करणानुयोग शुद्धोपयोग, शुभोपयोग, अशुभोपयोग की बात ही नहीं करेगा। वह संक्लेश परिणाम या विशुद्ध परिणाम यही बात करेगा। उस अपेक्षा से उनके वहां संक्लेश परिणाम हैं। ऐसा बताया है तो यह जीव ऐसा मानते हैं कि वह अशुभोपयोगी है। देखो अभी आपको देखना है तो यह आप जाकर देख लेना कि मोक्षमार्गप्रकाशक, पेज नंबर ३, उसमें यह बता रहे हैं सामान्य स्वरूप में। जरा आप देख लेना मैं विषय आगे बढ़ाता हूं।

अपनी यह बात हो रही थी कि यह छठे गुणस्थानवर्ती जीव जो है। हां, बस-बस वही छूट गया था। मैं थोड़ासा पहले से पढ़ता हूं, ऊपर से सातवीं-आठवीं लाइन है जो **आचार्य-उपाध्याय-साधु का सामान्य स्वरूप** लिखा है। **कदाचित् मंदराग के उदय से शुभोपयोग भी होता है। उससे जो शुद्धोपयोग के बाह्य साधन हैं उनमें अनुराग करते हैं।** यह शुद्धोपयोग के बाह्य साधन यानी सच्चे देव, गुरु, शास्त्र, उनकी प्रतिमा वगैरह जो कुछ है। **परंतु उस रागभाव को हेय जानकर दूर करना चाहते हैं।** किनको ? जो शुभराग हैं ऐसे परिणामों को। कहते हैं परंतु उस रागभाव को हेय जानकर दूर करना चाहते हैं। **तथा तीव्र कषाय के उदय का अभाव होने से हिंसादिरूप अशुभोपयोग परिणति का तो अस्तित्व ही नहीं रहा।** यानी उनके अशुभोपयोग होता ही नहीं यह बात यहां उन्होंने बतायी है। लेकिन क्या करें ? यह पंचमकाल है न, तो मैं तो सर्वज्ञ ही हूं ऐसा हर एक जीव मानता है। ख्याल में आया ?

यहां क्या बात हो गयी कि पहले तीन जो गुणस्थान हैं वहां तो घटता हुआ अशुभोपयोग है। यहां अशुभ की मुख्यता है, घटता हुआ अशुभोपयोग है और जो शुभोपयोग है वह चौथे से छठे तक बढ़ता हुआ शुभोपयोग है और शुद्धोपयोग है वह सातवें से बारहवें तक बढ़ता हुआ शुद्धोपयोग है। यह बात हमने देखी। प्रश्न है ? *श्रोता: चौथे और सातवें गुणस्थान में भी दोनों में शुद्धोपयोग है ?* देखो चौथे से पांचवें में बढ़ता हुआ शुद्धोपयोग है, यह बराबर है लेकिन वहां शुभोपयोग भी है और उसकी अधिक मुख्यता से बात की है। वहां उस जीव को शुद्धोपयोग नहीं है ऐसा नहीं कह रहे हैं। लेकिन मुख्यता किसकी है ? क्योंकि सातवें से आगेवाले जो गुणस्थान हैं वहां ना अशुभोपयोग है और ना शुभोपयोग है, बढ़ता हुआ शुद्धोपयोग ही है। इस अपेक्षा से उसका कथन किया है। यही पूछना था न ? मैं आपकी आवाज सुन नहीं पा रहा हूं।

श्रोता: चौथे और पांचवें में गौणरूप से शुद्धोपयोग है। चौथे और पांचवें में गौणरूप से शुद्धोपयोग है। हम तो यहां मुख्यता की बात कर रहे हैं। शुभोपयोग की मुख्यता कहां है, अशुभोपयोग की मुख्यता कहां है और शुद्धोपयोग की मुख्यता कहां है, इसको हम देख रहे हैं। हां, दिलीपभाई क्या बोलते हो ? *श्रोता: शुद्धोपयोग कहां से चालू होता है यह पूछ रहे हैं।* हां जी ? हां, वह बात आयेगी। उसके बारे में भी हम चर्चा करेंगे। यहां क्लिअर कट आपको बताया है। *श्रोता: वह बोल रहे हैं दोनों ओर से शुरू होता है गौणरूप से।* देखो गौणरूप हो... अभी आप इस विषय को मत छेड़ो, जब हम चौथे गुणस्थान में आयेंगे तब उसकी बात करेंगे। क्योंकि बात ऐसी है, यहां बहुत कॉन्ट्रव्हर्सी चल रही है। हां और आप चाहते हैं कि उसका यहां थोड़ासा विवेचन किया जाये, करेंगे। हम यहां सत्य बात है उसीको बताने के लिये बैठे हैं। अगर हम कोई खोटी प्ररूपणा करते हैं, तो हम जानते हैं कि हमें नरक का बंध होनेवाला है। हमें सच्चे देव-गुरु-शास्त्र क्या कहते हैं वह बताना है, उनका अवर्णवाद नहीं करना है।

आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने जो बात बतायी है। उन्होंने चौथे गुणस्थान का नाम क्या बताया ? बताओ सुरेशभाई ? *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* अविरतसम्यक्त्व। तो जिसके सम्यक्त्व हुआ है उसको शुद्धोपयोग हो गया होगा कि नहीं ? अब उनके सामने हम चॅलेंज करे कि चौथे गुणस्थान में शुद्धोपयोग होता ही नहीं है। यह कैसी बात है ? यह हम नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती को चपराक मार रहे हैं, या सर्वज्ञ को या अपने सर्वज्ञ स्वभाव को यह तो नक्की करो। क्योंकि देखो भैया कॉन्ट्रव्हर्शिअल पॉइंट में अभी आप मत एंटर होना। बात आयेगी। क्योंकि हमारा तो यही रिवाज है कि पहले नींव खोदकर उस नींव को मजबूत करें। फिर आप उसके ऊपर भले न १२५ माले की बिल्डिंग बनाये, कोई चिंता नहीं है। यहां हमें मूल में कुछ मालूम नहीं है और हम ऊपर की बात करेंगे तो गिर जायेंगे कभी न कभी।

इसके आगे मैं एक रूल भी बनाना चाहता हूं, किसीके कोई प्रश्न हो तो लिखितरूप से भेजें। उसका उत्तर जब वह विषय चलेगा, मैं अवश्य दूंगा। क्योंकि क्या होता है ? ऐसे कुछ बीच में प्रश्न चलते हैं, आपको भी अधिकार है बोलने का, आप भी बोलते रहें और मैं भी बोलता रहूं, तो उसमें कोई एण्ड नहीं है। क्रम भी टूटेगा, लोगों का मन भी विचलित होगा। क्योंकि हमको एक व्यक्ति को समझाना नहीं है। यहां जितने पांच-पच्चीस लोग बैठे हैं; सबको समझाना है। इसलिये तो शिबिर लगा हुआ है।

आपके जो भी प्रश्न हैं बिलकुल दे आर मोस्ट वेलकम, कृपया चिट्ठी पर लिखकर भेजते जाइये। मैं पहले दिन बोलनेवाला था मेरे पहले लेक्चर में, लेकिन तब प्रसंग नहीं आया। लेकिन ऐसे बीच-बीच में हमें कई प्रश्न उठते हैं मन में, बिलकुल उठने भी चाहिये। लेकिन थोड़े शांति से आप लिखकर भेजें तो उसके ऊपर जब वह विषय आयेगा हम जरूर विवेचन करेंगे।

अभी अलग पद्धति से और एक डिव्हिजन है वह है धार्मिक और अधार्मिक। ये चौदह गुणस्थान जो हैं, उनमें से कौनसे गुणस्थान धार्मिक और कौनसे अधार्मिक हैं ऐसे गुणस्थान हम देखेंगे। हां अब दूसरी अपेक्षा से हम कहेंगे तो यथार्थ पुरुषार्थी जीव और अयथार्थ पुरुषार्थी जीव। क्योंकि हम एक-एक गुण की अपेक्षा से देख रहे हैं न। यहां वीर्यगुण की अपेक्षा से देखेंगे तो अयथार्थ पुरुषार्थी जीव के गुणस्थान कौन-कौनसे हो सकते हैं ? बहन आप बतायेंगे ? *श्रोता: मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व।* पहले तीन गुणस्थान बराबर। आपका कहना है पहले तीन गुणस्थान हैं; वे कैसे हैं ? अयथार्थ पुरुषार्थी हैं। उनका दूसरा नाम क्या है ? अधार्मिक। अरे हम तो रोज पूजा, प्रक्षाल करते हैं, रोज जब तक भगवान के दर्शन नहीं करते, तब तक एक बूंद पानी तक नहीं लेते। तो हम कितने धार्मिक हैं ? इतने सालों से हमने यह खाना छोड़ा, वह खाना छोड़ा। सब कुछ खाना छोड़ा ? नहीं-नहीं अभी थोड़ासा छोड़ा है। तो हम कितने धार्मिक ? यहां तो कह रहे हैं कि जो अयथार्थ पुरुषार्थी है। पुरुषार्थी जीव कौनसा है ? कि जिसने अपनी पर्यायों में स्वरूप की रचना की है, उसका यथार्थ पुरुषार्थ है। यानी पर्याय में मैं ज्ञायक स्वभावी हूं, मैं ज्ञान-दर्शन स्वभावी हूं ऐसा जिसने माना है, जाना है और अनुभव किया है, ऐसे जीव को यथार्थ पुरुषार्थी कहते हैं और वे यथार्थ पुरुषार्थी जीव चौथे गुणस्थान से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक के हैं।

एक-एक गुण की अपेक्षा से हम ये डिव्हिजन्स देख रहे हैं। आगे यह थोड़ासा खतरेवाला है, लेकिन विषय आया ही है तो चारित्र की अपेक्षा से हम देखेंगे। हां यह रह गया था न ? श्रद्धा की अपेक्षा विभाजन हो गया, ज्ञान की अपेक्षा हो गया, अब यहां चारित्र की अपेक्षा से कहेंगे। तो यहां कहते हैं मिथ्याचारित्र और सम्यक् चारित्र। इनकी अपेक्षा से अगर हम भेद करते हैं तो चौदह गुणस्थान में कौन-कौनसे भेद होंगे ? मिथ्याचारित्रवाले कौनसे गुणस्थान होंगे ? चारुबहन आप बतायेंगी ? *श्रोता: मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व

और कौनसा ? क्या तीन ही ? हां, मिथ्याचारित्रवाले कौन-कौनसे गुणस्थान हैं ? हां और कौन बतायेगा ? *श्रोता: मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व।* और सासादनसम्यक्त्व ? कोई बात नहीं आपको उसका स्वरूप मालूम नहीं है, बहुत अच्छा आपने प्रयत्न किया है। यहां आप जो कह रही हैं वह बिलकुल सही बात है कि पहले तीन गुणस्थान हैं। वे कैसे हैं तीन गुणस्थानवर्ती जीव ? मिथ्याचारित्र के साथ हैं। अभी कोई जीव ऐसा भी उसका भेद करते हैं, सम्यक् चारित्र और अचारित्र। लेकिन ऐसा भेद कहीं शास्त्र में लिखा हुआ नहीं है। या तो सम्यक् चारित्र होगा या तो मिथ्याचारित्र होगा।

तो पहले तीन गुणस्थान जो हैं वे मिथ्याचारित्री जीवों के हैं और आगे के सारे जो गुणस्थान हैं वे सम्यक् चारित्री जीवों के हैं। इसका अर्थ क्या होता है कि चौथे गुणस्थान में सम्यक् चारित्र है। सम्यक् चारित्र कब होता है ? कि उसका सम्यग्ज्ञान है। सम्यग्ज्ञान कब होता है ? तो यह तो निमित्त की अपेक्षा से कह रहे हैं कि उसकी सम्यक् श्रद्धा होती है। तीनों ही गुणों में एक समय में एक साथ परिणति सम्यक् रूप से होती है लेकिन कथन की अपेक्षा, निमित्त की अपेक्षा से जब हम बात करते हैं कि यह जीव तो ग्यारह अंग और नौ पूर्व का पाठी हुआ है। फिर भी क्या ? मिथ्यात्वी है। यानी उसकी मान्यता यथार्थ नहीं है। वह जानता तो सब कुछ है। हमारे पास ऐसे लोग आते हैं कि साहब हम यह लिस्ट लेकर आये। क्या है साहब ? ये मैंने पचास ग्रंथ पढ़े हैं। अभी आप हमको बताओ ये पचास ग्रंथ पढ़ने के बाद ऐसा कौनसा ग्रंथ पढ़ूं कि मुझे सम्यग्ज्ञान होगा, सम्यग्दर्शन होगा। तो उसने कौनसी भूल की ? पहले में पहले ज्ञान गुण से श्रद्धा गुण का परिणमन नहीं होता है। क्यों ? जो सामान्य गुण है, जो वस्तुत्व गुण है वह वस्तुत्व गुण यह बताता है कि प्रत्येक द्रव्य का प्रत्येक गुण अपना-अपना प्रयोजनभूत कार्य करता है। ज्ञान गुण ज्ञान गुण का कार्य करेगा; ज्ञान गुण श्रद्धा गुण का कार्य नहीं करेगा, ज्ञान गुण चारित्र गुण का कार्य नहीं करेगा। ऐसी जब वस्तुव्यस्था है तो हम तो ऐसा मानते हैं, जानते हैं कि हम कुछ ज्ञान करेंगे, अधिक ज्ञान करेंगे तो हमको सम्यक्त्व होगा। तो यह मूल में भूल है। ख्याल में आया ?

यहां तो यह बात हो रही है कि भाई हमें यथार्थ श्रद्धान करना है। समयसार में भी यह बात आती है कि वहां पूछते हैं कि हमें सम्यग्दर्शन कब होगा ? वहां टाइम नहीं बताया चार साल के बाद, दो महीने के बाद, तीन महीने के बाद, अभी एक मिनट में। वहां बताया कि जब तेरी यथार्थ श्रद्धा होगी। ख्याल में आया ? हमने चाहे जितना पढ़ा

होगा, अरे हमारी-तुम्हारी बात क्या ? ग्यारह अंग और नौ पूर्व पढ़नेवाले जीव भी मिथ्यात्व के साथ कहां पहुंचते हैं ? 'मुनिव्रत धार अनंतबार ग्रैवेयक उपजायो; पै निज आतमज्ञान बिना, सुख लेश न पायौ।' कहने का मतलब यह है कि मिथ्याचारित्र जो है वह तो १, २, ३ गुणस्थान में है और आगे के चौथे से लेकर चौदहवें गुणस्थान में जो जीव हैं वे सम्यक् चारित्री हैं। तो सम्यक् चारित्र तो तब होता है कि जब उसका सम्यग्ज्ञान है और सम्यग्ज्ञान तब होता है कि जब उसकी श्रद्धा सही है।

देखो भाई एक बात बिलकुल समझ में लेना कि तीन गुण कबसे हैं ? हम तीन गुण की ही बात कर रहे हैं, हैं तो अनंतगुण। वे जीव के साथ कबसे हैं साहब ? *श्रोता: अनादि से हैं।* अनादि से हैं और तीनों का परिणमन कबसे हो रहा है ? *श्रोता: अनादि से हो रहा है।* अनादि से हो रहा है। लेकिन यह जब हम शास्त्र स्वाध्याय करते हैं, उसके साथ-साथ में हमारा जो श्रद्धा गुण है, उसमें भी कोई परिणति होती होगी कि नहीं ? ख्याल में आया ? लेकिन एक बात ऐसी हो जाती है कि हमारा ज्ञान बिलकुल आगम के अनुसार होता है। यानी फॉर एक्झॅम्पल हम कहते हैं कि विश्व में सात तत्त्व हैं, छह द्रव्य हैं, पुण्य से धर्म नहीं होता, निमित्त से पर द्रव्य में कार्य नहीं होता। यह हमने बिलकुल आगम के अनुसार जाना है। इस विश्व में जो छह द्रव्य हैं, प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है। एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है, बिलकुल हमने जाना है। जैसे सम्यग्दृष्टि जाने वैसा हमारा ज्ञान भी हुआ है। लेकिन जब तक यह श्रद्धा में नहीं उतरता है; श्रद्धा गुण उसको मार्किंग नहीं करती है यानी राजमुद्रा नहीं लगाती है कि बात ऐसी ही है, ऐसे जब तक श्रद्धा नहीं होती है तब तक उस ज्ञान को मिथ्याज्ञान ही कहेंगे।

पर जिस समय वही ज्ञान, जैसे आगम में बताया गया है अपने स्वभाव का, स्वरूप का वैसे ही अपने में हो रहा हो और यहां श्रद्धा ने भी कबूल किया है कि मैं तो ज्ञायक स्वभावी हूं, मैं अन्य का पर का कुछ भी नहीं कर सकता। जब ऐसे श्रद्धा ने माना तो वह जो एक समय पूर्व में जो ज्ञान था, जिसको हम मिथ्याज्ञान कहते हैं, उसी ज्ञान को अब हम सम्यग्ज्ञान कहेंगे। उसी समय चारित्र गुण जो है, चारित्र गुण यानी क्या ? स्वभाव में जो स्थिरता है, स्वभाव में जो दृढ़ता है, वह दृढ़ता ही प्रबल स्वरूप में स्थिरतावाली जो दृढ़ता है उसीको सम्यक् चारित्र कहा है। ये तीनों ही बातें एक साथ होती हैं और दूसरे गुण भी जो विभावरूप से परिणमन हो रहे थे उनका स्वभावरूप परिणमन चालू हो जाता है। ख्याल में आया ? लेकिन हम तो तीन गुणों की अपेक्षा से

ही कथन करते हैं, सुनते हैं और सुनाते हैं। तो वहां तीनों गुणों की परिणति एक साथ होती है, कहने में अंतर पड़ता है, प्रथम आगे पीछे बात होती है। लेकिन यह बात निश्चित है कि जब तक श्रद्धा गुण हां नहीं कहता तब तक उसको सम्यक्त्व नहीं होगा।

सम्यक् श्रद्धा चौथे गुणस्थान से ही शुरू होती है। क्योंकि वहां सम्यक्त्व किसमें है ? अविरतसम्यक्त्व में। किसी बहन ने अभी बताया सासादन भी सम्यक्त्व है, तो उसको क्यों छोड़ते हो आप ? कोई बात नहीं, उसको भी बतायेंगे। केवल नाम से उसमें सम्यक्त्व नहीं है। हमने किसीसे पूछा आपका नाम क्या है ? बोले फलां-फलां जैन। और आपका ? हमारा भी जैन। तो आप दोनों भाई हैं ? नहीं-नहीं। अरे दोनों जैन हैं न ! अभी नामसाधर्म्य तो है। वैसे यहां सासादनसम्यक्त्व और अविरतसम्यक्त्व; नाम तो सम्यक्त्व, सम्यक्त्व फॅमिली का है, लेकिन दोनों में बहुत अंतर है। वह क्या अंतर है देखेंगे हम। तो यहां पहले से तीसरे गुणस्थान तक के जीवों को मिथ्याचारित्र और चौथे से चौदहवें तक के जीवों को सम्यक् चारित्र है। यह बात हमने देखी।

हमने बात कहां से शुरू की थी कि हम कौनसे गुणस्थान में हैं यह हमें नक्की करना है, अन्य को नहीं बताना है। हम हमारा नक्की करेंगे। यह चौदह गुणस्थान का हमने स्वरूप देखा है। एक बात तो निश्चित होती है। कौनसी ? ये जो जीवों के भेद हैं - अंतरात्मा, बहिरात्मा और परमात्मा, तो परमात्मा के गुणस्थान कौनसे हैं साहब ? पीछे में महिलाओं से प्रॉम्प्टिंग भी हो गया। बहुत अच्छा ! *श्रोता: तेरहवां और चौदहवां।* हां, तेरहवां और चौदहवां। तो वे किसके गुणस्थान हैं ? परमात्मा के। तो हम उस कॅटेगरी में अभी बैठेंगे कि नहीं ? यह भाईसाहब हां कह रहे हैं। अरे आप परमात्मा होते तो यहां नहीं बैठते। क्यों ? पर्याय की अपेक्षा से बात चल रही है क्योंकि ये भेद जो हैं न, वे पर्याय के लिये हैं, स्वभाव के लिये नहीं हैं। मैं समझ गया। हां अब अंतरात्मा भी है कि नहीं यह पहले नक्की करो। तो मुनि अवस्था के जीव हैं कि नहीं ? तो छठे गुणस्थान तक तो हम आ गये कि वह भी अभी हमारी पर्याय नहीं है। इसतरह से ढूंढ़ते-ढूंढ़ते हम कहां हैं यह बात निश्चित होती है। जब हमें इस बात का पता लगे कि अभी हम दिल्ली से बहुत दूर हैं, तो दिल्ली जाने के लिये हमारा पुरुषार्थ होगा, होगा और होगा और होना भी चाहिये। इसीलिये तो हम यह सारा पढ़ रहे हैं।

इसतरह से हमने यह बात देखी है कि ना तो हम परमात्मा हैं और मैं मेरी बात

कह रहा हूं, ना तो हम अंतरात्मा हैं। तो बहिरात्मा होंगे और बहिरात्मा के भी हमने तीन गुणस्थान देखे हैं। उसमें भी कौनसे गुणस्थान में हैं वह भी हम सोचेंगे आगे जाकर और उसकी भी बात नक्की करेंगे । देखो पहले में पहले जो सम्यक्त्वी होता है उस सम्यक्त्वी का जरा हम एकदम स्थूलरूप से स्वरूप यानी उसके क्वालिफिकेशन्स देखेंगे। तो जो सम्यक्त्वी होता है वह अन्याय, अनीति और अभक्ष्य का सेवन नहीं करता है। क्या कहा ? अन्याय, अनीति और अभक्ष्य भक्षण। यानी वह समाज में अन्याय से नहीं रहता है, समाज में कहो या लौकिक में कहो या हम धंधापानी करेंगे उसमें अन्याय से पैसा नहीं कमाता यानी अर्थोपार्जन नहीं करता है। कौन ? जो सम्यग्दृष्टि जीव है। तो अभी अपने को समझ लेना हम कहां है।

अब कहां सबसे पूछते बैठूं क्या आप न्याय से कमा रहे हो या अन्याय से कमा रहे हो ? जो अनीति से अपना जीवन बिताता हो वह सम्यग्दृष्टि नहीं होगा। साहब ऐसा क्यों रिस्ट्रिक्शन लगा रहे हैं आप ? क्योंकि यह अन्याय और अनीति करने में जीव का परिणाम कोमल रहेगा कि क्रूर रहेगा ? क्या उसके परिणामों में सरलता हो सकती है ? अन्याय, अनीति से जीवन जीनेवाला अपने शांतस्वभावी शुद्धात्मा का लक्ष तो छोड़ो, विचार भी कैसे करेगा ? अन्याय, अनीति और अभक्ष्य। अरे ! जो भक्ष्य-अभक्ष्य का भी विवेक-विचार नहीं करे उसके परिणाम कैसे होंगे ? क्या उसके दया के परिणाम होंगे या निष्ठुरता के परिणाम होंगे ? जो अंदर से ऐसा तप्तायमान है, क्या वह जीव अपने शांतस्वभावी आत्मा का अनुभव कर सकता है ? इसलिये पहले में पहले यह बात बतायी है, कौनसी ? कि जो जीव सम्यक्त्वी है वह अन्याय, अनीति और अभक्ष्य का सेवन नहीं करता है। इसलिये मैंने आपको बताया था ऐसी अवस्था में भी अगर कोई जीव अपने को सम्यक्त्वी माने तो क्या बताया था ? उसने अपने सम्यक्त्व की फाइल बंध कर दी। ख्याल में आया ?

पहले वे मिथ्यात्वी जीव कैसे होते हैं ? उसकी भी थोड़ीसी बात हम देखेंगे। तो पहले में पहले मिथ्यात्व कितने प्रकार का होता है ? यह हम देखेंगे। मिथ्यात्व कितने प्रकार का होता है कौन बताना चाहेगा ? पहले में पहले यह तो नक्की करो, मिथ्यात्व है क्या नहीं अपने पास और है तो कौनसे प्रकार का है। हां कौन बतायेगा ? यह बहनें जो ऊपर बैठी हैं न आराम से ? *श्रोता: पांच प्रकार।* हां पांच प्रकार ! बहुत अच्छा। कौनसे पांच प्रकार हैं ? *श्रोता: विपरीत, एकांत, विनय, संशय और अज्ञान।* विपरीत, एकांत,

विनय और कौनसा ? *श्रोता: संशय और अज्ञान।* संशय और अज्ञान। बहुत अच्छा। अब हम क्या कह रहे हैं ? इन्होंने तो डिटेल में बात की, बहुत बढ़िया है। मिथ्यात्व के और भी दूसरी अपेक्षा से भेद किये जाते हैं। हां बहुत अच्छा, हां बोलो। *श्रोता: गृहीत मिथ्यात्व और अगृहीत मिथ्यात्व।* गृहीत मिथ्यात्व और अगृहीत मिथ्यात्व। अभी हम गृहीत और अगृहीत की बातों को पहले देखेंगे और बाद में आपने जो बताया उसको भी देखेंगे क्योंकि उनको हमें अपने से दूर करना है न ?

देखो हमारे वहां क्या हुआ था। एक बच्चा सायक्लिंग कर रहा था, सायकल चला रहा था तो उसका ॲक्सिडेंट हो गया। ॲक्सिडेंट हो गया तो उसके पैर में गँग्रीन हो गया। तो गँग्रीन का स्वरूप समझकर उस पैर को काटना अच्छा क्या पूरा फैल जाते दम तक रुकना अच्छा ? *श्रोता: पैर को काट देना अच्छा।* पैर को काट देना अच्छा। बहुत अच्छा। वैसे ही यहां कह रहे हैं मिथ्यात्व क्या है ? वह मिथ्यात्व में से गृहीत मिथ्यात्व क्या है ? अगृहीत मिथ्यात्व क्या है ? इसका स्वरूप हम जाने बिना उसको हम दूर कैसा करेंगे ? देखो-देखो, अगर आपके घर में शादी है आपकी नहीं, घर में शादी है और बहुत सारे मेहमान आते हैं और आपको पता लग जाये कि अपना फलां-फलां रिलेटिव्ह सबकी चोरी कर रहा है तो उसको घर में रखना या नहीं रखना ? ख्याल में आया ? तो उसको तो हम जान लेंगे कि अरे वह यही व्यक्ति है जिसने यह कार्य किया है। तो उसको हम किसी भी प्रकार से समझा बुझाकर या पुलिस के हाथ में देकर उसको हम रफा-दफा कर देंगे।

वैसे यह मिथ्यात्व क्या है ? उसके कौनसे-कौनसे भेद बताये हैं ? उन भेदों को जानकर हम आगे बढ़ेंगे। फिर उसे रखना कि नहीं रखना यह आपको नक्की करना है। ख्याल में आया ? वहां पहले में पहले हमने दो भेद देखे थे। एक भेद है -अगृहीत मिथ्यात्व और दूसरा गृहीत मिथ्यात्व। अभी वह गृहीत मिथ्यात्व क्या है और अगृहीत मिथ्यात्व क्या है उसके पहले हम एक बात को अवश्य देखेंगे। जिस जीव को सम्यक्त्व होना है यानी आत्मानुभूति होनी है उस जीव को पहले में पहले गृहीत मिथ्यात्व को निकाल बाहर करना पड़ेगा। यानी अगृहीत मिथ्यात्व होगा तो सम्यग्दर्शन होगा ऐसी बात नहीं है, लेकिन गृहीत मिथ्यात्व हो और उसको सम्यग्दर्शन हो जाये ऐसा तीन काल में नहीं होगा। तो क्या कहते हैं ?

देखो यह कैसी बात है कि जो जिनेन्द्र भगवान ने बातें बतायी हैं, जिनेन्द्र भगवान की उन बातों पर हमारा अगर श्रद्धान नहीं होगा, किसके बारे में ? तो कहते हैं कि छह द्रव्य, सात तत्त्व या जिसको हम नौ पदार्थ भी कहते हैं। ये नौ पदार्थ कौनसे होते हैं, अंजू आप जानती हैं ? जोर से बोलो। *श्रोता: जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष।* यह कितने हुये, नौ ? *श्रोता: और पाप आस्रव और पुण्य आस्रव, पाप बंध और पुण्य बंध।* हां, बहुत अच्छा ! देखो पाप और पुण्य को ॲड करते हैं, सात तत्त्वों में यह दो और ॲड करते हैं तो नौ पदार्थ कहे जाते हैं। देखो यहां तो पाप और पुण्य को आस्रव और बंध में भी इन्क्लूड किया जाता है। उनका ज्यों का त्यों श्रद्धान नहीं होना, उसको क्या कहते हैं ? अगृहीत मिथ्यात्व। उसमें क्या होता है ? कहीं कुदेव, कुगुरु और कुशास्त्र इनके निमित्त से इस जीव की उस खोटी मान्यता में अधिक प्रवृत्ति होती है या वह दृढ़ हो जाती है। तो वह क्या हुआ ? किसीके उपदेश से, किसीके कहने से तो वह क्या होगा कि वह गृहीत मिथ्यात्व होगा।

यह गृहीत मिथ्यात्व क्या है ? कि डबल कोटिंग है। नहीं समझे आप ? आप समझदार हो तो आप समझ गये। डबल कोटिंग समझते हैं आप ? देखो आपके घर में रंग करना है, कलर। तो कलर करना है तो आप वह रंगारी को बुलाते हैं और उसको पूछते हैं भाई आप कितने हाथ लगाओगे ? हाथ यानी कितने कोटिंग करोगे ? वह बोलता है साहब हम तीन कोट करेंगे। नहीं-नहीं चार कोट करने पड़ेंगे। क्यों साहब ? अरे कलर पक्का हो जाता है, आठ-दस साल देखना नहीं पड़ता है। वैसे जिसकी पहले से ही मान्यता खोटी है और कुदेव, कुगुरु और कुशास्त्र के निमित्त से उसकी वह मान्यता अधिक पुष्ट होती है, तो वह जो मिथ्यात्व इतना गाढ़ा हो जाता है कि जल्दी से जल्दी निकलता ही नहीं। ख्याल में आया ? वैसे यह डबल कोटिंग है और ऐसा तो मैं आपको एक छोटासा उदाहरण देता हूं।

यह जो शर्ट है वह गृहीत मिथ्यात्व है और यह जो बनियान है वह अगृहीत मिथ्यात्व है। तो हमें अगृहीत मिथ्यात्व को निकालना है तो पहले गृहीत मिथ्यात्व को निकालना पड़ेगा कि नहीं ? हमारा शर्ट न फटे ऐसी अवस्था में वह शरीर पर रहते हुये बनियान को निकाल सकेंगे कि नहीं ? ख्याल में आया ? वैसे यहां कहते हैं कि गृहीत मिथ्यात्व को पहले निकालना चाहिये यानी उसको दूर करना चाहिये और अगृहीत मिथ्यात्व बाद में चला जायेगा। तो क्या रीत है ? क्या पद्धति है ? उसको भी हम अभी कुछ देर के बाद देखेंगे। अभी हम यहीं विश्राम करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

४. मिथ्यात्व गुणस्थान

अभी से आज हम मिथ्यात्व गुणस्थान की बात करेंगे, क्योंकि हमें पहले मिथ्यात्व को जानना है और वह मिथ्यात्व क्या है यह जब तक हम अच्छी तरह से नहीं जानेंगे, नहीं पहचानेंगे, तो उसको छोड़ना कैसे हो सकता है। देखो यहां तो हमें सम्यक् मार्ग से आगे बढ़ना है, लेकिन उस सम्यक् मार्ग में तकलीफ देनेवाला ऐसा जो कोई मिथ्या मार्ग है। क्योंकि गड़बड़ी ऐसी है, मार्ग तो एक ही है। उसको देखने के नजरिया दो हैं। कैसे ? जब इस जीव का उपयोग स्व तरफ न लगते हुये पर तरफ लग रहा है, तो वह संसार मार्ग है और पर तरफ से अपना उपयोग हटाते हुये स्व में लगाना वह मोक्षमार्ग है। जैसे आपने देखा होगा, सुना तो होगा ही होगा कि बॉम्बे आगरा रोड, यानी जो रोड बॉम्बे से निकलता है और आगरा पहुंचता है, उसको भी बॉम्बे आगरा रोड कहेंगे और जो आगरा से बॉम्बे आता है उसको भी बॉम्बे आगरा रोड कहेंगे या आगरा बॉम्बे रोड कहेंगे। जो भी आपको कहना है, मार्ग तो एक ही है, सिर्फ देखने की हमारी या मान्यता में जो भूल हो रही है, उसे हमें पहचानना है।

यह मान्यता कैसी-कैसी भूल भरी हो सकती है। उसे देखने के लिये हम पुस्तक में मिथ्यात्व की परिभाषा दी है उसको देखते हुये आगे बढ़ेंगे। ७१ नंबर के पृष्ठ पर लिखा है, जहां एक गाथा है। उसके नीचे उसका अर्थ दिया है। मैं पढ़ूंगा और आप उसके साथ-साथ रिपीट कीजियेगा। **दर्शनमोहनीय मिथ्यात्व कर्म के उदय के समय में,** *श्रोता: दर्शनमोहनीय मिथ्यात्व कर्म के उदय के समय में,* **निमित्त से होनेवाले,** *श्रोता: निमित्त से होनेवाले,* **जीव के तत्त्वार्थों के विपरीत श्रद्धानरूप भाव को,** *श्रोता: जीव के तत्त्वार्थों के विपरीत श्रद्धानरूप भाव को,* **मिथ्यात्व गुणस्थान कहते हैं।** *श्रोता: मिथ्यात्व गुणस्थान कहते हैं।* यह परिभाषा पुस्तक के आधार से है।

पहले में पहले हमें प्रश्न क्या उठना है कि मिथ्यात्व गुणस्थान किसे कहते हैं, तो उसका उत्तर तुरंत हमको मिलता है, जीव के अतत्त्वश्रद्धानरूप भाव को। पहले हमने गुणस्थान की परिभाषा में देखा था, जीव के श्रद्धा और चारित्र गुण की बात की थी। यहां उस श्रद्धा गुण की अपेक्षा से बात हो रही है। क्या कहते हैं लेकिन यह श्रद्धान कैसा है ? अतत्त्वरूप श्रद्धान है। तो तत्त्व कितने हैं हमने देखे थे भाई ? हां साहब आप जानते हैं ? तत्त्व कितने देखे थे ? *श्रोता: नहीं जानते।* कोई बात नहीं, कोई बात नहीं,

अच्छा है आप नहीं जानते हैं क्योंकि हम कुछ भी गलत बोल जाये तो आपको कुछ फर्क नहीं पड़ना है। कितने तत्त्व देखे थे ? *श्रोता: सात।* सात, उन सात तत्त्वों का ज्यों का त्यों श्रद्धान नहीं करना, जो है उसका स्वरूप उससे विपरीत श्रद्धान करना, उसको यहां क्या कहा है ? अतत्त्वश्रद्धानरूप भाव यानी जो तत्त्व नहीं है, अतत्त्व है उसको सही तत्त्व मानना। जीव के ऐसे अतत्त्वश्रद्धानरूप भाव को मिथ्यात्व कहते हैं।

देखो भैया यहां तो एक बात निश्चितरूप से हमें ज्ञान में रखनी है कि ये जो सात तत्त्व कहे गये हैं वे जिनेन्द्र भगवान के द्वारा कहे हुये होने चाहिये। क्योंकि हर धर्म में; धर्म यानी क्या ? वे धर्म जिसको मानते हैं, उनके अपने-अपने तत्त्व अलग-अलग जुदे-जुदे हैं। लेकिन यहां किसकी बात चल रही है ? जिनेन्द्र भगवान ने जो बात बतायी है तत्त्वों की, उन सात तत्त्वों का ज्यों का त्यों श्रद्धान करना। यानी क्या करना ? जीवतत्त्व है उस जीवतत्त्व को उपादेय यानी आश्रय करनेयोग्य मानना, अजीवतत्त्व है उसको ज्ञेयरूप मानना, आस्रव को हेय यानी छोड़ने लायक मानना। इसतरह से जैसा उसका स्वरूप है, स्वभाव है, उसके कॅरॅक्टरिस्टिक्स हैं वैसा उसको मानना, इसीको कहा है कि तत्त्वों का श्रद्धान और उसके विपरीत मानेंगे, तो उसको कहेंगे अतत्त्वश्रद्धान।

यहां पर बता रहे हैं कि जीव के अतत्त्वश्रद्धानरूप भाव को मिथ्यात्व कहते हैं। यह जो जीव में अतत्त्वश्रद्धान होता है या कार्य होता है, तो उसको निमित्त कौन है ? कहते हैं निमित्त से होनेवाली, तो निमित्त कौन है ? कि दर्शनमोहनीय मिथ्यात्व कर्म के उदय के समय में। क्या कहा ? जब-जब यहां मिथ्यात्व कर्म का उदय हो रहा है, दर्शनमोहनीय कर्म जो है मिथ्यात्व उसका उदय। उस समय में, यह नहीं कहा कि उस मिथ्यात्व कर्म ने जीव को अतत्त्वश्रद्धानरूप परिणमाया है। जो खोटा कार्य हो रहा है, जो अपराध कर रहा है वह जीव स्वयं है। स्वयं अतत्त्वरूप श्रद्धान कर रहा है।

कोई कर्म उसको जबरदस्ती से, तू अभी अतत्त्वश्रद्धान कर, नहीं तो तुझे खतम कर दूंगा, ऐसा कर्म बोलेगा क्या नहीं ? यह कर्म कौनसा द्रव्य है ? *श्रोता: पुद्गल।* पुद्गल और बोलनेवाला कौनसा द्रव्य है ? हां, बोलनेवाला कौनसा द्रव्य है ? बोलो, बोलो, *श्रोता: पुद्गल।* पुद्गल, तो दोनों एक ही जाति के हो गये क्या नहीं ? क्या फर्क है दोनों में ? *श्रोता: कुछ नहीं।* कुछ नहीं ? अच्छा ! देखो एक है कार्माणवर्गणा से बना हुआ और दूसरा है भाषावर्गणा से बना हुआ। इन दो वर्गणाओं में कौनसा अभाव है ?

अन्योन्याभाव है। तो जिसका जिसमें - दूसरे में अभाव हो वह उसका कार्य करें यह कहां से बात आयी। तो कर्म हमें कहता होगा न कि तुझे अभी अतत्त्वश्रद्धान करना है। कर्म बोलेगा नहीं। यह बात पहली नक्की करते हैं।

देखो कथन होता है निमित्त से और कार्य होता है उपादान से। यह करणानुयोग की ऐसी विशेषता है कि वहां हमेशा निमित्त से ही कथन होता है। लेकिन उस वक़्त हमें समझना चाहिये कि यह तो उपचार का कथन है, निमित्त का कथन है। ऐसी बात है नहीं कि निमित्त ने कुछ किया हो। अच्छा-अच्छा ! क्योंकि क्या है ? पुद्गल को तो ज्ञान है नहीं है कि मैं इनको सताऊं, कि उनको सताऊं कि उनको सताऊं। लेकिन जीव को ज्ञान है कि नहीं ? तो हमने क्या शास्त्र में पढ़ा है कि चार घातिकर्मों का नाश करके, अनंतचतुष्टय की प्राप्ति करके ये अरिहंत हुये हैं। तो जीव ने कर्मों का नाश किया कि नहीं ? हां जी ? *श्रोता: नहीं किया।* नहीं किया। वहां तो निमित्त का कथन है, क्योंकि हमने मूल में यह ध्यान में रखा है कि विश्व में प्रत्येक द्रव्य अपनी-अपनी स्वयं की योग्यता से परिणमित होता है। किस कारण से ? बोलो बहन ? *श्रोता: द्रव्यत्व गुण।* द्रव्यत्व गुण। हां बहुत अच्छा, *श्रोता: स्वयं की शक्ति के कारण।* कौनसी शक्ति है ? स्वयं की जो शक्ति है वह कौनसी शक्ति ? *श्रोता: उपादान शक्ति।* अरे उस उपादान का नाम भी तो होगा न भाईसाहब ! *श्रोता: क्रियावती शक्ति।* क्रियावती शक्ति से नहीं। *श्रोता: उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य।* हां कौन बता रहें हैं। हां बहुत अच्छा, देखो प्रत्येक द्रव्य, द्रव्य को क्या कहा है ?

देखो उमास्वामीजी ने कहा है '**सत् द्रव्यलक्षणम्**'। तो यह सत् कैसा है ? जो उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य युक्त सत् है। ख्याल में आया ? तो प्रत्येक द्रव्य में अपनी-अपनी नयी पर्याय का उत्पाद और पूर्व पर्याय का व्यय और स्वयं कायम टिके ऐसी उसमें योग्यता है। तो प्रत्येक द्रव्य अपना-अपना स्वतंत्र परिणमन करने में सक्षम है। कोई अन्य द्रव्य आवे तो यह परिणमन हो जाय ऐसा नहीं है। मैं आपसे पूछूंगा आपने कर्मों को देखा है कि नहीं ? *श्रोता: नहीं देखा।* नहीं देखा और हमने आपसे पूछा क्यों आज सुबह की क्लास में नहीं बैठे थे ? क्या करे साहब अंतराय कर्म बीच में आया। यह अंतराय कर्म सबको दिखता है। क्यों ? अंतराय कर्म दिखता है ? आपको दिखता है ? नहीं दिखता है। तो मेरा दूसरा प्रश्न है जिनेन्द्र भगवान को भी दिखता होगा कि नहीं ? हां ? आप क्या बोलते हैं साहब ? *श्रोता: देखते होंगे।* देखते होंगे। जिनेन्द्र भगवान भी

देखते होंगे और आप बोलते हैं नहीं। क्यों, क्यों ? *श्रोता: वे अपने को जानते होंगे।* हां और उनका ज्ञान का स्वभाव कैसा है ? स्व-पर प्रकाशक है। तो पर जानने में आयेगा कि नहीं ? श्रोता: वहां उपयोग नहीं रहता है। अरे भाई केवलज्ञान की ऐसी कपॅसिटि है कि केवली भगवान स्व और पर को भी जान रहे हैं। यह तो ज्ञान की स्व-पर प्रकाशक शक्ति है।

लेकिन मेरा प्रश्न है कि केवली भगवान कर्म को देखते होंगे क्या नहीं ? बोलो साहब ? *श्रोता: देखते होंगे।* देखते होंगे। अच्छा, अच्छा ! क्यों ? सिद्धान्त प्रवेशिका की आवश्यकता है कि नहीं बोलो। मुझे यह बताना है कि जो कर्म हैं वे दिखते नहीं हमको तुमको। क्यों ? उसमें वर्ण नाम का गुण है कि नहीं। काला, गोरा कुछ तो भी होगा कि नहीं वह। आप क्या कहते हैं ? *श्रोता: नहीं।* आप कहते हैं हां। आप कहती हैं ना। पुद्गल किसको कहते हैं ? *श्रोता: स्पर्श, रस, गंध, वर्ण जिसमें होता है।* स्पर्श, रस, गंध, वर्ण जिनमें होता है। हमने अभी कर्म को कौनसा द्रव्य देखा ? पुद्गल। तो उसमें वर्ण गुण होना ही चाहिये, स्पर्श गुण होना ही चाहिये क्योंकि द्रव्य का और गुण का नित्यतादात्म्य संबंध होता है। हम तत्त्वों को भूल जाते हैं। अरे मुझे तो नहीं दिखता है। यह आपको ठंडी-ठंडी पंखे की हवा लगती है कि नहीं ? कौनसे रंग की होगी बताओ ? तो उसमें वर्ण गुण है कि नहीं ? क्योंकि एक गुण का दूसरे गुण के साथ अविनाभावी संबंध होता है। एक गुण होगा तो अन्य गुण होंगे, होंगे और होंगे।

आपने अग्नि देखी है बहन ? उसको स्वाद होगा कि नहीं ? रस, स्वाद होगा कि नहीं उसको ? आपने कभी चखा है कि नहीं ? मालूम नहीं आपको ? तो उसमें रस गुण होगा कि नहीं ? खट्टा, मीठा, कड़वा, कषायला कुछ न कुछ उसमें परिणति होगी कि नहीं ? देखो हम डरते हैं बोलने के लिये। अरे भाई वह पुद्गल है तो उसमें रस गुण होना ही चाहिये और रस गुण है तो पांच पर्याय में से एक पर्याय तो कोई होगी ही। तो आपको मालूम है ? साहब मुझे तो मालूम नहीं, आप ही चख कर हमें बताओ। ऐसा नहीं चलेगा। हमें तत्त्व की दृष्टि से, जो हमने सिद्धान्त सीखें हैं उनकी दृष्टि से, तत्त्वनिर्णय करना अनिवार्य है। जब तक हमारा यह निर्णय नहीं होता है कि कार्माण वर्गणा कहो या कर्म कहो, यह पुद्गलद्रव्य है और उसमें भी स्पर्श, रस, गंध, वर्ण गुण होंगे। केवली भगवान ने देखे हैं कि नहीं ? बिलकुल नहीं देखे। क्यों ? केवली भगवान किसको कहते हैं ? जिनके केवलज्ञान होता है और केवलज्ञान इन्द्रियों के माध्यम से

नहीं जानता है। भले ही उनकी इंद्रियां हैं, आंख है, कान है, नाक है, द्रव्येन्द्रियां तो सभी की सभी मौजूद हैं लेकिन उनका उपयोग जो है ज्ञानोपयोग, वह प्रत्यक्ष जानता है, परोक्ष नहीं जानता है। जो परोक्ष से जाने वे केवली भगवान नहीं होते हैं। अब और डिटेल में जाना है तो हम-तुम भी आंख से नहीं देखते हैं, ज्ञान से जानते हैं।

बाबूभाई माफ करना हो, आ बधी तमारी स्टाइल छे। क्या कहा, हम भी जो जानते हैं वह हमारे ज्ञान से जानते हैं, मीडिया ये इन्द्रियां हैं। आप बहन चश्मे से देखती हैं न ? तो चश्मा देखता है कि आप देखती हैं ? नक्की करना। अगर चश्मा देखता होगा तो हम उसे इस पुस्तक के ऊपर रखेंगे, शास्त्र के ऊपर; पढ़ो बेटा। यह हमें चश्मा नहीं लगाया तो अस्पष्ट लगता है इसलिये हम लगाते हैं। हां-हां अभी स्पष्ट हो गया। तो चश्मा देख रहा है या मैं देख रहा हूं ? यह तो मिडिया है, माध्यम है। इस माध्यम के द्वारा देखा जाता है। वैसे हमारा ज्ञान गुण जो है वह मेरे संपूर्ण भागों में है और यह आंख जो है, उस आंख की जो आप गुजराती में कीकी बोलते हैं। क्या बोलते हैं उसको ? आय बॉल जो है उसके अंदर जो छोटासा रेटिना होता है, उसके द्वारा वह देखता है। वह मिडिया है, जाननेवाला तो ज्ञान है। क्योंकि कहीं हमने किसी मुर्दे को देखा है, उसकी आंखें भी हैं। वह भी खुली हैं, तो वह देखता- जानता होगा कि नहीं ? अरे जाननेवाला तो कब का वहां से गायब हो गया है। ख्याल में आया ?

लेकिन हम इस ढंग से, जो सत्य परिस्थिति है उसकी अपेक्षा से कभी सोचते ही नहीं। इसलिये हमें लगता है, केवली भगवान तो आंखों से देखते होंगे कि नहीं ? कतई नहीं देखते। क्योंकि वे इन्द्रियों के माध्यम से नहीं जानते, केवलज्ञान तो प्रत्यक्ष ज्ञान है भाई। जो इन्द्रियों के माध्यम से जानता है उसको परोक्ष ज्ञान कहते हैं। ये सारी बातें हमारे उमास्वामीजी ने लिखी हैं। **आद्ये परोक्षम्** मतिज्ञान और श्रुतज्ञान परोक्ष हैं, अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान एकदेश प्रत्यक्ष है और और केवलज्ञान परिपूर्ण सर्व प्रत्यक्ष है। बात ख्याल में आयी ? हमने देखा कि एक गुण अगर हमें मौजूद दिखायी देता है तो अन्य गुण भी उसमें हैं। हवा का जो स्पर्श गुण है न, उसकी ठंडी-ठंडी हवा लग रही है, तो उसमें स्पर्श, रस, गंध, वर्ण सारे गुण हैं। ये सभी के सभी जब हमको दिखते नहीं हैं लेकिन आगमचक्षु लगायें, तो हमको यह बात ख्याल में आती है कि हम पुद्गल उसीको कहते हैं कि जिसमें स्पर्श, रस, गंध, वर्ण इत्यादि अनंत गुण हैं।

यह बात नक्की कब होती है कि ये जो जिनेन्द्र भगवान ने तत्त्व बताये हैं, उनका ज्यों का त्यों श्रद्धान अगर हम नहीं करते हैं और हमें तो सम्यग्दर्शन प्राप्त करना है और उसकी अपेक्षा से हम कौनसा-कौनसा प्रयत्न कर रहे हैं यह देखना। यहां तो कह रहे हैं यह अतत्त्वश्रद्धान जो है, यह सात तत्त्वों के बारे में यानी जीव को जीव नहीं मानते, नहीं जानते और ना ही उसका अनुभव करते हैं, वह अतत्त्वश्रद्धान हो गया। मैं आपसे पूछूंगा बहन, आप गोरी हो या काली हो ? कुछ भी बोलो। गोरी हो न, नहीं ? तो कैसी हो ? *श्रोता: गोरी भी नहीं और काली भी नहीं।* गोरी भी नहीं और काली भी नहीं तो कौन हो तुम ? सांवली हो ? *श्रोता: जीव हूं।* जीव हो। तो जीव काला-गोरा नहीं होता है ? हां, चलो ठीक है। आपने बिलकुल सही उत्तर दिया है, क्यों ? मैं जीव हूं और यह काला-गोरापन जो है वह पुद्गल की पर्यायें हैं, मेरी पर्याय नहीं है। यह काला-गोरा कौनसे गुण की पर्यायें हैं ? *श्रोता: वर्ण गुण की पर्याय।* वर्ण गुण की पर्यायें हैं। मेरे में वर्ण गुण होगा कि नहीं ? *श्रोता: नहीं।* नहीं, क्यों नहीं ? अरे, वर्ण गुण यह पुद्गलद्रव्य का विशेष गुण है और विशेष गुण हम उसीको कहते हैं कि जो अपना द्रव्य छोड़कर अन्य द्रव्य में नहीं पाया जाता है। यह देखो जीव को और अजीव को जानने में यही तकलीफ है। हम अजीव को ही जीव मान रहे हैं।

देखो बात ऐसी है, १९५० साल की बात है जब हम पहली बार बम्बई में पहुंचे। तब हम छोटे थे, तो हमारे यहां जैन सोसायटी में जो बिल्डिंग्ज थी वे बिलकुल एक जैसी सारी की सारी। यहां जैसे सबके बंगले एक जैसे हैं न ! तो अगर हमें अपने बंगले में जाना है, तो यह हमारे बाजूवाला, उसके बाजूवाला, उसके बाजूवाला वह मेरा नहीं है यह जानना पड़ेगा कि नहीं आपको ? अगर हम किसी अन्य के बंगले में घुस जायेंगे तो क्या होगा ? डंडे पड़ेंगे। ख्याल में आया ? तो हमें पर को भी जानना है और स्व को भी जानना है। स्व को इसलिये जानना है कि उसरूप मैं हूं और पर को इसलिये जानना है कि उसरूप मैं नहीं हूं। जीव को भी जानना है और अजीव को भी जानना है। जीव को जीव तरीके से जानना है और अजीव को अजीव तरीके से जानना है। यहां आस्रवतत्त्व जो बताया है उस आस्रवतत्त्व को आस्रवरूप से जानना-मानना है और हमने तो उसको संवरतत्त्वरूप से माना है। क्यों ?

हम कर रहे हैं आस्रव और हम पत्रिका में भी लिखते हैं- हमारे यहां ऐसा-ऐसा विधान होनेवाला है, धर्मलाभ लेने हेतु आप अवश्य पधारो। तो यह विधान जो हो रहा

है, शिबिर जो लग रहा है, वह शुभभावरूप है या धर्मभावरूप है ? हम क्या लिखते हैं धर्मलाभ लेने आना। ख्याल में आया ? लिखेंगे जरूर, उसमें कोई तकलीफ नहीं है, उसमें कोई गलत भी नहीं है क्योंकि एक अपेक्षा से वह भी सच है, लेकिन अगर हम उसको धर्म ही मानेंगे तो धर्म तो संवर को कहते हैं। तो हमने आस्रव को संवररूप माना। यह अतत्त्वश्रद्धान है यह मैं बताना चाहता हूं। अभी अन्य तत्त्वों में भी इसीतरह लगाना। तो यहां जो कह रहे हैं कि मिथ्यात्व जो है, वह कैसा है कि जीव के अतत्त्वश्रद्धानरूप भाव हैं। वे किस कारण से हो रहे हैं ? कि मिथ्यात्व कर्म के उदय के समय में - निमित्त से। यहां तक तो हम पहुंचे थे। यह मिथ्यात्व कर्म का जो उदय है, वह जीव को अतत्त्वश्रद्धान करावे ऐसी बात नहीं है। वह जब वहां खड़ा होता है, उदय में आता है, उस समय जीव स्वयं उसरूप परिणमित होता है और हम कहेंगे कि इसके निमित्त से यह बात हुयी। ख्याल में आया ?

यह मिथ्यात्व जो है उसके हमने दो भेद देखे थे। कौन-कौनसे ? एक गृहीत मिथ्यात्व और एक अगृहीत मिथ्यात्व। गृहीत मिथ्यात्व यानी क्या और अगृहीत मिथ्यात्व यानी क्या यह बात समझने के पहले हम यह बात निश्चित करेंगे कि आज तक जितने जीव हैं। कौनसे ? जो सिद्ध गति के जीव हैं, जो अभी सिद्ध अवस्था में विराजमान हैं, ऐसे जीव पहले मिथ्यात्व गुणस्थान में थे। क्या कहा ? कोई भी जीव बना-बनाया सिद्ध नहीं है। अनादिकाल से वही जीव सिद्ध, सिद्ध, सिद्ध अनादिकाल से है नहीं। वह जीव पहले मिथ्यात्व गुणस्थान में था और वह सिद्ध हुआ। तो अनादिकाल में जो मिथ्यात्वी था उस समय कोई सिद्ध थे कि नहीं ? हां थे न, सिद्ध थे। तो वे जब मिथ्यात्वी थे तब ? तब भी कोई अन्य सिद्ध थे। यानी यहां क्या कह रहे हैं कि यह एक जीव की अपेक्षा जो सिद्धत्व है यह अनादि का नहीं है। वह सादिअनंत कालवाला ही है। इसलिये जो जीव अभी सिद्ध हैं वे पहले मिथ्यात्वी थे। तो हम भी अभी मिथ्यात्वी हैं, तो हमें भी सिद्धत्व प्राप्त करने के चान्सेस हैं, हम भी सिद्धत्व प्राप्त कर सकते हैं। यह बात हम देखते हैं। अभी यहां क्या कह रहे हैं ?

यह जो मिथ्यात्व है उस मिथ्यात्व में अगृहीत मिथ्यात्व किसको कहना ? तो कहते हैं अगृहीत मिथ्यात्व यानी अभी तो हमने देखा था कि सात तत्त्वों के विषय में गलती करना। यानी उसको जैसा है वैसा नहीं मानना, वह अगृहीत मिथ्यात्व है। अपने को शरीररूप मानना, यह भी क्या है ? अनादिकाल से इस जीव की यही मान्यता चल

रही है और वह अगृहीत मिथ्यात्व में अटका हुआ है और गृहीत मिथ्यात्व किसे कहते हैं ? कहते हैं जो कुदेव-कुगुरु-कुशास्त्र हैं, उनके निमित्त से, उनके उपदेश से उनके फंदे में हम आते हैं तो हमारा जो अगृहीत मिथ्यात्व है उसका पोषण होता है। फॉर एक्झॅम्पल जिसको हम कहेंगे कि तुम शुभभाव करोगे तो तुम्हारा भला होगा, शुभभाव से तुम्हें धर्म होगा। अभी मुझे याद है जब मैं छोटा था तो लोकल में जाना पड़ता था स्कूल में। लोकल समझते हैं न, मुंबई की लोकल ट्रेन जो होती है। वहां भिखारी लोग आते थे। साहब एक बीडी पिलाओ, धर्म होगा। क्या बोले ? तो उन्होंने धर्म को कितना नीचे गिराया। उस समय में तो एक पैसे में पचास बीडी मिलती थी। तो कितना धर्म हो गया ? धर्म का क्या अर्थ है, धर्म किसको कहते हैं इस बात का ही पता नहीं है और हम समझते हैं कि हमने कोई विशेष शुभभाव किया, तो हमने बहुत बड़ा धर्म किया।

धर्म तो संवर से शुरू होता है लेकिन हमने आस्रव किया और माना कि हमने धर्म किया। अभी यहां क्या बता रहे हैं जो जीव कुदेव, कुगुरु और कुशास्त्र के वचनों से, उनके कहने में आते हुये खोटी मान्यता को पुष्ट करता है, वह गृहीत मिथ्यात्वी है। देखो मैं आपको दो बातें बताना चाहता हूं इस बारे में, कि हम महाराष्ट्र में नागपुर के बाजू में एक गांव है, उधर गये थे। वर्धा नाम का गांव है। वहां किसी भाईसाहब ने हमें प्रवचनार्थ बुलाया था, उनका बेटा डॉक्टर था और उनकी बहू थी यानी वह डॉक्टर की मिसेस। उन्होंने एक-दो दिन हमारा प्रवचन सुनकर बोला कि पंडितजी आपको हमारे घर भोजन करने के लिये आना है। हमने कहा जरूर आयेंगे साहब, उसमें क्या है ? तो हम उनके घर गये। उन्होंने मुझे कहा कि आपको हमारा घर मंदिर देखना है ? मैंने कहा वाह साहब इससे और बढ़िया बात क्या हो सकती है। आप जानते हैं महाराष्ट्र में घर मंदिर यानी घर देरासर जिसको आप गुजराती में कहेंगे, वह होता है। हमको लगा कि चलो देखेंगे क्या है उसमें ! तो यह जैसा कर्टन-पर्दा लगा है न, वैसा उनके हॉल में इतना बड़ा कर्टन लगा था। तो उन्होंने कर्टन को हटाया। तो वहां कौन नहीं था ? क्या ? हर भगवान की वहां फोटो लगी पड़ी थी। सबको हार पहनाये थे यह वह जो कुछ करना था, उनको वह सब किया था। उन्होंने मुझे पूछा कि पंडितजी आपको कैसा लगा ? अशोकभाई ! तो हमने कहा हम ऐसा करते हैं, पहले आप हमें भोजन दीजिये, उसके बाद इसकी चर्चा करेंगे। क्योंकि अब उनके घर में बुलाया है, अन्य कोई हमारे लिये भोजन की तैयारी तो नहीं करेगा और हम भूखे रह जायेंगे क्योंकि हम तो झूठ

बोल नहीं सकते।

भोजन वगैरह का आधा पौना घंटा निकल गया फिर बोले अभी बताओ पंडितजी कैसा लगा हमारा मंदिर ? मैंने कहा आपने बहुत बढ़िया काम किया। वह एकदम खुश-खुश हो गयी। मैंने पूछा कि क्यों बहन ? इस राज दरबार में - भगवान के दरबार में भगवान महावीर की फोटो नहीं लगायी। वह छोड़कर बाकी सब थे। ख्याल में आया ? तो मैंने पूछा कि आपको इतने भगवान की जरूरत क्यों पड़ी ? आपको एक पर भी भरोसा नहीं है कि मेरे संकट में कोई न कोई मुझे मदद करेगा इसलिये रखे हैं या एक पर्टिक्युलर व्यक्ति है, देव है वह मुझे मदद करेगा ? तो वे आगबबूली हो गयी। हम तो वहां से लौटकर अपने ठहरने के जगह पर गये। लेकिन दूसरे दिन से उनका प्रवचन में आना बंद हुआ। तो नुकसान किसका हुआ ? उनके घरमंदिर को राज दरबार कहनेवाले का या शास्त्र में नहीं आनेवाले का ? यही बात मैंने अमेरिका में बतायी थी। जिसके घर में दूसरे दिन भोजन था तो उसके घर में जाना था और उसने पहले दिन यह सुना था। तो उन्होंने बताया कि पंडितजी अभी भोजन कर लो आप फिर मैं मेरे घर का मंदिर दिखाऊंगा। तो उसने सारा दिखाया लेकिन वहां पर केवल एक शास्त्र विराजमान था। कुछ नहीं था वहां। तो बोले कल तक हमारे घर में भी ऐसा ही दरबार भराया था हमने। लेकिन आपकी बात सुनकर हमें विश्वास हुआ और हमने सब निकाल दिया। अब मजे की बात यह है कि वह पति दिगम्बर था और पत्नी थी श्वेताम्बर। उन्होंने कहा हमने दोनों ने एक दूसरे से कन्सल्ट किया और यह निर्णय लिया कि इसको हटाया जाये। बोलो एक प्रवचन में उसकी बुद्धि, वह तो उसकी योग्यता से हुयी, हम कहते हैं कि हमारा सुनकर हुयी, ऐसा है नहीं। ख्याल में आया ?

यहां तो जीव स्वयं मूर्खता कर रहा है, स्वयं गुनाह कर रहा है, स्वयं अपराध कर रहा है। कौनसा ? खोटी मान्यता का और हम आरोप दे रहे हैं खोटे देव, खोटे गुरु, खोटे शास्त्र पर। लेकिन यह निमित्त का कथन ऐसा है कि इनके निमित्त से इस जीव के विपरीत परिणाम हो जाते हैं, तो उसको यहां कहते हैं कि वह गृहीत मिथ्यात्व है। ये गृहीत मिथ्यात्व के परिणाम तो यह जीव स्वयं कर रहा है। ख्याल में आया ? अब ये दोनों बातें हमने देखी और उसमें यह हमने नक्की किया था कि पहले में पहले जायेगा तो गृहीत मिथ्यात्व ही जायेगा और इस जीव ने गृहीत मिथ्यात्व आज तक अनंत बार छोड़ा है। कितनी बार ? *श्रोता: अनंत बार।* लेकिन अगृहीत मिथ्यात्व पहले कभी छोड़ा

था कि नहीं वह हमें मालूम नहीं है, वह तो जिनेन्द्र भगवान जानेंगे।

अब आगे- यहां से एक बहनजी ने बताया था कि मिथ्यात्व के पांच प्रकार हैं। वे पांच प्रकार कौनसे हैं, उसको देखने के लिये हम आगे बढ़ते हैं। वहां पांच प्रकार के मिथ्यात्व के भेद बताये हैं। पेज नंबर ७३ निकालियेगा आप, उसमें है यह। १) एकांत, २) विपरीत, ३) विनय, ४) संशय और ५) अज्ञान। इनको हम इन शॉर्ट देखना चाहेंगे। यहां पर लिखा है लेकिन मैं दूसरी पद्धति से बताना चाहूंगा। क्या कहते हैं ? एकांत यानी क्या ? अंत का अर्थ होता है धर्म। धर्म यानी उसकी जो क्वॉलिटि है, उसमें जो विशेषता है, उसको धर्म कहेंगे। उसका वह एक प्रकार का गुण है। ऐसे प्रत्येक वस्तु अनेकान्तात्मक है। अनेक यानी अन् यानी नहीं, अन् + एक यानी एक नहीं, अनेक यानी एक से अधिक, अंत यानी धर्म जिसमें हैं। ऐसा वस्तु का स्वरूप है। यानी प्रत्येक वस्तु अनंत धर्मात्मक है। ख्याल में आया ? जैसा हम देखते हैं कि आप में अस्ति भी, अस्ति नाम का गुण भी है और नास्ति नाम का गुण भी है। क्या कहा ? कि मेरी अस्ति मेरे में है, मेरी नास्ति इस टेबल में है। ख्याल में आया ?

अस्ति-नास्ति, एक-अनेक, नित्य-अनित्य आदि अनंत धर्म युगल जो कहेंगे हम, ऐसे प्रत्येक द्रव्य में हैं। यानी मैं नित्य भी हूं और मैं अनित्य भी हूं। तो वहां जो अपेक्षा लगती है कि मैं द्रव्य की अपेक्षा से नित्य हूं और पर्याय की अपेक्षा से अनित्य हूं। ऐसा धर्म अपने में होते हुये भी, अनेक प्रकार के धर्म होते हुये भी एक ही धर्मस्वरूप हूं यानी मैं अनित्य ही हूं ऐसा मानना यह एकांत मिथ्यात्व है। मिथ्यात्व यानी मिथ्या यानी खोटा और त्व यानी खोटापना। काहें में ? मान्यता में, ज्ञान में। तो मिथ्यात्व, त्व में तीनों बातें आती हैं- मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र। तो यहां कह रहे हैं कि वस्तुस्वरूप अनेकान्तात्मक होते हुये भी उसको एक ही धर्मरूप मानना। जैसे हम देखते हैं कि कई लोगों की ऐसी मान्यता है कि द्रव्य कूटस्थ है। कूटस्थ का अर्थ क्या होता है ? अपरिणमनशील है, उसमें पर्याय होती ही नहीं, परिणमन होता ही नहीं। ऐसा वेदान्तियों का मानना है। अब दूसरे कई लोग ऐसे भी हैं कि वे कहते हैं कि द्रव्य क्षणिक ही है, द्रव्य अनित्य ही है। यह मान्यता बौद्ध लोगों की है। लेकिन हमने क्या किया कि इसको भी पकड़ा, उसको भी पकड़ा। यह क्या कहता है नित्य है, यह क्या कहता है अनित्य है। तो दोनों मिलकर हमने हमारा सिद्धान्त बनाया क्या ऐसा है ? भाईसाहब सौ झूठ मिलकर एक सच होगा क्या नहीं ? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा। तो

लोग ऐसा ही मानते हैं आपने इसका भी माना, इसको भी खुश, उसका भी माना उसको भी खुश और आपने अपना धर्म बनाया। अरे ऐसी बात नहीं है, यह वस्तुस्वरूप ही ऐसा है। क्या कह रहे हैं ? कि वस्तु अनेकान्तात्मक है।

यहां क्या कह रहे हैं ? जिनेन्द्र भगवान की वाणी में जो बातें बतायी हैं वे स्यात् मुद्रा से मुद्रित हैं। स्यात् यानी कथंचित् द्रव्य नित्य है अर्थात् द्रव्य, द्रव्य की अपेक्षा से नित्य है और वही द्रव्य उसी समय पर्याय की अपेक्षा से अनित्य है। जब अपेक्षा लगती है तो वह बात हंड्रेड पर्सेंट वैसी ही है। आपको अभी समझ में नहीं आया भाईसाहब ? *श्रोता: नहीं आया।* नहीं आया। कोई बात नहीं, बतायेंगे, उसमें क्या है। आप तो सीताजी को जानते ही होंगे, रामचन्द्रजी की पत्नी थी न सीताजी। उसके पहले मैं दूसरा एक प्रश्न किसी महिला से पूछना चाहूंगा। बहन आप माता हो या पुत्री हो ? चॉइस आपको दो दिये हैं। माता हो या पुत्री हो ? *श्रोता: पुत्री भी है और माता भी है।* पुत्री भी है और माता भी है। हमने ऐसा तो आपको ऑप्शन दिया नहीं। देखो ये दोनों ही बातें सच हैं। आप कह रही हैं कि मैं मेरी माता की अपेक्षा से पुत्री हूं और मेरे पुत्र या पुत्री की अपेक्षा से माता हूं। तो एक ही जीव में दोनों ही धर्म हैं। कौनसे ? मातृत्व और पुत्रित्व, जो भी होगा वह। ख्याल में आया ?

वैसे सीताजी थी, वह राम की अपेक्षा पत्नी थी, जनक की अपेक्षा पुत्री थी, लव-कुश की अपेक्षा माता थी और उनके भाई का नाम क्या था ? *श्रोता: भामण्डल।* अच्छा भामण्डल ! भामण्डल की अपेक्षा से वह बहन थी। तो सीताजी २५ पर्सेंट पत्नी थी, २५ पर्सेंट माता थी, २५ पर्सेंट पुत्री थी और २५ पर्सेंट बहन थी क्या ऐसा था ? वह १०० पर्सेंट पत्नी थी, किसकी अपेक्षा से ? रामचन्द्रजी की अपेक्षा से। ख्याल में आया ? जब हम अपेक्षा लगाते हैं तो वहां बात पूरी की पूरी वैसी ही है यह नक्की होता है। ऐसा न मानते हुये हम द्रव्य को सर्वथा नित्य ही माने, द्रव्य को सर्वथा अनित्य ही माने, तो वह मिथ्या एकांत है। इसतरह की खोटी मान्यता करना यह मिथ्यात्व का द्योतक है। इसलिये जो हमने देखा एकांत मिथ्यात्व किसको कहना ? तो वस्तुस्वरूप अनेक धर्मात्मक, अनेक अंतात्मक होते हुये भी उसको एक ही धर्मरूप से मानना यह एकांत मिथ्यात्व है।

अब विपरीत मिथ्यात्व की बात देखते हैं। विपरीत कैसा है ? कि जैसा नहीं है

यानी जैसा है उसके विरुद्ध मान्यता रखना। यह तो आपको समझ में आने जैसी बात है। यह जो पहले के जमाने में घड़ी होती थी, पेंड्युलमवाली, उसमें लोलक आता है, ऐसा-ऐसा घूमता है। तो वह बिलकुल विरुद्ध बाजू जाय, तो वैसा ही है वैसा मानना। जैसे फॉर एक्झॅम्पल इसमें भी दिया होगा कि पुण्य से धर्म होता है ऐसा मानना। लिखा है क्या ? पुण्य व शरीरादि की क्रियाओं से ही मोक्ष होता है, यानी धर्म होता है। तो पुण्य से क्या होगा ? संवर होगा कि नहीं ? क्या होगा ? *श्रोता: आस्रव होगा।* आस्रव होगा। पुण्य से आस्रव होगा या पुण्य इटसेल्फ आस्रव है ? *श्रोता: बंध होगा।* बंध होगा और हमने उसको क्या माना ? धर्म यानी मोक्ष होगा। शरीरादि क्रिया से धर्म होगा कि नहीं ? हां साहब आप क्या कहते हैं ? शरीरादि क्रिया.., जब हम मंदिर में पूजन के लिये जाते हैं, तो हम झगड़ते हैं कि बैठकर पूजा नहीं करना, खड़े होकर पूजा करना। कोई कहता है खड़े होकर पूजा मत करना, शांति से बैठकर पूजा करना। तो अब हम नक्की क्या करें ? पहले यह नक्की करें कि शरीर आदि क्रिया से धर्म होता है या नहीं ? अरे तेरे परिणाम जैसे हैं वैसे तूं कर्म बांधेगा।

अब मैं और थोड़ासा स्पष्ट बोलू बुरा मानना है, वह मान लेवे। शास्त्र श्रवण करते वक्त हमेशा विनय से नीचे बैठना चाहिये। अब उसमें भी ऐसा हो सकता है कि किसीकी शारीरिक अवस्था में कोई बिगाड़ हो और परिणाम ऐसे होते हैं कि शास्त्र का श्रवण करें। तो ऐसे जीवों को कुर्सी आदि में बैठकर सुनना है, सुने क्योंकि परिणाम क्या हैं ? मुझे शास्त्र सुनना है। नहीं-नहीं ये बैठते हैं तो मैं क्यों नहीं बैठूं, क्या मैं उनसे कम हूं क्या ? मैं भी बैठूंगा। क्यों ? यहां तो वह शरीरादि की क्रिया से धर्म की बात नहीं होगी। यह तो बिलकुल हमारे परिणाम कैसे हैं। हम परिणाम पर विशेष जोर दें क्योंकि हमें क्रिया से फल नहीं मिलता है। हमें हमारे जो परिणाम हैं, उन परिणामों के अनुसार हमें फल मिलता है। ख्याल में आया ? तो यहां क्या कहते हैं ? शरीरादि की क्रिया से मोक्ष होता है। तो मैंने इतने उपवास किये, मैंने इतना यह किया, वह क्या है सारे ? शुभ परिणाम हैं।

शरीर की क्रिया तो यह जीव कर ही नहीं सकता है। यह तो पहले नक्की करो। क्यों नहीं कर सकता है साहब ? दिलीप आप बतायेंगे ? शरीर की क्रिया यह जीव क्यों नहीं कर सकता है ? हम-आप कहें इसलिये वह नहीं कर सकता है कि दूसरा कोई कारण होना चाहिये ? *श्रोता: परद्रव्य है।* परद्रव्य है। तो परद्रव्य हुआ तो क्या हुआ। हां

जी ? *श्रोता: क्या है ? जड़ और चेतन में अत्यंत अभाव है।* हां मूल बात क्या है कि दो द्रव्यों में अत्यंत अभाव है। ख्याल में आया ? तो यह शरीर तो जड़ है, उसको ज्ञान नहीं है और यह ज्ञानवाला आत्मा उसको बोले, ए इधर आ। तो आयेगा कि नहीं वह ? अरे ज्ञान ही नहीं तो क्या समझे वह। ख्याल में आया ? यानी यहां कहते हैं दो द्रव्यों में अत्यंत अभाव है और हमने तो ज़िन्दगी भर मान रखा है कि मैं रोज़ाना कसरत करता हूं इसलिये मैं फिट अँड फाइन हूं। तो शरीर की क्रिया तू कर सकता है ? देखो-देखो यह हम अपने पर लगाये कि हमने क्या किया।

क्यों साहब आजकल आपने भोजन बहुत कम कर दिया। नहीं-नहीं बहुत मोटापा हो रहा था, थोड़ासा दुबला होने के लिये हमने भोजन कम कर दिया। तो हमने क्या माना ? कि मेरे इच्छा के अनुसार इस शरीर का परिणमन होगा। ऐसा होता होगा कि नहीं ? देखो यह सारा क्या है ? मिथ्यात्व है। यह मिथ्यात्व की एक-एक झलक आपको बता रहा हूं मैं। हमें तो इसमें से अगर हमारी कोई ऐसी खोटी मान्यता होती होगी तो उसको सुधारना या नहीं सुधारना वह आप अपना नक्की करना। मैं बोलूंगा इसलिये आपको ऐसा करना है, ऐसी बात नहीं है। आपको स्वयं को नक्की करना है कि ऐसी मेरी मान्यता है कि नहीं। हां है, तो उसको हमें निकाल बाहर करना है। ख्याल में आया ? अब आगे बढ़ते हैं।

ये तो प्रायमरी बातें हैं जिससे आप बहुत परिचित भी होंगे। यह जो तीसरा प्रकार है वह विनय मिथ्यात्व का है। वह विनय मिथ्यात्व की बात तो अभी आपको दो उदाहरणों के माध्यम से बतायी है। यानी हम तो इतने चौड़ी छातीवाले हैं कि हमको तो सर्वधर्म समभाव है। क्या बोलते हैं ? भाईसाहब, सर्वधर्म समभाव। यानी हमें तो इनका अपमान करना है, इनका विनय करना है, ऐसा नहीं है इसलिये हम सबका विनय करते हैं। इसको भी नमन करें, इसको भी नमन करें, इसको भी नमन करें, हमें तो किसीसे कोई गिला शिकवा नहीं है। तो वह क्या सर्वधर्म समभाव होता होगा ? तो यह शब्द कैसा तैयार हो गया सर्वधर्म समभाव ? यह आत्मा में, प्रत्येक द्रव्य में जो अनंत धर्म हैं उनमें यह अच्छा, यह खोटा और यह खराब, यह प्रतिकूल, यह अनुकूल ऐसा न रखते हुये सर्वधर्म जो हैं उनमें समतावृत्ति जिसकी है। वह कब होगी ? जब अपने स्वरूप में एकाग्रता करेगा तब।

हमने तो ऐसा मान लिया कि यह धर्म भी सांचा, यह धर्म भी सांचा, यह धर्म भी सांचा। हम किसीके विरुद्ध नहीं हैं। हम कहां जायेंगे, जैसा अपने यहां पॉलिटिशियन्स करते हैं कि उधर गये तो चद्दर पहनायी, उधर गये तो और कुछ किया, उधर गये तो ऐसी टोपी पहनी, उधर गये तो ऐसा नमस्कार किया। यह क्या है ? सेक्युलॅरिझम। ख्याल में आया ? अरे उसे सर्वधर्म समभाव नहीं कहते हैं तो यह क्या है ? यह विनय मिथ्यात्व है। हमें तो ऐसा लगता है यह कैसा उद्धट है, दूसरों को ऐसा बोल रहा है। अरे भाई दूसरों को नहीं, जो सच्चे देव हैं उनको सच्चे देव कहना और जो देव नहीं हैं उनको सच्चे देव कहना, इसमें अंतर है कि नहीं ? देव के बारे में हम कुछ भी बोलेंगे तो किसीको कोई तकरार नहीं है। लेकिन सच्चे गुरु और खोटे गुरु दोनों को एक समान मानना ? देखो कैसे शांत हो गये सब। क्या कहे ? तो यह सच्चा गुरु कौन होता है ? कैसा होता है ? वह भी जानकारी आयेगी। अभी हैं थोड़े दिन अपने पास। तो यहां कहते हैं कि हम इनको भी सही मानते हैं, इनको भी सही मानते हैं, तो यह तो विनय मिथ्यात्व है। मिथ्यात्व है लेकिन कैसा है ? विनय मिथ्यात्व है। जिसको एक प्रकार का मिथ्यात्व होता है उसके अन्य प्रकार के मिथ्यात्व भी होते हैं। समझ में आया ?

अब आगे क्या बता रहे हैं ? संशय मिथ्यात्व। यह संशय मिथ्यात्व यानी क्या ? मैं आत्मा हूं या मैं शरीर हूं, यह कोई निर्णय नहीं हो रहा है, पुण्य से धर्म होगा या वीतरागता से धर्म होगा इसके बारे में हमें कोई निर्णय नहीं हो रहा है, यह संशय मिथ्यात्व है। विपरीत मिथ्यात्व किसको कहा है ? बिलकुल जैसा वस्तु का स्वरूप है उससे विरुद्ध मानना जैसे शुभभाव से धर्म होगा। यह तो हमने मान्यता पक्की की, पर वह कैसी ? विपरीत दृष्टि से। बिलकुल जैसा स्वरूप नहीं है वैसा मानना यह विपरीत मिथ्यात्व हुआ और संशय मिथ्यात्व यानी क्या ? कोई निर्णय हो ही नहीं रहा है। यह सच है कि यह सच है ? हम वहां जाते हैं तो उनका सच लगता है और यहां आयेंगे तो आपका सच लगता है। हमें तो पता ही नहीं लगता है कि कौनसा सच है। यह कैसा है ? संशय मिथ्यात्व। अरे भैया हमें तो मुरादाबादी लोटा नहीं होना है।

आप जानती हैं मुरादाबादी लोटा क्या होता है ? नहीं जानती। यह मुरादाबाद नाम का एक गांव है। वहां पर जो लोटे बनाते हैं, पानी पीने के लोटे जो होते हैं वे बहुत फेमस हैं। वे कैसे होते हैं ? नीचे से ऐसे गोल होते हैं, ऐसे। तो उसको जरा यहां से एक धक्का मारो तो इधर लुढ़क जाता है और यहां से एक धक्का मारो तो इधर लुढ़क

जाता है। यानी किसीने बताया अरे पुण्य से धर्म होता है मालूम है तुम्हें। बाबूभाई हम अमेरिका में गये थे। वहां तो किसी लड़के ने हमसे पूछा कि हमको तो ऐसा उपदेश दिया गया है कि तुम आत्मा का कुछ नहीं कर सकते। तुम किसीका उपकार कर सकते हो, किसीको दान दे सकते हो, किसीकी लाइफ सेव्ह कर सकते हो और आप तो कहते हैं कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं कर सकता है। आप जब कहते हो तो हमें एकदम बराबर लगता है और वे जो कहते हैं तब हमको वह बराबर लगता है। तो हम क्या करें ?

प्रश्न सबका यही है, अमेरिकन हो या इंडियन हो, गुजरात का हो या महाराष्ट्र का हो या कर्णाटक का हो। क्यों ? हमें तो यह लगता है कि हम क्या करें ? वस्तुस्वरूप का निर्णय करें क्योंकि दूसरे के कहने से जो बदलता है उसको तीसरा कोई आकर कहेगा तो वह और बदलेगा। लेकिन हम जब स्वयं अपने बलबूते पर निर्णय करते हैं तब सामने से कोई माई का लाल भी आवे तो भी हम अपनी श्रद्धा से विचलित नहीं होते हैं। यह स्वयं हमें अपना निर्णय करना है। आपके सामने तो सभी बातें रखी जायेगी। उसमें से सच्चा कौन है और झूठा कौन है यह हम स्वयं निर्णय करें। नहीं-नहीं आप क्या कहते हैं ? आपको तो कोई बुरा बोलनेवाला नहीं है। जो सच है आप बोलना, हम मानेंगे। बिलकुल नहीं। अरे बहुत बड़ी सागर की लहर आ जाये, तो हम उसमें बह जाते हैं। क्यों सुरेशभाई ! ख्याल में आया ? करें क्या ?

तत्त्व का निर्णय करें और तत्त्व का निर्णय हुये बिना इस जीव को आत्मानुभूति होगी नहीं। जैसा वस्तु का स्वरूप है, उस वस्तुस्वरूप को उसरूप जब तक हम नहीं मानेंगे, तब हमारी मान्यता में भी ढिलास रहेगी। इसलिये यहां कह रहे हैं कि जो संशय मिथ्यात्व है उसमें यह सच्चा कि यह सच्चा, उसका निर्णय नहीं हो रहा है। जो सम्यग्दृष्टि होता है उसके कितने अंग होते हैं ? कविताबहन आप बतायेंगी ? सम्यग्दृष्टि जीव है उसके कितने अंग होते हैं ? हां चारुबहन ? *श्रोता: आठ अंग होते हैं।* आठ अंग होते हैं। उसमें से पहला अंग कौनसा है ? *श्रोता: नि:शंकित अंग।* नि:शंकित अंग। बहुत अच्छा ! तो जिसको शंका ही नहीं रही है वह सम्यग्दृष्टि होता है। जो संशय सहित है, क्या वह सम्यग्दृष्टि का लक्षण हो सकता है ? इसलिये उसको मिथ्यात्व में डाला। क्या कहा ? अभी जिसका पूर्ण निर्णय नहीं हो चुका है, वह अभी संशय ही कर रहा है कि यह बराबर कि यह बराबर तो वह मिथ्यात्वी ही हो सकता है। अब आगे बढ़ेंगे।

अब कहते हैं अज्ञान मिथ्यात्व। अज्ञान मिथ्यात्व यानी क्या ? कि जो सही वस्तुस्वरूप है उसका ज्ञान न होने के कारण अनाप-शनाप कुछ भी बोलना और वैसा ही मानना। भाईसाहब आप पैदा भी नहीं हुये होंगे उस जमाने का गाना मैं आपको सुनाऊंगा। बम्बई से आया मेरा दोस्त और आगे क्या है ? खाओ, पियो, मौज करो ऐसा जो कुछ होगा। क्या ? तो बम्बईवाले ऐसे हैं। ऐसी उनकी खोटी मान्यता है, आप समझ सकते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि, 'तुम मौज, मज़ा करो, किसने देखा है तुम्हारा पुनर्जन्म होनेवाला है क्या नहीं ? यह स्वर्ग-नरक कुछ नहीं है। आपके पिताजी, उनके पिताजी, उनके पिताजी जो कोई स्वर्ग में गये हैं, क्या उनसे कोई चिट्ठी चपाटी आयी आपके पास कि भाई हम यहां क्षेम कुशल हैं, आप कैसे हो ? कोई तकलीफ तो नहीं है न ? ऐसा कुछ खत-वत आया क्या नहीं ? अरे यह तो सब काल्पनिक बातें हैं। यह तो समाज को ठीकठाक रखने के लिये कहते हैं कि तुम अच्छा काम करोगे तो स्वर्ग में जाओगे, वहां ऐशो आराम है और खोटा काम करोगे तो नरक में जाओगे। आपको डराकर, आप सहीरूप से वर्तन रखें इसके लिये स्वर्ग-नरक बताये हैं।' वे क्या बोल रहे हैं ? अपनी बात पक्की करने के लिये ऐसी दलील करेंगे कि जो ढीलाढाला आदमी होगा वह भी कहेगा चलो साहब कि आप बोलते हैं तो बराबर है।। वह क्या है ? अज्ञान मिथ्यात्व है। उसको वस्तु का स्वरूप मालूम नहीं है। ख्याल में आया ? त्रिलोक की रचना मालूम नहीं है, स्वर्ग-नरक कहां है ? कितने हैं ? उसका हमें पता नहीं है फिर भी उसे झूठ मानता है, तो वह क्या होगा ? अज्ञान मिथ्यात्व है। यहां लिखा है देखो - हम पढ़ते हैं। **ना स्वर्ग है, ना नरक है, ना पाप है, ना पुण्य है, इसलिये खाओ, पिओ मजे में रहो; ऐसी मान्यता का नाम अज्ञान मिथ्यात्व है।** ख्याल में आया ?

अभी मिथ्यात्व के पांच प्रकार हमने देखे। तो ये जो पांच प्रकार हैं इनमें से किसीके एक ही होगा ऐसा नहीं, एक से अधिक भी हो सकते हैं। ख्याल में आया ? अगर अपने में है, तो हम स्वयं उसे पहचाने और उसको दूर करने की कोशिश करें। देखो आपको मालूम है, जब भगवान ऋषभदेव का समवशरण लगा हुआ था, उस वक़्त किसीके मन में ऐसा प्रश्न खड़ा हो गया कि इस समवशरण में कोई भावी तीर्थंकर विराजमान है क्या नहीं ? तो उन्होंने उत्तर दिया। क्या उत्तर दिया ? मारीचि, वह कौन होगा ? *श्रोता: भावी तीर्थंकर।* अच्छा ! आपने दिव्यध्वनि के बारे में कुछ जाना है, समझा है, कुछ पढ़ा है ? वह तो ओंकाररूप ध्वनि होती है। क्या ? यह मारीचि है

और यह चौबीसवां तीर्थंकर होगा ऐसा जिनेन्द्र भगवान बोलेंगे कि नहीं ? ख्याल में आया ? मैं अपनी मान्यता को ठीक कराने के लिये कह रहा हूं। आपने कहा उसमें कोई गलत नहीं है। वैसा बाद में जो पुराण लिखे गये उसमें यह बात जरूर आयी है कि यह जीव चौबीसवां तीर्थंकर होगा वगैरह, वगैरह।

लेकिन हम क्या मानते हैं अब वह केवलज्ञान अभी हुआ और यह प्रश्न मान लो कि पांच मिनट के बाद किसीके मन में आया होगा, तो क्या जब किसीके मन में प्रश्न उठा होगा तभी जाना होगा कि नहीं जिनेन्द्र भगवान ने ? क्या हुआ होगा ? पांच मिनट पहले जब केवलज्ञान हुआ था जभी जाना था। क्यों ? कि विश्व की सारी बातों को युगपत् एक समय में जानते हैं। अरे उनकी तो छोड़ो, उनके पहले वह तो आदिनाथ थे, उनके पहले जो अनादिनाथ तीर्थंकर होंगे यानी पहले के पहले, उनको भी आदिनाथ के काल में इसतरह का प्रश्न उठनेवाला है, ऐसा ज्ञान हुआ होगा कि नहीं ? ख्याल में आया ? हमें तो तीर्थंकरों के स्वरूप का पता नहीं। यहां तो शास्त्र में आता है कि इन्होंने इतने प्रश्न पूछे, फिर इन्होंने ६० हजार प्रश्न पूछें, उनके ऐसा-ऐसा उत्तर दिया। अरे वह तो केवल ॐ, ॐ इसतरह का ओंकाररूप ध्वनि ही उनके सर्वांग में से निकलती है। ख्याल में आया ? फिर गणधर तो १२ अंगों की रचना करते हैं। उसमें कहेंगे कि ऐसा प्रश्न पूछा गया था और ऐसा उत्तर आया, वगैरह, वगैरह। क्योंकि जीवों को कैसा बतायेंगे क्या उत्तर दिया उन्होंने ? ॐ। क्या प्रश्न पूछा ? फलां फलां प्रश्न और क्या उत्तर दिया ? ॐ।

अब दूसरे ने क्या प्रश्न पूछा ? अमुक, अमुक। उसका क्या उत्तर दिया ? ॐ। तो शास्त्र कोई पढ़ेगा कि नहीं ? तो उसमें बराबर रीतसर लिखेंगे कि ऐसा-ऐसा हुआ और ऐसा-ऐसा हुआ। ख्याल में आया ? तो अपनी बात क्या हो रही है कि उस मारीचि ने जब सुना कि मैं चौबीसवां तीर्थंकर होउंगा, तो उसको आनंद होना चाहिये था न ? लेकिन वह गुस्से में आया। क्या बात कर रहे हैं ? अरे मेरे ग्रँड फादर साक्षात् तीर्थंकर, मेरे पिताजी चक्रवर्ती और मैं चौबीसवां तीर्थंकर ? नहीं हो सकता है। ऐसा करके उन्होंने ३६३ पाखंड़ी मत तैयार किये। पाखंड़ी यानी गलत, मिथ्यात्व के पोषक। तो अब उसमें से यह देखो आप पेज नंबर ७५ पर देखें, उसमें नाम दिये हैं- ३ नंबर का पॉइंट है। **क्रियावादी, अक्रियावादी, अज्ञानवादी और वैनयिक के भेद से भी मिथ्यात्व के चार भेद हैं।** और **इनके ही उत्तर भेद ३६३ हैं।** तो अभी मैं आपको यह बताना

चाहता हूं कि क्रियावादी के जो कोई भेद हैं, वे १८० भेद हैं। किसके ? क्रियावादी के। अक्रियावादी के ८४ भेद हैं, अज्ञानवादियों के ६७ भेद हैं और वैनयिक के ३२ भेद हैं। इनका आप जोड़ लगायेंगे तो उनका जोड़ होगा ३६३। ख्याल में आया ?

तो इसतरह से हमने मिथ्यात्व के अलग-अलग प्रकार के भेद और उनका जो स्वरूप देखने की इन शॉर्ट कोशिश की। उसमें हमने पहले दो भेद देखे- गृहीत मिथ्यात्व और अगृहीत मिथ्यात्व। फिर पांच भेद देखे विपरीत आदि पांच। अब यहां कितने देखे ? ३६३। उसमें से मूल तो एक क्रियावादी है, एक अक्रियावादी है, एक अज्ञानवादी है और एक वैनयिक, विनयवाले। यह सब इसमें आ गये, हमने अभी जो पांच में देखे थे । इसतरह से मिथ्यात्व के भेद हमने देखे थे और यही बात बहुत ही अच्छी तरह से पं. टोडरमलजी ने लिखी है।

वे क्या कहते हैं **इस भवतरु का मूल इक**। यह भवरूपी जो वृक्ष है उसका मूल यानी जड़ क्या है ? **जानहु मिथ्याभाव** यानी यह जो मिथ्यात्व है इसी कारण यह भवरूपी वृक्ष पनप रहा है यानी इस जीव को जो जन्म-मरण, जन्म-मरण चल रहा है, उसका मूल कारण मिथ्याभाव कहो या मिथ्यात्व कहो, यही है। **ताको करि निर्मूल अब।** अभी क्या कहते हैं ? इनको हम निर्मूल करेंगे। निर्मूल करेंगे का अर्थ क्या होता है कि उसको जड़ से उखाड़ देंगे। उससे क्या होगा ? **करिये मोक्ष उपाव।** यानी मोक्ष का उपाय करने के लिये, अगर हमें पहले में पहले कोई आवश्यक बात करनी है, तो वह हमको मिथ्यात्व को मूल से उखाड़कर फेंक देना है। अगर हम मूल से नहीं उखाडेंगे, ऊपर के पान-पत्ते, फूल, डाली आदि तोड़ेंगे तो कुछ न कुछ दिन के बाद फिर वह दुबारा पनपेगा और यह मिथ्यात्वरूपी वृक्ष कायम रहेगा और हमें मोक्ष प्राप्ति की पॉसिबिलिटि ख़तम हो जायेगी। इसलिये अभी तक हमने मिथ्यात्व को बहुत स्थूलरूप से और इन शॉर्ट देखने की कोशिश की है। अभी मिथ्यात्व गुणस्थान को देखेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

५. मिथ्यात्व गुणस्थान - चारित्र और काल अपेक्षा विचार

यह गुणस्थान के परिप्रेक्ष में अभी तक हम पहले गुणस्थान की शुरुआत में आये हैं और इस गुणस्थान की जो बात चल रही है तो इसको मिथ्यात्व कहते हैं। मिथ्या यानी झूठापना, 'त्व' का अर्थ क्या होता है ? उसका वह पना। हम किसीसे पूछें, हमारे वसंतभाई को, आप कौन हैं ? वे कहेंगे कि मैं वृद्ध हूं। तो जो वृद्धपना है उसको वृद्धत्व कहेंगे। ख्याल में आया ?

यह मिथ्यात्व का अर्थ क्या होता है ? जिसमें मिथ्यापना है, उसे मिथ्यात्व कहेंगे। उस मिथ्यापना में तीन बातों को समाहित किया हुआ है। एक है **मिथ्यादर्शन**, एक है **मिथ्याज्ञान** और एक है **मिथ्याचारित्र।** इन तीनों गुणों में जो विपरीतता हो रही है, खोटापन, झूठापन हो रहा है उसको एक शब्द में बता दिया मिथ्यात्व। अभी यहां देखो इसमें और एक बहुत अच्छी बात आपको समझने जैसी है कि आत्मा में दर्शन, ज्ञान, चारित्र, श्रद्धा आदि अनेक गुण हैं। लेकिन यहां मिथ्यादर्शन जब हम कह रहे हैं, तब वह श्रद्धा गुण की पर्याय है और ज्ञान-दर्शन की जब बात कर रहे हैं, तो वहां जो दर्शन गुण है उसकी बात हो रही है।

देखो-देखो थोड़ासा इसतरह से अगर हम सोचते हैं। कैसा ? कि जब किसी जीव के स्वभाव की बात करेंगे तो हम क्या कहेंगे ? जब स्वभाव की बात हो रही है तो वह जीव ज्ञाता द्रष्टा है ऐसा कहेंगे। तो यह द्रष्टापना जो है तो वह तो दर्शन गुण की परिणति है, दर्शन गुण का कार्य हो रहा है। जानना-देखना जो स्वभाव कहते हैं, जानन-देखन स्वभाव जब कहते हैं तो वह तो दर्शन गुण है और यहां जब कोई जीव सम्यक्त्वी है यानी सम्यग्दृष्टि है या मिथ्यादृष्टि है, उसको सम्यग्दर्शन है, क्या मिथ्यादर्शन है तो दर्शन का अर्थ यह श्रद्धा गुण की अपेक्षा से बात हो रही है। देखो वहां जो दर्शन गुण है उसका कार्य क्या है ? तो कहते हैं सामान्यरूप से अवलोकन करना। यानी क्या है ? कि भेद किये बिना देखना। यह देखना शब्द है न वह बहुत डिसेप्टिव्ह है। यानी हमें उसमें फंसने की गुंजाइश है। हम देखना यानी समझते हैं कि आंखों से देखना, वह देखना है। वह तो है लेकिन यहां जो देखनारूप जो बात चल रही है, वह तो सामान्य अवलोकन करना। यह अवलोकन का अर्थ ग्रहण करना होता है। ज्ञान का कार्य है विशेष अवलोकन करना, दर्शन का कार्य है सामान्य अवलोकन करना।

सामान्य अवलोकन का अर्थ क्या होता है कि भेद किये बिना ग्रहण करना। संसारी जीवों में से जो अल्पज्ञ हैं या जिसे अभी हमने दूसरा शब्द देखा था छद्मस्थ हैं, उनका जो कार्य है कैसा हो रहा है ? उनका ज्ञानोपयोग दर्शनोपयोगपूर्वक हो रहा है। यानी उनका दर्शन गुण का उपयोग जो है दर्शनोपयोग जिसको हम कहेंगे वह पहले होता है और बाद में ज्ञानोपयोग होता है। तो अब बात क्या हो रही है ? जब हम स्वभाव की बात कर रहे हैं तो वहां जो ज्ञान-दर्शन यह जीव का स्वभाव है। तो वह दर्शन गुण, कौनसा ? जो सामान्य अवलोकन करता है। सामान्य अवलोकन करता है यानी क्या ? अभी हम केवली भगवान की अपेक्षा से देखते हैं। केवली भगवान के तो अनंतदर्शन है और अनंतज्ञान है। तो अनंतदर्शन में क्या होता है ? विश्व के जो सारे पदार्थ हैं, वे उनके दर्शन में आ जाते हैं यानी अवलोकन में आ जाते हैं और उसी समय, समय भेद नहीं है, ज्ञान गुण के कारण से सबको भेद करके जाने। ख्याल में आया ? उसको ज्ञानोपयोग कहेंगे या ज्ञान गुण का कार्य कहेंगे। जो छद्मस्थ जीव हैं, उनके तो पहले दर्शनोपयोग होता है, बाद में ज्ञानोपयोग होता है। यानी दर्शनोपयोगपूर्वक ज्ञानोपयोग होता है।

यह विषय आपको थोड़ासा कठिन लगेगा। समझने जैसा है। केवली भगवान के क्या होता है ? अनंतज्ञान और अनंतदर्शन दोनों का कार्य एक समय में होता है। यानी एक ही समय में अपने स्व को तो परिपूर्णतः जानेगा और विश्व के जितने पदार्थ हैं, यानी जितने द्रव्य हैं उन द्रव्यों के जो अनंत गुण हैं और एक-एक गुण की तीन काल की अनंत पर्यायें हैं इन सबको भेद करके जाने, युगपत् एक समय में और अभेदरूप से जाने। यह जाने कहो तब भी तकलीफ है, अभेदरूप से देखें, अवलोकन करें। वह जो दर्शन है और यहां हम जो अभी कौनसी बात कर रहे हैं ? मिथ्यादर्शन-मिथ्यात्व, सम्यग्दर्शन-सम्यक्त्व। यहां जो दर्शन की बात है वह श्रद्धा गुण की परिणति है। दर्शन शब्द दोनों जगह आते हैं, तो हमारी ऐसी भूल न हो कि किसकी बात चल रही है।

अभी हम यहां क्या देख रहे हैं ? मिथ्यात्व की बात। मिथ्यात्व में कौन-कौन तीन बातें इन्क्लूडेड हैं भाईसाहब आप बताना ? दिलीपभाई के मित्र। हां, नरेंद्र हां, बोलो साहब बोलो। मिथ्यात्व में तीन बातें कौनसी ली थी हमने ? *श्रोता: मालूम नहीं।* मालूम नहीं, कोई बात नहीं। आप बतायेंगे साहब ? *श्रोता: सम्यग्ज्ञान।* ठहरो-ठहरो उनको बोलने दो न भाई, तुम पहले सिद्ध होंगे लेकिन उनको भी हमें साथ में ले जाना है न। हां, हां, *श्रोता: मिथ्याज्ञान, मिथ्यादर्शन और मिथ्याचारित्र।* बहुत अच्छा ! यानी

यहां दर्शन गुण जो है यानी श्रद्धा गुण, ज्ञान गुण और चारित्र गुण, इन तीनों की जो विभावरूप कहो या विपरीतरूप जो कोई परिणति हो रही है, उसको हम मिथ्यात्व में इन्क्लूड करते हैं। अभी पृष्ठ क्रमांक ७५ पर हमने ऊपर से चौथी लाइन में देखा था।

श्रोता: आंखें बंद करके मिथ्यादृष्टि को भीतर आत्मा में धीरे धीरे प्रकाश बढ़ता है वह पूर्ण प्रकाशित हो जायेगी। कौन ? *श्रोता: और उससे पूर्ण ज्ञान उत्पन्न होगा।* प्रकाश किसका उत्पन्न होगा ? *श्रोता: प्रकाश उत्पन्न होगा, आत्मा प्रकाश का पुंज है।* सुनो-सुनो, एक मिनट जरा रुकना। मैं आपकी बात समझ गया हूं, आपने यह तीसरी बार इस बात को ललकारा है और मैं ॲव्हॉइड कर रहा हूं। सुनो-सुनो, ललकारा गलत शब्द है, आपने मुझे सूचित किया है। लेकिन आपकी यह मान्यता बिलकुल सही नहीं है। यह सफेद-सफेद प्रकाश दिख रहा है न आपको, वह कौनसे द्रव्य की पर्याय है ? *श्रोता: पुद्गलद्रव्य के।* पुद्गलद्रव्य के, कौनसे गुण की ? अरे बहन वर्ण-वर्ण, वर्ण गुण। *श्रोता: प्रकाश तो स्कंध है।* प्रकाश क्या है वह उसकी कौन मना कर रहा है ? लेकिन वह पुद्गल है न ? स्कंध भी तो पुद्गल का ही भाग है न। *श्रोता: प्रकाश एक सफेद पदार्थ है।* हां, देखो-देखो, सफेद रंग जो है, जो प्रकाश का रंग अभी हम बता रहे हैं, वह क्या है ? वर्ण गुण की पर्याय है। हमें आत्मानुभव जब हुआ तब हमें सफेद, सफेद, सफेद दिखने लगा, तो हमें आत्मा का दर्शन हुआ क्या पुद्गल का हुआ ? *श्रोता: पुद्गल का।*

भाई, आपके मन में जो प्रश्न उठ रहे हैं न, बार-बार, बार-बार यह गलत इन्फर्मेशन से उठ रहे हैं। अरे हमने तो ऐसा सुना, जब मुझे आत्मानुभूति हुयी तो मुझे हल्का-हल्का, हल्का-हल्का महसूस हुआ। क्या हुआ ? यह हलकापना जो है, वह द्रव्य है, गुण है या पर्याय है, बोलो बहन ? *श्रोता: पर्याय है।* पर्याय है, तो यह कौनसे द्रव्य के कौनसे गुण की पर्याय है ? *श्रोता: पुद्गलद्रव्य के स्पर्श गुण की पर्याय है।* पुद्गलद्रव्य के स्पर्श गुण की पर्याय है। तो हल्का-हल्का आत्मा हल्का होता है या भारी होता है ? अरे आत्मा में स्पर्श नाम का गुण ही नहीं, तो हल्का-भारी, रूखा-चिकना, कड़ा-नरम, ठंडा-गरम, ये सारी पर्यायें उसमें हो ही नहीं सकती। हम तो सीखकर आये हैं कहीं-कहीं से, सुनकर आते हैं। मैं तो कहूंगा कि हमको तो पहले में पहले लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका को आत्मसात करना चाहिये। तो ये जो आलतू-फालतू बातें होती हैं न, वह फट से उड़ जाती है विदिन नो टाइम। क्या करें ?

यहां जब लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका का वर्ग लिया जाता है अरे यह तो बच्चों का खेल है, अरे यह क्या हमको अटेंड करने जैसा है ? अरे हम तो समयसार के पाठी हैं, हम तो धवला-जयधवला पढ़नेवाले हैं। गुरुदेवश्री की भाषा में कहना हो तो 'हुं वळ्युं' ? यानी नहीं समझे आप ? हिन्दी लोग नहीं समझेंगे। 'हुं वळ्युं' यानी क्या हासिल किया तूने। ख्याल में आया ? भाईसाहब जब हम ऐसा कहते हैं कि हमें प्रकाश-प्रकाश दिखायी दिया, तो तूने पुद्गल का दर्शन किया, आत्मदर्शन नहीं किया। *श्रोता: मन वचन सब गौण कर दिया ?* कोई बात नहीं, उसकी चिंता ही नहीं है। ना मन तुम्हारा है, ना वचन तुम्हारा है। ये सभी पुद्गल की पर्यायें हैं भाईसाहब। ख्याल में आया ? मनोवर्गणा से मन बनता है, भाषावर्गणा से वचन बनता है और मैं वचन बोलता हूं यह मान्यता महामिथ्यात्व है। हमारे पंडितजी कहां गये बाबूभाईजी। वह बोल चुके थे दो दिन पहले। *श्रोता: संस्कृत में श्लोक है कि...* बाकी हमें कुछ नहीं चाहिये, मैं संस्कृत में झिरो हूं, आप उसकी बात ही मत करना और अपना विषय जो चलता है उसे चलने देना। लेकिन आपके एक नहीं, दो नहीं , तीन बार मुझे उकसाने से मैंने यह आपको उत्तर दिया। लेकिन आप गलतफहमी में हो; वह आत्मानुभव नहीं है, वह पुद्गलानुभव है। वह अन्य कोई भी, किसी भी शास्त्र की आप बात करें, उससे कोई मतलब नहीं है।

जो जिनेन्द्र भगवान ने बात बतायी है और वह बेसिक बात मैं आपके सामने रख रहा हूं जो यहां आनेवाला कोई भी समझ सके, ऐसी बात है। यह बात ऐसी है कि बिलकुल प्रकाश जो है वह तो पुद्गलद्रव्य के वर्ण गुण की पर्याय है, हल्कापन जो है वह पुद्गलद्रव्य के स्पर्श गुण की पर्याय है और उसका तू अनुभव करे ? मैं कहता हूं आप लड्डू खाते हो तो उसका स्वाद आपको आता है कि नहीं ? मीठापन। अरे यह मीठे का स्वाद मैं ले रहा हूं, यह मान्यता भी गलत है। भाई अभी मुझे यह गुणस्थान में से आप सिद्धान्त प्रवेशिका सिखाने में मत प्रवृत्त करना। क्या कह रहे हैं ? यह पुद्गल जो लड्डू तूने खाया वह मीठा-मीठा है और उसके स्वाद में तुझे मज़ा आता है, तो तूने राग का वेदन किया है और वह मीठा का ज्ञान तुझे जो हो रहा है वह तेरे ज्ञान गुण की पर्याय है क्योंकि पुद्गलद्रव्य तेरे स्वचतुष्टय में प्रवेश नहीं कर सकता। जब पुद्गलद्रव्य तेरे स्वचतुष्टय में प्रवेश नहीं कर सकता तो पुद्गल के गुण भी तेरे स्वचतुष्टय में प्रवेश नहीं कर सकते, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का स्वचतुष्टय भिन्न, भिन्न है। भाई हमने तो अभी कुछ जाना ही नहीं है न ! यह जिनेन्द्र भगवान की बात ऐसी सचोट है, एक बार वह अंदर

बैठ जावे न, तो सामने से वज्रपात भी हो जाये तो भी आपकी श्रद्धा डिगेगी नहीं।

चलो, मिथ्यात्व का शब्दार्थ हम देख रहे थे। जहां लिखा है न भाई क्रियावादी, अक्रियावादी, अज्ञानवादी और उसके नीचे लिखा है ३६३ भेद हैं। उसके नीचे से हम शुरू करते हैं। आज से सबको पुस्तक लेकर बैठना अच्छा रहेगा। देखो **मिथ्यात्व शब्द का अर्थ है विपरीतता, असत्यपना।** यह असत्यपना और विपरीतता किसमें हो रही है ? **श्रद्धा, ज्ञान और चारित्र गुण के विपरीत परिणमन को ही यहां मिथ्यात्व कहा है। विपरीत शब्द का अर्थ उलटा, अर्थात् वस्तुस्वरूप से विरुद्ध है।** उलटा यानी क्या ? जैसा वस्तुस्वरूप है उससे बिलकुल विपरीत है, विरुद्ध है। हमने मोक्षमार्गप्रकाशक नामक शास्त्र पढ़ा था। उसमें पं. टोडरमलजी ने लिखा है- जैसा वस्तु का स्वरूप है वैसा नहीं मानना और जैसा वस्तु का स्वरूप नहीं है वैसा मानना, इसको ही मिथ्यात्व कहा है। यही बात यहां पर भी बता रहे हैं। यह निचली बात भी हमने देखीं थी इस भवतरु का मूल, वगैरह-वगैरह। तो अभी उसके नीचे हम आते हैं।

चारित्र अपेक्षा विचार। यह चारित्र कहां चल रहा है ? मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती जीवों के चारित्र कौनसा होगा ? इस बात की यहां चर्चा है। **इस प्रथम मिथ्यात्व गुणस्थान में चारित्र गुण का परिणमन नियम से विपरीत ही होता है। अतः यहां** क्या बताया ? **मिथ्याचारित्र ही है।** कई लोग इसको अचारित्र ऐसा नाम देते हैं। तो शास्त्र में कहीं चारित्र के भेद एक मिथ्याचारित्र, एक सम्यक् चारित्र और एक अचारित्र, ऐसा नहीं किया है। दो ही भेद हैं कि मिथ्याचारित्र या सम्यक् चारित्र। यहां जो मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती जीव है, उसके तो मिथ्याचारित्र है। यह जो चारित्र है, मिथ्याचारित्र, इसमें जीवों के कैसे परिणाम होते हैं ? कौन बतायेगा ? हां बहन ? बहुत अच्छा ! आप कह रहे हैं उस समय जीव राग-द्वेषरूप परिणाम करता है। राग-द्वेषरूप परिणाम कहो या क्रोध, मान, माया, लोभरूप से परिणमित होता है।

यह जो क्रोध, मान, माया, लोभ जो है, उसके भी चार विविध प्रकार हैं। उसके नाम आप जानते हैं सब लोग। आप जानते हैं न साहब ? हां बोलो। *श्रोता: अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन।* आपने आधी बात करी न, आपको कहना था, आप कह नहीं पाये, कोई बात नही। अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ, प्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ

और संज्वलन क्रोध-मान-माया-लोभ। हम किसके भेद देख रहे हैं ? क्रोध-मान-माया-लोभ के, है न ? तो जब जीव स्वरूप में मग्न नहीं रहता है तब क्या होता है ? उसके राग-द्वेष के परिणाम होते हैं और उनके चार प्रकार में से जो मिथ्यात्वी होगा, उसको चारों ही प्रकार होते हैं। देखो-देखो, जब यह जीव क्रोध कर रहा है कौन ? मिथ्यात्वी जीव, तो मिथ्यात्वी जीव क्रोध कर रहा है, तो उसको एक साथ चारों ही क्रोध का उदय चल रहा है, क्रोध कर्मों का। कौनसे-कौनसे ? अनंतानुबंधी क्रोध, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, प्रत्याख्यानावरण क्रोध और संज्वलन क्रोध। तो क्या होगा ? ॲट अ टाइम चार का उदय होगा और बंध कितने का करेगा ? *श्रोता: दर्शनमोहनीय का बंध।* दर्शनमोहनीय का ? कोई बात नहीं। वह तो सोलह ही कषायों का बंध होगा। यानी करेगा क्रोध उसमें हमने चार भेद देखें, लेकिन बांधेगा अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ, वगैरह सोलह को ॲट अ टाइम।

देखो बात ऐसी है मेरे भाइयों में से कोई कहता है, तू क्या आदमी है। तू स्वयं को पंडित कहलाता है और बार-बार गुस्सा करता है। तुम्हारे से तो हम अच्छे ! बोले क्या साहब, क्या बात है ? आप क्यों अच्छे ? अरे हम सुबह ८-९ बजे दुकान खोलते हैं रात को १०-११ बजे तक दुकान में बैठते हैं, ग्राहक आये तो उसको मस्का पालिश करते हैं, पैसा निकाल लेते हैं उनसे, कभी क्रोध नहीं करते। कभी गलती से हमने चाय-पानी ठंडा गरम कुछ पिलाया उसका निषेध नहीं करते। तो यह जो पैसा कमाने का भाव है वह कौनसा भाव है साहब ? क्रोध का है ? नहीं। मान का ? थोड़ा बहुत। तो आज मैंने इतने पैसे कमाये, तूने क्या किया ? मायाचारी ? बिलकुल हो रही है। ग्राहक को कैसा भी होवे तो उसको अच्छा ही कहे और ये सारे परिणाम किसलिये हो रहे हैं ? लोभ से। तो लोभ करे वह अच्छा ? उसके तो बारह घंटे लोभ हो रहा है और यह क्रोध करेगा तो ? १२ मिनट भी नहीं करेगा। ख्याल में आया ? तू क्रोधी और हम कितने अच्छे ! वह यह भूल रहा है कि वह भी सारे के सारे कषाय बांध रहा है। मैं यह कहना चाहता हूं कि कितने ही लोगों को आगम का ज्ञान नहीं है तो किसी भी नतीजे पर पहुंच जाते हैं और अपने को दूसरों से उत्कृष्ट मानते हैं।

यहां क्या बात हो रही है ? यह तो चारित्र गुण की विभाव पर्याय यानी वह राग-द्वेष के परिणाम कर रहा है। जिसको आत्मानुभूति नहीं है ऐसे जीव का जो चारित्र है उसको कह रहे हैं वह मिथ्याचारित्री है। देखो अभी क्या कहते हैं ? देखो, यह दूसरी

लाइन में हम देखते हैं, यह चारित्र अपेक्षा विचार है न। **श्रद्धा गुण के विपरीत परिणमन के कारण से ही चारित्र गुण का परिणमन विपरीत होता है।** अभी यहां किसीने मिथ्यात्व की बात की थी या दर्शनमोहनीय की। तो यहां क्या कह रहे हैं कि चारित्र गुण का विभाव परिणमन हो रहा है। **इसका अर्थ श्रद्धा गुण का विपरीत परिणमन निमित्त और चारित्र गुण का विपरीत परिणमन नैमित्तिक।** तो यह निमित्त क्या होता है और नैमित्तिक क्या होता है ? आप सब लोग जानते हैं न ? क्या उसको भी बताना पड़ेगा ? हां सुमनबहन आप जानती हैं निमित्त किसको कहना और नैमित्तिक किसको कहना ? नहीं जानती, बहुत अच्छा ! सुरेशभाई आप जानते हैं क्या नहीं कि निमित्त किसको कहना और नैमित्तिक किसको कहना ? कोई बात नहीं, नहीं जानते हैं तो अच्छा है कि आप इतना घरबार छोड़कर यहां आये हो तो कुछ सार्थक तो हो जाये। महेंद्रभाई आपको तो कहना ही चाहिये। निमित्त की परिभाषा जानते हैं ? आप में से कोई जानता हो तो बता देना भाई। हां बोलो साहब, जरा जोर से बोलना।

श्रोता: नैमित्तिक कार्य करने का आरोप निमित्त पर आता है। यह उसकी परिभाषा नहीं है। देखो-देखो अभी हम यह थोड़ासा विषयांतर नहीं है फिर भी हम जरूर बोलेंगे उसके बारे में। निमित्त किसे कहना ? *श्रोता: निमित्त उपस्थित तो रहता है पर कार्य करता नहीं है, पर आरोप उस पर आता है कि निमित्त ने कार्य किया।* जैसा आप कह रहे हैं वैसा नहीं है। जरा मुझे बोलने की पर्मिशन देना। आपने कहा निमित्त तो उपस्थित रहता है, लेकिन आप जानते हैं अभावात्मक भी निमित्त होता है ? कैसा ? मैं बताता हूं। हमारे यहां स्वाध्याय करने के लिये एक बहन आती थी और उसकी दो बेटियां आठवी, नौवीं में होगी। वह हमारे यहां स्वाध्याय में आये और बच्चियां अभ्यास नहीं करें। जब वे लडकियां फेल हो गयी तो आसपासवाले बोलते हैं तुम उसके लिये जवाबदार हो। क्यों साहब ? तुम घर में रहती कहां हो, इसलिये वे उधम मचाती हैं। तो जो है नहीं उसको भी निमित्त बना दिया। ख्याल में आया ? हम निमित्त की परिभाषा को सहीरूप से समझेंगे तो हमारा भला है क्योंकि यह करणानुयोग निमित्त की भाषा में ही कहा गया है कि यह दर्शनमोहनीय कर्म है, वह जीव को सम्यक्त्व होने नहीं देता, ऐसा कथन आयेगा। अरे वह तो पुद्गल है, उसको तो ज्ञान है नहीं, तो वह क्या जाने कि इसको मैं मिथ्यात्वी रखूं और इसको सम्यक्त्वी बनाऊं ? उसमें कौनसी ताकत है ? अरे ज्ञान ही नहीं तो आगे की बात ही कहां उठी ? लेकिन ऐसा कथन जरूर आयेगा। तो

निमित्त किसे कहते हैं ? इसको हम जानेंगे पहले।

देखो, जो स्वयं तो कार्यरूप न परिणमें। आप रिपीट करना, जो *श्रोता: जो,* स्वयं तो, *श्रोता: स्वयं तो,* कार्यरूप न परिणमें, *श्रोता: कार्यरूप न परिणमें,* परंतु, *श्रोता: परंतु,* कार्य की उत्पत्ति होने में, *श्रोता: कार्य की उत्पत्ति होने में,* अनुकूल होने का आरोप जिसपर आ सके, *श्रोता: अनुकूल होने का आरोप जिसपर आ सके,* उसको निमित्त कहते हैं। *श्रोता: उसको निमित्त कहते हैं।* तो कार्य तो हुआ, क्या ? बच्चियां फेल हुयी। तो अनुकूलता का आरोप किसपर आया ? तुम ही थी नहीं। तुम होती तो कम से कम बच्चें अभ्यास तो करते। तो जो नहीं होना यह भी निमित्त कारण है। वह तो स्वयं फेल नहीं हुयी है, वह तो कार्यरूप नहीं परिणमी है। कौनसा कार्य ? फेल होना। फिर भी उस पर आरोप आया कि तेरे कारण ये फेल हो गयी। यह ख्याल में आया ? यह तो मैंने अपने घर में जो स्वाध्याय चलता है रोज़ाना, वहां जो बनी हुयी बात है, वह मैं कह रहा हूं। अपने शास्त्रों में तो ऐसा लिखा है कि घड़ा बनने में कुम्हार निमित्त है। घड़ा बना यह कार्य, जो कार्य होता है उसको कहते हैं नैमित्तिक और उस कार्य की उत्पत्ति में अनुकूल होता है उसको कहते हैं निमित्त। कुम्हार बैठा है खाना खाते, उसका गधा बाजू में खड़ा है, वहां चक्का है। वहां घड़ा बना तो उस घड़े को निमित्त होगा कि नहीं ? कार्य तो हुआ न ? घड़ा हुआ। वह कुम्हार क्या कर रहा है ? खाना खा रहा है और वह गधा बिलकुल बाजू में खड़ा है चक्के के। क्या उस पर हम आरोप करेंगे कि उसके निमित्त से बना है ? लेकिन जो कोई बनानेवाला है उसका छोटा लड़का था, उसने बनाया है। ख्याल में आया ?

देखो कार्य होता है, उसमें दो कारण तो अवश्य तो होते ही हैं। एक निमित्त कारण और दूसरा उपादान कारण। उपादान यानी निज शक्ति जो है, उस निज शक्ति की व्यक्तता होना वह कार्य हुआ। उसकी जो निज शक्ति है वह उपादान कारण। कार्य तो हमेशा उपादान से ही होता है और उसमें निमित्त कारण तो हाजिर रहता ही है। कभी भी कार्य बने और वहां निमित्त न हो ऐसा हो ही नहीं सकता। ख्याल में आया ? अब क्या बता रहे हैं कि यहां निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। यहां क्या कहा ? इसका अर्थ श्रद्धा गुण का विपरीत परिणमन निमित्त और चारित्र गुण का विपरीत परिणमन नैमित्तिक। यहां देखो अपने ही आत्मा के दो गुणों में निमित्त-नैमित्तिक संबंध लगाया है। कार्य क्या हुआ ? वह विभावरूप से परिणमित हुआ, मिथ्याचारित्ररूप से

परिणमित हुआ। वह तो कार्य और उसके लिये निमित्त कौन है ? तो श्रद्धा गुण की विपरीत परिणति। ख्याल में आया ? वह निमित्त में डाल दिया। हमेशा तो हम निमित्त-नैमित्तिक संबंध तो दो भिन्न द्रव्यों में बताते हैं, लेकिन यहां एक ही द्रव्य में दोनों बातें आयी हैं। यह भी समझने जैसी बात है।

अभी काल अपेक्षा विचार करते हैं पेज नंबर ७६ पर हम आये हैं। यह मिथ्यात्व नामक जो कोई गुणस्थान है, वहां काल अपेक्षा विचार करते हैं। यानी मिथ्यात्व में कोई जीव अधिक से अधिक जितने काल तक रहे उसको कहेंगे उत्कृष्ट काल और कम से कम जितने काल तक रहे उसको कहते हैं जघन्य काल। अभी हम देखते हैं, मिथ्यात्व गुणस्थान का काल अधिक से अधिक लंबा कितना हो सकता है ? पुस्तक में मत देखो, अपना दिमाग चलाओ। हां, भाईसाहब आप बतायेंगे ? *श्रोता: अर्धपुद्गलपरावर्तन।* अर्धपुद्गलपरावर्तन क्योंकि आपने गलत लाइन पढ़ी। कोई बात नहीं। इसलिये मैं आपको कहता हूं भले मैं आपको पुस्तक के पेज नंबर बताऊं, तो मैं जो पूछूंगा उसकी तरफ अगर आप ध्यान दोगे, तो आपकी बात पक्की होनेवाली है। क्या कहा मैंने, उत्कृष्ट काल-अधिक से अधिक लंबा काल अगर मिथ्यात्व गुणस्थान में रहने का होगा, तो कितना होगा ? *श्रोता: अर्धपुद्गलपरावर्तन, उसमें कुछ कम।* अर्धपुद्गलपरावर्तन, आपने बताया जो आपने बताया वही बताया। कोई बात नहीं। हम देखते हैं।

श्रोता: मिथ्यात्वी जीव की अपेक्षा अनादिकाल। आपने बहुत अच्छा बताया, मैं वही बताना चाहता हूं। पहले यह अनादि क्या होता है उसको हम समझेंगे। देखो काल चार प्रकार से बताया जाता है। कैसा-कैसा ? कि अनादिअनंत, अनादिसांत, सादिअनंत और सादिसांत। इसतरह से काल को हम मापते हैं। तो अनादि का अर्थ क्या है ? अन् + आदि, आदि यानी जिसकी शुरुआत नहीं है वह अनादि। अन् + अंत यानी जिसका अंत नहीं है वह अनंत; जिसका एण्ड नहीं है, जिसको कोई मर्यादा नहीं है, जिसको कुछ आखिर नहीं है। वह कैसा है ? अन् + अंत - अनंत तो यह अनादिअनंत। दूसरा क्या बताया ? सादिसांत। यह लास्ट चौथा नंबर बताया मैंने। तो सादि यानी स + आदि यानी जिसको शुरुआत है वह सादि। यह शादी नहीं हो, स, स, सादि, समय का स, सादि। यानी स यानी सहित आदि सहित यानी जिसको शुरुआत है वह सादि। और सांत यानी स + अंत यानी सांत। नॉर्थ इंडिया में अगर हमारे घर में हमारे पिताजी गुजर गये, तो हम कहेंगे हमारे पिताजी शांत हुये। यानी जब वह थे न,

बहुत झगड़ा करते थे। अभी शांत हो गये, ऐसा नहीं समझना। शांत होना यानी उनका मरण हो गया, वह बात यहां नहीं है। सांत यानी अंत सहित। वह भी उसी अपेक्षा से लगाते हैं। यह काल गिनने का माप है।

अभी हमने जो पूछा, क्या पूछा ? कि मिथ्यात्व में रहने का उत्कृष्ट काल कितना होता है ? तो यह हमारी बहन कहती है कि वह अनादिअनंत है। हमने कहा कैसा पॉसिबल है। तो आपको भी पॉसिबल नहीं लग रहा है। वह तो कहे बिलकुल अनादि अनंत काल है। तो क्यों साहब कैसा ? तो उन्होंने उसका उत्तर भी दे दिया बिना पूछे और अच्छा हो गया आहिस्ते जवाब दिया, नहीं तो आप समझ जाते सारी हमारी पोल। देखो जो अभव्य जीव है तो अभव्य जीव कबसे है ? अनादि से है। कब तक रहेगा ? अनंतकाल तक रहेगा। कौनसे गुणस्थान में रहेगा ? *श्रोता: पहले।* पहले, तो पहले गुणस्थान का नाम मिथ्यात्व है। मिथ्यात्व गुणस्थान का अधिक से अधिक लंबा काल कितना होगा ? *श्रोता: अनादिअनंत।* अनादिअनंत, अब बात पक्की हो गयी। अब दूसरी बात क्या है कि मिथ्यात्व का काल कैसा है ? तो कहते हैं अनादिसांत। अनादिसांत का अर्थ क्या है ? वह अनादि से मिथ्यात्वी, मिथ्यात्वी, मिथ्यात्वी रहा है और उसके मिथ्यात्व का कभी न कभी अंत आयेगा, ऐसा कोई भव्य जीव होगा। अनादिअनंत में हम और भी एक दो को इन्क्लुड कर सकते हैं, जो भी कहने में आता है कि दूरानुदूर भव्य और तीसरे हैं अभव्यसम भव्य वह भव्य है लेकिन वह कभी सम्यक्त्व ही प्राप्त नहीं करेंगे। दूरानुदूर भव्य तो कभी न कभी सिद्ध हो जाये लेकिन यह अभव्यसम जो भव्य हैं, वे अनादिकाल से अनंतकाल तक मिथ्यात्व में ही रहेंगे।

आप कहो कि भाई अरे उनको सम्यक्त्व नहीं होगा, यहां तक तो हम मानते हैं, कम से कम दूसरे गुणस्थान में तो भेजो, नहीं तो तीसरे में भेजो। क्यों नहीं भेज सकते यह भी हम बात देखेंगे। यहां तो कह रहे हैं कि जो भव्य है, वह भी अनादिकाल से अनंतकाल तक भव्य होते हुये भी। अभी भव्य किसको कहना और अभव्य किसको कहना यह बात की आपको जानकारी है क्या नहीं ? भव्य यानी उसको दूसरा नाम है भव्यसिद्धिक यानी जो सिद्ध होने के लायक हैं वे भव्यसिद्धिक और जो सिद्ध नहीं हो सकेंगे उनको कहेंगे अभव्यसिद्धिक। हां, मोक्षगामी कहो, जिनको सम्यक्त्व हो सकेगा, ऐसे जीव कहो वे तो भव्य हैं। जिसके सम्यक्त्व हुआ है उसके भव्यत्व का ट्रेड मार्क लग गया है। तो मेरा महिलाओं से एक प्रश्न है कि सिद्ध हैं वे भव्य हैं या अभव्य हैं ?

जमनाबहन चुप बेसो। *श्रोता: नो भवी, नो अभवी।* नो भवी, नो अभवी। तो वे कैसे हैं ? *श्रोता: सिद्ध बन गये।* आपने बिलकुल सही फरमाया है कि उनको हम ना भव्य कह सकते हैं ना अभव्य कह सकते हैं। भव्य यानी होने योग्य, भव्यसिद्धिक यानी सिद्ध होने योग्य। अब देखो क्या बात है, अभी सच्ची बात बताता हूं पर्सनल है थोड़ीसी।

मेरी पत्नी उज्ज्वला को तो जानते हैं आप सब लोग। वह शादी के पहले डॉक्टर नहीं थी। क्या ? तो जबसे उसने कॉलेज में ॲडमिशन ली M.B.B.S. के लिये, तो घर के सब सदस्य, आसपास के सब उसकी मौसी, मामी जो भी हैं, क्यों डॉक्टरसाहब कैसी हो ? क्यों डॉक्टरसाहब ? अरे, अभी डॉक्टर पहले दिन भी क्लास में गयी नहीं है और उसको सब लोग क्या कहने लगे ? डॉक्टर-डॉक्टर। अब वह डॉक्टर बन गयी तो अभी डॉक्टर बनने योग्य रही या बन गयी ? ख्याल में आया ? वैसे सिद्ध बनने योग्य थे वे सिद्ध हुये। तो अभी बनने की योग्यता रह गयी कि बन गये ? तो सिद्ध भगवान ना भव्य हैं और ना अभव्य हैं । पहले भव्य थे तभी तो सिद्ध बने। ख्याल में आया ?

काल की अपेक्षा से मिथ्यात्व गुणस्थान का उत्कृष्ट काल जो है वह तो आपने देखा। कौनसा ? अनादिअनंत वह भी अभव्यों की अपेक्षा से, बाकी लोगों को हम छोड़ देते हैं। अभी दूसरी एक अपेक्षा लगती है जो आपने पढ़कर बतायी थी। क्या बतायी थी साहब आपने ? हां बोलो। *श्रोता: अर्धपुद्गलपरावर्तन।* अर्धपुद्गलपरावर्तन। उसको हम दूसरी भाषा में कहेंगे उपार्ध पुद्गलपरावर्तन। कोई बात नहीं, दोनों का अर्थ करीबन एक ही है। किसी जीव ने... देखो पहले यह नक्की करना हो, किसी जीव को सम्यक्त्व होता है तो समझना कि उसके संसार का काल अभी सिर्फ अर्धपुद्गलपरावर्तन बाकी है और किसीको अभी सम्यक्त्व हुआ और उसको १०-१२ पुद्गलपरावर्तन के बाद मोक्ष होगा, ऐसा कभी नहीं होगा। क्यों ? कि अर्धपुद्गलपरावर्तन काल के अंदर उस जीव को मुक्ति की प्राप्ति होगी, होगी और होगी। इसलिये क्या कहा ? समझना यह अर्धपुद्गलपरावर्तन काल भी अनंतकाल है। जो हमने यहां बहुत बार लिया है पंचपरावर्तन, उस पंचपरावर्तन में पुद्गलपरावर्तन जो कहते हैं उसका आधा।

वह अर्धपुद्गलपरावर्तन यानी ऐसा कभी किसी जीव के साथ हो सकता है, सबके साथ नहीं कि अभी सम्यक्त्व हुआ और वह जीव सम्यक्त्व से गिर गया, मिथ्यात्वी हुआ। तो अर्धपुद्गलपरावर्तन काल तक वह जीव दुबारा सम्यक्त्व की प्राप्ति

नहीं करेगा और अभी मोक्ष होने के लिये कुछ ही टाइम बाकी है, कुछ ही अंतर्मुहूर्त बाकी है, उसके पहले डायरेक्ट पहले से सातवें में जायेगा और कुछ ही अंतर्मुहूर्तों में मुक्तता की भी प्राप्ति करेगा। ऐसे अधिक से अधिक जो सादिसांत काल भव्यों की अपेक्षा से जब हम देखते हैं, तो वह कहते हैं अर्धपुद्गलपरावर्तन काल। किसमें ? भव्यों की अपेक्षा से किसी जीव को अधिक से अधिक मिथ्यात्व का सादिसांत काल कितना है ? तो कहते हैं कुछ कम अर्धपुद्गलपरावर्तन। यह बात ख्याल में आयी ?

अब जघन्य काल कितना होगा ? मिथ्यात्व का जघन्य काल कितना होगा ? इस बारे में जब हम सोचते हैं तो किसी जीव को, अभी हम मुनिराज की बात करते हैं। तो मुनिराज जो सातवें गुणस्थान में शुद्धोपयोग में थे, वहां से छठे गुणस्थान में आ जायें तो छठे गुणस्थान में आने से ऐसे कोई परिणामों में विचित्रता हो जाये कि वह पहले गुणस्थान में आ जाये। और पहले गुणस्थान में आते ही उनको ऐसा महसूस होये कि हम यह कहां आये हैं ? उनको ऐसा पता लगता है कि मेरे कोई गड़बड़ हो गयी है और वह फिर अंतरंग में ऐसा पुरुषार्थ करते हैं कि एक अंतर्मुहूर्त में फिर से सातवें गुणस्थान में जायेंगे। तो कोई पूछेंगे आप में से; आप इतने अच्छे हैं, कुछ पूछते ही नहीं हैं, बहुत बड़ी बात है कि उनको क्या पता लगा कि हम पहले में आये हैं या किसमें हैं ? देखो मुनिराज हैं, बिलकुल ध्यान में, तप में बैठे हैं, निश्चल बैठे हैं, मन-वचन-काय की एकाग्रता है और छठे में आ जायेंगे और ऐसे में कहीं मन में कोई ऐसे खोटे विकल्प आ जाये और छठे में से डायरेक्ट पहले गुणस्थान में पहुंचेंगे। ख्याल में आया ?

देखो, पहले गुणस्थान में आया तो क्या हुआ ? उनके अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ और प्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ इनकी वहां विद्यमानता-उदय होने के कारण उनकी आकुलता में बढ़त होगी। वे अधिक आकुलित हो जायेंगे, क्योंकि वहां चारों ही कषाय चौकड़ी का उदय है और जो मुनिराज हैं उनके तीन कषाय चौकड़ी का अभाव-अनुदय है। इसका विशेष खुलासा आगे करेंगे। तो उनको तुरंत ही यह पता लगता है कि मैं मुनि अवस्था से गिर गया हूं। ऐसा ज्ञान होते ही अंदर से ऐसा पुरुषार्थ उछल आता है कि वे फिर से डायरेक्ट सातवें में चले जाते हैं। ख्याल में आया ? जैसा हम अपनी भाषा में देखते हैं, आप तो बहुत बार उसका अनुभव भी कर चुके हैं।

कहीं हम बड़े-बड़े मॉल में जाते हैं, तो वहां क्या होता है ? एसी चलता है। यहां पर भी चलता है हो। अभी दो मिनट में लाइट जाने दो, ये पंखे बंद होने दो तो आपको कैसा महसूस होगा ? गरम, गरम। और यहां एसी लगवाया जाये तो कैसा ? शांति, शांति। तीन कषाय चौकड़ी का जिनके अनुदय हो गया है उनमें तो आकुलता कम रहेगी, दुःख कम रहेगा और वह पहले में आ जाये तो आकुलता बढ़ जायेगी। उनको पता लगेगा कि नहीं कि मेरा गुणस्थान छूट गया है। तो वह जीव तुरंत ही वापस अपने सातवें गुणस्थान में आयेगा। तुरंत का जो कोई समय है वह अंतर्मुहूर्त काल है और वह मिथ्यात्व में रहने का जघन्य काल अंतर्मुहूर्त है। तो जघन्य काल कितना देखा हमने ? अंतर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल ? अर्धपुद्गलपरावर्तन। अंतर्मुहूर्त से एक समय अधिक, दो समय अधिक, ऐसे करते जाओ, कब तक ? कि अर्धपुद्गलपरावर्तन के जितने समय हैं उससे एक समय कम तक। बीच के जो ये सारे हैं वे मध्यम काल गिने जायेंगे।

देखो अभी हम ७६ पृष्ठ पर आये हैं, वहां देखते हैं। **काल अपेक्षा विचार। मिथ्यात्व का काल इसका अर्थ है, जितने समय पर्यंत जीव मिथ्यादृष्टि बना रहता है, वह मिथ्यात्व का काल है। मिथ्यात्व का जघन्य काल अंतर्मुहूर्त तभी बन सकता है, जब कोई सम्यग्दृष्टि सम्यक्त्व से च्युत होकर,** यानी गिरकर **मिथ्यात्वी हो जाता है और अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत मिथ्यात्व परिणाम के साथ जीवन बिताकर पुनः सम्यग्दृष्टि हो जाता है। इस अंतर्मुहूर्त काल को मिथ्यात्व गुणस्थान का जघन्य काल कहते हैं।** यहां मैंने मुनिराजों का इसलिये उदाहरण दिया कि उनके तो तीव्र पुरुषार्थ है, तो वे जल्दी में जल्दी वापस सम्यक्त्वी हो जाते हैं। **इस गुणस्थान में कोई जीव एक, दो आदि समय से लेकर संख्यात समय पर्यंत रहता ही नहीं। यदि मिथ्यात्व में आया हो तो उसे कम से कम एक अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत रहना अनिवार्य है।** यानी मिथ्यात्व का जघन्य काल अंतर्मुहूर्त ही है।

अंतर्मुहूर्त यानी क्या ? यह बात मालूम है सबको ? जिसको मालूम नहीं हाथ उठाये। अंतर्मुहूर्त किसको कहना आप जानती हैं बहन ? आप को ही पूछ रहा हूं मैं। हां, जानती हैं तो बोलो। *श्रोता: एक मुहूर्त में एक समय कम।* हां, एक मुहूर्त में, अच्छा एक मुहूर्त में एक समय कम। उसको हम कहते हैं अंतर्मुहूर्त। तो यह मुहूर्त कितने समयों का होता है ? *श्रोता: ४८ मिनट।* ४८ मिनट और जघन्य अंतर्मुहूर्त ? हां, बोलो ? *श्रोता: एक समय।* कौन बता रहे हैं ? हां, एक समय नहीं। देखो यह क्या है ? ऐसे कुछ

शब्द हैं, उनका अर्थ हम अभी नहीं जानेंगे तो यह क्या बात चल रही है, यह बाद में जाकर पता लगता है कि हम कुछ नहीं समझे। मैं जानता हूं कि मैं बहुत स्लो-स्लो जा रहा हूं। इसलिये जा रहा हूं कि हमें मूल शास्त्र की जो बातें हैं, उनके नाम तो हमने १०१ बार सुने हैं, लेकिन उनका अर्थ हमें प्रतिभासित नहीं होता है।

यह अंतर्मुहूर्त क्या होता है देखेंगे, एक मुहूर्त जो होता है वह दो घड़ी का होता है। एक घड़ी होती है २४ मिनट की और दो घड़ी यानी ४८ मिनट का एक मुहूर्त होता है। आप में से जिन्होंने शादी की है, उस समय वह जो कोई भटजी होगा, शादी करानेवाला, बोलता है कन्याने पधराओ। यानी कन्या को बुलाओ, मुहूर्त टल रहा है। तो मुहूर्त यानी उनका मुहूर्त जो कुछ होगा, लेकिन उस मुहूर्त से हमें कुछ लेना-देना नहीं है। यह मुहूर्त शब्द कहां इस्तेमाल होता है, वह मैं आपको बता रहा हूं। यहां क्या बात बता रहे हैं कि यह जो उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है, वह ४८ मिनट में एक समय कमवाला है। अंतर् यानी अंदर, मुहूर्त यानी हमने देखा ४८ मिनट, उसमें एक समय कम वह उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त और सबसे छोटा अंतर्मुहूर्त जिसको हम जघन्य अंतर्मुहूर्त कहेंगे वह कितना है ? *श्रोता: एक समय।* एक समय नहीं। आप मना कर रही हैं तो क्या है बहन ? घबराना मत, बोलो-बोलो। मैं बताता हूं। एक आवली अधिक एक समय। बहन, एक आवली अधिक एक समय वह क्या है ? जघन्य अंतर्मुहूर्त।

एक आवली में कितने समय होते हैं बहन आप जानती हैं ? *श्रोता: असंख्यात समय।* हां, असंख्यात समय। लेकिन उस असंख्यात समय का नाम क्या है ? कोई बात नहीं। अच्छा है आप प्रयत्न कर रहे हैं। हां, आप में से कोई बताना चाहेंगे सीनियर्स ? देखो-देखो, भाईसाहब आप जानते हैं ? एक आवली में कितने समय होते हैं, तो बहनजी ने बताया असंख्यात। बिलकुल सही है, परंतु उस असंख्यात का नाम क्या है ? *श्रोता: जघन्य युक्तासंख्यात।* बहुत अच्छा ! कौन बोल रहे हैं ? हां किताब में देखकर ? बहुत अच्छा ! कोई बात नहीं। तो जघन्य युक्तासंख्यात। यह जघन्य युक्तासंख्यात संख्या कैसे आती है ? हम आप ही से पूछेंगे। कोई बात नहीं। *श्रोता: जघन्य परीत...* फरीथी बोलो तमे। जघन्यपरीतना आगळ शुं ? कोई बात नहीं आप वहां तक पहुंची हैं लेकिन बीच में कट हो गया है। जघन्य परीतासंख्यात जो असंख्यात के अनेक भेद हैं उनमें से छोटे में छोटा असंख्यात है उसका नाम है जघन्य परीतासंख्यात। अभी असंख्यात के भी तीन भेद हैं, उसमें हम नहीं जायेंगे।

जघन्य परीतासंख्यात उसको जघन्य परीतासंख्यात बार ज. प., ज. प. यानी जघन्य परीतासंख्यात, जघन्य परीतासंख्यात, जघन्य परीतासंख्यात ऐसा कितनी बार लिखने का ? जघन्य परीतासंख्यात बार। आप नहीं समझें ? देखो, देखो ऐसा है डायरेक्ट ही जाते हैं, उदाहरण नहीं देंगे। यानी जघन्य परीतासंख्यात तो संख्या है उस जघन्य परीतासंख्यात को जघन्य परीतासंख्यात बार लिखना और उनको आपस में गुणा करना। यानी क्या करना ? वह मैं अभी और शॉर्ट में बताता हूं। ४ संख्या है, उस ४ संख्या का विरलन करना। यानी एक, एक, एक, एक ऐसे चार बार लिखना। तो उसको क्या कहेंगे चार का विरलन किया और चार जगह हमने १, १, १, १ लिखा उसके माथे पर ४, ४, ४ और ४ लिखना और उनका आपस में गुणाकार करना। चार गुणा चार सोलह, सोलह गुणा चार चौसठ, और चौसठ गुणा चार २५६ हम चार बार ४ लिखकर आपस में गुणा करते हैं तो इतनी बड़ी संख्या आती है।

अभी यहां हमें क्या करना है ? जघन्य परीतासंख्यात का विरलन करना यानी १, १, १, १ ऐसा कितनी बार लिखने का ? जघन्य परीतासंख्यात बार और उसके माथे पर भी ज.प., ज.प., ज.प. लिखना। उनका आपस में जो कोई गुणाकार होगा उसकी संख्या को जघन्य युक्तासंख्यात कहते हैं। उतने समय एक आवली में होते हैं। हम जब तक 'अ' बोल देते हैं तब तक तो असंख्यात समय निकल जाते हैं। तो एक आवली भी कितनी छोटी होनी चाहिये ! ख्याल में आया ? इसको हम मॅथेमॅटिक्स में ऐसा कह सकते हैं ज.प रेज्ड टु ज.प.। मैं तो अधिक नहीं जानता हूं मॅथ्स में, आप जितना जानो समझ लेना। यहां यह बता रहे हैं आवली अधिक एक समय यह, जघन्य अंतर्मुहूर्त है। फिर आवली प्लस दो समय, तीन समय, चार समय ऐसे करते जाओ। तो और असंख्यात होने के बाद दो आवली हो जायेगी। ऐसा करते जाओ, करते जाओ तो ४८ मिनट में एक समय कम वह उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त होगा। उससे जो एक समय कम होगा वहां तक तो मध्यम अंतर्मुहूर्त के भेद हैं।

श्रोता: कितनी आवली होंगी ४८ मिनट में ? अनेक, संख्यात होंगी। यह किसके जघन्य काल को देख रहे हैं ? मिथ्यात्व गुणस्थान के जघन्य काल को हम देखते हैं - तो यहां कह रहे हैं एक अंतर्मुहूर्त जितना। वह जो यथायोग्य अंतर्मुहूर्त होगा उतना उस मिथ्यात्व गुणस्थान का जघन्य काल है। अब यह हम जरा पुस्तक के माध्यम से देखेंगे। यह जघन्य काल लिखा है उसके दूसरे नंबर के पॅरेग्राफ में दूसरे लाइन में लिखा है।

यदि मिथ्यात्व में आया है कोई जीव, **तो उसे कम से कम एक अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत रहना अनिवार्य है।** यानी असंख्यात समयों तक वह मिथ्यात्व में रहेगा, रहेगा और रहेगा। एक समय, दो समय, चार समय, संख्यात समय, इतना कम काल मिथ्यात्व में रहने का नहीं है। वह तो मिनिमम काल अंतर्मुहूर्त तक रहेगा ही रहेगा। *श्रोता: जो सबसे कमवाला अंतर्मुहूर्त है वह अनिवार्य है ?* अनिवार्य की जो बात है वह यथायोग्य अंतर्मुहूर्त जो होगा सो होगा। हम अपने मन से कोई बात नहीं बता सकेंगे। यहां लिखा है अंतर्मुहूर्त उतना ही समझना। हम उसको डिनॉमिनेट नहीं कर सकते कि जघन्यवाला है या अन्य कुछ है। जो केवली भगवान के ज्ञान में आया है, वह हमें मानना पड़ेगा। उन्होंने लिखा अंतर्मुहूर्त तो हम भी कहेंगे अंतर्मुहूर्त। हम अपनी बुद्धि से कुछ नहीं कहेंगे कि ४ सेकंड और एक समय। वह अपनी कपॅसिटि है नहीं।

अभी उत्कृष्ट काल की अपेक्षा से कहते हैं। **उत्कृष्ट काल- सादि मिथ्यादृष्टि की अपेक्षा।** यह सादि मिथ्यादृष्टि क्या होता है ? कि जो मिथ्यादृष्टि था, वह सम्यक्त्वी हुआ और फिर सम्यक्त्व से गिरकर मिथ्यात्व में आया। तो उसको कहेंगे सादि, उसकी मिथ्यात्व की आदि-शुरुआत हो गयी न ! इसलिये उसको कहेंगे सादि मिथ्यादृष्टि। ऐसा जो सादि मिथ्यादृष्टि है उसकी **अपेक्षा** से **यदि मिथ्यात्व गुणस्थान के उत्कृष्ट काल का विचार किया जाये**, **तो** वह **मिथ्यात्व गुणस्थान का उत्कृष्ट काल किंचित न्यून** न्यून यानी किंचित कम, **अर्धपुद्गलपरावर्तन मात्र है।** अभी हमने देखा था कोई जीव सम्यक्त्वी होकर गिर जाता है, तो संसार में परिभ्रमण करने का उसका अधिक से अधिक काल कितना है ? तो जनरलि हम कहेंगे अर्धपुद्गलपरावर्तन। लेकिन यहां क्या बात बताते हैं ? किंचित न्यून यानी कुछ कम। क्योंकि उसको मिथ्यात्व में से बाहर निकलकर सम्यक्त्व की, संयम की प्राप्ति करके श्रेणी मांडकर, अरिहंत अवस्था प्राप्त करके, अयोगकेवली गुणस्थान की प्राप्ति करके सिद्ध होना है। तो उसमें जो कुछ समय लगता है उतना अर्धपुद्गलपरावर्तन में से कम करना ।

हम तो बहुत बड़े काल की बात सोचते हैं, लेकिन वह कुछ ही अंतर्मुहूर्त में यह सारे पड़ाव पार कर देवे। इसलिये क्या कहा ? किंचित न्यून अर्धपुद्गलपरावर्तन मात्र है। **जब किंचित न्यून अर्धपुद्गलपरावर्तन काल में से मात्र अंतर्मुहूर्त काल शेष रह जाता है, तब यह जीव पुनः पुरुषार्थ करके सम्यक्त्व और संयम को युगपत् धारण करके।** क्या कहा ? संयम और सम्यक्त्व यानी कोई जीव ऐसा भी हो सकता है

कि वह डायरेक्ट; डायरेक्ट हो, पहले गुणस्थान से सातवें गुणस्थान में दाखिल हो सकता है। वह कैसा होगा ? उसकी भी बात मैं बताऊंगा। यहां क्या कहा ? कि तब यह जीव पुनः पुरुषार्थ करके सम्यक्त्व और संयम को युगपत्। युगपत् यानी ॲट अ टाइम, धारण करके **श्रेणी मांडकर केवलज्ञान प्राप्त करके सिद्ध भगवान हो जाता है; ऐसा नियम है।** क्योंकि यहां तो हमें उत्कृष्ट काल को देखना है न। तो पहले कोई जावे इसकी बात नहीं कर रहे हैं। अर्धपुद्गलपरावर्तन में कुछ काल कम वह सादिसांत मिथ्यात्व का उत्कृष्ट काल होगा।

अभी बात ऐसी होती है कि देखो यह संयम धारण करने के परिणाम कहो या जिसको हम कहेंगे सातवें गुणस्थान की प्राप्ति होने का जो कोई काल है, जो कोई कंडिशन्स हैं, उसमें तो एक बात इतनी निश्चित है कि वह जीव द्रव्यलिंगी मुनि होना आवश्यक है। घबराना मत, द्रव्यलिंगी कहने से कई लोगों को एकदम हर्ष होता है। कई लोगों को दुःख होता है। यह द्रव्यलिंगी कोई गाली-वाली नहीं है हो। ख्याल में आया ? यह द्रव्यलिंगत्व धारण करना भी महा पुण्य का कार्य है। क्यों ? उस द्रव्यलिंगी को द्रव्यलिंगी इसलिये कहा जा रहा है कि मुनिराजों के जो २८ मूलगुण बताये गये हैं, उन २८ मूलगुणों का पालन बिलकुल यथोचित, यथा आगम यानी आगम के अनुसार हो रहा है पर अभी उनके तीन कषाय की चौकड़ी का अभाव नहीं हुआ है। यानी अभी उनके मुनियोग्य अंतरंग में वीतरागता की प्राप्ति हुयी नहीं है। ख्याल में आया ? ऐसे जो जीव हैं जो आगमोचित २८ मूलगुण का पालन करते हैं, लेकिन उनके आत्मानुभूति नहीं हुयी है। ऐसे जीव को द्रव्यलिंगी मुनिराज कहते हैं।

जो द्रव्यलिंगी मुनि होते हैं, भाईसाहब मैं तो यह कहूंगा, समझना हो बराबर कि कोई सामने से व्यक्ति आयी है मुनि की अवस्था में और हमारा उनका पूर्व में कोई परिचय नहीं है, हम उनको जानते नहीं हैं तो हमें उनके साथ मुनियोग्य व्यवहार करना ही चाहिये। उनका आदर सत्कार, उनके आहार आदि सारा प्रबंध, जो हमारे से हो सकता है उतना करना ही चाहिये। आप बोलें क्या बात कर रहे हो ? यह देवलाली की गादी पर बैठकर आप ऐसा बात कर रहे हो ? तो देवलाली थोड़े ही मुनि विरुद्ध है ?

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

६. मिथ्यात्व गुणस्थान, गमनागमन

हम यहां गुणस्थान के माध्यम से मिथ्यात्व गुणस्थान का स्वरूप देख रहे हैं और उस मिथ्यात्व गुणस्थान में जो कोई जीव पहले गुणस्थान से सातवें गुणस्थान में प्रवेश करे, तो उनका स्वरूप क्या होता है और आगम के अनुसार क्या होना चाहिये, उसकी यहां चर्चा हम कर रहे हैं। पहले में पहले क्या होना चाहिये उस जीव के ? द्रव्यलिंग यानी बाह्य लिंग यानी उसका भेष। बाह्य भेष कैसा होना चाहिये ? वह तो जिनेन्द्र भगवान जैसा होना चाहिये। ख्याल में आया ? उसको जिनलिंग भी कहने में आता है। केवल बाह्य वेष वैसा होगा तो वह जीव भावलिंगी मुनि नहीं हो सकता है। जिसके अंतरंग में तीन कषाय चौकड़ी के अनुदयपूर्वक जो वीतरागता उत्पन्न हुयी है, जिसको शास्त्र में सकलचारित्र ऐसा नाम दिया गया है, उस सकलचारित्र की विद्यमानता उस जीव के होना अनिवार्य है, तभी तो उन्हें मुनि कहेंगे।

लेकिन किसी मुनि को देखते हुये, वे भावलिंगी हैं या भावलिंगी नहीं हैं इसका निर्णय करने के लिये हमें, क्या कहते हैं ? कोई पॉसिबिलिटि नहीं होती है। क्योंकि जिसका हमने कभी स्वाद ही नहीं लिया है, अतीन्द्रिय आनंद का स्वाद ही नहीं लिया है, अतीन्द्रिय आनंद को चखा ही नहीं है, तो दूसरा कोई अन्य व्यक्ति उस अतीन्द्रिय आनंद का वेदक है कि नहीं, यह किस पर से साबित कर सकेंगे ? ख्याल में आया ? जिससे हम अधिक परिचित हैं, ऐसे जो कषाय भाव हैं, उन कषाय भावों में भी जो विविधता है; वह किसीके मुंह को देखते हुये हम निर्णय नहीं ले सकते हैं कि इसके मन में कौनसे परिणाम चल रहे हैं; तो जिससे हम टोटली इग्नोरंट हैं, जिसका हमने कभी वेदन ही नहीं किया है, उस बात का हम निर्णय किस बलबूते पर करेंगे ? इसलिये शास्त्र में तो ऐसा कथन आता है कि अगर आपको बाह्य में कोई ऐसा नग्न साधु दिखे और हमें उनके बारे में अधिकतर जानकारी नहीं हो तो उनका हम मुनि योग्य सत्कार, आदर और अपने से उनकी जो कोई बाकी की सारी व्यवस्थायें हो सकती है, वह अवश्य करनी ही चाहिये। उनको नमस्कार आदि करना वगैरह होना ही चाहिये।

दिलीपभाई एकदम चमक गये। लेकिन हमें अगर इस बात का पता लगा कि ये जो २८ मूलगुण हैं, उनमें से एक भी मूलगुण का पालन आगमोचित नहीं हो रहा है; एक ना हो, २७ तो हैं, तब वह द्रव्यलिंगी मुनि भी नहीं है। क्या कहा ? हां साहब, अभी

प्रश्न मत पूछना। हमें यह मुनियों का स्वरूप किसलिये जानना है इसका निर्णय पहले करो। हमें यहां से, कहां गये वह भाईसाहब आये भी नहीं अभी ? बाय रोड हमें दिल्ली जाना है, तो उस रोड में जो कुछ बातें बीच-बीच में आती हैं। उसका पता होना चाहिये कि नहीं ? उस रोड का स्वरूप कैसा है ? यह रूट अच्छा है, अरे वह खड्डेवाला है, अरे वह बराबर टार रोड है, उधर वह है, यह है, यह हम पहले जानकारी लेते हैं कि नहीं ? वैसे हमें स्वयं को मुनि बनना है क्या नहीं ? नहीं-नहीं हमें मुनि नहीं बनना, हमें तो डायरेक्ट अरिहंत अवस्था चाहिये। अरे जा-जा, मेरी भाषा में कहो तो मुंह धोकर आ। मुनि बने बिना श्रेणी नहीं चढ़ पाओगे और श्रेणी चढ़े बिना तुम अरिहंत अवस्था की प्राप्ति नहीं करोगे। कोई कहते हैं आप मुनि को नहीं मानते हैं, क्यों ? मुनियों को ही मानते हैं भाई, कौन कहता है मुनियों को नहीं मानते ? लेकिन सच्चे मुनियों को मानते हैं। नहीं समझे फर्क ?

जिनसे २८ मूलगुणों का यथोचित पालन भी नहीं किया जाता है, उनको मुनि-मुनि बोलकर माथे पर रखोगे, तो आगम में तो ऐसा लिखा है कि तुम उपलनाव में बैठे हो। यह उपलनाव क्या होती है मालूम है मौसी ? श्रोता: पत्थर की नाव। हां-हां, अरे उपल नाम का, क्या बोलते हैं ? हीरे जैसा एक रत्न होता है। वह भी है पत्थर। पत्थर कहने से तो आपको बुरा लगता है, स्टोन है स्टोन। कितना अच्छा लगा। अरे वह भी पत्थर ही है और उस पत्थर की नाव में जो बैठेगा, वह नाव के साथ संसार समुद्र में डूबेगा। ख्याल में आया ? क्योंकि जैसा करने का फल है वैसा ही कृत-कारित-अनुमोदना का भी फल है। तो वहां तो कहते हैं कि जो ऐसे खोटे, जो सच्चे नहीं हैं ऐसे जीवों के पीछे लगे, तो उसके भी उपलनाव में बैठने का जो फल है वह मिलनेवाला है। पहले में पहले हमें तो यह नक्की करना है कि ये २८ मूलगुण क्या होते हैं ? क्योंकि हमें आगे जाकर मुनि बनना है, तो उस वक़्त हमारे में ऐसी कोई ऐब न रहे, हमारा मुनिपना यथार्थ मतलब बिलकुल सच्चा हो जाये।

ऐसी बात समझने के लिये हमें २८ मूलगुणों के नाम भी तो याद होने चाहिये। मैं आपसे एक प्रश्न पूछूं तो आप बुरा मानोगे ? इन २८ मूलगुणों के पूरे नाम किसको-किसको याद हैं ? कोई भी हाथ नहीं उठा रहा है। हां बहुत अच्छा, एक बहन ने तो उठाया। आप नहीं बोलेंगी। मैं आपको बाद में पूछूंगा। जो अभी इस मनुष्यभव में, जो पुरुषपर्याय में हैं, जो मुनि बन सकते हैं इस पंचमकाल में, उनको तो कम से कम पूछें

कि २८ मूलगुण के नाम क्या है। हां बोलो साहब ? *श्रोता: ५ महाव्रत,* ५ महाव्रत, *श्रोता: ५ इन्द्रियविजय,* ५ इन्द्रियविजय, *श्रोता: ५ समिति,* ५ समिति, *श्रोता: ६ आवश्यक,* ६ आवश्यक, *श्रोता: और ७ शेष गुण।* ७ शेष गुण। यह आपने मुख्य-मुख्यरूप से बताये। तो पांच महाव्रत के नाम भी तो बिना देखे बोलने पड़ेंगे हमको। हां बोलो-बोलो, यह आपकी टेस्ट नहीं ली जा रही है। हमें साहब इस बात का पता नहीं है और हम उनके बगल में थरमॉमिटर डालकर तुम मुनि हो कि नहीं, यह देखने जा रहे हैं। पागलपन मत कर, तू अपने बगल में थरमॉमिटर डाल और देख कि तेरेमें उनमें से कितनी बातें हैं। जब तू मुनि बनेगा तो तेरेमें यह ऐब तो है नहीं न, इस बात को हमें देखना है।

हम जो आपको यहां इन्फर्मेशन दे रहे हैं, जो आगम के अनुसार है वह तुम्हारे स्वयं के लिये मर्यादित रखो। आपको कोई ऑथॉरिटि नहीं है कि यह मुनि है कि नहीं, वह मुनि है कि नहीं ? अरे तू पर का परिणमन कर सकता है ऐसा मानेगा तो तुझे सम्यक्त्व ही नहीं होनेवाला है। तू पर को सुधारने की कोशिश कर रहा है तो तूने जिनेन्द्र भगवान की बात को ठुकराया है कि तू पर का परिणमन नहीं कर सकता है। तू ऐसा मानता है कि मैं उसको जाकर सुधार दूं, तो तू स्वयं गोते में है। ख्याल में आया ? वह काव्य आता है न कि 'होता स्वयं जगत परिणाम, मैं जग का क्या करता काम' ! यह क्या बात है, इस बात को हम ध्यान में नहीं रख रहे हैं और पर को सुधारने की कोशिश कर रहे हैं। अब हम २८ मूलगुणों के नाम याद करते हैं, उनके स्वरूप को देखते हैं, तो हमें पता लगेगा कि हमें क्या करना है। हमें यह नहीं पता करना है कि इसको हम लगाकर तो देखें, इसको लगाकर तो देखें। भाईसाहब बात ऐसी है कि हमें पहले गुणस्थान से जो जीव सातवें गुणस्थान में जायेगा, तो उसकी पात्रता-पार्श्वभूमि कैसी होनी चाहिये ? उसे हमें देखना है।

आजकल के या किसी विशेष पर्टिक्युलर व्यक्ति के लिये यह बात नहीं की जा रही है। हम किसीकी तरफ ऊंगली करते हुये यह नहीं बता रहे हैं कि यह कैसा है, वह कैसा है, वह कैसा है ? आगम के अनुसार मुनियों का क्या स्वरूप है वह हमें देखना है। तो कृपा करके आप ऐसा मत समझना कि यह बात किसी विशेष व्यक्ति के लिये बतायी जा रही है। यह तो कुन्दकुन्द आचार्य भगवान कहो, जिन्होंने अष्टपाहुड में इस स्वरूप का इतना खुलासेवार वर्णन किया है कि उसका कोई मोल नहीं, अनमोल बात है और उसके ऊपर जयचंदजी छाबड़ा ने तो भावार्थ ऐसा जबरदस्त लिखा है कि

देखते ही लगता है कि ओह हो ! यह दो हजार साल पहले ऐसी अवस्था ! और आज दो हजार साल बाद क्या हो गया आगे ? और दो हजार साल के बाद ? हमें तो पर का कुछ करना-धरना नहीं है, ना किसीको सुधारना है, ना किसीको खोटा ठहराना है। हमें तो आगम के अनुसार मुनियों का जो स्वरूप है, जिनके २८ मूलगुण यथोचित पालन हो रहे हैं, ऐसी द्रव्यलिंगी अवस्था जिनके होगी वही जीव सातवें में जायेगा, बस इतनी ही बात हमें देखनी है, अन्य कोई बातों से हमारा कोई मतलब है नहीं।

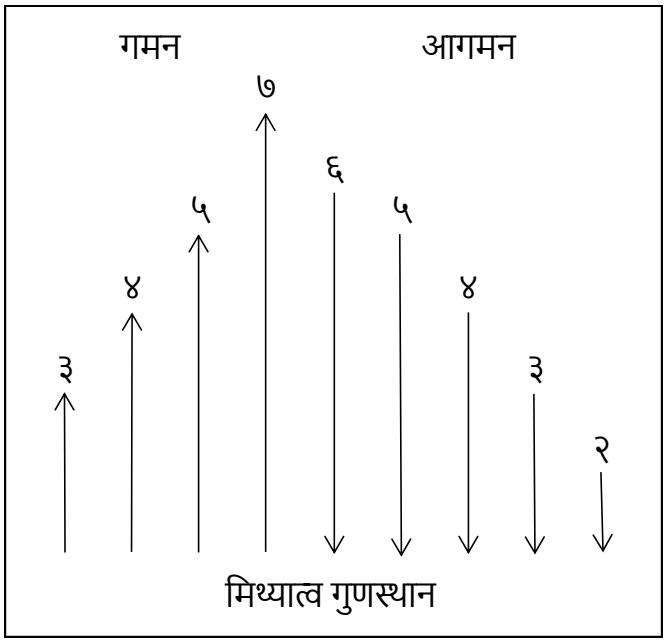
हमने यह देखा कि पहले गुणस्थान में जो जीव होगा वह अगर डायरेक्ट सातवें में जायेगा, तो वह कैसा होता है और कैसा नहीं। यहां एक बात बिलकुल समझने जैसी है, कि जिनके-जिनके मुनिपद धारण करने की इच्छा होती है वह पहले बाह्य में द्रव्यलिंगत्व धारण करेगा ही करेगा। जो वस्त्र-पात्र आदि के साथ है और वह डायरेक्ट वस्त्र के साथ भावलिंग धारण करे ऐसा तीन काल में नहीं होगा। देखो, जब मैं छोटा था, छोटा यानी क्या ? इस धर्मक्षेत्र में कुछ नॉलेज नहीं था, मैं वह समझना चाहता था तो मैं हमेशा ऐसा ही सोचता था कि जो आचार्य हैं - जो दीक्षा-शिक्षा देते हैं, उनको मालूम नहीं है क्या ? कि यह द्रव्यलिंगी है या भावलिंगी है ? ऐसा विचार मेरे दिमाग में चलता था। लेकिन जब यह करणानुयोग के माध्यम से थोड़ा बहुत गुणस्थान का अभ्यास हुआ, तो यह बात निश्चित हुयी है कि कोई भी जीव पहले द्रव्यलिंग धारण करेगा और द्रव्यलिंग के साथ ही उसको भावलिंग की प्राप्ति होगी। ऐसा सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। कपड़े सहित मुझे सातवां गुणस्थान प्राप्त हुआ ऐसा कहनेवाला पाखंड़ी है। अब आगे क्या बोलना ? वस्त्र सहित मुनिपना होता ही नहीं। क्यों ? जो हमारे सात शेष गुण हैं उसमें नग्नत्व नाम का एक मूलगुण है। हमें नाम ही मालूम नहीं न !

जो मुनिराज होते हैं वे हित-मित-प्रिय ही वचन बोलते हैं। कैसा बोलते हैं ? जीव के हित की, मित यानी इन शॉर्ट और प्रिय यानी किसीका दिल ना दुखे ऐसी बात करते हैं। ख्याल में आया ? यह किसीके मन दुखाने से क्या होगा ? वह भी तो एक प्रकार की हिंसा ही है और वहां मुनिराज तो अहिंसा महाव्रत के धारक हैं; वे ऐसी हिंसा करेंगे ? देखो इतना अलग-अलग बातों का इम्पॅक्ट है, हम जरा यहां से वहां फिरते हैं, तो हम कहीं न कहीं मिस्टेक में अटकते हैं। ये जो पांच महाव्रत हैं, इन पांच महाव्रत का यथार्थ पालन हो इसके लिये बाकी के २३ मूलगुण हैं। मैं कभी फुरसत में होऊंगा, अपने को टाइम मिलेगा; तब उसकी भी बात करेंगे। देखो मैंने कुछ गलतियां की थी समझने में,

मैं उसमें कुछ गलत मान रहा था इसलिये मैं ऐसा सोचता हूं कि आप में से कोई मेरे जैसा होगा, उसकी भी ऐसी गलत मान्यता होगी तो वह उसकी मान्यता छूट जाये। बाकी पहले से कह रहा हूं, आगम पर हाथ रखकर कह रहा हूं, हमें किसी विशेष व्यक्ति के बारे में कुछ भी बताना नहीं है। सुनना, खास करके वर्तमान के किसी भी मुनि के बारे में बोलने का अधिकार हमें है ही नहीं और ना हम बोलना भी चाहेंगे। लेकिन आगम के अनुसार जो बात है उसको कतई छुपाकर नहीं रखेंगे।

मैंने पहले ही दिन बताया था, भगवान के बारे में तुम चाहे जितना बोलो, किसीके ऊपर कोई असर नहीं होता है, लेकिन मुनि या गुरु के बारे में बोलो, तो सबकी तलवार म्यान में से हाथ में आ जाती है। क्यों ? तुम मुनिविरोधी हो ! अरे काहे मुनि विरोधी हैं भाई ! हम तो उनके दासानुदास हैं क्योंकि हमें भी आगे जाकर मुनि अवस्था धारण करनी है। हमें भी मुक्ति की प्राप्ति करनी है। केवल बात-बात में, बात-बात में क्या होना है ? इसके लिये हमें इसका स्वरूप जानना है। हम आगे बढ़ते हैं क्योंकि पहले उस समय जो टेम्पो था वह अभी रहा नहीं है और आप भी काफी संतुष्ट हुये हैं ऐसे आपके चेहरों पर से लगता है। जब हम छठे-सातवें गुणस्थान में जायेंगे यानी आगम के आधार से उसका विषय आयेगा, तब इसकी अधिक चर्चा होगी।

यहां कह रहे हैं कि गमनागमन की अपेक्षा विचार करते हैं। अभी आप कृपा करके अपनी पुस्तकें बंद रखे तो आपको जल्दी समझ में आयेगा। गमनागमन यानी क्या ? गमन और आगमन। अभी अपने-अपने गांव से अपना यहां देवलाली में आगमन हुआ है। कोई बम्बई से आया है, कोई जबलपुर से आया है, कोई होशंगाबाद से आया है, कोई औरंगाबाद से आया है। सब यहां आने के बाद, बाद हो गये हैं। क्यों औरंगाबादवाले ? क्योंकि घर को भूल गये न ! क्या हो रहा है क्या मालूम ? यहां ६-६ घंटे तो धबा-धब एक के ऊपर एक चल रहा है। घर की याद ही नहीं आ रही है। तो वे बाद हो गये सब। यहां यह बात बता रहे हैं कि जो पहला गुणस्थान है उस गुणस्थान में से जीव कहां-कहां जायेगा, उसको गमन कहेंगे। पहले गुणस्थान से कहां-कहां गमन होगा ? तो उसको कहेंगे कि वह गमन कर रहा है और पहले गुणस्थान में कहां-कहां से आ रहा है, उसको कहेंगे आगमन। यह बात ख्याल में आयी ? गमनागमन, इसका अर्थ ख्याल में आया ? गमन यानी जाना, आगमन यानी आना।



अभी देखते हैं हम यहां पर क्या लिखा है। नीचे मिथ्यात्व गुणस्थान लिखा है। इस मिथ्यात्व गुणस्थान से ऊपर जो ॲरो-बाण दिखाये हैं, वे कहां-कहां जाते हैं उसकी यहां बात बतायी है। तो यह जो पहला लिखा है, क्या लिखा है ? तीसरे गुणस्थान में। ये आंकड़े जो हैं न, वे गुणस्थान के हैं और ये जो बाण हैं, वे जानेवाले गमन करने के लिये और ये उलटे बाण हैं, वे मिथ्यात्व में आनेवालों के लिये हैं। तो क्या बता रहे हैं यहां पर कि मिथ्यात्व गुणस्थान में से कहां-कहां जायेंगे ? तो हम सोचते हैं।

पहले में पहले क्या लिखा है ? तीन। तो तीसरे गुणस्थान का नाम क्या है ? वह बोर्ड निकाल दिया तो सबका मुंह बंद हो गया। अच्छा नीचे लिखा है ? सम्यग्मिथ्यात्व। अब वह कौन जाता है, क्यों जाता है उसकी भी बात हम करेंगे, लेकिन पहले यह तो नक्की करेंगे कि कौनसे-कौनसे गुणस्थान में जाता है। उसके आगे क्या लिखा है ? चौथा गुणस्थान। चौथे गुणस्थान का नाम क्या है सुरेशभाई ? *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* सब सुरेशभाई हैं यहां आप छोड़कर। *अन्य श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* पांचवें गुणस्थान का नाम क्या है ? *श्रोता: देशविरत।* देशविरत। उसके आगे कौनसा है ? सातवां गुणस्थान। सातवें गुणस्थान का नाम ? *श्रोता: अप्रमत्तविरत।* ख्याल में आया ? देखो कैसी मज़ा है, पहले गुणस्थान से जीव चौथे गुणस्थान में जाता है। अभी एक बात

बिलकुल समझ में रखने जैसी यह है कि गुणस्थान जब पलटता है यानी ऊपर के गुणस्थान की जब प्राप्ति होती है, तो वह तो मेजॉरिटीलि मैं कहूंगा शुद्धोपयोग में ही ऊपर के गुणस्थान में जाना होता है। यानी गमन जो है वह शुद्धोपयोग में ही होगा। यानी जो पहले मिथ्यात्व में है कोई जीव वह शुद्धोपयोग में चौथे गुणस्थान में जा सकता है, पांचवें गुणस्थान में जा सकता है या सातवें गुणस्थान में जा सकता है।

शुद्धोपयोग में छठे में, छठे में जायेगा क्या नहीं ? *श्रोता: नहीं जायेगा।* क्यों नहीं माणिकलाल ? बोलो-बोलो, घबराना मत ! अरे छठवां गुणस्थान तो शुभोपयोग का है। गुणस्थान बदलता है तो शुद्धोपयोग में ही ऊपर के गुणस्थान में जाते हैं न ! तो छठा गुणस्थान तो हमेशा गिरने के लिये है। यानी कोई भी जीव पांचवें से छठे, चौथे से छठे, पहले से छठे, ऐसा जायेगा ही नहीं। शुद्धोपयोग में गुणस्थान पलटना है तो वह पहले से चौथा, पहले से पांचवां या पहले से सातवां होगा। यह जो तीसरा गुणस्थान है उसकी तो आप बात ही नहीं कर रहे हैं, उसका नंबर तो पहले लगा दिया आपने।

ऐसा कहते हैं कोई सादि मिथ्यादृष्टि जीव है। कौन है ? सादि यानी शायद नहीं, जिसकी आदि हो गयी है। काहे की ? पहले तो अनादि मिथ्यादृष्टि था, सम्यक्त्व की प्राप्ति हुयी, फिर सम्यक्त्व से गिर गये तो मिथ्यादृष्टि हुआ, उसका नाम है सादि मिथ्यादृष्टि। ऐसा जीव, अभी तो वह आपको यहां डिटेल में बाद में बतायेंगे, तो वहां पहले जो सम्यक्त्व की प्राप्ति हुयी, उस समय जो दर्शनमोहनीय कर्म जो मिथ्यात्व नामक था, उसके तीन विभाग हो जाते हैं। उसको शास्त्र में कहते हैं तीन टुकड़े हो जाते हैं। सम्यक्त्व छूटकर मिथ्यात्व में आने पर भी कुछ काल तक ये तीन भेद कायम रहते हैं तो उसकी सत्ता में मिथ्यात्व है, सम्यग्मिथ्यात्व है और सम्यक् प्रकृति है। जब उसमें से सम्यग्मिथ्यात्व का उदय चालू हो जायेगा तो वह जीव पहले गुणस्थान से तीसरे गुणस्थान में जायेगा। लेकिन उसके लिये कंडिशन क्या होनी चाहिये ? वह जीव सादि मिथ्यादृष्टि होना चाहिये। अभी इसमें कोई शंका हो तो पूछना, ऐसा न लगे कि हमें बोलने ही नहीं देते, इसके बारे में।

श्रोता: ऊपर के किसी भी गुणस्थान से जीव नीचे के गुणस्थान में आता है वह तीसरे गुणस्थान में आता है ? आता है न, पर अभी तो मिथ्यात्व में से कहां-कहां जाता है उसको देख रहे हैं। आपका जो कहना है कि ऊपर से भी तीसरे गुणस्थान में आता

है, उसकी ना कहां है ? हमें तो मिथ्यात्व में से गमनागमन कहां-कहां होता है उसे देखना है। *श्रोता: चौथे में भी जायेगा, पांचवें में भी जायेगा, सातवें में भी जायेगा ?* हां, बराबर। तो फिर ? पांचवें में जायेगा तो उसका मिथ्यात्व गुणस्थान रहा कि गया ? कोई जीव मिथ्यादृष्टि था, उसने पांचवां या चौथा समझो न, चौथे गुणस्थान की प्राप्ति की तो उसका मिथ्यात्व गुणस्थान रह गया कि ख़तम हो गया ? *श्रोता: ख़तम हुआ।* अभी कौनसे गुणस्थान में है ? *श्रोता: पांचवें में या चौथे में आया।* पांचवें में या चौथे में आया। *श्रोता: मिथ्यात्व उसका गुणस्थान नहीं बना ?* हां, हमारी यहां बात मिथ्यात्व गुणस्थान की चल रही है। बात ख्याल में आयी ? हम अभी अन्य किसी गुणस्थान की बात नहीं कर रहे हैं। हमें तो जो मिथ्यात्व नामक पहला गुणस्थान है, उसमें से जीव कहां-कहां गमन करेंगे या अन्य गुणस्थानों में से जो कोई जीव हैं, वह मिथ्यात्व में कहां-कहां से उनका आगमन होगा इस बात का हमारा यहां विवेचन चल रहा है।

श्रोता: मेरा पूछना यह है कि क्या पहले गुणस्थानवाला जीव दूसरे या तीसरे में जायेगा ? मैंने दूसरे की बात उठायी ही नहीं है, लिखा ही नहीं है। *श्रोता: यही तो पूछ रहा हूं मैं ?* नहीं, मैं यह बता रहा हूं कि यह बोर्ड की तरफ आप देखेंगे। अब आप इस तरफ बैठे हैं और बोर्ड नहीं दिखता है वह मेरा अपराध नहीं है। आप चाहे वहां बैठो, चाहे यहां आ जाओ। वहां से तो अच्छी तरह से दिखेगा। क्योंकि आपका थोड़ा बहुत अधिक आगे का अभ्यास हुआ है इसलिये आपको लगता है कि पहले में से दूसरे में जायेगा कि नहीं ? कतई नहीं जायेगा, हां, क्योंकि दूसरा गुणस्थान जो है वह तो गिरने का गुणस्थान है। वह ऊपर के गुणस्थानों में से गिरेगा और सासादन में आयेगा और निश्चितरूप से मिथ्यात्व में जायेगा। नीचे से दूसरे में नहीं जायेगा। यही तो यह गुणस्थानों की विशेषता है। कभी भी हम बात करेंगे तो पहले से डायरेक्ट चौथे में ही भेजते हैं। तो आप कहते हैं कि तुम्हारा क्या जाता है दूसरे में और तीसरे में भेजने को ? मेरा तो कुछ नहीं जाता है, जाता होगा तो जिनेन्द्र भगवान का ही जाता होगा अगर उसका कुछ होगा तो। वे तो जो वस्तुस्वरूप है उसको बता रहे हैं। वे थोड़े ही भेज रहे हैं ? वे सबके थोड़े ही ऑनररी सर्व्हंट हैं चलो भाई तुम सातवें में जाओ, तुम चौथे में जाओ, तुम पहले में जाओ, ऐसा काम करेंगे कि नहीं जिनेन्द्र भगवान ? अरे जो उनके ज्ञान में बात आयी है और जो सत्य वस्तुस्थिति है वह वे बतायेंगे।

श्रोता: जो सम्यग्दृष्टि जीव है वह मिथ्यात्व में गया है तो वह पहले से तीसरे में जा

सकता है क्या ? पहले में से तीसरे में जा सकता है परंतु उनका कहना है, पहले में से दूसरे में जा सकेगा या नहीं ? कोई बात नहीं, आप समर्थन मत कीजिये। मेरे ज्ञान में जितना आया, मैंने उनको जवाब दिया है। अगर वे संतुष्ट नहीं हैं तो मैं कुछ नहीं कर सकता हूं क्योंकि मैं इतना जानता हूं कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का....। देखो अभी मुझे कोई मिले थे, मुझे पता नहीं कौन मिले थे। उन्होंने कहा यह गुणस्थान की बात हमने पहले सुनी है किसी विद्वान से लेकिन हमारे पल्ले कुछ नहीं पड़ा। लेकिन आप जब सिखाते हैं, तो सब बातें मेरे ज्ञान में बैठती हैं। कौन बोला मुझे अभी हाथ उठाकर बतायेंगे तो मुझे अच्छा लगेगा। अभी-अभी शाम को पांच, साढ़े पांच बजे किसीने मुझे कहा। तो मैं कहता हूं क्या मैं समझा सकता हूं ? अरे तेरे ज्ञान का ही ऐसा परिणमन होना था, उस समय नहीं हुआ था। उस समय की योग्यता ऐसी थी कि तेरे ज्ञान में नहीं आना था और आज आया है तो उसमें भले मैं निमित्त हूं लेकिन निमित्त कार्य में कुछ नहीं करता है यह तो हम अवश्य जानते हैं और उससे हम फूल जाये कि आहा ! देखो मैंने समझाया, मैंने समझाया, तो हम यहां वक्ता के गद्दी पर बैठने के लायक भी नहीं है। ख्याल में आया ? यह कर्तृत्वबुद्धि का जो महा अहंकार इस जीव को चढ़ा है, यह गुणस्थान सीखने से उतर जायेगा। ख्याल में आया ?

अपनी क्या बात हो रही थी ? अपनी बात यह हो रही थी कि पहले गुणस्थान से जीव ऊपर के कौनसे-कौनसे गुणस्थान में जाता है ? कौन बताना चाहेगा ? हां, बोलो साहब आप ? नाम बोलना, गुणस्थान के नाम बोलना, आपका नाम नहीं भाई। *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व।* सम्यग्मिथ्यात्व, उसके लिये कंडिशन क्या होनी चाहिये ? मिथ्यात्व से सम्यग्मिथ्यात्व में जानेवाला जीव जो होगा उसकी कंडिशन क्या ? बेसिक कंडिशन क्या होनी चाहिये ? *श्रोता: सादि मिथ्यादृष्टि जीव होना चाहिये।* बहुत अच्छा, सादि मिथ्यादृष्टि जीव होना चाहिये। अभी उसकी कितने की सत्ता है ? क्या सत्ता है ? वह अभी हम सत्ता वगैरह की बात नहीं करेंगे। हम इतना ही नक्की करेंगे कि वह एक बार सम्यक्त्व से छूटकर मिथ्यात्व में आया है, उसको हम सादि मिथ्यादृष्टि कहेंगे। ऐसा जीव ही पहले से तीसरे में जायेगा। इसका अर्थ यह है कि अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव पहले गुणस्थान से तीसरे गुणस्थान में जा नहीं सकता।

अब जो पहले गुणस्थान में अपने स्वरूप में लीनतारूप शुद्धोपयोग करेगा, तो वह जीव पहले में से चौथे में जा सकता है। जरा सुनना, जो जीव अधिक उग्र पुरुषार्थ

करेगा, वह पहले में से डायरेक्ट पांचवें में जायेगा और उससे भी अधिक पुरुषार्थपूर्वक, दृढ़तापूर्वक अपने स्वरूप में एकाग्रता करे, वह जीव पहले में से सातवें में जायेगा। सुनना ! लेकिन उसके लिये कंडिशन क्या है ? कि सातवें में जाने के लिये मुनिलिंग धारण किया हुआ होना चाहिये। एक बात बताते हुये आगे बढ़ते हैं- जो जीव सातवें में जा रहा है वह चौथे को स्पर्श करते हुये, पांचवें को स्पर्श करते हुये सातवें में जाये, ऐसा है नहीं। यह भी बहुत भ्रामक कल्पना चल रही है। क्या ? कि टच करते-करते ऊपर जाता है। टच किया तो वह चौथे में गया न भाई, ख्याल में आया ? अब चौथे गुणस्थान का जघन्य काल कितना है वह हम देखने जा रहे हैं और पांचवें का भी ।

अरे भैया अंतरंग में जो वीतरागता होती है, वह तीन कषाय चौकड़ी के अनुदयपूर्वक होती है। बाह्य में तो द्रव्यलिंगी मुनित्व है लेकिन अनुदय तीन चौकड़ी का नहीं हुआ उसके दो चौकड़ी का ही अनुदय हुआ, तो वह पांचवें गुणस्थान में जायेगा। कौन ? द्रव्यलिंगी मुनि। लेकिन जिसके एक कषाय चौकड़ी का ही अनुदय है, बाह्य में तो मुनित्व धारण किया हुआ है, ऐसा जीव जो द्रव्यलिंगी मुनि कहलाता है, वह चौथे गुणस्थान में जायेगा। क्योंकि उसने तो एक कषाय चौकड़ी के अनुदयपूर्वक ही वीतरागता की प्राप्ति की है। ख्याल में आया ? यानी एक बात हमने जो देखी कि स्पर्श करते-करते ऊपर जाता है ऐसा नहीं। अपनी आजकल की भाषा में बोलना हो तो डायरेक्ट फ्लाइट। डायरेक्ट फ्लाइट समझते हैं ? यहां से बेंगलोर जाना है, तो हम बीच में कहां ? मद्रास जाकर फिर बेंगलोर जावे या हम दिल्ली जाकर बेंगलोर आवे तो डायरेक्ट फ्लाइट नहीं कहलायेगी। यहां से डायरेक्ट बेंगलोर जायेंगे तो डायरेक्ट फ्लाइट, बीच में कोई रास्ते में रुकावट नहीं। ऐसा जो द्रव्यलिंगी मुनि है, ऐसा जीव डायरेक्ट पहले में से सातवें में जायेगा। क्योंकि उसने इतनी दृढ़तापूर्वक 'स्व' में लीनता की है, वह 'स्व' में एकाग्र हुआ है, उसने 'स्व' में स्थिरता की है, उसके कारण उसके तीन कषाय चौकड़ी का अनुदय एक समय में हो जाता है। इसलिये यहां लिखा था सम्यक्त्व की और संयम की प्राप्ति युगपत् करता है। ख्याल में आया ? वह जीव कहां जायेगा ? तो कहते हैं सातवें में जायेगा।

अभी हम दूसरी भाषा में बात करेंगे कि जो द्रव्यलिंगी मुनिराज हैं, वे सातवें में भी जा सकते हैं, पांचवें में भी जा सकते हैं और चौथे में भी जा सकते हैं। अब आगे। यह चढ़ने के यानी गमन के कितने गुणस्थान हमने देखे ? महिलाओं में से कोई हाथ

ऊपर उठाकर उत्तर देवे और आप हाथ ऊपर नहीं उठाते तो मैं समझता हूं कि आपको थोड़ासा प्रमाद आया है, तो मुझे आपने पर्मिशन दी है कि आप किसीको भी पूछ सकते हैं। मैं किसीको भी पूछूंगा, कौन बतायेगा ? मिथ्यात्व से गमन के कितने गुणस्थान है ? हां चारुबहन बताना आप ? *श्रोता: चार।* चार, कौन-कौनसे ? गुणस्थान के नाम लेना। *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व, अविरतसम्यक्त्व, देशविरत और अप्रमत्तविरत।* सम्यग्मिथ्यात्व, अविरतसम्यक्त्व, देशविरत और अप्रमत्तविरत। अभी सम्यग्मिथ्यात्व में जानेवाला जो जीव है, उसको प्रायर कंडिशन कौनसी होनी चाहिये ? *श्रोता: सादि मिथ्यादृष्टि होना चाहिये।* सादि मिथ्यादृष्टि होना चाहिये और जो सातवें गुणस्थान में जानेवाला जीव है, अभी आप नहीं उत्तर देंगे। सातवें गुणस्थान में जानेवाला मिथ्यादृष्टि जीव है उसकी कौनसी कंडिशन रहेगी ? हां, *श्रोता: द्रव्यलिंगी मुनि होने चाहिये।* द्रव्यलिंगी मुनि होने चाहिये। अब इतनी तो बात हमारे ख्याल आ गयी है।

वैसे बहुत खींचातानी करें तो और भी है कि जो जीव श्रावक यानी पंचम गुणस्थान के योग्य, स्वरूप में स्थिरता धारण करेगा, बाह्य में भी वह प्रतिमा आदि धारण किया हुआ जीव है, तो वह भी डायरेक्ट पांचवें गुणस्थान में जा सकता है और ऐसा जीव चौथे में भी जा सकता है। जिसके कोई व्रत नहीं हैं फिर भी स्वरूप में स्थिरता हुयी, तो वह चौथे गुणस्थान में जा सकता है। इसमें इसके बारे में कोई शंका हो तो आप पूछ लीजिये। क्योंकि हमें कोई जल्दी नहीं है। आपको जल्दी है, नौ कब बजते हैं उसके इंतजार में आप हैं। *श्रोता: पांचवें गुणस्थानवर्ती जो जीव है, वह चौथे में कैसे आता है ?* यह पांचवां गुणस्थानवर्ती जीव ऐसा मैंने नहीं कहा है। मैंने कहा है कि जो मिथ्यात्वी है और पांचवें गुणस्थान में जो प्रतिमायें होती हैं, उनका यथोचित जिनका पालन हो रहा है, लेकिन स्वरूप में स्थिरतारूप अधिकता नहीं है वह चौथे गुणस्थानवर्ती यानी जिसने एक कषाय चौकड़ी का अनुदय किया है, वह जीव चौथे में आ सकता है। जिसके श्रावक के योग्य दो कषाय चौकड़ी का अनुदय हुआ है और बाह्य में उसके अणुव्रत आदि धारण करने के परिणाम चल रहे हैं, बाह्य आचरण जिसको हम कहेंगे, तो वह डायरेक्ट पांचवें में भी जा सकता है।

हमने यह बताया द्रव्यलिंगी श्रावक चौथे में भी आ सकता है। अभी यह द्रव्यलिंगी नाम लेते हैं न, तो हमारे कान ऐसे खड़े हो जाते हैं कि यह कोई गलत बात कर रहे हैं। अरे गलत नहीं, वह सही मार्ग पर है। लेकिन यह अभी इतनी बात है कि

उसकी अंतरंग में शुद्धि नहीं हो रही है यह उसकी गलती है। लेकिन हमारे ना बाह्य में आचरण चल रहे हैं और ना स्वरूप में लीनता का कार्य हो रहा है। तो हम उससे अच्छे ? क्यों ? यह ऐसी लोगों की मान्यता हो गयी है भाई। अरे भैया बाहर में उनके जो परिणाम चल रहे हैं, शुभभाव जो चल रहे हैं, महाव्रत आदि धारण करने के परिणाम चल रहे हैं, ऐसा जीव अगर अंदर में उग्र पुरुषार्थ करेगा, तो सातवें में जायेगा। चौदह में से आधे गुणस्थान तो पार हो गये उसके। ख्याल में आया ? लेकिन बाह्य में कुछ नहीं और डायरेक्ट सातवें में जावे ऐसा कभी नहीं होगा। बाह्य में श्रावक के योग्य कुछ परिणाम नहीं हैं और वह डायरेक्ट पांचवें में जावे ऐसा भी नहीं है। यह तो सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। दो कषाय के चौकड़ी के अनुदयपूर्वक जो देशचारित्र की प्राप्ति होती है, वहां पंचम गुणस्थानवर्ती जीवों के जो शुभ परिणाम हैं, प्रतिमा आदि धारण करने के, वे होंगे ही होंगे।

जैसे हमने देखा था मुनिपद धारण करने के लिये द्रव्यलिंग आवश्यक है, वैसे पंचम गुणस्थान प्राप्त करने के लिये उनके अनुसार मतलब कैसे ? पंचम गुणस्थानवर्ती जीव के अनुसार जो उनके बाह्य आचरण हैं, शुभ परिणाम हैं, प्रतिमा आदि धारण करने के - अणुव्रत, शिक्षाव्रत, गुणव्रत आदि धारण करने के जो परिणाम हैं, वे होंगे तो ही वह पांचवें में जायेगा और वे कर रहे हैं इसलिये पांचवें में जायेगा ही ऐसा भी नहीं है। स्वरूप में स्थिरतारूप जो कार्य हो रहा है, उसके अनुसार चौथा या पांचवां होगा। बात ख्याल में आती है ? *श्रोता: भरत चक्रवर्ती भावमन सहित लगे हैं जीवन में और कपड़ा उतारने के बाद ही उन्हें केवलज्ञान हुआ। वे अपने गृहस्थ जीवन में आत्म तल्लीनता की उच्चत्तम स्थिति पर पहुंच गये थे, यानी क्षीणमोह तक पहुंच गये थे ऐसा कुछ है ?* नहीं, ऐसा कुछ नहीं है, यह तो मिथ्या मान्यता है। अब आगे देखेंगे।

अभी आगमन कहां-कहां से होता है ? सातवें गुणस्थान में से पहले गुणस्थान में आयेगा क्या नहीं ? *श्रोता: नहीं।* क्यों नहीं ? इधर लिखा नहीं है इसलिये। अरे लिखनेवाले की भूल भी तो हो सकती है न। देखो शुद्धोपयोग में से कोई जीव निचले गुणस्थान में आता ही नहीं है, एक्सेप्ट आगे बात करेंगे जो एक्सेप्शन की है वह। कि जो ऊपर-ऊपर के गुणस्थानों में। जैसा मान लो सातवां है, उपशमश्रेणी का आठवां है, नौवां है, दसवां है, ग्यारहवां है, इन गुणस्थानों में मरण होगा। वहां शुद्धोपयोगरूप कार्य हो रहा है न, तब वह जीव वहां से डायरेक्ट चौथे में आयेगा। लेकिन मिथ्यात्व में जो

ऊपर से आनेवाला है वह कौनसा-कौनसा होगा ? सातवें में से कोई भी जीव अगर नीचे उतरता है, तो नियम से छठे गुणस्थान में ही आयेगा। सातवें से पांचवें में भी नहीं आयेगा, सातवें से नीचे के किसी भी गुणस्थान में नहीं आयेगा। अभी हमने क्या देखा कि छठे गुणस्थान से डायरेक्ट फ्लाइट पहले गुणस्थान की है। उसका भी ऐसे जम्प मारते-मारते, टच करते-करते, स्पर्श करते-करते नीचे उतरने का कार्य नहीं होता है।

यहां क्या लिखा ? देखो, यह छठे गुणस्थान से, यह छठे गुणस्थान का नाम क्या है साहब ? *श्रोता: प्रमत्तविरत।* प्रमत्तविरत। तो वह प्रमत्तविरत से गिरकर डायरेक्ट मिथ्यात्व में आयेगा। यह पांचवां नंबर है उसका नाम क्या है बहन ? देशविरत। देशविरत से भी मिथ्यात्व में आ सकता है। अब आगे क्या है ? अविरतसम्यक्त्व से भी आ सकता है। उसके आगे क्या बताया है ? तीन नंबर बताया है। तीन नंबर का गुणस्थान कौनसा ? *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व।* सम्यग्मिथ्यात्व उसमें से भी आ सकता है। आगे और एक बताया है। *श्रोता: सासादनसम्यक्त्व।* सासादनसम्यक्त्व लिखा है उधर ? बहुत अच्छा ! वह २ नंबर देखते ही आपको सासादन गुणस्थान की याद आयी। कल से रोटी खाने के टाइम बोलना, सासादन गुणस्थान देना, तो वह दो रोटी देगा कि नहीं वह पूछना मुझे। देखो हम गुणस्थान की जब भाषा सीखते हैं न, तो दिन-रात गुणस्थान हमारी आंखों के सामने आता है। इतना इंटरेस्टिंग विषय है और इतना समाधान कारक है, उसकी कोई हद नहीं। देखो आने के लिये कितने हैं ? २, ३, ४, ५, ६। टोटल आने के लिये कितने गुणस्थान हैं ? पांच और ऊपर जाने के लिये ? चार। कितनी आसान बात है न ? यह गमनागमन की अपेक्षा से हमने इसका विचार किया है।

अब आगे बढ़ते हैं देखो । यह पेज नंबर ७७ पर हम आते हैं। यहां लिखा है गमनागमन अपेक्षा विचार। गमन शब्द का अर्थ है जाना, मिल गया सबको ? आगमन शब्द का अर्थ है आना। जीव के एक गुणस्थान से दूसरे गुणस्थान में जाने-आने के अर्थ में गमनागमन शब्द का प्रयोग किया गया है। सभी गुणस्थानों में गमनागमन शब्द का अर्थ ऐसा ही समझना चाहिये। अब यह मैं आगे की बातें थोड़ी फ़ास्ट पढ़ूंगा क्योंकि यह बात हमने अभी बहुत अच्छी तरह से समझी है। फिर भी शास्त्र को मतलब यहां जो अपने पास पुस्तक है उसको सामने रखते हुये वही बात हमने कही है कि नहीं इसको भी देखेंगे। **गमन** - गमन कहां से कहां-कहां तक होता है ? गमन कहां से यानी मिथ्यात्व में से कहां-कहां होता है ? तो कहते हैं **मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी**

मुनिराज यदि अधिक से अधिक पुरुषार्थ करके सीधे उपरिम गुणस्थान में जायेंगे, तो वे सातवें अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में जा सकते हैं। अर्थात् प्रथम बार में ही वह आधे गुणस्थान को पार कर जाते हैं; क्योंकि कुल मिलकर गुणस्थान चौदह ही हैं और उन्होंने तो प्रथम बार में ही सातवां अप्रमत्तविरत गुणस्थान प्राप्त कर लिया है। सादि या अनादि मिथ्यादृष्टि होने पर भी, जो मिथ्यादृष्टि द्रव्यलिंगी मुनिराज हों, वे अपने निज शुद्धात्मा के आश्रय करने का विशिष्ट पुरुषार्थ करने पर एवं बाधक कर्मों का उदयाभाव होने से अप्रमत्त संयत गुणस्थान में प्रवेश करते हैं।

यह कर्मों के साथ उन्होंने उसको फिट किया है। उसको भूल जाते हुये जो मैंने बताया उतना ध्यान रखना, क्योंकि यह थोड़ासा आपको डिफिकल्ट लगेगा। यहां कर्मों की कैसी-कैसी अवस्था होती है वह भी बात बतायी है उन्होंने। **वे सातिशय पुरुषार्थी मुनिराज प्रथम समय में तो मिथ्यादृष्टि थे और दूसरे ही समय में मिथ्यात्व कर्म तथा मिथ्यात्व परिणाम का नाश होने से उसी समय वे अनंतानुबंधी चतुष्क** चतुष्क यानी चौकड़ी **का अप्रशस्त उपशम, अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क और प्रत्याख्यानावरण चतुष्क कर्मों का उदयाभावी क्षय होने के कारण, अर्थात् वीतरागता व्यक्त होने से भावलिंगी मुनिराज हो जाते हैं। अब तो इन्हें मात्र चारित्रमोहनीय में से संज्वलन कषाय चतुष्क और नौ नोकषाय कर्म का उदय तथा तज्जन्य परिणाम ही शेष रह गया है।** मतलब अभी कुछ चारित्रमोहनीय ही उनके उदय में है ऐसी बात कर रहे हैं। हां साहब ?

श्रोता: उदयाभावी क्षय इसका अर्थ ? उदयाभावी क्षय का अर्थ क्या है ऐसा पूछ रहे हैं न ? तो उदय का अभाव होना उसीको यहां क्षय कहा है। अब वह आगे जाकर बात आनेवाली है। आज ही हम सब बता देंगे आपको तो कल आप नहीं आयेंगे। आप रोज आवे इसलिये यह बात आयेगी ऐसा कह रहे हैं। दूसरा पॉइंट **कोई प्रथम गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनिवर मिथ्यात्व तथा तीन कषाय चौकड़ी का अभाव न होने पर भी निज शुद्धात्मा के ध्यानरूप पुरुषार्थ से इस मिथ्यात्व गुणस्थान से सीधे विरताविरत** यानी देशविरत या संयमासंयमी ऐसे **गुणस्थान में भी गमन कर सकते हैं।** यानी यह विरताविरत गुणस्थान यानी देशविरत। देश का अर्थ होता है पार्शल, व्रती हैं लेकिन कैसे हैं ? पार्शल हैं। तो वह जो पार्शल विरत यानी विरताविरत

नामक पंचम गुणस्थान में भी गमन कर सकते हैं। **अथवा कोई द्रव्यलिंगी श्रावक प्रथम गुणस्थान से,** अभी श्रावक को भी द्रव्यलिंगी बनाया। वह प्रथम गुणस्थान से **शुद्धात्मा के अवलम्बन के बल से सीधे पांचवें विरताविरत** यानी देशविरत **गुणस्थानवर्ती हो जाते हैं।** यह भी बात हमने अभी देखी थी।

अब कहते हैं **कोई द्रव्यलिंगी मुनिराज,** या **द्रव्यलिंगी श्रावक अथवा अव्रती भद्र मिथ्यादृष्टि जीव।** यह भद्र क्यों कहा ? क्योंकि वह ऊपर के गुणस्थान में जा रहा है न, इसलिये उसको भद्र कहा। तो कह रहे हैं मिथ्यादृष्टि जीव **मिथ्यात्व गुणस्थान से अविरतसम्यक्त्व** में यानी चौथे **गुणस्थान में जा सकते हैं।** अब पांचवां पॉइंट - **कोई सादि मिथ्यादृष्टि द्रव्यलिंगी मुनिराज, द्रव्यलिंगी श्रावक अथवा भद्र मिथ्यादृष्टि हो तो वह मिथ्यात्व गुणस्थान से तीसरे/ मिश्र गुणस्थान में प्रवेश कर सकते हैं।** यह बाकी सब बातें छोड़कर जो सादि मिथ्यादृष्टि जीव हैं वे पहले गुणस्थान से तीसरे गुणस्थान में जा सकते हैं, इतना ही ध्यान रखना है। अभी उन्होंने जो लंबा-लंबा बताया कि सादि मिथ्यादृष्टि, द्रव्यलिंगी मुनिराज या मिथ्यादृष्टि श्रावक अथवा भद्र मिथ्यादृष्टि वगैरह-वगैरह। यह उन्होंने बहुत विशेषण बताये हैं, उसको हम थोड़ासा गौण कर देते हैं। वह गलत है ऐसा नहीं है, लेकिन ध्यान में रखने के लिये कभी-कभी प्रॉब्लेमॅटिक हो जाता है। तो इतना ध्यान रखो कि सादि मिथ्यादृष्टि जीव।

अब, अभी पेज नंबर ८१ पर हम आयेंगे। वहां क्या बता रहे हैं ? देखो, **प्रश्न** क्रमांक **१५** जो है **ऐसे द्रव्यलिंगी मुनिराज के साथ सच्चे श्रावक को कैसा व्यवहार रखना चाहिये ?** क्योंकि सबके मन का यही प्रश्न है। **यदि अट्ठाईस मूलगुणों का आचरण आगम के अनुकूल हो, तो द्रव्यलिंगी मुनिराज के लिये क्षायिक सम्यग्दृष्टि तथा पंचम गुणस्थानवर्ती श्रावक।** हमारी तुम्हारी बात छोड़ो, किसकी बात ली है ? कि शायद सम्यग्दृष्टि जीव है और वह भी कैसा ? पंचम गुणस्थानवर्ती श्रावक भी होगा तो भी वह क्या करेगा ? **नमस्कार आदि, विनय व्यवहार तथा आहारदान आदि क्रियायें हार्दिक परिणामों से करे।** हार्दिक परिणामों से यानी मन से, मनःपूर्वक **क्योंकि नमस्कार आदि व्यवहार है और मुनिराज का व्रत पालन भी व्यवहार है।** तो जो मुनिराज हैं उनका निश्चय क्या है ? स्वरूप में लीनता और वह जो श्रावक है उसका निश्चय क्या है ? वह भी स्वरूप में लीनता। लेकिन दोनों ही - एक तो आहार के लिये आये हैं। वे तो निश्चितरूप से उस समय तो सातवें में नहीं है। बीच-बीच

में सातवें में जाये वह बात जुदी है। निकले हैं तो कुछ भाव लेकर निकले हैं न ! तो वह और उनका कोई आदर-सत्कार करनेवाला वह भी व्यवहार है और यह भी व्यवहार है। इसलिये वैसा करने में कोई प्रॉब्लेम नहीं है।

अब क्या कहते हैं **सूक्ष्म अंतरंग परिणामों का पता लग भी नहीं सकता।** यह सूक्ष्म अंतरंग परिणाम यानी कौनसे ? दिलीपभाई आप बतायेंगे ? *श्रोता: राग, मोह।* राग-मोह, आप क्या कह रही है यहां पर कोई ? हां जी ? अरे जरा जोर से तो बोलो, इतना आहिस्ते बोलते हो तो कुछ समझ में ही नहीं आता है। *श्रोता: शुद्धोपयोग।* हां यह कह रहे हैं अंतरंग सूक्ष्म परिणाम यानी यहां जो शुद्धोपयोग चल रहा है, किसकी बात चल रही है ? मुनिराजों की। तो सूक्ष्म अंतरंग परिणामों का पता नहीं लग सकता **क्योंकि वे तो केवलज्ञानगम्य ही होते हैं।** यानी वह अंतरंग में स्वरूप में स्थिरतारूप जो परिणाम चल रहे हैं, वह तो सिर्फ केवली ही जानेंगे। यह आपके-हमारे बस की बात नहीं है यहां यह समझा रहे हैं। **व्यवहारी जनों के लिये द्रव्यलिंगी भी पूज्य है।** यह किसके आधार पर लिखा है ? **योगसार-प्राभृत अध्याय ५, श्लोक २४६। मोक्षमार्गप्रकाशक पेज नंबर २८३ और २८४।** इसमें यही बात लिखी है, दो पेज लिखे हैं न २८३, २८४ तो उसमें यह बात आयी है। अभी यह तो जो हमारे मन में प्रश्न उठता है, उसका यहां निराकरण करने की कोशिश की है।

जो हमने मौखिकरूप से आपको बताया ही था, वह यहां पढ़कर भी बताया। यानी क्या होता है, यह सत्य बात है हो। पहले में पहले हमने कई जगह देखा है, लिखा रहता है 'कि यहां सोनगढ से और जयपुर से प्रकाशित पुस्तकें वाचना, पढ़ना, रखना मना है।' अब ये पुस्तकें पढ़ो तो सही क्या लिखा है ? कौनसा ऑब्जेक्शन है इसमें ? कौनसे मुनिराजों की अवहेलना की है ? अनादर किया है ? अवर्णवाद किया है ? यहां तो लिखते हैं द्रव्यलिंगी का भी आप आदर, सत्कार से विनय करो। क्या करें ? कुछ मन में ऐसा; मन में तो छोड़ो, हमने काला चश्मा पहना है तो हमको दुनिया काली ही दिखेगी, पीला चश्मा पहना है तो पीली ही दिखेगी। ख्याल में आया ? वैसे हमने एक बार कहीं सुन लिया, सोच लिया, तो सब जगह वही बात चल रही है। पहले सुनो, समझों तो सही, क्या बात हो रही है और किसतरह से हो रही है।

अब आगे बढ़ते हैं। आगमन की अपेक्षा बात कर रहे हैं। तो यह भी हमने

आगमन देखा था, **प्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती**। यानी कौनसे गुणस्थान में है ? हां जी ? *श्रोता: छठे गुणस्थान में।* छठे गुणस्थान में, तो **भावलिंगी संत भी अनादिकालीन कुसंस्कारों के पुनः प्रगट होने पर विपरीत पुरुषार्थ से निज शुद्धात्मा का अवलम्बन छूटने से तथा निमित्तरूप में यथायोग्य कर्मों का उदय आने से सीधे मिथ्यात्व गुणस्थान में आ सकते हैं।** यहां एक विशेष शब्द है - सीधे। हमने अंग्रेजी में उसको डायरेक्ट बताया और क्या है। हमारी हिन्दी उतनी कमजोर है कि यह सीधा शब्द मुझे याद नहीं आया। अब क्या कहते हैं ? **पंचम गुणस्थानवर्ती विरताविरत श्रावक** यानी देशविरत श्रावक अथवा **पंचम गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनिराज भी अपने हीन पुरुषार्थरूप अपराध से तथा उसी समय निमित्तरूप में यथायोग्य कर्मों के उदय से सीधे मिथ्यात्व गुणस्थान में आ सकते हैं। क्षायिक सम्यग्दृष्टि को छोड़कर अन्य दोनों- औपशमिक तथा क्षायोपशमिक अविरत सम्यग्दृष्टि जीव के जब श्रद्धा में विपरीतता आती है तथा उसी समय मिथ्यात्व का उदय आने पर, वे जीव सीधे मिथ्यात्व गुणस्थान में आ सकते हैं।** यानी अभी तक हमने छठे गुणस्थानवर्ती, पंचम गुणस्थानवर्ती और चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीवों की बात देखी।

आगे कहते हैं **मिश्र गुणस्थानवर्ती भी मिथ्यात्व में आ सकते हैं।** यह मिश्र गुणस्थान कौनसा है ? *श्रोता: तीसरा।* तीसरा, अब आगे कहते हैं, **सासादनसम्यग्दृष्टि तो मिथ्यात्व गुणस्थान में आते ही हैं।** अब उसकी क्यों ऐसी बात है वह कल सुबह लेंगे, क्योंकि अभी मिथ्यात्व गुणस्थान पूरा हो गया है। सोलहवां प्रश्न- **मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती साधक किस साधना द्वारा अविरतसम्यक्त्व आदि उपरिम गुणस्थान को प्राप्त करते हैं ?** उनको ऊपर जाने का रास्ता क्या है, मेथड-विधि क्या है ? तो बता रहे हैं कि **मिथ्यादृष्टि जीव स्व-पर भेदविज्ञानपूर्वक अपने त्रिकाली निज शुद्धात्मा के आश्रयरूप महान अपूर्व पुरुषार्थ से दर्शनमोहादि कर्मों का भी अभाव होने से सम्यग्दर्शनादि प्राप्त कर लेते हैं।** वहां निमित्त भी बताया और मूल कारण भी बताया। कौनसा ? कि स्व-पर भेदज्ञानपूर्वक; क्या किया उन्होंने ? अपने त्रिकाली शुद्धात्मा का आश्रय लिया। अपने त्रिकाली शुद्धात्मा का आश्रय लेना यही महान पुरुषार्थ है, कहते हैं, अपूर्व पुरुषार्थ है। उससे क्या हुआ ? दर्शनमोह आदि कर्म हैं, उनका भी अभाव हुआ। वह सम्यग्दर्शन आदि प्राप्त कर लेते हैं। **इस प्रकार मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती श्रावक उपरिम गुणस्थान को प्राप्त करते हैं।**

आगे बढ़ते हैं। देखो पेज नंबर ८३ पर **विशेष अपेक्षा** से बात है। **एकेन्द्रिय से असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यंत तिर्यंच तथा** लब्धिअपर्याप्त यानी **लब्ध्यपर्याप्त सम्मूर्च्छन मनुष्य जीव मिथ्यादृष्टि ही होते हैं।** अब क्या कहना चाहते हैं ? हम थोड़ासा देखेंगे। यहां बताते हैं एकेन्द्रिय कोई भी जीव होगा; कोई भी यानी क्या ? जो सूक्ष्म है, बादर है, जो पर्याप्त है, अपर्याप्त है ऐसा एकेन्द्रिय जीव। कौन-कौनसे ? वनस्पतिकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और पृथ्वीकायिक, ये सारे एकेन्द्रिय जीव और आगे क्या बता रहे हैं ? दो इन्द्रिय जीव, तीन इन्द्रिय जीव, चतुरिन्द्रिय जीव और असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव, ये नियम से उस पर्याय में मिथ्यात्वी ही हैं। क्या कहा ? एक और बात आगे बतायी है। यह मनुष्य जीव जो होता है न मनुष्य, वह नियम से संज्ञी पंचेन्द्रिय है और वह संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव लब्धिअपर्याप्त भी हो सकता है। यानी क्या कहा ? लब्धिअपर्याप्त की क्या विशेषता है ? आप जानते हैं ? उसकी आयु कितनी होती है ? लब्धिअपर्याप्त मनुष्य की आयु कितनी होती है ऐसा मेरा प्रश्न है ? हां, किसीने बोला है, एक श्वास में अठ-दस बार। यह तो हमने किसके बारे में सुना ? वह निगोदिया जीव।

अरे निगोदिया नहीं, जो लब्धिअपर्याप्त जीव है, यानी जिसकी छह पर्याप्ति में से एक भी पर्याप्ति पूरी नहीं होती है ऐसा जीव कौन ? मनुष्य। एक श्वास में अठारह बार जन्म-मरण, जन्म-मरण करता है। यह एक श्वास यानी क्या है, समझती है आप ? बोलो-बोलो। *श्रीता: श्वास।* मुझे यही मालूम था। यह श्वास नहीं क्योंकि किसीको सर्दी हो जाये तो उसका श्वास रुक जाये, उसको आगम में श्वास नहीं कहते। एक श्वास यानी क्या है ? देखो जो बिलकुल अठारह साल का नौजवान लड़का होवे और बिलकुल निरोगी होवे उसकी जो पल्स रेट रहती है न, ठक, ठक, ठक; तो ये जो दो ठक का बीच में का काल है उसको श्वास कहते हैं। तो उस ठक-ठक में जितना अंतर है उसमें १८ बार जन्म और मरण करता है। ख्याल में आया ? हमने तो छहढ़ाला में पढ़ा है न कि उसमें तो निगोदिया ही एक श्वास में अठारह बार जन्म-मरण करता है, ऐसी हमने कल्पना कर ली है। लेकिन जब हम जीवसमास को पढ़ते हैं, वहां चौदह जीवसमास कहे हैं। उसमें से सात तो लब्धिअपर्याप्त हैं और सात पर्याप्त हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

७. मिथ्यात्व गुणस्थान में रहने के कारण

कल तक हमने मिथ्यात्व गुणस्थान के बारे में जानने की कोशिश की और मिथ्यात्व के कारण जीव अनादिकाल से इस विश्व में कैसा भटक रहा है, उसको भी देखने की थोड़ी बहुत कोशिश की। एक बात तो हमें बिलकुल ध्यान में रखनी चाहिये कि कल हमने देखा था; मिथ्यात्व गुणस्थान में कौन हो सकता है, नियमरूप से कौन-कौन मिथ्यात्व में होगा ? क्योंकि हमने देखा है कि जीव तो चारों गति में पाये जाते हैं और इन चारों गति में से कौन-कौनसे से गति के जीव मिथ्यात्व में हो सकते हैं ? तो चारों गति में मिथ्यात्वी हो सकते हैं, पहली बात तो यह है और उनमें से एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय नियमरूप से मिथ्यात्व में रहनेवाले जीव हैं। ये तो उसमें और एक बात आप ॲड कर सकते हो और वह बात यह है कि मनुष्यपर्याय का जीव जो है, कौनसा ? लब्धिअपर्याप्तवाला, वह नियम से मिथ्यादृष्टि ही होगा। ख्याल में आया ? तो यह बात तो हमने कल देखी थी। उसके साथ-साथ और एक बात है, जिनके सात तत्त्वों के बारे में अयथार्थ श्रद्धान है यानी जैसे जिनेन्द्र भगवान ने सात तत्त्व बताये हैं, उन सात तत्त्वों से विपरीत मान्यता रखनेवाले जीव मिथ्यादृष्टि हैं।

देखो अभी गांव का नाम नहीं बताऊंगा, वहां यह गुणस्थान का विषय निकला। तो उनसे पूछा गया कि भाई आप समझ लेना कि आप कौनसे गुणस्थान में हो। तो वहां के लोगों ने यह बताया कि हम तो चौथे गुणस्थान में हैं साहब। चौथे गुणस्थान में ? हां-हां बिलकुल। किसतरह आप बता सकते हैं ? अरे साहब क्या बात करते हो ! देखो हम जैन कुल में जन्मे हैं, जिनेन्द्र भगवान पर हमारा पूरा-पूरा श्रद्धान है, तो हमारे सम्यग्दर्शन तो हो गया। अब हम शास्त्र पढ़ रहे हैं तो कुछ ही दिनों में सम्यग्ज्ञान भी हमारा हो जायेगा। फिर क्या रह गया ? थोड़ासा आचरण बाकी है और वह भी हमने कर लिया है। रात को खाना नहीं खाते और कंदमूल आदि का हमें त्याग है, तो हम तो सम्यग्दृष्टि ही हैं। क्या बात है ! तो क्या यह श्रद्धान सही श्रद्धान है ?

पहले तो हम यह नक्की करते हैं कि क्या किसीका सात तत्त्वों संबंधी श्रद्धान यथार्थ है या नहीं ? कहते हैं कि देखो-देखो, सम्यग्दर्शन होने के पहले उस जीव को तो शुद्धोपयोग है नहीं। तो तब तक वह क्या करें ? शुभोपयोग करना ही चाहिये न। क्या कहा ? शुभोपयोग करना ही चाहिये न। इसका अर्थ क्या हो गया ? कि मैं शुभ और

अशुभ उपयोग कर सकता हूं। यह जो कर सकतावाली बात है यानी वह उसका कर्ता बनना चाहता है, तो कोई किसीका कर्ता हो तो वह अनादि से अनंतकाल तक उसका कर्ता होगा। जिसका जो स्वभाव नहीं है वह उसे कर ही नहीं सकता है। अगर हम ऐसा मानते हैं; साहब आप क्या बात करते हो ? हमने नक्की किया कि देवलाली में शिबिर होने जा रहा है। तो हमने सारे घर-बार को अलग करके, उनके प्रति अधिक रुचि न रखते हुये हम यहां आये। हमने डिसाइड किया तभी तो यह शुभराग हुआ कि नहीं ?

भाई, तो हम ऐसा मानते हैं कि शुभराग करना मेरे हाथ की बात है। अगर शुभराग करना यह तेरा स्वभावभाव ठहरेगा तो तू जैसा है वैसा अन्य जीव भी होंगे, तो आज तक कोई भी वीतराग नहीं हो पाता। क्योंकि राग-द्वेष के जो परिणाम हैं, हम मोह को यहां बीच में नहीं ले रहे हैं। राग-द्वेष के परिणाम हैं वह अगर मेरा स्वभावभाव हो जाये, तो मैं कभी वीतराग हो नहीं सकता और आज तक अनंत जीव तो सिद्ध बने हैं। तो जो सिद्ध बने वे सर्वज्ञ हैं कि नहीं ? सर्वज्ञ होने के लिये पहले वीतराग बनने की आवश्यकता है कि नहीं ? ख्याल में आया ? यहां बारंबार कह रहे हैं, राग-द्वेष यह तो चारित्र गुण की विभाव पर्याय है और विभाव पर्याय करना अगर जीव का स्वभाव हो जावे, तो एक भी जीव आज तक सिद्ध नहीं होता। यानी हमारी यह मान्यता कि शुभभाव करना चाहिये क्या नहीं, इसका अर्थ क्या है कि मैं कर सकता हूं। ख्याल में आया ? तो बात तो यह है कि यह तो विभाव भाव है।

देखो, देखो यह हमारा जो भोजनालय है न, उससे मैं भिन्न हूं कि नहीं ? जो अत्यंत भिन्न परपदार्थ है, जो हमारा ताजमहल है, बम्बई का राजाभाई टॉवर है, वह और मैं एक हूं ऐसा कोई मानता होगा कि नहीं ? ख्याल में आया ? वह तो अत्यंत भिन्न परपदार्थ है, लेकिन एक क्षेत्र में रहनेवाला यह जो शरीर है, उस शरीर से भी मैं जुदा हूं। यह शरीर, यह पुद्गल परमाणुओं का पिंड, अभी उसमें शरीर, मन, वाणी सब लेना, यह कार्माणशरीर है उसको भी लेना। उसको हम बाद में देखेंगे। यहां तो शरीर, मन, वाणीरूप जो पुद्गल परमाणु हैं, जिस क्षेत्र में आत्मा के प्रदेश हैं, उसी क्षेत्र में वे हैं। फिर भी वे मेरे से जुदे हैं, मैं उनसे भिन्न हूं। क्यों ? क्योंकि उनमें और मेरे में अत्यंत अभाव है। बात तो यह हो गयी कि इनसे मैं जुदा हूं, यह बात जब निश्चित हो जाती है तब और अंदर आते हैं। अंदर आते हैं तो यह कार्माणशरीर जो है या कर्म है वह भी पुद्गल है, उससे भी मैं जुदा हूं यह बात नक्की हो जाती है। उसके बाद और नजदीक आवे, तो

मेरे में उठनेवाले जो राग-द्वेष के परिणाम हैं वे मेरे द्रव्य में उत्पन्न हो रहे हैं।

वैसे कायदे से देखा जाये तो वह मेरी ही परिणति है। फिर भी वह मेरे स्वभाव के अनुरूप नहीं है; स्वभावरूप नहीं है, वह तो विभाव है और विभाव और स्वभाव कभी एक नहीं हो सकते। इसलिये ये राग-द्वेष के परिणाम हैं, उनसे भी मैं जुदा हूं यह बात नक्की हो जाती है। इनसे मैं जुदा हूं, यहां तो क्षेत्र से जुदापन नहीं है, स्वभाव से जुदापन है। ये राग-द्वेष के परिणाम तो स्वभाव से विपरीत भाव हैं, उनसे मैं जुदा हूं। ऐसी जब इस जीव की परिणति हो जाती है, ऐसी जब अंडरस्टँडिंग हो जाती है, ऐसा जब श्रद्धान हो जाता है कि इन सबसे मैं जुदा हूं। तो तू है कौन ? सबसे जुदा है, जुदा है, तो तू है कौन ? तो मैं तो ज्ञान-दर्शन स्वभावी हूं, ज्ञानस्वरूप हूं, ज्ञान का पिंड हूं और ज्ञान जैसे अनंत गुणों का भंडार हूं। ऐसे जब अपने स्वरूप का ख्याल आ जायेगा, तब उसको कहते हैं कि साथ-साथ में सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का भी श्रद्धान हो जाता है।

नहीं, नहीं हम तो तीर्थंकर को ही मानते हैं साहब, हम किसी दूसरे के सामने झुकते भी नहीं हैं। हमारे उनके ऊपर पूरा भरोसा है। अच्छा ! अच्छा ! अभी कौनसा स्वाध्याय चल रहा है आपका ? हम उनसे पूछें। क्या स्वाध्याय की बात करते हो ? यहां तो स्वास्थ्य ही ठीक नहीं है। अरे जिसको खाने को मिले रोटी, वही धर्म की बात करे ? अरे हाथ पर मेरा पेट है, पैसा नहीं कमाऊंगा तो खाऊंगा क्या ? अरे तू तो सम्यग्दृष्टि है न प्रभु और तूने शरीर को मैं हूं ऐसा माना। स्वास्थ्य ठीक नहीं है। किसका ?

देखो मुझे बहुत अच्छी तरह उनकी बात याद आती है और आप सब उनसे परिचित हैं। यह बुलंदशहरवाले पंडित कैलाशचंदजी। आज ऐसा दुर्भाग्य आ गया है कि उनकी पहचान हमें उनके बेटे से करवानी पड़ती है - जो हमारे पवनकुमारजी हैं मङ्गलायतन के सर्वेसर्वा आज की तारीख में - उनके पिताजी जिनसे हमने यह सिद्धान्त प्रवेशिका सीखी है। यह तो हमारा सौभाग्य था कि यह हमारे काका कौन ? नेमाकाका, नेमचंद रखियालवाले उनसे, यह कैलाशचंदजी बुलंदशहरवाले उनसे और चिमनभाई कामदार जो सोनगढ में थे, बाद में राजकोट में स्थायी हुये, उनसे सिद्धान्त प्रवेशिका तो हमने कम से कम तीन-तीन बार तो सीखी है। ख्याल में आया ?

तो वे कैलाशचंदजी बम्बई में पधारे थे। उन्होंने किसीसे पूछा क्यों साहब, आज सुबह आप प्रवचन में नहीं थे ? पंडितजी माफ करना। क्यों क्या बात है ? अरे आये

नहीं और माफ करना काहे के लिये ? क्यों नहीं आये ? थोड़ा काम था। अच्छा, थोड़े काम के लिये तू जिनवाणी को ठुकराता है ? वे दूसरे दिन किसीको बोले, भाई कल नहीं थे ? पंडितजी मुझे बुखार था। तुझे बुखार था ? नहीं-नहीं मेरे शरीर को बुखार था। तो क्या बोलना चाहिये उन्होंने ? 'तेरे बाप का शरीर'। वह बात मुझे आज तक याद है। यह इ.स. १९७६ में बात बनी थी। क्या बताया ? तेरे बाप का शरीर। इतना तो कठोर मैं नहीं बोलता हूं। ख्याल में आया न ? हमारे सौभाग्य से हमें जागृत करनेवाले ऐसे पंडित मिले कि तू शरीर से जुदा है। आजकल हम यहां बैठे-बैठे, सुनते-सुनते इतना बोलना तो सीख गये हैं कि शरीर से मैं भिन्न हूं। ख्याल में आया ? लेकिन राग से भिन्न हूं ऐसा कभी हो सकता है क्या ? जब तक सम्यग्दर्शन नहीं होता है, तब तक तो शुभभाव, नहीं तो क्या अशुभभाव करने हैं ? अशुभभाव करें हम ? हम नरक में जावे ? यानी अभी भी मैं राग-द्वेष के परिणाम का कर्ता हूं यह मान्यता नहीं छूट रही है और हमने डिक्लेअर कर दिया कि हम सम्यग्दृष्टि हैं।

तत्त्वों के बारे में हम बात करेंगे तो हमने आस्रवतत्त्व को संवरतत्त्व मानने की भूल की है और जब तक यह जीव सात तत्त्वों संबंधी विपरीत मान्यता करता है तब तक वह मिथ्यादृष्टि रहता है। सात तत्त्व कहो या उसमें देव- गुरु- शास्त्र सम्मिलित हैं। उसमें भी सात तत्त्वों में देव-गुरु-शास्त्र को बिठा सकते हैं या बैठे ही हैं वे तत्त्वों में। तो हमें सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का जहां स्वरूप पता नहीं है, वहां सम्यक्त्व होने का कोई चान्स नहीं है। यह तो कुन्दकुन्द आचार्य ने प्रवचनसार में गाथा ८० में कहा है।

जो जाणदि अरहंतं दव्वत्तगुणत्तपज्जयत्तेहिं।
सो जाणदि अप्पाणं मोहो खलु जादि तस्स लयं ॥ ८०॥

आपको सब याद है, मैं क्या बताऊं। यानी जो अरिहंत को द्रव्य से, गुण से और पर्याय से जानता है उसका मोह नष्ट होता है। मोह नष्ट होता है यानी क्या ? क्षायिक सम्यक्त्वी होता है। क्या कुन्दकुन्द आचार्य जानते नहीं थे कि इस पंचमकाल में किसीको क्षायिक सम्यक्त्व नहीं होता है ? उन्होंने लिखकर रखा है। परंपरा से वह क्षायिक सम्यग्दृष्टि होंगे ऐसी बात है। भाई जो लिखा है न, हम तो पढ़ डालते हैं। लेकिन वहां जो आचार्यों का अभिप्राय है, उस अभिप्राय को पहचाने तो अपने को स्वयं पर गर्व आता है। लोग बोलते हैं गर्व से कहो हम फलां-फलां हैं। अरे तू गर्व से कह कि मैं जीव

हूं ! वह तो मानने को ही तैयार नहीं है कि मैं जीव हूं।

देखो जो अभी सच्चे देव को नहीं मानता है, कुदेव को देव मानता है। आपको मालूम है भाई एक कुदेव भी होते हैं और एक अदेव भी होते हैं। आप जानती हैं अदेव किसको कहना बहन ? कुदेव और अदेव ? हां बोलो, *श्रोता: नदी है, पेड़ हैं ये सब अदेव हैं।* अच्छा-अच्छा ! आपका यह कहना है, कि जिनमें देवत्व नहीं है, देवत्व तो कुदेव में भी नहीं है और अदेव में भी नहीं है, यह पहले नक्की करते हैं। क्योंकि देव के लक्षण क्या हैं ? कि वह तो पहले में पहले वीतरागी होने चाहिये और सर्वज्ञ होने चाहिये। कुछ और होने चाहिये क्या ? *श्रोता: हितोपदेशी।* हमारे अन्य अरिहंत हैं, सिद्ध हैं, वे हित का उपदेश देते हैं ? *श्रोता: हितोपदेशी, सर्वज्ञ और वीतरागी।* मैं वही कह रहा हूं सारे अरिहंत हितोपदेशी हैं क्या ? मूक केवली परमात्मा हैं कि नहीं ? सिद्ध भगवान देव हैं कि नहीं ? वे कौनसा उपदेश दे रहे हैं ? आप जो यह हितोपदेशी लक्षण बता रहे हैं न, यह हितोपदेशी जो लक्षण है, वह तीर्थंकर की अपेक्षा से है।

हम थोड़ी-थोड़ी भूल करते हैं, उसमें कोई बहुत बड़ी भूल नहीं है। लेकिन हमें पता तो लगे कि हम देव का लक्षण कह रहे हैं, तो देव में तो सर्वज्ञता और वीतरागता होनी चाहिये। हां साहब ? हितोपदेशी भी है सिर्फ तीर्थंकरों की अपेक्षा से और शास्त्रों में भी जहां हितोपदेशी लक्षण बताया है वहां पाठ है तीर्थंकर का। देखो, यहां तो कहते हैं हम कभी-कभी भूल से कुगुरु को भी गुरु कह देते हैं और स्वयं को सम्यग्दृष्टि माने बैठे हैं। ऊपर से क्या कहते हैं, 'अपने को क्या करना हैं, उनके परिणाम उनके साथ। हम तो उनको सच्चे गुरु मानकर उनको नमस्कार करते हैं, सच्चे देव मानकर ही उनको नमस्कार करते हैं।' तो क्या यह सही है ? मुझे एक किस्सा याद आया, यह तो हमारे सिद्धान्त को पक्का कर रहे हैं हम।

देखो हम एक के पास गये। गांव का नाम या किसीका नाम नहीं बताऊंगा, क्यों, सुरेशभाई ? वे बोले कि देखो क्या करें साहब, हमें तो अड़ोस-पड़ोस का ख्याल रखना पड़ता है। उनसे हमारा रोज का पाला पड़ता है, भगवान को तो क्या ५ मिनट जाकर नमस्कार किया और बात खतम हो गयी। इनको तो २४ घंटे हमारे साथ में रहना है, उनको तो हमें खुश रखना ही पड़ता है। क्यों क्या बात है भाई, क्या हो गया तुमको ? देखो क्या होता है मालूम है ? अपने जब दसलक्षण के दिन होते हैं तब वहां

अन्य जगह पर गणपति की स्थापना होती है। घर-घर में लोग बुलाते हैं कि साहब आप हमारे यहां आना, हमारे यहां गणपति आये हैं। आप कम से कम दर्शन तो करके जाना। तो बहुत तकलीफ होती है, क्या करें। जावे क्या नहीं जावे ?

पर हम थोड़े ही कच्चे हैं, हम भी पक्के गुरु के चेले हैं। अच्छा ! गुरु का नाम तो बताओ। वह नहीं, पहले सुनो। हम क्या करते हैं ? हम तो वह जो कोई भी होगा उनके सामने जाकर खड़े होते हैं, आंख बंद कर देते हैं और 'णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं'। मैं जोर से बोल रहा हूं, वे मन में बोलते हैं। क्योंकि वे क्या बोलते हैं वह समझना चाहिये न। तो 'णमो अरिहंताणं' वगैरह-वगैरह बोलते हैं और फिर निकल आते हैं। मैंने कहा यह मायाचारी ठीक है क्या ? उसमें क्या मायाचारी है ? वह भी खुश, हम भी खुश। मैंने कहा बात तो सही है आपकी। अब मैं आपसे पूछता हूं, हमारे बम्बई में एक कपल यानी पति-पत्नी रहते थे। दोनों एक दूसरे को बहुत चाहते थे। ब्रह्मदेवजी, आपको भी बताता हूं, उसमें क्या है। आपका ही नाम लेकर बोलता हूं, बुरा नहीं मानोगे न। शाबाश, यह भाईसाहब बेंगलोर से आये हैं। तो क्या बात हुयी ? आपने पत्नी से कहा कि चलो हम जरा आज घूमने जाते हैं, छुट्टी का दिन है, इतवार का दिन है। हम लालबाग़, वहां लालबाग यानी बहुत अच्छी गार्डन है और वहां लोग अक्सर घूमने जाते हैं। तो पत्नी ने बोला नहीं मुझे अभी टाइम नहीं है, क्या है घर का काम बहुत है। तो आप चाहो तो जा सकते हैं। मैं बोलता हूं चल। नहीं, नहीं घर का काम है न, वह कौन करेगा ? तो वे गुस्से में आकर घूमने निकल गये।

तो जिसके लिये वह रुकी थी, वह प्लंबर-वलंबर कोई आनेवाला था, वह आया और उसने ५ मिनट में सब ठीक-ठाक कर दिया और वह चला गया। आधे घंटे में पत्नी का और भी काम निपट गया, उसको ऐसा लगा कि चलो, क्यों अपने पति को नाराज करे ? बोली चलो वे लालबाग गये हैं, हम भी जायेंगे, वह बगीचा है उधर। तो गयी और वहां देखा, क्या देखा ? अपना पति किसी अन्य स्त्री के साथ हाथ में हाथ लिये घूम रहा है। एकदम आगबबूली हो गयी। वापस आयी, आने तो दो घर पर, फिर दिखाती हूं। पति लौटकर आये, क्यों साहब ? यह आपको शोभा देता है ? क्यों, क्या हो गया ? क्या हो गया ? मैंने कौनसी गलती करी ? आप ऐसा-ऐसा घूम नहीं रहे थे ? हां घूम रहा था। मैं तो समझ रहा था कि मैं तो अपनी पत्नी के साथ ही घूम रहा हूं। पत्नी मानेगी कि नहीं ? वह णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं करे, सामने कौन है ? चलेगा कि नहीं ? अरे

लौकिक में जहां नहीं चलता है, अलौकिक में चलेगा ? ख्याल में आया ? अरे हम तो इतने होशियार हो गये कि भगवान को भी मायाचारी से डुबाना चाहते हैं। भगवान तो डूबनेवाले नहीं है, तुम स्वयं डूब रहे हो। ख्याल में आया ?

सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का स्वरूप हमें पता नहीं है। कोई भी सामने रखो, शास्त्र है। अरे पर वह वीतरागता का पोषण कर रहा है या सरागता का पोषण कर रहा है उसका तो ध्यान करो मेहरबान ! और मानते हो, मैं सम्यग्दृष्टि हूं ! जिसके सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का अता-पता नहीं है, जो सात तत्त्वों को यथार्थतया जानते तक नहीं हैं, ऐसे जीव अगर कहे कि मैं... तो मैंने पहले ही बताया था, हमने तो सम्यग्दर्शन प्राप्त करने की फाइल बंद कर दी। ऐसा होता है बहन और हमने कई गावों में यह देखा है। देखो, अभी बताता हूं, हमारे घर में रोज स्वाध्याय चलता है वहां एक बहन आती है। उसने कहा, कि हम क्या करें ? हम तो सीधे ही थे, हमको किसीने ऐसा उलटा उपदेश दिया इसलिये हम ऐसी गलतफहमी में हैं। तो क्या यह बात सच है कि किसीने उपदेश दिया इसलिये आप बिगड़ गये ? अरे आपका बिगड़ने का यानी अभी आपका सही मान्यता होने का समय ही नहीं आया था तो ऐसा निमित्त मिला और निमित्त तो कार्य में कुछ करता नहीं है। हमने माना कि हम तो साहब अच्छे थे, हम क्या करेंगे ? इन्होंने हमको ऐसा उलटा उपदेश दिया, तो हम बिगड़ गये। तो यहां कहते हैं कि अभी तेरे अर्धपुद्गलपरावर्तन का जो काल है वह बहुत दूर है। यानी समझ में नहीं आया ?

हमने यहां देखा कि जिसके मोक्ष जाने के पहले उसका अर्धपुद्गलपरावर्तन काल शेष रहता है तो उसके सम्यक्त्व होने के चान्सेस हैं अर्लिएस्ट। कल हमने देखा था न। उससे अधिक काल बाकी होगा तो वह मिथ्यात्व में घूमेगा और मानेगा कि निमित्त से हमें ऐसा हुआ। तो बोला, हमको ही ऐसा क्यों मिला ? मैंने कहा कि तेरे पाप का उदय चालू है। क्या बात करते हो ? अरे हमारे पास इतना पैसा है, हमारा बंगला है देवलाली में, गांधीभाई और पाप का उदय ? हां-हां पाप का उदय है। अभी आपने क्या कहा ? मेरे पास इतना पैसा है। वह क्यों है ? पुण्य के उदय के कारण। आपको जिनेन्द्र भगवान के, साक्षात् जिनेन्द्र भगवान के दर्शन नहीं हो रहे हैं। क्यों साहब ? अरे तेरे पाप का उदय है इसलिये साक्षात् तीर्थंकर तुझे दिखायी नहीं दे रहे हैं। जैसे कुन्दकुन्द आचार्य भी थे कि नहीं ? वह भी पंचमकाल का जीव था कि नहीं ? उन्होंने साक्षात् भगवान के दर्शन किये कि नहीं ? तो वह उनका पाप का उदय था कि पुण्य

का उदय यह तो नक्की करो। ख्याल में आया ?

हमें जो सत् शास्त्र मिला है, हम उसका वाचन करते हैं, समझते हैं, यह हमारे पुण्य का उदय है यह मानने को कोई तैयार नहीं है। देखो मैं जब बिगिनर था, यह अध्यात्म में शुरू-शुरू में आया था, सोनगढ जाता था। तो गुरुदेवश्री बोलते थे 'आ तो भाग्यवंतना काने आ वात पड़े।' मैं सोचता था यह अच्छा तरीका है साहब। काहे का ? यह अपने को मस्का लगा रहे हैं कि तू भाग्यवंत है और इसलिये तू यहां चिपका रहे। क्योंकि अपना दिमाग ही उलटा चलता था न उस समय। हम तो, जो कुछ दिखेगा, उसमें से ऐब निकालने की कोशिश करते थे। लेकिन उन्होंने एक-एक शब्द जो बोले हैं, वे इतने-इतने अर्थपूर्ण हैं, यथार्थ हैं और क्या बोलते हैं ? अमूल्य एक-एक बातें है। अनमोल बातें हैं एक-एक। यह तो जिसके महान पुण्य का उदय आया है उसको साक्षात् गुरु के दर्शन होंगे, साक्षात् भगवान के दर्शन होंगे और साक्षात् सत्यवाणी, जिनवाणी जिसको कहते हैं, उस जिनवाणी के भी दर्शन होंगे नहीं, वह पढ़ने मिलेंगे। उससे भी भाग्यवान होगा तो वह बात, वह मर्म उसके गले उतर जायेगा। उससे भी भाग्यवान होगा वह तो सम्यक्त्व की प्राप्ति करेगा।

लेकिन हमें इसमें कोई भाग्य की महिमा ही नहीं आती है। इस पुस्तक की कीमत कितनी है ? पंद्रह रुपए। अच्छा चलो ले लो। आपको चाहिये, आप भी ले लो, मेरेसे पैसा लेना। जैसे कि वह होटल में जाकर वड़ा खा रहे हैं। मुझे यह कहना है कि जिसके सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का यथार्थ श्रद्धान नहीं। तो हमको तो श्रद्धान है साहब। काहे का श्रद्धान ? हम तो उस गुरु को मानते हैं, इस देव को मानते हैं, बाकी किसीको नहीं मानते। वह श्रद्धान नहीं है। श्रद्धान तो मैं स्वयं ज्ञानस्वभावी हूं, मैं ज्ञान का पिंड हूं, ऐसा जब तक मैंने जाना तो है, लेकिन माना नहीं है तब तक तो वह श्रद्धान सही श्रद्धान नहीं है। जिसके अपने स्वभाव का, स्वरूप का श्रद्धान होता है, उसको नियम से सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का श्रद्धान होता ही होता है। रिव्हर्स भी ले लो चलेगा।

हमने कल यह बात देखी थी, क्या ? कि मिथ्यात्व किसे है ? नियमरूप से एकेन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक के जीवों को तो है ही, लब्धिअपर्याप्त मनुष्य हैं, उनको भी नियम से मिथ्यात्व है। यहां तक तो हम आये थे। आज जरा थोड़ीसी दूसरी बात करेंगे। बात यह है कि सम्यक्त्व किसको होता है और सम्यक्त्व होने की

पात्रता क्या है ? क्योंकि हमें तो सम्यक्त्व की प्राप्ति करनी है। कल तो हमने थोड़ीसी बात देखी थी, क्या ? कि जो सम्यक्त्वी होता है उसकी पात्रता में तीन बातें देखी थी। भाईसाहब याद है ? *श्रोता: भव्य होते हैं जीव।* यह कल हमने नहीं बोला था। *श्रोता: संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव।* बिलकुल नहीं। यह ऐसी ही बात है, हम केजी की बात पूछ रहे हैं और आप एमअे की बात बता रहे हैं। कोई बात नहीं, अच्छा है। आपको नॉलेज है हमें ख़ुशी है, लेकिन मैंने जो तीन बातें बतायी थी। रविकांतभाई ? *श्रोता: अन्याय, अनीति और अभक्ष्य का त्याग।* बहुत अच्छा ! यानी जो जीव अन्याय से नहीं रहता है, अनीति नहीं करता है, अभक्ष्य का सेवन नहीं करता है ऐसे जीव की पात्रता, काहे की है ? सम्यक्त्व प्राप्त करने की पात्रता है। यह कल बात बतायी थी न ! भूल गये आप। बारह घंटे हो गये न। उसके साथ-साथ जिनेन्द्र भगवान कथित जो सात तत्त्व हैं उसका यथार्थ श्रद्धान होता है और सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का भी यथार्थ श्रद्धान होता है।

देखो, अब यहां हम देखना चाहेंगे, क्या ? कि सम्यक्त्व किसको होता है और उसके लिये और कोई कंडिशन्स हैं क्या ? उसके पहले यह असंज्ञी जीवों तक के जीवों को सम्यक्त्व क्यों नहीं होता है ? ऐसा किसीके मन में प्रश्न उठना साहजिक है। तो वहां कह रहे हैं कि जिनके मन होता है, ऐसे मन सहित को संज्ञी कहेंगे। असंज्ञी यानी जिनके मन नहीं है ऐसे जीवों की बात है। तो जिनके मन नहीं है वे जीव कौन-कौनसे हैं, सुरेशभाई आप बतायेंगे ? *श्रोता: असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक के सभी हैं।* कहां से कहां तक है ? *श्रोता: एकेन्द्रिय से लेकर...* बहुत अच्छा है। एकेन्द्रिय से लेकर, एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव ये सारे के सारे असंज्ञी हैं। उनको तो सम्यग्दर्शन होगा ही नहीं। अभी कहते हैं कि संज्ञी को क्यों होता है ? संज्ञी के सम्यग्दर्शन होने का कारण जिनके मन है वे हित-अहित का विचार कर सकते हैं। यानी इसमें मेरा हित है या नहीं यह विचार-विवेक जो है वह तो संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव ही करता है। अभी बहुत मामूलीसा प्रश्न है, जरा ध्यान देना।

मैं महिलाओं से प्रश्न करूंगा और जिनको आता है, हाथ उठाये, बोले नहीं। क्योंकि मामूली प्रश्न है न। ये संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव कौन-कौनसी गतियों में पाये जाते हैं ? *श्रोता: चारों गतियों में।* चारों गतियों में ? कौन-कौनसी चारों गतियों में ? *श्रोता: देव, नरक, तिर्यंच, मनुष्य।* बहुत अच्छे ! चारों ही गति में संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव होते हैं। एक बात ध्यान रखना, मनुष्यपर्याय का जीव - पर्याप्त होवे या अपर्याप्त होवे, वह संज्ञी

पंचेन्द्रिय ही है। ख्याल में आया ? वैसे ही नरकगति का जीव और देवगति का जीव वह भी नियम से संज्ञी पंचेन्द्रिय ही होगा। लेकिन तिर्यंचगति में बहुत व्हरायटी है। उसमें संज्ञी पंचेन्द्रिय भी हैं और बाकी नीचेवाले एकेन्द्रियादि सब उसमें पाये जाते हैं।

अभी यहां कहते हैं कि जो जीव सम्यक्त्व प्राप्त करेगा उसको पहले में पहले आपने क्या बताया ? वह संज्ञी होना चाहिये। अब हम देखते हैं कि इनमें क्या-क्या बातें होती हैं और होनी चाहिये। देखो, बात तो ऐसी है सम्यक्त्व प्राप्त करने के लिये हमें जो उनकी पात्रता है, उस पात्रता का जब हम विचार करते हैं तो उसमें यह बात आती है कि वह तो भव्य होना चाहिये। यह भव्य और अभव्य की बात तो कल हमने की थी। तो मुझे यह पूछना है कि जो अभव्य जीव हैं, वे कौनसे कर्मों के कारण अभव्य हैं ? हां बहन आप बतायेंगी ? *श्रोता: नहीं मालूम।* नहीं मालूम, कोई बात नहीं। आप बतायेंगी बहन ? *श्रोता: मोक्ष की इच्छा नहीं है।* हां जी ? अच्छा मोक्ष की इच्छा ही नहीं है। तो वह इसलिये वह अभव्य है ? मोक्ष की इच्छा किसको होगी ? *श्रोता: भव्य को।* भव्य को और ऐसा कोई अन्य जीव होगा न जिसको इच्छा नहीं है करके ? कोई बात नहीं।

मैंने यह पूछा कौनसे कर्म के उदय के कारण जीव भव्य या अभव्य होता है ? यह मेरा प्रश्न है। हां, आप बोल रहे थे न साहब। *श्रोता: दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय।* हां, हां, दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय। हां साहब, क्या बोल रहे सुनाई नहीं दे रहा है कोई बात नहीं। हां, बोलो गांधीभाई ? *श्रोता: इसलिये कि कर्म का सद्भाव या अभाव की कोई अपेक्षा नहीं है।* बहुत अच्छा ! देखो, आपका यह कहना है कि वहां कर्मों का कोई लेना देना नहीं है। कर्म के कारण कोई भव्य होता हो या कर्म के कारण अभव्य होता हो ऐसा नहीं। क्योंकि हमने जो पांच भाव देखे हैं, उनमें से जो पारिणामिक भाव है और वह पारिणामिक भाव में तीन जो भेद किये - जीवत्व, भव्यत्व और अभव्यत्व। वह पर्यायगत योग्यता है उसकी। उसके कारण वह भव्य या अभव्य है। बहुत अच्छा, तो यहां कह रहे हैं कि भव्य होना चाहिये और क्या कहते हैं ? चारों ही गतियों में सम्यक्त्व उत्पन्न होता है। परंतु वह किसको होता है ? जो संज्ञी है उसको। अब मूल बात क्या कह रहे हैं कि वह जीव जिसके सम्यक्त्व होता है वह जागृत होना चाहिये, सावधान। अगर यहां कोई सोता हो तो उसको सम्यग्दर्शन नहीं होगा। क्यों ? जिसके सम्यक्त्व होगा, जागृत अवस्था में होगा, नींद में नहीं होगा।

हमको एक बार फोन आया था। बम्बई में तो दिनभर फोन ही फोन चलते हैं। भाईसाहब हमें एक आपसे प्रश्न पूछना है। क्या है साहब ? बोलो, बोलो। मुझे कल रात को जब मैं सोया था तब सपने में मुझे ऐसा लगा कि मुझे सम्यक्त्व हुआ। मुझे तो ऐसा फील हो गया, अभी मैं दूसरी भाषा में बोलता हूं कि एकदम प्रकाश-प्रकाश सा हो गया, मुझे हल्का-हल्कासा महसूस होने लगा। मुझे लगता है, मुझे सम्यक्त्व हुआ। आप ही बताना मुझे सम्यक्त्व हुआ कि नहीं ? अब क्या उत्तर देना ? अरे सम्यक्त्वी का तो नि:शंकित अंग होता है। मुझे हुआ कि नहीं वह दूसरे को पूछना नहीं पड़ता है। आपको भूख लगती है कि नहीं ? तो महसूस होता है या नहीं कि मुझे भूख लगी है ? या बाजूवाले को पूछना पड़ता है कि साहब मुझे भूख लगी है कि नहीं ? अभी खाना खाऊं कि नहीं खाऊं ? वह तो अनुभवगम्य बात है न। आपका सर दुख रहा है, पेट दुख रहा है, कोई बाहु दुख रही है तो दूसरे को पूछना पड़ता है ? अरे वह वेदन मुझे हो रहा है। तो यह आत्मा का वेदन जो है, अनुभवन है वह स्वयं को होगा या दूसरे को होगा ? वह तो दूसरे से कन्फर्म करा रहा है कि उसे सम्यग्दर्शन हुआ कि नहीं हुआ।

यह बात निश्चित है कि जब सम्यक्त्व प्राप्त होता है तब संक्लेश परिणाम नहीं होते। संक्लेश परिणाम नहीं होते यानी क्या ? मंद होते हैं - विशुद्ध होते हैं। मनुष्य और तिर्यंच की अपेक्षा से तो उनके शुभ लेश्या ही होनी चाहिये। क्या कहा मैंने ? मनुष्य और तिर्यंचगति के जो संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव हैं, उनके क्या कह रहे हैं ? शुभ परिणामों में ही होगा। तो यह क्या कंडिशन है कि शुभ परिणामों में ही होना चाहिये ? तो बोलते हैं नहीं। क्यों ? जो सातवें नरक का नारकी है उसके परिणाम कैसे होंगे ? शुभ होंगे या अशुभ होंगे ? लेश्या ले लो, उनकी शुभ लेश्या होती है या अशुभ लेश्या ? अशुभ लेश्या ही है। वहां तो कृष्ण लेश्या ही है, लेकिन उस कृष्ण लेश्या में भी तरतमता होती है। वहां अति तीव्र संक्लेश परिणाम से नरम पड़ जाये, तो उसको कहेंगे उसके विशुद्धि हुयी। वहां नरक में भी जीवों को सम्यक्त्व होता है। लेकिन हमने कंडिशन किसमें डाली ? कि यह लेश्या की अपेक्षा से बात कहो तो जो मनुष्यपर्याय का जीव है या तिर्यंचपर्याय का जीव है, उसको शुभ लेश्या में ही सम्यक्त्व होगा। आगे बात ऐसी करते हैं, वह जीव पर्याप्त होना चाहिये। क्या कहा ? यह कह रहे हैं कि जिसके सम्यक्त्व होता है वह नियम से पर्याप्त ही होना चाहिये। सम्यग्दर्शन होने के समय की बात है।

लेकिन अपर्याप्त अवस्था में सम्यक्त्व रहेगा क्या नहीं, यह मेरा प्रश्न है ? *श्रोता:*

नहीं। नहीं, मैंने क्या कहा ? अपर्याप्त अवस्था में सम्यक्त्व रहेगा कि नहीं रहेगा ? पहले तो आपने ना कहा और अभी आप हां कह रही हैं, कोई बात नहीं। देर से आये, दुरुस्त आये, बहुत अच्छा ! देखो-देखो जो कोई सम्यग्दृष्टि चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव है, सम्यक्त्व के साथ मरण करे और देवगति में जाये तो वहां उनके सम्यक्त्व रहेगा या नहीं, अपर्याप्त अवस्था में ? अब जो सर्वार्थसिद्धि का कोई जीव है, कोई तीर्थंकर प्रकृति बांध रहा है, तो वह यहां मनुष्यपर्याय में आ जाये, तो जब तक उनकी अपर्याप्त अवस्था है यानी पर्याप्ति पूर्ण नहीं हुयी हैं उस समय उनके सम्यक्त्व रहेगा कि नहीं ? ऐसा कोई मालूम है आपको जिनका सम्यक्त्व रहा ? मैं आपसे पूछ रहा हूं, ऐसा कोई जीव मालूम है आपके पहचानवाला, कोई मित्र कि जो सम्यक्त्व के साथ जन्मा, अपर्याप्त अवस्था में भी उसके सम्यक्त्व रहा ? *श्रोता: नहीं।* नहीं ? हमारे पहचान के बहुत हैं। देखो आपको समझना है, बहन आप बताना। हूं तमने पूछु छूं। अरे दरेक तीर्थंकर। *श्रोता: हां वह तो है।* हां वह तो है, वह तो है।*श्रोता: आप बोले कि पहचान के ?* तो पहचान के नहीं है ? अमिताभ बच्चन को पहचानती है कि नहीं ? शाहरुख़ खान को पहचानती है कि नहीं ? वह तुम्हे नहीं पहचाने जाने दो। यहां तो उलटी बात है। सारे तीर्थंकर जो अभी केवलज्ञानी हैं वे हमको अच्छी तरह से पहचानते हैं, रग -रग को जानते हैं। यह मेरी भाषा है।

देखो, सर्वार्थसिद्धि से जो जीव आयेगा और जो तीर्थंकर होने जा रहा है, ऐसा जीव सम्यक्त्व के साथ आयेगा कि नहीं? माता के पेट में वह बालक आयेगा तब वह अंतर्मुहूर्त तक अपर्याप्त अवस्था में होगा कि नहीं ? तो उस समय उनके सम्यक्त्व चालू रहेगा, अरे मति-श्रुत-अवधि तीन ज्ञान के धारी हैं वे और वे ज्ञान भी सारे सम्यक् हैं। हमको तो लगता है पहचानवाले यानी हमारे और मधुभाई की जैसी पहचान है। अरे वह पहचान थोड़ी है ? मैं आपसे पूछता हूं आप सोनिया गांधी को जानती हैं कि नहीं ? *श्रोता: नहीं।* नहीं जानती ? *श्रोता: ऐसे ही दूर से।* अरे जानती तो है कि नहीं ? नजदीक और दूर की बात कहां है। हम जानते हैं या नहीं यह पूछता हूं। अरे हम सबको जानते हैं। *श्रोता: तीर्थंकर को ?* हां, तीर्थंकर को भी जानते हैं। *श्रोता: दूर से कि नजदीक से ?* वह मालूम नहीं, उनको मालूम। देखो हमको मजाक-मजाक में तत्त्व को सीखना चाहते हैं। हंसी मजाक करना यानी किसीका उपहास करने की बात नहीं है। यह तो हमें पता लगना चाहिये कि सारे तीर्थंकर हैं, वे तो सम्यक्त्व के साथ ही जन्मते हैं। यानी

अपर्याप्त अवस्था में भी सम्यक्त्व रहता है यह अपनी बात है। अब हम आगे क्या कह रहे हैं कि अपर्याप्त अवस्था में सम्यक्त्व की उत्पत्ति नहीं होती है, यह मूल बात है। अपर्याप्त अवस्था में नहीं होगा। क्या ? नया सम्यग्दर्शन।

अब देखो, आगे कहते हैं, कि साकार उपयोगी होना चाहिये। यह साकार क्या होता है और निराकार क्या होता है ? इस बात को हम देखते हैं। यह साकार उपयोग यानी जानते हैं अनिलभाई आप ? उसमें नहीं लिखा है। साकार उपयोगी यानी क्या ? बोलो बहन। *श्रोता: ज्ञानोपयोग।* हां, ज्ञानोपयोग, उसको साकार क्यों कहा जाता है ? *श्रोता: वह सविकल्प होता है।* अच्छा, सविकल्प होता है यानी क्या ? यह देखो साकार और निराकार। यह ज्ञान गुण है न, वह हर समय परिणमता है। हर समय परिणमता है तो क्या करता है ? जानता है, जानता है, जानता है, हर समय जानता है। जानता है तो किसको जानता है ? टेबल को जानता है, तो ज्ञान टेबलाकार हो गया ऐसा कहने में आता है। ज्ञान माइक को जानता है तो ज्ञान माइकाकार हो गया है कहने में आता है। जिसको जानता है उस आकाररूप वह ज्ञान हुआ ऐसा कहने में आता है। लेकिन ज्ञान कभी ज्ञेयाकार हुआ ही नहीं है, ज्ञान तो ज्ञानाकार ही है। ख्याल में आया ? लेकिन क्या जान रहा है यह समझने के लिये और समझाने के लिये, वह ज्ञेयाकार हुआ यानी जिसको जान रहा है उस आकार हुआ ऐसा कहते हैं।

अभी यहां कोई बैठा हुआ है और वह क्या बोलते हैं ? सेंट लगाकर आया और हमें गंध आयी, वास आया तो हमारा ज्ञान सुगंधाकार हुआ। तो ज्ञान तो अरूपी है और गंध ? दिखता है ? तो रूपी कैसा बोलते हो ? कल नहीं थे न, इसलिये पूछ रहा हूं आपको। यह बात कल हुयी है। अरे वह पुद्गल है तो उसमें स्पर्श, रस, गंध, वर्ण सब हैं। हमारे ज्ञान में नहीं आवे तो क्या हो गया ? जो है सो है। ख्याल में आया ? आज तारीख कौनसी है साहब ? २२, अच्छा ! तो आज मई महीना है तो अप्रैल के २२ तारीख को आपने क्या खाया था साहब ? मेरे ज्ञान में नहीं है इसलिये खाया नहीं था ऐसा थोड़ी है ? वह नहीं बोल सकते कि मैंने उपवास किया था, मुझे मालूम है। मैं क्या कहता हूं ? हमारे ज्ञान में नहीं है, तो है ही नहीं ऐसा थोड़े ही होता है ? केवली ने जाना है, केवली ने बताया है और केवली भगवान बतायेंगे उसमें कतई झूठ नहीं हो सकता है, क्योंकि हर पुद्गल को स्पर्श, रस, गंध, वर्ण गुण होते ही होते हैं।

यहां बात यह हो रही है कि जो ज्ञान है वह अरूपी है और सुगंध या गंध जो कुछ है वह रूपी है, तो अरूपी रूपी बन जावे ऐसा तीन काल में नहीं हो सकता है। लेकिन ज्ञान में वह झलक रहा है तो कहेंगे कि वह सुगंधाकार हो गया या दुर्गंधाकार हो गया, जो कुछ है। लेकिन यहां जो कह रहे हैं कि यह साकार। तो साकार यानी आकार सहित लेकिन आकार का अर्थ शेप नहीं है। अभी उनको उन्होंने दूसरा शब्द बताया कि सविकल्प है। ज्ञान को सविकल्प भी कहने में आता है। कौनसे ज्ञान को ? केवलज्ञान को। और हमारे-तुम्हारे ज्ञान को ? हमें तो है ही है लेकिन केवली को भी जो ज्ञान है उसको भी सविकल्प कहते हैं और जो दर्शनोपयोग है वह निर्विकल्प है, उसको निराकार कहते हैं। सिद्ध कैसे हैं ? आकार सहित हैं या निराकार हैं ? *श्रोता: साकार हैं।* निराकार हैं या साकार हैं ? साकार, किस-किस अपेक्षा से साकार हैं ? देखो फ्रेंडशिप अपने घर में रखना भैया। अभी आप प्रॉम्प्टिंग करोगे, उनकी गलती सुधरेगी नहीं। गलती है ऐसा नहीं, लेकिन याद नहीं आ रहा है उनको। वे तो मेरे से अधिक जानते हैं। *श्रोता: ज्ञान ज्ञेयाकार है।* देखो यहां हमें नक्की करना है कि सिद्ध भगवान हैं वे निराकार हैं या साकार हैं ? तो आपने कहा साकार है, बराबर। *श्रोता: असंख्य प्रदेशी हैं इसलिये साकार हैं।* नहीं, नहीं, वह कारण नहीं है। हां सुमनबहन आप बतायेंगी ? उनको क्या बता रहे हैं, हमको बताओ न। हां निराकार हैं, किसने बताया ? बहुत अच्छा ! *श्रोता: साकार भी हैं और निराकार भी हैं।*

तो साकार किस अपेक्षा से, यही तो मैं पूछ रहा हूं ? देखो भैया हमें ऊपर की सब बातें मालूम हैं, लेकिन उसका मूल कारण क्या है ? वह जब तक मालूम नहीं है तो यह हमारा ज्ञान ऊपर-ऊपर हवा में उड़ जावे ऐसा है। अगर उसकी सही बात हमारे ज्ञान में रहेगी तो हमको नींद में से भी उठाओगे तो हम पट, पट, पट तोते जैसा बोल लेंगे। क्योंकि अनुभव नहीं हुआ है। हां क्या ? *श्रोता: यह साकार में बैठे हुये मोक्ष जाते हैं ?* एक मिनट, मुझे बोलने की पर्मिशन दिजिये, आप गलत बोल रहे हैं, माफ़ करना। देखो साकार इसलिये कहा जाता है कि प्रत्येक द्रव्य में प्रदेशत्व नाम का गुण है और प्रदेशत्व गुण बताता है कि जिस शक्ति के कारण प्रत्येक द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य होता है। अब उनका आकार कितना है ? तो आप कहो, असंख्यातप्रदेशी हैं, उसमें कोई गलत नहीं है। लेकिन वह क्यों है ? इसका तो पूरा क्रेडिट नेमाकाका को जाता है। उन्होंने ऐसा रट्टा मार-मार के यह बात हमको सिखायी है।

मुझे तो अभी भी बात याद है, ए दाढ़ीवाला, ऐसा बोलते थे मेरे को और यह हाथ ऐसा पकड़ते थे, ऐसा। हम उनके देखने और उनके हाव-भाव पर नजर नहीं रखते थे, वे जो कह रहे हैं दिल से कह रहे हैं, अंदर की बात कह रहे हैं - उन बातों को समझते थे। उनको निराकार क्यों कहते हैं ? नेमाकाका को नहीं हो, सिद्धों को ? कि जैसे उनके शरीर के निमित्त से पहले आकार था, वह रूपी आकार अब नहीं रहा है, इसलिये उनको निराकार कहेंगे। देखो यह शास्त्र में सब शब्द आते हैं और हम बिलकुल याद रखते हैं। हमको मालूम है लेकिन वह क्यों कहा सोचते नहीं हैं। देखो द्रव्यानुयोग ऐसा है कि आप क्वेश्चन करो, ऐसा क्यों ? तो उसका आपको उत्तर मिलेगा। लेकिन करणानुयोग में ऐसा क्यों ? तो वह तो अहेतुवाद आगम है। जिनेन्द्र भगवान ने जो बात बतायी है वह हमें शिरोधार्य है। हमें मानना ही है। उस क्यों का जवाब आपको नहीं मिलेगा। हर छह महीने और आठ समय में ६०८ जीव मोक्ष जाते हैं। क्यों ? अरे जाते हैं इसलिये ज्ञान में आया, वह बात आपको बतायी। ख्याल में आया ? क्यों ? क्यों का वहां कोई हेतु नहीं है। लेकिन द्रव्यानुयोग में हम सब बातों का विशिष्ट तरीके से निराकरण कर सकते हैं और कर लेना ही चाहिये। हम जिनेन्द्र भगवान को चॅलेंज नहीं कर रहे हैं कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का क्यों कुछ नहीं करता है। अरे वह क्यों नहीं करता है तो उसको १०१ कारण मिलेंगे आपको अगर आप आगम में देखेंगे तो। १०१ यानी ऐसा पर्टिक्युलर नहीं, अनेक कारण आपको मिलेंगे। ख्याल में आया ?

अब अपनी क्या बात हुयी थी ? वह सविकल्प और निर्विकल्प। है बराबर ? मैं भूला नहीं बहन, बाकी किसी बहन का नाम भूल जाऊंगा, भाइयों का नाम भूल जाऊंगा, मैं जानता हूं मेरी वह कमजोरी है, लेकिन जो पॉइंट चल रहा है उसको मैं नहीं भूलूंगा। सविकल्प का अर्थ भेद सहित जानते हैं। विकल्प के भी अनेक अर्थ होते हैं। विकल्प का अर्थ भेद भी है, निर्विकल्प का अर्थ अभेद भी है। यह जो दर्शनोपयोग है वह तो निर्विकल्प है, भेद रहित अवलोकन करे ऐसी उसमें कपॅसिटि है और जो केवलज्ञान है वह सविकल्प है। यानी अनंत द्रव्यों के, प्रत्येक द्रव्य के अनंतानंत गुण, और प्रत्येक द्रव्य के एक-एक गुण की तीन काल की पर्यायें। ऐसी अनंत-अनंत पर्यायें और एक-एक पर्याय में अनंत अविभागप्रतिच्छेद। ऐसे अनंत द्रव्यों के अनंतानंत गुणों की अनंतानंत पर्यायों के अनंतानंत अविभागप्रतिच्छेद जुदे-जुदे जाने, भेदरूप से जाने ऐसी कपॅसिटि केवलज्ञान में है। इसलिये उसको सविकल्प कहने में आता है।

विकल्प का एक अर्थ राग-द्वेष के परिणाम भी है। तमारामां शुं विकल्प चाले छे ऐसा हम बोलते हैं न। आपमें कौनसे विकल्प चल रहे हैं ? हम स्टेशन पर जाये रिझर्वेशन करने के लिये और पूछे भाई इस गाड़ी का टिकट नहीं है तो और कोई विकल्प है ? यानी इज देअर अेनि ऑल्टरनेटिव्ह ? यह विकल्प के भी अनेक अलग-अलग अर्थ हैं। तो यहां जो शास्त्र में बताया है, बहनजी ने बताया सविकल्प है, तो इस सविकल्प का अर्थ भी हमें मालूम होना चाहिये। साकार का भी अर्थ हमें ज्ञात होना चाहिये। आप शब्द से तो परिचित हैं, उसमें कोई आपको नयी बात बता रहा हूं ऐसी बात नहीं। लेकिन वह ऐसा क्यों कहा जा रहा है, वह बात अगर हमारे ज्ञान में आ जाये तो आनंद आता है। ऐसा मेरा स्वरूप है कि मैं भी केवलज्ञान प्राप्त कर सकूं ऐसा मैं जीव हूं, तो हमें पर की तरफ देखने की क्या आवश्यकता है ? अरे मैं स्वयं सिद्ध समान हूं ! जब हमें हमारे में ऐसी ताकत है, इतनी अनंत शक्तियों का मैं पिंड हूं, मालिक हूं और मैं मेरा कार्य करने में सक्षम हूं। मुझे पर की कोई रंच मात्र भी आवश्यकता नहीं है, ऐसा जब अपने स्वभाव का हमें गरूर आ जाये, माहात्म्य आ जाये तो हम पर की तरफ क्यों झाकेंगे, भीख मांगने के लिये ? अरे भाईसाहब ! हम गुजरात सोसायटी में रहते हैं। कई खावानुं होय तो आपो बहन ऐसा भिखारिन गुजराती में बोलती हैं। अभी आप हिंदी-मराठीवाले समझ जाना। कुछ खाने का बचा होगा तो हमको देना ऐसा बोलती हैं। वैसा हमें भीख मांगने की आवश्यकता नहीं है। तू अपनी तरफ मुड़, पूरी जिंदगी का वैभव, पूरे जग का वैभव तेरे हाथ में आयेगा। ख्याल में आया ?

हम जो सम्यक्त्व की प्राप्ति के लिये ट्राय कर रहे हैं, तो ट्राय करते समय मुझे कहां कॉन्संट्रेशन करना है ? कहां मुझे उपयोग लगाना है ? उसको भी तो जानना चाहिये न ! सच्चे देव-गुरु के भी पीछे लग जाओ तो राग होगा, वीतरागता नहीं आयेगी। यह नहीं कहना चाहता हूं कि उनको नमन मत करना, गलत अर्थ मत निकालना, यहां बहुत पंडित बैठे हैं। अरे यहां तो कह रहे हैं कि तू जब तक तेरा उपयोग पर में लगायेगा, तब तक तुझे सम्यग्दर्शन नहीं होगा और उसके आगे भी कहते हैं कि जब तेरा उपयोग पर में लगेगा तब तेरे में राग-द्वेष की उत्पत्ति हुये बिना रहेगी नहीं। सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के प्रति भी तेरा उपयोग है तो तेरा शुभभाव है और शुभभाव से शुभबंध होगा, निर्बंध अवस्था की प्राप्ति नहीं होगी, अबंध अवस्था की प्राप्ति नहीं होगी।

इसलिये कहां उपयोग लगाना है वह हम नक्की करेंगे, तो नॅचरलि मैं इससे

भिन्न हूं, उससे भिन्न हूं, उससे भिन्न हूं अनंत वस्तुओं से भिन्न हूं। अरे मैं उनसे भिन्न तो हूं, लेकिन मैं ऐसा हूं ऐसा अगर हमें पक्का निर्णय हो जाये तो ही सम्यग्दर्शन होगा। तत्त्व का निर्णय करना, ऐसा कहते हैं और तत्त्व का निर्णय क्या है ? मैं जीवतत्त्व हूं और मैं ऐसा स्वभावी हूं ऐसा जब मैंने माना है तो अनंत पर पदार्थों के प्रति मेरा जो लक्ष था, मेरा जो उपयोग चल रहा था, वह छूटे बिना रहेगा नहीं। ख्याल में आया ?

चौदह गुणस्थान के नाम कौन बतायेगा ? फटाफट बोलनेवाला चाहिये मुझे। हां बहुत अच्छा, अभी बोर्ड उतार दिया, मेरे को चिंता नहीं है। पुस्तक भी मत देखना। हां, बोलो बोलो, *श्रोता: मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अविरतसम्यक्त्व, देशविरत, प्रमत्तविरत, अप्रमत्तविरत, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय, उपशांतमोह, क्षीणमोह, सयोगकेवली और अयोगकेवली।* मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अविरतसम्यक्त्व, देशविरत, प्रमत्तविरत, अप्रमत्तविरत, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय, उपशांतमोह, क्षीणमोह, सयोगकेवली और अयोगकेवली। अभी सबको याद है न, अब मैं तो गर्व से कहूंगा कि यह हमारी बहन है वह भी उत्तम वक्ता है। अभी उनका आज पाप का उदय है तो वह नीचे बैठी है और मेरे पुण्य का उदय है तो मैं ऊपर बैठा हूं। चौदह नाम तो याद रखे हैं सबने और नहीं होंगे वे कर देंगे, उसमें कोई बात नहीं है।

अभी यह जो तत्त्वार्थसूत्र है वह हम सबको मान्य है कि नहीं ? *सभी श्रोता: है।* हां, है न, बहुत अच्छा। तत्त्वार्थसूत्र के आठवें अधिकार का पहला सूत्र कौनसा है ? हां, एक मिनट आप तो सब जानती हैं। बाकी लोगों को थोड़ासा चान्स देना, कविताबहन आप बतायेंगी ? अरे आप तो पूरा याद करती है हर पर्युषण में कि भूल गयी ? *श्रोता: सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः।* वह पहले अधिकार का पहला सूत्र है। कोई बात नहीं, कम से कम एक सूत्र तो बोला आपने। बहुत अच्छा है। हां, याद छे बहन तमने ? बोलो, घबराना मत। *श्रोता: मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगा बंधहेतवः।* देखो आपने यह फ़रमाया, बहन का बराबर अभ्यास है। मैं यह बताना चाहता हूं कि मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, योग ये पांच क्या हैं ? बंध के हेतु हैं कहो या बंध के कारण हैं। तो इसका और उसका कनेक्शन क्या है ? आप अभी चौदह गुणस्थान के नाम याद कराते हैं, कभी तत्त्वार्थसूत्र में घुसते हैं, कभी प्रवचनसार में। अरे क्या है क्या ? तो कहते हैं इसमें हम चौदह गुणस्थान लगायेंगे।

देखो, मिथ्यात्व यह क्या ? पहले गुणस्थान में है। मिथ्यात्व जो अपना गुणस्थान है उसमें, अविरति तो चौथे गुणस्थान तक है। चौथे गुणस्थान के आगे अविरति नहीं है। अब वह अविरति क्या होती है ? विरति क्या होती है ? यह बात हम आगे देखेंगे। अभी कम से कम बेसिक तो ले लो कि पहले गुणस्थान तक मिथ्यात्व होता है, चौथे गुणस्थान तक यानी पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे तक जीव अविरत रहता है। और प्रमाद ? पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पांचवें, छठे गुणस्थान तक प्रमाद है। और कषाय ? पहले से दसवें गुणस्थान तक कषाय है। और योग ? *श्रोता: तेरहवें।* चौदहवें, चौदहवें कि पन्द्रहवें कौनसे ? तेरहवें गुणस्थान तक यानी सयोगकेवली। योग सहित जीव पहले गुणस्थान से लेकर दूसरे, तीसरे, चौथे, पांचवें और जाओ आगे। कहां तक ? रुको, तेरहवें गुणस्थान तक। तो ये जो पांच बंध के हेतु हैं। ख्याल में आया ?

हम तो पहले में पहले क्या करना चाहते हैं ? इस शरीर को कृष करना चाहते हैं। शरीर को एकदम दुबला पतला करना चाहते हैं। क्यों साहब ? अरे उसके तुम लाड़ प्यार करोगे तो तुमको साथ नहीं देगा। अभी तुमको गलती से शरीर मिला है तो उससे सारा काम करवा लो। खाना पीना मत खिलाओ। जैसे हम नौकरों को करते हैं - आजकल नहीं, पहले के जमाने में। आजकल तो नौकर ही नहीं मिलता है। तो क्या ? कम खाना खिलाओ, अधिक काम कराओ। वह बेचारा खाना मिले जो मिले उसकी आशा में काम करे। वैसे यह शरीर मिला है उससे काम कराओ तुम। शरीर को कृष रखो। क्या तू शरीर का परिणमन कर सकता है ? यह तो पहले नक्की कर। वैसे ये जो बंध के हेतु हैं, उनको नष्ट करने का उपाय एक ही है और वह उपाय यह है कि हम अपने स्वरूप में गुप्त हो जाये, स्वरूप में समा जाये, स्थिर हो जाये, रममाण हो जाये। तो नॅचरलि आहिस्ते, आहिस्ते ये बंध के जो कारण हैं, वे नष्ट होंगे, होंगे और होंगे।

हम यह क्या चल रहा है, उसको बंद करने का उपाय क्या है ? गुणस्थान काहे को सीखना साहब ? हमें तो इन गुणस्थानों को छोड़कर जाना है न, फिर इनको जाने ही क्यों ? सबका यही प्रश्न है। यह गुणस्थान नहीं जानेंगे तो सम्यग्दर्शन नहीं होगा ? यह नारकी जीव गुणस्थानों के नाम जानते होंगे कि नहीं ? तिर्यंच को तो मालूम होगा न चौदहवां गुणस्थान कौनसा है ?

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

८. सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान

हमने पहला गुणस्थान जो मिथ्यात्व गुणस्थान है, उसमें रहने के कारणों की यहां चर्चा की है। वहां मुख्यतारूप से हमने देखा था कि जिसे सात तत्त्व संबंधी यथार्थ श्रद्धान नहीं है, सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के बारे में भी सही श्रद्धा नहीं है, जिसको स्व-पर भेदविज्ञान नहीं है, वह जीव निश्चितरूप से मिथ्यात्व गुणस्थान में ही है। हम यह जो जानकारी ले रहे हैं, वह तो हम स्वयं के लिये ले रहे हैं।

हमें ये जो क्रायटेरिया समझ में आ रहे हैं, उन्हें अपने पर अप्लाय करें और सोचे कि मैं कौनसे गुणस्थान में हूं। जिसको पता लग गया है कि मैं खुद स्वयं अपराध कर रहा हूं, तब उस अपराध से जुदा यानी अपराध से रहित होने का वह प्रयत्न करेगा। ऐसी ही मान्यता रहेगी कि यह अपराध ही नहीं है तो सुधरने का प्रश्न ही नहीं है। हमने देखा था कि मिथ्यात्व में यह जीव क्यों भटक रहा है और सम्यक्त्व प्राप्त करने के लिये कैसी पात्रता चाहिये, इसके बारे में भी थोड़ा बहुत देखने की कोशिश की है। अभी सम्यक्त्व प्राप्त होने के पूर्व में क्या-क्या बातें होती हैं उसका हम अभी विचार करेंगे।

एक बात निश्चितरूप से हमारे ध्यान में रहनी चाहिये कि अनादि से प्रत्येक जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में ही होता है और अपने पुरुषार्थ के द्वारा, पुरुषार्थ यानी क्या ? अपने स्वभाव में एकाग्रता करने के द्वारा अपने स्वभाव को पहचाने, जाने और वैसा ही मैं हूं ऐसा माने, तब वह अपने स्वरूप में एकाग्र होगा। उसीको हम कहते हैं कि स्वरूप में रममाण हो जायेगा, स्वभाव में स्थिरता करेगा। एक ही बात है सभी – 'स्व' अनुभव करेगा। उसके लिये कंडिशन्स तो हमने बहुत बार देखी हैं। स्वभाव में एकाग्रता करने के पहले क्या-क्या होता है वह बात हम देखने जा रहे हैं। पहले में पहले कोई भी जीव अनादि से मिथ्यात्व में ही है। अभी हम अपनी बात करेंगे। हो सकता है आप में से कई लोग सादि मिथ्यादृष्टि भी हो। लेकिन हम ऐसा कन्सिडर करते हैं कि जो अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि है, उसके प्रथम में प्रथम कोई सम्यक्त्व होगा तो वह नियम से औपशमिक सम्यक्त्व ही होगा - जिसको उपशम सम्यक्त्व भी कहते हैं, उसकी ही प्राप्ति कर सकता है। जो अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव है वह क्षयोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति पहली बार नहीं कर पायेगा, ना ही वह क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति करेगा।

देखो नियम तो इसतरह बहुत आसान हैं; जो अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव है वह नियम से औपशमिक सम्यक्त्व ही प्राप्त करेगा। बाद में वह सम्यक्त्व से नहीं ढ़लता है, नहीं गिरता है, तो सहजता से उसके क्षायोपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त होता है और क्षायोपशमिक सम्यक्त्वपूर्वक ही वह क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति कर सकता है। अभी जब यह जीव उपशम सम्यक्त्व प्राप्त करता है तो उसके पहले कौन-कौनसी बातें होती हैं उसको हम देखेंगे। यहां तो ऐसा कहने में आता है कि जो अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव है उसके पांच लब्धियां तो होती ही हैं जिसको शास्त्र में पंचलब्धि भी कहते हैं। अभी तो हमें यहां विस्तार से वह विषय लेना नहीं है क्योंकि वह तो अलग विषय है। लेकिन यहां उसको जानने की बिलकुल आवश्यकता है।

इन पांच लब्धियों में से पहली लब्धि तो क्षयोपशमलब्धि है। क्षयोपशमलब्धि यानी क्या ? ज्ञान का उघाड़। वह ज्ञान का उघाड़ कहां है ? उसका युटिलायझेशन होता है; कहां उसका उपयोग किया जाता है ? जिनेन्द्र भगवान कथित जो सात तत्त्व हैं या सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का स्वरूप जहां बताया गया है, उसमें अपना उपयोग लगाये, तत्त्व समझने की कोशिश करे तो उसको क्षयोपशमलब्धि कहेंगे और ज्ञान के उघाड़ को क्षयोपशम कहेंगे। तो जिसके क्षयोपशमलब्धि होती है और जो जिनेन्द्र भगवान की बात सुनने की कोशिश करता है, तब क्या होता है ? कि उसकी सहजता से विशुद्धिलब्धि नामक दूसरी लब्धि जो है यानी कषायों की मंदता हो जाती है। तो कषायों की मंदता होते ही इस जीव को जिनवाणी आदि समझने की, उसके बारे में सोचने की, या वह सुनूं, ऐसी प्रवृत्ति शुरू होती है। अगर कोई तीव्र कषायी होवे तो उसको तत्त्व का अभ्यास करने की इच्छा ही नहीं होगी।

देखो पहले में पहले तो हम इस बात को नक्की करते हैं कि पहली चार लब्धि एक साथ शुरू होती हैं यानी वह एक अंतर्मुहूर्त है। एक दफे लब्धि चालू हुयी तो उसका अधिक से अधिक रुकने का काल, एक-एक लब्धि का काल सिर्फ अंतर्मुहूर्त है। यानी हमने अभी शास्त्र स्वाध्याय किया तो हो सकता है कि हमारा क्षयोपशम यहां लगा है और हमारी कषायों की मंदता यानी विशुद्धिलब्धि भी हुयी है और हम यहां से बाहर गये फ्रेशअप होने के लिये। तो वह लब्धियां गायब हो गयी। ऐसा मत समझना कि क्षयोपशम हमारा इतना बड़ा है तो क्षयोपशमलब्धि मुझे, जब से मैं पैदा हुआ हूं, जैन कुल में जन्मा हूं, जैन शास्त्र वाचता हूं तो मेरी क्षयोपशमलब्धि शुरू है। ऐसा है

नहीं। क्षयोपशम है परंतु लब्धि ? ख्याल में आया ? अब कहते हैं जो जीव ऐसे मंद कषाय के साथ किसीकी देशना सुने।

वास्तव में देशना तो जिनेन्द्र भगवान की या उनकी वाणी के अनुसार जिन्होंने सम्यक्त्व प्राप्त किया है ऐसे ज्ञानियों की होती है। लेकिन हमारे इतने बड़े भाग्य कहां कि हमें साक्षात् तीर्थंकर की वाणी सुनने में आये। वैसा तो कहते हैं कि यह जीव समवशरण में तो अनंत बार होकर आया है। तो उसको देशना मिली कि नहीं ? हां बिलकुल मिली साहब, लेकिन देशनालब्धि चालू नहीं हुयी। क्या कहा ? तो देशना किसको कहेंगे और देशनालब्धि किसको कहेंगे ? जो जीव सम्यग्दृष्टि है यानी हम ऊपर से नीचे आते हैं। कहां से ? तो कह रहे हैं, जिनेन्द्र भगवान जो तीर्थंकर हैं, उनकी वाणी, गणधरों की वाणी, आचार्यों की वाणी, मुनियों की वाणी जो छठे-सातवें गुणस्थानवर्ती जीव हैं, उसके नीचे पंचम गुणस्थानवर्ती श्रावक की जो सम्यग्दृष्टि हैं ऐसे श्रावक की वाणी, उसके नीचे आ जाओ तो चौथे गुणस्थानवर्ती जो सम्यग्दृष्टि जीव हैं उनकी वाणी जो सात तत्त्वों के बारे में और सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के बारे में, छह द्रव्य के बारे में जो उपदेश होगा उसको देशना कहेंगे। जो सम्यग्दृष्टि है नहीं उनकी वाणी को देशना नहीं कहेंगे, ख्याल में आया ?

आजकल ऐसा रिवाज चल रहा है, यह तो क्या पंडित है, पंडित की बात सच्ची नहीं है। जिनेन्द्र भगवान ने चौथा और पांचवां गुणस्थान जो है वह किसका है कहा है ? मिथ्यात्वी का कि सम्यग्दृष्टियों का ? जिनेन्द्र भगवान ने उनको सम्यग्दृष्टि घोषित किया है, यह नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने उनको कहा है कि वे सम्यग्दृष्टि जीव हैं, तो क्या वे गलत बोलेंगे ? अगर जिनेन्द्र भगवान की वाणी के विरुद्ध बात करेंगे तो क्या उनका सम्यक्त्व टिकेगा ? देखो, देखो अभी बहुत अन्य-अन्य प्ररूपणायें चल रही है। अपने गलत मत के पोषण - अपने मत की बात आगे बढ़ाने के लिये। अरे भाई ! पहले में पहले हमें तो यह समझना है, यह करना है कि जिनेन्द्र भगवान ने जो बात बतायी है, क्या मेरी भी मान्यता उस अनुरूप है, क्या जुदी है ? जुदी है तो मैं खोटा हूं, जब तक मेरी मान्यता उनके अनुसार नहीं होती है, तब तक मुझे उनके अनुसार मान्यता करने का प्रयत्न करना चाहिये।

देखो हम छोटे थे न, इनसे छोटे थे। कितने उम्र के हो बेटा तुम ? ग्यारह। तो मैं

तो दस साल का था। तो हमारे स्कूल में क्या करते थे, वह गणित में कुछ उदाहरण समझाते थे और कहते थे उसके अनुसार यह देखो, यह पेज नंबर सो अँड सो, उसके ऊपर जो प्रश्न है, कल पांच गणित सॉल्व्ह करके आना। हम घर में जाते थे और गणित सॉल्व्ह करते थे। फिर पुस्तक के पीछे के भाग में उत्तर लिखा हुआ रहता था। आपने ऐसा ही सीखा है न ! कि तुम्हारे कैसा होता है ? पहले पेज पर होता है उत्तर, कि पिछले ? पिछले। तो हम उसको बहुत बार सॉल्व्ह करें और अपना उत्तर पुस्तक के समान नहीं आता हो, मान लो अपन बहुत आसान बात लेते हैं। ५ गुणा ५ बराबर ५० ? कितना ? *श्रोता: ट्वेंटी फाईव्ह।* ट्वेंटी फाईव्ह। अरे वाह ! मैं तो भूल गया आप इंग्लिस्तानी हो। कोई बात नहीं, बहुत अच्छी बात है। क्या कहा फाईव्ह मल्टिप्लाइड बाय फाईव्ह इज ईक्वल टू ट्वेंटी फाईव्ह और मेरा उत्तर आया ट्वेंटी फोर। एक बार सॉल्व्ह किया, दो बार सॉल्व्ह किया, ट्वेंटी फोर ही आ रहा है। तो मैंने क्या किया ? पुस्तक में ट्वेंटी फोर कर दिया। तो क्या मेरा उत्तर सही होगा ? आप भी ऐसा ही करते हो क्या ? नहीं, जाकर टीचर को पूछते हैं, मित्रों को पूछते हैं, सहाध्यायी हैं उनको पूछेंगे और अपनी कहां गलती है उसको हम सुधारेंगे।

लौकिक में भी अपनी गलती हम सुधारने की कोशिश करते हैं और मान कषाय के कारण कहते हैं - मैं जो कहता हूं वही सत्य है। अरे हम तो जिनेन्द्र भगवान की गवाही भी देते हैं। यानी उनके गवाही यानी उनके साक्षी से कि नहीं, चौथे-पांचवें गुणस्थान में आत्मानुभूति नहीं है ऐसा डिक्लेअर करते हैं और नाम किसका लेते हैं ? जिनेन्द्र भगवान ने ऐसा बताया। अरे भाई ! चौदह गुणस्थान में से २ गुणस्थान हटा देंगे तो बारह ही रहेंगे भाई। तो वह चौदह लिखनेवाले भी गलत और चौदह माननेवाले भी गलत, ऐसा होगा ? तो हमें तो यह बात करनी है कि यहां जो चौथे गुणस्थानवर्ती जीव हैं उनका उपदेश भी देशना है वह भी देशनालब्धि में कारणभूत है। हम अगर चौथे, पांचवें गुणस्थानवर्ती जीवों का निषेध करते हैं तो हम जिनेन्द्र भगवान का निषेध कर रहे हैं। ख्याल में आया ?

देखो भाई, यहां तो कह रहे हैं यह देशना सुनकर कि तू शरीर से भिन्न हो, तू यह राग-द्वेषरूप जो विभावरूप परिणति है उससे भी तू जुदा है। ऐसा जब तूने माना, उसके ऊपर विचार किया और तूने निर्णय किया कि जिनेन्द्र भगवान ने जो बात बतायी, वह बिलकुल सही है, ऐसा तेरा निर्णय हुआ तो तेरी देशनालब्धि चालू हुयी।

ख्याल में आया ? नहीं तो देशना सुन-सुनकर क्यों ? हजारों बार क्यों ? अनंतों बार समवशरण में होकर आये, फिर भी केवली के सामने रहते हुये भी हम कोरे के कोरे रह गये। केवली की देशना तो सुनी मगर समझी नहीं, समझी मगर तत्त्वविचार किया नहीं, प्रायोग्यलब्धि तक भी पहुंचे मगर स्वसन्मुख होकर करणलब्धि हुयी नहीं। *श्रोता: हमने अनंत बार देशना सुनी फिर भी कुछ नहीं हुआ।* वही तो बताया अभी सबने सुनी ऐसा भी नहीं है। जो अनादिकालीन नित्य निगोद में रहा है उसने कहां सुनी है ? वहां कितने जीव हैं ? सुनो, आपके कोई प्रश्न हो तो कृपा करके लिखितरूप से देना।

क्या होता है कि जो बात जो चल रही है वह मेजॉरिटी के हिसाब से चल रही है। अब आप कहां कौनसे शास्त्र की बात बता रहे हैं मैं जानता नहीं हूं। लेकिन यह भी मैं आपको बताऊंगा कि अनादिकाल से इस जीव ने भावपरावर्तन किये हैं कि नहीं ? कितने किये हैं मालूम है आपको ? भावपरावर्तन कितने किये हैं ? अनंतों बार किये हैं। उसमें उत्कृष्ट शुभभाव तो समवशरण में जाकर हाजिर होना है और वे भी उसने किये हैं। ऐसा इसके ऊपर से हम इन्फरन्स निकालते हैं। भाई, हम तो उसीकी बात कर रहे हैं। हम कौनसी अलग बात कर रहे हैं ? हम आगम के विरुद्ध बोल रहे हैं ? जिनेन्द्र भगवान की वाणी भी इस जीव ने अनंत बार सुनी है। मैं आपसे एक प्रश्न पूछूंगा आखिर का। आप गुरुदेवश्री को मानते हैं ? *श्रोता: हां, मानता हूं।* उन्होंने यह बात बतायी है कि तुं अनंत वार केवलीना सामे गयो छे छतां कोरो ने कोरो रही गयो छे। तो वह गलत है ? क्यों ? देखो, आप किसकी बात कर रहे हैं ? यह तो सोचो जरा। ख्याल में आया ?

यहां तो कह रहे हैं, देशना तो इस जीव को अनेकों बार मिली है फिर भी उसने उस देशना को देशनालब्धिरूप कन्व्हर्ट नहीं किया है। अब कहते हैं जब इस जीव ने देशना सुनी, उसके ऊपर विचार किया, सोचा, शरीर से तो मैं जुदा हूं, राग-द्वेष परिणामों से तो मैं जुदा हूं, मैं तो ज्ञायक स्वभावी हूं, ज्ञानस्वरूप हूं। ज्ञान, ज्ञान, ज्ञान करने के अलावा मैं कुछ कर ही नहीं सकता। क्या कहा ? जैसे हम बच्चों को बोलते हैं बेटा ऐसा मत कर क्योंकि अपने कुल को शोभा नहीं देता। यहां तो कह रहे हैं कि तू कर ही नहीं सकता है। तू करता हो और मत करना, बोलना यह बात जुदी है और तू कर ही नहीं सकता है। तब उस जीव को ऐसा लगता है – 'ओह हो ! यह मेरा स्वरूप ऐसा है।' और पं. टोडरमलजी की भाषा में कहना है 'तो इस बात की तो मुझे खबर ही नहीं थी।' और वह टकटकी लगाये हुये जिनवाणी को सुनता है। जब अंदर में ऐसा

तत्त्वविचार करे कि मैं तो ज्ञायक स्वभावी ही हूं तब उसके प्रायोग्यलब्धि चालू होती है।

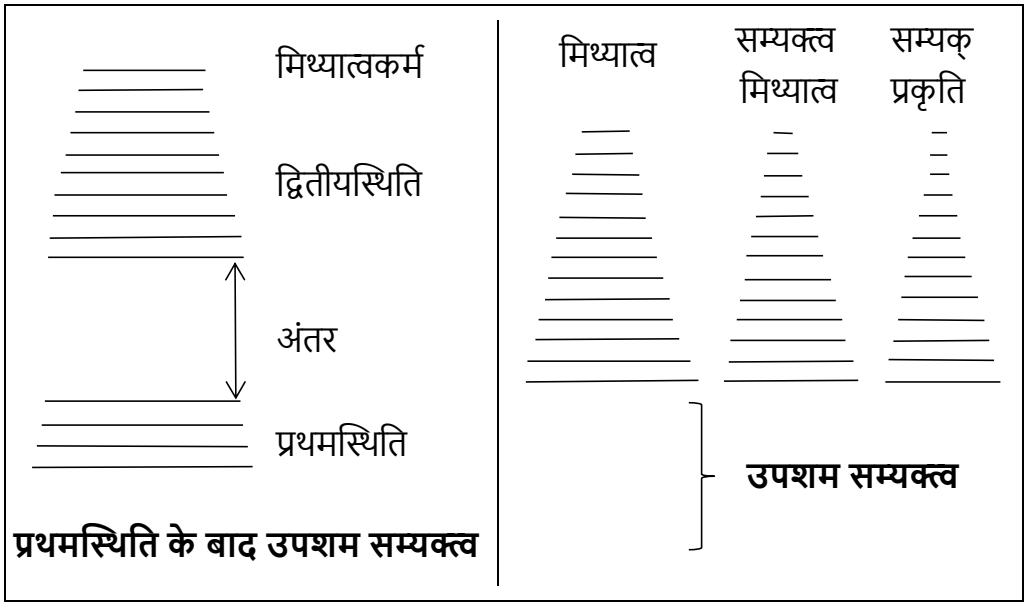
अब उसमें क्या-क्या होता है, क्या-क्या नहीं उस प्रोसेस का हम यहां विशेष कथन नहीं करेंगे, उसकी विशेष बात नहीं करेंगे। लेकिन वह जब प्रायोग्यलब्धि होती है, तो उसके बाद आत्मसन्मुखतापूर्वक करणलब्धि चालू होती है। यह करणलब्धि जो है उस करणलब्धि के भी तीन भेद हैं। कोई जानता है करणलब्धि के तीन प्रकारों के नाम ? सब लोग बोलो। *श्रोता: अधःप्रवृत्तकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण।* अधःप्रवृत्तकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण। यह करण यानी क्या ? तो हमने देखा था करण यानी जीवों के परिणाम। जीवों के परिणाम कैसे, कौनसे लब्धि में क्या-क्या होते हैं ? वह बात उस करणलब्धि के प्रकरण में आती है। देखो किसी जीव को सम्यक्त्व होना है तो इस प्रोसेस से गुजरना ही पड़ेगा। क्या कहा ? क्षयोपशमलब्धि भी उनके होगी। देखो लोग कहते हैं न, हमको कुछ नहीं करने का है ? हमको तो ऐसे ही सम्यक्त्व होगा ? यह सब क्रमबद्ध है ? हां बिलकुल क्रमबद्ध है। तेरे जब सम्यक्त्व होना है तो वह भी क्रमबद्ध है। क्रमबद्ध है तो उसके पहले क्रम में कौन आयेगा ? अनिवृत्तिकरण। उसके पहले होगा अपूर्वकरण। यह तो बहुत स्थूल से बता रहा हूं। उसके पहले होगा अधःप्रवृत्तकरण, उसके पहले होगी प्रायोग्यलब्धि, उसके पहले होगी देशनालब्धि। उसके पहले होगी विशुद्धिलब्धि और क्षयोपशमलब्धि।

जैसे हम चौथे माले पर चढ़ना चाहते हैं, तो एक के बाद एक के बाद एक-एक सीढ़ी चढ़ते हैं और वह भी क्रम से जाये तब हम पहुंचेंगे। नहीं-नहीं हम तो कभी सीढ़ी चढ़ते ही नहीं। अच्छा लिफ्ट में जाओ, तो लिफ्ट में भी एकदम डायरेक्ट पहले से चौथे में जाते होंगे कि नहीं कोई ? उसे भी पहली मंजिल, दूसरी मंजिल ऐसे क्रम से ही जाना पड़ेगा। अब यह क्रमबद्धपर्याय की बात तो यहां हम विशेषरूप से नहीं कर रहे हैं। लेकिन यह बात तो निश्चित है कि जिसके जिस समय में जो होना है वह तो होगा ही होगा और वह सारा क्रमबद्ध ही है। यहां अगर हमें सम्यक्त्व की प्राप्ति हो रही है तो हमें इस क्रम से आगे गुजरना होगा। उसके लिये जो पात्रता है, उस पात्रता की चर्चा तो हमने इसके पहले की थी। वह पात्रताधारी ऐसा जो जीव है उसको जब ये सारी बातें होंगी तो उसके करण परिणाम, यानी करणलब्धि जिसको हम कहेंगे वह चालू होती है और उसमें क्या होता है वह अभी हम देखने जा रहे हैं। क्योंकि हमने पहले यह देखा है कि अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव के जो सम्यक्त्व होता है वह उपशम सम्यक्त्व

होता है। अभी ये शब्द जो हैं न, हमें इस टर्मिनॉलॉजि को समझने की आवश्यकता है।

पहले में पहले मैं यह बताना चाहता हूं यह जो कुछ कर्मों का स्टॉक हमारे पास है, तो वह एक समय में जो कर्म परमाणु उदय में आयेंगे उसको निषेक कहते हैं। यह जो निचला निषेक है, यह वर्तमानकालीन उदय में आने योग्य ऐसा है। उसके बाद यह, उसके बाद यह, ऐसा एक-एक समय में एक-एक निषेक करते-करते किसीने ७० कोड़ाकोड़ी सागर का मिथ्यात्व कर्म बांधा है तो उसकी निषेक रचना ऐसी ऊपर तक होती है। यह तो आलेख है हो, यह हमें समझने के लिये इसतरह से बताया जाता है। ख्याल में आया ? ऐसे कोई हमारे कर्म नीचे पैर में वहां पहला निषेक फिर माथे में ऊपर आखिर का ७० कोड़ाकोड़ीवाला ऐसा कुछ नहीं है। जैसा आप लोग २०-२० मॅच तो देखते होंगे कि नहीं ? नहीं देखते, तो उसमें क्या बताते हैं ? इस जीव ने इतने रन किये, कितने ? एक ओव्हर में पच्चीस, एक ओव्हर में पांच। एक ओव्हर में, वह क्या है ? वह आलेख जिसको हम ग्राफ कहते हैं। तो यह इसीतरह ग्राफ है।

यह ग्राफ पढ़ने की पद्धति ऐसी है कि निचला जो निषेक है वह वर्तमानकालीन अभी उदय में आने योग्य है। तो यहां तो दस-पांच ही लाइन मारी हैं, वहां तो अनेक - अनेक, असंख्य निषेक होते हैं। ख्याल में आया ? यह तो हमने निश्चितरूप से जाना है; क्या जाना है ? कि जब किसी जीव को उपशम सम्यक्त्व होता है तो उस समय उसके मिथ्यात्व कर्म का उदय रुक जाता है और सत्ता में पड़े हुये मिथ्यात्व कर्म के तीन टुकड़े हो जाते हैं। तीन टुकड़े यानी वह तीन में विभाजित हो जाता है। उनके नाम भी यहां लिखे हैं, हम देखते हैं। यह देखो, पहले गुणस्थान में मिथ्यात्व का उदय चल रहा था। अभी उसको सम्यक्त्व हुआ, वह कैसा हुआ, क्या हुआ, हम देखेंगे। जब उपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है, उस समय जो मिथ्यात्व कर्म था, उसके अधिकतर परमाणु मिथ्यात्वरूप से रह जाते हैं और उसके असंख्यातवें भाग जितने परमाणुओं की फल देने की शक्ति उसके अनंतवें भाग रह जाती है। यानी बहुत सारा उसका जो स्ट्रॉंगनेस था मिथ्यात्व का, वह ढीला पड़ जाता है जो सम्यग्मिथ्यात्वरूप हो जाता है और जितनी उसकी स्ट्रेन्थ यानी अनुभाग है उससे भी अनंतवां भाग रह जावे उसको सम्यक् प्रकृति कहते हैं। इसतरह के मिथ्यात्व नामक दर्शनमोहनीय कर्म जिसको हम मिथ्यात्व कहते हैं उसके तीन भाग हो जाते हैं।



उपशम सम्यक्त्व जब स्टार्ट हुआ उसके पहले समय से यह बात चालू हो जाती है। ख्याल में आया ? अब क्या कहते हैं ? वे तीन टुकड़े होने के पूर्व में क्या होता है ? तो जब जीव अपूर्वकरण के बाद अनिवृत्तिकरण यानी तीसरे नंबर के करणलब्धि में आता है, तब ऐसे जीवों के परिणाम अपने स्वरूप में एकाग्र होने के चल रहे हैं। तब तो यहां पर यह मिथ्यात्व कर्म जो है, यहां तो केवल मिथ्यात्व कर्म की बात ही हम देख रहे हैं, अन्य ज्ञानावरण, दर्शनावरण आदि की बात हम यहां बिलकुल नहीं देख रहे हैं। तो कह रहे हैं यह मिथ्यात्व कर्म जो है, वह अनिवृत्तिकरण जो एक अंतर्मुहूर्त का जो समय है। उस अंतर्मुहूर्त में असंख्यात समय हैं और उसमें प्रत्येक एक-एक, एक-एक, एक-एक समय में वह उदय में आ रहे हैं।

तो देखो उस समय जीवों के परिणाम ऐसे हो जाते हैं, अंदर में स्वरूप में एकाग्र होने के परिणाम चल रहे हैं। अभी सम्यक्त्व हुआ नहीं है, अभी मिथ्यात्व कर्म का उदय चल रहा है। लेकिन सहजरूप से ऐसा हो जाता है कि बीच में ये जो निषेक हैं, उनके परमाणु या तो ऊपर चले जाते हैं या तो नीचे आ जाते हैं और वहां निषेकों में अंतर पड़ता है - गॅप हो जाती है। यह जीव उसको कुछ नहीं करता, जीव में ऐसी कोई ताकत नहीं है। ऐसा लिखते हैं -किसी द्रव्य का परिणमन कराने में, उसको पलटाने में इन्द्र, नरेन्द्र और तीर्थंकर भी समर्थ नहीं हैं। वे इतने सामर्थ्यवान, अनंतचतुष्टय के धारी,

वे भी यह कार्य नहीं करते और जो अभी मिथ्यादृष्टि है वह कर्मों को ऊपर नीचे गलावे, इधर-उधर करावे ? यह तो कथन पद्धति इसतरह से है कि यह जो कर्म परमाणु हैं वे सहजरूप से कुछ नीचे आते हैं और कुछ ऊपर जाते हैं और यहां बीच में कोई मिथ्यात्व कर्म रहता नहीं है। उसको हम कहेंगे वहां गॅप तैयार हो जाती है। इस गॅप के नीचे भी मिथ्यात्व के कुछ निषेक हैं जिसको प्रथमस्थिति कहते हैं, वे एक-एक समय में एक-एक निषेक उदय में आते हैं। जब तक प्रथमस्थिति के सभी निषेक खिर जाते हैं तब तक गॅप के ऊपर मिथ्यात्व की द्वितीयस्थिति में जो शेष सभी निषेक पड़े हैं वे उपशमित होते हैं - उदय में नहीं आनेयोग्य होते हैं। यह मिथ्यात्व का उदय.. जैसा ही खतम हो जाता है, तो यहां से उपशम सम्यक्त्व चालू होता है।

यानी कर्म जो उपशमित हो गये हैं, अभी क्या हो गये ? कुछ ऊपर गये, कुछ नीचे गये। यह ऊपर जो जाते हैं उसको कहते हैं द्वितीयस्थिति। यह ऊपर गये और यह जो नीचे आये हैं वह प्रथमस्थिति। यह प्रथमस्थिति में यहां के जो निषेक आकर यहां मिल गये हैं, उनका हर समय में उदय आता है। उदय आकर खिर जाता है। यह तो किसकी बात चल रही है ? मिथ्यात्व कर्म की। तो मिथ्यात्व कर्म में ऐसा बीच में अंतर तैयार होता है, तो इसको कहेंगे कि यह अंतरकरण उपशम है। क्या कहा ? अंतर हो गया। तो यह जो ऊपर के जो हैं उनको इसतरह से रुकाया कि एक अंतर्मुहूर्त काल तक वे यहां बीच में कहीं उदय में नहीं आये। तो यहां यह जो उपशम है उसका दूसरा नाम प्रशस्त उपशम है। प्रशस्त उपशम किसलिये हुआ ? कि जीवों ने ऐसे परिणाम किये कि यह सहजरूप से इन कर्मों के कुछ परमाणु नीचे आये, बाकी परमाणु ऊपर गये और वहां जो ऊपर जो सत्ता में हैं उनकी ऐसी अवस्था की कि वे अभी उदय में नहीं आयेंगे। तो इसको ही प्रशस्त उपशम कहा है। *श्रोता: अनंतानुबंधी का उदय है ?* नहीं, उसके **उदय का अभाव जो हो रहा है उसको उदयाभावी क्षय या** अप्रशस्त उपशम कहते हैं। अनंतानुबंधी का उदय हो जावे, तो जीव सम्यक्त्व से हट जाता है।

यहां जो अनंतानुबंधी हैं, अभी यहां ग्राफ बनाया नहीं है, वे अनंतानुबंधी के जो परमाणु हैं वे अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलनरूप से उदय में आते हैं। अभी जो वर्तमानकालीन अनंतानुबंधी उदय में आयेगा तो स्व-रूप से उदय में नहीं आता है, पर-रूप से उदय में आता है। पर-रूप से यानी वह क्या होगा ? वह अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण अथवा संज्वलनरूप से उदय में आता है। यह जो

अप्रत्याख्यानावरण है वह सम्यक्त्व को रोक नहीं सकता। इसको समझने के लिये हम दूसरी तरह से समझेंगे तो और अपने को अधिक समझ में आयेगा। देखो जो मिथ्यात्व कर्म है और अनंतानुबंधी है, इन दोनों ही कर्मों का उदय होगा तो जीव को सम्यक्त्व नहीं होगा। यानी देखो, यह अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ, प्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ और संज्वलन क्रोध-मान-माया-लोभ ऐसे चार चतुष्क या चार चौकड़ी होती हैं। अभी हम मिथ्यात्व को तो जरा अलग रखते हैं, लेकिन पहले ही मैंने बताया मिथ्यात्व और अनंतानुबंधी दोनों में से किसीका भी उदय होगा तो जीव सम्यक्त्व से भ्रष्ट होगा।

यह सब हमें क्यों समझना है ? तो अभी हमको सासादन गुणस्थान में वहां की क्या हालत होती है वह समझने की है। तो हमको किसीने बताया कि आप मिथ्यात्व गुणस्थान में हमको कितने काल भटकाओगे। मिथ्यात्व में से आगे हटा दो तो फिर देखो हम फटाफट-फटाफट चौदहवें तक पहुंचते हैं कि नहीं। मैंने कहा बस बिलकुल यही बात है और हम भी कहां मिथ्यात्व में रहना चाहते हैं ? तो यह जो चार चौकड़ी हैं, तो जब तक अनंतानुबंधी का उदय है, अभी मिथ्यात्व को यहां हमने कन्सिडर किया नहीं है, तब तक उस जीव को सम्यक्त्व नहीं होगा। जिस जीव को अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ का उदय नहीं है, अनुदय है उस जीव को चतुर्थ गुणस्थान प्राप्त होता है। चारित्र गुण की अपेक्षा से सम्यक् चारित्र के भी चार भेद बताये हैं। एक है स्वरूपाचरणचारित्र, दूसरा है देशचारित्र, तीसरा है सकलचारित्र और चौथा है यथाख्यातचारित्र। तो जब यहां अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ का अनुदय हुआ तो यहां जीव को स्वरूपाचरणचारित्र की प्राप्ति हुयी। कौनसे गुणस्थान में ? हां जी ? *श्रोता: चौथे गुणस्थान में।* चौथे क्या पांचवें ? पक्का ? चौथे गुणस्थान की प्राप्ति होगी। किसीका प्रश्न था कि यह ऐसा कैसे होता है ? लेकिन जीव के परिणाम ही ऐसे होते हैं कि वह अगर उग्र पुरुषार्थ करे यानी बहुत स्थिरता वह अपने स्वरूप में लीनता धारण करे तो हो सकता है कि मिथ्यादृष्टि जीव डायरेक्ट पांचवें में भी जाये। उसके दो कषाय चौकड़ी का अभाव, यहां तो हम कहेंगे अनुदय हो जाता है। ख्याल में आया ?

तो अभी हमने क्या देखा ? अगर जीव अधिक-अधिक पुरुषार्थ करे तो उसके तीन कषाय चौकड़ी का यहां अनुदय होगा और उसको सकलचारित्र की प्राप्ति होगी। यह तो जीव के पुरुषार्थ यानी स्वरूप में स्थिरतारूप रहने की जो कपॅसिटि है उसके

ऊपर डिपेंड है - निर्भर है। तो अभी हमने क्या देखा ? वह सातवें में डायरेक्ट जा सकता है। तो प्रश्न ऐसा उठा कि जो जीव सातवें में जा सकता है, वह चौथे में जायेगा कि नहीं जायेगा ? बिलकुल जायेगा ! अगर उसका एक कषाय चौकड़ी के अनुदय के साथ वीतराग परिणाम हुआ तो वहां अनंतानुबंधी खतम हो गये यानी अनुदय हुआ और यहां स्वरूपाचरणचारित्र की प्राप्ति हुयी। अब जीव और अधिक पुरुषार्थ करे तो वहां क्या होगा कि अप्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ का भी अनुदय होगा और उसको देशचारित्र की प्राप्ति होगी। तो मेरा यह प्रश्न है, पहले कर्मों का अभाव होगा क्या पहले देशचारित्र की प्राप्ति होगी ? *श्रोता: एक साथ होंगे।* हां साहब, दोनों एक साथ होंगे। हां, आपने बिलकुल सही कहा कि दोनों का काल एक ही है। क्योंकि दोनों तो अलग-अलग द्रव्य हैं न भाई, तो उसका काम उसमें और इसका काम इसमें। अब आगे कहते हैं जब जीव के तीसरी कषाय चौकड़ी कौनसी ? प्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ का भी अनुदय होता है तो सकलचारित्र की प्राप्ति होगी। यहां और पुरुषार्थ होगा और स्वरूप में लीनता होगी तो उसके चौथे संज्वलन का भी वहां अनुदय होगा और उसको यथाख्यातचारित्र की प्राप्ति होगी।

यह तो सहज ऐसा निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। तो अभी हम यह देख रहे हैं कि जब तक मिथ्यात्व और अनंतानुबंधी का उदय है तो उस जीव को मिथ्यात्व ही रहेगा। अब यहां चौथे गुणस्थान में अनंतानुबंधी का क्या होता होगा ? वह जो अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ जो है वह अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन क्रोध-मान-माया-लोभरूप से उदय में आयेंगे। तो वे सम्यक्त्व को अटका नहीं सकते। उनका इसतरह का जो उपशम है उसको अप्रशस्त उपशम कहा है और उसीको अभी हमने देखा। सदवस्थारूप उपशम कहो या अप्रशस्त उपशम कहो एक ही है और यह जो अंतरकरण के साथ उपशम है वह क्या करता है ? इनको उदय में नहीं आने देता, वे हैं वहां जमे रहते हैं वे उदय में नहीं आते, इसतरह की बात होती है।

अब सम्यक्त्व जब होता है तब क्या बात होती है ? यह जो मिथ्यात्व कर्म है, उस मिथ्यात्व कर्म के तीन टुकड़े हो जाते हैं, भेद हो जाते हैं। एक है मिथ्यात्व, दूसरा है सम्यग्मिथ्यात्व और तीसरा है सम्यक् प्रकृति। अब बात ऐसी है, यह मिथ्यात्व और दूसरा कौनसा ? सम्यग्मिथ्यात्व, ये सर्वघाति प्रकृतियां हैं और जो सम्यक् प्रकृति है वह देशघाति प्रकृति है। यानी सम्यक् प्रकृति का उदय होगा तब इस जीव का सम्यक्त्व

टिका रहेगा। यह तो आगे चौथे गुणस्थान में ये सारी बातें होंगी, वह तो हम बतायेंगे आपको। अभी तो हमको सासादनसम्यक्त्व को देखना है।

श्रोता: यह बीच में जो स्पेस बनाया है। यह बीच में जो ऐसा बताया है तो मेरा प्रश्न यह है कि अनंतानुबंधी चतुष्क और मिथ्यात्व का उदय होता है कि नहीं होता है ये सात प्रकृति में ? देखो आपका पूछना ऐसा है कि यहां तो आपने मिथ्यात्व का अंतर किया, है न ? और उस समय वहां अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ उसका भी उदय नहीं है ऐसा कहा तो वे भी उपशमित हैं न ? वे अनंतानुबंधीरूप से तो उदय में नहीं आ रहे हैं। उनका भी हमने देखा कि अप्रशस्त उपशम है। तो जो अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव है उसकी सत्ता में सिर्फ मिथ्यात्व है। सिर्फ मिथ्यात्व है तो आगम में लिखा है उसने पांच प्रकृतियों का उपशम किया। अब ऐसा कोई जीव होगा कि जो एक बार मिथ्यात्व से निकलकर सम्यक्त्वी हुआ और दुबारा मिथ्यात्व में आया। उसकी सत्ता में ये तीन टुकड़े हैं न। ये तीन टुकड़े जिसकी सत्ता में हैं, वह अनंतानुबंधीवाले चार और ये तीन, ऐसे सात प्रकृतियों का उपशम करेगा और जिसके इन तीनों में से एक सम्यक् प्रकृति निकल गयी है, वह छह प्रकृतियों का उपशम करेगा। जो शास्त्र में लिखा है पांच, छह या सात प्रकृतियों का उपशम करता है वह उस अपेक्षा से कहा है।

हम तो अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि की बात कर रहे हैं। वहां तो उसके एक मिथ्यात्व कर्म की ही सत्ता है। वह पांच प्रकृतियों का उपशम करेगा। अभी हमने देखा कि सासादन में क्या-क्या बातें होती हैं, उसको हम समझने की कोशिश करेंगे। देखो अभी हम पुस्तक के माध्यम से जरा देखेंगे। यहां सासादन का अर्थ पहले हम देखेंगे। देखो '**स**' **प्लस** '**असातना**' **जिसको कहते हैं, तो उसको सासादन कहने में आता है।** सासादन कहो या असातना कहो, एक ही बात है। देखो पेज नंबर ९० पर नीचे से तीसरा पॅरेग्राफ है। वहां लिखते हैं **सासादन गुणस्थान को सासनसम्यक्त्व भी कहते हैं।** यहां क्या कहा ? सासादन। स प्लस असातना, असादन, उसीका दूसरा नाम है सासन। **सासन का शब्दार्थ इस प्रकार है। स** यानी **सहित** और **असन** यानी **सम्यक्त्व की विराधना।** असातना कहो या असादन कहो एक ही बात है। **स+असन = सासन। सासनसम्यक्त्व** यानी **सम्यक्त्वविराधक परिणाम।**

अभी यहां क्या होता है ? जब यह जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति करता

है तो उसके परिणाम ऐसे पलट जाते हैं कि जो मिथ्यात्व कर्म है उसका उदय तो नहीं होता है, लेकिन अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ जो है उसमें से किसी एक का या तो अनंतानुबंधी क्रोध या तो अनंतानुबंधी मान, माया या लोभ इन चारों में से किसी एक का उदय अनंतानुबंधीरूप से आता है। पहले कैसा होता था ? वह पर-रूप से उदय में आ रहा था यानी अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन के रूप से उदय में आता था। अभी वह स्वयं के रूप से उदय में आयेगा। ॲट अ टाइम क्रोधादि चार में से तो किसी एक का उदय होता है। ऐसा जब परिणाम होता है, तब वह जीव सम्यक्त्व से गिर जाता है। जब वह गिर जाता है तो उसको कहते हैं सासादन। अभी क्या हुआ ? वह सम्यक्त्व से गिरा है और मिथ्यात्व में आया नहीं है। वह बीच में ट्रान्झिट पिरिअड में है। *श्रोता: अनंतानुबंधी का एक कषाय ?* चार में से किसी एक कषाय का उदय होवे तो वह जीव सम्यक्त्व से गिर जाता है और अभी मिथ्यात्व तक पहुंचा नहीं है इस अवस्था को कहेंगे सासादन सम्यक्त्व।

जैसा आपने नारियल का पेड़ देखा है भाई ? तो नारियल जब गिरता है तो तुरंत नीचे आता है या ऐसा कुछ बीच में कुछ टाइम लगता है आने के लिये ? लोगों का ऐसा कहना है कि देखो यह तो सहजरूप से है कि जो गिरी हुयी वस्तु नीचे ही आती है। वैसे सासादन में जो आया है, वह जीव निश्चितरूप से मिथ्यात्व में ही आयेगा। आपने कभी पेड़ से नीचे आम गिरा हुआ तो देखा होगा, नारियल के झाड़ से नारियल ऊपर से नीचे गिरा हुआ देखा होगा, लेकिन गिरा हुआ आम ऊपर डायरेक्ट फिर वापस उस जगह पर जायेगा कि नहीं ? वैसे मिथ्यात्व में से कोई भी दूसरे गुणस्थान में जाता नहीं, वह दूसरा गुणस्थान तो सिर्फ गिरने के लिये है। अरे, जिस जीव ने बहुत मेहनत से सम्यक्त्व की प्राप्ति की है और वह जीव ऐसे खोटे परिणाम करेगा कि जिससे सम्यक्त्व की विराधना होगी तो निश्चितरूप से मिथ्यात्व में आयेगा। लेकिन वह मिथ्यात्व में आया तो उसको मिथ्यात्वी कहेंगे। सम्यक्त्व से गिरा लेकिन अभी मिथ्यात्व में नहीं आया, बीच में ट्रान्झिट पिरिअड में है तो उसको सासादनसम्यक्त्व कहते हैं। उस सासादनसम्यक्त्व का काल कितना है ? उसको भी हम देखेंगे। परिभाषा में भी वह बात आयेगी तो उसके माध्यम से हम देखेंगे।

मैं और एक बात बताना चाहता हूं। जब यह जीव सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है यानी उपशम सम्यक्त्व जिसको प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहते हैं; यह प्रथमोपशम

सम्यक्त्व और द्वितीयोपशम सम्यक्त्व ऐसे दो शब्द शास्त्र में आते हैं। प्रथमोपशम सम्यक्त्व यानी यह अभी जो हमने देखा पांच, छह या सात प्रकृतियों का उपशम करता है उसको प्रथमोपशम कहेंगे, वह गिर गया और फिर अगर बहुत काल के बाद उसको दुबारा सम्यक्त्व होना है तो दुबारा सम्यक्त्व होने के लिये वह फिर से उपशम सम्यक्त्व करेगा तो उसका नाम क्या होगा ? हां साहब ? प्रमोदजी आप क्या कह रहे हैं ? मालूम नहीं है। उसको भी प्रथमोपशम सम्यक्त्व ही कहेंगे। ऐसा कितनी बार हो सकता है ? असंख्यात बार हो सकता है, पल्य के असंख्यातवें भाग जितनी बार। उन सबको प्रथमोपशम सम्यक्त्व ही कहेंगे। नहीं तो पहली बार को प्रथमोपशम सम्यक्त्व, दूसरी बार को द्वितीयोपशम, तीसरी बार को तृतीयोपशम, ऐसा नहीं कहेंगे।

द्वितीयोपशम नाम का सम्यक्त्व भी तो शास्त्रों में बताया है ? हां, वह आता है लेकिन उसमें अंतर यह है कि प्रथमोपशम सम्यक्त्व मिथ्यादृष्टि को प्राप्त होता है और जो द्वितीयोपशम सम्यक्त्व है वह जो जीव सम्यग्दृष्टि है, क्षयोपशम सम्यक्त्वी है सातवें गुणस्थानवर्ती हैं वह श्रेणी सन्मुख हो जावे, तो उसके परिणाम ऐसे हो जाते हैं कि वह दर्शनमोहनीय कर्म, अभी जो सम्यक्त्व मोहनीय उदय में आ रहा है उसका और अन्य दो ऐसे तीनों प्रकृतियों का उपशम करता है उसको द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहेंगे।

देखो यह प्रथमोपशम सम्यक्त्व तो असंख्यात बार यह जीव प्राप्त कर सकता है, हां सब नहीं, सिर्फ कुछ जीव। लेकिन द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कितनी बार प्राप्त कर सकता है ? *श्रोता: चार बार।* हां कौन बोल रहे हैं ? चार बार और एक भव में कितनी बार ? *श्रोता: दो बार।* दो बार हां, बहुत अच्छा ! कोई जीव मनुष्यपर्याय में ही श्रेणी चढ़ेगा तो एक भव में अधिक से अधिक दो बार उपशमश्रेणी चढ़ सकता है और उपशमश्रेणी चढ़ने के लिये वह द्वितीयोपशम सम्यक्त्व जो किया है उसकी बात कर रहे हैं। अभी क्षायिक सम्यक्त्वी भी उपशमश्रेणी चढ़ सकता है, उसकी बात यहां नहीं ले रहे हैं। तो यहां क्या बात है ? जो द्वितीयोपशम सम्यक्त्व करके कोई उपशमश्रेणी चढ़ता है तो एक भव में दो बार। कॉम्बिनेशन ऐसा होता है कि चार भव में एक-एक बार, एक भव में एक बार, फिर दूसरे भव में दो बार, इसतरह से १-१-२, या २-२, या १-१-१-१ जो भी कॉम्बिनेशन हो लेकिन चार से अधिक बार वह द्वितीयोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति नहीं करता है। लेकिन प्रथमोपशम सम्यक्त्व अनेकों बार हो सकता है।

प्रथमोपशम सम्यक्त्व में दर्शनमोहनीय की तीनों प्रकृतियों की स्थिति अंत:कोड़ाकोड़ी सागर होती है। वह जीव मिथ्यात्व में गिर जाता है तब मिथ्यात्व का नया बंध शुरू होता है। अन्य दो प्रकृतियों की स्थिति अंत:कोड़ाकोड़ी सागर से हीन होती जाती है और असंख्यात वर्षों के बाद घटते-घटते करीबन सागर जितनी होती है। तब तक अगर वह जीव सम्यक्त्व प्राप्त करेगा तो वह वेदकसम्यक्त्व ही होगा और उतने काल को वेदकयोग्य काल कहते हैं। उसके बाद सम्यक्त्व होगा तो वह प्रथमोपशम सम्यक्त्व ही होगा। उसको उपशमयोग्य काल कहेंगे। एक बार उपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति करने के बाद दुबारा उपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति करने के लिये असंख्यात वर्ष जाने पड़ते हैं और ऐसे प्रथमोपशम सम्यक्त्व कोई जीव असंख्यात बार प्राप्त कर सकता है। यह तुम्हारी-हमारी विचित्र कहानी है। न मालूम हम भी इस रास्ते से गुजरे होंगे। ख्याल में आया ?

देखो गुरुदेवश्री तो बहुत बार कहते थे - पड़वानी वात ज नहीं करो। क्योंकि यह सब सुनने से आदमी थर्रा जाता है। क्या है, क्या है ? पर क्या करे ? केवली के ज्ञान में जो बात आयी है वह बिना कहे रहेंगे क्या ? यह करणानुयोग जो है वह किसने बताया है ? करणानुयोग की बात किसने की है ? नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने। केवली भगवान ने जो कुछ दिव्यध्वनि में बात बतायी, वह परंपरा से नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती के पास आयी उन्होंने बतायी। ख्याल में आया ? केवली के ज्ञान में बात आयी है वह उनकी वाणी में निकले बिना रहेगी नहीं और उनकी वाणी सुनकर जो रचना गौतम गणधर ने की है उसके माध्यम से तो हमारे तक आज पहुंची है। उसमें यह बात बताते हैं कि यह प्रथमोपशम सम्यक्त्व एक बार प्राप्त करने के बाद दुबारा प्राप्त करने में असंख्यात वर्षों का काल जाता है और किसी जीव ने, सबने नहीं, असंख्यात बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति की है।

थोड़ा बहुत कुछ हमें ज्ञान हो जाता है तो हम ऐसे फूल जाते हैं कि हमारे जैसा कोई नहीं। जो बोलते हैं न कि हम चौड़ी छातीवाले और बाजार छकड़ा - ऐसी हमारी अवस्था होती है। हम देखे कि हम इन जन्म-मरण के चक्करों में अटके हैं या नहीं। अगर हमें इससे जुदा होना है तो अपने स्वरूप में एकाग्रता करने के अलावा अन्य दूसरा कोई मार्ग ही नहीं है। 'एक होय त्रण काळमां परमारथनो पंथ।' यह गुजराती है। यह श्रीमद् राजचंद्रजी ने बताया है। यानी परमार्थ का जो पंथ है, परम अर्थ यानी अपने

स्वरूप में लीनतारूप जो कोई जो परमार्थरूप जो पंथ है वह तीनों काल में एक ही एक होता है। देखो भाई अनंत जो सम्यग्दृष्टि हैं कहो या अनंत ज्ञानियों का वचन एक ही होता है और अनंत अज्ञानियों के अनंत वचन होते हैं। जो ज्ञानी हैं उनके तो वचन एक जैसे ही होंगे। ख्याल में आया ? यहां तो यह बात बता रहे हैं कि जिसके सम्यक्त्व हुआ है, जिसको अपना बेड़ा पार करना है तो उसको तो अपने स्वरूप में लीनता करनेरूप कार्य ही करना पड़ेगा अन्यथा दूसरा कोई इलाज नहीं है।

हम आगे बढ़ते हैं। विषय को जानने के पहले हम पेज नंबर ८७ निकालें। जहां सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान लिखा है, यह २० नंबर का प्रश्न देखो। **यदि दूसरा सासादन गुणस्थान मिथ्यात्व के बाद सीधा प्राप्त नहीं होता तो सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान को दूसरे क्रमांक पर क्यों कहा है** ? लोगों के हैं न प्रश्न ! तो कहते हैं **सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान को दूसरा गुणस्थान प्राप्त होने के कारण निम्नानुसार हैं।** अब क्या-क्या है ? पहले में पहले बताया कि **सासादन परिणाम मिथ्यात्व के नजदीक का परिणाम है।** यह जब हम उसकी परिभाषा पढ़ेंगे तो यह हमें अधिक अच्छी तरह से ख्याल में आयेगा। अगर आप चाहो तो उसको पहले देखते हैं हम, हमें कोई प्रॉब्लेम नहीं है। हां, ८९ पृष्ठ निकालिये। यहां अर्थ लिखा है उस गाथा का। तो क्या कह रहे हैं ? देखो ! मैं पढ़ूंगा और आपको रिपीट करना है क्योंकि अभी तो हम पहले से निकले हैं लेकिन कई लोग तो छठे-सातवें गुणस्थान में पहुंचे हैं। नहीं समझें आप ! नींद में झूल रहे हैं, छठे-सातवें गुणस्थान में। इसलिये मैं आपको जागृत करने के लिये आपको बोलने के लिये रिक्वेस्ट करता हूं। देखो क्या कह रहे हैं ?

प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अंतर्मुहूर्त काल में से, बोलो, *श्रोता: प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अंतर्मुहूर्त काल में से,* यानी इसका अर्थ क्या हो गया दर्शनमोहनीय कर्म में यह जो अंतर किया था न ? वह आंखों के सामने लाना। वह काल कितना है ? एक अंतर्मुहूर्त का। तो यहां कह रहे हैं प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अंतर्मुहूर्त काल में से, अब आगे सुनना और रिपीट करना **जब जघन्य एक समय,** *श्रोता: जब जघन्य एक समय,* **या उत्कृष्ट छह आवली प्रमाण का काल शेष रहे,** *श्रोता: या उत्कृष्ट छह आवली प्रमाण का काल शेष रहे,* **उतने काल में,** *श्रोता: उतने काल में,* **अनंतानुबंधी,** *श्रोता: अनंतानुबंधी,* **क्रोध, मान, माया, लोभ में से** *श्रोता: क्रोध, मान, माया, लोभ में से,* **किसी एक कषाय के उदय में आने से,** *श्रोता: किसी एक कषाय के उदय में आने से,*

सम्यक्त्व की विराधना होती है। *श्रोता: सम्यक्त्व की विराधना होती है।* **श्रद्धा की जो अव्यक्त,** *श्रोता: श्रद्धा की जो अव्यक्त,* **अतत्त्वश्रद्धानरूप परिणति होती है,** *श्रोता: अतत्त्वश्रद्धानरूप परिणति होती है,* **उसको सासन या सासादन गुणस्थान कहते हैं।** *श्रोता: उसको सासन या सासादन गुणस्थान कहते हैं।*

देखो, पहले में पहले तो यहां सारी बातें इसके अंदर आ गयी हैं कि जो उपशम सम्यक्त्व का काल है वह एक अंतर्मुहूर्त का है। वह अंतर्मुहूर्त छह आवली से बड़ा काल है, यह तो निश्चित हो गया। क्योंकि सासादन गुणस्थान जो है वह उपशम सम्यक्त्व का जो काल है उसमें से है। जरा वह चार्ट लगायेंगे ? ठीक है। देखो यहां पर जो गॅप है वह अंतर्मुहूर्त काल है। वह अंतर्मुहूर्त काल इतना बड़ा होता है। क्योंकि हमने देखा था छोटे में छोटा अंतर्मुहूर्त कितना है ? तो एक आवली अधिक एक समय और आगे-आगे जाओ तो वे सारे अंतर्मुहूर्त के ही अलग-अलग भेद हैं। तो उनमें से, इन अलग-अलग भेदों में से छह आवली। एक आवली में असंख्यात समय होते हैं, तो छह आवली में कितने समय होंगे ? सोचना। छह आवली से लेकर आखिर में एक समय तक इतने छोटे काल में अगर अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ में से किसी एक का उदय आवे तो जीव सासादन गुणस्थान में आता है। यहां उन्होंने छह आवली बतायी हैं और यहां से आगे यहां तक एक समय का काल है।

कोई जीव उपशम सम्यक्त्व का काल पूरा होने में छह आवली बाकी हैं तब सम्यक्त्व की विराधना करेगा, वहां से लेकर एक समय बाकी है, तब तक के काल में भी उसके अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ में से किसीका उदय होगा। देखो यहां जरा आप समझने की कोशिश करना जो केवलज्ञानी हैं उनको एक-एक समय का पता है। ख्याल में आया ? एक-एक समय में क्या बात होती हैं ? और वह कितने ? अनेक जीवों में ये बातें होती हैं और अनादिकाल से आज तक तो अनंत जीवों ने यह बात की है। यह सारा उनके ज्ञान का विषय है और ऐसा केवलज्ञान स्वभाव मेरा है यह जब तक हमारा निर्णय नहीं होता है तो हम अपने स्वरूप में जाने के लिये लालायित क्यों होंगे ? ख्याल में आया ? अरे यह करणानुयोग पढ़ते-पढ़ते भी सर्वज्ञ की महिमा आती है और सर्वज्ञ स्वभावी मैं भी हूं ऐसा हमें एहसास होता है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

९. सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान, औपशमिक सम्यक्त्व

आज दूसरी क्लास में जो हमने बातें बतायी थी, वह बहुतों ने कहा कि हमारी समझ में नहीं आयी हैं। आप उसे दोहरा दें तो अच्छा है। कोई बात नहीं, हमें तो बात समझनी है। देखो, बात ऐसी होती है चार लब्धि के बाद जीव करणलब्धि मांडता है। करणलब्धि के पहले एक बात तो अवश्य देखेंगे, जो मिथ्यादृष्टि जीव है, उसमें दो प्रकार के जीव होते हैं। एक भव्य जीव और एक अभव्य जीव। अभव्य जीव भी चार लब्धि की प्राप्ति करता है, लेकिन वह पांचवीं लब्धि तक नहीं पहुंच सकता है। भव्य जीव भी चार लब्धि तक तो अनेकों बार आया है, लेकिन करणलब्धि नहीं मांड पाया है। करणलब्धि में तीन प्रकार के परिणाम होते हैं। पहला अधःप्रवृत्तकरण- उसका काल अंतर्मुहूर्त है, फिर अपूर्वकरण- उसका भी काल अंतर्मुहूर्त है और फिर अनिवृत्तिकरण उसका भी काल अंतर्मुहूर्त ही है।

तीनों जो अंतर्मुहूर्त हैं वह एक से दूसरा छोटा यानी अधःप्रवृत्तकरण से अपूर्वकरण छोटा और अपूर्वकरण से अनिवृत्तिकरण छोटा। जो कोई अधःप्रवृत्तकरण मांडता है, वह निश्चितरूप से सम्यक्त्व को प्राप्त करता है। औपशमिक सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है उसके बाद चार रास्ते हैं जहां वह जीव जा पायेगा। उसकी चर्चा तो हम बाद में करेंगे। सासादन गुणस्थान के वक्त क्या होता है वह देखने के लिये हमने जो दोपहर को बात देखी थी, उसको दुबारा देखेंगे।

देखो क्या होता है कि जब-जब कर्म बांधा जाता है तो वह कर्म कुछ काल के बाद, आबाधाकाल के बाद उदय में आना चालू होता है। तो जितने नंबर ऑफ परमाणु एक साथ उदय में आते हैं उसको निषेक कहते हैं। उन निषेक की रचना हमने आलेख द्वारा बताने की कोशिश की है। अब जिसको ग्राफ कहते हैं उस ग्राफ के माध्यम से हमेशा नीचे का निषेक जो है उसमें अधिक नंबर ऑफ परमाणु होते हैं और ऊपर-ऊपर वह गोपुच्छाकार हो जाते हैं। गोपुच्छ यानी गाय की पूंछ कैसी होती है ? ऊपर मोटी और नीचे पतली-पतली। ऐसा यह भी नीचे मोटा और ऊपर पतला-पतला। यानी ऊपर के निषेकों में परमाणु कम-कम होते जाते हैं, मतलब परमाणुओं की संख्या ऊपर के निषेकों में कम और नीचेवाले के अधिक। हम जब भी गिनते हैं तो निषेक की रचना नीचे से देखनी है। तो यह हमने देखा है कि जब-जब एक-एक समय

में कर्मों का उदय आना चालू होता है, तब यहां तो हर कर्म का उदय, हर कर्म के हर समय की निषेक रचना अलग-अलग होती है। यहां तो एक समय में जो बंध हुआ है उसकी अपेक्षा से हम यहां देख रहे हैं। मैं क्या कहना चाहता हूं, फिर से जरा नया विषय आया है इसलिये दोहरा रहा हूं।

देखो हमेशा बंध जो होता है वह कम से कम सात कर्मों का तो अवश्य होता ही है। कभी-कभी आठ कर्मों का यानी जब आयु बंधती है उस समय आयुबंध को हम कन्सिडर करेंगे। आयुबंध होता है तब आठ कर्मों का बंध अवश्य होगा। आठ नहीं तो कम से कम सात कर्मों का बंध तो अवश्य होता है, हर समय। अब जो हर समय बंध होता है तो उसकी निषेक रचना उसी समय तैयार हो जाती है यानी कौनसे परमाणु कब उदय में आयेंगे यह बात निश्चित हो जाती है। तो यहां क्या कह रहे हैं कि हम तो एक ही समय में जो दर्शनमोहनीय कर्म है, उस दर्शनमोहनीय कर्म के एक समय में बंधे हुये निषेक रचना के बारे में अभी हम सोच रहे हैं। देखो ऐसा भी हो सकता है कि एक समय में ७० कोड़ाकोड़ी सागर का किसीने दर्शनमोहनीय कर्म का बंध किया तो दूसरे समय में हो सकता है कि ४० कोड़ाकोड़ी सागर का भी बंध करे, हो सकता है कि ५०-६० कोड़ाकोड़ी सागर जो भी हो। तो वह जो बंध है वह तो कम-अधिक होगा लेकिन हम अभी यहां यही कन्सिडर कर रहे हैं कि ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध किया। उसकी जो निषेक रचना हुयी, उसमें प्रतिसमय एक निषेक इसतरह तो असंख्यात निषेकों की रचना सहजरूप से हो जाती है। वह कोई करने-धरनेवाला है नहीं, यह पुद्गल के परमाणुओं की सहज ऐसी ही योग्यता होती है कि जितनी उनकी स्थिति की जो कोई योग्यता है उसके अनुसार वे वहां उदय में आ जाते हैं।

अभी हमने क्या देखा ? यह जो निषेक रचना है, वह निषेक रचना में यह बात होती है कि पहले में पहले तो हम नीचे से शुरू करते हैं, यहां से। क्योंकि हमें वही बात रिपीट करनी है न तो उसी अनुसार हम चलेंगे। तो यहां जो है यह निषेक रचना है, यहां तो बहुत गॅप बतायी है। वास्तव में तो उसमें निषेक एक-एक समय में अलग-अलग आते हैं। तो यहां हम समझते हैं कि यह पहले समय में, यह दूसरे समय में, यह तीसरे समय में। यह चार बताये हैं तो वहां समझना कि असंख्यात निषेक हैं, चार नहीं हैं। यहां जगह ही छोटी है और उसमें अधिक मॅटर दिखाना है इसलिये ऐसा किया है।

यहां क्या कहते हैं ? जब जीव करणलब्धि मांडता है। करणलब्धि मांडता है का अर्थ क्या है कि वह ऐसे विशेष परिणाम करता है कि जिसके कारण उसके अभी कुछ ही अंतर्मुहूर्त में , यानी तीन अंतर्मुहूर्त में आत्मानुभूति होने जा रही है। तब क्या होता है कि एक-एक समय में जो वर्तमान निषेक हैं वे उदय में आकर खतम हो जाते हैं, नष्ट हो जाते हैं। उदय में आये, फल दिया निकल गये। हम यहां से शुरू करते हैं, यहां काफी निषेक हैं ऐसा मानते हैं। तो एक, एक, एक, एक, निषेक उदय में आकर अधःकरण का समय खतम हो जावे। उसके बाद अपूर्वकरण, उसके बाद अनिवृत्तिकरण तक जीव आता है। तो अनिवृत्तिकरण काल का जो अंतर्मुहूर्त है उसमें से कुछ समय जाने के बाद क्या होता है कि जीव के परिणाम अधिक-अधिक स्वरूप में स्थिर होने को शुरू हो जाते हैं। उस समय क्या होता है यह मिथ्यात्व कर्म की सहजरूप से ऐसी अवस्था होती है कि कुछ परमाणु तो नीचे के निषेकों में आ मिलते हैं जिन्हें प्रथमस्थिति कहते हैं और कुछ तो ऊपर के निषेकों में चले जाते हैं जिसको द्वितीयस्थिति कहते हैं। उसको कर्म की भाषा में कहना है तो अपकर्षण और उत्कर्षण होता है। अभी क्या है कि सिर्फ तीस घंटो में क्या-क्या सिखायेंगे ?

अभी यहां जो पुस्तक आपके हाथ में है न, उसमें शुरुआत में सौ प्रश्नोत्तर हैं। वे प्रश्नोत्तर हमें सहीरूप से मालूम हो जायें तो यह आगे की बात आसानी से समझ में आती है। अब क्या करे जो है सो है। वह भी हम देखेंगे। उसको भी थोड़ासा रिफर करेंगे। यहां एक लिखितरूप से प्रश्न भी आया हुआ है, लेकिन हम उसका उत्तर जब योग्य समय आयेगा तब देंगे और किसीको कुछ पूछना है तो लिखितरूप से पूछे।

अब क्या बात हुयी कि जब जीव अमुक समय तक अनिवृत्तिकरण में है तो उसके यहां पर जो कोई मिथ्यात्व कर्म के निषेक हैं उनके परमाणु या नीचे आ जाते हैं या ऊपर चले जाते हैं। गॅप के नीचे जो निषेक रहते हैं उनको कहते हैं प्रथमस्थिति और ऊपरवाले जो हैं उनको कहते हैं द्वितीयस्थिति। उसको उपरितनस्थिति ऐसा भी कहने में आता है। उपरितन यानी यह जो गॅप बनने जा रही है उसके ऊपर है। द्वितीयस्थिति के परमाणु उपशमित होते हैं यानी वे इस योग्य हो जाते हैं कि कुछ काल तक उदयरूप न हो, यह काल भी अंतर्मुहूर्त का है और अंतरकरण उपशम होने के बाद यह जो जगह खाली हो गयी है, वहां इस जीव को सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है, उसको औपशमिक सम्यक्त्व कहते हैं। अब बात यह हो गयी कि यहां से जो परमाणु

नीचे आते हैं और प्रथमस्थिति के जिस निषेक में आकर जुड़ते हैं, उस निषेक का जब उदय हो जाता है तो उसके साथ वे भी खिर जाते हैं - निकल जाते हैं। यह आखरी समय है - किसका ? अनिवृत्तिकरण का और वही उस जीव के मिथ्यात्व का आखरी समय है। तब तक तो मिथ्यात्व कर्म का उदय चालू है और एक समय में वह तो सम्यक्त्वी होनेवाला है। उसको भी एक समय पूर्व मिथ्यात्व चालू है।

'तो एक क्षणमां मिथ्यात्वथी सम्यक्त्वमां जाय अेवी जीवनी अवस्था छे' ऐसा बोलते हैं। यानी क्या ? एक क्षण पूर्व में तो वह मिथ्यात्वी था, एक क्षण में सम्यक्त्वी हो गया। यह तो जरूर सही बात है लेकिन उसके पूर्व में यह जो तीन करण परिणाम होते हैं उन करण परिणामों को हमें ध्यान में रखना चाहिये। अब यह जीव अनिवृत्तिकरण के अंतिम समय में आ गया तो जैसे ही इसके बाद यह सम्यक्त्व में आया, तब उस कर्म के... कौनसे कर्म की बात चल रही है यहां ? मिथ्यात्व कर्म की। मिथ्यात्व कर्म के तीन भेद हो जाते हैं - तीन टुकड़े हो जाते हैं। यानी क्या होता है ? जो दर्शनमोहनीय मिथ्यात्व कर्म है, उसमें तीन उनके स्ट्रेन्थ के हिसाब से। काहे की स्ट्रेन्थ ? फल देने की, अनुभाग जो है उसमें इतनी कमजोरी आ जाती है। यह जो पहला मिथ्यात्व है वह मिथ्यात्वरूप से ही रहता है। जो मिथ्यात्व है उसके अनंतवें भाग हीन अनुभागवाला ऐसा जो कोई दूसरा ग्रुप तैयार होता है वह सम्यग्मिथ्यात्वरूप है। यहां हमने लाल अक्षरों में बताया है कि यह, सम्यग्मिथ्यात्वरूप है और उनमें से और कोई ऐसे परमाणु जो होते हैं वे उनसे भी अनंतवें भाग हीन ऐसा उनका अनुभाग होता है और वे सम्यक् प्रकृतिरूप हो जाते हैं, वह ग्रीन में बताया है।

अब बात ऐसी है कि ये तीन टुकड़े बनने कब शुरू होते हैं ? तो सम्यक्त्व के पहले समय में और ये तीन टुकड़े वहीं रहते हैं और वे भी उपशमित हैं। क्योंकि इनमें से किसीका उदय नहीं आ रहा है। यह उपशम सम्यक्त्व का काल है। अभी बात ख्याल में आ गयी ? तो क्या होता है वह उपशम सम्यक्त्व का काल जो है यहां से लेकर यहां तक का जो बताया गया है, उस काल में छह आवली बाकी रह जाती है। अब यहां तो हम मिथ्यात्व कर्म की बात देख रहे हैं। उसी समय क्या हो रहा है ?

देखो, अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ नामक चौकड़ी है वह कैसी है ? डबल एजंट है। डबल एजंट का अर्थ क्या ? वह सम्यग्दर्शन का भी नाश करता है। है

तो चारित्रमोहनीय प्रकृति लेकिन वह दर्शनमोहनीय का भी काम करे और चारित्रमोहनीय का भी काम करे, ऐसा उसका स्वभाव है। किसका ? अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ का। तो उसके बारे में क्या होता है ? हम मान लेते हैं कि यही उसकी निषेक रचना है। तो उसमें क्या होता है कि यह उदय में आने योग्य जो पहला निषेक है उसका वह परमुख से यानी अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलनरूप से उदय में आता है और हमने सुबह में देखा था कि अनंतानुबंधी का उदय है तो जीव का सम्यक्त्व नहीं टिकेगा। तो क्या होगा ? वही बात अभी हम सासादनसम्यक्त्व में देखने जा रहे हैं। यहां यह बात बता रहे हैं कि अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ है वह अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन कषाय हैं, उनके रूप से उदय में आता है इसलिये उस जीव का सम्यक्त्व टिका रहता है।

अब ऐसे में क्या होता है कि जब छह आवली काल बाकी है, तो उसमें अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ में से किसी एक का उदय आवे। लोभ का आ जाये, मान का आ जाये, माया का आ जाये, क्रोध का आ जाये तो वह जीव सम्यक्त्व से भ्रष्ट होता है। परंतु छह आवली तक मिथ्यात्व का उदय नहीं आता। अभी मान लो कि हमारा यह जो मंदिर है न, तो मंदिर के टेरेस पर जाकर किसीने एक पत्थर नीचे डाल दिया। वहां से तो छूट गया, अभी जमीन पर आकर गिरा नहीं है। वह बीच का जो काल है उसको सासादनसम्यक्त्व कहा है। यानी सम्यक्त्व की विराधना - असातना जो करे, वह परिणाम ही कुछ अलग जाति के हैं। उसको कहा अव्यक्त अतत्त्वश्रद्धानरूप श्रद्धा की परिणति। व्यक्तरूप अतत्त्व होगा तो वह जीव मिथ्यात्वी हो जायेगा। यह कैसा है ? अव्यक्त। यानी उसके अभी मिथ्यात्व कर्म का उदय आया नहीं है क्योंकि इस गॅप में मिथ्यात्व तो है नहीं, प्रथमस्थितिवाले निषेक तो उदय में आकर खिर गये हैं और द्वितीयस्थितिवाले जो हैं वे नीचे आ नहीं सकते हैं। उस समय अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ जो हैं, उनमें से किसी एक का उदय आ जाता है तो वह जीव सम्यक्त्व से भ्रष्ट होता है। वह भ्रष्ट होते हुये जब तक मिथ्यात्व में नहीं पहुंचता है, उस काल में वह सासादन सम्यक्त्वी है।

है नाम तो सम्यक्त्वी, लेकिन कैसा सम्यक्त्वी है ? जिसने सम्यक्त्व की विराधना की है, सम्यक्त्व की असातना की है। यह जो श्रद्धा गुण की परिणति है। देखो मैंने कहा था कि द्रव्यानुयोग श्रद्धा गुण की दो ही परिणति को कहता है या तो मिथ्यात्व या तो

सम्यक्त्व। लेकिन करणानुयोग उसमें चार भेद बताता है। एक है मिथ्यात्व, दूसरा है सासादनसम्यक्त्व, तीसरा है सम्यग्मिथ्यात्व और चौथा है वह सम्यक्त्व। बात अभी थोड़ीसी क्लिअर हो रही है ? अभी क्या कहा कि अधिक से अधिक काल कितना हो सकता है सासादनसम्यक्त्व का ? तो कहते हैं छह आवली और मिनिमम कितना हो सकेगा ? एक समय। जिस जीव ने सम्यक्त्व की प्राप्ति की है, अभी सिर्फ वह और एक अधिक समय तक सम्यक्त्वी बना रहे तो क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी हो जाये। ऐसे में भी जीव की परिणति ऐसी पलट जाती है कि वह मिथ्यात्व में जाने योग्य होता है।

इससे हमें क्या सीख लेनी है ? अभी हमारे जो वर्तमान के परिणाम हैं वे कायम टिकेंगे ही ऐसे भ्रम में मत रहना। बारंबार स्वरूप में स्थिरता करने का पुरुषार्थ करे, बारंबार अपने स्वभाव की पहचान करते हुये उसीमें लीन होने का प्रयत्न करे, यही एकमेव आद्य कर्तव्य इस जीव का है। ऐसा मत समझना कि मैं तो रिटायर्ड आदमी हूं, मेरे को तो अभी कुछ नहीं है। बस यह करो, वह करो... करो-करो की बात नहीं, अभी तू कर। क्योंकि हम लौकिक में तो ऐसा बहुत जानते हैं, बोलते भी हैं कि 'आज का कल पर छोड़ो, कल का परसों, परसों का नरसों, अरे जाने दो यार अब जिओगे बरसों।' हमारी वही अवस्था हो रही है। हमें तो जो परसों करना है वह कल नहीं आज करना है। आज करना है वह अभी करना है। उसको तो हम समझते नहीं हैं। हम तो वादे पर वादा कर रहे हैं। नहीं साहब अभी क्या है अभी थोड़ासा हमारा घर का सेटलमेंट हो जाये न तो फिर हम तो स्वाध्याय ही करेंगे। अरे स्वाध्याय करनेवाले भी भटकते हैं। सम्यक्त्व प्राप्त करनेवाले भी छूट सकते हैं उसमें से।

भाई ! देखो ऐसी बातों में, यह जो सासादनसम्यक्त्व है न, तो ऐसी बात बताता है कि अरे एक समय बाकी है अभी एक समय, उसका सम्यक्त्व कंटिन्युएशन में रहने के लिये, उस एक समय में भी उसके परिणाम बदलते हैं। तो अभी वर्तमान पर्याय पर भरोसा मत रखना कि मेरे यही परिणाम आगे, वैसे के वैसे रहनेवाले हैं। भाई, तू अगर जरा भी अपना लक्ष विचलित कर दे, अपने स्वरूप से ध्यान हटा दे तो न मालूम क्या होगा। हमें तो बिलकुल सावधान रहना चाहिये। ऐसा मनुष्यभव जो मिला है वह इतना अनमोल है कि उसका क्या कहें ? ऐसे मनुष्यपर्याय में आते हुये और ऐसे सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का हमें समागम मिला है। ऐसे अत्यन्त जो जिसको कहते हैं दुषम काल में यह उत्कृष्ट बात हमारे हाथ में आयी है। हम उसका यथार्थ उपयोग न करते हुये, अपने

आत्मा का अनुभव नहीं करेंगे तो हमारे जैसा दुर्भागी कोई नहीं है। ख्याल में आया ? भाई जो रास्ते पर चल रहे हैं जिनको आत्मा क्या होता है क्या नहीं, कुछ मालूम नहीं है, तो उनको तुम जाकर बोलो तो वह क्या काम का ? लेकिन जो ऐसे सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के सान्निध्य में आये हैं और जिन्होंने यह बात अपने गले उतारने के लिये कमर कस ली है और वह भी उसमें ढिलास रखता है तो पं. टोडरमलजी की भाषा में कहना हो तो उसके अभाग्य की महिमा तो हमसे नहीं की जाती है। हम तो वह चिंतामणि रत्नवाले को देखते हैं लेकिन तू चेतन रत्न जो है, तू अपना जो समय गंवा रहा है, उस चैतन्य रत्न की तरफ देखने की तुझे फुरसत ही नहीं है।

अभी अपनी क्या बात हो रही थी ? यह उपशम सम्यक्त्व का काल है, वह भी अंतर्मुहूर्त का है। उस अंतर्मुहूर्त में छह आवली अथवा कम से कम एक समय बाकी रहा हो, उस समय अगर अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ में से किसी एक का उदय आ जाये तो वह जीव सम्यक्त्व से भ्रष्ट होते हुये मिथ्यात्व के सन्मुख होता है। इतनी तो बात ख्याल में आ गयी न ? अब थोड़ासा और इसीके आगे जायेंगे। कोई जीव जो सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है तो उस समय क्या होता है ? अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि की ही बात सोच रहे हैं न हम। अगर वह औपशमिक सम्यक्त्व की प्राप्ति करे तो दर्शनमोहनीय कर्म में क्या होता है विरेशभाई ? उसके तीन टुकड़े हो जाते हैं, क्या होता है ? अभी हमने देखे न, तीन भेद हो जाते हैं। एक मिथ्यात्व, एक सम्यग्मिथ्यात्व और तीसरा सम्यक् प्रकृति।

अभी क्या हो गया, कोई जीव सम्यक्त्व की प्राप्ति करे और कुछ समय में वह फिर मिथ्यात्वी हो जाये। तो मिथ्यात्वी हो जाये तो उसके जो तीन टुकड़े बने हैं न। अभी हम कर्म की भाषा में बात करेंगे तो मोहनीय कर्म के कितने भेद हैं ? दिलीपजी बतायेंगे ? *श्रोता: दोनों मिलकर ?* हां दोनों मिलकर। दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय मिलकर। हां-हां, कौन यहां से बता रहे हैं ? हां, पच्चीस तो हैं चारित्रमोहनीय की। *श्रोता: दर्शनमोहनीय की दो।* दर्शनमोहनीय की कितनी है ? दो क्या चार नक्की बताओ। *श्रोता: दर्शनमोहनीय की तीन।* दर्शनमोहनीय की तीन कौन-कौनसी ? *श्रोता: मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति।* हां, इतना मालूम है और आगे का यह भी मालूम है कि चारित्रमोहनीय की पच्चीस प्रकृतियां होती हैं, अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन क्रोध-मान-माया-लोभ - सोलह और नौ

नोकषाय मिलकर पच्चीस हो गयी। और दर्शनमोहनीय के तीन टुकड़े जो सादि मिथ्यादृष्टि है उसकी बात चल रही है न, वह सम्यक्त्व से गिरकर मिथ्यात्व में आया है। वह अट्ठाईस की सत्तावाला जीव है। अब जो अट्ठाईस की सत्तावाला मिथ्यादृष्टि जीव है उसके तो नया मिथ्यात्व कर्म तो बंधता ही जा रहा है और पहले जो मिथ्यात्व के तीन टुकड़े हो गये, उनमें से सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति भी वहां हैं। अभी यहां तो उदय होगा मिथ्यात्व का और ये दो अभी उदययोग्य हैं नहीं, उदयरूप निषेक के ऊपर के निषेकों में वे पड़ी हैं। ऐसे समय में कोई जीव दुबारा सम्यक्त्व की प्राप्ति करेगा तो वह क्षयोपशम सम्यक्त्व यानी वेदक सम्यक्त्व प्राप्त करेगा। दोनों का अर्थ एक ही है। किस अपेक्षा से उसके ये दो नाम कहे गये हैं वह भी देखेंगे हम।

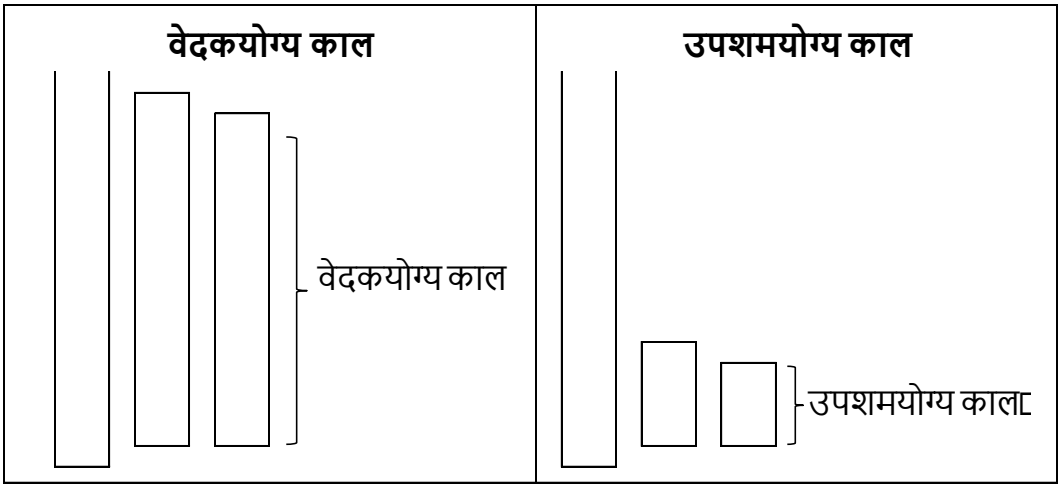
सम्यक्त्व से गिरकर मिथ्यात्व में आने पर मिथ्यात्व की स्थिति अंत:कोड़ाकोड़ी सागर थी। यहां कह रहे हैं कि वह जो मिथ्यात्व अभी बांध रहा है, नया बांध रहा है वह अधिक स्थितिवाला होगा क्योंकि कोई जीव ऐसा भी होगा न कि वह ७० कोड़ाकोड़ी सागरवाला बंध कर रहा हो। तो उसमें तो तीन टुकड़े हुये नहीं हैं। जिस समय उसने सम्यक्त्व प्राप्त किया था, उस समय यह जो दर्शनमोहनीय कर्म है वह अंत:कोड़ाकोड़ी सागर का हो गया था। यह अंत:कोड़ाकोड़ी सागर यानी समझते हैं आप ? सबको पूछने दो, आप तो जानकार हो भाई ! अंत:कोड़ाकोड़ी यानी क्या ? कविताबहन आप जानती हैं ? बताता हूं। कोड़ाकोड़ी यानी क्या ? पहले हम उससे चालू करते हैं। हां बोलो साहब। *श्रीता: एक करोड़ गुणा एक करोड़।* आपका कहना है एक करोड़ गुणा एक करोड़ इसको कोड़ाकोड़ी कहते हैं। यहां क्या कहते हैं ? अंत:कोड़ाकोड़ी, अभी हमने अंतर्मुहूर्त देखा न, एक मुहूर्त से कम जो होगा उसको अंतर्मुहूर्त कहेंगे। वैसे यहां पर क्या बता रहे हैं कि अंतःकोड़ाकोड़ी सागर यानी एक कोड़ाकोड़ी सागर से थोड़ासा कम अंतःकोड़ाकोड़ी सागर इतनी इन कर्मों की स्थिति रह जाती है।

अब क्या हो गया कि मिथ्यात्व में आने पर मिथ्यात्व का उदय भी चालू है और नया बंध भी हो रहा है तो उसकी बहुत लंबी स्थिति रहेगी। लेकिन ये जो दो हैं इनकी स्थिति अंतःकोड़ाकोड़ी सागर है। अब हर समय सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति हैं वे मिथ्यात्वरूप से टर्न होती जाती हैं, उसको **उद्वेलना** कहते हैं। वे दो प्रकृतियां दुबारा मिथ्यात्वरूप हो जाती हैं। उसको असंख्यात वर्ष लगते हैं, उसको शास्त्रीय भाषा में पल्य के असंख्यातवें भाग जितने काल में वे ट्रान्स्फर हो जाती हैं। पहले सम्यक् प्रकृति

नष्ट होती है, यह सम्यक् प्रकृति मिथ्यात्वरूप होती है और अंतःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण उसके निषेक थे उनकी उद्वेलना होने के लिये पल्य के असंख्यातवें भाग जितना काल लगता है। वह भी असंख्यात वर्षों का होता है। पल्य के असंख्यातवें भाग जितना काल जायेगा तो सम्यग्मिथ्यात्व भी मिथ्यात्वरूप हो जाता है। तो वह सादि मिथ्यादृष्टि है वह भी अनादि मिथ्यादृष्टि जैसा हो जाता है। अभी उसकी सत्ता में दर्शनमोहनीय का एक मिथ्यात्व कर्म ही है, यानी पहले जैसा जो अनादि मिथ्यादृष्टि के होता है।

देखो एक बात बिलकुल ध्यान में रखना हो, क्या बता रहे हैं ? कभी भी सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति का बंध होता नहीं। बंध तो मिथ्यात्व का ही होता है और जब सम्यक्त्व प्राप्त करता है तो उसके तीन टुकड़े हो जाते हैं, तब कहेंगे कि वह अट्ठाईस प्रकृतियों की सत्तावाला है। यह तो मोहनीय कर्म की अपेक्षा से बात कर रहे हैं। बाकी ज्ञानावरणादि की कोई यहां बात नहीं कर रहे हैं। जब भाईसाहब आपका कहना था कि पांच, छह या सात का उपशम कहा था उसमें छह कैसे होगी ? जब असंख्यात वर्ष के बाद यह सम्यक् प्रकृति है वह मिथ्यात्वरूप हो जाये, अभी सत्ता में सिर्फ मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व इतनी रह जाये। तो ये दो और अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ ये चार, छह रह गयी न ? अब यहां तक तो समझ गये न आप ? अब यह भी मैंने बताया कि ये दोनों नष्ट हो जाती हैं तब एक मिथ्यात्व प्रकृति रह जाती है। तब सादि मिथ्यादृष्टि भी अनादि मिथ्यादृष्टि जैसे छब्बीस प्रकृति की सत्तावाला हो जाता है। अब यहां तक तो बात ख्याल में आ गयी कि नहीं ?

अब क्या कह रहे हैं कि अभी मिथ्यात्व का उदय चालू है और इन दोनों का उदय चालू नहीं है। तब क्या होगा ? तो कहते हैं कोई जीव फिर से पुरुषार्थ करके करणलब्धि मांडे तो वह क्षयोपशम सम्यक्त्व की यानी वेदक सम्यक्त्व की प्राप्ति कर सकता है। पल्य के असंख्यातवें भाग जितना काल यानी असंख्यात वर्ष काल तक वह जीव अगर सम्यक्त्व की प्राप्ति करेगा, तो वह वेदक सम्यक्त्व ही होगा, उस काल को वेदकयोग्य काल कहा है। यहां से लेकर यहां तक का जो कुछ है वह वेदकयोग्य काल है। यानी उस काल में वह जीव उपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति नहीं कर सकता। अगर वह सम्यक्त्व की प्राप्ति करेगा तो क्षयोपशम सम्यक्त्व को ही प्राप्त कर सकता है।



अब चार्ट में देखो, यहां इधर से लेकर यहां तक जो वेदकयोग्य काल है इसमें कितने समय गये ? असंख्यात वर्ष गये। अब इसके बाद यह जो छोटा उपशमयोग्य काल है यहां जो बताया है, यह मिथ्यात्व तो है बहुत लंबा, उसकी स्थिति बहुत है लेकिन इन दोनों की स्थिति एक सागर जितनी रह जाये, उसको त्रस की अपेक्षा पृथक्त्व सागर भी कहने में आता है। पृथक्त्व सागर का अर्थ क्या होता है ? कुछ सागर। उतनी अगर उस जीव की इन दोनों कर्मों की स्थिति रह जावे तो उस समय अगर वह सम्यक्त्व प्राप्त करेगा तो ये तीन और अनंतानुबंधी की चार ऐसे सात कर्मों का उपशम करेगा। अगर उसकी उद्वेलना चालू है और यह सम्यक् प्रकृति भी सत्ता में से हट गयी है तो अभी दो रह गयी हैं और ये चार अनंतानुबंधीवाली ऐसे छह कर्मों का वह उपशम करेगा। जब ये दोनों ही नष्ट हो गयी हैं और केवल यह मिथ्यात्व बाकी है तो पांच प्रकृतियों का उसको उपशम करना है।

जरा आप पुस्तक में देखो, पेज नंबर ४३ क्वेश्चन नंबर ६८, **औपशमिक सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?** देखो यह औपशमिक शब्द कैसे तैयार हो गया है ? यह जीव के जो परिणाम हैं। देखो जीवों के परिणामों में उपशम तो सिर्फ दो ही प्रकार का बताया है। उपशम सम्यक्त्व और उपशम चारित्र। एक दर्शनमोहनीय का उपशम होता है और एक चारित्रमोहनीय का। ख्याल में आया ? यहां तो हम कर्मों की अपेक्षा से देखते हैं तो वहां कहते हैं कि कर्म कौनसा ? दर्शनमोहनीय कर्म को वह उपशमा सकता है। जीव के परिणाम अपने से होते हैं, वहां तो, उसका अपने से कार्य हो रहा

है। लेकिन हम निमित्त को मुख्य करके कहेंगे कि जीव ने दर्शनमोहनीय कर्म को उपशमाया है यानी वह उदय में आने योग्य नहीं हो ऐसा बनाया है। कोई किसीको बनाता नहीं है हो, फिर से बार-बार बोल रहा हूं मैं। करणानुयोग की तो निमित्त की भाषा में ही कथन करने की पद्धति है।

वह जो उपशम है उससे औपशमिक यह शब्द तैयार हुआ है। हम आपसे पूछते हैं आपको कोई शारीरिक बिमारी ? नहीं साहब, शारीरिक नहीं परंतु मानसिक है। यह शब्द कैसे तैयार हो गया ? शरीर से शारीरिक और मन से मानसिक; वैसे उपशम से होनेवाला वह औपशमिक, वैसे क्षायोपशमिक। कर्मों में जो क्षयोपशम होता है उसके कारण क्षायोपशमिक भाव जो होगा उसकी बात है। कर्मों का क्षय होता है उसके कारण जो कोई जीवों में भाव होते हैं उनको हम क्षायिक भाव कहेंगे। यहां तो हम सम्यक्त्व की बात कर रहे हैं। तो औपशमिक सम्यक्त्व, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व। यह इसतरह से ये शब्द तैयार हो गये हैं।

अभी यहां क्या कहते हैं ? देखो, पेज नंबर ४३ पर हम आते हैं दुबारा। **औपशमिक सम्यक्त्व किसे कहते हैं ? निज शुद्धात्म सन्मुख पुरुषार्थी जीव के**, कौनसा जीव लिया है ? पुरुषार्थी जीव लिया है। तो पुरुषार्थी जीव क्या कर रहा है ? कि आज दिन में मैं करोड़ रुपया कैसा कमाऊं, ऐसा पुरुषार्थ करता होगा कि नहीं ? यहां तो कहते हैं कि पुरुषार्थ से पैसा मिलता होगा कि नहीं ? हां बहन ? हम मेहनत करेंगे तो पैसा मिलेगा कि नहीं ? हां बोलो-बोलो, *श्रोता: नहीं मिलेगा।* तो इतने सारे लोग जो पुरुषार्थ करते हैं, हमारे अंबानीसाहब ने तो कितने करोड़ों रुपये जमा किये हैं। अभी जो अंबानी हैं वे नहीं, उनके पिताजी। क्या नाम है ? मैं जानता नहीं। *श्रोता: अनिल अंबानी।* नहीं-नहीं, *श्रोता: धीरूभाई अंबानी।* धीरूभाई अंबानी बराबर-बराबर, उन्होंने कितना पुरुषार्थ किया ? तो उन्होंने इतना पुरुषार्थ किया तो इतने करोड़ों की संपत्ति प्राप्त की और उनके बच्चों ने कितना पुरुषार्थ किया ? वे करोड़ों की संपत्ति के मालिक हुये कि नहीं ? तो पुरुषार्थ से पैसा मिलता है ? क्या यह सही बात है ?

हमने तो ऐसा माना है साहब आप जानते नहीं, हम सुबह ५ बजे घर छोड़ते हैं, रात को १० बजे आते हैं। पूरे दिन मेहनत करते हैं तो हमने पुरुषार्थ किया पैसा कमाने का। तो यह पुरुषार्थ क्या होता है ? ऐसा हमारे मन में प्रश्न तो उठना चाहिये। हम तो

अपनी भाषा में बात करेंगे। पुरुषार्थ जो है वह द्रव्य है, गुण है या पर्याय है ? नक्की क्या है ? साहब इतना मालूम नहीं आपको ? अरे वह तो जीव के वीर्य गुण की पर्याय है, उसका नाम पुरुषार्थ है। तो वह जीव का वीर्य गुण जो है, वह वीर्य गुण कहां रहता है ? तो कहते हैं आपको मालूम नहीं ? अरे वह जीवद्रव्य के संपूर्ण भागों में और उसकी संपूर्ण अवस्थाओं में रहता है। वह जीव को छोड़कर इधर-उधर कहीं भटकता नहीं। अगर वह भटके तो उसको हम वीर्य गुण भी नहीं कहेंगे। अच्छा, तो तुम्हारा वीर्य इतना पॉवरफुल है कि वह पुद्गल में जाकर; वह पैसा क्या है ? नोट हैं वे पुद्गल हैं, वे कॉइन्स हैं वे भी पुद्गल हैं। उसमें जाकर उसको सुधारे, उसको लाये, उसको यहां से वहां घुमाये ? तू ही कह रहा है कि वीर्य गुण जीवद्रव्य के संपूर्ण भागों में और उसकी संपूर्ण अवस्थाओं में रहता है और वह परद्रव्य में जाकर उसका पुरुषार्थ करें ? अरे ! जहां द्रव्य है वहीं गुण है और उसी क्षेत्र में उसकी पर्याय है। हमने तो पुरुषार्थ को ऐसा माना कि पर का मैं परिणमन कर सकता हूं, पर को मैं हिला सकता हूं, पर को मैं डुला सकता हूं, पर को मैं घुमा सकता हूं।

यहां तो कह रहे हैं, भैया हमने इतना काम किया तभी तो पैसा मिला। अरे तेरे पूर्व पुण्य का उदय था, उस पुण्य के कारण - भवों-भवों तक तूने जो कुछ पुण्य किया है उसके कारण अभी तुझे पैसा मिल रहा है। नहीं साहब, हमने ऐसा दिमाग चलाया, वह शेअर का क्या होता है न, शेअर में ऐसा पैसा डाला कि शेअरवाले ने हमको पैसा दिया। हम ज्ञान से, बुद्धि से काम करते हैं, तभी तो यह पैसा आया। अच्छा ! हमने तो ऐसा देखा केवलज्ञानी भी ज्ञान से केवल जानते ही हैं और तू ज्ञान से पैसा कमाता है। क्यों ? नक्की क्या कर रहा है तू ? देखो हमारी मान्यता देखो कैसी है ? नहीं हो तो बहुत अच्छा है और हो तो उसको छोड़ने की कोशिश करो। तो यहां पुरुषार्थ जो है वह क्या करता है ? वह तो पर्याय में स्वरूप की रचना करने का कार्य करता है यानी जैसा मेरा स्वभाव है वैसा पर्याय में उसको प्रकट करना यह पुरुषार्थ है। गुरुदेवश्री तो कहते हैं जो सम्यक्त्व प्राप्त करता है वह तो अनंत पुरुषार्थी है।

यहां क्या बात कर रहे हैं ? देखो, यहां तो कह रहे हैं, निज शुद्धात्म सन्मुख यानी निज शुद्धात्मा के सन्मुख होना यही पुरुषार्थ है। ऐसा पुरुषार्थी जीव। आपको लगता होगा कि एक बार पुरुषार्थ शब्द मिल गया तो यह कहां से कहां भटक गया। भटका नहीं, यह पुरुषार्थ क्या होता है वह समझने के लिये हम वहां तक गये। हमने तो

आज तक ऐसा ही माना है कि हमने तो पुरुषार्थ किया और इतना पैसा कमाया। अरे जा-जा ! तुझे मालूम है यह वीर्य गुण, यह केवल जीवद्रव्य की ही मनॉपली नहीं है। भले हम लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका में पढ़े हैं कि ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य आदि जीवद्रव्य के विशेष गुण हैं। लेकिन वह तो बच्चों को सीरियल खिलाने जैसा है। साहब आपके घर में कोई छोटा बालक होगा ? साल का या उससे कम छह महीने का ? आज नहीं कुछ साल पहले भी तो हुआ होगा। उसको आप पुरणपोली खिलाते थे न, छह महीने के बच्चे को ? अरे उसको पचे वह खिलायेंगे सीरियल-बेबीफूड आजकल की भाषा में। जब बड़ा हो जायेगा तगडा तो वह लड़का बिना पूछे दस-बारह पुरणपोली खा लेगा।

वैसे पहले तो यही बताया गया है वीर्य गुण जीवद्रव्य का विशेष गुण है, लेकिन हर द्रव्य में वीर्य गुण है। ख्याल में आया ? देखो हमने तो यह पढ़ा हुआ है कि प्रत्येक द्रव्य में प्रत्येक समय में कार्य होता है वह पांच समवायों से होता है। पांच समवाय में स्वभाव, पुरुषार्थ, काललब्धि, होनहार और निमित्त - ये पांच समवाय तो होते ही होते हैं। तो पुद्गलद्रव्य में भी कार्य हो रहा है, धर्मद्रव्य में भी कार्य हो रहा है। धर्मद्रव्य पलटता है कि नहीं ? उसमें पर्याय नयी-नयी हो रही हैं कि नहीं ? तो उनमें जो कोई परिणमन हो रहा है उनमें उनका पुरुषार्थ कार्यरत है। लेकिन हमने ऐसा माना कि नहीं-नहीं यह फ्लॉवर पॉट ऐसा नहीं रखना चाहिये, ऐसा रखना चाहिये। हम घर में तो डेकोरेशन करते हैं कि फूल इधर नहीं उधर, उधर और अपन भी टेढ़े-मेढ़े घूमने लगते हैं। हमें तो लगता है यह ठीक रखना, यह बरोबर रखना, घर को सजाना उसमें हमारा पुरुषार्थ है। अरे, वह पुद्गल की रचना जो होनी है सो होती है।

अगर आपको कोई प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता है, गुरुदेवश्री के पास जाना। लोग आकर कहते हैं 'साहब आपने इतना अच्छा मंदिर बनाया।' कोण बनावे ! क्या बोलते हैं ? कौन बनाता है ! यह पुद्गल की रचना जो होनी है और हमने तो ऐसा माना है कि हमने इतना पैसा इक्कट्ठा किया और यह देखो पूरा हमारा देवलाली हमने स्थापित किया है। तो गुरुदेवश्री के पास चलो। वे कहें कौन बनाये ? ख्याल में आया ? देखो भाई मैं किसीकी टीका टिप्पणी नहीं कर रहा हूं। अगर किसीकी ऐसी खोटी मान्यता होती है कि यह घर जो है मैंने बनाया, मैंने पैसा दिया इसलिये यह घर बना है। भैया तू धोखे में है, अभी तेरे लिये दिल्ली बहुत दूर है। यहां तो पर का परिणमन तू नहीं कर सकता है। तेरा पुरुषार्थ तेरे में लगेगा कि पर में लगेगा यह हमें नक्की करना है।

यहां क्या कह रहे हैं देखो ? कि निज शुद्धात्म सन्मुख पुरुषार्थी जीव के **पांच, छह या सात प्रकृतियों के उपशम के समय में अर्थात् निमित्त से होनेवाले श्रद्धागुण के सम्यक् परिणमन को औपशमिक सम्यक्त्व कहते हैं।** यह औपशमिक सम्यक्त्व की अभी हमने परिभाषा देखी है। हमने देखा है पांच, छह और सात हैं न साहब ! तो आपने पूछा था यह कहां लिखा है ? तो मैं तो कहूंगा जयधवला पुस्तक नंबर २ से लेकर पुस्तक ९ तक जिनका हमारा अभ्यास हुआ है, उसके हर पुस्तक में कम से कम १०० बार यह लिखा है कि छह प्रकृतियों का वह उपशम करता है करके। अब यहां क्या लिखते हैं नीचे- **अनादि मिथ्यादृष्टि के पांच प्रकृतियों का और** आगे क्या लिखा ? **सादि मिथ्यादृष्टि** उसके **सात, छह या पांच प्रकृतियों का उपशम होता है।** अभी तो यह हमने देख लिया, यह वेदकयोग्य काल और उपशमयोग्य काल, इसके माध्यम से हमने यह भी नक्की किया है कि उस जीव के पांच कर्मों का, छह कर्मों का या सात कर्मों का उपशम भी हो सकता है।

अब यहां तक तो हम आये थे। अब इसको और अच्छी तरह से, गौर से देखना हो तो हम आगे चलते हैं। आपके पास पुस्तक है न सबके पास ? तो उसमें परिशिष्ट ५, पेज नंबर २७६, मिल गया सबको ? वहां लिखा है, यह ब्रॅकेट है न राइट साइड में- **सम्यक्त्व सन्मुख मिथ्यादृष्टि।** यह सम्यक्त्व सन्मुख क्या होता है ? यह अगर आपको समझना है तो मोक्षमार्गप्रकाशक में देख लेना जाकर - सम्यक्त्व सन्मुख मिथ्यादृष्टि। यानी यह मिथ्यादृष्टि है, लेकिन कैसा है ? सम्यक्त्व की ओर जानेवाला, उस ओर उसने मुख किया है। सम्यक्त्व सन्मुख मिथ्यादृष्टि, वह क्या कर रहा है ? **करणलब्धि प्राप्त जीव यहां आते ही मिथ्यात्व कर्म के रहितपने के कारण क्षायिक सम्यक्त्व के समान निर्मल भावरूप औपशमिक सम्यक्त्व को प्राप्त करता है।** यह क्या बता रहे हैं देखो भैया; यहां यह बता रहे हैं कि जिसके उपशम सम्यक्त्व होता है वह उपशम सम्यक्त्व इतना निर्मल है कि ॲज गुड ॲज क्षायिक सम्यक्त्व। उनकी निर्मलता में कोई अंतर नहीं। यहां तक कहते हैं कि औपशमिक सम्यग्दृष्टि की जो निर्मलता है वह सिद्धों के सम्यक्त्व के निर्मलता जितनी है। ख्याल में आया ?

अब यहां क्या कह रहे हैं देखो। अब यह तो हमने कौनसा टॉपिक आनेवाला है उसके बारे में देखा। अभी यह बीच में ऐसा एक ब्लॅक पट्टा है और उसके बीच में एक चौकोर गॅप रखी है। वह उसका नाम है, लेफ्ट साइड में, बायी तरफ ऊपर लिखा है

मिथ्यात्व दर्शनमोहनीय कर्म। यानी यह पूरा जो कोई ब्लॅक है वह मिथ्यात्व है। वह मिथ्यात्व क्या है ? दर्शनमोहनीय नाम का कर्म है। अब यह जीव क्या करता है वह बात बताते हैं। तो उसके पहले राइट साइड में हम आते हैं। वहां जो आकृति है उसके दाहिनी तरफ **उपरितनस्थिति** कहा। क्या कहा ? उपरितनस्थिति, इसको यहां पर द्वितीयस्थिति भी कहा है और नीचे क्या लिखा है ? **अधस्तनस्थिति** यानी उसको प्रथमस्थिति हमने नाम दिया है। अब क्या कहते हैं ? लेफ्ट साइड में देखते हैं, एकदम नीचे जो है - **इस समय जीव मिथ्यादृष्टि रहता है।** कब तक ? **अधःकरण** का **काल**, **अपूर्वकरण** का **काल** और **अनिवृत्तिकरण** का **काल**। तब तक जीव कैसा है? यह करणलब्धि मांडता है, करण मांडता है तब भी वह मिथ्यादृष्टि ही है। इसलिये ऊपर क्या कहा ? सम्यक्त्व सन्मुख मिथ्यादृष्टि।

यह अनिवृत्तिकरण काल जब पूरा होता है उस समय वहां कोई दर्शनमोहनीय कर्म नहीं है। इसलिये उसे ब्लॅंक रखा है। तो वहां लिखते हैं **मिथ्यात्व से रहित स्थान** और उसको यह कौनसा ? यह चौकोर जो है न, वह कैसा है ? मिथ्यात्व कर्म के उदय से रहित स्थान और वह है **औपशमिक सम्यक्त्व का काल।** अब यह जो काल है वह एक अंतर्मुहूर्त का काल है। उस एक अंतर्मुहूर्त काल के बीच में जो निषेक थे उनमें से कुछ तो अधस्तनस्थिति में अपकर्षित हुये और कुछ तो उपरितनस्थिति में उत्कर्षित हुये और वहां बीच में गॅप तैयार हो गयी और वहां उस जीव को सम्यक्त्व प्राप्त होता है। अब यह सारी जो बात है वह हम यह नीचे का पॅरेग्राफ है, वहां देखते हुये आगे बढ़ेंगे। **यह बड़ी रेखा मिथ्यात्व कर्म की है। बीच में पोल अर्थात् खाली जगह मिथ्यात्व कर्म के उदय से रहित दिखायी गयी है। इस स्थान में भी पहले मिथ्यात्व कर्म की सत्ता थी। जबसे सम्यक्त्व सन्मुख मिथ्यादृष्टि करणलब्धि प्राप्त जीव अधःकरण, अपूर्वकरण परिणामों से आवश्यक कार्य करता है।** अभी यह आवश्यक कार्य इसको जरा आप गौण करो क्योंकि यह समझाने के लिये और दो-तीन घंटे लगेंगे। यानी जो कुछ वहां क्रियायें होती हैं वे हो जाती हैं और वे होती ही हैं। उसको कहते हैं आवश्यक कार्य। वे चार-चार होते हैं।

पश्चात् अनिवृत्तिकरण परिणाम के कुछ काल व्यतीत होने के बाद। अनिवृत्तिकरण यानी जो आखरी जो करण परिणाम है वह, उस परिणाम में क्या होता है ? कुछ काल व्यतीत होने के बाद **मिथ्यात्व कर्म के कुछ निषेक प्रति समय दीर्घ**

काल के बाद उदय आने योग्य मिथ्यात्व के उपरितनस्थिति में यानी ऊपर यानी हमने यहां द्वितीयस्थिति कहा, **जाते रहते हैं और कुछ निषेक अधस्तनस्थिति** यानी नीचे **में जाकर मिल जाते हैं।** उस कारण यहां मिथ्यात्व कर्म में अंतर-गॅप तैयार होती है। उसके बाद द्वितीयस्थिति के परमाणु प्रतिसमय उपशमित होते रहते हैं और प्रथमस्थिति का एक-एक निषेक उदय में आकर खिर जाता है। यानी अनिवृत्तिकरण में जो कोई अंतर्मुहूर्त है उसके आखिर के समय तक यह बात चलती रहती है। **इतनी अवधि में - अंतर्मुहूर्त काल में मिथ्यात्व कर्म का उदय आते रहने से अधस्तनस्थिति के मिथ्यात्व कर्म, उदय में आकर निकल जाते हैं और जीव मिथ्यात्व कर्म से रहित स्थान में पहुंचता है। तथा वहां मिथ्यात्व कर्म का उदय नहीं होने से एवं श्रद्धा गुण की सम्यक्त्वरूप पर्याय प्रकट होने के कारण क्षायिक सम्यक्त्व के समान यथायोग्य एक अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत औपशमिक सम्यक्त्व को प्राप्त करता है।**

अभी बात क्लिअर हो गयी ? जिनके मन में ऐसा था कि यह बात समझ में नहीं आयी तो यहां बहुत अच्छी तरह से समझाया है। क्या कहते हैं नीचे ? **सादि मिथ्यादृष्टि हो तो अनंतानुबंधी के ४ एवं दर्शनमोहनीय के ३ कर्म, कुल मिलाकर ७ कर्मों का उपशम करता है। अनादि मिथ्यादृष्टि हो तो अनंतानुबंधी के ४ और मिथ्यात्व १**, ऐसे **कुल ५ कर्मों का उपशम करता है। कदाचित् सादि मिथ्यादृष्टि भी** यह **५, ६, या ७ का उपशम करता है।** यह जो हमारे मन में था कि छह कैसे होता है उसकी तो बात की। अभी वहां एक बात बताना मैं चाहता था कि यहां यह जो वेदकयोग्य काल है वह खतम होने के लिये असंख्यात वर्ष का काल लगता है। उसके बाद जीव दुबारा सम्यक्त्व प्राप्त करेगा तो वह औपशमिक सम्यक्त्व ही प्राप्त करेगा। उस समय क्षायोपशमिक नहीं होगा ऐसी औपशमिक सम्यक्त्व की प्राप्ति कोई जीव हो सकता है कि असंख्यात बार करेगा। क्योंकि प्रथम बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व होने के पश्चात् कोई जीव मोक्ष जाने के पहले अर्धपुद्गलपरावर्तन काल तक संसार में भटक सकता है उस अनंतकाल में असंख्यात बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त होकर छूट सकता है।

देखो एक उपशम सम्यक्त्व और उसके बाद में दूसरा उपशम सम्यक्त्व प्राप्त करने में असंख्यात वर्ष जाते हैं और ऐसे असंख्यात बार वह प्रथमोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है। तो यह अर्द्धपुद्गलपरावर्तन का काल कितना होगा ? ख्याल में आया ?

हमको तो लगता है ऐसा ही है अर्द्धपुद्गलपरावर्तन। क्योंकि यह बात निश्चित है कि कोई जीव भूल चूक से, किससे ? भूल चूक से सम्यक्त्व की प्राप्ति करेगा तो सावधान, उसको अर्द्धपुद्गलपरावर्तन काल में संसार को छोड़कर सिद्ध दशा में जाना पड़ेगा ही पड़ेगा। तो अभी सोचना सम्यक्त्व प्राप्त करना कि नहीं करना ? अरे भैया, वह काल भी बहुत बड़ा है। कितना ? अर्धपुद्गलपरावर्तन यानी अनंतकाल है। यहां तो असंख्यात वर्ष में असंख्यात समय ही हैं वहां पर। कोई अधिक हैं ही नहीं। फिर भी वह इतना लंबा काल है कि हमारे सोच की बाहर की बात है।

एक बार सम्यक्त्व प्राप्ति के लिये हम तो तड़प रहे हैं और कोई महाभाग ऐसा है कि वह असंख्यात बार सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है। उन परिणामों की जरा सोचो तो सही, कैसे जीव के परिणाम पलटते होंगे और हमें लगता है कि आज के मेरे परिणाम हैं वैसे ही कायम रहेंगे, जरा भी नहीं। जब भी हम यह केवली भगवान के ज्ञान की ऐसी झलक देखते हैं तो उस केवली भगवान के सामने हम नतमस्तक हुये बिना रहेंगे नहीं। यहां तो कह रहे हैं तू केवली भगवान के सामने मत देख क्योंकि तेरे में राग की उत्पत्ति होने जा रही है। तू उनकी तरफ नतमस्तक होने के बजाय अपने स्व-स्वरूप में नतमस्तक हो जा। कहीं तुझे यहां वहां जाना नहीं है, तो तेरे में राग की उत्पत्ति होगी ही नहीं। होगा तो शुद्धोपयोग होगा और तुझे सम्यक्त्व की प्राप्ति होगी।

देखो हम यह करणानुयोग का अभ्यास करते हैं तो हमने द्रव्यानुयोग के माध्यम से जो कुछ बातें सीखी हैं, समझी हैं उसको अधिक-अधिक बल प्राप्त होता है और सर्वज्ञ की महिमा आये बिना नहीं रहती है। मैं तो कहूंगा उसके आगे जाकर अपने स्वभाव के, अपने स्वरूप की अगर इस जीव को ऐसी तालावेली-आतुरता लगे कि अरे, यह बात मैं क्यों छोड़ रहा हूं। ऐसी अंदर से बात खटकेगी उसको तो वह जीव जरूर आगे बढ़कर अपना कार्य कर लेगा। यहां क्या कह रहे हैं देखो ? अभी यहां छह - सातवाले के उपशम की तो बात हो गयी। **औपशमिक सम्यक्त्व की उत्पत्ति में प्रथम समय में ही मिथ्यात्व कर्म के १. मिथ्यात्व, २. सम्यग्मिथ्यात्व ३. सम्यक् प्रकृति, ऐसे तीन टुकड़े हो जाते हैं। औपशमिक सम्यक्त्व की प्रथम उत्पत्ति चौथे, पांचवें अथवा सातवें गुणस्थान में से किसी भी एक गुणस्थान में होती है।** मुझे एक प्रश्न पूछने का विकल्प आया। उपशम सम्यक्त्व के कितने गुणस्थान हैं ?

उपशम सम्यक्त्व के कितने गुणस्थान हैं ? कौनसे-कौनसे हो सकते हैं उसमें ? भाईसाहब आप बतायेंगे ? *श्रोता: चार।* चार, कौनसे-कौनसे ? *श्रोता: मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व और ? मिथ्यात्व गुणस्थान में उपशम है ? उपशम सम्यक्त्व है ? तो हमने पूछा उपशम सम्यक्त्व के कौनसे-कौनसे गुणस्थान हैं और आपने पहले ही सिक्सर मार दी। *श्रोता: ४, ५, ६।* ४, ५, ६, हां। और कोई कहना चाहेगा ? हां-हां बोलो बहन ? *श्रोता: ४ से ११।* बहन ने क्या बताया ? ४ से ११। हमने प्रथमोपशम, द्वितीयोपशम ऐसा भेद कहां किया है ? हमने तो पूछा था कि उपशम सम्यक्त्व के कौन-कौनसे गुणस्थान होते हैं। ख्याल में आया ? तो उन्होंने बताया चौथे, पांचवें। यहां तो प्रथमोपशम की बात तो बता दी आपने। क्या कहते हैं ? चौथे, पांचवें, छठे और सातवें में। देखो भाई बात ऐसी होती है, सुनना हो, यह विषय मैं आगे बताऊंगा आपको। लेकिन यहां तो यह बता रहे हैं कि जो जीव पहले गुणस्थान से सातवें गुणस्थान में जायेगा और वहां जाने पर सातवें गुणस्थान से छठे गुणस्थान, छठे से सातवें, सातवें से छठे ऐसे हजारों बार झूलेगा तब भी उपशम सम्यक्त्व का काल पूरा नहीं होता है। बोलो ! यानी यह अंतर्मुहूर्त का जो काल है वह अंतर्मुहूर्त के भेद भी घने हैं। देखो यह ऐसी विचित्रता-अद्‌भुतता यानी ऐसी वंडरफुल बातें इसमें हैं कि हम सोच भी नहीं सकते।

यहां तो लिखा है न, देखो-देखो, क्या लिखा है कि औपशमिक सम्यक्त्व की उत्पत्ति की बात है। मैं तो कह रहा हूं वह औपशमिक सम्यक्त्वी जब सातवें में जायेगा तो एक अंतर्मुहूर्त काल में वह छठे में आयेगा, आयेगा और आयेगा ही ऐसे अनेकों बार छठा-सातवां, छठा-सातवां होगा फिर भी वह उपशम सम्यक्त्वी है। अभी जो बहन ने बात की वह ऐसा है जो द्वितीयोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है, वह द्वितीयोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति करके वह उपशमश्रेणी चढ़ता है ८, ९, १० और ११ और ११ से दुबारा नीचे जब उतरता है तो नियम से १०, ९, ८, ७, ६। हो सकता है कोई जीव पांचवें में जायेगा या कोई जीव चौथे में जायेगा वह तो उसका उपशम सम्यक्त्व ही है। ख्याल में आया ? तो उपशम सम्यक्त्व के गुणस्थान कौनसे हैं जब हम पूछते हैं या आपसे पूछा जाये तो आपको बताना है उपशम सम्यक्त्व के ४ से लेकर ११ तक के गुणस्थान हैं। ख्याल में आया ? अभी आगे की बात हम थोड़ी देर में करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

१०. सासादनसम्यक्त्व - गमनागमन, विशेषता

अभी हम सासादन गुणस्थान में जो कोई कर्मों की अवस्था होती है वह देखने की कोशिश कर रहे थे। यहां पृष्ठ क्रमांक २७६ पर औपशमिक सम्यक्त्व के पूर्व में यह जो अंतरकरण उपशम होता है, उसके बारे में भी हमने देखा है। दर्शनमोहनीय कर्म में जो कुछ बीच में गॅप तैयार होती है, अंतर तैयार होता है, वह अंतर की बात अभी हमने यहां पर देखी थी।

लेकिन वहां अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभरूप का कोई परिणमन हो रहा है, उसके बारे में विशेष यहां जानकारी नहीं दी है। वह हम आगे जाकर देखते हैं पेज नंबर २७७ पर। यहां कहते हैं, देखो बीच में दो लाइन हैं, **प्रथमोपशम सम्यक्त्व के संबंध में मोक्षमार्गप्रकाशक शास्त्र के पृष्ठ २६४ का निम्न कथन भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।** अब इसमें क्या कह रहे हैं ? **इस प्रकार अपूर्वकरण होने के पश्चात् अनिवृत्तिकरण होता है।** यह बात तो मोक्षमार्गप्रकाशककार पं. टोडरमलजी ने लिखी है। वे कह रहे हैं कि अपूर्वकरण होने के पश्चात् अनिवृत्तिकरण होता है। यह अपूर्वकरण यानी जो दूसरा करण परिणाम है। पहला अधःप्रवृत्तकरण और दूसरा अपूर्वकरण और उसके बाद में अनिवृत्तिकरण। **उसका काल** यानी किसका ? अनिवृत्तिकरण का काल **अपूर्वकरण के भी संख्यातवें भाग है।**

मैंने बताया था आपको अधःप्रवृत्तकरण का जो कोई काल है, उससे भी छोटा काल अपूर्वकरण का है। उससे भी छोटा काल, अभी इन्होंने तो डायरेक्ट बताया कि संख्यातवें भाग जितना है। १६ का चौथा भाग कितना होगा ? *श्रीता: ४/४* यानी वह १६ है तो यह ४ है। ऐसा यहां जो कुछ यथायोग्य होगा वह समझना। तो कहते हैं **उसमें पूर्वोक्त आवश्यक सहित कितना ही काल जाने के बाद अंतरकरण करता है।** यानी यह जो आवश्यक बातें बतायी हैं वह आवश्यक बातें होने के बाद की बात है। वहां पर, यह आवश्यक बातें हैं न, वह हम आठवें- नौवें गुणस्थान में जायेंगे तब उसकी बात वहां पर देखेंगे। क्योंकि वह बात अभी हम एक्स्प्लेन करते बैठेंगे तो काफी समय जायेगा। जो विषय चालू है वह दूर हो जायेगा।

तो यहां कह रहे हैं कि पूर्वोक्त आवश्यक सहित कितना ही काल जाने के बाद अंतरकरण करता है यानी यह बीच में गॅप तैयार होती है। **जो अनिवृत्तिकरण के**

काल पश्चात् उदय आने योग्य ऐसे मिथ्यात्वकर्म के मुहूर्तमात्र निषेक उनका अभाव करता है। यानी यह बीचवाली जो गॅप है वह कितनी है ? अंतर्मुहूर्त जितनी उसमें गॅप तैयार होती है। **उन परमाणुओं को अन्य स्थितिरूप परिणमित करता है। तथा अंतरकरण करने के पश्चात् उपशमकरण करता है। अंतरकरण द्वारा अभावरूप किये गये निषेकों के ऊपरवाले मिथ्यात्व के जो निषेक हैं, उनको उदय आने के अयोग्य बनाता है।** यानी यहां द्वितीयस्थिति में जो कर्म परमाणु हैं वे उदय में न आवे ऐसे बन जाते हैं। यहां बता रहे हैं कि उनको उदय के अयोग्य बनाया जाता है। बराबर ? **इत्यादिक क्रिया द्वारा अनिवृत्तिकरण के अंतसमय के अनंतर जिन निषेकों का अभाव किया था, उनका काल आये, तब निषेकों के बिना उदय किसका आयेगा ?** यानी वहां वह गॅप तैयार हो गयी है। **इसलिये मिथ्यात्व का उदय न होने से प्रथमोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है।**

अनादि मिथ्यादृष्टि के सम्यक्त्वमोहनीय और मिश्रमोहनीय की सत्ता नहीं है, इसलिये वह एक मिथ्यात्वकर्म का ही उपशम करके उपशम सम्यग्दृष्टि होता है। तथा कोई जीव सम्यक्त्व पाकर फिर भ्रष्ट होता है। अभी वह बात हम बाद में करेंगे। यहां ऐसा कॉन्ट्रव्हर्शल पॉइंट यह है, कौनसा ? कि जो पहली बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करता है वह जीव नियम से मिथ्यात्व में आता ही है। क्या ऐसा है ? उसके ऊपर उन्होंने बात बतायी है कि प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि गिरे ही ऐसा नहीं है। यहां लिखा है कोई जीव यानी सभी जीव मिथ्यात्व में जायेंगे ऐसा है नहीं। यह प्रथमोपशम सम्यक्त्व की बात है, पहली बार किये हुये प्रथमोपशम की नहीं है।

अभी एक पॉइंट ऐसा भी आया था कि प्रथमोपशम सम्यक्त्व और द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में क्या अंतर है ? तो बात ऐसी है कि अभी तो आपके पास पुस्तकें हैं नहीं, मेरे सामने है मोक्षमार्गप्रकाशक और उसके ३३३ पृष्ठ क्रमांक से मैं पढ़ रहा हूं। यहां बात बता रहे हैं, औपशमिक सम्यक्त्व के दो भेद हैं। एक है **प्रथमोपशम सम्यक्त्व और** दूसरा है **द्वितीयोपशम सम्यक्त्व।** अब कहते हैं **वहां मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में करण द्वारा दर्शनमोह का उपशम करके जो सम्यक्त्व उत्पन्न हो उसे प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।** यानी उनको इस बात पर विशेष बल देना है कि जो प्रथमोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है उसके पहले वह जीव नियम से मिथ्यादृष्टि ही होता है। क्या लिखा ? वहां यानी कहां ? प्रथमोपशम सम्यक्त्व में, मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में करण

द्वारा दर्शनमोह का उपशम करके जो सम्यक्त्व उत्पन्न हो, उसे प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहते हैं। यानी प्रथमोपशमवाला नियम से पहले मिथ्यादृष्टि होना ही चाहिये, एक बात निश्चित हो गयी। अब कहते हैं **वहां इतना विशेष है अनादि मिथ्यादृष्टि के तो एक मिथ्यात्व प्रकृति का ही उपशम होता है क्योंकि इसके मिश्रमोहनीय और सम्यक्त्वमोहनीय की सत्ता है नहीं।** क्योंकि वह सम्यक्त्व हुये बिना उसके तीन भेद होते ही नहीं हैं। इसलिये कहते हैं वह तो सिर्फ मिथ्यात्व प्रकृति का ही उपशम करेगा।

अब कहते हैं **जब जीव उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त हो, वहां उस सम्यक्त्व के काल में मिथ्यात्व के परमाणुओं को मिश्रमोहनीयरूप और सम्यक्त्वमोहनीयरूप परिणमित करता है तब तीन प्रकृतियों की सत्ता होती है। इसलिये अनादि मिथ्यादृष्टि के एक मिथ्यात्व प्रकृति की ही सत्ता है। उसीका उपशम होता है। तथा सादि मिथ्यादृष्टि के किसीके तीन प्रकृतियों की सत्ता है,** यानी दर्शनमोहनीय के तीन प्रकृतियों की सत्ता है, **किसीके एक ही की सत्ता है। जिसके सम्यक्त्व काल में तीन की सत्ता हुयी थी वह सत्ता पायी जाये, उसके तीन की सत्ता है और जिसके मिश्रमोहनीय, सम्यक्त्वमोहनीय की उद्वेलना हो गयी हो, उनके परमाणु मिथ्यात्वरूप परिणमित हो गये हों, उसके एक ही मिथ्यात्व की सत्ता है।** यहां पांच और सात जो बताते हैं न, तो सादि मिथ्यादृष्टि को भी पांच की सत्ता हो सकती है। लेकिन वह उद्वेलना होने के समय में अगर सिर्फ सम्यक् प्रकृति की ही उद्वेलना हो गयी और सम्यग्मिथ्यात्व अभी सत्ता में मौजूद है, तो उसके छह प्रकृतियों का... क्योंकि भाईसाहब हमारे पीछे लगे थे कि कोई शास्त्र का आधार है, तो मुझे याद आया। इसलिये मैंने अभी मंगवाया। *श्रोता: पेज नंबर ?* ३३३। वह उद्वेलना हो गयी, उनके परमाणु मिथ्यात्वरूप परिणमित हो गये हो। उसके एक मिथ्यात्व, इसलिये सादि मिथ्यादृष्टि के तीन प्रकृतियों का या एक प्रकृति का उपशम होता है।

अभी आगे बताते हैं कि जो द्वितीयोपशम सम्यक्त्व है, अभी बीच में बहुत मॅटर है, मैं वह छोड़कर आगे चल रहा हूं। कि **उपशमश्रेणी के सन्मुख होने पर...** अभी उपशमश्रेणी चढ़नेवाला जीव है, क्या वह सम्यग्दृष्टि होगा कि नहीं होगा ? हां अंजू ? उपशमश्रेणी चढ़नेवाला जीव है वह सम्यक्त्वी होगा या मिथ्यात्वी होगा ? बोल-बोल ! *श्रोता: सम्यक्त्वी होगा।* सम्यक्त्वी होगा। श्रेणी चढ़ रहा है न, जो सातवें गुणस्थानवर्ती जीव है वह नियम से सम्यग्दृष्टि होना ही चाहिये। ख्याल में आया न ? तो कह रहे हैं कि

उपशमश्रेणी के सन्मुख होने पर सप्तम गुणस्थान में क्षयोपशम सम्यक्त्व से जो उपशम सम्यक्त्व हो उसका नाम द्वितीयोपशम सम्यक्त्व है। यानी प्रथमोपशम सम्यक्त्ववाला जीव तो मिथ्यात्व में से सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है, यहां क्षयोपशम सम्यक्त्व से सहित है। लेकिन कोई भी जीव क्षयोपशम सम्यक्त्व में चल-मल-अगाढ़ दोष की वहां विद्यमानता होने के कारण वह श्रेणी चढ़ने में असमर्थ है। किसके साथ ? क्षयोपशम सम्यक्त्व के साथ। अभी हमने देखा था कि जो उपशम सम्यक्त्व है और क्षायिक सम्यक्त्व है, उन दोनों में निर्मलता बराबर है; लेकिन क्षयोपशम सम्यक्त्व में कुछ दोष हैं। उसको चल-मल-अगाढ़ दोष कहते हैं। वह क्या है ? वह आप जान लेना क्योंकि अभी उसमें हम जायेंगे तो और लंबा-लंबा हो जायेगा। अपना विषय थोड़ासा कम चलेगा।

उससे अच्छा हम यह देखते हैं कि यहां तो कह रहे हैं - क्षयोपशम सम्यक्त्व से जो उपशम सम्यक्त्व हो उसका नाम **द्वितीयोपशम सम्यक्त्व** है। **यहां करण द्वारा तीन ही प्रकृतियों का उपशम होता है;** क्योंकि उनकी सत्ता में उदय तो किसका है ? सम्यक् प्रकृति का है और सत्ता में मिथ्यात्व भी है और सम्यग्मिथ्यात्व भी है। इसलिये तीन ही प्रकृतियों का उपशम होता है **क्योंकि इसके तीन ही की सत्ता पायी जाती है। यहां भी अंतरकरण विधान से व उपशम विधान से उनके उदय का अभाव करता है, वही उपशम है। सो यह द्वितीयोपशम सम्यक्त्व सप्तमादि ग्यारहवें गुणस्थान पर्यंत होता है।** यानी यह सातवें गुणस्थान से द्वितीयोपशम सम्यक्त्व की शुरुआत होती है और वह ग्यारहवें गुणस्थान तक जाता है। कोई जीव अगर ग्यारहवें गुणस्थान से गिरते-गिरते आये तो चौथे गुणस्थान तक वह आ सकता है। इसलिये उपशम सम्यक्त्व की सत्ता चौथे गुणस्थान से ग्यारहवें गुणस्थान तक होती है, ऐसा विधान करे तो कोई गलत है नहीं।

यहां लिखते हैं- सो यह द्वितीयोपशम सम्यक्त्व सप्तमादि ग्यारहवें गुणस्थान पर्यंत होता है। **गिरते हुये किसीके छठे, पांचवें और चौथे भी रहता है।** यानी यह जो द्वितीयोपशम का काल है वह इतना बड़ा है कि ऊपर जाकर नीचे आये, छठे-सातवें, छठे-सातवें में ही रहे या तो पांचवें में जाये या तो चौथे में जाये तब भी उसके अभी द्वितीयोपशम सम्यक्त्व चल रहा है। तो यह किसी भाईसाहब ने पूछा था कि प्रथमोपशम सम्यक्त्व और द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में अंतर क्या है वह जरा हमें

बताइये, तो वह बताने की मैंने कोशिश की है। आप विशेष जानना चाहो तो मोक्षमार्गप्रकाशक में से आप अवश्य जान लीजियेगा। अब हम अपना विषय चालू करते हैं जहां हम सासादनसम्यक्त्व में आये थे। है न ?

पेज नंबर ८९ पर फिर से आते हैं हम। वहां पर जो परिभाषा दी है वह हम फिर से दुबारा देखेंगे। आधी परिभाषा तो हमने देख ली थी। वहां कह रहे हैं **प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अंतर्मुहूर्त काल में से जब जघन्य एक समय।** हमने देख लिया न वहां जो अंतर किया गया था, वह कौनसा अंतर है ? प्रथमोपशम सम्यक्त्व के पहले जो दर्शनमोहनीय में अंतर किया था वह कितना बड़ा है ? अंतर्मुहूर्त काल है। उस अंतर्मुहूर्त काल में से जब जघन्यवाला कितना समय है ? एक समय और उत्कृष्ट होगा तो वह काल कितना है ? छह आवली ऐसा काल शेष रहे, अभी उपशम सम्यक्त्व का काल पूरा होने में छह आवली टाइम बाकी है; **उतने काल में अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ में से किसी एक कषाय के उदय में आने से सम्यक्त्व की विराधना होने पर श्रद्धा की जो अव्यक्त अतत्त्वश्रद्धानरूप परिणति होती है।**

यह शब्द बहुत महत्व का है, श्रद्धा गुण का क्या हो रहा है ? कि अव्यक्त। किसके बारे में अव्यक्तता है ? तो कहते हैं अतत्त्वश्रद्धानरूप। तो यह बात निश्चित होती है कि जो जीव मिथ्यात्वी होता है उसके तो तत्त्व के बारे में श्रद्धान ही नहीं होता। ज्यों का त्यों श्रद्धान हो तो वह सम्यग्दृष्टि हो जाये। यानी जैसा नहीं है वैसी श्रद्धा करना उसको यहां अतत्त्वश्रद्धानरूप कहा। अतत्त्वश्रद्धान यानी जो तत्त्व नहीं है वह तो अतत्त्व है और वह अतत्त्व है वही सच्चे हैं, वही सही है यह मानना, यह श्रद्धा गुण की विपरीत अवस्था है। अभी वह कैसी है अतत्त्वश्रद्धा ? अभी व्यक्त नहीं हुयी है। अभी ऊपर से गिरकर नीचे जमीन की ओर जा रहा है। इसका बहुत अच्छा वर्णन किया है, देखो आगे पेज ९१ पर दूसरे पॅरेग्राफ में बता रहे हैं **सम्यक्त्व विराधक परिणाम ही सासन गुणस्थान है**। यानी सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान है। **सम्यक्त्व विराधक जीव सम्यक्त्वरूपी रत्नपर्वतशिखर से पतित** यानी वह पर्वत से गिर गया और क्या हो गया ? **मिथ्यात्वरूपी भूमि के सन्मुख दशा को** यानी अभी वह मिथ्यात्वरूपी भूमि पर आ रहा है। यहां तो क्या था ? कि कह रहे हैं, सम्यक्त्वरूपी रत्नपर्वत पर था, शिखर के ऊपर। वहां से गिर गया, अभी मिथ्यात्व में आया नहीं है ऐसा जो बीच का जो समय है और उसका मुख कहां है? तो मिथ्यात्व की तरफ वह सन्मुख हो गया है। ऐसा जो

कोई जीव का परिणाम है उस परिणाम में जो जीव के श्रद्धा गुण की अवस्था है, उस गुणस्थान को यहां सासादन गुणस्थान कहते हैं। यह बात क्लिअर हो गयी ?

हमेशा ध्यान रखना यह दूसरा गुणस्थान है और जो छठा गुणस्थान है वह चढ़ने के लिये कार्यकारी है नहीं। कोई भी जीव पहले से, चौथे से, पांचवें से- छठे में जा नहीं सकता और पहले से दूसरे में भी नहीं जा सकता है। दूसरे में से पहले में नियम से आता है। लेकिन छठे में से सातवें में भी जा सकता है और पांचवें में भी और नीचे जहां जाना है। वह बात हम बाद में देखेंगे। देखो अभी हम इसको दुबारा पढ़ेंगे। मैं पढ़ूंगा, आप कृपया रिपीट करना क्योंकि बहुत आसान है। केवल हमें उसके अर्थ का पता लग जाये तो सहीरूप से हम समझ जायेंगे। **प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अंतर्मुहूर्त काल में से,** *श्रोता: प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अंतर्मुहूर्त काल में से,* **जब जघन्य एक समय,** *श्रोता: जब जघन्य एक समय,* **या उत्कृष्ट छह आवली प्रमाण काल शेष रहे,** *श्रोता: या उत्कृष्ट छह आवली प्रमाण काल शेष रहे,* पुरुषों से आज आवाज बहुत कम आ रही है जरा जागरुक रहना। क्या कह रहे हैं ? **उतने काल में,** *श्रोता: उतने काल में,* **अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ में से,** *श्रोता: अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ में से,* **किसी एक कषाय के उदय में आने से,** *श्रोता: किसी एक कषाय के उदय में आने से,* **सम्यक्त्व की विराधना होती है।** *श्रोता: सम्यक्त्व की विराधना होती है।* **उस समय**, *श्रोता: उस समय,* **श्रद्धा की जो अव्यक्त अतत्त्वश्रद्धानरूप परिणति होती है,** *श्रोता: श्रद्धा की जो अव्यक्त अतत्त्वश्रद्धानरूप परिणति होती है,* **उसको सासादन गुणस्थान कहते हैं।** *श्रोता: उसको सासादन गुणस्थान कहते हैं।*

अभी यह बात हमारे बिलकुल ज्ञान में आ गयी है तो मेरा एक बहुत आसान प्रश्न है कि सासादनसम्यक्त्व का उत्कृष्ट काल कितना होगा बहन ? *श्रोता: छह आवली।* छह आवली और जघन्य काल ? *श्रोता: एक समय।* एक समय। तो मध्यम काल कितना होगा ? आप ही उत्तर देना अभी। आप बतायेंगे ? *श्रोता: नहीं।* क्यों ? देखो, देखो मध्यम काल का अर्थ क्या होता है ? जो जघन्य काल है उससे एक समय अधिक और जो उत्कृष्ट काल है उससे एक समय कम। यह बीच में जो कोई होंगे दो समय से लेकर छह आवली में एक समय कम तक के जितने भेद हैं, वे सारे मध्यम काल हैं। यानी कोई जीव दो समय के लिये सासादन में जायेगा, कोई तीन समय के लिये, ऐसे गिनते जाना जहां तक आता है। कहीं न कहीं रुकेंगे हम क्योंकि असंख्यात, इसकी

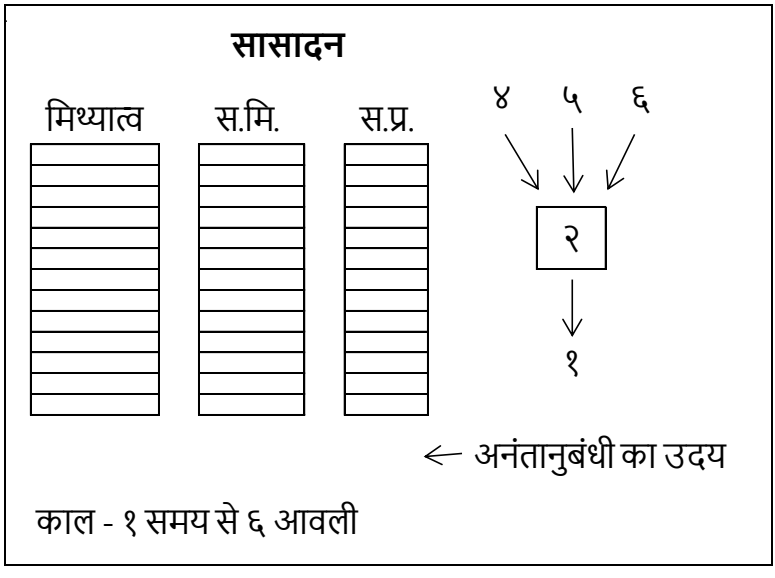
बात मतिश्रुतज्ञानी को ज्ञान में आती नहीं है। अवधिज्ञानी असंख्यात के प्रमाण को जाने और अनंत का प्रमाण तो केवली भगवान ही जाने। ख्याल में आया ? तब भी हम शास्त्र के अनुसार तो बिलकुल बोल सकते हैं। तो दो समय से लेकर छह आवली में एक समय कम तक का मध्यम काल है।

अब आगे बढ़ते हैं। अब यह प्रश्न क्रमांक २३ को देखेंगे, उसी ८९ पृष्ठ पर है। **औपशमिक सम्यक्त्व की विराधना में किसी कर्म का उदय निमित्त है या नहीं** ? तो देखो कहते हैं **अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ में से किसी एक कषाय कर्म के उदय के निमित्त से औपशमिक सम्यक्त्व की विराधना हो जाती है।** इसका अर्थ यह हो गया कि सासादन गुणस्थान में दर्शनमोहनीय कर्म का उदय है नहीं। तो क्यों नहीं है यह प्रश्न हमारे दिमाग में आना चाहिये। कौन बताना चाहेगा ? सुरेशभाई आप बतायेंगे कि वहां दर्शनमोहनीय कर्म का उदय क्यों नहीं है, सासादन गुणस्थान में ? वहां कुछ लिखा नहीं है। अभी तक हमने जो कोई एक्स्प्लनेशन दिया है उसीमें वह बात गर्भित है। हां बोलो -बोलो, बहन। *श्रोता: यहां अनंतानुबंधी कषाय का उदय है।* क्या क्या क्या ? फिर से, उदय है, लेकिन मैंने यह प्रश्न पूछा अनंतानुबंधी का उदय है इसलिये तो वह सासादन में गया, लेकिन दर्शनमोहनीय कर्म का उदय क्यों नहीं हो रहा है ? आप बतायेंगे औरंगाबादवाले ? नहीं। भाईसाहब आप ? अच्छा ! एक बहन ने हाथ उठाया था, हां बोलो बहन ? *श्रोता: औपशमिक सम्यक्त्व का काल है।* हां, देखो कितनी आसान बात है।

हमने क्या पढ़ा अभी इसके सामने ? जब जघन्य एक समय, किसमें से ? प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अंतर्मुहूर्त काल में से। यह प्रथमोपशम सम्यक्त्व यानी वहां उस जीव ने ऐसे परिणाम किये कि वहां अंतर तैयार हो गया। अब यहां देखने जाओ तो यहां से लेकर यहां तक छह आवली, यह छह आवली से लेकर एक समय तक। वहां क्या है ? गॅप तैयार हुयी है। गॅप तैयार हुयी है वहां, दर्शनमोहनीय यानी मिथ्यात्व कर्म का उदय ही नहीं है क्योंकि उसने वह उदय में नहीं आने योग्य उनको बना दिया है। इसलिये उसका उदय नहीं है। उदय काहे का है ? अनंतानुबंधी में से एक किसीका होगा। चलो, अब आगे बढ़ते हैं।

देखो, मैंने जो डबल एजंट की बात जो की थी आपसे। कौन ? अनंतानुबंधी

क्रोध-मान-माया-लोभ। उसके बारे में यह डबल एजंट तो आजकल की आंग्ल भाषा के हिसाब से हमने बताया। यहां क्या कहते हैं देखो, बीच में जो ९० पृष्ठ पर ? पहले पॅरेग्राफ के बाद में क्या कहते हैं। **आचार्य श्री वीरसेन स्वामी ने धवला पुस्तक एक के पृष्ठ १७२ पर अनंतानुबंधी कषाय को द्विस्वभावी कहा है।** द्विस्वभावी यानी क्या करते हैं ? **अनंतानुबंधी कषाय सम्यक्त्व और सम्यक्त्वाचरण चारित्र दोनों को घातने में निमित्त है। इसीकारण ऊपर अनंतानुबंधी के भी उदय से औपशमिक सम्यक्त्व की विराधना होती है।** अभी आप पुस्तकें बंद रखो तो अच्छा है, क्योंकि अभी प्रश्नोत्तर चलेंगे न। हमने जघन्य काल कितना देखा ? सासादन गुणस्थान का जघन्य काल कितना है भाईसाहब ? सुभाषभाई आपके पीछेवाले भाई हैं न उनको जरा, बोलो साहब ! हां हां हां ! जघन्य काल ? एक समय ? जघन्य काल छह समय है या एक समय है, कितना है ? *श्रोता: एक समय।* हां एक समय। कोई बात नहीं, दिलीपभाई को पूछा तो अच्छी बात है। हां और उत्कृष्ट काल कितना है साहब ? *श्रोता: छह आवली।* छह आवली। ये सभी बातें हमने पेज ९२ पर देखी।



अभी गमनागमन की अपेक्षा से हम विचार करते हैं। आपको पुस्तक बंद करने के लिये हमने बिनती की है। अभी हम देखते हैं कि दूसरे गुणस्थान से गमन यानी जाना कौन-कौनसे गुणस्थान में होगा ? कौन बताना चाहेगा ? आप बतायेंगे साहब ?

श्रोता: मिथ्यात्व में ही जायेगा। मिथ्यात्व में ही जायेगा। अन्य किसी गुणस्थान में ? नहीं जायेगा। तो गमन तो एक ही गुणस्थान में है, वह है रॉयल गुणस्थान अपना मिथ्यात्व में। इसके अलावा अन्य किसी भी गुणस्थान में वह जा ही नहीं सकता। अभी कहां-कहां से आयेगा इसको हमें सोचना है। वह उपशम सम्यक्त्व के काल में बीचवाला जो थोड़ा टाइम है छह आवली से एक समय तक का, उस समय उसके अनंतानुबंधी का उदय आयेगा, तो जीव सासादन गुणस्थान में आता है। तो उपशम सम्यक्त्व के ऐसे कौन-कौनसे गुणस्थान हैं कि जिनमें से यह जीव दूसरे गुणस्थान में आ सकेगा ?

पहले में पहले हम यह बात निश्चित करते हैं कि दूसरे गुणस्थान में आनेवाला जीव नियम से औपशमिक सम्यक्त्वी ही होना चाहिये। तो वह कौन-कौनसे गुणस्थान से आयेगा ? यह अपना प्रश्न है। भाईसाहब आप बता रहे हैं ? *श्रोता: चौथे से और पांचवें से।* चौथे से और पांचवें से। बहुत अच्छा ! हां और यहां चार्ट देखकर भी कोई बोलेगा कि नहीं। हां बोलो जी, *श्रोता: चौथे से, पांचवें से और छठे से।* चौथे से, पांचवें से और छठे से। देखो अभी हमने देखा था कि कोई औपशमिक सम्यग्दृष्टि है, वह मिथ्यादृष्टि था और वह डायरेक्ट पहले से सातवें में आया है। उसकी कंडिशन्स वगैरह आपको याद हो गयी हैं, आपको बार-बार बताने की आवश्यकता नहीं है। तो वह सातवें से छठे, छठे से सातवें ऐसा करते-करते छठे से गिर जावे और डायरेक्ट वहां अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ में से किसी एक का उदय आवे तो वह छठे से डायरेक्ट दूसरे में आ जायेगा। भाईसाहब.. ! पंचम गुणस्थानवर्ती जीव है वह भी उपशम सम्यक्त्व में है और उसके भी यह अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ में से किसीका उदय आ जावे तो वह भी दूसरे में आ सकता है। चौथेवाला है उसके भी सम्यक्त्व की विराधना हो सकती है।

इसलिये यहां पर क्या बताया ? देखो-देखो यहां पर बहुत अच्छी तरह से बताया है, यह दूसरे नंबर का गुणस्थान है वहां से गिरना जो होगा, गमन जो होगा वह सिर्फ पहले गुणस्थान में होगा। दूसरे गुणस्थान में आगमन कहां-कहां से है ? तो कहते हैं चौथे में से आयेगा, पांचवें में से आयेगा और छठे में से आयेगा। कितना आसान हो गया न अभी ? तो आप में से किसीने कहा आप तो हमको मिथ्यात्व में से उठाकर आगे लेकर जानेवाले थे, दुबारा फिर मिथ्यात्व में लाकर खड़ा कर दिया। अरे हमने नहीं लाया है। वह तो जीव की परिणति कैसी होती है यह उसकी जो विलक्षणता है,

उसकी हम झलक देख रहे हैं। जब कोई चीज अच्छी नहीं है तो हम उसको प्राप्त करने की कोशिश करेंगे कि नहीं करेंगे ? अरे नहीं चाहिये बाबा, हमें तो ऐसा नहीं चाहिये। नहीं चाहिये तो तेरे परिणाम का ख्याल रख, ऐसा कहेंगे।

अब हम ९२ पेज पर आयेंगे। वहां लिखते हैं **गमनागमन अपेक्षा विचार।** कह रहे हैं **सासादनसम्यग्दृष्टि जीव नियम से नीचे मिथ्यात्व गुणस्थान में ही गमन करता है।** देखो यहां 'ही' लगाया, यानी अन्य कोई गुणस्थान में जाता ही नहीं। **मिश्र, अविरतसम्यक्त्व आदि ऊपर के गुणस्थानों में** यह मिश्र यानी सम्यग्मिथ्यात्व यानी तीसरा नंबर और अविरतसम्यक्त्व यानी चौथे नंबर के गुणस्थान। आदि, आदि यानी ऊपर के सब लेना। ऊपर के गुणस्थानों में **सासादन सम्यग्दृष्टि का गमन नहीं होता।** यह बात ख्याल में आ गयी ? अब आगे कहते हैं **क्योंकि उसका मुख ही मिथ्यात्व की ओर हो गया है। इस कारण उसकी पर्यायगत पात्रता मात्र मिथ्यात्व गुणस्थान में ही प्रवेश करने की है।** अब इसमें तो किसीकी कोई गुंजाइश नहीं रह गयी न। यह बहुत आसान है।

अब आगे कहते हैं उदाहरण देते हुये। कि **जैसे पेड़ से फल नीचे गिर रहा हो तो वह नीचे जमीन पर नियम से गिरेगा ही, बीच के अंतराल से वापस पेड़ पर नहीं जा सकता है।** यह तो हमने पहले ही देखा था। **वैसे सासादन सम्यक्त्वी जीव सम्यक्त्व से** तो **छूट गया है**, क्योंकि उसने सम्यक्त्व की विराधना की है। इसलिये सम्यक्त्व छूट गया है उसका, **मिथ्यात्व के अभिमुख हो गया है।** अभी हम यह २५ तारीख के बाद सभी लोग अपने-अपने गांव की ओर मुख करके चले जायेंगे। क्यों ? सन्मुख, आप होशंगाबाद, आप कहां के हैं, भोपाल के? *श्रोता: औरंगाबाद।* अच्छा ! जहां से हो, आप बेंगलोर, आप मुंबई, हम भी मुंबई। ऐसे हर एक जन अपने-अपने गांव के सन्मुख जायेंगे। तो यहां क्या हो गया ? कि मिथ्यात्व के अभिमुख। अभिमुख का अर्थ उस तरफ उनका मुख हो गया, सन्मुख हो गया, उस तरफ वे जानेवाले हैं। वैसे यह सम्यक्त्व की विराधना करनेवाला जीव, सम्यक्त्व से छूटकर मिथ्यात्व में जानेवाला है। **अब सासादन से ही उपरिम गुणस्थानों में जाने का उसे अवसर नहीं है।** चान्स ही नहीं है कहते हैं। **अब तो मिथ्यादृष्टि होना ही अनिवार्य है।** नो चॉइस ॲट ऑल। **मिथ्यात्व गुणस्थान से यथासंभव ऊपर के गुणस्थानों में पुनः पुरुषार्थ करने से गमन करना संभव है।** यानी एक बार मिथ्यात्व में आ जाये तो वह

जीव ऊपर के गुणस्थानों में फिर भी अपने पुरुषार्थ के बल से जा सकता है।

आगमन... अभी कह रहे हैं देखो, देखो, देखो बहुत अच्छी बात बता रहे हैं। **औपशमिक सम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती भावलिंगी महापुरुष सीधे सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान में आ सकते हैं।** देखो भैया जो मुनि अवस्था धारण किये हुये हैं, पहले में पहले यह बात ध्यान रखना हो कि जो छठे गुणस्थानवर्ती जीव हैं वे नियम से भावलिंगी संत ही हैं। क्योंकि हमने देखा है कि जो जीव ऊपर के गुणस्थानों में चढ़ेगा शुद्धोपयोग में, पहले मिथ्यादृष्टि जीव है, तो वह चौथे में, पांचवें में या हां जी ? सातवें में जायेगा, छठे में कोई नहीं जायेगा। लेकिन जो सातवें में जायेगा वही छठे में आयेगा यानी वह भावलिंगी संत ही होंगे। अब क्या कह रहे हैं ? देखो, इसलिये उन्होंने कहा भावलिंगी महापुरुष। वह ऐसा पद प्राप्त करना - कैसा पद ? कि सारे जैनी दिन में कम से कम नौ बार तो उनका नाम लेते हैं। क्यों साहब ? नौ बार णमोकार मंत्र गिनेंगे कि नहीं ? ऐसा आता है हो कि जो नौ बार णमोकार मंत्र नहीं गिनेगा, वह जैन नहीं है और जो पूरे दिन णमोकार मंत्र ही गिनते बैठेगा वह भी जैन नहीं है। क्यों, नाराज हो गये ? अरे तेरा उपयोग अगर पर में ही लगा रहेगा तो तू स्व में कब आयेगा ? जो स्व में आयेगा, जिसने आंशिक राग-द्वेष का त्याग किया है और जिसने मोह का अनुदय कर दिया है, वह जैन है। यानी जो सम्यग्दृष्टि है वही जैन है। जो सम्यग्दृष्टि है उसके अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ और दर्शनमोहनीय का - एक सत्ता में मिथ्यात्व था उसका उसने अनुदय किया है और उसीको जैन कहेंगे।

तो जो २४ घंटे, वह तो हमने देखा है बहुत लोग, ऐसा दुकान में जाकर बैठते हैं, ग्राहक नहीं होता है तो इधर राम, राम, राम, श्रीराम, श्रीराम, श्रीराम। तो हमने देखा तो हमने भी चालू किया- णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं। एक लाख बार लिखा। तो अभी स्वर्ग मिलेगा कि नहीं हमको ? देखो, यानी तू उधर ही तेरा उपयोग लगायेगा तो स्व की तरफ कब आयेगा ? देखो यह आप ऐसा लिखना या नहीं लिखना इसके बारे में कुछ बात नहीं बता रहा हूं। लेकिन वह लिखते हुये मुझे सम्यक्त्व की प्राप्ति होगी यह मानने का निषेध है। शुभभाव करने का निषेध नहीं है। ख्याल में आया ? लेकिन कई लोग उसका ऐसा उलटा-पुलटा अर्थ कर देते हैं इसलिये बार-बार बताना पड़ता है। भाई यहां तेरी मान्यता क्या है ? कि शुभभाव से धर्म होगा, शुभभाव से यानी आस्रव से संवर होगा ऐसा तू मान रहा है। क्या बात कर रहा है ?

यहां तो बता रहे हैं कि जो छठे गुणस्थानवर्ती महापुरुष हैं, वे सीधे सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान में आ सकते हैं।

दूसरा पॉइंट- **औपशमिक सम्यग्दृष्टि का देशविरत गुणस्थान से अर्थात् व्रती श्रावक अवस्था से सीधे सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान में आना बन सकता है।** यानी यह बात यहां पर निश्चित होती है कि पहले गुणस्थान से कोई जीव, बाकी क्रायटेरिया जो हमने देखे वे तो ऑप्लिकेबल हैं ही हैं, तो वह जीव पांचवें गुणस्थान में भी जा सकता है। औपशमिक सम्यक्त्व के साथ वहां जाये और अनंतानुबंधी का उदय हो जाये तो वापस वह दूसरे गुणस्थान में आयेगा। उसी तरह जो तीसरा पॉइंट है, **औपशमिक सम्यग्दृष्टि का अविरतसम्यक्त्व नामक चौथे गुणस्थान से भी सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान में आना संभव है; क्योंकि औपशमिक सम्यग्दृष्टि ही सासादन सम्यक्त्वी हो सकते हैं, अन्य सम्यग्दृष्टि नहीं।** यानी क्या बता रहे हैं ? क्षायिक सम्यग्दृष्टि दूसरे गुणस्थान में आ पायेगा कि नहीं, प्रमोदभाई ? क्षायिक सम्यग्दृष्टि सासादनसम्यक्त्व यानी दूसरे गुणस्थान में आयेगा क्या नहीं आयेगा ? *श्रोता: नहीं आयेगा।* क्यों नहीं आयेगा ? हां बोलो, जोर से बोलो न। सुरेशभाई आप प्रयत्न करेंगे ? बोलो-बोलो, क्षायिक सम्यग्दृष्टि, द्वितीय गुणस्थान में नहीं आता है ऐसा भाईसाहब ने कहा। तो क्या यह बात सही है ? सही है तो क्यों सही है; नहीं सही है तो क्यों नहीं सही है, यह बात बताना है आपको। आप नहीं बतायेंगे तो हम दूसरे किसीको पूछेंगे। हां, आप बताना चाहते हैं, हां बोलो साहब। *श्रोता: क्षायिक सम्यग्दृष्टि के अनंतानुबंधी का क्षय हो जायेगा।* बहुत अच्छा ! कितना सही जवाब दिया। अरे भाई वह सत्ता में है ही नहीं न, उनका तो उन्होंने क्षय किया है। किनका ? जो अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ और ये तीन जो हैं न दर्शनमोहनीय के, इन सबका उन्होंने क्षय कर दिया है। इसलिये तो उनको क्षायिक सम्यक्त्वी कहते हैं। अब जो सत्ता में नहीं है तो उसका उदय में आने का सवाल ही कहां है ? ख्याल में आया न ? यह बातें बहुत मामूलीसी लगती हैं लेकिन जब हमें प्रश्न पूछा जाता है तो फिर हम हड़बड़ा जाते हैं। आता तो सब कुछ है लेकिन बोलने का धैर्य नहीं होता।

यहां कहते हैं कि औपशमिक सम्यग्दृष्टि ही सासादन गुणस्थान में आ सकता है। मुझे यह पूछना है क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि आयेगा कि नहीं ? बहन आप बोलना ? क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि दूसरे गुणस्थान में आयेगा कि नहीं ? *श्रोता: नहीं आयेगा।* क्यों

नहीं आयेगा ? अरे ठहरो, कौन उत्तर दे रहा है ? मैं उनसे प्रश्न पूछ रहा हूं। *श्रोता: औपशमिक सम्यग्दृष्टि ही सासादन में आ सकता है।* वह बराबर है, क्षायोपशमिक क्यों नहीं आता है ? इसका हमें हल चाहिये, इसका उत्तर चाहिये। हां आप बोलो बहन ? जरा जोर से बोलना। *श्रोता: कर्म का क्षय हुआ है।* कर्म का क्षय हुआ है ? कौनसे कर्म का क्षय हुआ है ? नहीं। हां बोलो बहन ? *श्रोता: उसने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है।* हां और ? *श्रोता: इसलिये क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव सासादन गुणस्थान में नहीं आ सकता।* नहीं, नहीं, नॉट नेसेसरीलि। मैं कह रहा था कि जोर से बोलो क्योंकि लोगों को सुनाई देना चाहिये न। आपने ऐसा कहा कि जो क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव है उसने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है, ऐसा नहीं है।

देखो हमने क्या कहा था कि दूसरे गुणस्थान में आनेवाला जो जीव है उसके दर्शनमोहनीय की तीनों ही प्रकृतियां उपशमित हुयी हैं, उनका प्रशस्त उपशम हुआ है। यहां क्षयोपशमिक सम्यक्त्व में किसका उदय चल रहा है ? *श्रोता: सम्यक् प्रकृति का।* तो फिर ? वहां मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व का अनंतानुबंधी के समान अप्रशस्त उपशम हुआ है, औपशमिक सम्यक्त्वी जैसा प्रशस्त उपशम नहीं हुआ है। इसलिये अनंतानुबंधी और मिथ्यात्व का उदय एकसाथ शुरू होने से जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में आता है। इसलिये यहां लिखा है कि **औपशमिक सम्यग्दृष्टि ही सासादन सम्यक्त्वी हो सकते हैं, अन्य सम्यग्दृष्टि नहीं। यह अकाट्य नियम है।** यानी इस नियम को कोई तोड़ नहीं सकता, रूल आउट नहीं कर सकता। यहां तक बात ख्याल में आयी ?

अब कहते हैं **विशेष अपेक्षा विचार।** यानी सासादन गुणस्थान की विशेषता क्या है ? यहां कह रहे हैं कि **यदि सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान में रहते हुये जीव का मरण होता है, तो वह जीव मरणोपरांत** यानी मरण के बाद **नरकगति में नहीं जाता है।** यह ऐसा क्यों होता होगा ? ख्याल में आया ? बहन आप बता पायेंगी ? *श्रोता: यह जीव सासादनसम्यक्त्व में है और कोई जीव सम्यक्त्व के साथ नरक में नहीं जा सकता है।* बहुत अच्छा-बहुत अच्छा ! आपका यह कहना है कि यह जो सासादन गुणस्थान है वह तो उपशम सम्यक्त्व का काल है। उन्होंने उपशम किया है उन कर्मों का और वह जीव तो सम्यग्दृष्टि है लेकिन सम्यक्त्व से भ्रष्ट हुआ है वह जीव नरक में जन्म ही नहीं लेता। एक्सेप्ट जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि होगा, वही जीव सम्यक्त्व के साथ पहले नरक में जायेगा। आपको मालूम है कोई ? आपके पहचान का कोई जो नरक में

गया है ? हां जी ? *श्रोता: श्रेणिक राजा।* श्रेणिक राजा। उनके कौनसा औपशमिक सम्यक्त्व है या क्षयोपशमिक सम्यक्त्व है ? *श्रोता: क्षायिक सम्यक्त्व।* क्षायिक सम्यक्त्वी ही जायेगा। वह दूसरे नरक में नहीं जायेगा, तीसरे नरक में नहीं जायेगा, अन्य कोई सातवें नरक तक नहीं जायेगा नीचे। जो कोई नरक में सम्यक्त्व के साथ जायेगा तो वह क्षायिक सम्यक्त्व के साथ ही जायेगा। इसलिये यह जो कोई वह औपशमिक सम्यग्दृष्टि है न, अब वहां से गिर गया तो ऐसा जीव अभी तो मिथ्यात्व में आया नहीं है, तो वह मरण उपरांत नरकगति में नहीं जायेगा।

श्रोता: यदि कोई जीव बद्धायुष्क हो तो क्या वह भी नहीं जायेगा ? जैसे श्रेणिक राजा पहले आयु बांधकर आये थे। बात ऐसी है आपका यह पूछना है कि उसके नरकायु बंध पहले हुआ होगा तो ? वह सम्यक्त्व से भ्रष्ट होकर यानी मिथ्यात्वी होकर जायेगा। ख्याल में आया ? कोई बात नहीं देखो, देखो हमारे कोई ऐसे जीव हैं जैसे कृष्ण और आपने दूसरा कौनसा बताया ? मैंने सुना नहीं। *श्रोता: रावण।* रावण अभी तीर्थंकर प्रकृति नहीं बांध रहा है। कृष्ण आगामी भव में तीर्थंकर होनेवाले हैं, वे यहां के जीव थे भरतभूमि के। जब उनका यहां से मरकर तीसरे नरक में जाना हुआ, तब मरण के वे पहले मिथ्यात्व में आये, फिर वहां गये। ख्याल में आया ? वहां जाते ही वापस उन्होंने सम्यक्त्व प्राप्त किया, उसमें कोई ऐतराज नहीं है। लेकिन सम्यक्त्व के साथ वहां कोई नहीं जायेगा, एक्सेप्ट क्षायिक सम्यक्त्वी। इसके आगे भी बहुत बातें हैं। जिसने पहले तिर्यंचायु का बंध किया हो और बाद में सम्यक्त्व प्राप्त किया हो; तो वह भी सम्यक्त्व के साथ तिर्यंचगति में नहीं जायेगा, वह क्षायिक सम्यक्त्वी होगा तो ही जा सकेगा और वह भी भोगभूमि में जायेगा। वैसे ही मनुष्य में लेना। लेकिन तुम सम्यक्त्वी हो या मिथ्यात्वी हो, बाद में सम्यक्त्व प्राप्त करो, पहले सम्यक्त्व प्राप्त करो, देवायु बंधी हो तो डायरेक्ट जा सकते हैं सम्यक्त्व के साथ। वहां क्षायिक सम्यक्त्व होने की कंडिशन नहीं है। चलो आपने प्रश्न पूछा तो थोड़ी बहुत और कुछ इन्फर्मेशन आ गयी।

अभी यहां क्या बात बता रहे हैं कि सासादनगुणस्थानवर्ती जीव मरण के बाद में यानी मरणोपरांत नरकगति में नहीं जाता है; **क्योंकि सासादनसम्यक्त्व का काल औपशमिक सम्यक्त्व का ही काल है और सम्यग्दृष्टि जीव बद्धायुष्क न हो तो नरक जाता ही नहीं है।** यानी उसने पहले आयु नहीं बांधी हो, तो नरक जाता ही नहीं **यह नियम है।** अब कहते हैं **तीर्थंकर और आहारकद्विक की सत्ता सहित जीव**

सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान में जाता ही नहीं है। देखो भाई क्या बात है ? बहुत अच्छी बात बता रहे हैं, जिस जीव ने तीर्थंकर नामकर्म बांधा है और आहारकद्विक, आहारकद्विक यानी आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग - यह आहारक कौन होते हैं मालूम है आपको ? आहारकशरीर किनके प्राप्त होता है ? मुनियों के प्राप्त होता है। है। आहारकशरीर और आहारक अंगोपांग जिनकी सत्ता में हैं, ऐसा जीव दूसरे गुणस्थान में नहीं आता है। आहारक की सत्ता सहित जीव सासादनसम्यक्त्व में जाता ही नहीं। हां जी ? *श्रोता: जिन्होंने ये कर्म बांधे हैं वे नहीं जायेंगे।* हां, जिन्होंने ये कर्म बांधे हैं वे जाते ही नहीं ऐसी बात है। अब आगे एक्स्प्लनेशन दिया है।

देखो **आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग नामकर्म दोनों को आहारकद्विक कहते हैं। आहारक ऋद्धिधारी छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराज को जिनवाणी के अध्ययन में किसी प्रकार की शंका उत्पन्न होने पर अथवा जिनालय की वंदना करने के लिये उनके मस्तक में से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ, श्वेत, सप्तधातुरहित पुरुषाकार पुतला निकलता है; उसे आहारकशरीर कहते हैं।** यह तो आहारकशरीर किसको कहते हैं ? उसका क्या कार्य है ? यह बात तो हमें बिलकुल याद है। **छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराजों को प्रयोजनभूत सात तत्त्व और द्रव्य-गुण-पर्याय संबंधी शंका नहीं होती;** वह शंका हो जाये तो उनका मुनिपद रहेगा नहीं। तत्त्वों के बारे में थोड़ी उनके कोई शंका रहेगी ? **क्योंकि इन विषयों का यथार्थ निर्णय तो सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के पूर्व ही हो जाता है। जिनवाणी अगाध है और मुनिराजों का क्षायोपशमिक ज्ञान तो सीमित ही होता है, अत: अप्रयोजनभूत अनेक विषयों के संबंध में प्रश्न तो हो ही सकते हैं, उनके सहज समाधान के लिये यह प्रक्रिया संपन्न होती है।** यानी आहारकशरीर की निर्मिति वगैरह। तो **आहारकद्विक की सत्तावाले मुनिराज विशिष्ट परिणाम के धारक होते हैं। अतः वे इस सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान में नहीं आते।** नहीं आते की बात है, मरण की बात नहीं है। **ऐसा समझना चाहिये।**

अब तीसरा पॉइंट। **द्वितीय गुणस्थानवर्ती जीव के सासादनसम्यक्त्वरूप भाव** यानी **परिणाम को पारिणामिक भाव भी कहते हैं; क्योंकि जीव का जो परिणाम कर्म के उदय, उपशम, क्षय और क्षयोपशम की अपेक्षा से रहित होता है।** क्योंकि देखो यहां क्या बताना चाहते हैं, उदय होगा तो उसको औदयिक भाव

कहेंगे। उपशम होगा तो उसको औपशमिक भाव कहेंगे। वह कर्मों का क्षय होगा तो क्षायिक भाव कहेंगे। कर्मों का क्षयोपशम होगा तो उसको क्षायोपशमिक भाव कहेंगे। इन सबकी अपेक्षा से रहित ऐसा जो उनका जो परिणाम चल रहा है, तो उसको तो पारिणामिक भाव ही कहेंगे। **इस परिभाषा के अनुसार सासादनसम्यक्त्वरूप परिणाम दर्शनमोहनीय कर्म के उदय, उपशम, क्षय और क्षयोपशम की अपेक्षा के बिना ही होता है। अत: दर्शनमोहनीय कर्म की अपेक्षा इस दूसरे गुणस्थान के भाव को पारिणामिक भाव भी कहते हैं।**

अब कह रहे हैं **मिथ्यात्व गुणस्थान से लेकर चौथे गुणस्थान पर्यंत के चार गुणस्थान दर्शनमोहनीय कर्म की अपेक्षा से हैं।** यह तो हमने पहले ही दिन देखा था। अब कह रहे हैं **दूसरे गुणस्थान में दर्शनमोहनीय के उदयादि की अपेक्षा नहीं है। अतः दर्शनमोहनीय कर्म की अपेक्षा यहां पारिणामिकपना घटित होता है।** यह पारिणामिक भाव क्यों कहा है ? उसका एक्स्प्लनेशन यहां पर दिया है। अतः वह तो हो गया। **जहां जिस अपेक्षा से कथन किया हो, वहां उस अपेक्षा से समझ लेना चाहिये।** अब कहते हैं कि **सासादन गुणस्थान का काल** वह **औपशमिक सम्यक्त्व का ही काल है।** औपशमिक सम्यक्त्व का छोटासा काल बाकी रहता है न छह आवली, वहां से वह औपशमिक सम्यक्त्व का ही काल है। **मिथ्यात्व दर्शनमोहनीय परिणाम के निमित्त से प्रथम गुणस्थान में बंधनेवाली सोलह कर्म प्रकृतियों का यहां बंध नहीं होता।** अब यह विषय थोड़ासा अलग है, वहां तो यह सोलह प्रकृति की बंध की व्युच्छित्ति पहले गुणस्थान में होती है, इसलिये वे सोलह प्रकृतियां यहां दूसरे गुणस्थान में बंधती नहीं।

आगे- **अनंतानुबंधी कषायरूप औदयिक परिणामों से बंधने योग्य पच्चीस प्रकृतियों का यहां बंध होता है।** यानी अभी जो पच्चीस अन्य जो प्रकृतियां हैं, उनका यहां बंध होता है। लेकिन जो जीव चौथा गुणस्थान प्राप्त करता है, यह पच्चीस और वह सोलह ऐसी इकतालीस प्रकृतियों का बंध रुक जाता है। किन्हें ? जो सम्यक्त्व प्राप्त करके चौथे गुणस्थान में जाते हैं। अभी वह भी विषय बहुत बड़ा है। ये इकतालीस प्रकृतियां कौनसी हैं ? क्या हैं ? इनके एक दूसरे के साथ किसतरह पॅकेज हैं वगैरह वह बात। तो उसके पीछे हम न लगते हुये आगे बढ़ेंगे।

अब देखो एक प्रश्न आया है, उस प्रश्न को देखते हुये हम आगे बढ़ते हैं। यह लिखितरूप से प्रश्न आया है। *उपशांत और उपशम में क्या अंतर है ? उपशांतकरण आठों कर्मों में होता है और उपशम मात्र दर्शनमोहनीय एवं चारित्रमोहनीय में होता है, अन्य किसी भी कर्मों में नहीं। इसका कृपया स्पष्टीकरण कीजिये ?* देखो आपके पास पुस्तक है, हम थोड़ासा उस पुस्तक को रिफर करते हुये आगे बढ़ते हैं। वैसे देखा जाये तो इन जनरल उपशांत कहो या उपशम कहो, दोनों समानार्थी शब्द ही हैं। लेकिन यहां पर इसका थोड़ासा अलग सा विवेचन किया है। वह इसतरह कह रहे हैं कि पेज नंबर ३३, क्वेश्चन नंबर २०, **उपशांत किसे कहते हैं ?** तो **जो कर्म उदय में नहीं आ सके** क्या कहा ? **सत्ता में** ही **रहे**, **वह उपशांत कहलाता है।** अब क्या कहते हैं ? यह उपशांत में क्या-क्या विशेषता है ? तो **सत्ताविषैं तिष्ठता**, यह ढूंढ़ारी भाषा में जो बात है, उसीको यहां उन्होंने लिखा है। तो कहते हैं **सत्ताविषैं तिष्ठता- अपनी-अपनी स्थिति को धरै हैं ज्ञानावरणादिक कर्म का द्रव्य जा विषै जाकी यावत् काल उदीरणा न होइ, तावत् काल उपशांत करण कहिये।** यानी यह बताते हैं कि ज्ञानावरणादि जो कर्म हैं उनका जब तक उदय नहीं हो रहा है। क्योंकि जितना कर्म बंधा है उसका उदय एक साथ तो नहीं आयेगा। जो अभी सत्ता में पड़े हैं उनकी उदीरणा भी नहीं हो रही है, तब तक उसको उपशांत कहेंगे। उदीरणा हो जावे तो उसको उपशांत नहीं कहेंगे। **उपशांतकरण आठों ही कर्मों में होता है।** यह तो जाहिर है क्योंकि जो सत्ता में पड़ा हुआ कर्म है वह तो एक साथ उदय में आता नहीं है और उसकी उदीरणा भी होवे ऐसा भी नहीं है। कुछ न कुछ कर्म परमाणु ऐसे होते हैं कि उनकी उदीरणा नहीं होगी। तो वह कह रहे हैं कि यह आठों ही कर्मों में होता है।

अब तीसरा पॉइंट- **उपशांत अवस्था को प्राप्त कर्म का उत्कर्षण, अपकर्षण और संक्रमण हो सकता है**; **किन्तु उसकी उदीरणा नहीं होती।** यह उपशांत कर्मों की बात कर रहे हैं। अब **उपशम किसे कहते हैं** ? अभी उपशांत और उपशम में अंतर पूछा है न तो यहां कह रहे हैं, **आत्मा में कर्म की निजशक्ति का कारणवश प्रकट न होना,** कारणवश प्रकट न होना; यानी आत्मा में कर्म की निज शक्ति का कारणवश प्रकट न होना; आत्मा में कैसी बात कर रहे हैं ? वह **उपशम है।** यानी यह आत्मा में क्यों डाल दिया है ? कर्म की निज शक्ति का कारणवश प्रकट न होना। यानी कर्म अपने कारण से उदय में नहीं आ रहे हैं और यहां, हां जी ? *श्रोता:*

आत्मा में कर्मशक्ति भी है ? हां गलत है, यानी यहां इससे कोई संबंध नहीं है। वह आत्मा में जो कर्मशक्ति है न, वह तो षट्कारक की बात कर रहे हैं आप। तो षट्कारक से अपना परिणमन होगा या कर्मों का होगा ? यह कर्म अपने स्वयं के निज शक्ति के कारणवश प्रकट नहीं होते यानी उदय में नहीं आते हैं। हां, बस ऐसा ही है। हां साहब ? अच्छा दृष्टांत भी दिया है। वह उसको उपशम कहते हैं।

तो **जैसे** उन्होंने उत्तर दिया है **कतक आदि द्रव्य के संबंध से जल में कीचड का उपशम हो जाता है।** यानी उपशमित हो जाना यानी उदय में नहीं आना, इतना ही समझ लो। अब कहते हैं **परिणामों की विशुद्धता से कर्मों की शक्ति का अनुद्भूत रहना।** यानी क्या ? **प्रकट न होना।** अभी देखो, यहां तो उन्होंने सही बात बतायी है। यहां बता रहे हैं परिणामों की विशुद्धता से; यह किसके परिणाम हैं ? जीव के परिणाम हैं। वहां तो उसके विशुद्ध परिणाम हो रहे हैं और उसे वह निमित्त है और कर्मों की जो शक्ति है। काहे की ? उद्भूत होने की यानी उदय में आने की। वह जो है वह नहीं प्रकट हो रही है तो उसको कर्मों का उपशम कहने में आता है। एक विशेष बात यह है - **उपशम मात्र दर्शनमोहनीय एवं चारित्रमोहनीय में होता है, अन्य किसी भी कर्मों में नहीं।** यानी जो अन्य जो सात कर्म हैं मोहनीयकर्म छोड़कर, उनमें उपशम नहीं होता है। इसलिये अगर आपको मालूम होगा तो जीवों के जो पांच प्रकार के भाव कहे हैं। उनके नाम तो आपको याद होंगे ? औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक, औदयिक और पारिणामिक। ये जो पांच भाव हैं उसमें औपशमिक भाव के केवल दो ही भेद हैं। ख्याल में आया न ?

तो वह यहां कह रहे हैं, यह दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय है, उन्हीं में उपशम होता है। उन्हीं के उपशम से औपशमिक सम्यक्त्व और औपशमिक चारित्र होते हैं। अब कह रहे हैं कि यह जो कर्मों का उपशम है वह तो सिर्फ दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय में होता है, अन्य किसी में भी नहीं होता। अब उसके आगे उन्होंने बहुत कुछ बताया है। कि भाई **यह कर्मों की दस अवस्थाओं में उपशम करण नहीं है।** अब उन्होंने **प्रशस्त** और **अप्रशस्त भेद** यह **उपशांत के नहीं हैं**, तो वह उपशम के हैं यह बात बताना चाहते हैं। अब आगे बढ़ते हैं। यह प्रशस्त उपशम क्या है ? यह हमने देखा ही था और अप्रशस्त उपशम है वह भी हमने देखा था। तो उसको थोड़ा दो मिनट में पढ़ लेते हैं। देखो यह २२ नंबर के प्रश्न के उत्तर में लिखते हैं **अधःकरणादि**

द्वारा उपशम विधान से अनंतानुबंधी चतुष्क के **बिना**, उसको क्यों हटा दिया देखेंगे हम। **मोहनीय कर्म की जो उपशमना होती है, उसे प्रशस्त उपशम कहते हैं।** इसे हमने देखा था न, **इसे अंतरकरणरूप उपशम भी कहते हैं।** हमने अंतरकरणपूर्वक द्वितीयस्थिति का उपशम देखा था उसीको यहां प्रशस्त उपशम भी कहते हैं।

अभी उसका यहां एक्स्प्लनेशन दे रहे हैं। **आगामी काल में उदय आनेयोग्य कर्म परमाणुओं को जीवकृत परिणाम विशेष के द्वारा आगे-पीछे उदय में आनेयोग्य होने को।** आगे-पीछे यानी हमने देखा था कुछ निषेक ऊपर चले जाते हैं और कोई नीचे आते हैं, उसको **अंतरकरणरूप उपशम कहते हैं। औपशमिक सम्यक्त्व में दर्शनमोहनीय का प्रशस्त उपशम ही होता है।** यह औपशमिक सम्यक्त्व में की बात है। अब उदय, उदीरणा, उत्कर्षण, अपकर्षण, परप्रकृति संक्रमण, स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात के बिना कर्मों के सत्ता में रहने को प्रशस्त उपशम कहते हैं। यह क्या है ? यह सारी बातों का हमें ज्ञान होना चाहिये। किस-किसका ? संक्रमण कहो या अपकर्षण कहो, उत्कर्षण कहो, स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात, यह जब तक हम नहीं समझेंगे और वह समझाने के लिये काफी समय लगेगा। इसलिये हम उसमें नहीं प्रवेश कर रहे हैं। तो वह उसका प्रशस्त उपशम यानी इतना ही लेना, कर्मों के सत्ता में रहने को प्रशस्त उपशम कहते हैं। प्रशस्त उपशम सिर्फ अंतर्मुहूर्त के लिये किया जाता है।

अब अप्रशस्त उपशम जो है, जो हमने अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ में देखा था। वह कहते हैं **अप्रशस्त उपशम का दूसरा नाम सदवस्थारूप उपशम भी है।** यानी क्या हो रहा है वहां ? **वर्तमान समय छोड़कर आगामी काल में उदय आनेवाले कर्मों के सत्ता में पड़े रहने को सदवस्थारूप उपशम या अप्रशस्त उपशम कहते हैं।** यहां कहा **उदय का अभाव ही अप्रशस्त उपशम है।** अब आगे तो बहुत सारी बातें हैं, आप पढ़ लेना। यहां पं. ब्र. यशपालजी ने उसका भेद करने की कोशिश की है। तो जितना आप समझो अच्छा है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

११. सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

अभी तक चौदह गुणस्थानों में से दो गुणस्थानों से तो हम परिचित हो गये हैं। उसके बारे में उनकी विशेषतायें जो हैं, उनका जो गमनागमन है, उनका जो जघन्य काल है, उत्कृष्ट काल है आदि के बारे में हमने काफी जानकारी ली है। अभी इसके आगे तीसरे गुणस्थान के बारे में हम जानेंगे।

आपके पास पुस्तकें हैं, पृष्ठ १०१ पर आते हैं। यहां जो परिभाषा दी गयी है उस को हम देखेंगे। देखो, एक बात हम ध्यान रखते हैं इस तीसरे गुणस्थान के दो नाम हैं - एक है **सम्यग्मिथ्यात्व** और एक है **मिश्र।** वह सम्यग्मिथ्यात्व है, उसीका नाम मिश्र है। वह क्यों मिश्र ऐसा नाम पड़ा है उसकी भी बात हम देखेंगे। देखो मैं परिभाषा पढ़ रहा हूं आप सब लोग उसको रिपीट करेंगे। **सम्यग्मिथ्यात्व नामक**। *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व नामक।* **दर्शनमोहनीय कर्म के उदय के समय में**। *श्रोता: दर्शनमोहनीय कर्म के उदय के समय में।* **अर्थात्** *श्रोता: अर्थात्।* **दर्शनमोहनीय कर्म के उदय के निमित्त से**। *श्रोता: दर्शनमोहनीय कर्म के उदय के निमित्त से।* **गुड़ मिश्रित दही के स्वाद के समान**। *श्रोता: गुड़ मिश्रित दही के स्वाद के समान।* **होनेवाले**। *श्रोता: होनेवाले।* **जात्यन्तर परिणामों को**। *श्रोता: जात्यन्तर परिणामों को।* **सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान कहते हैं।** *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान कहते हैं।* देखो, यहां पर एक विशेष बात यह बतायी है, जो हमारे लिये एक नया शब्द है वह कहते हैं- जात्यन्तर। जात्यन्तर का अर्थ क्या है ? हां, जुदी जात का। जैसे हमने कई पुस्तकों का भाषांतर किया है यानी अन्य भाषा में उसका रूपांतर किया हुआ है। हम देशांतर भी करते हैं। यहां क्या हुआ है ? यहां तो जीवों के ऐसे मिश्र परिणाम हुये हैं कि ना वे सम्यक्त्वरूप से हैं और ना वे मिथ्यात्वरूप से हैं। अभी हमने सासादनसम्यक्त्व में क्या देखा था ? वहां बिलकुल अव्यक्त अतत्त्वश्रद्धानरूप परिणाम थे। अतत्त्वरूप भी नहीं थे और व्यक्तरूप भी नहीं थे वह अव्यक्त अतत्त्वश्रद्धानरूप थे। अब यहां क्या कह रहे हैं ? ये परिणाम ही कोई अलग जाति के हैं।

देखो, इसलिये यहां शास्त्र में भी ऐसा कथन आता है कि जैसा कोई जीव है उसने भरपेट, क्या बोलते हैं ? बासुंदी का सेवन किया। बासुंदी को क्या बोलते हैं आप लोग ? *श्रोता: दूधपाक।* दूधपाक। गुजराती लोग दूधपाक कहते हैं। दूधपाक उसने

इतना अधिक पिया कि कुछ समय के बाद उसको थोड़ीसी ऐसे मतलब पूरी व्हॉमिटिंग नहीं, लेकिन वह पिया हुआ ऐसे गले में आकर फिर वापस नीचे चला गया। तो उसका स्वाद जो बासुंदी यानी दूधपाक का स्वाद था वैसा रहेगा या अन्य कोई होगा ? हां, कोई जुदा ही होगा, आपको कभी अनुभव हुआ है ऐसा ? ख्याल में आया न ? वह जरा कड़वा, खट्टा उसमें ना शक्कर का कोई स्वाद है, ना दूध का कोई स्वाद है, कोई बिगड़ा हुआ तीसरा ही स्वाद है तो उसको कहते हैं जात्यन्तर स्वाद।

अभी यहां जीवों के परिणाम कैसे हैं ? जात्यन्तर हैं। इसके लिये उन्होंने क्या उदाहरण दिया है ? जैसे दही जो होता है वह कैसा होता है ? खट्टा सा होता है और गुड़, वह मीठा होता है; लेकिन उन दोनों का मिश्रण करने से कोई अलग ही स्वाद उसका तैयार होता है। यहां तो अच्छा उदाहरण दिया है। लेकिन वह बात बिलकुल गले उतरे, इसलिये मैंने थोड़ासा अलग टाइप का उदाहरण दिया। तो यहां क्या कह रहे हैं देखो- सम्यग्मिथ्यात्व नामक दर्शनमोहनीय कर्म; अभी हमने दर्शनमोहनीय कर्म के भेद देखे थे, उसके नाम कौन-कौनसे हैं ? *श्रोता: मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व। *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व।* सम्यग्मिथ्यात्व। *श्रोता: सम्यक् प्रकृति।* हां ये तीनों ही भेद किसके हैं ? दर्शनमोहनीय कर्म के हैं।

दूसरी भाषा में हमने देखा था कोई जीव उपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है उस प्राप्ति के समय में; जिस समय सम्यक्त्व की प्राप्ति हुयी, उसी पहले समय से ये तीन प्रकार के भेद हो जाते हैं और उनके नाम भी हमें याद हैं। अब यहां कह रहे हैं, दर्शनमोहनीय कर्म के उदय के निमित्त से; तो यह कौनसा दर्शनमोहनीय कर्म का उदय है ? तो कहते हैं सम्यग्मिथ्यात्व नामक जो दर्शनमोहनीय कर्म है। अभी क्या उसके उदय से जीव के परिणाम पलटते होंगे ? नहीं। जीव के परिणाम तो स्वयं से पलटते हैं, ख्याल में आया ? उसमें निमित्त कर्म है और हमने तो पहले से ही सीख रखा है कि निमित्त कार्य में कुछ भी बदल-हेराफेरी नहीं करता। हां देखो यह बात बार-बार हमको रटनी पड़ती है, क्योंकि हम इतने निमित्ताधीन दृष्टिवाले हो गये हैं कि हमारा तो वस्तुस्वरूप की तरफ ध्यान देना रह जाता है और हम निमित्त को ही ढूंढ़ते रहते हैं। इसलिये पहले यहां क्या बताया है कि निमित्त का कथन है, फिर भी यह जीव की बात है। श्रद्धा गुण कर्मों में है ? श्रद्धा गुण किसमें है ? *श्रोता: जीव में है।* जीव में है न ? तो जीव के परिणामों की बात बताने के लिये उसके सामने निमित्तरूप से

कर्मों को यहां खड़ा किया है। यह क्या बात कह रहे हैं कि सम्यग्मिथ्यात्व नामक जो दर्शनमोहनीय कर्म है उसके उदय के निमित्त से होनेवाले जात्यन्तर परिणाम; यह जात्यन्तर परिणाम तो जीव के स्वयं के हैं और उसीके कारण उसमें क्या हो गया है, यह सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में वह जीव आ गया है।

यह बात यहां बताते हुये अभी परिभाषा में आपको क्लॅरिटी मिल गयी या अभी उसमें कुछ संदेह रह गया है ? हां ? नहीं तो फिर शुरू से देखते हैं हम क्या-क्या होता है। देखो पेज नंबर ९८, यहां कह रहे हैं **तीसरे गुणस्थान का नाम सम्यग्मिथ्यात्व या मिश्र है। इस गुणस्थान के नाम से ही हमारे मन में एक प्रश्न उत्पन्न होता है।** वह कौनसा प्रश्न है ? तो बता रहे हैं कि **जो लोग सच्चे और झूठे दोनों प्रकार के देव**, यह जहां सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान की शुरुआत की है न, वहां पर से देखना। ये दोनों प्रकार के देव यानी कौनसे ? सुदेव और कुदेव। हां, **शास्त्र और गुरु को समान मानते हैं, वे ही** सम्यग्मिथ्यात्व - **सम्यग्मिथ्यादृष्टि हैं या कुछ** और हैं ? क्या कुछ **अन्य हैं ?** यानी उनको ऐसा संदेह हो रहा है कि जो सच्चे देव को भी माने और खोटे देव को भी मानें – कुदेव को भी मानें तो ऐसा मिश्र परिणाम है क्या उनमें ? यहां तो उत्तर दे रहे हैं **जो लोग सच्चे और झूठे - देव, शास्त्र, गुरु को समान पूजनीय तथा कल्याण दायक मानते हैं, वे तो साक्षात् गृहीत मिथ्यादृष्टि हैं।**

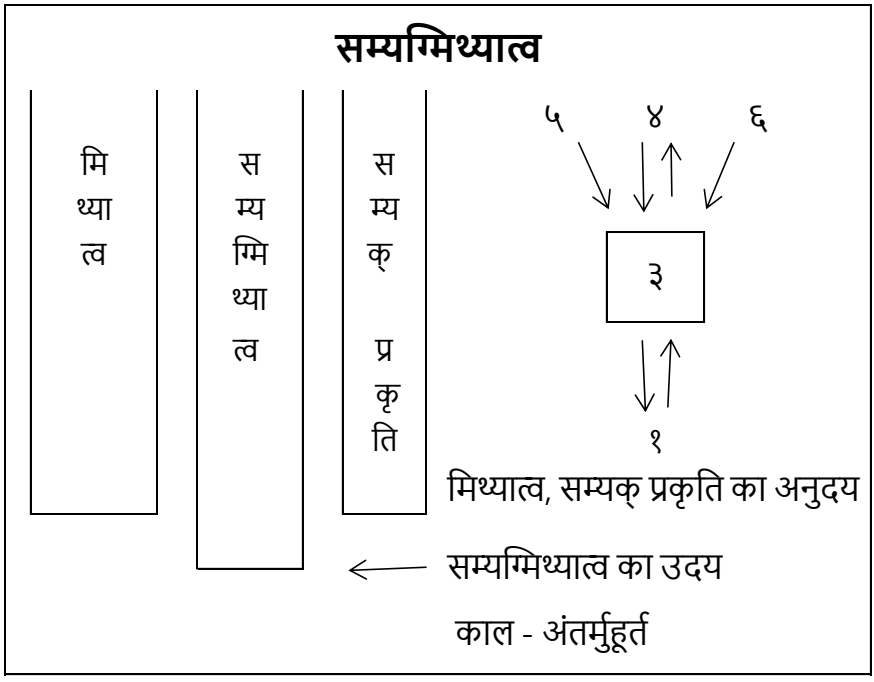
यह गृहीत मिथ्यादृष्टि कौनसे गुणस्थान में होंगे ? *श्रोता: पहले।* पहले, है न ! तो वह तीसरे गुणस्थान की बात ही नहीं है। क्योंकि जिसको अभी सच्चे और झूठे की परख नहीं है, यह किसमें सच्चे और झूठे की बात चल रही है ? तो कहते हैं यह तो देव-गुरु-शास्त्र के बारे में है यानी सच्चा देव कौन है, झूठा देव कौन है इसी बात का पता नहीं है। तो कह रहे हैं कि **वे तो साक्षात् गृहीत मिथ्यादृष्टि ही हैं, उनका तो मिथ्यात्व गुणस्थान ही है। उन्हें तो सच्चे देव, गुरु, शास्त्र का भी निर्णय नहीं है।** यानी यहां हमें उपदेश दे रहे हैं। यहां तो यह बता रहे हैं कि जब तक तू सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का यथार्थ निर्णय नहीं कर रहा है तो तुझे सम्यक्त्व होने के चान्सेस ही नहीं हैं।

हम तो कहते हैं उसमें क्या फर्क पड़ता है ? जरा उसको जाकर नमस्कार करें, जरा उसकी बात तो सुनें वह क्या-क्या कहते हैं, वह तो सुनें। देखो आजकल तो टीव्ही का जमाना आया है। हां, तो टीव्ही में क्या होता है कि नये-नये कोई वक्ता होते हैं।

उनकी अलग-अलग बातें, अलग-अलग इझम-पंथ के उनके उपदेश चलते हैं, तो हम तो साहब सबको सुनते हैं। क्यों साहब क्यों सुनते हैं ? अरे ! उनमें से जो अच्छी-अच्छी बातें है न ! वह लेने की और बाकी खोटी बातों को छोड़ देने का। पहले मूल में तो यह देख कि वे जो अच्छी बात बतानेवाले हैं, क्या वे सच्चे देव-गुरु-शास्त्र को यथार्थत: जानते हैं कि नहीं ? वह उनमें से कौन है ? उनकी जो बात है वह वीतरागता की पोषक है या वे सरागता का पोषण कर रहे हैं ? यानी यह निर्णय करने के लिये अपने को सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का यथार्थ निर्णय होना चाहिये।

इसलिये यहां कहते हैं कि यह **जो सच्चे झूठे का निर्णय करने के लिये विचार भी नहीं कर रहे हैं।** कौन ? जो कुदेव और सुदेव को समान मानते हैं ऐसे जीव। **उनका तीसरा गुणस्थान नहीं हो सकता। तीसरा गुणस्थान तो उन्हें होता है जो एक बार सम्यग्दृष्टि हो चुके हैं।** क्या कहा ? यह बहुत अच्छा वाक्य है। पहले में पहले क्या कहा ? तीसरे गुणस्थान में कौन जा सकता है या कौन आ सकता है ? तो उन्होंने एक क्रायटेरिया बताया। क्या बताया कि वह सादि मिथ्यादृष्टि - एक बार सम्यग्दृष्टि हो चुके हैं। तो उसमें दोनों बातें आती हैं। हो चुके हैं इसका अर्थ क्या ? अभी वह सम्यग्दृष्टि भी हो या मिथ्यादृष्टि भी हो, एक बार हो चुके हैं। यह ऐसा क्यों कह रहे हैं इस बात को हम जरा देखने कि कोशिश करेंगे।

देखो अभी हमने देखा था कि कोई अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव है उसने औपशमिक सम्यक्त्व की प्राप्ति की है तो उसके क्या हो जाता है ? यह मिथ्यात्व कर्म के तीन भेद हो जाते हैं। उन तीन भेदों के नाम किसको याद है ? क्या भूल गये सब लोग, याद है ? बोलो चारुबेन। *श्रोता: मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व। *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व।* सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति। ये तीन हो गये न ? तो अभी देखो उसमें क्या क्या बातें होती हैं उसको हम देखना चाहेंगे। अभी यहां बात चल रही है -सम्यग्मिथ्यात्व की लेकिन ये जो तीन बातें हैं न ! क्या-क्या हैं ? **मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति।** अब यहां चार्ट में सम्यग्मिथ्यात्व को नीचे थोड़ासा लंबा दिखाया है, तो यह जो है इसमें और इन अन्य दोनों में सिर्फ एक समय का फर्क है। यहां हमें नजर आये इसलिये उसको बहुत बड़ा बनाया है ताकी हमें समझ में आये कि उदय सम्यग्मिथ्यात्व का चल रहा है और ये दोनों एक समय पीछे हैं उसके, यानी मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति का अनुदय है और सम्यग्मिथ्यात्व का उदय है।



अभी क्या बात बता रहे हैं कि जो सम्यग्दृष्टि हो चुके हैं; अभी क्या है कि जो औपशमिक सम्यक्त्व का काल पूरा होते ही, हमने तो देखा औपशमिक सम्यक्त्व का काल पूरा होने के पहले अगर अनंतानुबंधी में से किसी एक कषाय का उदय आये तो वह दूसरे गुणस्थान में जायेगा। लेकिन अभी क्या बात बता रहे हैं कि उपशम सम्यक्त्व का जो काल है वह काल पूरा होते ही ऐसी पॉसिबिलिटी है, चार्ट देखो, यहां की बात कर रहा हूं अभी मैं। यहां तो इन दोनों का अप्रशस्त उपशम है और सम्यग्मिथ्यात्व का उदय है। तो अब ये तीन हैं न, मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति उनमें से अगर मिथ्यात्व कर्म का उदय होगा तो वह जीव नियम से मिथ्यात्व गुणस्थान में जायेगा क्योंकि यहां मिथ्यात्व का उदय है तो साथ में अनंतानुबंधी का भी उदय होगा और वह जीव पहले गुणस्थान में जायेगा।

अगर मान लो मिथ्यात्व का उदय नहीं हो रहा है और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति का उदय हो गया क्योंकि अभी उसकी सत्ता में तो तीनों प्रकृतियां हैं न ! अभी हमने पहले तो एक पॉसिबिलिटि देखी है कि अगर मिथ्यात्व का उदय होता है तो वह मिथ्यात्व गुणस्थान में जायेगा यानी पहले गुणस्थान में जायेगा। अगर सम्यग्मिथ्यात्व का उदय

होगा तो वह जीव तीसरे गुणस्थान में जायेगा। यानी क्या देखा हमने चौथे गुणस्थान में से या पांचवें गुणस्थान में से जो भी होगा - उपशम सम्यक्त्वी का जिस समय जो भी यथायोग्य गुणस्थान होगा, अभी हम चौथे ही की बात लेते हैं और उपर जायेंगे ही नहीं न तो जो चौथे गुणस्थानवर्ती औपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव है, उसके औपशमिक सम्यक्त्व का काल खत्म हो गया और दूसरे ही समय में हो सकता है कि यहां सम्यग्मिथ्यात्व का उदय आ जाये तो वह तीसरे गुणस्थान में आता है।

अगर मान लो कि मिथ्यात्व का भी उदय नहीं आया, सम्यग्मिथ्यात्व का भी उदय नहीं आया और किसका उदय आया ? सम्यक् प्रकृति का उदय आ जाये, तो वह जीव जिस गुणस्थान में है वही गुणस्थान चालू रहेगा। यानी चौथा है तो चौथे में रहेगा, पांचवां है तो पांचवें में रहेगा क्योंकि हमने देखा था औपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव पहले से चौथे में जा सकता है, पहले से पांचवें में जा सकता है, पहले से सातवें में जा सकता है। तो जहां जो होगा और उस समय सम्यक् प्रकृति का उदय आ जाये तो क्या होगा कि वह अपने अपने रिस्पेक्टिव्ह गुणस्थान में रहेगा। चौथेवाला चौथे में रहेगा इसतरह से। अभी हमने चौथे गुणस्थान की बात देखी न ? वह जीव चौथे गुणस्थान में अभी उपशम सम्यक्त्व का काल पूरा हुआ, उसके दूसरे समय में ही क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी होगा। बहुत हेवी हो रहा है क्या ? सब लोग एकदम सिरिअस हो गये हैं।

हमें यहां देखनी है तीसरे गुणस्थान की बात, लेकिन अभी हमने क्या देखा कि जो मिथ्यादृष्टि जीव है, वह औपशमिक सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है तो उसको जाने के लिये चार रास्ते हैं, अब प्रथम बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व करता है क्या वह जीव नियम से मिथ्यादृष्टि होता है ? ऐसा प्रश्न आया था। प्रथमोपशम सम्यक्त्व की बात नहीं थी। क्या थी ? अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि प्रथम बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व करता है तो उसके बारे में दो प्ररूपणायें चलती हैं। दोनों ही आचार्यों की हैं - एक आचार्य कहते हैं कि प्रथमोपशम सम्यक्त्व के बाद यानी जिसने पहली बार-प्रथम बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त किया है वह नियम से गिरता ही है। दूसरे आचार्य कहते हैं कि उसके जाने के चार रास्ते हैं, उसमें से एक रास्ता तो उपशम सम्यक्त्व के काल के बीच में ही होता है और आगे मिथ्यात्व का उदय होगा तो मिथ्यात्व में, सम्यग्मिथ्यात्व का उदय होगा तो सम्यग्मिथ्यात्व में और सम्यक् प्रकृति का उदय होगा तो जो गुणस्थान होगा वह सम्यक्त्व में रहेगा, वह क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी होगा। हम उस उलझन में न पड़ते

हुये, दोनों ही प्ररूपणाओं का स्वीकार करते हुये आगे बढ़ेंगे। हमारे में कोई ऐसी कपॅसिटि है नहीं, हमें कोई अधिकार भी नहीं है कि हम निर्णय करें कि यह बात सच्ची है और यह बात झूठी है। दोनों को प्रमाण मानकर हम चलें। हम क्यों झगड़े में पड़े कि वह पहले में जाता ही है या नहीं जाता है। इसतरह ये दो प्ररूपणायें मिलती हैं।

अभी हमको यहां तीसरे गुणस्थान की बात करनी है। अभी किसी भाई ने मुझे एक प्रश्न पूछा था। उपशम सम्यक्त्वी तीसरे गुणस्थान में जायेगा, क्या नहीं ? आपने पूछा था न ! तो भाईसाहब उपशम सम्यक्त्व का जो काल चल रहा है, उस काल में दर्शनमोहनीय कर्म का कोई उदय ही नहीं होता। बराबर ! अब उदय नहीं होता है लेकिन दर्शनमोहनीय के उपशम का काल पूरा होने के बाद, इमीजिएट्लि नेक्स्ट समय में वह तीसरे गुणस्थान में आ सकता है। लेकिन जिसका औपशमिक सम्यक्त्व का काल पूरा हुआ है उसको हम क्या कहेंगे ? उपशम सम्यग्दृष्टि कहेंगे कि नहीं ? औपशमिक का काल पूरा हो गया, क्षायोपशमिक हुआ ही नहीं तो वह अभी कहां आया ? तीसरे में। आपका जो प्रश्न था तो उसका उत्तर इसतरह से हम देख सकते हैं। वह काल पूरा हो गया और इमीजिएट्लि नेक्स्ट समय में सम्यग्मिथ्यात्व का उदय आ सकता है तो वह तीसरे में आ गया।

अब यहां हमने देखा कि जीव के कोई विशेष जुदे प्रकार के ही परिणाम होते हैं और साथ-साथ सम्यग्मिथ्यात्व का उदय होता है इसलिये वह तीसरे गुणस्थान में आता है और उसके अगर मिथ्यात्व का उदय आये तो वह मिथ्यात्व गुणस्थान में और सम्यक् प्रकृति का उदय आये तो वह क्षयोपशम सम्यक्त्व में यानी जो रिस्पेक्टिव्ह गुणस्थान होगा उसका वह कायम रहेगा। औपशमिक सम्यक्त्व से क्षायोपशमिक सम्यक्त्व होने के लिये उस समय उसको कोई भी किसी प्रकार के करण परिणाम नहीं करने पड़ते हैं।

अब देखो फिर यहां आते हैं हम, यहां जो लिखा है, हम जहां से छूट गये थे वह उत्तर की आखिर की लाइन, **तीसरा गुणस्थान तो उन्हें होता है जो एक बार सम्यग्दृष्टि हो चुके हैं।** अब मैंने कहा था कि जो सादि मिथ्यादृष्टि है, वह भी तीसरे गुणस्थान में आता है यह देखा था न हमने। पहले गुणस्थान से तीसरे गुणस्थान में आनेवाला भी जीव है। वह कैसा होना चाहिये कि जिसकी सत्ता में मोहनीय कर्म की

२८ प्रकृतियां हैं, वही जीव ऊपर आयेगा क्योंकि उसके अभी मिथ्यात्व कर्म का उदय चल रहा था, वह मिथ्यात्वी था लेकिन उस वक्त वह दोनों जो थे, कौनसे-कौनसे ? सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति का अप्रशस्त उपशम था। तो सम्यग्मिथ्यात्व का इसका भी उदय आ जाये तो वह जीव तीसरे गुणस्थान में आयेगा।

देखो, आपको याद होगा- पहले गुणस्थान का गमनागमन याद है किसीको ? याद है ? हां बोलो, बोलो। *श्रोता: सादि मिथ्यादृष्टि।* सादि मिथ्यादृष्टि। *श्रोता: पहले गुणस्थान से तीसरे गुणस्थान में आयेगा।* पहले गुणस्थान से तीसरे गुणस्थान में आयेगा। और हां ? *श्रोता: चौथे, पांचवें और सातवें।* तो अभी नाम बताना चौथे गुणस्थान का नाम क्या है ? *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* अविरतसम्यक्त्व और पांचवें का ? देशविरत और छठे में जायेगा कि नहीं ? छठे में जायेगा क्या नहीं ? पहले से छठे में हां बेन ? आप हां, मुंह से बोलना। हां या ना ? हां ? आप क्या कहती हैं बेन ? *श्रोता: नहीं।* नहीं बोलती है। हां देखो, पहले से सातवे में जायेगा, छठे में कोई नहीं जायेगा।

हमने तो देखा था न दूसरा गुणस्थान और छठा गुणस्थान यह चढ़ने के लिये नहीं है, गिरने के लिये है। और तो और दूसरे गुणस्थान से जीव नीचे ही गिरता है। ऊपर से तो नीचे आवे दूसरे में और दूसरे में से तो पहले में ही आता है। वैसे छठे गुणस्थान में से जीव ऊपर भी जा सकता है सातवें में और सातवें में से छठे में आता है। नीचे के किसी गुणस्थान में से डायरेक्ट छठे में कोई भी नहीं जा सकता, बात ख्याल में आयी ? देखो हम बोलते हैं तब तो आप हां-हां कहते हो और बाद में कभी भूल जाते हो। हमने क्या देखा कि जो मिथ्यादृष्टि जीव है, कौनसा ? यह सादि मिथ्यादृष्टि की बात की तो वह तो पहले से तीसरे गुणस्थान में जा सकता है और जो मिथ्यादृष्टि जीव हो वह पहले से चौथे में यानी अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान में, देशविरत गुणस्थान में और अप्रमत्तविरत गुणस्थान में जायेगा। यह बात हमने देखी थी न तो वहां हमें पता नहीं लग रहा था कि यह पहले गुणस्थान से तीसरे गुणस्थान में क्यों जा रहा है। वहां उसकी सत्ता २८ प्रकृतियों की है मोहनीय कर्म की यानी दर्शनमोहनीय कर्म की तीन प्रकृतियां हुयी हैं इसलिये जिसका उदय आयेगा वहां वह जायेगा।

अब देखो आगे बढ़ते हैं। यहां जो लिखा - तीसरा गुणस्थान तो उन्हें होता है जो एक बार सम्यग्दृष्टि हो चुके हैं। यह एक बार सम्यग्दृष्टि हो चुके हैं कहने का कारण

क्या है कि उसके जो मिथ्यात्व नामक एक प्रकृति थी, उसके भेद होकर तीन प्रकृतियां हुयी हैं। इसलिये एक बार क्या कहा ? एक बार सम्यग्दृष्टि हो चुके हैं। यह कहने के पीछे जो प्रयोजन है वह ख्याल में आ गया ? दिलीपभाई ? *श्रोता: तीन टुकड़े हो जाते हैं।* हां, तीन टुकड़े हो जाते हैं। तो उसकी सत्ता में पहले जो अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि था न तो उसके चारित्रमोहनीय की २५ प्रकृतियां और दर्शनमोहनीय की एक ऐसे २६ प्रकृतियां सत्ता में थी। अभी ऐसे जीव ने सम्यक्त्व प्राप्त किया तो सम्यक्त्व में भी ये २५ जो हैं वे और ये ३ प्रकृतियां सत्ता में हैं। अभी उदय की बात नहीं कर रहे हैं हम क्योंकि उदय तो अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया और लोभ का नहीं होगा लेकिन बाकी २१ प्रकृतियों का होगा। अप्रत्याख्यानावरण ४, प्रत्याख्यानावरण ४, संज्वलन ४ और ९ नोकषाय। १२ और ९ ऐसे २१ प्रकृतियों का वहां तो उदय है और सत्ता में भी २५ हैं। जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि है उसने तो अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया और लोभ की सत्ता नष्ट की है और जो दर्शनमोहनीय कर्म की तीन प्रकृतियां हैं वे भी उन्होंने नष्ट की हैं। ख्याल में आया ? उनकी बात यहां नहीं हो रही है लेकिन सम्यग्मिथ्यात्व का उदय होने से जो जीव तीसरे गुणस्थान में आता है उसकी बात चल रही है।

यहां कहा कि जो एक बार सम्यग्दृष्टि हो चुका है तो अभी उसकी सत्ता में २८ प्रकृतियां है इसलिये वह तीसरे गुणस्थान में आ सकता है। जो सम्यग्दृष्टि हैं चौथे, पांचवें, छठे और सातवें में, उनकी भी सत्ता उतनी है लेकिन छठे से, पांचवें से और चौथे से तीसरे गुणस्थान में वह आ सकेगा। उसीप्रकार यहां सादि मिथ्यादृष्टि जो है उसके २८ की सत्ता है तो वह पहले में से तीसरे में जायेगा। यहां तक तो बात समझ में आयी ? अब आगे बढ़ते हैं देखो यह एक वाक्य है न, उसके पीछे बहुत बड़ा रीझनिंग है वह हमारे ख्याल में आता है। **जीव ने एक बार सम्यक्त्व प्राप्त किया हो और फिर मिथ्यादृष्टि हो गया उसे सादि मिथ्यादृष्टि कहते हैं।** जब अनादि मिथ्यादृष्टि जीव औपशमिक सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है तो उस जीव के मिथ्यात्व के तीन टुकड़े होने के कारण दर्शनमोहनीय कर्म तीन प्रकार का हो जाता है। यह भी हमने सब देखा है। पहले मैंने बताया है, फिर यहां पढ़कर हम उसीको और कन्फर्म कर रहे हैं। तीन प्रकार कौनसे हैं ? एक मिथ्यात्व व दूसरा सम्यग्मिथ्यात्व तीसरा सम्यक् प्रकृति। अतः जिसके पास सम्यग्मिथ्यात्व दर्शनमोहनीय कर्म की सत्ता हो और उसका उदय आ जाये तो ही उसे तीसरा गुणस्थान होता है। बात ख्याल में आ गयी ? क्लिअर हो गयी ?

अब कहते हैं कि **जिस जीव के सम्यग्मिथ्यात्व कर्म की सत्ता यानी अस्तित्व हो, परंतु उदय न हो तो क्या उस जीव को तीसरा गुणस्थान नहीं हो सकता ?** क्या कहा फिर से ? अभी क्या कह रहे हैं कि सम्यग्मिथ्यात्व कर्म की सत्ता है, लेकिन उसका उदय न हो। सत्ता का अर्थ क्या किया उन्होंने ? अस्तित्व है उसका और उसका उदय न हो तो क्या उस जीव को तीसरा गुणस्थान नहीं हो सकता ? हां ? *श्रोता: नहीं हो सकता।* अच्छा ! यहां उत्तर देते हैं। **जिस जीव के पास सम्यग्मिथ्यात्व कर्म की सत्ता है उस जीव को सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान नियम से होता ही है, ऐसा कारण-कार्य संबंध तो है नहीं।** यानी लंबा वाक्य कर दिया। वहां से भाईसाहब ने हाथ हिला-हिलाकर बताया कि नहीं हो सकता है, नहीं हो सकता है।

आप कह रहे हैं ऐसा जरूर है कि जिस-जिस जीव की श्रद्धा में सम्यक् मिथ्यापन आता है, क्या कहा ? यह श्रद्धा गुण का ही एक प्रकार का परिणमन है, उसका नाम है सम्यग्मिथ्यापना। अगर वह जीव का परिणाम ऐसा हुआ तो क्या कहते हैं उसे ? सम्यग्मिथ्यात्व दर्शनमोहनीय कर्म का उदय होता है। देखो भाईसाहब यहां फिर से हम दुबारा आपको समझाना चाहेंगे। यहां कहेंगे कि कर्म का उदय आया और वह जीव वहां गया। या तो यहां जीव ने ऐसे परिणाम किये इसलिये कर्मों को भी उस रूप परिणमन करना पड़ा, ऐसा जरा भी नहीं है। यहां जीव का परिणाम तो अपने स्वयं से होता है और यह कर्मरूप जो पुद्गल है उसका परिणमन भी वह स्वयं अपने से होता है। दोनों का कार्य एकसाथ होता है और वह केवली के ज्ञान में आया है इसलिये उन्होंने कहा कि इससे यह हुआ। यह उपचार से, व्यवहार से, निमित्त से ऐसा कहा जाता है। यहां लिखते हैं कि **जिस जिस जीव की श्रद्धा में सम्यग्मिथ्यात्वपना आता है उसे सम्यग्मिथ्यात्व दर्शनमोहनीय कर्म का उदय होता है।** यानी सत्ता में रहने से भी कर्म हमें कुछ भी नहीं करता। क्या इस बात को आप मानते हो सुरेशभाई ?

कर्म की सत्ता है, अपने पास सत्ता में कर्म पड़ा है लेकिन वह तुम्हे फल नहीं देता है। उदय नहीं आता है का अर्थ क्या है ? वह तुम्हे फल नहीं दे रहा है। देखो हमारे २३वें तीर्थंकर का नाम क्या था बेन ? २३वें तीर्थंकर। *श्रोता: पार्श्वनाथ भगवान।* पार्श्वनाथ भगवान, तो जब वे मुनि थे तब उनके पास तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता थी कि नहीं ? जब उनके ऊपर कमठ ने बहुत बड़ा उपसर्ग किया था तब उनकी सत्ता में तीर्थंकर प्रकृति थी उसका क्या फायदा ? फिर भी उन पर ऐसा बड़ा उपसर्ग हुआ यानी सत्ता में कोई

कर्म प्रकृति पड़ी हो तो उसका कोई कार्य नहीं होता है। जब उदय में आये तब वह हमें फल दे। यहां वही कह रहे हैं। प्रश्न क्या था कि उस जीव के सम्यग्मिथ्यात्व की सत्ता है और उदय नहीं है, तो क्या वह तीसरे गुणस्थान में आता है ? बिलकुल नहीं आता है। उसका उदय आयेगा तभी आयेगा क्योंकि देखो ये तीन टुकड़े हैं न - इनमें से ये तीनों ही सत्ता में हैं। ये तीनों ही सत्ता में है तो जिसका उदय आयेगा उसके अनुसार उस गुणस्थान में जायेगा। हमने देखा मिथ्यात्व का उदय आयेगा तो पहले गुणस्थान में जायेगा। सम्यक् प्रकृति का उदय आयेगा तो उसका सम्यक्त्व चालू रहेगा और सम्यग्मिथ्यात्व का उदय आयेगा तो वह तीसरे गुणस्थान में आयेगा। लेकिन उदय नहीं आता और सत्ता में पड़ा है तो क्या वह तीसरे गुणस्थान में आयेगा ? नहीं आयेगा। बात सीधी है न ! इसलिये वहां लिखा है कि जिस-जिस जीव की श्रद्धा में सम्यग्मिथ्यात्वपना आता है उसे सम्यग्मिथ्यात्व दर्शनमोहनीय कर्म का उदय होता है। उदय नहीं होगा तो वह उस गुणस्थान में नहीं जायेगा। अब आगे –

जीव के परिणाम में कर्म का उदय निमित्त मात्र है, कर्म जीव के परिणाम को करते-कराते हैं, ऐसा बिलकुल नहीं है। जब हम यह सीखते थे तब वहां एक प्रश्न चला था कि कर्म का उदय आयेगा तो जीव को वैसे परिणाम करने पड़ते ही हैं न ? यानी डिग्री टु डिग्री। जितने बल से कर्म का उदय आये उतने प्रमाण में जीव को भी वैसे परिणाम करने पड़ते हैं या नहीं ? ख्याल में आया ? वहां कॉन्ट्रव्हर्सी चल रही थी कि जितना कर्म का उदय आवे उतना जीव को वैसा परिणाम करना ही पड़े। मिथ्यात्व कर्म बहुत जोर शोर से उदय में आता है और इस जीव को मिथ्यात्व परिणाम करना पड़े, ऐसा है क्या नहीं ? तो कहते हैं - कभी नहीं। क्यों ? बात तो ऐसी है कर्म का उदय कबसे चल रहा है ? हां जी ? *श्रोता: अनादि से।* अनादि से चल रहा है तो अनादि से मिथ्यात्व कर्म का उदय है और जीव को मिथ्यात्व ही करना पड़े। तो इस जीव को सम्यक्त्व प्राप्ति के कोई चान्सेस ही नहीं रहेंगे, ख्याल में आया ?

अब हम मुनि पार्श्वनाथ की ही बात करेंगे। उनके ऊपर तो इतना बड़ा उपसर्ग हुआ था। वे उस उपसर्ग में जुड़े या अपने स्वरूप में गुप्त रहे ? स्वरूप में एकाग्र रहे, लीन रहे। वहां जो बाहर होना था सो होता रहा। उसकी तरफ उन्होंने कतई कोई ध्यान नहीं दिया और उसीमें उनके वे उपसर्ग भी ठंडे हो गये और केवलज्ञान की प्राप्ति भी हो गयी। तो जितने प्रकार के, जितने रेशिओ में, जितनी प्रबलता से कर्म का तीव्र या

मंद उदय आये - जैसा भी जो भी है उसके अनुसार जीव को परिणाम करने पड़ते हैं ऐसा बिलकुल नहीं। यहां वही बात चल रही है **जीव के परिणाम में कर्म का उदय निमित्त मात्र है। कर्म जीव के परिणाम को** अभी कर्म जीव के परिणाम तो कुछ **करते या कराते हैं, ऐसा बिलकुल नहीं है। यदि कर्म जीव के परिणाम को कराते हो तो उन्हें बलवान कहना संभव होता, लेकिन कर्म में ऐसी कुछ शक्ति ही नहीं है अतः कर्म बलवान नहीं है। जीव ही अपने अच्छे बुरे परिणामों का कर्ता है।** यहां तक तो बात समझ में आयी है, अभी यह प्रश्न देखते हुये हम आगे बढ़ते हैं।

यहां स्वयं ही प्रश्न उठा रहे हैं- **एक जीव में एक साथ सम्यक् और मिथ्यारूप दृष्टि संभव नहीं है; क्योंकि इन दोनों दृष्टियों का एक जीव में एक साथ रहने में विरोध आता है। ये दोनों दृष्टियां एक जीव में क्रमशः रहती हैं, अतः इनका सम्यक्त्व और मिथ्यादृष्टि नामक गुणस्थानों में अंतर्भाव हो जायेगा। इसलिये सम्यग्मिथ्यादृष्टि नामक तीसरा गुणस्थान नहीं बनता है ?**अभी वह जीव ऐसा ही मान रहा है कि उसके सम्यक्त्व भी चल रहा है और मिथ्यात्व भी चल रहा है। तो कह रहे हैं- **ऐसा नहीं है। समीचीन** यानी यथार्थ **और असमीचीनरूप** यानी अयथार्थरूप **मिश्र श्रद्धा एक साथ रह सकती है।** यह हमने जात्यंतर परिणाम जिसको देखा था न उसको मिश्र श्रद्धा कहा। तो **ऐसी मिश्र श्रद्धावाला जीव सम्यग्मिथ्यात्वी है।**

अब आगे की बात छोड़ते हुये हम आगे बढ़ेंगे। तो कहते हैं कि यह जो तीसरा गुणस्थान है उस तीसरे गुणस्थान का काल अपेक्षा से विचार करेंगे। आप पुस्तक बंद कर दीजिये या रखिये कोई बात नहीं। १०२ पृष्ठ पर हम आये हैं। यहां कह रहे हैं कि काल अपेक्षा जब हम विचार करते हैं तो- **कोई जीव इस सम्यग्मिथ्यात्व नामक तीसरे गुणस्थान में आयेगा तो वह अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत ही रहेगा।** यानी तीसरे गुणस्थान का काल कितना है ? *श्रोताः अंतर्मुहूर्त।* अंतर्मुहूर्त और दूसरे गुणस्थान का काल कितना है ? हां सुरेशभाई ? *श्रोताः जघन्य एक समय।* हां, जघन्य एक समय और उत्कृष्ट ? *श्रोताः छह आवली।* छह आवली बराबर ! और इनका क्या कहना है यह अंतर्मुहूर्त ही है। कितना अंतर्मुहूर्त है उसका कोई यहां माप - प्रमाण दिया नहीं है, लेकिन कहेंगे अंतर्मुहूर्त ही। अब कहते हैं जघन्य काल कितना है ? कहते हैं **सर्व लघु अंतर्मुहूर्त काल है** और उत्कृष्ट काल कितना है ? **सर्वोत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त काल अर्थात्**

इस गुणस्थान के जघन्य काल से यह काल संख्यात गुणा है। यह सर्वोत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त नहीं है, उत्कृष्ट काल अंतर्मुहूर्त है क्योंकि यहां सर्वोत्कृष्ट यानी एक अपेक्षा से उत्कृष्ट काल ही है। तो कितना है ? जघन्य काल से उत्कृष्ट काल संख्यात गुणा है। अभी तो आप पुस्तक बंद कर देंगे तो अच्छा रहेगा क्योंकि हमें गमनागमन देखना है।

यहां पूछते हैं कि गमनागमन यानी तीसरे गुणस्थान से जीव कौन-कौनसे गुणस्थान में गमन करेगा ? घबराना मत इधर लिखा हुआ है, कितनी अपनी सुविधायें हैं ! हां, देखो ! *श्रोता: चार्ट में दिखाया है।* देखो पहले में पहले गमन कहां-कहां होगा ? तीसरे गुणस्थान से जीव का गमन कहां-कहां होगा ? यहां लिखा है तीसरे गुणस्थान में यह ॲरो नीचे की तरफ है तो कौनसा गुणस्थान बताया ? पहला गुणस्थान यानी तीसरे गुणस्थान से पहले गुणस्थान में जीव जा सकता है। और क्या है ? यह नीचे की ओर हुआ। ऊपर जाना हो तो क्या लिखा है ? ऊपर तीसरे में से यह, यह ॲरो देखना वह जो ॲरो है वह क्या बता रहा है ? चौथे गुणस्थान में जायेगा और किसी गुणस्थान में जायेगा क्या ऊपर ? उधर आंकड़े लिखे हैं न ! हां, कौन-कौनसे आंकड़े लिखे हैं ? हां, पांच भी लिखा है और छह भी लिखा है। तो पांचवें गुणस्थान में जायेगा कि नहीं ? *श्रोता: जायेगा।* अच्छा ! छठे गुणस्थान में जायेगा कि नहीं ? वहां तो जाना ही पॉसिबल नहीं है। तो फिर यहां ॲरो तो लगे हैं। हां, लेकिन वे उलटे लगे हैं लेकिन वह गलती से नहीं लगे हैं, सही लगे हैं। तो यह क्या कहते हैं ? आगमन कहां-कहां से होगा ? यह देखो यहां तो चार्ट में लिखा है। अभी इसके आगे गमनागमन इतना सरल है, उसका कोई हिसाब नहीं है। यह शुरू में कुछ-कुछ गुणस्थानों में जरा गड़बड़ी होगी आपकी।

अभी यहां क्या कह रहे हैं ? अभी यहां कह रहे हैं कि तीसरे गुणस्थान से कहां जायेगा, तो कहते हैं नीचे। कहां ? पहले गुणस्थान में और ऊपर जायेगा तो चौथे गुणस्थान में, अन्यत्र कहीं पर भी नहीं जायेगा। अब वह पहले में कब जायेगा और चौथे में कब जायेगा ? उसकी बात हम देखेंगे। लेकिन आयेगा कहां-कहां से तो हम पहले नीचे से गिनेंगे। पहले गुणस्थान से तीसरे गुणस्थान में जीव आ सकता है तो उसके लिये कौनसी कंडिशन है ? अरविंदबाबू आप बतायेंगे ? पहले से तीसरे गुणस्थान में आने के लिये कौनसी कंडिशन देखी थी हमने ? भाईसाहब आप बता रहे हैं ? जोर से बोलना। सुभाषभाई यह क्या बोलते हैं आपने सुना ? हां, क्या बोले आप ? मैं तो नहीं सुन पाया, आप भी नहीं सुन पाये, देखो भैया बाजूवाला भी नहीं सुन पाया तो मैं कहां से सुनूं ?

पहले गुणस्थान से तीसरे गुणस्थान में जानेवाले जीवों की खासियत क्या होनी चाहिये, विशेषता क्या होनी चाहिये ? प्रमोदजी आप बतायेंगे ? *श्रोता: २८ कर्मों की सत्ता, और सादि मिथ्यादृष्टि।* हां बस यही इतना ही बताना है आपको कि वह जीव सादि मिथ्यादृष्टि जिसके २८ कर्मों की सत्ता है। भाईसाहब आपने यही बताया था, मुझे ख्याल है पर इतना स्लोलि बोला कि यू वेअर नॉट कॉन्फिडन्ट अॅट ऑल। इतना मत समझना कि मैं पूरा-ठार बहरा हूं, हां। लेकिन मैं आपको उत्साहित करना चाहता हूं कि आप जोर से बोलो न भाई ! अरे, गलती करना है भाई तो छाती ठोककर करो न ! गलती तो करनी है लेकिन घबरा-घबराकर, डर-डरकर। क्यों ऐसा करते हो ? और सही कहना है तो जोर से कहो और जो भी आं-आं करते हैं, समझना अभी तुम कॉन्फिडन्ट नहीं हो। आपने यही बताया था न सादि मिथ्यादृष्टि, है न ? कोई बात नहीं।

हमने क्या देखा ? पहले से तीसरे में आयेगा हां और तीसरे से जायेगा कहां-कहां ? नीचे पहले में जायेगा वह तो देखा हमने। लेकिन तीसरे से ऊपर चौथे में ही जायेगा, अन्यत्र कहीं नहीं जायेगा। उसके लिये क्या कारण है वह हम आगे जाकर देखेंगे। अभी यहां क्या बताते हैं आने में तो यह जीव छठे गुणस्थान से भी आ सकता है। यानी छठे गुणस्थान में वह जीव क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि है तो ऐसा हो सकता है कि जो अन्य जिनका अप्रशस्त उपशम था; किसका-किसका ? छठे गुणस्थान में जो क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि होगा, उसके तो सम्यक् प्रकृति का उदय चलेगा और बाकी दोनों सत्ता में एक-एक समय पीछे रह जायेंगे। तो उनमें से अगर सम्यग्मिथ्यात्व का उदय आ जाये तो जीव तीसरे गुणस्थान में आ जायेगा। वही बात पांचवें गुणस्थान की भी है और वही बात चौथे गुणस्थान की भी है। वह जीव; है तो क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि और उसमें से उसका सम्यग्मिथ्यात्व का उदय आ जायेगा तो तीसरे गुणस्थान में आयेगा। यह बात समझ में आ गयी ? कोई डाउट है किसीको ? पूछ लेते हैं।

देखो पृष्ठ १०२ पर हम आये हैं। **गमनागमन अपेक्षा से विचार**, कह रहे हैं- **सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती जीव ऊपर के मात्र अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान में ही गमन करता है।** अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान का क्रमांक कौनसा है ? हां साहब ? *श्रोता: चौथा।* चौथा, बहुत अच्छा ! **अन्य किसी भी ऊपर के गुणस्थानों में नहीं।** यह तो अभी क्लॅरिटी हो गयी न, अभी डिफिकल्टि भी खत्म हो गयी। यहां अभी कोई बात याद करने की आवश्यकता ही नहीं। हम थोड़ासा आगे-पीछे का रेफरन्स लेते हैं तो

हमें यह बात निश्चित हो जाती है कि जीव तीसरे गुणस्थान में से ऊपर चौथे गुणस्थान में ही जायेगा। आगे क्यों नहीं जायेगा, उसकी बात भी बतायेंगे अभी। **यदि सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती जीव निचले गुणस्थान में गमन करता है तो वह एक मात्र मिथ्यात्व गुणस्थान में ही गमन करता है सासादन गुणस्थान में नहीं।**

आगमन कहां-कहां से होता है ? कहते हैं **मिश्र गुणस्थान में सीधे आगमन के चार मार्ग हैं।** हमेशा लिखते वक्त सीधा-सीधा यह शब्द आता है। वह सीधा शब्द यही बताता है कि बीच में कहीं अटकते-अटकते नीचे आवे ऐसा नहीं है, डायरेक्ट आ जायेगा। क्या कहा ? पहले में पहले बताते हैं- **प्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती भावलिंगी संत**, देखो कैसे परिणाम हैं ? यह जो मुनिराज है, स्वयं तीन कषाय चौकड़ी का अभाव है ऐसा जीव भी जात्यन्तर परिणाम का शिकार बनता है और उसके तीसरा गुणस्थान आता है। क्या कहा देखो यह प्रमत्तसंयत गुणस्थान यानी कितने नंबर का है ? *श्रोता: छह।* पांच ? पांच किसीने बताया न ! नहीं बताया ? छह ही बताया, चलो अच्छा है। प्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती भावलिंगी संत सीधे सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में आते हैं। देखो, हम जब देखते हैं न यह गमनागमन तो हमें इस बात का पता लगता है कि जीवों के परिणाम का कोई भरोसा है ? कब पैर फिसल जाये, कब परिणामों में विविधता आ जाये, विचित्रता आ जाये या तो खराबी आ जाये, वह बेचारा तीन कषाय चौकड़ी का अभाव करते हुये भी फिर खोटे परिणाम कर सकता है।

परसों बात निकली थी न, कौनसी ? कि द्रव्यलिंगी मुनि हैं। अरे ! जो भावलिंगी मुनि हैं तप में बैठे हैं, बिलकुल आपकी भाषा में मन, वचन, काय स्थिर करके बैठे हैं। ऐसे जीव के भी बैठे-बैठे बाह्य में तो मुद्रा एकदम स्थिर है और ऐसा लगता है कि वे तप में बैठे हैं। लेकिन परिणामों में ऐसी विचित्रता हो सकती है कि वह जीव सातवें में से छठे में आ जाये। छठे में आ जाये तो यहां-वहां देखे, घूमें ऐसा नहीं है, तप में ही बैठे हैं और उस समय ऐसा प्रसंग हो सकता है कि वह पहले गुणस्थान में आ जाये। बाह्य में तो ऐसे ही ऐसे है जैसे सातवें में थे, तो उनको नमन करना कि नहीं करना ? अरे ! पागल वह अंदर में अंतरंग के परिणाम तुझे ख्याल में आ रहे हैं क्या ? ख्याल में आया ? अरे ! जिस बात का हमें पता ही नहीं उसे कहां तुम टेस्ट करने जा रहे हो ?

देखो बहनश्री बेन का एक वाक्य है, जब कषायों में आ जाते हैं, तो कहते हैं

'अमे आ परदेशमां क्यां आवीने पड्या ?' यानी क्या ? यह हमारा गांव नहीं है, यह हमारा देश नहीं हम परदेश में आये हैं, यह हमारा स्थान नहीं है, यह तो मिथ्यात्व है। मुझे तो अपने स्वरूप में गुप्त होकर अपना ओरिजिनल स्थान जो है वह प्राप्त करना है। ऐसे जो मुनिराज होंगे वे मिथ्यात्व गुणस्थान में जाने से तुरंत उठकर कपड़ा-वपड़ा पहनकर यहां-वहां घूमेंगे थोड़े ही ? जब उनको अंदर से ऐसा एहसास होये, अरे ! मैं कहां आया ? अरे ! वे तो अंतरग में और इतनी तेजी से और इतनी दृढ़ता से स्वरूप में मग्न होने की कोशिश करेंगे और तुरंत ही पहले से सातवें में आ जायेंगे। बैठे-बैठे हमें पता ही नहीं लग रहा है अंदर क्या हो रहा है। लेकिन उसके साथ-साथ यह भी देखते हैं कि हमें तो उनके अंतरंग परिणामों का पता नहीं है, लेकिन बाह्य उनका जो कोई आचरण चल रहा है उस पर हमें थोड़ासा गौर करने से शायद पता भी लग सकता है। यह क्या है और क्या नहीं है ? जब हम छठे सातवें में आयेंगे तो उसकी बात करेंगे।

अभी यहां कहते हैं जो प्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती जीव हैं, वह तीसरे गुणस्थान में भी आ सकते हैं। उसी तरह कह रहे हैं दूसरा पॉइंट जो है कि **पंचम गुणस्थानवर्ती व्रती श्रावक का सीधे तीसरे गुणस्थान में आगमन हो सकता है।** उसी तरह **चौथे अविरतसम्यक्त्व से भी मिश्र गुणस्थान में आना संभव है। यह तीनों तीसरे गुणस्थान में आनेवाले औपशमिक अथवा क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि ही होने चाहिये, क्योंकि क्षायिक सम्यग्दृष्टि तीसरे गुणस्थान में नहीं आते।** अभी हमने देखा कि तीसरे गुणस्थान में क्षायिक सम्यग्दृष्टि क्यों नहीं आते ? इसका उत्तर अभी आपने दिया था याद है। हां, विरेशभाई आप बताना। *श्रोता: उनकी सातों प्रकृतियां नष्ट हो गयी।* हां, उनके अनंतानुबंधी की चार और मिथ्यात्व के विविध जो तीन भेद हैं, इनकी सत्ता ही नहीं है। क्षायिक सम्यग्दृष्टि जो जीव है उसका सबसे निचला गुणस्थान कौनसा होगा हां भाई ? चौथा। ख्याल में आया ? उसके नीचे कभी नहीं आयेंगे। अब आगे- **क्योंकि क्षायिक सम्यग्दृष्टि तीसरे गुणस्थान में नहीं आते कारण कि उनके पास सम्यग्मिथ्यात्व दर्शनमोहनीय कर्म की सत्ता ही नहीं है।** यह बात क्लिअर हो गयी ? अब आगे बढ़ते हैं पेज १०३। **सादि मिथ्यादृष्टि, जिनके सम्यग्मिथ्यात्व की सत्ता अर्थात् अस्तित्व हो और कदाचित् उदय भी आवे तो वे इस तीसरे गुणस्थान में आते हैं।** वह तो हमने देखा था पहले से तीसरे में आनेवाले जीव।

अभी **विशेष अपेक्षा विचार**- अब विशेष यानी तीसरे गुणस्थान की विशेषता

क्या है ? सबसे बढ़िया पहला ही जो पॉइंट है वह आपको बहुत अच्छा लगेगा, लेकिन वह अच्छा नहीं सच्चा भी नहीं। देखो क्या कह रहे हैं **सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में जीव का मरण नहीं होता।** जब यह पहली बार हमने सीखा था तो हमने तो बहुत खुशी से नक्की किया कि हम तो तीसरे गुणस्थान में ही रहेंगे। आपने नहीं सोचा न ? आप अच्छे लोग हैं, हमारे जैसे नहीं हैं। हमने तो यही निर्णय किया, फिर हमको बताया भैया घबरा मत तीसरा गुणस्थान सिर्फ अंतर्मुहूर्त के लिये होता है। तेरा मरण टलनेवाला नहीं है, जिसका-जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण तो निश्चित है। तो आप कहेंगे साहब क्या बात कर रहे हैं ? हमारे तीर्थंकरों का भी जन्म होता है और वे उसी भव में मोक्ष में जाते हैं। वह तो उनका अंतिम जन्म है, तुम्हारा जन्मकल्याणक नहीं मनाते हैं, क्यों ? उनके जन्मकल्याणक मनाये जाते हैं। क्यों मनाये जाते हैं ? क्योंकि उनका जन्म तो आखिरी जन्म है और उनका मरण भी नहीं होता है, उनका तो निर्वाण होता है। तो यह जो हम बता रहे हैं कि जिसका-जिसका जन्म है उसका-उसका मरण है, वह तो हम-तुम जैसे जीवों की अपेक्षा से है, तीर्थंकरों की अपेक्षा से नहीं है, ख्याल में आया ? यानी हम यही बताते हैं कि जो संयोग में आया है उसका वियोग हुये बिना रहेगा नहीं। क्या कहा ? यह शरीर संयोग में आया है, यह पत्नी संयोग में आयी है, यह घर संयोग में आया है, बाल-बच्चे संयोग में आये हैं, ये माता-पिता संयोग में आये हैं, धन संयोग में आया है, इनका वियोग हुये बिना रहेगा नहीं।

यह बात अगर हमारे दिमाग में सही रीति से फिट हो जाये तो चाहे शेअर बाजार कितना २०००० का एकदम ५००० में जाये तब भी कोई डर नहीं। हां, क्यों डर लगता है आपको ? अभी २००० उछल गया। अभी मालूम नहीं यहां आने के बाद क्या हुआ, ख्याल में आया ? कांग्रेस आयी तो यह बढ़ गया ? सब लोग खुश-खुश। अरे भाई ! ध्यान रखना तू अगर उसको छोड़ना नहीं चाहेगा तो एक समय ऐसा आयेगा कि तू ही उसे छोड़कर चला जायेगा। क्यों ? यहां कह रहे हैं कि अगर तुझे अजरामर होना है तो तू सिद्धत्व प्राप्त कर। कभी मरण ही नहीं होनेवाला है तेरा। वैसे तो जीव का मरण कभी होता ही नहीं। पर्याय की अपेक्षा से होता है ऐसा कहने में आता है।

तो क्या कह रहे हैं देखो- **सम्यग्मिथ्यात्व नामक गुणस्थान में जीव का मरण नहीं होता, यह मिश्ररूप श्रद्धा का परिणाम ही खोटा है। सम्यग्दर्शन सहित मरण होता है। मिथ्यात्व परिणाम के साथ तो जीव अनादिकाल से मरता**

ही आया है, लेकिन श्रद्धा की मिश्र अवस्था में मरण नहीं करता अर्थात् यह मिश्र परिणाम मरण के लिये भी योग्य नहीं है। हां, यहां तो अमृतचन्द्र आचार्य कहते हैं कि मरण करते हुये भी तू सम्यक्त्व प्राप्ति करने की कोशिश कर। 'अयि कथमपि मृत्वा तत्त्व कौतूहली सन्'। अरे भैया ! मरण के बाद काहे का तत्त्व का कौतूहली होना है ? कहने का मतलब यह है मरण भी आ जाये तो भी बेहतर, लेकिन तू तत्त्व का निर्णय कर और अपने को समझ, अपने स्वरूप को पहचान और उसीमें लीन हो जा। ख्याल में आया ? हमने यहां क्या माना कि अरे मरण नहीं होता है बहुत अच्छा, बहुत अच्छा ! क्या फायदा है ? मैं पूछता हूं, चलो पूछ लेते हैं क्योंकि २ मिनट हैं। फर्ज कर लेते हैं, भाईसाहब आपको मरण ही नहीं आ रहा है। १००, २००, ३०० साल के बाद जो हमारे आगे की पीढ़ी आयेगी वह तो अपने को म्युझियम में रखेगी, जैसे बक्से में बंद कर रख देंगे। यह ३०० साल पुराना आदमी है, ३०० साल पुराना आदमी है। तुम्हारे पहचान के कोई नहीं होंगे क्योंकि आपके उमरवाले तो सब हमारे साथ निकल जायेंगे और आप ? ना आपका कोई साथी होगा, ना कोई पत्नी होगी, ना कोई सगा-सोयरा कोई नहीं होगा। तो ऐसा मरण रहित जीवन पसंद करोगे ? हम तो मरण से डरते हैं भाई, मरण आ जाये तो क्या हो जाये, मरण आ जायेगा तो क्या होगा ? अरे क्या होगा ?

देखो इतनी फॅसिलिटि है जैनिझम में या वस्तुस्वरूप में कि यहां मरण होने के पहले ही अगले भव की आयु तू बांधता है और जहां जिस पर्याय में जायेगा उस अनुरूप तुझे सारे संयोग मिलनेवाले हैं। कर्म की अपेक्षा से डरने की कोई बात नहीं है। यहां हमने सोचा कि यह तीसरे गुणस्थान में मरण नहीं होता है तो हम तो खुश हो गये थे साहब। अरे वाह ! एक तो कोई गुणस्थान रहा हमारे रहने के लिये। नहीं, वह तो एक अंतर्मुहूर्त में खत्म होनेवाला है। इस बात को हम देखते हुये अभी यहीं रुकते हैं, और १५ मिनट से हम दुबारा मिलेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

१२. सम्यग्मिथ्यात्व – विशेषता, अविरतसम्यक्त्व

अभी हम तीसरे गुणस्थान की विशेषताओं की अपेक्षा विचार कर रहे थे। तीसरे गुणस्थान में क्या-क्या विशेषता हो सकती है उसके बारे में हम जानना चाहते थे और हमने यह बात देखी है। कौनसी ? कहते हैं तीसरे गुणस्थान में जीव को मरण ही नहीं होता। उसका काल एक अंतर्मुहूर्त का है, फिर भी वह ऐसा परिणाम है कि उस परिणाम में उसे मरण भी नहीं मिलता। यानी कितना खतरनाक और बदतर परिणाम होगा उस जीव का, कौनसा ? यह मिश्र गुणस्थानवाला जो श्रद्धा गुण का जात्यंतर परिणाम है, मिश्र परिणाम वह अच्छा है नहीं।

अभी बताते हैं दूसरा पॉइंट - यह बात बता रहे हैं कि **मिश्र गुणस्थान में मारणांतिक समुद्घात भी नहीं होता।** अभी यह हम आगेवाला पॅरेग्राफ पढ़ते हैं और उसके बारे में और विशेष जानकारी भी हम देखते हैं। क्या लिखा है ? **मरण के अंतर्मुहूर्त पूर्व नवीन पर्याय धारण करने के क्षेत्र पर्यंत, आत्मप्रदेशों के तेजस कार्माणरूप उत्तरशरीर के साथ बाहर निकलने को मारणांतिक समुद्घात कहते हैं।** अब यह बात निश्चित है कि जिसे मारणांतिक समुद्घात करना है, उसे मारणांतिक समुद्घात होने के पहले आयुबंध होना चाहिये। आयुबंध इसलिये होना चाहिये कि कहां जाकर जन्म लेना है वह तो निश्चित होना चाहिये। यहां क्या होता है कि जीव का समुद्घात होता है, समुद्घात यानी क्या होता है देखो, समुद्घात यानी अपने मूलशरीर को छोड़े बिना आत्मा के प्रदेशों का बाहर निकसना उसको समुद्घात कहते हैं। वे समुद्घात भी सात प्रकार के हैं।

ये सात प्रकार के समुद्घात जो हैं उनके नाम भी तो आप जानते ही होंगे न ? कौन, आप जानते हैं, बोलो साहब ? *श्रोता: केवली समुद्घात।* केवली समुद्घात। अभी एक मारणांतिक समुद्घात भी देख लिया न आपने। दो तो आ गये और अन्य किसीको मालूम हैं ? हां मारणांतिक समुद्घात, हां बोलो, बोलो। *श्रोता: तेजस समुद्घात।* हां। औदारिक समुद्घात होता है ? नक्की बोलो न बेन ! कार्माण समुद्घात होगा कि नहीं हां ? होगा कि नहीं ? हां, आप तो सभी शरीरों के नाम ले रहे हैं। कोई बात नहीं। देखो-देखो सात समुद्घात होते हैं। हां, अनिलभाई आप तो जानते होंगे न भाई ? नहीं जानते हो ? पूरे नहीं जानते थोड़े-थोड़े तो जानते हैं। देखो हां बोलो बेन, अच्छा ! *श्रोता:*

वैक्रियिक समुद्घात। वैक्रियिक समुद्घात। ७ के नाम बताने हैं। वैक्रियिक समुद्घात, आहारक समुद्घात, तेजस समुद्घात, मारणांतिक समुद्घात, वेदना समुद्घात। *श्रोता: केवली।* केवली समुद्घात। हां और कौनसा रह गया ? *श्रोता: कषाय समुद्घात।* कषाय समुद्घात। देखो, देखो वेदना समुद्घात और कषाय समुद्घात ऐसी जोड़ी लगा दो। कौनसी जोड़ी ? वेदना के साथ कषाय तो होने ही वाली है। लेकिन वेदना समुद्घात जुदा है और कषाय समुद्घात जुदा है। दूसरी कौनसी जोड़ी लगानी है हमको ? *श्रोता: आहारक और वैक्रियिक।* अच्छा ! आहारक और वैक्रियिक, तेजस और केवली समुद्घात। एक है मारणांतिक समुद्घात, इसतरह से हमने समुद्घात के भेद देखे।

अभी इस मारणांतिक समुद्घात के बारे में हम थोड़ासा जानेंगे। वहां पर यह बताते हैं कि किसी जीव का मरण होना है तो मरण के पूर्व क्या होता है कि जहां जन्म लेना है वहां तक उसके आत्मा के प्रदेश फैलेंगे। अभी मान लो कि किसीको एक मोड़ लेकर वहां जाना है तो ऐसा सीधा और एक मोड़ लेकर आड़ा ऐसा वहां तक उस आत्मा के प्रदेश फैलेंगे। दो मोड़वाला होगा तो वहां तक जायेंगे और तीन मोड़वाले को मारणांतिक समुद्घात होगा कि नहीं होगा ? प्रवीणभाई आप क्या कहते हैं ? नहीं होगा। हां बेन आप क्या कहती हैं ? क्यों नहीं होगा ? हां, उसके भी हो सकता है। तीन मोड़वाले को, तीन मोड़ किसको होते हैं ? *श्रोता: विग्रहगति।* हां, देखो एक मोड़ भी कहा गया न तो वह भी विग्रहगतिवाला ही करेगा और जो बिना मोड़ का जाता है उसको अविग्रहगति कहेंगे, जिसको इषुगति कहेंगे, ऋजुगति कहेंगे, ख्याल में आया ? अब हमने क्या देखा विग्रहगति आपने बताया लेकिन मोड़वाली गति को विग्रहगति कहते हैं। तो मेरा यह प्रश्न है तीन मोड़ जिनके होते हैं वह किसको होते हैं ? यह बात है अपनी। हां, पन्नालालजी आप बतायेंगे ? *श्रोता: त्रस नाली के बाहर जो जन्म लेनेवाले हैं।* त्रस नाली के बाहर जो जन्म लेनेवाले हैं तो उसको जरूरी नहीं है कि उसको तीन मोड़ लगे। हां, कोई बात नहीं देखो, अच्छी बात है।

हां, यह शास्त्र है न आपके पास देखो इसके पीछे लोकाकाश का नक्शा है। अब हम देखते हैं कि यहां सातवीं पृथ्वी के इस कोने में कोई एकेन्द्रिय जीव है और उसको यहां, यह ब्रह्म -ब्रह्मोतर है न, वहां त्रसनाली के बाहर पीछे की ओर कहीं जन्म लेना है। यहां पर देखो, देखो-देखो यहां है और उसको यहां जन्म लेना है इधर। अभी यहां का जीव है हां, इसको मरकर यहां कहीं जन्म लेना है। यह ब्रह्म-ब्रह्मोतर उसके

पूर्व में जाकर पीछे के भाग में जन्म लेना है तो क्या होगा ? सातवीं पृथ्वी के पूर्व कोने से डायरेक्ट ऐसा ब्रह्म-ब्रह्मोतर के लेवल में पूर्व कोने में जायेगा कि नहीं जायेगा ? क्यों नहीं जायेगा साहब ? *श्रोता: लोकाकाश के बाहर है।* बहुत अच्छा कौन बता रहे है ? हां आप बता रहे हैं। बहुत बढ़िया ! अरे आपको यहां बैठना चाहिये वहां क्यों बैठे हो भैया। ये नांदगांवकर हमारे बहुत पुराने स्नेही हैं। वे भी पंडित हैं।

वे क्या कह रहे हैं, लोकाकाश के बाहर कोई जीव जा ही नहीं सकता। क्यों नहीं जाता ? अरे जाता ही नहीं ऐसा जिनेन्द्र भगवान ने बताया। क्योंकि जीव कहां पाये जायेंगे तो कहते हैं सिर्फ लोकाकाश में। यहां से सीधा जावे तो अलोकाकाश में जायेगा तो वैसा नहीं जा सकता। वह क्या करेगा तो यहां से बीच में त्रस नाली तक आयेगा और वहां से सीधा ऊपर जायेगा। तो यहां से एक मोड़ लिया, ब्रह्म-ब्रह्मोतर के पास फिर बाहर आयेगा वहां दूसरा मोड़ लेगा, वह हमने देखा था न। यहां आया और फिर पीछे गया तो यहां तीसरा मोड़ हो गया। यह तीन मोड़ तो सिर्फ एकेन्द्रिय जीव को ही पॉसिबल है। जो त्रस नाली में से त्रस नाली में जायेंगे, उस जीव को तो दो मोड़ में जहां जाना है वहां जा सकता है। ख्याल में आया ? ऐसे जीवों के भी मारणांतिक समुद्घात होगा। आप यकीन नहीं करोगे मारणांतिक समुद्घात तो एकेन्द्रिय जीवों में भी होता है, ख्याल में आया ?

अब आगे बढ़ते हैं। यहां क्या कह रहे हैं कि **यह मिश्र गुणस्थान यानी तीसरा गुणस्थान है उसमें उस जीव के मारणांतिक समुद्घात नहीं होता।** अब कह रहे हैं **मरण के अंतर्मुहूर्त पूर्व, नवीन पर्याय धारण करने के क्षेत्र पर्यंत..** यानी हम यहां समझते हैं कि यहां से वहां जाना है तो ऐसा ऊपर जाकर वहां उस तरफ जायेगा। तो वहां क्या करेंगे कि **नयी पर्याय धारण करने के क्षेत्र पर्यंत आत्मप्रदेशों के तेजस और कार्माणरूप उत्तरशरीर के साथ।** यह उत्तरशरीर के साथ कहने का कारण यह है कि मूलशरीर तो औदारिकशरीर होगा या वैक्रियिकशरीर होगा। वह तो मूलशरीर और तेजसशरीर और कार्माणशरीर को उत्तरशरीर यानी ॲडिशनल शरीर कहते हैं। उसके साथ यानी केवल आत्मा के प्रदेश बाहर निकलते हैं, ऐसा नहीं तो साथ में उसके कर्म भी जाते हैं और उसके साथ तेजसशरीर भी जाता है।

अब देखो आत्मा के प्रदेश जो हैं न वे हमेशा अखंड होते हैं। उनमें कभी खंड

नहीं होते हैं, कहीं उसके दो टुकड़े नहीं होते हैं। मान लो यहां से ऐसे वे आत्मप्रदेश वहां तक प्रसरनेवाले हैं, तो बीच में एकदम अखंडता होती है, यहां से आत्मा के प्रदेश ऐसे जाकर वहां तक फैले रहते हैं। वहां के जो आत्मा के प्रदेश हैं और यहां के जो प्रदेश हैं उन दोनों में कंटिन्यूइटि है। प्रदेश टूटते नहीं, उनके टुकड़े नहीं होते हैं। हां तो क्या कह रहे हैं कि **आत्मप्रदेशों के तेजस और कार्माणरूप उत्तरशरीर के साथ बाहर निकलने को मारणांतिक समुद्घात कहते हैं।** यानी यह जीव वहां जाता है। एक मत ऐसा है कि मरण के पूर्व वे फैले हुये आत्मप्रदेश वापस मूलशरीर में आते हैं और फिर सब साथ में जाते हैं और एक मत ऐसा है कि जैसा हम मान लेते हैं कि इसतरह से यहां से वहां तक आत्मा के प्रदेश फैल गये हैं और जैसे मरण होता है, तो मूलशरीर में से आत्मप्रदेश निकलकर एक-एक समय में एक-एक मोड़ तक जाते हैं। *श्रोता: इससे क्या फायदा क्या ?* फायदा और नुकसान किस बात का ? हां, यह मारणांतिक समुद्घात क्यों होता है ? मारणांतिक समुद्घात इसमें कोई कारण तो हम नहीं बता पायेंगे क्योंकि ऐसा होता है वह केवली ने जाना है और एक साथ अनेक जीवों का मारणांतिक समुद्घात हो सकता है और होता ही है।

अब यहां दो मत क्या हैं ? कि यहां से वहां तक गये और फिर आत्मप्रदेश वापस मूलशरीर में लौटे और फिर वह वापस जहां जन्म लेना है वहां जायेंगे। एक मत ऐसा है कि यहां मूलशरीर से फैले हुये हैं जो आत्मप्रदेश हैं और जो उत्तरशरीर है वहीं रुकेंगे और यहां के जो बॅलेन्स रहे हुये आत्मप्रदेश हैं वे वहां पर जाकर मिलेंगे। तो हमें उसमें बीच में अपना मंतव्य जाहिर करना नहीं है। जो शास्त्र में कथन दो प्रकार से दिये गये हैं वह जानना है। अभी यहां उन्होंने एक ही मत दिया है। क्या दिया है ? यह थर्ड लाइन से पढ़ते हैं हम- **मारणांतिक समुद्घात करनेवाला जीव नवीन भव के क्षेत्र यानी स्थान को स्पर्श करके वापस मूलशरीर में आ जाता है।** यह एक मत उन्होंने बताया है लेकिन दूसरा मत भी है और वह भी आचार्यों का ही मत है। दोनों आचार्यों में कोई मतभेद नहीं है। वह जो कोई उनकी विवक्षा, अभिप्राय होगा उसका एक्स्प्लनेशन कहीं नहीं मिलता है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि हम कहेंगे- नहीं यह बराबर है, नहीं-नहीं यह बराबर है, हमारी उतनी ताकत नहीं है। अगर आपने गुरुदेवश्री को सुना है, वे तो बार-बार कहते हैं 'केवलीना विरह पड्या छे, आनो निर्णय कोण करे ?' हां, मैं बार-बार गुरुदेवश्री का नाम इसलिये ले रहा हूं कि आप उनसे

वाकिफ हैं, उनसे परिचित हैं और उन्होंने जो-जो बोला है, वह आप से छुपा हुआ नहीं है। यह खास तो देवलाली में, जयपुर में हम बार-बार गुरुदेवश्री को कोट करते हैं। हम उनके अनुयायी हैं न ? तो उनका नाम लेने में किस बात की शर्म ? क्यों साहब ?

देखो बात ऐसी हुयी मैं छोटा था, छोटा इन द सेन्स अभी बुढ़ा, पहले छोटा। २०-२१ साल का हो गया तो मैं पिताजी के पास गया, उनसे कहा पिताजी, बोलो बेटा क्या है ? मुझे एक २५००० रुपये चाहिये। क्यों ? आज से ५० साल पहले की बात है, उस समय में २५००० तो बहुत होते थे। क्यों चाहिये ? मुझे बिझनेस करना है। तू क्या लॉर्ड समझता है खुद को ? मुझे तो आठ बच्चे हैं, तुझे अकेले को २५००० दूंगा तो मैं करूंगा क्या ? मैं पैसा वैसा कुछ नहीं देता तेरे को जो करना है सो कर ! मैं मुंह लटकाकर घर के बाहर खड़ा था। उतने में आप जैसे मेरे पिताजी के मित्र आये। अरे ! लल्ला क्या हो गया तुझे ? ऐसा मुंह लटकाकर क्यों खड़ा है ? मैंने जो कुछ कहानी थी वह बतायी। अरे ! घबड़ाता क्यों है ? तू मेरे पास आ जा। वे मुझे उनके घर ले गये और घर में जाते ही उन्होंने २५००० रुपये मेरे हाथ में थमा दिये। मैंने उस जमाने में २ साल में २५००० के २५ लाख बना दिये। धंधा किया, चोरी का नहीं हो। यह तो कहानी है भैया। तो मैं यह कहता हूं अभी मुझे बहुमान पिताजी का आयेगा या उस चाचा का आयेगा ? अगर आपके साथ ऐसा हुआ होगा तो आपको किसकी महिमा आयेगी ? बोलो-बोलो ! पिताजी की न ? चाचाजी की। क्यों ? उन्होंने यह मार्ग हमें दिखाया कि तू व्यवसाय कर, धंधा कर तो तुझे बरकत होगी, ख्याल में आया ?

हमारे वर्तमान में इतने उपदेशक हैं उन्होंने जो बात हमें नहीं समझायी और वह जो हमारे दिगम्बर धर्म में नहीं था ऐसा कोई मेहमान जो दिगम्बर बना, जो ओरिजिनलि दिगम्बर नहीं था उसने आकर बताया मूर्ख यह देख तेरे शास्त्रों में यह बात लिखी है और तुझे उस बात का पता नहीं है। देख ऐसा है- यह समयसार में यह बात बतायी है, प्रवचनसार में यह बात बतायी है, पंचास्तिकाय में यह बात बतायी है, नियमसार में यह बात बतायी है। तू आत्मा है, अरे उनकी तो आवाज ऐसी गूंजती है कि 'तुं परमात्मा छो अेम पहेला नक्की कर।' हें हें हें - महाराज हम काहे के परमात्मा, हम तो कषायी हैं। अरे ! जो बात बतायी जा रही है उसकी अपेक्षा भी तेरे ध्यान में नहीं आ रही है, तो तू परमात्मा कब बनेगा ? यहां तो कह रहे हैं कि 'तुं परमात्मा छो एम पहेला नक्की कर' यानी स्वभाव से तो तू परमात्मा ही है और पर्याय से पामर है, पशु है, ख्याल

में आया ? हमें उन गुरुदेव की महिमा नहीं आयेगी तो और किसकी आयेगी ? उनको हम नाम से नहीं कहेंगे कि इनके कारण हमें यह मार्ग मिला है तो हमारे जैसा कृतघ्न आदमी इस दुनिया में कोई नहीं मिलेगा, ख्याल में आया? लेकिन यह बात देवलाली, जयपुर और अन्य ठिकाने में हम लेते हैं, बताते हैं, सब जगह नहीं क्योंकि कहीं-कहीं लोगों के पेट में दुखता है भाई ! कानजीस्वामी का नाम लेते ही यहां ॲलर्जी चालू होती है। उसे क्या बोलते हैं, पेट की कौनसी बिमारी होती है वह ? ॲपेन्डिसायटिस चालू हो जाता है फटाफट। क्या करें तेरे भाग्य ही ऐसे हैं कि तुझे सच्चे झूठे की परख नहीं है, ख्याल में आया !

अरे ! जिस जीव ने यह मार्ग हमें बताया है और हम नेमाकाका का नाम लेते हैं तो किसीको कुछ नहीं होता है। हम कैलाशचंदजी बुलंदशहरवालों का नाम लेते हैं तो किसीको कुछ नहीं होता है। अरे ! वह भी तो उनके ही शिष्य थे न ! क्यों ? मालूम नहीं है लोगों को इसलिये वे चुप बैठते हैं और एक जिसका नाम जैसा प्रखरता से चमक रहा है, उसका नाम लेते हैं तो यहां जलन चालू होती है। निन्हव दोष किसके होता है भाई ? निन्हव दोष जानते हैं आप ? *श्रोता: अपने गुरु का नाम छिपाना।* हां जी ! कौन बोल रहे हैं ? बहुत अच्छा ! हां, एक बहन तो हमारी तरफ से है। अपने ही गुरु का नाम छिपाना वह निन्हव दोष है और जिसके निन्हव दोष है उसके सम्यक्त्व नहीं होगा। ख्याल में आया ? उस दोष के सहित हम घूमें और सम्यक्त्व की अपेक्षा करें, यह बात कहां से आयी ? अरे ! तू अगर सच्चे मार्ग पर चल रहा है तो तुझे पर का डर क्यों है ? क्योंकि हम तो जानते हैं कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है, ख्याल में आया ? हम सही मार्ग पर चलेंगे, उस मार्ग पर सीधा चलेंगे तो सही मार्ग पर सही जिसको गोल-लक्ष्य कहते हैं वहां पहुंचेंगे।

अभी यहां जो बात कह रहे हैं कि यहां तो 'केवलीना विरह पड्या' इसका अर्थ ये दो मत हैं उन दो मतों में से कौनसा सच्चा और कौनसा झूठा, इसका निर्णय करनेवाले कोई केवली भगवान आज मौजूद नहीं हैं कि जिनके पास जाकर हम यह नक्की करें कि यह सच्चा है, कि वह सच्चा हैं। दोनों ही आचार्यों के कथन हमारे लिये प्रमाण हैं। हमारी बुद्धि इतनी नहीं कि हम उसमें कन्फर्म कर सके कि यह बात गलत है और यह बात सच है। हमें आग्रह भी नहीं होना चाहिये कि नहीं-नहीं, मरण के बाद वह सारे आत्मप्रदेश वापस आते हैं फिर एकसाथ सारे जाते हैं। हमें कोई निर्णय नहीं

देना चाहिये - ख्याल में आया ?

अब आगे बढ़ते हैं, देखो क्या कहते हैं। **जिन्होंने पर भव की आयु बांध ली हो ऐसे जीवों के ही मारणांतिक समुद्घात हो सकता है। जिन्होंने परभव की आयु नहीं बांधी हो उनके मारणांतिक समुद्घात नहीं होता है। जिसका अगले जन्म का क्षेत्र अर्थात् स्थान ही निश्चित न हो उसे मारणांतिक समुद्घात कैसे होगा ? एकेन्द्रियादिक किसी भी बद्धायुष्क जीव को मारणांतिक समुद्घात हो सकता है।** क्या लिखा ? अभी किसीने बताया था न, एकेन्द्रिय को मारणांतिक समुद्घात नहीं होता है। यहां लिखा है न, क्या लिखा है देखो- एकेन्द्रियादिक; कंडिशन कौनसी है ? किसी भी बद्धायुष्क जीव को यानी जिस जीव ने अगले भव की आयु बांधी है ऐसे जीव को मारणांतिक समुद्घात हो सकता है। उसके लिये कुछ खास विशेषताओं की आवश्यकता नहीं है। यह आपके प्रश्न का उत्तर आया भाईसाहब यानी उसका फायदा क्या है ? फायदा वायदा कुछ नहीं, जो होता है केवली ने जाना है वह उन्होंने बताया है। जो हो रहा है उसको भी जान रहे हैं। जो होगा उसको भी जान रहे हैं, जो हो चुका है उसको भी जान रहे हैं, ख्याल में आया ?

आगे क्या कहते हैं ? **मिश्र श्रद्धावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव जब तक इस तीसरे गुणस्थान में हैं, तब तक उन्हें अगले भव के आयु कर्म का बंध नहीं होता।** देखो-देखो क्या कहते हैं ? यह इतना खोटे परिणामवाला गुणस्थान है कि वहां अगले भव की आयु का बंध भी नहीं होता और मरण भी नहीं होता है। हम तो जानते हैं आयुबंध तो उन परिणामों में होता है- ना अति तीव्र परिणाम हो, ना अति मंद परिणाम हो- मध्यम परिणामों में आयुबंध होता है। यहां कहते हैं कि यह ऐसा गुणस्थान है कि यहां आयुबंध नहीं होता है। अभी कैसे हो, आप समझ लेना अति मंद तो नहीं होंगे तो बाकी कैसे होंगे वह समझ लेना। **क्योंकि मिश्र अवस्थारूप विपरीत भाव,** कैसा भाव ? विपरीत भाव **नये आयु कर्म के बंध के लिये अयोग्य है। यदि तीसरे गुणस्थान में आने के पहले जीव ने मिथ्यात्व परिणाम के साथ आयुबंध किया हो तो मिथ्यात्व में जाकर मरण करता है और यदि तीसरे गुणस्थान में आने के पहले जीव ने सम्यक्त्व परिणाम के साथ आयुबंध किया हो तो वह जीव सम्यक्त्व में जाकर मरण करता है।**

देखो, यहां यह बात बतायी है इसमें थोड़ासा हम और कुछ समझने की कोशिश करेंगे। देखो यहां तो मरण की अपेक्षा से ही बात की है। अभी जिसका मरण अभी बहुत दूर है ऐसा कोई सम्यग्दृष्टि जीव; तो उसके यह जो दर्शनमोहनीय कर्म है उसके कौनसी प्रकृति का उदय चालू है ? हां साहब बोलो ? *श्रोता: सम्यक् प्रकृति।* सम्यक् प्रकृति का और बाकी दो जो हैं, कौनसी ? सम्यग्मिथ्यात्व और मिथ्यात्व, इन दोनों का अप्रशस्त-सदवस्थारूप उपशम चल रहा है। वैसी अवस्था में यह हो सकता है कि सम्यक् प्रकृति का उदय न होते हुये सम्यग्मिथ्यात्व का उदय आ जाये तो वह जीव तीसरे गुणस्थान में आता है। जैसे हमने वहां देखा था कि मिथ्यादृष्टि जीव का भी मिथ्यात्व का उदय चल रहा है वह ना होते हुये सम्यग्मिथ्यात्व का उदय हो जाये तो वह तीसरे गुणस्थान में आता है।

यह मरण की अपेक्षा से यानी जिसका मरण नजदीक आया है, ऐसा सम्यग्दृष्टि जीव जिसने आयुबंध किया है वह तीसरे गुणस्थान में आयेगा और तुरंत वापस चौथे में जायेगा और वहां उसका मरण होगा। लेकिन हर बार मरण की अपेक्षा लगे ही ऐसा कुछ नहीं क्योंकि कौनसे दर्शनमोहनीय कर्म का उदय कब आयेगा उसके अनुसार उसका गुणस्थान पलटेगा। तो यहां जो बता रहे हैं यह सिर्फ मरण की अपेक्षा से है इसलिये फिर से पढ़ता हूं। देख लेना क्या कहना चाहते हैं। यदि तीसरे गुणस्थान में आने के पहले जीव ने मिथ्यात्व परिणाम के साथ आयुबंध किया हो तो मिथ्यात्व में जाकर मरण करता है। इन्होंने तो केवल मरण की अपेक्षा से ही कथन किया है लेकिन अभी जिसका मरण बहुत दूर है, उस सम्यग्दृष्टि है जीव के तो सम्यक् प्रकृति का उदय है। उसके यदि सम्यग्मिथ्यात्व का उदय आ जाये तो वह जीव तीसरे में जायेगा और वापस सम्यक् प्रकृति का उदय आयेगा तो वह चौथे गुणस्थान में चला जायेगा, परंतु मिथ्यात्व का उदय आयेगा तो पहले गुणस्थान में जायेगा। ख्याल में आया ? वैसे ही यहां कह रहे हैं तीसरे गुणस्थान में आने के पहले जीव ने सम्यक्त्व परिणाम के साथ आयुबंध किया हो तो वह जीव सम्यक्त्व में जाकर मरण करता है। यह मरण की अपेक्षा से तो बराबर है, कुछ गलत नहीं है, लेकिन यह भी बात हो सकती है।

पांचवां पॉइंट- **अस्थिर श्रद्धावान सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव, मुनि जीवन के योग्य संयम को अथवा व्रती श्रावक के योग्य संयमासंयम परिणाम को प्राप्त नहीं कर सकता।** यानी जो तीसरे गुणस्थानवर्ती जीव है उसको ऐसे परिणाम नहीं होंगे कि

जिससे उसे पांचवां गुणस्थान हो या सातवें गुणस्थान की प्राप्ति हो क्योंकि उसकी श्रद्धा जो है वह बिलकुल दृढ़ नहीं है, डामाडौल है, अस्थिर है, उसको ऐसे संयमासंयम या संयम के परिणाम भी नहीं होंगे। यहां इन ऑल हम देखते हैं कि तीसरे गुणस्थानवर्ती जीवों के परिणाम बिलकुल अच्छे नहीं हैं। छठा पॉइंट- **तीर्थंकर नामकर्म की सत्ता जिस जीव को है, वह जीव इस तीसरे गुणस्थान में नहीं आता।** देखो, तीर्थंकर प्रकृतिवाला जीव है, वह मिथ्यात्व में जा सकता है। पहले गुणस्थान में जा सकता है लेकिन तीसरे गुणस्थान में नहीं जाता है। हमने देखा है कि जो दूसरे या तीसरे नरक में जानेवाले तीर्थंकर की सत्तावाले जीव मरण के पूर्व एक अंतर्मुहूर्त मिथ्यात्व में आते हैं, मिथ्यात्व के साथ दूसरे या तीसरे नरक में जायेंगे और वहां जाते ही एक अंतर्मुहूर्त में फिर से दुबारा सम्यक्त्व की प्राप्ति करते हुये तीर्थंकर प्रकृति बांधना चालू करेंगे।

लेकिन यहां क्या कहते हैं ? **तीर्थंकर की सत्तावाले जीव यह तीसरे गुणस्थान में नहीं आते,** लेकिन पहले गुणस्थान में जा सकते हैं। यह पहले गुणस्थान की बात नहीं की है, लेकिन हम जानते हैं कि पहले गुणस्थान में जाता है। **तीर्थंकर प्रकृति की सत्तावाले जीव** यहां लिखा है **एक अंतर्मुहूर्त मात्र के लिये मिथ्यात्व गुणस्थान में तो जा सकते हैं, परंतु तीसरे मिश्र यानी सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में नहीं जाते।** अभी तीसरे गुणस्थान से हम सोचते हैं कि चौथे गुणस्थान में जायेंगे यानी उसकी चर्चा करेंगे।

अभी हमने देखा था, क्या-क्या बातें देखी थी कि जब कोई जीव औपशमिक सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है; मिथ्यात्व गुणस्थान से औपशमिक सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है तो मिनिमम चौथे गुणस्थान में जायेगा, जायेगा और जायेगा और वहां पर वह जो उपशम सम्यक्त्व का काल है वह पूरा करके वह जीव क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी भी होगा।

अब आगे बढ़ते हैं इतने तक तो हमें याद है और हमने वहां चार्ट के माध्यम से देखा था, लेकिन यहां तो लिख भी रखा है, देखो, मैं तो उपशम सम्यक्त्व की अपेक्षा से बात कर रहा था, लेकिन यहां तो वेदक सम्यक्त्व की अपेक्षा से बात की है। तो उसको हम बाद में देखेंगे। अभी हम शास्त्र के माध्यम से आगे बढ़ेंगे। देखो- **चौथे गुणस्थान का नाम अविरतसम्यक्त्व है।** यह अविरतसम्यक्त्व यानी क्या ? कि जिनके व्रत नहीं

है लेकिन उनके सम्यक्त्व है। यानी सम्यग्दृष्टि होते हुये उसको किसी भी प्रकार के व्रत हो, संयम हो या संयमासंयम हो यह बात अनिवार्य है नहीं। क्या कहा ? सम्यक्त्वी है लेकिन विरत नहीं है, वह अविरत है। यह अविरति कितने प्रकार की है इसको हम पहले देखेंगे। बहनों में से कोई कहेगा अविरति कितने प्रकार की होती है ? *श्रोता: १२।* हां, १२। कौन-कौनसी ? पांच इन्द्रिय और ? एक-एक जन बोलो, दो-दो जन मत बोलना। दो-दो का आधे-आधे मार्क्स थोड़े ही दे सकेंगे हम। *श्रोता: पांच इन्द्रिय।* हां, पांच इन्द्रिय। *श्रोता: पांच इन्द्रियों के विषयों में प्रवृत्ति, छह काय और मन।* हां, तो कितने हो गये ? अरे ! यह मन बाद में आया।

देखो उसको ऐसा कहते हैं- प्राणीसंयम और इन्द्रियसंयम जहां नहीं है वह अविरति है। बराबर ! हां प्राणीसंयम में क्या आया कि षट्कायिक जीवों की हिंसा नहीं करना इसको व्रत कहेंगे और जहां हिंसा होती है उसको अविरत कहेंगे। क्या कहा ? प्राणीसंयम; तो यह षट्कायिक जीवों में कौन-कौन आता है ? कविताबहन आप जानती हैं ? षट्कायिक जीव ? बोलो-बोलो ! आपस में कन्सल्ट मत करना। आप जानती हैं बहन छह काय किसको बोलते हैं ? हां बोलो। *श्रोता: पांच स्थावर और त्रस।* हां वह क्या हो गया ? छह काय। तो यह पांच का नाम क्या है ? *श्रोता: स्थावर।* स्थावर किसको कहना ? हां, हां, जरा जोर से बोलना। अच्छा, बहुत अच्छा ! बहन का कहना है कि जे हाले नहीं चालें नहीं हां यह मैं गुजराती बोलता हूं। हां, यही बात मैं जानना चाहता था क्योंकि लोगों को बहुत नींद आ रही थी न ! *श्रोता: स्थावर नामकर्म।* हां, अभी हमारी वासंतीबहन सही बता रही हैं लेकिन तुम बोल रही हो उसमें मज़ा नहीं है। तुम मुझे सुनना तो यह गलती दुबारा नहीं करोगी।

यही मान्यता है बहुतांशी लोगों की, स्थावर यानी कि जो हिल नहीं सकता है, चल नहीं सकता है, एक जगह से दूसरी जगह नहीं जा सकता है और नाम क्या है ? वायुकायिक। तो पंखे के नीचे क्यों बैठे हैं आप ? वह वायु वहां से आप तक आ रहा है न ? तो वह स्थावर है फिर भी घूम रहा है ? और पानी ? क्या जलकायिक, अप्कायिक बोले आप। 'वीर हिमाचल तै निकसी, गुरु-गौतम के मुख-कुण्ड ढरी है' वह गंगा नदी कहां से आ रही है ? एक जगह स्थिर है क्या ? उसमें अप्कायिक जीव है कि नहीं ? तो हमने जो सीखकर रखा है, रटकर रखा है वह बस पोपट के जैसा। नहीं पोपट नहीं जानते हैं आप ? तोता-तोता। देखो, एक दफा ऐसा हुआ जब मैं छोटा था तो बाजार में

गया, तो बाजार में गया पिताजी साथ में थे। वहां देखा तो एक तोता बेचने के लिये रखा था। हां तो उसका मालिक बोलता था कि तू कोई अलौकिक तोता है ? तो बोले - उसमें क्या शक है ? क्या बोले वह तोता ? उसमें क्या शक है। फिर, तू लखपति बनना चाहता है ? उसमें क्या शक है ? उसको कुछ भी पूछो तो उसमें क्या शक है। तो वह मेरे पिताजी के साथ उनके एक मित्र भी थे वह तो उस तोते पर इतने रींझ गये, बोले क्या कीमत है ? बोल। नहीं साहब बेचने का नहीं है। नहीं-नहीं तू बोल। तो बोला ५००० रुपया। चल यह ले ५०००, दे तोता। तोता लेकर घर में आये और सबको बोलने लगे इतना अच्छा तोता है देखो-देखो। उसको कुछ भी पूछे जो दो-तीन प्रश्न उसने बताये थे कि तू अलौकिक है वह तो प्रश्न नहीं पूछे। मैं पैसेवाला हूं न ? चुप ! ऐसा करते-करते फिर वह आखिर में बोले क्या मैं मूर्ख हूं ? तो उसने कहा इसमें क्या शक है। हां ! वैसा अगर हमारी वसंतीबहन कहती है कि स्थावर नामकर्म का उदय है वह स्थावर जीव है और त्रस नामकर्म का उदय है तो वह त्रस जीव है। अभी तो तुम सुनकर बोलोगी लेकिन यह भूल कभी टलनेवाली नहीं है।

पहले में पहले जो स्थावर जीव हैं, कौनसे ? ये जो पांच आपने बताये हैं और एक त्रस जीव। त्रस में कौन-कौनसे आये ? दो इन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक के, इन सबको एक में डाला और ये सारे स्थावर एक-एक अलग-अलग रखें। उसका डेफिनिशन यह नहीं है कि जो हिल नहीं सकते, अरे ! झाड़ भी हिलता है। एक जगह से दूसरी जगह नहीं जाता है यह बात सही है लेकिन अग्नि भी पसरता है कि नहीं ? ऊपर जाता है, डोलता है, उसकी शिखायें ऊपर तक जाती हैं। लेकिन हमने सीख रखा है न कि ऐसा-ऐसा है, बिलकुल नहीं भैया ! यहां तो कर्म की अपेक्षा से उनका वर्णन किया है कि स्थावर नामकर्म का उदय होगा वह स्थावर जीव, ख्याल में आया ?

अभी यहां क्या बात हो रही है ? हमने देखा कि प्राणीसंयम यानी क्या ? यह छहकायिक जीव जिसको षट्कायिक जीव कहते हैं; छहकाय जीव गुजराती में कहते हैं; वह षट्कायिक जीवों की हिंसा से यह जीव बच नहीं सकता और दूसरा क्या है ? यह तो प्राणीसंयम हुआ। दूसरा है इन्द्रियसंयम यानी पांच इन्द्रियां और मन के जो कोई विषय हैं, इन विषयों से यह जीव विरत नहीं होता। इसलिये वह १२ प्रकार की अविरति है यानी जो अविरतसम्यग्दृष्टि जीव है वह पंचेन्द्रियों से दूर नहीं रहता यानी क्या ? उनके विषयों से वह दूर नहीं रह सकता। उसके कारण उसके जो भी हिंसा होती है,

जो कुछ होता हो, वह आरंभ आदि जो कुछ चलता है, वह तो चलेगा। ना मन से वह विरत है, ना पांच इन्द्रियों के विषयों से विरत है। इसतरह से जिसके प्राणीसंयम नहीं है और इन्द्रियसंयम नहीं है, वह असंयत यानी अविरत है। तो वह ६ और यह पहले ६ ऐसे १२ प्रकार के जिनको हम कहते हैं व्रत हैं, वे जिनके नहीं हैं, वे जीव अविरत हैं। बारह प्रकार की अविरति होती है, उनसे संयुक्त यह चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव है। ख्याल में आया ?

तो लोग कहते हैं न कि अविरति है, तो इस प्रकार से अविरति है। अविरतसम्यक्त्व में किसी भी प्रकार के व्रत नहीं होते। व्रत जो है, संयम जो है वह तो छठे-सातवें गुणस्थानवर्ती जीवों के होता है। जो अणुव्रत हैं वे पंचम गुणस्थानवर्ती जीवों के होते हैं। वह बारह जो अविरति हैं उनमें से पंचम गुणस्थानवर्ती जीव के विरति कितनी हैं और अविरति कितनी हैं, वह जब हम पांचवें गुणस्थान में पहुंचेंगे तब उसकी भी बात करेंगे। अभी तो आपने क्या देखा कि यह जो चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव है वह कैसा है ? अविरत है। उसका नाम भी क्या है ? लेकिन इसके साथ-साथ हमने एक बात देखी थी जो हमें बिलकुल इग्नोअर नहीं करनी चाहिये, उसको भूलना नहीं चाहिये कि जो सम्यग्दृष्टि जीव है, चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव क्यों न हो वह तो अन्याय, अनीति और अभक्ष्य भक्षण से दूर ही रहता है। वह अष्ट मूलगुण का धारक ही होता है।

अष्ट मूलगुण यानी क्या है ? भाई आप जानते हैं अष्ट मूलगुण ? अच्छा कोई बात नहीं। अनीलजी आप जानते हैं ? हां बहुत अच्छा बोलो, बोलो जोर से बोलना भैया। फिर से, फिर से। *श्रोता: पांच उदम्बर फल का त्याग और तीन मकार का त्याग।* पांच उदम्बर फल का त्याग और तीन मकार का त्याग। यह तीन मकार क्या होते हैं जानते हो बेटा तुम ? बहुत अच्छा, नहीं जानते हो, अच्छा हो गया, तुम आ गये। यह तीन मकार क्या होते हैं बेन आप बोलो ! मद्य, मांस और मधु। शहद-हनी उसको मधु कहते हैं। यानी क्या है ? यह मद्य जो है, यह सड़ा गला हुआ होता है उसमें अनेक जीवों की हिंसा होती है। मांस में तो हर समय निगोद जीवों की उत्पत्ति होती है और मधु-मधु यानी हनी यानी शहद यह कैसा बनता है यह तो आप जानते ही होंगे। कैसा बनता है ? अहिंसक, अहिंसक मध भी मिलता है न ? तो मैं आपसे पूछता हूं उसमें कुछ हिंसा होती होगी कि नहीं ? देखो-देखो आप आये तो आपको एक स्टोरी सुनाने की हमें भी ख्वाहिश हुयी है।

हमने बिलकुल शुद्ध-शुद्ध आटा, शुद्ध घी और शुद्ध सब कुछ लेते हुये वह क्या बोलते हैं ? लापसी बनायी, हलवा बनाया। हां और इतना शुद्ध था, शुद्ध घी था, सारा आटा-वाटा सब कुछ जो कुछ होता है वह शुद्ध था और वह किसीने खा लिया। क्या किया ? खा लिया। इतना अच्छा लगा इतना भरपेट खाया कि थोड़े ही टाइम में उसको व्हॉमिट हो गया। व्हॉमिट समझते हैं ? मैं वमन नहीं बोला इसलिये कि तुम इंग्लिस्तानी हो न, यह मैं समझ गया। व्हॉमिट हुआ, अरे ! इतना शुद्ध था तो वह व्हॉमिट किया हुआ दुबारा खायेगा या नहीं ? क्यों ? अरे अपने मुंह से निकला हुआ है भाई ? हां, वह हम बिलकुल ॲक्सेप्ट नहीं करते हैं और जो ये मधुमक्खियां होती हैं न हां, जब वे जाती हैं शहद इकट्ठा करने को तो हाथ में एक हां क्या बोलते हैं आप लोग ? इंग्लिश-इंग्लिश में क्या बोलते ? हां बकेट, हाथ में बकेट लेकर जाती होंगी कि नहीं ? वे मधु कैसे निकालती हैं ? वह जो फूल होगा उसमें अपने मुंह में जो सूंड होती है वह उसके अंदर डाले और उससे वह सक् करे यानी खींचकर मुंह में रखे और यहां आकर के डाले और वह सब जमा करे और वह हम बड़े चाव से खाये वह चलेगा ? क्यों ?

यह तो छोड़ो वह जो मधुछत्ता होता है उसमें ही वे मधुमक्खियां रहती हैं, सोती हैं। आप कौनसे गांव में रहते हैं ? भोपाल में, आपके घर में लॅट्रिन बाथरूम तो अलग है ? हां, तो उन मधुमक्खियां के लॅट्रिन बाथरूम कहां होते होंगे ? अलग होते होंगे या वहीं पर मधु छत्ते में हैं ? हां, वहीं खाना वहीं... और वही शहद हम बड़े चाव से खाते हैं और ऊपर से बोलते यह तो अहिंसक मध है ! अहिंसक शहद अरे ! अहिंसक काहे का जो थूका हुआ है वह वापस लेगा क्या तू ? देखो, हमें इस बात का पता ही नहीं है और हम तो समझते हैं कि हमने... अरे ! आजकल तो ऐसा फॅशन निकला है भाईसाहब कि अहिंसक अंडे भी मिलने लगे हैं, बोलो क्या करें ! उसके ऊपर छापकर आता है क्या ? यह अहिंसक है कि हिंसक है ? कहने का मतलब यह है कि ये पांच उदम्बर फल और यह जो तीन मकार इनका जिनके त्याग है वे अष्ट मूलगुण के धारक हैं और जिनके परिणाम ऐसे कोमल हैं कि जो ऐसा मानते हैं, चाहते हैं कि मेरे कारण अन्य जीवों की हिंसा न हो। ऐसे ही कोमल परिणामों के जीवों को 'मैं कौन हूं' इस बात की सोच आयेगी, ख्याल में आया ?

मैं कौन हूं आया कहां से और मेरा रूप क्या ? ऐसा कौन कहे कि जिसको अपने आत्मा को समझने की धगस लगी हुयी है। वह जानना चाहता है कि मैं कौन हूं,

और जो ऐसे क्रूर परिणामी है, मांस खाता है, शराब पीकर बेहोश हो जाता है, वह गटर में सोया है कि बेड पर सोया है उसे पता ही नहीं लगता है। गटर में गिर गया हो और जाते-जाते कुत्ता बाजू में आया हो तो कुत्ता पत्थर को देखकर सूंघकर, क्या करता है ? वैसा वह कर दे और इसका मुंह खुला और वाह-वाह ! क्या कोकाकोला मेरे मुंह में गया। हां, क्यों ? हमें इस बात का पता ही नहीं लग रहा है कि हम क्या कर रहे हैं ? यह सड़ी गली हुयी चीज हम प्राशन करते हैं तो हमें पता ही नहीं कि मैं आदमी हूं, इंसान हूं या गधा हूं। तो वह आत्मा के बारे में क्या सोचेगा ? यह केवल ऐसा नहीं है कि जैनिझम में तो यह छोड़ो, वह छोड़ो तो जैन। अरे ! जैन क्यों है ? यह छोड़ना क्यों है ? वह अगर हमें पता ही नहीं है तो हम से छूटेगा कभी ? जब इस बात का हमें पता लगेगा ओहो यह इतनी गंदी बात है, इसमें इतने जीवों की हिंसा होती है, तब वह छूटने में देर नहीं लगेगी।

देखो, अनिलभाई हम जूते आदि जो हैं वह चमड़े के क्यों नहीं पहनते हैं ? चमड़े के जो क्या बोलते तुम- पर्स, चमड़े के बेल्टस्, चमड़े के जूते-चप्पल। आजकल तो चमड़े का कोट भी आता है और क्या-क्या नहीं आता है, हां ? और क्या कहता है वह शमाइश लेदर के हैं। अरे ! वाह रे वाह। लेदर है न, देखो आप जरा सोचना अगर किसीके पास अपने यहां तो किसीके पास होने नहीं चाहिये। लेकिन मिल जाये कोई तो उसको जरा पानी में रखना और उसको बाहर रख देना, दो-चार दिन के बाद देखना। आपने देखा होगा कि जूते जो चमड़े के हैं वह हम बारिश में भी नहीं पहन सकते क्योंकि अभी गीले हैं। तो दो-चार दिन में उसके ऊपर सफेद-सफेद फंगस चढ़ जाता है। वह तो त्रस जीव है। अरे ! उस चमड़े में तो यह जिंदा चमड़ा हो या मरा हुआ चमड़ा हो, उसमें तो निरंतर निगोदिया जीवों की उत्पत्ति होती है, ख्याल में आया ? लोग उसको पहनते हैं और पहनकर मंदिरजी में जाते हैं। तो हम क्या कर रहे हैं यह तो सोचो। यहां तो लिखा है चमड़े की वस्तुयें लेकर अंदर नहीं आना। यह क्या है ? कुछ भी करते हैं। मनमानी करते हैं अपनी क्योंकि उनकी संस्था है न। अरे ! नहीं भैया यह उनकी संस्था नहीं है, यह जैनिझम का तो मूल सिद्धान्त है कि तेरे से.., यहां लिखते हैं 'अहिंसा परमो धर्म' और यहां सारे हिंसा की ही बातें चल रही है। हमें पता ही नहीं कि हम हिंसा कर रहे हैं।

इसलिये बात तो यह हो रही है कि यहां अष्ट मूलगुण का धारक जो होगा

उसके परिणाम भी कोमल होंगे। उसके ऐसे अंतरंग में परिणाम हैं कि मेरे कारण जीवों की हिंसा ना हो, ना उनके हिंसा में मेरी अनुमोदना हो। कृत, कारित, वा अनुमोदना तीनों प्रकार से कुछ भी हिंसा नहीं हो। हम एक गांव गये थे वहां महावीर वाइन स्टोअर देखा हमने। बोलो ! अब इससे और क्या गया-बीता होगा और वह जैनी था इसलिये तो महावीर का नाम लिखा। लोगों के भेजे का पता ही नहीं लगता है दिगम्बर वस्त्रालय ! यहां तो भैया तुझे सम्यग्दर्शन प्राप्त करना है न तो कम से कम सम्यग्दर्शन किसको प्राप्त हो सकता है, उसकी बात तो समझ, सोच तो सही ! हां, यह केवल हंसी मजाक की बात नहीं है, हो। लेकिन क्या करें ! मैं गलती से डॉक्टर का पति हो गया हूं। तो इसलिये वह जैसे शुगर कोटेड पिल्स देती है; शुगर कोटेड पिल्स समझतें हैं न आप ? हां, कड़वी दवा होती है क्विनाइन की उसके ऊपर मीठा-मीठा कुछ चढ़ाकर बच्चों के मुंह में हम डाल देते हैं। वैसे यहां असलियत बात बताने के लिये हंसी मजाक में मैं आपको शुगर कोटेड पिल्स दे रहा हूं। लेकिन वह भाव आप समझना कि क्या यह भूल मेरे से भी हो रही है या नहीं। होती हो तो रोक देना और नहीं होती हो तो अपनी पीठ थपथपाना कि मैं तो सही रास्ते में चल रहा हूं। दूसरे से मत थपथपाओ नहीं तो मान कषाय चढ़ जायेगा।

अब देखो आगे बढ़ते हैं। *श्रोता: पांच उदम्बर के नाम बताओ।* हां बतायेंगे। बता दो साहब बड़ का फल, पीपल का फल हां, कठूंबर हां, अभी बाकी का बता दूं आपको ऊंबर और पाकर। देखो क्या कहते हैं, पेज नंबर है १०७। **यदि जीव औपशमिक सम्यग्दृष्टि हो तो दर्शनमोहनीय की तीन, दो या एक कर्म प्रकृति का और चारित्रमोहनीय की अनंतानुबंधी कषाय चतुष्क कर्म प्रकृति का - इसतरह सात, छह अथवा पांच प्रकृतियों का उपशम रहता है।** यह चौथे गुणस्थान की बात है न। तो वहां उन्होंने क्या बताया ? जो औपशमिक सम्यग्दृष्टि होगा तो- अभी हम अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि की बात करेंगे तो वहां पांच प्रकृतियों का उपशम करेगा। अभी यह छह कौन करें ? सात कौन करें ? इसकी बात तो हमने देखी थी दोपहर में।

अब कहते हैं- **यदि जीव क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि हो तो मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व तथा अनंतानुबंधी कषाय चतुष्क इसतरह छह कर्म प्रकृतियों का उदयाभावी क्षय और सदवस्थारूप उपशम रहता है। और देशघाति सम्यक् प्रकृति, दर्शनमोहनीय कर्म का उदय रहता है।** यह बात जो है वह हम कल सुबह

देखेंगे जब आप लोग फ्रेश होंगे, क्योंकि क्या होगा अभी मैं समझाने जाऊंगा तो नौ बजे के बाद सबको जगाना पड़ेगा हमारे माणिकलालजी को। क्योंकि यह क्षयोपशम की बात है न, बहुत ही अच्छी बात है और वह एक बार ध्यान में आ जाये तो यहां हमेशा क्षयोपशम, क्षयोपशम कर रहे हैं तो कर्म की अपेक्षा से क्षयोपशम क्या होता है उसको हम जरूर समझेंगे।

यहां इतना ही कहते हैं कि यहां छह कर्म प्रकृतियों का उदयाभावी क्षय और सदवस्थारूप उपशम है और वहां उदय किसका है ? तो कहते हैं देशघाति प्रकृति, कौनसी ? यह सम्यक् प्रकृति है न अभी हमने दर्शनमोहनीय के तीन भेद देखे। उसमें से यह देशघाति कर्म प्रकृति का उदय रहता है। **इतना विशेष है कि अनंतानुबंधी कषाय चतुष्क, मिथ्यात्व, एवं सम्यग्मिथ्यात्व ये प्रकृतियां उदयावली में तो रहती हैं।** उदयावली यानी जो उदय में आनेवाले जितने एक आवली में समय हैं उतने निषेक जो होते हैं, उसको **उदयावली** कहेंगे। उदयावली में तो रहती हैं, **परंतु उदय से एक समय पूर्व थिउक्क संक्रमण द्वारा यथायोग्य अन्य प्रकृतियों में संक्रमित होकर उदय में आती हैं।** थिउक्क संक्रमण यानी क्या होता है ? एक समय पूर्व में तो वह ओरिजिनल अवस्था में होती है लेकिन जिस समय उदय में आनेवाली है उस समय वह अन्य प्रकृतिरूप होकर उदय में आती है उसको थिउक्क संक्रमण कहेंगे। यह भी बात हम कल बतायेंगे। अब यहां से हम पढ़ लेते हैं। **यदि जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो तो मिथ्यात्वादि तीन दर्शनमोहनीय और अनंतानुबंधी कषाय चतुष्क का क्षय रहता है।** देखो इनको यह बताना है कि जो चौथे गुणस्थानवर्ती जीव है, उसके तीन प्रकार के सम्यक्त्व हो सकते हैं। उन तीन प्रकार के सम्यक्त्व के उन्होंने नाम बताये हैं। अब वह कैसे और किसको कहेंगे उसका भी उन्होंने विवेचन किया है। लेकिन उसे हम सहीरूप से कल ही समझेंगे।

अभी तो मैं यह पूछना चाहता हूं कि ये तीन प्रकार के सम्यक्त्व जो हैं उनके नाम जो बताये हैं, वे नाम कौन बताना चाहेगा ? दिलीपभाई आपके बगल में जो हमारे भाईसाहब बैठे हैं, उनसे पूछे - तीन प्रकार के सम्यक्त्व के नाम पूछ रहा हूं मैं आपसे। *श्रोता: मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व। नहीं शांति रखो, शांति रखो उनको बोलने दो। भाई, सबको अपना अपना जो कोई विचार है बताना चाहिये। देखो मैंने क्या पूछा, फिर से पूछता हूं। तीन प्रकार के सम्यक्त्व कौन-कौनसे अभी हमने पढ़े या आपको

कौनसे तीन के नाम मालूम हैं ? हां जोर से बोलना भाई। फिर से, फिर से बोलना। *श्रोता: औपशमिक सम्यक्त्व।* औपशमिक सम्यक्त्व। दूसरा ? *श्रोता: क्षायोपशमिक सम्यक्त्व।* क्षायोपशमिक सम्यक्त्व और तीसरा ?अरे ! पहले के जमाने में नाटक में पांच-छह पात्र होते थे, हां, जिसको हम ॲक्टर-ॲक्ट्रेस कहते हैं और पीछे में एकाध दो प्रॉम्प्टर होते थे। हां पर्दे के पीछे से बताये, ॲक्टर संवाद भूल गया तो वे बताये। अभी यहां तो एक ही ॲक्टर है और पच्चीस तो प्रॉम्प्टर हैं, ऐसा मत करो।

देखो मैं यह सोचता हूं, अभी मैं हमेशा की बात आपको कैसे बताऊं आप भी नाराज होंगे, लेकिन बताना ही पड़ रहा है। अभी हमने एक ट्रॅव्हल एजन्सी खोली है। हां उसमें केवल ६०८ ही सीट्स अव्हेलेबल हैं और हम कहां जा रहे हैं ? अच्छा ! मुक्त होनेवाले हैं तो जिनको-जिनको आना है उन सबको ईक्कलि साथ में रहना है। उधर प्रॉम्प्टिंग करके कोई जगह मिलनेवाली नहीं है। हमें वह बात अंदर से आयेगी तो हमारी टूर में आप दाखिल हो जाओगे। हम तो ६०८ जीव यहां के ही ले जाना चाहते हैं। इसलिये आप तैयारी रखो, ख्याल में आया ? भाई दूसरा बोले और हम बोले उसमें बहुत अंतर है। अभी आपके सामने हमने तीनों को पढ़ा था और हम बार-बार उसकी चर्चा भी करते हैं। फिर से अभी और दोहरायेंगे। अगर आपको ख्याल में से निकल गया हो। कोई भी जो अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव होता है वह नियम से औपशमिक सम्यक्त्व की ही प्राप्ति करता है - पहली बात। तो कौनसे सम्यक्त्व की बात की ? हां, औपशमिक सम्यक्त्व की।

अब जो औपशमिक सम्यक्त्वी है वह नियम से क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी होता है। वह डायरेक्ट क्षायिक सम्यक्त्वी नहीं हो सकता। कोई भी अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव हो वह पहले में पहले क्षायोपशमिक अथवा क्षायिक सम्यक्त्व को प्राप्त करे ऐसा भी नहीं। कोई जीव क्षायिक सम्यक्त्व को पहले में पहले प्राप्त करे ऐसा भी नहीं और कोई जीव डायरेक्ट उपशम सम्यक्त्व में से क्षायिक सम्यक्त्वी हो जाये ऐसा भी नहीं है। उसका क्रम कैसा है ? तो कहते हैं पहले में पहले जो सम्यक्त्व की प्राप्ति करे ऐसा जो अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव है वह तो... अभी आप सब लोग बोलना क्या उत्तर है ? *श्रोता: औपशमिक सम्यक्त्व।* क्षायोपशमिक सम्यक्त्व न ? *श्रोता: औपशमिक सम्यक्त्व।* औपशमिक सम्यक्त्व ! अभी देखो पुरुषों में से कैसी जोरदार आवाज आ रही है, हां, मज़ा आ रहा है। तो वह औपशमिक सम्यक्त्व की ही प्राप्ति करेगा और उसके बाद

कौनसा सम्यक्त्व होगा भाई ? *श्रोता: क्षायोपशमिक सम्यक्त्व।* क्षायोपशमिक। कोई बात नहीं आप इतना हिम्मत करके एक घंटा बैठते हो बहुत अच्छी बात है। युवर फ्युचर इस व्हेरी ब्राइट ओके ! हां, तो आप क्या बोलते हैं कि जो क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव है वही जीव क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति करेगा।

जो सम्यग्दर्शन जिसको हम सम्यक्त्व कहेंगे - उसके तीन भेद अभी हमने देखे। कितनी बार देखे ? कम से कम तीन-चार बार और आज तक १०-१५ बार। कौन बताना चाहेंगे सम्यक्त्व के तीन भेद ? हां, बोलो सुरेशभाई। *श्रोता: औपशमिक।* हां, पूरा बोलना, पूरा बोलना। औपशमिक सम्यक्त्व, *श्रोता: क्षायोपशमिक सम्यक्त्व।* क्षायोपशमिक सम्यक्त्व और *श्रोता: क्षायिक सम्यक्त्व।* क्षायिक सम्यक्त्व। अभी यह तीनों ही सम्यक्त्व चौथे गुणस्थान में प्राप्त हो सकते हैं, ख्याल में आया ? आपको कोई मालूम है चौथे गुणस्थानवर्ती जीव क्षायिक सम्यक्त्वी ? आपके पहचान का कोई है ? हां, बहन आपके ? अरे, ठहरो-ठहरो, हां किसीको पता है ? हां, द्वीपायन मुनि किसीने बताया। *श्रोता: श्रेणिक राजा।* श्रेणिक राजा ! अभी राजा नहीं है, वह नारकी है। वह भी क्या था जब श्रेणिक राजा अवस्था में वह जीव था तो वह क्षायिक सम्यक्त्वी था और वह क्षायिक सम्यक्त्वी था इसलिये पहले नरक में सम्यक्त्व के साथ पहुंचा है और उसके अगले भव में वे यहां भरतभूमि के उत्सर्पिणी काल के पहले तीर्थंकर बननेवाले हैं।

अब हम क्या देखते हैं, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व की चौथे गुणस्थान में भी प्राप्ति होती है, ख्याल में आया ? जिस मनुष्य ने नरक की आयु बांधी हो या तिर्यंच की आयु बांधी हो या मनुष्य की आयु बांधी हो उसको सम्यक्त्व तो हो सकता है लेकिन उस जीव को मुनिव्रत लेने के विचार भी नहीं आते और उसको तो पंचम गुणस्थानवर्ती के योग्य प्रतिमा धारण करने के परिणाम भी नहीं आते। ऐसा सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। अभी इसके आगे चतुर्थ गुणस्थानवर्ती की जो बातें हैं, उसकी चर्चा हम कल करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

१३. अविरतसम्यक्त्व

गये दो दिन से हम गुणस्थान के बारे में जानकारी ले रहे हैं और हम काफी मुश्किल से मिथ्यात्व से निकलकर आज अविरतसम्यक्त्व तक पहुंच गये हैं। यह तो अभ्यास में हम आगे बढ़ रहे हैं। वास्तव में तो हम ओरिजिनलि पहले गुणस्थान से कम से कम चौथे गुणस्थान तक तो जाना ही चाहिये। अभी कल जो बात निकली थी फिर से दोहराते हैं क्योंकि अभी सुबह का टाइम है, हम सब फ्रेश हैं। यह विषय थोड़ासा आसान है, कठिन नहीं है। जो आसान विषय है, उसीको आज हम देखने जा रहे हैं।

देखो पृष्ठ क्रमांक १०७, यहां कह रहे हैं **पहले से चौथे गुणस्थान में दर्शनमोहनीय कर्म का क्या निमित्तपना बनता है**, उसके बारे में स्पष्टीकरण दे रहे हैं। यहां कहते हैं, एक नंबर का पॉइंट कल हमने देखा था। तो वहां कह रहे हैं, **यदि जीव औपशमिक सम्यग्दृष्टि हो तो दर्शनमोहनीय की तीन, दो, या एक कर्म प्रकृति का और चारित्रमोहनीय की अनंतानुबंधी कषाय चतुष्क कर्म प्रकृति का- इसतरह सात, छह अथवा पांच प्रकृतियों का उपशम करता है।** अभी देखो, यह क्या बात बताना चाहते हैं; यह बात तो अपनी हो गयी है। यहां जीव जब औपशमिक सम्यक्त्व की प्राप्ति करता है, तब क्या होता है ? तो कहते हैं, पहले बताया था कि दर्शनमोहनीय कर्म में क्या-क्या होता है। पहले चार गुणस्थान दर्शनमोहनीय की अपेक्षा से, उसके उदय या अनुदय की अपेक्षा से हैं। अभी पहले गुणस्थान में दर्शनमोहनीय के मिथ्यात्व का उदय है। दूसरे गुणस्थान में दर्शनमोहनीय का उदय या उपशम कुछ भी नहीं है, अनंतानुबंधी का उदय है। तीसरे गुणस्थान में सम्यग्मिथ्यात्व का उदय है। अब चौथे में क्या होता है यह बात हम जानना चाहते हैं।

वहां कह रहे हैं कि यह उपशम जो कर रहे हैं तो वह उपशम इन टोटल सात प्रकृतियों का है। कब ? सम्यक्त्व होने के बाद तीन प्रकृतियां होती हैं न। लेकिन उसके पहले जो कोई अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव है, उसके तो एक मिथ्यात्व ही मौजूद है सत्ता में। तो वह जीव पांच प्रकृतियों का उपशम करेगा। जो सादि मिथ्यादृष्टि जीव है, जिसकी सत्ता में दर्शनमोहनीय के तीन टुकड़े हुये थे, उनमें से सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति की उद्वेलना होकर दुबारा मिथ्यात्व ही कायम रहेगा। बाकी दोनों तो खतम हो जायेंगी। यह कल हमने चार्ट में देखा था, अभी आज वह चार्ट नहीं है। तब

उसके फिर से दुबारा अनादि मिथ्यादृष्टि जैसे एक मिथ्यात्व ही रहेगा सत्ता में। उसके मिथ्यात्व का उदय भी है और बंध भी है तो वह भी अनादि मिथ्यादृष्टि जैसा उसके भी पांच प्रकृतियां उसकी सत्ता में हैं। ऐसे जीव भी पांच प्रकृतियों का उपशम करेगा। अब बाद में ऐसी बात बता रहे हैं कि जो एक बार सम्यक्त्व प्राप्त कर चुका है, ऐसा जीव दुबारा मिथ्यादृष्टि हो जाता है तो उसकी सत्ता में ये तीन टुकड़े जो बने थे न, कौन-कौनसे बने थे ? मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति, उनमें से मिथ्यात्व का तो नया बंध होता है और अन्य दो की उद्वेलना शुरू होती है। उसका वेदकयोग्य काल खतम होने के बाद अभी उसकी सत्ता में वे दो प्रकृतियां थोड़ीसी बाकी हैं। वह अगर सम्यक्त्व प्राप्त करेगा तो उसको उपशम सम्यक्त्व होगा और उस समय वह सात प्रकृतियों का उपशम करेगा।

अब हमने यही देखा था कि ऐसे समय में क्या होगा ? कोई जीव उद्वेलना करते-करते पहले सम्यक् प्रकृति को मिथ्यात्वरूप से उद्वेलित कर देता है तो उसके वह भी सत्ता में नहीं रही। ऐसा जीव जब सम्यक्त्व की प्राप्ति करेगा, तो सम्यग्मिथ्यात्व का आखिर का थोड़ासा पोर्शन बाकी था न, तो उसके छह प्रकृतियों का उपशम होगा। ख्याल में आया ? जिस भाईसाहब ने हमें प्रश्न पूछा था वह अभी है नहीं। ठीक है, आप लोग समझ जाना उसमें क्या है। यानी कई लोगों का ऐसा कहना है कि छह प्रकृति कैसे होती हैं ? तो छह इसतरह से होती हैं। यह हम अभी तक दो-तीन बार देख चुके हैं। आज जो बात है वह नंबर दो का पॉइंट है। क्या कहते हैं ? देखो, नंबर दो का पॉइंट है- **यदि जीव क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि हो, तो मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति इन दर्शनमोहनीय के तीन** प्रकृतियों का क्षयोपशम **अर्थात् सर्वघाति मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतियों का उदयाभावी क्षय और सदवस्थारूप उपशम रहता है और देशघाति सम्यक् प्रकृति दर्शनमोहनीय कर्म का उदय रहता है।** अनंतानुबंधी चतुष्क तो सर्वघाति होने से उसका क्षयोपशम नहीं होता, उसका सदवस्थारूप उपशम यानी अप्रशस्त उपशम होता है।

अभी इसमें क्या गड़बड़ी हो गयी है ? कम से कम चार-पांच शब्द तो हमने कभी सुने ही नहीं हैं और सुने हैं तो उसका अर्थ तक हमें पता नहीं है। तो वे कौन-कौनसे हैं ? तो पहले कहते हैं कि क्षयोपशम। तो कर्मों का क्षयोपशम होता है यानी क्या होता है ? और क्या लिखा ? अर्थात् यानी उसीका अर्थ वह बता रहे हैं- सर्वघाति

स्पर्धक; अब यह सर्वघाति स्पर्धक क्या है ? वह जब तक हम नहीं जानेंगे तो क्षयोपशम क्या है यह जानना मुश्किल होगा। फिर कहते हैं उदयाभावी क्षय। एक भाईसाहब का, किन्हीं का प्रश्न था- उदयाभावी क्षय क्या होता है ? तो वह भी बात आज आयेगी। फिर और आगे कहते हैं सदवस्थारूप उपशम। ये जो शब्द हैं न भाई वह जब तक हम नहीं समझेंगे; और उसके आगे कहते हैं देशघाति प्रकृति जो है यानी हमें यह कुछ नये-नये पारिभाषिक शब्द हैं उनको जानना अनिवार्य है। अगर हमको क्षयोपशम क्या है यह बात समझनी है तो इन बातों को हमें देखना ही पड़ेगा।

तो हम थोड़ेसे यह प्रश्नोत्तरी है न, वहां झांकते हैं। यहां हमें बहुत सारा एक्स्प्लनेशन मिलनेवाला है। देखो, पेज नंबर ३९, क्वेश्चन नंबर ४८। यहां क्या लिखा है ? **क्षयोपशम किसे कहते हैं ?** देखो, अभी हम किसका अभ्यास कर रहे हैं ? गुणस्थान का अभ्यास कर रहे हैं। उसमें विशेषतया कर्म की मुख्यता से ही कथन होगा। वह कर्म की मुख्यता से जो कथन है तो यहां कर्म के बारे में क्षयोपशम; देखो, ज्ञान का भी क्षयोपशम होता है लेकिन हम अभी उसको टच नहीं कर रहे हैं, उसके बारे में हम कुछ नहीं बोल रहे हैं। हम अभी कर्मों के बारे में ही देख रहे हैं। उन्होंने जो पूछा है क्षयोपशम किसे कहते हैं ? तो उसका उत्तर जो है वह आपको मेरे बाद में बोलना है। क्योंकि यह जब हम, देखो भाई हम बेंगलोर में आते हैं न, तो आप लोग कन्नड में बोलते हैं तो हमको समझ में ही नहीं आता है क्या है ? क्योंकि इट इज ए फॉरिन लँग्वेज फॉर अस। हमको समझ में ही नहीं आता है, तो हम दो बार, तीन बार आपके साथ रहेंगे तो हम भी थोड़ा-थोड़ा बोलेंगे। नीरू कोडी ऐसा बोलेंगे। मेरे को मालूम नहीं, क्या होता है उसका अर्थ ? श्रोता: पानी दीजिये। अच्छा चलो, क्या कह रहें हैं ?

देखो, मैं बोलूंगा, आपको कृपया रिपीट करना है। कह रहे हैं **वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय।** *श्रोता: वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय।* देखो, क्या कह रहें हैं ? दो प्रकार के स्पर्धक होते हैं- एक होते हैं सर्वघाति स्पर्धक और एक होते हैं देशघाति स्पर्धक। उसको भी हम देखेंगे। आहिस्ते-आहिस्ते, एक-एक स्टेप बाय स्टेप हम जायेंगे तो बहुत आसान है यह बात। पहले सुनते हैं तो हौआ जैसा लगता है कि ओहो, क्षयोपशम क्या है ? अरे बहुत आसान है भैया, तू हर समय कर रहा है ! स्वयं के परिणामों में और कर्म में ऑटोमॅटिकलि हो रहा है। सिर्फ हमें यहां जानना है और वह कर्मों का क्षयोपशम मैं नहीं कर रहा हूं यह

कन्फर्म करना है। ख्याल में आया ? तो यहां कह रहे हैं, फिर से मैं बोलूंगा- वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय। *श्रोता: वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय।* **भविष्य में उदय में आने योग्य**, *श्रोता: भविष्य में उदय में आने योग्य।* **सर्वघाति स्पर्धकों का सदवस्थारूप उपशम।** *श्रोता:सर्वघाति स्पर्धकों का सदवस्थारूप उपशम।* जरा मैं अभी बोलूंगा आप बोलना मत, देखो यहां क्या बात हो रही है ? किसके बारे में हम सोच रहे हैं ? सर्वघाति स्पर्धकों के बारे में ही सोच रहे हैं। लेकिन उन सर्वघाति स्पर्धकों में भी उन्होंने थोड़ासा फर्क कर दिया है।

पहले जो वाक्य हमने पढ़ा था या पहला जो कुछ स्टेटमेंट किया था, वहां जो सर्वघाति स्पर्धक हैं जिनका उदयाभावी क्षय बताया है, वे वर्तमानकालीन हैं। देखो- देखो फिर से- आप बोलना नहीं। वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय और भविष्य में उदय में आने योग्य कौन है ? वे भी सर्वघाति स्पर्धक हैं। उनका क्या हो रहा है ? सदवस्थारूप उपशम। अभी यहां जो बात बता रहे हैं कि उदयाभावी क्षय क्या है और सदवस्थारूप उपशम क्या है, इसको भी हम देखने जा रहे हैं। लेकिन प्रथम किसके बारे में और कौनसी बात चल रही है, यह तो हम थोड़ा बहुत समझने की कोशिश करेंगे। कह रहे हैं, अभी आपको रिपीट करना है। **वर्तमानकालीन देशघाति स्पर्धकों का उदय।** *श्रोता: वर्तमानकालीन देशघाति स्पर्धकों का उदय।* **इन तीनरूप कर्म की अवस्थाओं को,** *श्रोता: इन तीनरूप कर्म की अवस्थाओं को।* **क्षयोपशम कहते हैं।** *श्रोता: क्षयोपशम कहते हैं।*

देखो, यहां कैसी विचित्र बात है। नाम तो है क्षय और उपशम- तो वहां क्षय की बात जो है वह उदयाभावी क्षय है और उपशम है वह सदवस्थारूप उपशम है। लेकिन एक तीसरा भी कार्य हो रहा है उदय का। वह भी किसका ? वर्तमानकालीन। वह भी वर्तमानकालीन कौन है ? देशघाति स्पर्धक। अभी इनमें क्या डिफरन्स है वह भी हम देखने जायेंगे। लेकिन यहां बातें तो घटित हो रही हैं तीन। यहां तो बता रहे हैं कि तीनरूप कर्म की अवस्थाओं को, ये तीन अलग-अलग अवस्थायें हैं न, इनको मिलकर क्षयोपशम कहते हैं। अभी यह हम जिसके बारे में जानना चाहेंगे, वह हमारे पहले थोड़ी उसकी पहचान तो होनी चाहिये। पहले में पहले कहते हैं कि जो सर्वघाति स्पर्धक हैं। कौनसे ? अभी वर्तमानकालीन उदय में आने योग्य - तो उनका क्या हो गया ? तो बोलते हैं, उदयाभावी क्षय। देखो मैं एक ही वाक्य बोलूंगा, आपको रिपीट

करना है। क्योंकि यह परिभाषा अगर हम याद करते हैं तो आगे की बात समझने में बहुत आसानी होती है।

क्या कहा ? वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय, बोलो। *श्रोता: वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय।* यह उदयाभावी क्षय जो होनेवाला है या हो रहा है, वह किसका हो रहा है ? सुरेशभाई आप बतायेंगे ? *श्रोता: सर्वघाति स्पर्धकों का।* क्या इनका उत्तर पर्याप्त है ? बोलो-बोलो ! *श्रोता: वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का।* वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का। एक-एक शब्द का बहुत गहरा अर्थ है। घबराना नहीं, दो मिनट में याद हो जायेगा। क्या कह रहे हैं ? यह जो वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धक हैं उनका क्या होने जा रहा है बहन ? *श्रोता: उदयाभावी क्षय।* उदयाभावी क्षय। उदयाभावी क्षय किसका हो रहा है साहब ? *श्रोता: वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का।* वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का। कितना आसान है ? देखो-देखो, यहां क्या बात कर रहे हैं ? अभी हमको मालूम नहीं है कि यह स्पर्धक क्या होता है आदि-आदि बातें हम कुछ जानते नहीं हैं। कोई बात नहीं, पहले याद तो करें। यह बता रहे हैं कि वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय। सबको याद हो गया न। हां बोलो बहन ? *श्रोता: वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय।* बहुत सुंदर, देखो कितना फटाफट बोल दिया। वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय। आप बोलेंगी बहन ? बोलो-बोलो ! *श्रोता:वर्तमानकालीन।* सर्वघाति स्पर्धकों का, *श्रोता: सर्वघाति स्पर्धकों का।* उदयाभावी क्षय। कितना आसान हो गया न अभी ?

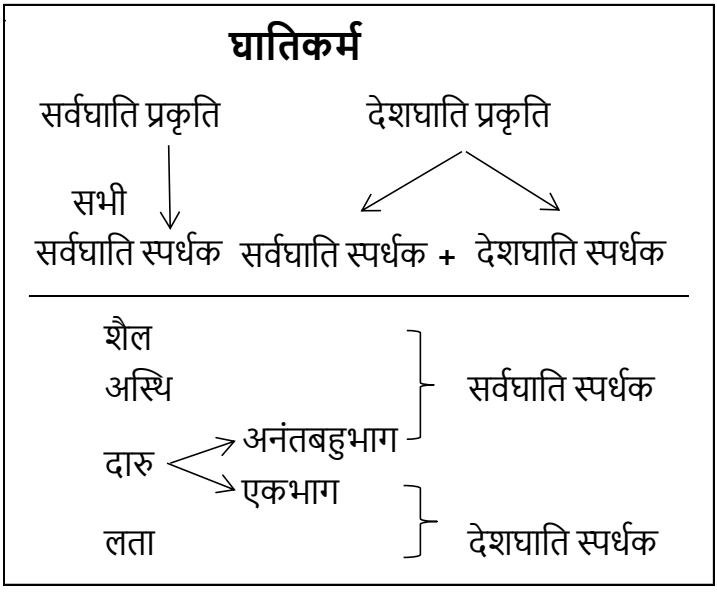
अब आगे जाते हैं। वह तो हम स्पर्धक क्या होते हैं; वर्तमानकालीन स्पर्धक क्या होते हैं; सर्वघाति स्पर्धक क्या होते हैं; देशघाति स्पर्धक क्या होते हैं, उनकी भी जानकारी अवश्य लेंगे ही। अभी यह बात चल रही है कि भविष्य में, अभी इन्होंने जो इतना लंबा-लंबा लिखा है न, हम इतना ही याद करेंगे कि भविष्यकालीन उन्हीं सर्वघाति स्पर्धकों का सदवस्थारूप उपशम क्योंकि अभी कोई नये तो आनेवाले नहीं हैं। जो अभी जिनका उदयाभावी क्षय किया है उन्हीं की बात कर रहे हैं। तो भविष्यकालीन, *श्रोता: भविष्यकालीन।* भविष्यकालीन उन्हीं स्पर्धकों का, *श्रोता: भविष्यकालीन उन्हीं स्पर्धकों का।* सदवस्थारूप उपशम। *श्रोता: सदवस्थारूप उपशम।* अभी हम क्या कर रहे रहे थे ? पहले हम वर्तमानकालीन की बात कर रहे

थे। अभी वैसे ही स्पर्धक भविष्यकाल में उदय में आने योग्य हैं, उनका क्या किया है ? सदवस्थारूप उपशम। सदवस्थारूप उपशम यानी क्या ? वे हैं वहीं रहेंगे, उदीरणा होकर स्वयं के रूप से उदय में नहीं आवे ऐसी व्यवस्था कर दी है जीव ने। जीव के परिणाम ऐसे हुये हैं कि वे स्पर्धक भविष्य में तो हैं; पहले वर्तमानकालीन उनका स्वरूप से उदय का अभाव कर दिया, उदय में नहीं आवे ऐसा कर दिया। अभी वैसे ही स्पर्धक भविष्य में हैं तो उनका भी क्या किया ? सदवस्थारूप उपशम कर दिया। अभी वह भी बतायेंगे। फिर क्या कहते हैं ?

फिर अभी बात तो ऐसी है साहब, हर समय कर्म बांध रहे हैं हम, तो हर समय कर्म का उदय होगा कि नहीं ? तो हां होगा साहब। अभी आपने तो उनको ऊपर भगा दिया और वहीं स्टे कर दिया उनको। स्टे ऑर्डर लाते हैं न आप ! कोर्ट में जाकर झगड़ा करते हैं स्टे ऑर्डर मालूम है आपको ? तो क्या कहा ? उनको तो वहीं का वहीं रुकाया, भाई, उनका तो सदवस्थारूप उपशम किया, वे उदय में नहीं आयेंगे। तो फिर अभी उदय में कौन आयेगा ? वर्तमान में तो कर्म का उदय नहीं होगा तो हम क्या हो जायेंगे ? सिद्ध बन जायेंगे फटाफट, नहीं-नहीं, इतनी जल्दी मत करो। कह रहे हैं वर्तमानकालीन देशघाति स्पर्धकों का उदय। *श्रोता: वर्तमानकालीन देशघाति स्पर्धकों का उदय।* हां जी ? देशघाति स्पर्धक हैं इनका उदय है। अब इन तीनरूप कर्म की जो अवस्थायें हैं उनको क्षयोपशम कहते हैं।

अब ये तीन बातें कौन बताना चाहेगा ? मुझे बहुत अच्छा लगेगा। अच्छा आप बतायेंगे। हां बोलो बहन। *श्रोता: वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय, भविष्यकालीन उन्हीं स्पर्धकों का सदवस्थारूप उपशम और वर्तमानकालीन देशघाति स्पर्धकों का उदय।* बहुत सुंदर, देखो-देखो, कितना फटाफट याद हो गया। आप बोलना चाहते थे न, बोलो भैया। *श्रोता: वर्तमानकालीन।* वर्तमानकालीन, *श्रोता: सर्वघाति स्पर्धकों का।* सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय और भविष्यकालीन उन्हीं स्पर्धकों का सदवस्थारूप उपशम और वर्तमानकालीन देशघाति स्पर्धकों का उदय। इनका नाम है क्षयोपशम। यह बात सबको याद हो गयी होगी कि नहीं ? नहीं होगी तो कोई चिंता मत करना, घबराना मत। हमने भी दस-दस बार उसको पढ़ा जभी तो थोड़ा-थोड़ा ज्ञान में आया। और लोग समझने लगे कि हमको समझाओ तो हमने समझाने का ढाढ़स किया। सुभाषभाई, आप इतने होशियार हो कि पहली ही बार आपको याद

भी हो गया और अंडरस्टँडिंग भी हो गयी। हमने तो बहुत माथा मारा। यह कर्मकाण्ड सीखने में हमें कोई गुरु नहीं मिला है कि जिनके पैर के पास बैठते हुये हम समझे। लेकिन मेरा सौभाग्य यह रहा कि मुझे सिखानेवाली पत्नी मिली। उसे सिखानेवाला कोई नहीं मिला। हम दोनों ने मिलकर अपनी सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका है न, ढूंढ़ारी भाषावाली, कम से कम तीन से चार बार हमने पढ़ी और जब उसका ट्रान्स्लेशन किया हिन्दी में, तो-तो आठ-आठ, दस-दस बार पढ़ी क्योंकि प्रूफ रीडिंग करना था न। मैं यह कहता हूं मेरे जैसा ठोठ आदमी भी सीख सकता है, तो आप जैसे इंटेलिजंट लोग तो कितना जल्दी सीखेंगे। ख्याल में आया न !



यहां अभी अपने को क्या देखना है ? वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय यानी क्या ? चलो हम देखेंगे पेज ३९ पर क्वेश्चन नंबर ४९। अभी तक हमने जो पढ़ा था उदयाभावी क्षय का अर्थ हमें देखना था, आपने पूछा था न। यह समझने के पहले हम जरा बोर्ड पर देखेंगे और बोर्ड के सहारे समझने की कोशिश करेंगे तो यह बात अपने गले में और आराम से उतरेगी। जैसे लापसी मुंह में डालो तो गटक, वैसे यह बात अपने दिमाग में ऐसी झट से आ जायेगी।

यह किसके बारे में हम सोच रहे हैं ? घातिकर्म के बारे में सोच रहे हैं। यह घातिकर्म कौनसे होते हैं साहब ? हां, बोलो-बोलो, आपको मैं पूछ रहा हूं। मालूम नहीं

है ? कोई बात नहीं, अच्छी बात है। आप उनके नाम बतायेंगे गणेशजी ? हां, बोलो साहब ? *श्रोता: ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय।* ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय, इन चार कर्मों को क्या कहते है ? घातिकर्म। आपको मालूम था लेकिन आप बोल नहीं पाये, है न ? मालूम हैं न ये नाम ? बोलो-बोलो, घबराना नहीं, ज्ञानावरण- बोलो-बोलो, आज मौन है आपका चौदस है इसलिये ? बहन आप बोलेंगी घातिकर्म के नाम ? *श्रोता: ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय।* ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अंतराय और अघातिकर्म के नाम भाईसाहब आप तो नक्की जानते हैं मैं जानता हूं, बोलो-बोलो। *श्रोता: आयु, नाम, गोत्र और वेदनीय।* आयु, नाम, गोत्र और वेदनीय, बहुत अच्छा !

अभी हम अघातिकर्मों के बारे में बिलकुल बात नहीं कर रहे हैं। किसके बारे में बात कर रहे हैं ? तो घातिकर्म के बारे में। अब यह घातिकर्म जो हैं उसमें भी दो प्रकार की प्रकृतियां होती हैं। प्रकृति की बात मैं कर रहा हूं। कौनसी दो हैं ? सर्वघाति प्रकृति, बोलिये... *श्रोता: सर्वघाति प्रकृति।* और दूसरी है देशघाति प्रकृति। *श्रोता: देशघाति प्रकृति।* यह हम किसकी बात कर रहे हैं ? प्रकृति के बारे में। घातिकर्म जो हैं उसकी दो प्रकार की प्रकृतियां हैं, एक है सर्वघाति प्रकृति और दूसरी है देशघाति प्रकृति। अभी इसके आगे थोड़ासा घोटाला होने के चान्सेस हैं, तो शांति से समझना। अभी क्या बता रहे हैं ? देखो, यह जो सर्वघाति प्रकृति है उसमें सर्वघाति स्पर्धक ही होते हैं। क्या कहा ? सर्वघाति प्रकृति में सर्वघाति स्पर्धक ही होते हैं और देशघाति प्रकृति है उसमें सर्वघाति स्पर्धक भी होते हैं और देशघाति स्पर्धक भी होते हैं। आप कहेंगे कि हम वहीं के वहीं रहे, आपने तो आगे कुछ बताया ही नहीं। लेकिन बता रहे हैं न। ॲट अ टाइम एक ही बात होगी न। यहां बता रहे हैं कि सर्वघाति प्रकृति में सर्वघाति स्पर्धक ही होते हैं, वहां देशघाति स्पर्धक नहीं होते। देशघाति प्रकृति में सर्वघाति स्पर्धक भी होते हैं और देशघाति स्पर्धक भी होते हैं। यहां तक बात समझ में आयी ?

अब वह क्या होता है उसको हम देखेंगे। सर्वघाति स्पर्धक वगैरह-वगैरह, किसको कहना ? क्या कहना ? उसके बारे में हम और थोड़ासा विषय को क्लिअर करने के हिसाब से आगे बढ़ेंगे। यहां जो बता रहे हैं, देखो, अगर आपको देखना हो तो डॉ उज्ज्वला शहा ने लिखी हुयी पंचलब्धि नामक जो पुस्तक है, उसके पेज नंबर ४५

पर हम आये हैं। आपके पास किसीके पास वह पुस्तक नहीं है मैं जानता हूं लेकिन बहुत आसान है। देखो, क्या कह रहे हैं ? देखो- पहले तो हम निषेक के बारे में सोच रहे हैं। अभी निषेक के बारे में क्या कह रहें हैं ? **कर्मों की स्थिति बताने के लिये निषेक रचना होती है।** निषेक यानी हमने ऐसी आड़ी-आड़ी लाइन देखी थी न कल, वह। तो वह निषेक रचना होती है। **यहां तुम ऐसा मत समझना**, वह अपनी बच्चियों को खत लिख रही है न, तो उनके उद्देश्य से यह बात लिखी है कि यहां तुम ऐसा मत समझना **कि जीव के प्रदेशों में कर्म कतार से खड़े हैं।** तो कैसे हैं ? **जब-जब कर्म बंधता है, तब आत्मा के असंख्यात प्रदेशों में वे परमाणु समानरूप से फैल जाते हैं**, ईक्वलि स्प्रेड आउट होते हैं।

ऐसा नहीं है कि एक जगह ज्ञानावरण है, दूसरी जगह अन्य-अन्य कर्म हैं ऐसा नहीं है। तो क्या कह रहे हैं ? जब-जब कर्म बंधता है तब आत्मा के असंख्यात प्रदेशों में वे परमाणु समानरूप से फैलते हैं। **जो जहां पर स्थित हो, परंतु जिन किन्हीं परमाणुओं की समान स्थिति होगी उनको हम निषेक कहेंगे।** हमने वह इमॅजिन किया है कि ऐसे लाइन में हैं सारे। लेकिन वे कैसे हैं ? कि उनके उदय का काल एक साथ आनेवाला है, वे वहां आत्मा के प्रदेशों में यहां अलग-अलग जगह पर किधर भी होंगे, वे कोई ऐसे लाइन में तो खड़े नहीं हैं। यह किसकी बात चल रही है ? स्थिति को बतानेवाले निषेकों की। हमारा उससे अभी फिलहाल तो कोई मतलब है नहीं। अभी हमको यहां पर किसको देखना है ? स्पर्धकों को देखना है। यह जैसे स्थिति बतानेवाले निषेक हमने बताये, वैसे जो अनुभाग होता है- फलदान शक्ति जो कर्मों में है, उसके बारे में हम अभी देख रहे हैं। वहां पर वर्ग, वर्गणा, स्पर्धक आदि शब्द हैं वे यहां अनुभाग में लगेंगे। तो अभी हम अनुभाग की अपेक्षा से वर्णन देखने जा रहे हैं। क्या कहते हैं ? **कर्म परमाणु में स्थिति के साथ-साथ विशिष्ट अनुभाग भी होता है।** यानी कोई पर्टिक्युलर अनुभाग तो हर परमाणु में होगा ही होगा। क्योंकि हमने पहले ही दिन देखा था कि जब-जब बंध होता है, वह कितने प्रकार का बंध होता है ? हां, प्रमोदभाई आप बतायेंगे ? फिर से, हां बोलो, *श्रोता: प्रदेशबंध, स्थितिबंध।* बहुत अच्छा ! हां, आपको बताना है- प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, स्थितिबंध और अनुभागबंध। तो यह अनुभागबंध की अपेक्षा से अभी हम देख रहे हैं।

फिर से पढ़ रहा हूं मैं- कर्म परमाणुओं में स्थिति के साथ-साथ विशिष्ट अनुभाग

भी होता है। **उनकी अपनी फलदान शक्ति होती है।** फलदान यानी कितने प्रमाण में कैसा फल मिलना वगैरह वह कर्मों में भी निहित मतलब इन्क्लूडेड है। **इस शक्ति को** यानी यह जो फलदान की शक्ति है उसको **अविभागप्रतिच्छेदों में नापा जाता है।** देखो-देखो, यह जो कोई भी पर्याय है तो वह ज्ञान की पर्याय ले लो न, तो ज्ञान में जानने की शक्ति कितनी है ? वह मापने की जो कोई यंत्रणा है या वह कोई मेझरमेंट है, जो एकक है जिसको कहते हैं यूनिट, वह है **अविभागप्रतिच्छेद।** तो कह रहे हैं कि कर्म परमाणुओं में स्थिति के साथ-साथ विशिष्ट अनुभाग भी होता है। उनकी अपनी फलदान शक्ति होती है। इस शक्ति को अविभागप्रतिच्छेदों में नापा जाता है।

जैसा हम सोचेंगे कि यह हॉल कितना बड़ा है ? तो हमारे माणिकचंदजी कहेंगे कि यह ५० फीट ऐसा है, ३० फीट ऐसा है और उसका गुणाकार करो उतना स्क्वेअर फीट है। तो स्क्वेअर फीट यह नाप है। वैसे हमारे प्रत्येक पर्याय की जो शक्ति है वह मापने का नाप क्या है ? अविभागप्रतिच्छेद। जैसे आप जीव हो तो आपका आकार कितना है ? तो आप कहेंगे मैं असंख्यातप्रदेशी हूं। तो आकाश का एक प्रदेश यह नाप है, उसकी अपेक्षा से आप में कितने प्रदेश हैं उसका हम वर्णन यहां देखते हैं। वैसे यहां पर्याय में जो फलदान शक्ति है, वह फलदान शक्ति को नापने का नाप क्या है ? तो कहते हैं अविभागप्रतिच्छेद। यह बात ख्याल में आ गयी ? तो यहां क्या कह रहे हैं ? **शक्ति के सबसे छोटे अंश को अविभागप्रतिच्छेद कहते हैं।** अब आगे कहते हैं **कर्म परमाणुओं में उनकी शक्ति के अविभागप्रतिच्छेद होते हैं, इसलिये एक परमाणु को एक वर्ग कहते हैं।** अपने लौकिक में जो वर्ग बोलते हैं न, वह नहीं है। यह वर्ग नाम समझना क्या है ? कि उस परमाणु में जो अविभागप्रतिच्छेदों की संख्या होगी तो एक परमाणु इज ईक़ल टू वन वर्ग। और **जिन परमाणुओं में अर्थात् वर्गों में समान अविभागप्रतिच्छेद पाये जाते हैं, उन वर्गों के समूह को वर्गणा कहते हैं।** भाईसाहब बोअर तो नहीं हो रहे हैं न !

देखो-देखो, अभी हम समझते हैं एक वर्ग जो है यानी एक परमाणु, उसमें फलदान देने की शक्ति १०० है ऐसा हम मान लेते हैं। होगी तो अनन्तों में, समझने के लिये हम कहेंगे १०० अविभागप्रतिच्छेद हैं। आत्मा में कर्म परमाणु कितने हैं ? तो अनंत हैं। यह अनंतों में कुछ परमाणु ऐसे हैं कि उन सबमें अविभागप्रतिच्छेद १००, १००, १००, १०० हैं। तो इन १००-१०० का जो ग्रुप है उसको यहां वर्गणा कहेंगे। क्या कहा ?

देखो फिर से, जिन परमाणुओं में अर्थात् वर्गों में क्योंकि एक परमाणु को हमने वर्ग कहा था तो **जिन परमाणुओं में अर्थात् वर्गों में समान अविभागप्रतिच्छेद पाये जाते हैं, उन वर्गों के समूह को वर्गणा कहते हैं।**

अब क्या होता है कि कोई १०० वाले हैं, कोई १०१ वाले हैं, कोई १०२ वाले हैं, ऐसा करते, करते, करते हम आगे बढ़ेंगे। यहां तक तो रुक जायें। अब आगे कहते हैं **सबसे कम अविभागप्रतिच्छेदवाले वर्गों की वर्गणा को जघन्य वर्गणा या प्रथम वर्गणा कहते हैं**, **जिनमें एक अधिक अविभागप्रतिच्छेद होगा, ऐसे वर्गों की वर्गणा को द्वितीय वर्गणा कहते हैं**। इसतरह हम पहली वर्गणा, दूसरी वर्गणा, ऐसी हम आगे देखते जायेंगे। अब कह रहे हैं **अनंत वर्गणाओं के समूह को स्पर्धक कहते हैं।** अपनी बात कहां आयी है ? स्पर्धकों को समझने की। तो हमने एक परमाणु को एक वर्ग कहा। समान अविभागप्रतिच्छेदवाले ऐसे वर्गों के समूह को वर्गणा कहा। अब ऐसी अनंत वर्गणा जो हैं अलग-अलग, यहां तो हमने जघन्य १०० पकड़ा था, तो मान लो १००, १०१, १०२... १२० तक की वर्गणाओं के समूह को हम स्पर्धक कहेंगे। वहां तो अनंत वर्गणाओं का जो समूह है उसको स्पर्धक कहने में आता है। **वर्गणा के वर्गों के अविभागप्रतिच्छेद बढ़ते-बढ़ते जिस वर्गणा में दुगुणे होते हैं वहां से दूसरा स्पर्धक प्रारंभ होता है।** यानी १०० के २०० हो गये, वहां से दूसरा स्पर्धक शुरू हो गया। अब तीन **जब तीन गुना होते हैं तब तीसरा स्पर्धक** होता है। यहां तक तो हमने देखा। अब आगे कहते हैं, देखो-देखो, यह वर्ग, वर्गणा और स्पर्धक की बात ख्याल में आ गयी न प्रमोदभाई ? नहीं हो तो आप पूछना, मैं दुबारा रिपीट करूंगा, कोई घबराना नहीं। देखो-देखो, *श्रोता: वर्ग के समूह को वर्गणा, वर्गणाओं के समूह को स्पर्धक।* बहुत अच्छा, हां बिलकुल ऐसा ही है।

देखो, कर्म का एक परमाणु है तो उसमें स्थिति भी है, अनुभाग भी है। हम अभी स्थिति की बात नहीं कर रहे हैं। अनुभाग यानी फलदान देने की शक्ति। जो कोई फलदान देने की उनकी कपॅसिटि है उसको वर्ग कहा गया है जिसको हम अविभागप्रतिच्छेदों में मापते हैं, नापते हैं। अब एक परमाणु इज ईक़ल टू वर्ग, ऐसे समान अविभागप्रतिच्छेदवाले जो कोई वर्ग हैं, उनका जो समूह है उसको यहां वर्गणा कहेंगे। और जो अनेक वर्गणाओं का जो समूह है उसको यहां स्पर्धक कहेंगे। पन्नालालजी आपको ख्याल में आ गया न ? अभी किसीको नहीं आया तो हाथ उठाना

क्योंकि हर एक का नाम लेना अच्छा नहीं लगता है न तुमको, मुझे अच्छा लगता है।

अब क्या कहते हैं ? अभी घातिकर्मों के स्पर्धकों में अनुभाग की अपेक्षा चार स्थान हैं। क्या बताया ? ये जो स्पर्धक हैं; अभी क्या होता है ? जो सर्वघाति स्पर्धक हैं वे जीव के गुणों को, मतलब पर्यायों में प्रकट होने के लिये घातता है। *श्रोता: अनुजीवी।* अनुजीवी, प्रतिजीवी की बात मत करो। यह ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय की बात कर रहे हैं। वह क्या है ? वह आप समझ लेना, विषयांतर नहीं होवे। क्योंकि जो यह मूल बात है वह समझने में दिक्कत है, तो फिर अनुजीवी, प्रतिजीवी वगैरह और उलझन में मत डालना। वह हम लघु सिद्धान्त प्रवेशिका में सीखेंगे। यहां क्या कह रहे हैं ? देखो अभी हमने क्या देखा ? घातिकर्म जो है उसकी सर्वघाति प्रकृति है। सर्वघाति प्रकृति में सर्वघाति स्पर्धक ही होते हैं और वहां जो बात चल रही है, देशघाति प्रकृतियां जो हैं, उनमें सर्वघाति स्पर्धक भी होते हैं और देशघाति स्पर्धक भी होते हैं।

अभी सर्वघाति स्पर्धक जो होते हैं वे उनके प्रतिस्पर्धी गुणों की जो पर्यायें हैं उनको व्यक्त ही नहीं होने देते, पूरा घात करते हैं। जैसे केवलज्ञानावरण जो है वह सर्वघाति प्रकृति है तो उसमें सर्वघाति स्पर्धक ही हैं। यानी अभी फिलहाल हमारी पर्याय में केवलज्ञान है क्या ? *श्रोता: नहीं।* क्योंकि वहां सर्वघाति स्पर्धकों का उदय चल रहा है। अब क्या कह रहे हैं ? ये जो घातिकर्मों के स्पर्धक हैं, उनको शैल, अस्थि, दारु और लता इन चार विभागों में डिव्हाइड किया गया है। उनमें से सर्वघाति स्पर्धक जो हैं वे शैल, अस्थि, दारु के अनंत बहुभागरूप हैं। अभी यह दारु में अनंत बहुभाग जो है, वह सर्वघाति स्पर्धकों में लेना है और उसका जो एकभाग है और यह लता जो है वे देशघाति स्पर्धक हैं। यानी स्पर्धकों में भी उन्होंने ऐसी डिव्हिजन की है।

अभी क्या है हम देखेंगे, कठिनाई की अपेक्षा से इन स्पर्धकों का कथन किया है। कठिनाई यानी रिजिडनेस। जैसा हम कहते हैं यह लता यानी क्या है ? बेल। बेल समझते हैं न आप ? तो वह कैसी है ? जरा ऐसा दाब देवे तो टूट जावे। नरम है कोमल है। यह जो दारु यानी क्या है ? दारु यानी काष्ठ, काष्ठ यानी यह क्या है ? सूखी लकड़ी। लेकिन वह बेल से अधिक स्टाउट है, स्ट्राँग है। तो वह क्या है ? यह लतावाले और यह दारु का एकभाग। यह एकभाग और बहुभाग क्या है उसको हम पहले समझेंगे।

आपके घर में लाख रुपये हैं। लाख को क्यों ले, सौ लो न - क्यों ज्यादा ले ? सौ रुपये हैं। समझने में आसान है, लाख बोलने से या करोड़ों रुपया बोलने से खाली पैसोवालों को आनंद आयेगा बाकी लोगों के दिमाग में खिटपिट काहे को ? तो क्या कहते हैं ? सौ में अगर हम उसका एक भाग और बहुभाग को देखना चाहेंगे तो हम सौ को दस से डिव्हाइड करेंगे, तो उसका भागाकार कितना आयेगा ? *श्रोता: दस।* हां ? दस। तो दस जो है वह एक भाग है और बाकी नब्बे बहुभाग है। नब्बे और दस, तो सौ में से नब्बे निकाल देवे तो वह दस एक भाग है और नब्बे है वह बहुभाग है। ख्याल में आया ? तो हमने क्या कहा ? कि यह जो दारुभागवाले हैं वे लताभागवाले से थोड़ेसे कड़क स्ट्राँग, कठिन हैं, लेकिन दारु में भी जो एक भाग है वे देशघाति प्रकृति हैं। और जो दारु का अनंतबहुभाग है; यह अनंत में से एकभाग और यह अनंत में से बहुभाग, वे कैसे स्पर्धक हैं ? तो सर्वघाति स्पर्धक हैं।

अस्थि, अस्थि यानी हड्डी। आपने देखा न, अस्थिरोग वैद्य जो होते हैं। अस्थि यानी समझते हैं ? हड्डी, यह लकडी से हड्डी स्ट्राँग होती है और यह शैल यानी पर्वत, पत्थर, शिला जो होती है तो यह सबसे और कठिन होती है। तो इनका उदय आ जाये, सर्वघाति स्पर्धकों का तो जीव की पर्याय में वह बात व्यक्त नहीं होगी। वैसे ही शैल, अस्थि और दारु का अनंत बहुभाग यह कैसे हैं ? सर्वघाति स्पर्धक हैं। यहां तक देखा न हमने, जो दारु का एकभाग और लता का पूरा भाग जो कुछ हो, वे देशघाति स्पर्धक हैं। *श्रोता: लता का बहुभाग ?* लता का पूरा बताया न आपको। उसमें एकभाग - बहुभाग नहीं है। उसमें जो कोई लता का भाग है वह पूरा का पूरा देशघाति है और यह जो है दारु में अनंतबहुभाग और एकभाग ऐसी हमने डिव्हिजन की है; हमने यानी आचार्यों ने। उसमें से जो एकभाग है वह देशघाति है और बहुभाग है वह सर्वघाति है। लेकिन वह बहुभाग किसका ? दारुवाले स्पर्धकों को अनंत का भाग देने पर एकभाग आयेगा और शेष बहुभाग रहेगा वह है अनंत बहुभाग।

अब यहां क्या कहते हैं ? यह स्पर्धकों का वर्णन हमने देखा। स्पर्धक भी हमने दो प्रकार के देखे- **एक सर्वघाति स्पर्धक और एक देशघाति स्पर्धक।** अब यहां एक बात बिलकुल ध्यान में रखना, जो सर्वघाति प्रकृतियां हैं उनमें सिर्फ सर्वघाति स्पर्धक ही होते हैं और जो देशघाति प्रकृतियां हैं उनमें सिर्फ देशघाति स्पर्धक ही होते हैं, यह बात सही है कि गलत है ? क्यों कविताबहन क्या है देशघाति प्रकृति में ? *श्रोता:*

सर्वघाति स्पर्धक भी हैं और देशघाति स्पर्धक भी हैं। सर्वघाति स्पर्धक भी हैं और देशघाति स्पर्धक भी हैं। *श्रोता: सर्वघाति प्रकृति के सर्वघाति स्पर्धक और देशघाति प्रकृति के सर्वघाति स्पर्धक इन दोनों में कोई अंतर है ?* नहीं है। अभी यह उदयाभावी क्षय अपने को देखना है न, उसीमें यह बात है। पहले इसको तो हम समझ लेवें।

देखो, हमने क्या देखा था ? वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय। फिर क्या हो गया ? भविष्यकालीन उन्हीं स्पर्धकों का सदवस्थारूप उपशम। फिर जो उदय में आनेवाले हैं वह क्या होंगे ? तो देशघातिरूप से उदय में आयेंगे। ख्याल में आया ? तो उसको कहेंगे हम वर्तमानकालीन देशघाति स्पर्धकों का उदय। देखो, अभी हमने देखा था न कि जब सम्यक्त्व चल रहा है किसी जीव का, तब उसके अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ का क्या हुआ है ? सदवस्थारूप उपशम। और वह क्या है ? अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण आदिरूप से उदय में आ रहे हैं। तो वह अप्रत्याख्यानावरण आदि जो हैं वे सम्यक्त्व को नहीं रोक सकते। लेकिन अनंतानुबंधी का उदय आये तो सम्यक्त्व टूट जायेगा और वह जीव दूसरे गुणस्थान में आता है। वैसे यहां जो सर्वघाति स्पर्धक हैं, वे देशघातिरूप टर्न होकर उदय में आयेंगे वर्तमान में, हां। अभी यहां तक तो हमारी बात ख्याल में आयी ?

देखो अभी इसमें देखते हैं हम, घातिकर्म में दो प्रकार की प्रकृतियां पायी जाती हैं। सर्वघाति प्रकृति और देशघाति प्रकृति। अभी सर्वघाति प्रकृति कौन-कौनसी हैं ? तो यहां कहते हैं जैसे केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण। यानी केवलज्ञानावरण यह जो कर्म है वह सर्वघाति प्रकृति है और उसके स्पर्धक भी सर्वघाति ही हैं। तो अगर उसमें देशघाति हो जावे तो आपको थोड़े टाइम के लिये केवलज्ञान हो जाये और फिर निकल जाये। ऐसा होगा कि नहीं ? *श्रोता: नहीं चाहते।* नहीं चाहते, अच्छा। जैसे केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण आदि सर्वघाति प्रकृति हैं और मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण आदि देशघाति प्रकृति हैं। तो यह समझने के लिये अवधिज्ञानावरण की बात हम लेते हैं।

यह अवधिज्ञानावरण कैसी प्रकृति देखी अभी हमने ? *श्रोता: देशघाति।* देशघाति यानी उनमें क्या है ? सर्वघाति स्पर्धक भी हैं और देशघाति स्पर्धक भी हैं यह बात नक्की हो गयी। अभी मैं आपसे पूछूंगा प्रवीणभाई आपको अवधिज्ञान है क्या ?

श्रोता: नहीं। आपको बहन ? *श्रोता: नहीं।* किसको यहां है ? तो क्या हो रहा है ? वह तो देशघाति प्रकृति है लेकिन अभी हमको सर्वघाति स्पर्धकों का उदय है। इसलिये हमारे में से किसीको अवधिज्ञान नहीं है, मुझे तो नक्की नहीं है, लेकिन जिन किन्हीं को होगा तो उनको क्या होगा ? उनके देशघाति स्पर्धकों का उदय है, इसलिये उनके अवधिज्ञान प्रकट है।

देखो, अभी आप उसकी परिभाषा निकालो तो बहुत जल्दी समझोगे। पेज नंबर ३९ पर हम देख रहे थे क्वेश्चन ४८। यहां कहते हैं वर्तमानकालीन यह अवधिज्ञानावरण कर्मों का सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय। यानी वहां क्या हो रहा है कि उनका उदय नहीं हो रहा है। किसका ? सर्वघाति स्पर्धकों का। उनका उदय नहीं हो रहा तो क्या होगा ? आगे जाकर देखेंगे क्या होगा उनका और भविष्यकाल के उन्हीं स्पर्धकों का - सर्वघाति स्पर्धकों का सदवस्थारूप उपशम और उदय किसका चल रहा है ? देशघाति स्पर्धकों का। अभी क्या लिखा है देखो- वर्तमानकालीन देशघाति स्पर्धकों का उदय। तो हम कहेंगे कि वहां अभी अवधिज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम चल रहा है। अभी यह क्षयोपशम की परिभाषा मैं समझता हूं कि जैसे हमने अवधिज्ञानावरण में लगायी वैसे ये जो सारी हैं न, घातिकर्म की देशघाति प्रकृतियां उनमें हम लगा सकते हैं। अभी हम फिर से इसको पढ़ेंगे तो अभी आपको ख्याल में आयेगा।

४८ नंबर का प्रश्न है क्षयोपशम किसे कहते हैं ? तो यहां बताया वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय। यानी वे सर्वघातिरूप से उदय में नहीं आवे ऐसी जो उनकी कंडिशन हो गयी तो उनके उदय का क्षय हो गया ऐसा कहेंगे। भविष्य में उदय में आने योग्य जो सर्वघाति स्पर्धक हैं, वे उदय में न आवे, जहां हैं वहीं रुक जाये तो उसको सदवस्थारूप उपशम कहा और वर्तमानकालीन देशघाति स्पर्धकों का उदय - इन तीनरूप अवस्थाओं को क्षयोपशम कहते हैं। यह बात आपके ख्याल में आ गयी ? अभी थोड़ासा हम और कुछ देखेंगे। यह जो आपको उदयाभावी क्षय यानी क्या होता है उसकी भी परिभाषा इसमें है। हां, उदयाभावी क्षय किसे कहते हैं ?

४९ नंबर का प्रश्न है, वहां बता रहे हैं कि **उदयाभावी क्षय किसे कहते हैं ?** तो क्या कह रहे हैं ? देखो, **जब सर्वघाति स्पर्धकों का उदय होता है।** तो यह सर्वघाति स्पर्धक कौन-कौनसे हैं ? यह शैल, अस्थि, दारु का अनंतबहुभाग, उनका अगर क्या

हो रहा है ? उदय हो रहा है **तब आत्मा के गुण की तनिक भी अभिव्यक्ति नहीं होती**। गुण की यानी पर्यायों की क्योंकि गुण तो व्यक्त ही हैं, पर्याय अव्यक्त है वह व्यक्त होगी। तो वह क्या हो गया कि सर्वघाति स्पर्धकों का जब उदय होता है तब आत्मा के गुण की तनिक भी अभिव्यक्ति नहीं होती है। **इसलिये उस उदय के अभाव को उदयाभावी क्षय कहते हैं।** यह अपना प्रश्न था न, उदयाभावी क्षय क्या है ? तो उसका उत्तर अभी हम समझने की कोशिश कर रहे हैं।

अब आगे कहते हैं, **आत्मगुणों की** यानी **पर्यायों की किंचित भी अभिव्यक्ति नहीं होने में निमित्त होनेवाले सर्वघाति स्पर्धकों के उदय के अभाव को उदयाभावी क्षय कहते हैं।** अभी उदयाभावी क्षय यानी क्या है यह बात समझ में आयी ? आगे और देखते हैं- **सर्वघाति स्पर्धक अनंत गुणे हीन हो-होकर**। यह किसकी बात हो रही है ? सर्वघाति स्पर्धक देशघातिरूप हो रहे हैं। तो कह रहे हैं सर्वघाति स्पर्धक अनंतगुणे हीन हो-होकर **अर्थात् उदय के एक समय पूर्व देशघाति स्पर्धकों में परिणत होकर उदय में आते हैं।** देखो साहब उनका उदयाभावी क्षय तो कर दिया, उनका सदवस्थारूप उपशम तो कर दिया, तो उनको उदय में आना ही नहीं है ? यह कौनसी नाइन्साफी ? क्योंकि बंधा है, उसका टाइम - स्थिति पूरी होते ही वह उदय में आनेवाला ही है। तो जब उदय में आयेगा तब देशघातिरूप टर्न होकर आयेगा। *श्रोता: जितनी भी सर्वघातिरूप प्रकृति है, क्या वे सारी की सारी सर्वघातिरूप उदय में आयेंगी ?* जब-जब उनका उदय आयेगा। *श्रोता: सर्वघातिरूप प्रकृति की बात पूछ रही हैं। सर्वघातिरूप प्रकृति जो, उनका जब उदय आयेगा तो जितनी प्रकृति हैं उन सबका देशघातिरूप उदय आयेगा ?* एक साथ नहीं होता है। जब-जब उदय आता है, मैंने बताया न आपको। उस समय वह सर्वघाति स्पर्धक जो हैं वह देशघातिरूप टर्न होकर आते हैं।

आपका क्या प्रश्न है ? *श्रोता: सर्वघाति प्रकृति क्या देशघाति प्रकृतिरूप हो सकती है ?* देखो सर्वघाति प्रकृति, देशघाति प्रकृतिरूप टर्न नहीं होती है, यहां स्पर्धक की बात हो रही है। *डॉ. उज्ज्वला शहा:- देशघाति प्रकृतियों के सर्वघाति स्पर्धक देशघाति स्पर्धकरूप होते हैं। सर्वघाति प्रकृति देशघाति प्रकृतिरूप होती ही नहीं कभी तीन काल में।* चलो हां आगे, अभी क्या बता रहे हैं ? **सर्वघाति स्पर्धक अनंतगुणे हीन होकर अर्थात् उदय के एक समय पूर्व देशघाति स्पर्धकों में परिणत होकर उदय**

में आते हैं। उन सर्वघाति स्पर्धकों का अनंतगुणहीनत्व ही क्षय कहलाता है। उनका क्षय यानी वे सर्वघातिरूप नहीं रहते, तो जो उनकी पॉवर है वह कम हो जाती है। यह जो सर्वघाति स्पर्धकों का देशघाति स्पर्धकरूप से उदय में आना, यही उदयभावी क्षय है **इसे ही थिउक्क संक्रमण कहते हैं।** यह थिउक्क संक्रमण यानी क्या ? समझ में आया न ? एक-एक जो उदय में आनेवाले निषेक हैं उनके, उदय में आने योग्य ऐसे जो परमाणु हैं, वे अन्यरूप टर्न होकर - संक्रमित होकर उदय में आते हैं।

अब पूछ रहे हैं **सदवस्थारूप उपशम किसे कहते हैं ?** *श्रोता: उदयाभावी क्षय और सदवस्थारूप उपशम एक जैसे लग रहे हैं।* लेकिन यह उदयाभावी क्षय और सदवस्थारूप उपशम इसमें फर्क यह है कि उदयाभावी क्षय जो है वह वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों में बन रहा है और सदवस्थारूप उपशम जो है वह जो भविष्यकाल में उदय में आनेवाले हैं उनको वहां रोक देना, बस। **वर्तमान समय को छोड़कर** देखो, उसका अभी हमें एक्स्प्लनेशन मिल रहा है। वर्तमान समय को छोड़कर क्या होता है ? वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धक देशघाति स्पर्धकों में संक्रमित होकर उदय में आ रहे हैं और यहां क्या कहते हैं ? वर्तमान को छोड़कर **आगामी काल में उदय आनेवाले कर्मों के सत्ता में रहने को सदवस्थारूप उपशम कहते हैं।** अभी उसका ही अर्थ यह बता रहे हैं, **उदय का अभाव ही अप्रशस्त उपशम है। उसका ही दूसरा नाम सदवस्थारूप उपशम है।** उन्होंने वही उत्तर दिया है, अनंतानुबंधी का अप्रशस्त उपशम ही होता है।

अब हम आगे चलेंगे, कल कहां आये थे ? अभी पेज नंबर १०७ पर हमने जो देखा था, यह दो नंबर का पॉइंट। १०७ नंबर के पृष्ठ पर अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान का जो पहला पेज है वहां पर लिखते हैं। **यदि जीव क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि हो तो मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व**; मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये कैसी हैं ? ये सर्वघाति प्रकृतियां हैं और सम्यक् प्रकृति देशघाति प्रकृति है, इसके स्पर्धक भी देशघाति ही होते हैं। इन प्रकृतियों का क्षयोपशम होता है। यानी अभी क्षयोपशम होता है यानी क्या होता है ? वह हमने देखा। वे देशघातिरूप टर्न होकर उदय में आती हैं। अब आगे **इतना विशेष है कि अनंतानुबंधी कषाय चतुष्क, मिथ्यात्व एवम् सम्यग्मिथ्यात्व ये छह प्रकृतियां उदयावली में तो रहती हैं।** अभी यहां उदयावली यानी क्या ? चलो

पीछे चलो, उदयावली, २६ नंबर का प्रश्न है पृष्ठ ३५ है वहां बता रहे हैं **उदयावली किसे कहते हैं ? वर्तमान समय से लेकर एक आवली काल पर्यंत में उदय आने योग्य निषेकों को उदयावली कहते हैं।** यानी जो नीचेवाला जो पहला निषेक है वह तो वर्तमानकालीन है और उसके ऊपर जितने हैं, कितने होंगे ? असंख्यात क्योंकि एक आवली में असंख्यात समय होते हैं।

परसों हमने देखा था एक आवली में कितने समय होते हैं ? हमने देखा था किसको याद है ? हां-हां, बहनों में किसीको याद है ? वहां पीछे ? हां-हां, बोलो-बोलो। *श्रोता: जघन्य युक्ता असंख्यात।* जघन्य युक्त असंख्यात कहो या युक्तासंख्यात कहो एक ही अर्थ है। युक्ता असंख्यात नहीं होगा; परीत, युक्त और असंख्यात। तो उसके आगे असंख्यात लगायेंगे ? परीतासंख्यात उसका अर्थ है परीत असंख्यात। युक्त असंख्यात - ये दो शब्द मिलकर युक्तासंख्यात होगा और असंख्यात असंख्यात। त के साथ में असंख्यात का अ जुड़ जावे तो असंख्यातासंख्यात। अभी हमने देखा कि एक आवली में कितने समय ? अभी हम फॉर द टाइम बीइंग कहेंगे असंख्यात समय हैं। *श्रोता: बस।* बस नहीं, जानना जरूरी है, बस से काम नहीं चलेगा। हम तो कहीं न कहीं शॉर्टकट निकालना चाहते हैं।

श्रोता: वर्तमानकालीन यह आवली का काल, नॅनो सेकंड से भी बहुत छोटा है ? अभी आपको जो प्रश्न पूछना है आप लिखितरूप से पूछें, अभी तो मैं फिलहाल आपको उत्तर देता हूं। देखो एक सेकंड में, कितने ? एक सेकंड में, हज़ारों आवली होती हैं और एक आवली में जघन्य युक्तासंख्यात समय होते हैं। तो एक समय कितना छोटा है, वह तो केवलज्ञान का ही विषय है। आप इमॅजिन कर सकते हो कि एक सेकंड में हज़ारों आवली। सूक्ष्मता से देखो तो एक सेकंड में हजारों कोड़ाकोड़ी आवली होती हैं। लेकिन हम इतना ही लेते हैं, सैकड़ों कहो, हजारों कहो, बात एक ही है न, एक से दो हजार हो गये तो हजार हो गये, चार हो गये तो हजार हो गये और सैकड़ों कहो तो और गुना कर देना उसको। उतने समयों की तो आवली होती हैं भाई। और नॅनो सेकंड तो सेकंड का संख्यातवां भाग है। ख्याल में आया ? हां, यह समझ में आयेगा, केवलज्ञान हो जायेगा तो सब समझ में आयेगा। उसमें क्या है ? अब क्या करें ? यह मेरे बस की बात नहीं है न साहब !

देखो, अभी जरासा सुनना, हंसी मजाक की बात नहीं है। देखो, मतिज्ञान और श्रुतज्ञान वह संख्यात को समझ सकता है। असंख्यात की बात तो अवधिज्ञानी ही समझते हैं और अनंत की बात तो केवलज्ञानी के केवलज्ञान का विषय है। अब जो अनंत की बात है, असंख्यात की बात है उसे मैं कैसे बताऊं आपको। हां, बस हम अनुमान कर सकते हैं, आगम प्रमाण है हमारे लिये। ख्याल में आया ? अगर हमारे जैसा कोई विद्वान कुछ बात बता देवे और आगम में कोई उससे अलग बात होवे, तो हमें तो आगम प्रमाण को ही प्रमाण समझना चाहिये। इसलिये आजकल फॅशन भी निकली, कुछ भी बोलो आगम प्रमाण दिखाओ। चलो, कई बातें आगम प्रमाण से सिद्ध होती हैं, कई अनुमान से, क्योंकि वह भी प्रमाण हैं। क्या करें ? चलो।

अभी अपनी क्या बात हो रही थी कि उदयावली किसे कहते हैं ? वर्तमान समय से लेकर एक आवली काल पर्यंत के उदय आने योग्य निषेकों को उदयावली कहते हैं। अब फिर से दुबारा जायेंगे हम १०७ पृष्ठ पर गये थे न हम ? हां **अनंतानुबंधी कषाय चतुष्क, मिथ्यात्व एवं सम्यग्मिथ्यात्व, ये छहों प्रकृतियां उदयावली में तो रहती हैं।** अब यह उदयावली में यानी असंख्यात जो निषेक हैं, उनमें हैं। **परंतु उदय से एक समय पूर्व** क्या होता है ? **थिउक्क संक्रमण द्वारा यथायोग्य अन्य प्रकृतियों में संक्रमित होकर उदय में आती हैं।** अनंतानुबंधी चतुष्क जो हैं वे अप्रत्याख्यानादिरूप से उदय में आयेंगे उसको क्षयोपशम नहीं कहेंगे परंतु दर्शनमोहनीय की सर्वघाति दो प्रकृतियां देशघाति सम्यक् प्रकृतिरूप से उदय में आती हैं, उसको उनका क्षयोपशम कहेंगे। वे जो कोई सर्वघाति स्पर्धक हैं, वे देशघाति स्पर्धकरूप से टर्न होकर उदय में आते हैं यानी वे परमाणु रुकेंगे नहीं, निकल जायेंगे। अब तीसरी बात- यहां यह बता रहे हैं **यदि क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो तो मिथ्यात्वादि तीन दर्शनमोहनीय और अनंतानुबंधी कषाय चतुष्क का क्षय होता है।** वह क्षय किसतरह से होता है ? क्या होता है ? वह अभी हम अगले पिरिअड में देखेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

१४. अविरतसम्यक्त्व

इसके पहले जो हमारा यहां स्वाध्याय चल रहा था, उसमें हमने क्षयोपशम किसे कहते हैं यह देखने की कोशिश की थी। हां साहब ? *श्रोता: क्षयोपशम सम्यक्त्व की परिभाषा दुबारा लेनी है।* क्षयोपशम सम्यक्त्व की परिभाषा दुबारा लेनी है ? हां चलो, आपका कहना है थोड़ासा और समझाओ। बहुत अच्छा।

देखो यहां क्या कह रहे हैं ? पहले में पहले जो क्षयोपशम होता है, वह किसमें होता है यह बात हमने देख ली। वहां कहते हैं जो स्पर्धक होते हैं, वे स्पर्धक भी दो प्रकार के बताये गये हैं, एक सर्वघाति स्पर्धक और एक देशघाति स्पर्धक। लेकिन यहां विशेषता यह है, जो सर्वघाति प्रकृति होती है; अभी जरा शब्दों के प्रयोग की तरफ ध्यान रखना। प्रकृतियां दो प्रकार की हैं, यह किसमें बात चल रही है ? घातिकर्मों में बात चल रही है। घातिकर्मों में सर्वघाति प्रकृति और देशघाति प्रकृति ऐसी दो प्रकार की प्रकृतियां हैं। सर्वघाति प्रकृति में सभी सर्वघाति स्पर्धक ही होते हैं। अब दूसरी बात क्या है ? जो देशघाति प्रकृतियां हैं उनमें दोनों ही प्रकार के स्पर्धक - सर्वघाति स्पर्धक भी होते हैं और देशघाति स्पर्धक भी होते हैं। ख्याल में आया ?

श्रोता: ये शैल, अस्थि वगैरह क्या हैं ? देखो, देखो- सुनो, सुनो, मैं समझ गया आप जो पूछना चाहते हैं। यह जो शैल है न, यह अति तीव्र ऐसा उसका फल है, फिर यह है अस्थि, अस्थि यानी हड्डी जैसे उसमें तीव्रता थोड़ी कम है, यह दारु का अनंत बहुभाग, ये तो नियम से सर्वघाति स्पर्धक ही हैं और यह दारु का एकभाग जो है, वह एकभाग और यह लताभाग, ये देशघाति स्पर्धक ही हैं। ख्याल में आया ? अब क्या कहना चाहते हैं ? एक जो प्रश्न उठा था न कि सर्वघाति प्रकृति देशघाति प्रकृतिरूप कभी भी नहीं होगी। लेकिन देशघाति प्रकृति के जो सर्वघाति स्पर्धक हैं, वे देशघाति स्पर्धकरूप से उदय में आ सकते हैं। अब इसको समझने के लिये हम पुस्तक में ४० नंबर के पेज पर आयेंगे, तो विशेषरूप से हमारे ज्ञान में थोड़ी बहुत बात आ सकती है।

श्रोता: यह दारु और लता क्या है ? हां-हां, आपका प्रश्न यह है यह शैल, अस्थि, दारु जो है; दारु यानी क्या होता है कि दारु का अर्थ होता है काष्ठ। काष्ठ यानी यह सूखी लकड़ी जो है, उसको काष्ठ कहते हैं या उसीको यहां दारु कहा गया है। यह हमें तो दारु शब्द का अर्थ कुछ अलग सा सुना हुआ है न। कृपया मुझे बोलने का अवसर

देना हां। मैं यह कह रहा था कि जो लौकिक में दारू शब्द है उसमें रू दीर्घ है वह दारू यानी जिसको वाइन, मद्य कहते हैं, उसका इससे कोई संबंध नहीं है। यहां जो काष्ठ है यानी क्या है ? लता जो होती है यानी बेल, उसमें कठिनता कितनी होती है ? ऐसा घुमाओ घूम जावे, ऐसा करो टूट जावे, लेकिन सूखी लकड़ी वह उससे भी कठिन है और उससे भी कठिनता अस्थि यानी हड्डी की है और उससे भी कठिनता शैल यानी जो पत्थर की है। यानी यह हम क्या देख रहे हैं कि कर्म हमें अनुभाग मतलब जो फल दे रहे हैं, वह फल किस-किस प्रकार का होगा ? वह फलदान शक्ति जो है वह उदाहरण के माध्यम से समझाया गया है कि वह इसतरह के फल देते हैं।

पहले में पहले हम इसतरह से देखेंगे, पेज नंबर ४० निकाल लिया आपने। तो उसमें सर्वघाति प्रकृतियां कौन-कौनसी हैं ? देखो, पहले में पहले सर्वघाति प्रकृतियां जो होती हैं, घातिकर्मों की ही बात चल रही है, यह बात ध्यान रखना। तो यहां कह रहे हैं, देखो, हमने घातिकर्म चार देखे हैं- एक ज्ञानावरण, एक दर्शनावरण, एक मोहनीय और एक अंतराय। अभी उसमें एक-एक को लेते हुये हम आगे बढ़ते हैं। केवलज्ञानावरण है वह कौनसी प्रकृति है ? सर्वघाति प्रकृति है। अब हमने एक बात देखी थी, सर्वघाति प्रकृतियों के सभी स्पर्धक सर्वघाति ही होते हैं यानी केवलज्ञानावरण जो है वह सर्वघाति प्रकृति है। उसके सभी स्पर्धक जो सर्वघाति होंगे उनका उदय होगा तो केवलज्ञान नहीं होगा। अब केवलदर्शनावरण जो है वह भी सर्वघाति प्रकृति है।

दर्शनावरण नामक कर्म के कितने भेद हैं ? *श्रोता: नौ।* नौ, कौन-कौनसे ? *श्रोता: चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन, ५ निद्रा।* आवरण कहना - चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण, केवलदर्शनावरण और ५ निद्रा। चलो शॉर्टकट लगा दिया आपने। इनमें से केवलदर्शनावरण वह सर्वघाति प्रकृति है। निद्रा, निद्रा-निद्रा, प्रचला, प्रचला-प्रचला और स्त्यानगृद्धि, ये सारी कैसी हैं ? सर्वघाति प्रकृतियां हैं। वह अपना जो प्रतिस्पर्धी है, उसका घात करेगी यानी किसीको निद्रा आवे तो वह किसका घात करेगी ? क्योंकि वह दर्शनावरण कर्म का भेद है। तो निद्रा जो है वह किसका घात करेगी ? हां, प्रमोदभाई आप बता रहे हैं ? नहीं मालूम। पन्नालालजी ? *श्रोता: दर्शन गुण का घात।* दर्शन गुण का घात करेगी यानी क्या होगा कि उस जीव का दर्शनोपयोग चलेगा ही नहीं, ऐसा होगा क्या ? देखो, देखो, कोई बात नहीं, यह जागृत अवस्था जो है न उसका घात करेगी। निद्रा क्या करती है ? जागृत

अवस्था का घात करती है। चक्षुदर्शनावरण है वह चक्षुदर्शन का घात करेगी, लेकिन उस समय अचक्षुदर्शन भी चालू रहेगा। लेकिन यहां क्या कह रहे हैं ? निद्रा, निद्रा-निद्रा अभी यह तो निद्रा के विविध भेद हैं। अभी उसके डिटेल में हम यहां नहीं जायेंगे। तो कह रहे हैं कि दर्शनावरण की ये पांच और एक छह ये प्रकृतियां सर्वघाति हैं।

अभी थोड़ासा हम पीछे जायेंगे। केवलज्ञानावरण वह अगर सर्वघाति प्रकृति है तो मतिज्ञानावरण आदि चार जो हमने देखी हैं वे देशघाति प्रकृतियां हैं यह बात नक्की हो जाती है। अब यहां एक केवलदर्शनावरण कहा और पांच निद्रा को उन्होंने सर्वघाति प्रकृतियों में डाल दिया। बीचवाले जो तीन हैं- चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण और अवधिदर्शनावरण, वे कैसी होंगी ? देशघाति प्रकृतियां होंगी। नीचे दिया है, उसको भी हम पढ़ेंगे, लेकिन हम जब पढ़ रहे हैं तब इसका इन्फरन्स निकालने में कोई दिक्कत नहीं है। अब आगे कह रहे हैं, अनंतानुबंधी चतुष्क, अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क और प्रत्याख्यानावरण चतुष्क, ये सब सर्वघाति प्रकृतियां हैं। यह भी हमने देखा था, अनंतानुबंधी का उदय होगा तो इस जीव को सम्यक्त्व नहीं होगा, सम्यक्त्व का घात करनेवालों में से वह एक है और क्या कहते हैं ? अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क है वह तो सम्यक्त्व का घातक नहीं है लेकिन वह अणुव्रत धारण करने में ऑब्स्टेकल है। यह तो निमित्त की बात है। वैसे प्रत्याख्यानावरण चतुष्क जो है यानी प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ, वह क्या करते हैं ? जीव को महाव्रत धारण करने नहीं देते। उसके उदय में ऐसे परिणाम होते नहीं। ये तो तीन हो गये। इसका अर्थ क्या हो गया ? संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ यह देशघाति प्रकृति है।

अब आगे- मिथ्यात्व दर्शनमोहनीय। देखो, दर्शनमोहनीय में से मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व वे दोनों ही कैसी प्रकृतियां हैं ? सर्वघाति प्रकृतियां हैं। आगे बताते हैं कि इसमें से सम्यक् प्रकृति देशघाति है। अब प्रश्न क्रमांक ५५ में देशघाति प्रकृतियां कौन-कौनसी हैं उसकी बात की है। मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण ये सब देशघाति प्रकृतियां हैं। ये देशघाति प्रकृतियां हैं तो उनमें दोनों प्रकार के स्पर्धक हमें दिखायी देंगे- सर्वघाति स्पर्धक और देशघाति स्पर्धक। *श्रोता: देशघाति प्रकृति में जो स्पर्धक हैं वे समानरूप से हैं ?* कैसे समानरूप की बात कर रहे हैं आप ? देखो, सर्वघाति स्पर्धक शैलभाग के उत्कृष्ट से लेकर दारु के बहुभाग तक हैं और देशघाति स्पर्धक दारु के अनंतवें भाग और लताभाग इतने ही हैं। तो

समान कैसे होंगे ? किस अपेक्षा से समानता आप पूछ रहे हैं ? *श्रोता: संख्या।* ना, ना, ना, ना बिलकुल नहीं, संख्या नहीं। सर्वघाति परमाणुओं की संख्या बहुत कम है और देशघाति परमाणुओं की संख्या उससे अनंतगुणा है। अब क्या कह रहे हैं ? देखो।

श्रोता: सर्वघाति प्रकृति के सर्वघाति स्पर्धक हैं। देशघाति प्रकृति के सर्वघाति स्पर्धक हैं, उनकी शक्ति एकसमान हैं ? हां, दोनों के सर्वघाति स्पर्धक शैल, अस्थि और दारु के बहुभागवाले हैं। बात ऐसी है कि यह जो देशघाति प्रकृतियों के जो सर्वघाति स्पर्धक हैं, उनका उदय आयेगा तो अपना प्रतिस्पर्धी जो है, उसको वे पर्याय में व्यक्त नहीं होने देंगे। जैसा अभी हमने पहले लेक्चर में देखा था कि अवधिज्ञानावरण वह कैसी प्रकृति है ? तो कहते हैं देशघाति प्रकृति है। उसके अगर सर्वघाति स्पर्धक का उदय होगा तो उस जीव को अवधिज्ञान प्रकट नहीं होगा। लेकिन अगर उसमें से देशघाति स्पर्धकों का उदय होगा, किसके ? अवधिज्ञानावरण के देशघाति स्पर्धकों का उदय होगा तो उसको अवधिज्ञान होगा। *श्रोता: जैसे आपने अवधिज्ञान पर लगाया है वैसे ही मतिज्ञान और श्रुतज्ञान पर कैसे लगायेंगे ?* आपका कहना है कि आपने अवधिज्ञान पर तो घटाया, आप मतिज्ञान या श्रुतज्ञान पर घटाइये। बहुत अच्छा। उसमें घटाना है तो अभी हम कहेंगे कि आप हिन्दी जानती हैं, गुजराती जानती हैं, अंग्रेजी जानती हैं और कच्छी भी जानती हैं। आप तमिल जानती हैं ? नहीं, तो ऐसा समझना कि आपके तमिल ज्ञानावरण स्पर्धकों का, वह कौनसा ? सर्वघाति स्पर्धकों का उदय चल रहा है और कच्छी या अन्य भाषायें उनका देशघाति स्पर्धकों का उदय चल रहा है। देखो भैया बात ऐसी है जितने जीवों के परिणाम हैं, कर्म भी उतने ही हैं। ख्याल में आया ? हमें कच्छी नहीं आती है तो हमें कच्छी ज्ञानावरण कर्म का सर्वघाति स्पर्धकों का उदय चालू है। यह तो अवधिज्ञान जो है न, वह समझने में और समझाने में आसान है और मतिज्ञान, श्रुतज्ञान आदि में भी इसतरह से हम लगा सकते हैं ।

हम देशघाति प्रकृतियां देख रहे हैं। ज्ञानावरण में मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण ये चार देशघाति प्रकृतियां हैं। अब दर्शनावरण की बात चलेगी। चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण ये सारी कैसी हैं ? देशघाति प्रकृतियां हैं। इनमें दोनों ही प्रकार के स्पर्धक हैं। सम्यक् प्रकृति; देखो, सम्यक् प्रकृति भी देशघाति है। परंतु उसकी यह विशेषता है कि उसके सभी स्पर्धक देशघाति ही होते हैं, उसमें सर्वघाति स्पर्धक होते ही नहीं क्योंकि वह बंधनेवाली प्रकृति

नहीं है, मिथ्यात्व का अनुभाग अनंतगुणा हीन होकर वह तैयार हुयी है। संज्वलन चतुष्क और बाकी जो नौ नोकषाय हैं वे भी देशघाति प्रकृतियां हैं। आगे क्या बात बताते हैं ? ये दानांतराय, लाभांतराय, भोगांतराय, उपभोगांतराय और वीर्यांतराय आदि जो अंतराय कर्म के भेद हैं, ये सारी प्रकृतियां कैसी हैं ? देशघाति प्रकृतियां है। यह अगर हमारे ख्याल में आ जाये तो अभी आगे की बात समझने में आसान है। यह कौनसा ? क्षयोपशम भाव जो है, अभी हम फिर देखते हैं उसकी परिभाषा।

देखो क्वेश्चन नंबर ४८ पेज ३९, अभी यहां क्या कह रहे हैं ? **वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय।** अब यहां जो सर्वघाति स्पर्धक हैं, वह घातिकर्म की बात कर रहे हैं या अघातिकर्म की ? *श्रोता: घातिकर्म की।* घाति। अघाति में सर्वघाति होंगे या देशघाति होंगे ? *श्रोता: कोई भी नहीं होंगे।* हां साहब ? *श्रोता: अघाति में।* अघाति में ? अरे भाईसाहब पहले ही बताया घातिकर्मों के ही ये भेद हैं - सर्वघाति और देशघाति। अघाति तो घातते ही नहीं इसलिये उनका नाम अघाति है और इनका नाम घाति है क्योंकि पर्याय में वे प्रगटता नहीं होने देते। हां कोई बात नहीं, हम जानबूझ कर आपको आड़ा-टेढ़ा प्रश्न पूछेंगे ताकी आप यह दर्शनावरण कर्म बतायें न अभी, कौनसे ? निद्रा, निद्रा-निद्रा उससे अफेक्टेड न होवे, इसके लिये प्रश्न पूछते हैं।

अब यहां कह रहे हैं वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का। अभी यहां जो बात है, वह तो क्षयोपशम कराना है न, तो यहां जो सात प्रकृतियां हैं या पांच प्रकृतियां हैं, जो भी आपको लेना है; हम सात की लेंगे। कौनसे ? अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ और दर्शनमोहनीय की तीन। तो उनमें से छह प्रकृतियां सर्वघाति ही हैं। अनंतानुबंधी हमने देखा था न; वे चार, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व। बात ख्याल में आयी ? कहते हैं वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का। इससे हम वहां जायेंगे कहां ? अविरतसम्यक्त्व में, वह परिभाषा हमको अच्छी लगी क्योंकि हां, १०७ नंबर का पृष्ठ निकाले क्योंकि अभी यहां तो गुणस्थान की अपेक्षा से इसका वर्णन किया है न, वह इन जनरल बात बतायी है। यहां दो नंबर का जो पॉइंट है- **यदि जीव क्षयोपशमिक सम्यग्दृष्टि हो तो** क्या होगा ? **मिथ्यात्व** एक, **सम्यग्मिथ्यात्व** दो और **अनंतानुबंधी कषाय चतुष्क** इसतरह छह कर्म प्रकृतियों का क्या होगा वहां ? उदयाभावी क्षय होगा।

अब आगे क्या बताते हैं ? सर्वघाति स्पर्धकों का क्या हो रहा है वहां ? उदय का

अभाव हो रहा है यानी वे स्वरूप से उदय में नहीं आ रहे हैं। अभी देखो बात ऐसी होती है कि हमने कल देखा था यहां पर कि जो तीन टुकड़े सत्ता में हैं- उनमें से मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व का उदय नहीं होते हुये सम्यक् प्रकृति का उदय हो रहा है। बाकी दोनों एक समय पीछे हैं। तो वह उदयाभावी क्षय, उसका स्वरूप से उदय नहीं होने देते। तो उसको कहते हैं कि उदयाभावी क्षय है। उनका और क्या है ? भविष्यकाल में सदवस्थारूप उपशम यानी वे उदय में नहीं आवे ऐसी वहां व्यवस्था हो जाती है। उस समय उदय किसका है ? देशघाति सम्यक् प्रकृति दर्शनमोहनीय कर्म का उदय रहता है। अब ये जो हैं, कौनसे ? मिथ्यात्व और दूसरा सम्यग्मिथ्यात्व, इनका तो सदवस्थारूप उपशम किया है तो वे कभी भी किसी भी समय में उदय में आ जाये तो क्या होगा ? अगर सम्यग्मिथ्यात्व का उदय आ जाये तो जीव तीसरे गुणस्थान में चला जायेगा और मिथ्यात्वकर्म का उदय होगा तो मिथ्यात्व गुणस्थान में चला जायेगा क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्व और मिथ्यात्व एक समय ही तो पीछे हैं। सम्यक् प्रकृति का उदय जब तक चल रहा है तब तक उस जीव का क्षयोपशम सम्यक्त्व बना रहेगा। जो उसका रिस्पेक्टिव्ह गुणस्थान होगा चौथा, पांचवां जो भी होगा वह चालू रहेगा।

इसतरह से यहां कह रहे हैं कि **देशघाति सम्यक् प्रकृति दर्शनमोहनीय कर्म का उदय रहता है।** हां, भाईसाहब आपको अभी ख्याल में आया क्या कि और इसको देखना है ? बात समझ में आ रही है ? अभी देखो यहां तीन अवस्थायें बतायी न, एक तो उदयाभावी क्षय, दूसरी सदवस्थारूप उपशम और तीसरी उदय, यहां देशघाति स्पर्धकों का उदय चल रहा है। ये तीन बातें एक साथ हो रही हैं और इन तीनों ही अवस्थाओं को मिलकर उसको कह रहे हैं कि क्षयोपशम। आप हमको हां भी नहीं बोल रहे हो और ना भी नहीं बोल रहे हो तो मैं क्या करूं ? मैं आगे ही बढ़ूंगा।

अभी पेज नंबर १०८ पर हम आते हैं। वहां गोम्मटसार में जो परिभाषा दी गयी है, वह बताते हैं। देखो-देखो, यहां क्या कहते हैं ? जो परिणाम यानी जीव के बारे में बतला रहे हैं। **जो परिणाम सम्यग्दर्शन से सहित हो, परंतु इन्द्रिय-विषयों से और त्रस-स्थावर की हिंसा से अविरत हो।** कल हमने अविरत के कितने भेद देखे थे ? *श्रोता: बारह।* बारह, याद हैं न ? तो वहां उन्होंने क्लिअर कट दे दिया है। यहां इन्द्रिय विषयों में क्या लिया है ? मन का भी विषय लिया है क्योंकि पांच इन्द्रिय के जो विषय हैं और मन का जो विषय है इनसे वह जीव विरत हुआ नहीं है, अविरत है। उसीप्रकार

त्रस और स्थावर की हिंसा से वह जीव अविरत है। यानी जिसको इन्द्रियसंयम और प्राणीसंयम दोनों ही नहीं है, वह क्या है ? अविरत है, असंयमी है। **अर्थात् एकदेश या सर्वदेश किसी भी प्रकार के संयम से रहित हो।** यह एकदेश यानी क्या ? हमें समझने के लिये पार्शल संयम। पार्शल संयम किसको होता हैं ? तो कहते हैं, ये बारह जो अविरति हैं, उनमें से जो पंचम गुणस्थानवर्ती जीव हैं उनके कुछ होंगी, कुछ नहीं होंगी। इसलिये उसे एकदेश कहेंगे। दूसरी भाषा में उसको हम कहते हैं जो अणुव्रत धारण करते हैं, जो पांच अणुव्रत हैं न और साथ में वहां और भी शिक्षाव्रत और गुणव्रत टोटल बारह हैं। बारह व्रत होंगे। वह जो बात है, वह एकदेश यानी अभी हम बहुत ही स्थूलरूप से कहें तो जो पंचम गुणस्थानवर्ती जीव होते हैं, वे तो त्रस हिंसा से बचते हैं यानी त्रस हिंसा नहीं होगी ऐसी विशेष खबरदारी लेते हैं। पुरुषार्थपूर्वक सावधानी वर्तती है और उसके साथ उनके दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक जो वीतरागता है वह वीतरागता भी होती है।

अभी यहां क्या बात चल रही है ? कि एकदेश। यहां दूसरी कौनसी बात बता रहे हैं ? सर्वदेश। सर्वदेश यानी यह क्या कह रहे हैं ? जिन जीवों को सकलचारित्र की प्राप्ति हुयी है। अभी हमने जो देखी थी वह पंचम गुणस्थानवर्ती जीव के देशचारित्र की बात है। यह छठे-सातवें गुणस्थानवर्ती जो जीव हैं उनके सर्वदेश चारित्र है। यानी उनके देखो कितनी मज़ा है यह तो अभी अगले पांचवें गुणस्थान में हम विशेषरूप से खुलासा करेंगे। वह जीव जो है उनसे ना त्रस जीवों की हिंसा होगी क्योंकि पंचम गुणस्थान में ही त्रसहिंसा का त्याग हुआ है और दूसरी क्या बात है ? स्थावर जीवों की भी हिंसा नहीं होगी उनसे। इसलिये उनको क्या कहा ? सर्वदेश। जो एकदेश या सर्वदेश किसी भी प्रकार के संयम से रहित हो - यह अभी अपनी बात किसकी चल रही है ? हमने तो अभी एकदेश यानी पांचवें और सर्वदेश यानी छठे, सातवें की बात उठायी थी। यहां तो अभी चौथे गुणस्थान में ही अटके हुये हैं। रहना चाहते हो वहीं ?

फिर से, देखो-देखो, जो परिणाम सम्यग्दर्शन से सहित हो, अभी तक पहले गुणस्थान से तीसरे गुणस्थान तक सम्यग्दर्शन से रहित हो कहा था। अभी कह रहे हैं सहित हो। परंतु इन्द्रिय विषयों से और त्रस स्थावर की हिंसा से अविरत हो। इसका ही अर्थ उन्होंने क्या किया ? कि एकदेश या सर्वदेश, किसी भी प्रकार के संयम से रहित हो। देखो भाई यह किसने बताया ? सुरेशभाई ? यह जो, *श्रोता: धवला में।* धवला में

नहीं। हां, देखो न, पिछला पेज देखो न, १०७ नंबरवाला। **आचार्य श्री नेमिचन्द्र ने गोम्मटसार जीवकाण्ड गाथा २९ में अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान की परिभाषा निम्नानुसार दी है।** अभी आचार्यों की तो बात तुम मानोगे कि नहीं प्रवीणभाई ? यहां तो आचार्य बता रहे हैं और लोग पूछते हैं प्रूफ बताओ। प्रूफ बताओ, चौथे गुणस्थान में सम्यक्त्व होता ही नहीं है। अब क्या करें ? हम सर्वज्ञ की बात कह रहे हैं। वह बेचारे सर्वज्ञ को खोटा ठहरा रहे हैं, आचार्यों को, छठे-सातवें गुणस्थानवर्ती जीवों को भी, जो आचार्य पद में हैं, जिनके तीन कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ है ऐसी अंतरंग में वीतरागता है कि वे सत्य महाव्रत के धारी हैं ! ऐसा जीव झूठ लिखें, क्यों ? तो हम गुरु का अवर्णवाद कर रहे हैं, सर्वज्ञ का अवर्णवाद कर रहे हैं या अपने सर्वज्ञ स्वभाव की अवहेलना कर रहे हैं। भाई क्या होता है ? हम जगह-जगह पर जाते हैं और लोग तरह-तरह के प्रश्न पूछते हैं। अब क्या करें ? हमें तो आगम प्रमाण है। कोई व्यक्ति विशेष की बात होती है, सम्यग्दृष्टि की बात होती है, लेकिन उससे भी जो तीन कषाय के चौकड़ी के अभावपूर्वक जो बात बता रहे हैं, ऐसा जीव जो आगम के द्वारा बता रहे हैं, वह प्रमाण है। ख्याल में आया ?

यहां तो क्या कहा कि जो परिणाम सम्यग्दर्शन से सहित हो। बात ऐसी है कि यह जो प्राकृत भाषा है, उसमें नीचे दूसरे लाइन में **सम्माइट्ठी** लिखा है। **अविरदो** तो वह सम्यग्दृष्टि है लेकिन कैसा है ? अव्रती है। *श्रोता: अव्रती है।* बिलकुल अब हमें प्राकृत आती नहीं है और कोई उसका ट्रान्स्लेशन करे तो उसने कुछ अदला-बदल कर दिया होगा। अब क्या करें ? जिनकी संशय करने की ही वृत्ति है, किसी पर भरोसा ही नहीं रखना है, तो सर्वज्ञ पर कहां भरोसा करेंगे ? ख्याल में आया ? तो यहां क्या कह रहे हैं ? जो परिणाम सम्यग्दर्शन से सहित हो, परंतु इन्द्रिय विषयों से और त्रस-स्थावर की हिंसा से अविरत हो अर्थात् एकदेश या सर्वदेश किसी भी प्रकार के संयम से रहित हो, **उस परिणाम को अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान कहते हैं।** यह जीव के जो परिणाम हैं उसकी बात कर रहे हैं। यानी वह परिणाम कैसे हैं ? सम्यक्त्व सहित हैं, लेकिन उसके कोई व्रत नहीं है, इसके लिये उसको अव्रती कहा है। ख्याल में आया ?

देखो भैया, बात तो यह है कि यहां व्रतों का निषेध नहीं हो रहा है कि तुम कोई व्रत मत पालो, तुम कोई संयम मत रखो, तुम कुछ अविरति से छूटकर व्रत का एकदेश धारण मत करो या सर्वदेश धारण मत करो - ऐसी कोई बात नहीं है। यहां व्रतों का

विरोध या व्रतों का निषेध नहीं किया जा रहा है। लेकिन यहां बात तो यह है कि जो सम्यग्दृष्टि होते हैं, वे भी व्रत के धारक नहीं हैं यह बात पहले हमारे ज्ञान में रखो और हम जो शुभ परिणाम कर रहे हैं कौनसे ? अणुव्रत या महाव्रत धारण करने के, वे तो शुभभाव हैं और वे शुभबंध का ही कारण हैं। हमारी पहले में पहले कांक्षा कहो, इच्छा कहो या अभिलाषा कहो तो यह है कि हमें मुक्तता चाहिये। हमें अबंध अवस्था चाहिये। मुक्तता किससे चाहिये ? हमारे विभावभाव जो हैं, पर्यायों में जो विकृति है या कर्म का जो कुछ वहां उदय चल रहा है, कर्म का बंध है उससे अबंध अवस्था हमारी प्रकट हो, इसके लिये हमें शास्त्र का स्वाध्याय करना है। ना कि तुम व्रत पालते हो तो तुम खोटे हो; तुम महाव्रत पालते हो, तुम खोटे हो; सम्यग्दर्शन नहीं है तुमको। अरे भाई तेरे को दूसरे का क्या करना है ? तू तो अपना लोटा छानकर पानी पी। नहीं समझे आप ?

देखो क्या हो गया ? तीन मित्र थे। पहले के जमाने की बात है, आज की नहीं। तो एक गांव से दूसरे गांव जा रहे थे। तो जाते-जाते क्या हो गया ? बीच में जंगल था, घना जंगल था। तो क्या करें, क्या करें ? तो यहां-वहां घूमते-घूमते सामने एक मुनिराज बैठे थे। तप में लीन थे। तो मुनिराज के दर्शन करेंगे और उनसे कोई व्रत धारण कर हम आगे चलेंगे। बैठे, एक घंटा हो गया, दो घंटे हो गये, मुनिराज तो अपने में से बाहर आने की बात ही नहीं कर रहें। इतने में उनके ख्याल में आया होगा। तो बोले, बोलो वत्स, क्या चाहिये ? उन्होंने कहा साहब हमें कोई ऐसा व्रत देना। तो बोले, जाओ तुम जब भी जल पियोगे, पानी छानकर पीना। तो वे प्रमाण बोलकर वहां से निकले। थोड़े बहुत आगे गये होंगे, इतने में उनको प्यास लगी। तो एक ने वहां तो अरेंजमेंट थी सारी, कुअें से पानी निकाला और लोटे में छानकर पीने लगा। ऐ हाथ मत लगा, दूसरा बोला। क्यों ? मुनि महाराज ने मुझे आज्ञा दी है। बोला नहीं-नहीं, तीसरा बोला वे मेरी तरफ देखकर बोल रहे थे। क्या हो गया ? नहीं-नहीं, तुम दोनों ही नहीं पी सकते, मैं ही पिऊंगा- वह पहला बोला। चलो हम फिर मुनिराज के पास जाते हैं।

फिर वापस दो, चार, पांच माइल जो कुछ आना-जाना हुआ, वहां तक गये। फिर मुनिराज बोले क्या हो गया भाई ? तो बोले ऐसी-ऐसी बात हो गयी। मैंने प्रश्न पूछा था, आप इनकी तरफ देख रहे थे और हमें पता नहीं कि तुमने किसको प्रतिज्ञा दी है। मुनि महाराज भी क्या करें ! उन्होंने कहा कि तुम्हारे तीनों में से जो अधिक से अधिक मूर्ख होगा उसको मैंने यह प्रतिज्ञा दी है। पास में गांव है वहां गांववालों से पूछो कौन

अधिक मूर्ख है ? फिर उन्होंने हर एक ने अपनी-अपनी कथा सुनाई, वह मैं नहीं सुनाऊंगा। धर्मपरीक्षा नामक ग्रंथ में से पढ़ लेना। भैया तू पहले समझ न, तू भी जीव है, वह भी जीव है। तेरे को भी अबंध अवस्था चाहिये, उसे भी। तो बाजूवाला पानी कैसे पीता है, गरम करके पीता है या ठंडा पीता है या ठंडा गरम पीता है, कैसा पीता है, तुझे क्या करना है ? छना हुआ पीता है कि ऐसे ही पीता है। तू तेरी देख न ! यह बाजूवाला अणुव्रत पालता है कि यह महाव्रत पालता है कि यह क्या कर रहा है। अरे भाई तुझे क्या करना चाहिये वह नक्की कर ! हमें तो आगम के माध्यम से यह वस्तुस्वरूप नक्की करना है। मैंने पहले ही दिन बताया था कि हम गुणस्थान का अभ्यास करते हैं तो हमारी आंखों के सामने बिलकुल मोक्षमार्ग क्लिअर हो जाता है। ख्याल में आया ? लेकिन हम तो दूसरे को ही खींचने में, दूसरे को ही देखने में अटके बैठे हैं।

यहां क्या कह रहे ? देखो, यहां कहते हैं, जो जीव का परिणाम है उसको। कैसा परिणाम है ? उसकी अभी हमने चर्चा की है, उस परिणाम को अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान कहते हैं। **यहां चौथे गुणस्थान में सम्यक्त्व के घातक कर्मों का उपशम, क्षय अथवा क्षयोपशम हो गया।** तो उपशम की बात हमने देखी, क्षयोपशम की भी बात देखी। अब क्षय हो गया यानी क्या ? सम्यक्त्व के घातक कौन-कौनसे कर्म हैं ? इसको तो हम नक्की करें। हां, गणेशजी आप बतायेंगे सम्यक्त्व के घातक ? *श्रोता: मिथ्यात्व और सर्वघाति।* हां एक ही है मिथ्यात्व ? अभी तो नाम भी देखे थे हमने। मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सिर्फ चार रह गये हैं। *श्रोता: क्रोध, मान, माया, लोभ।* हां कौनसे ? संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ न ? नहीं तो, बोलो न कौनसे ? *श्रोता: अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ।* हां, अरे भाई सब जगह हमें चाबी थोड़ी लगानी पड़ती है, एक दफे गाड़ी को धक्का मिला तो फटाफट गाड़ी भागनी ही चाहिये। हां, बिलकुल अच्छा है। कोई बात नहीं, अभी तो तुम्हें हमारा तरीका मालूम नहीं है इसलिये आप अटकते हो। सीख जाओगे, अभी तो बहुत दिन हैं। क्या कहा ?

अभी हमने देखा छह प्रकृति कैसी हैं ? सर्वघाति हैं। वे क्या करती हैं ? कि सम्यक्त्व का घात करती हैं। देखो मिथ्यात्व का उदय आवे तो पहले गुणस्थान में जायेगा, सम्यक्त्व टूटेगा। सम्यग्मिथ्यात्व का उदय आयेगा, तो सम्यक्त्व टूटेगा और तीसरे गुणस्थान में जायेगा। यह अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया लोभ में से किसीका उदय आ जाये औपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव के, जो उपशम सम्यक्त्व के काल में है तो

वह सम्यक्त्व से गिरकर दूसरे गुणस्थान में चला जायेगा। यानी उसमें तो चारों आ गये न- अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ। ये छह कैसे हैं ? सम्यक्त्व के घातक हैं। यहां तो कुछ नहीं लिखा है। पर हमने सीखा है न भाई तो हमें ॲप्लिकेशन भी आना चाहिये न। देखो मैं बताता हूं। कोई विशेषता नहीं है, लेकिन मेरी बात मैं बताउंगा। नहीं बताउंगा तो आप समझेंगे कैसे।

आज तक मैंने कम से कम पचास बार लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका जाहिर में सबको सिखायी है। एक भाईसाहब मिले हमको। अरे क्या तुम ? लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका, वह इतनी छोटी ३०-३२ पेज की। वह तो मैंने दस मिनट में पढ़ डाली। लेकिन मैं केवल पहले पंद्रह क्वेश्चन आन्सर्स, पंद्रह कहो, अधिक से अधिक सत्रह-अट्ठारह कहो, तीस लेक्चर्स में सिखाता हूं और हमें जगह-जगह बुलाते हैं इसी के लिये। अभी यहां बैठे हैं वह बुलानेवाले लोग। क्यों साहब हाथ तो ऊपर उठाओ, ऐसा नहीं कहो कि भाई। वह भाईसाहब हैं हमारे सुभाषजी फलटणवाले। वह बहन कहां बैठी है ? हां वह सफ़ेद साड़ी में बहन बैठी है। यह सेलु गांव की है। उन्होंने अभी नवागढ़ में शिबिर रखा है हमारा। वहां तो ख़ास डिमांड है कि आप सिद्धान्त प्रवेशिका सिखाये। भाई, यह मेरी कोई महत्ता नहीं है, जिनेन्द्र भगवान के जो तत्त्व हैं, वह अगर हम सहीरूप से समझेंगे तो हमें अंदर से ऐसा उछाल आ जाता है कि ओहो क्या बात है ! यह हमें मालूम ही नहीं था आज तक !

देखो भैया, किसी व्यक्ति की महत्ता नहीं है क्योंकि हम जरूर जानते हैं कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता। मैं किसीको सिखा नहीं सकता और ना मेरे से कोई सीख सकता है। अगर ऐसा होता तो जिनेन्द्र भगवान के समवशरण में गये हुये प्रत्येक व्यक्ति को तो सम्यक्त्व उसी वक़्त होना ही चाहिये था। हम इस बात को भी अच्छी तरह से जानते हैं, यह जो भाषा निकल रही है वह मेरा कार्य नहीं है, वह तो भाषावर्गणा का कार्य है और यह भी जानते हैं कि जो जानता है वह बोलता नहीं है और जो बोलता है वह जानता नहीं है। ख्याल में आया ? क्या करें ?

अभी भी हम रागी-द्वेषी हैं, इसलिये राग आता है कि जो बात हमारी समझ में आयी है वह अन्य पात्र जीव भी समझें। ख्याल में आया ? हमारी तम्मन्ना यह है कि जिनके-जिनके नसीब में होगा वह आयेगा और जो नहीं आयेगा वह रहेगा। वह और

कोई अच्छा काम करता होगा। ख्याल में आया ? लेकिन यहां तो यह बात है कि हम रागी हैं अभी भी और हमें ऐसा राग आता है कि यह बात सबके पास पहुंचे। ऐसा राग जो जीव करता है कि विश्व के सारे जीवों को जैनदर्शन की प्राप्ति हो उसके तो तीर्थंकर गोत्र भी बंधता है। अरे जो मुनिराज हैं, छठे-सातवें गुणस्थान में झूलते हैं, उनका जो संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ जो बाकी है, वे भी अन्य को उपदेश देने का, शास्त्र लिखने का प्रमाद कर रहे हैं। ख्याल में आया ? और हम तो परिपूर्ण रागी हैं। हमें आत्मानुभूति भी नहीं है मान लो तो हमें राग नहीं आयेगा क्या कि हम दूसरे को समझायें ? लेकिन यह बात निश्चितरूप से पता है कि मैं किसीको समझा नहीं सकता।

यहां जो बात कह रहे हैं कि सम्यक्त्व के घातक कर्म कौनसे हैं वह तो हमने देखे। यह भी हमने देखा कि सम्यक्त्व के घातक कर्मों का या तो उपशम होगा तो वहां औपशमिक सम्यक्त्व होगा या तो उनका क्षय होगा तो क्षायिक सम्यक्त्व होगा। अथवा क्षयोपशम हो गया हो तो उसको क्षायोपशमिक सम्यक्त्व होगा। **अतः व्यवहार और निश्चय दोनों सम्यग्दर्शन प्रकट हो गये हैं।** तो एक प्रश्न तो निश्चितरूप से खड़ा होता है कि पहले व्यवहार सम्यग्दर्शन होगा या पहले निश्चय सम्यग्दर्शन होगा ? कविताबहन आप बताना ? अरे कविताबहन कितनी हैं ? और कोई है क्या कविता यहां ? तो वह चुप रहे। हां बोलो, आप बोले बिना हम आगे नहीं बढ़ेंगे, आपको उत्तर देना ही है। हां बोलो, बोलो। अभी पन्नालालजी को बोलूंगा तो वह फटाक से उत्तर देनेवाले हैं। बोलो साहब ? *श्रोता: व्यवहार सम्यग्दर्शन पहले होता है।* हां, व्यवहार सम्यग्दर्शन पहले होता है। यह आपके बाजू में बहन है, हां बोलो बहन ? व्यवहार सम्यग्दर्शन पहले होता है या निश्चय सम्यग्दर्शन पहले होता है ? अरे कुछ भी बोलो न। *श्रोता: व्यवहार सम्यग्दर्शन।* व्यवहार सम्यग्दर्शन। आप क्या कहना चाहती हैं ? *श्रोता: निश्चय सम्यग्दर्शन।* निश्चय सम्यग्दर्शन। अभी कोई होगा न युति सरकारवाला। *श्रोता: दोनों साथ में।* हां, दोनों साथ में। आप युति सरकारवाले हो क्योंकि पॉसिबिलिटी तो तीन ही हैं न !

देखो भैया, निश्चय और व्यवहार दोनों की उत्पत्ति एक साथ होती है। अगर आपको ऐसा मानना है कि व्यवहार यानी राग करते-करते वीतरागता हो जाये तो बात बिलकुल झूठ है। ख्याल में आया बहन ? यहां तो कहते हैं लहसन खाते-खाते केसर का डकार आयेगा कि नहीं ? गुरुदेवश्री कस्तूरी का डकार कहते थे लेकिन कस्तूरी लोग समझते नहीं हैं, क्या कहा ? राग जो है वह तो विभावभाव है, अपना स्वभाव नहीं

है और विभावभाव करते-करते स्वभाव को हम कॅप्चर करें, यह बात कहां से आयी ? ख्याल में आया ? तो बात क्या होती है यह जो जीव के सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के प्रति का राग है, उस राग को व्यवहार सम्यग्दर्शन तब कहेंगे कि जब उसके निश्चय सम्यग्दर्शन होगा। जिसके निश्चय सम्यग्दर्शन नहीं है, सिर्फ सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के प्रति राग है, वह तो व्यवहाराभास है। कड़क है भाई बात, पचा सकते हैं तो पचाना। हमारे जो पं. बाबूभाई मेहता थे न, ये सामने उनकी फोटो कहां है ? इधर-इधर, वह हमको यह समझाते थे। यह तो बात गुरुदेवश्री की है लेकिन वह हमको समझाते थे, 'आजे मानो काले मानो, आ मान्या वगर छुटको नथी।' यानी यह आप आज मानो या कल मानो, इस बात को सहीरूप से माने बिना तुम्हारा बेड़ा पार नहीं होनेवाला है। क्यों ?

देखो-देखो, क्या बात हुयी ? मैं अभी यह नहीं कह रहा, हमें तो स्टोरी बताने को आती है। क्या करें ? एक इसके जैसे छोटी लड़की मेरे पास आयी। पंडितजी-पंडितजी हम तो आपके प्रवचन में बैठते हैं। बहुत शुक्रिया साहब आप बैठते हो। तो मेरा एक काम है। मैंने कहा हां क्या है ? बोलो-बोलो, आपको मेरे साथ चलना है। मैंने पूछा कहां जाना है ? आप चलो तो सही। अब क्या करें ? छोटे बच्चों का तो बालहट होता है तो गये। तो एक घर में ले गयी हमको। बोली यह जो है न यह मेरे ससुर हैं, वह जो वहां रसोईघर में है वह मेरी सास है। वह अभी बाहर आयी न, वह मेरी ननद है, यह जो हैं न यह मेरे देवर हैं। यह-यह हैं, मैंने कहा सब ठीक है बेटा, परंतु तेरा होनेवाला पति कौन है ? अरे वह किसने नक्की किया है ? जब पति ही नहीं तो सास, ससुर, ननद, देवर जो कुछ होते हैं, जेठानी- बेठानी जो भी हो, होगी कि नहीं ? जिस समय पति को निश्चित किया तो उसके रिलेटिव्हज्, इसके रिलेटिव्हज् हो गये। जहां निश्चय है वहीं व्यवहार होता है और व्यवहार करते-करते निश्चय होगा यह बात तीन काल में नहीं हो सकती है। ख्याल में आया ?

सुरेशभाई, आपके घर में चाय का डब्बा है कि नहीं ? क्या शक्कर का डब्बा है, क्या है ? बोलो, बोलो ? दोनों हैं। आपने कभी देखा है शक्कर का डब्बा ? जिस डब्बे में शक्कर रखी है वह शक्कर का डब्बा कहलाता है और अगर वह शक्कर निकाल दो, तो क्या उसको बोलेंगे शक्कर का डब्बा ? वह तो डब्बा हो गया। यानी जब उसमें शक्कर है तो उस डब्बे को भी शक्कर का डब्बा कहेंगे। स्टील के डब्बे को स्टील का डब्बा कहना यह है निश्चय कथन और उस डब्बे में शक्कर रखी है इसलिये

उसी डब्बे को शक्कर का डब्बा कहना यह है व्यवहार कथन।

बात यह है कि हम यहां देख रहे हैं कि निश्चय सम्यग्दर्शन यानी जो स्वानुभूति है, आत्मानुभूति है, वह निश्चय सम्यग्दर्शन और उस सम्यग्दर्शन के साथ, अभी तो जीव ने एक कषाय चौकड़ी का अभाव किया हुआ है और उसके अभी तीन कषाय चौकड़ी है तो वह जो तीन कषाय चौकड़ी हैं, उसके कारण उसको राग-द्वेष के परिणाम चल रहे हैं। यहां तो शुभराग के जो परिणाम हैं, सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के प्रति जो आदर भाव है, वह तो चारित्र गुण की पर्याय है, उसको उपचार से सम्यग्दर्शन कहा। ख्याल में आया ? सुभाषभाई। चारित्र गुण की पर्याय है, किसके ? सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का आदर करना, उनकी पूजन करना, मतलब जो कुछ अहोभाव है उनके प्रति, वह चारित्र गुण की पर्याय है उसको सम्यग्दर्शन कहा है। बोलो, यह भी उपचार की बात है कि नहीं ? जिन्होंने बताया कि व्यवहार सम्यग्दर्शन पहले होता है, ऐसा कभी नहीं होगा। कुछ लोग कहते हैं कि चौथे, पांचवें गुणस्थान में शुद्धोपयोगपूर्वक आत्मानुभूति होती ही नहीं, वह तो सातवें में होती है। उनका यह कथन आगम से विरुद्ध है।

अब आगे बढ़ते हैं। हम पेज नंबर १०८ में दूसरे पॅरेग्राफ की दूसरी लाइन पढ़ रहे हैं। **अतः व्यवहार और निश्चय दोनों सम्यग्दर्शन प्रकट हो गये हैं।** नहीं तो ऐसे कहते न, पहले तो व्यवहार सम्यग्दर्शन था, अभी निश्चय प्रकट हो गया या पहले हो गया, बाद में व्यवहार हो गया - ऐसा होगा ही नहीं क्योंकि कोई भी जीव पहले गुणस्थान से अधिक से अधिक ऊपर के गुणस्थान में जायेगा, तो कौनसे चौदहवें में जायेगा कि तेरहवें में ? अरे हम पूछ रहे हैं कोई मिथ्यादृष्टि जीव अगर आत्मानुभूति करे, तो तेरहवें गुणस्थान में ऊपर जायेगा कि चौदहवें में, ऐसा मेरा प्रश्न था। हां, बोलो, बोलो, डर रहे हैं आप। *श्रोता: सातवें में जायेगा।* सातवें में जायेगा। ऊपर में ऊपर सातवें में जायेगा तो सातवें में गया हुआ जीव है उसके संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ बाकी है कि नहीं ? तो उस जीव के २८ मूलगुण पालन करने के जो परिणाम हैं, सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के प्रति जो अहोभाव है, उसको वहां व्यवहार सम्यग्दर्शन कहेंगे। ख्याल में आया ? और चौथेवाले को ? उसके कोई व्रत ही नहीं हैं, उसके तो कोई संयम ही नहीं है। तो उसके जो सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के प्रति जो राग भाव है, उसको ही हम व्यवहार सम्यग्दर्शन कहेंगे। यानी भूमिका अनुसार उसका-उसका व्यवहार सम्यग्दर्शन जुदा-जुदा होगा। मूल में तो देव-गुरु-शास्त्र के प्रति भाव, कौनसा ?

अहोभाव तो होगा ही होगा। तो यहां कह रहे हैं दोनों का प्रारंभ एक साथ होता है, दोनों एकसाथ प्रकट हो जाते हैं।

अभी यहां कह रहे हैं मोक्षमार्ग का प्रारंभ वगैरह-वगैरह उसको छोड़ देते हैं हम। अभी एक और विशेषता बता रहे हैं नीचे के पॅरेग्राफ में। **चौथे गुणस्थान से ही तीर्थंकर नामकर्म का बंध प्रारंभ होता है।** यानी यह तीर्थंकर प्रकृति जो बंधती है, वह नामकर्म की जो ९३ प्रकृतियां हैं, उनमें से एक है। वह कौनसी है ? तीर्थंकर प्रकृति। तीर्थंकर नामकर्म का जो बंध होता है, वह चौथे गुणस्थान से चालू होता है और वह कब तक बंधता है ? बहन आप जानती हैं ? आपके आगेवाली बहन जानती है।आप जानती हैं बहन ? नहीं, यहां पर कोई जाने ? आपकी बाजूवाली, हां बोलो-बोलो तीर्थंकर प्रकृति का बंध कौनसे गुणस्थान तक होता है ? नहीं जानती ? बोलो बहन। *श्रोताः आठवें गुणस्थान तक उसका बंध होता है।* हां, आठवें गुणस्थान तक उसका बंध होता है। देखो, अभी यहां एक और विशेष बात आप ध्यान में रखना, अभी यह आठवां गुणस्थान है वह द्रव्यानुयोग की अपेक्षा से शुद्धोपयोग का गुणस्थान है कि नहीं ? फिर भी वहां बंध हो रहा है ? मैं क्या कहना चाहता हूं, समझ में आया ? नहीं समझ में आया ? मैं समझ गया इसलिये तो मैंने विषय उठाया।

देखो, दसवें गुणस्थान के अंत तक शुभभाव या शुभराग, जिसको सूक्ष्मलोभ कहते हैं, उसकी विद्यमानता है और वह सूक्ष्मलोभ से दुबारा मोहनीयकर्म नहीं बंधता है, आयु भी तो सातवें गुणस्थान के ऊपर नहीं बंधती है। फिर भी वहां ज्ञानावरण आदि बाकी छह कर्म बंधते हैं यानी चौथे गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक आस्रव, बंध, संवर और निर्जरा - चारों ही चल रहे हैं। रामदेवजी, अगर ऐसा नहीं मानेंगे तो चौथे गुणस्थान में जब वह जीव जायेगा, शुद्धोपयोग में है, आत्मानुभूति कर रहा है, उस समय उसको बंध ही नहीं हो रहा है ? तो उतने टाइम के लिये वह मुक्त हो गया, क्यों ? ऐसा नहीं है। सातवें गुणस्थान में भी, आठवें गुणस्थान में भी भले ही वे शुद्धोपयोग के गुणस्थान हैं, लेकिन वहां अबुद्धिपूर्वक राग चल रहा है। अबुद्धिपूर्वक यानी क्या ? हां, जानबूझकर नहीं। यह तो गुजराती शब्द है 'जाणी जोईने' नहीं-नहीं, नॉट एट ऑल। हां,

तो कहते हैं जो राग कर रहा है, उसको भी पता नहीं लगे कि मेरे में ऐसे राग-द्वेष के परिणाम हो रहे हैं। अभी हम राग की बात करते हैं, द्वेष को छोड़ देते हैं।

उसको भी पता नहीं लगे और अन्य को भी पता नहीं लगे। अभी मान लो यहां से कोई उठ खड़ा हो और कुछ बकवास चालू किया तो मैंने कहा चुप बैठ, नीचे बैठ। तो मुझे गुस्सा आया। तो मैंने भी जाना और आपने भी जाना। वह तो बुद्धिपूर्वक कहलायेगा। अबुद्धिपूर्वक यानी वह जानने में ही नहीं आता है। किसके ? तुम्हारे, हमारे। केवली जानेंगे कि नहीं ? एक भाईसाहब ऐसे उठ खड़े हुये, बोले अबुद्धिपूर्वक का हमें कोई उदाहरण तो बताओ। अरे अबुद्धिपूर्वक का उदाहरण देंगे तो वह बुद्धिपूर्वक हो जायेगा। ख्याल में आया ? वह अबुद्धिपूर्वक राग यह शुद्धोपयोग की अवस्था में सातवें, आठवें, नौवें, दसवें गुणस्थान तक चलता है और वहां बंध होता है। इसलिये यहां कहने में आ रहा है, तीर्थंकर प्रकृति का बंध आठवें गुणस्थान तक चलता है। हमको लगता है यह कैसी कॉन्ट्रव्हर्सीयल बात चल रही है। नहीं, यह तो सूक्ष्मता से जो जिनेन्द्र भगवान के ज्ञान में बातें आयी हैं, और जो उन्होंने बतायी हैं उसका यहां विवरण हो रहा है।

चलो आगे बढ़ते हैं। **तीर्थंकर नामकर्म के बंध का कार्य कोई जीव निश्चय सम्यग्दर्शन के अभाव में कैसे कर सकता है ?** वह उन्होंने जो बताया, हमने देख लिया। अभी नीचे आते हैं। **अविरति का स्पष्टीकरण। पंचेन्द्रिय और मन के विषयों में प्रवृत्ति और षट्कायिक जीवों की हिंसा से अविरति- ये अविरति के बारह भेद हैं।** हम अपनी भाषा में समझेंगे तो इनको यह कहना है कि पांच इन्द्रिय और मन इनके जो विषय हैं, इन विषयों से यह जीव हट नहीं सकता है। वह उस विषय में बारंबार जाता है। और क्या है ? षट्कायिक जीवों की हिंसा। षट्कायिक में कल हमने देखा था- पांच स्थावर और एक त्रस - इनकी हिंसा से वह बचता नहीं। वह चाहता नहीं कि मैं उनको मारूं, लेकिन वह सहजरूप से उसके हाथ से वह अपराध होता है। इसलिये कहते हैं उनके यह बारह बातें हैं न, वह अविरति में आती हैं। यह अविरति के बारह भेद हैं। **उपर्युक्त अविरति का किंचित भी त्याग इन जीवों को नहीं होता; परंतु अविरति में प्रवृत्ति हेयबुद्धि से रहती है तथा आगम अनुसार सदाचार तो अवश्य होता ही है।** देखो हम देखते हैं जो चक्रवर्ती होते हैं, वे तो नियम से सम्यग्दृष्टि ही होते हैं। सम्यग्दर्शन के बिना किसीको चक्रवर्ती पद भी नहीं मिलता है।

श्रोता: कुछ चक्रवर्ती नरक में भी गये हैं न ? तो बाद में नहीं गिर सकेगा क्या ? ख्याल में आया ? ऐसा मत समझना कि एक दफे हमारे हाथ में सम्यग्दर्शन आया तो हम केवलज्ञान तुरंत प्राप्त करेंगे। अरे कल आप नहीं थे, यहां हमने देखा था कि कोई

भी जीव उपशम सम्यक्त्व प्राप्त करे अधिक से अधिक बार, तो कहते हैं कि असंख्यात बार प्राप्त करता है। तो कितनी बार गिरा ? *श्रोता: असंख्यात बार।* असंख्यात बार। एक कम करो न फिर भी असंख्यात है। देखो, क्या प्रश्न है साहब ? *श्रोता: सभी चक्रवर्तियों को क्षायिक सम्यग्दर्शन नहीं होता ?* नॉट नेसिसरलि। हां, अब क्या कह रहे हैं ? देखो, मैं यह कह रहा था कि जो चक्रवर्ती होते हैं उनके नियम से छियानवें हजार रानियां होती हैं, नौ रत्न होते हैं, इतना सैन्य होता है, वह सब आप जानते हैं। फिर भी उसमें कतई उनको मेरापन नहीं है। यहां क्या कहा ? देखो, यह कहते हैं अविरति में प्रवृत्ति हेयबुद्धि से रहती है और आगम के अनुसार सदाचार तो अवश्य होता है। हमको तो लगता है अरे इतना वैभव, षट्खंड का आधिपत्य और वह कब आत्मा का अनुभव करता होगा ? अरे आत्मा का अनुभव तो छोड़ो क्षायिक सम्यक्त्वी भी हो सकता है वह। है न ! अब आगे-

स्पर्शन आदि पांच इन्द्रियों के विषय-स्पर्श, रस, गंध, वर्ण और शब्दों में प्रवृत्त होना तथा यश, प्रसिद्धि आदि पापरूप विकल्पों में मन से प्रवृत्ति करना; यह यश, प्रसिद्धि आदि पापरूप विकल्प सम्यग्दृष्टि के होंगे कि नहीं ? यहां तो हां पाड़ते हैं। हां कह रहे, आपको मालूम है ऐसा कोई यश के लिये किसीने कुछ प्रयत्न किया हो ? नहीं मालूम। मैं यह पूछ रहा हूं यहां क्या लिखा है ? कि यहां कह रहे कि यश प्रसिद्धि आदि पापरूप विकल्पों में मन से प्रवृत्ति करना, ऐसा कोई पहचानवाला है आपके ? हां जी ? अरे ! *श्रोता: भरत चक्रवर्ती।* भरत चक्रवर्ती। चक्रवर्ती अपना नाम लिखने के लिये गये वृषभाचल पर्वत पर, तो कहीं जगह ही नहीं मिली। नाराज हो गये कि मैं इतना महान और मेरा ही नाम लिखने को जगह नहीं। यह भूल गये कि उनके पहले अनंत चक्रवर्ती हो गये। ख्याल में आया ? तो उनकी प्रसिद्धि की प्रवृत्ति थी कि नहीं ? वह कैसी है ? पापरूप है और हम तो पांच रुपया देते हैं और फर्श पर नाम लिखवाते हैं। जाओ-जाओ आप हमारे शिखरजी में जाओ। एक रुपया दान दिया, पांच रुपया दान दिया तो लोग उसके ऊपर पैर रखकर आगे जाते हैं। उस ज़माने में रुपया भी बहुत कीमती था। आज के तारीख में भले ही उसकी कोई कीमत ना हो लेकिन प्रसिद्धि की चाह, उसको क्या कहा ? पापरूप प्रवृत्ति।

कह रहे हैं देखो-देखो, यहां कह रहे हैं कि **प्रसिद्धि आदि पापरूप विकल्पों में मन से प्रवृत्ति करना; इसे इन्द्रियों और मन के विषयों में प्रवृत्ति कहते हैं। यह**

पांच प्रकार की इन्द्रियों और मन से संबंधित छह भेदरूप अविरति हो गयी। अविरत सम्यग्दृष्टि के जीवन में इसप्रकार छह प्रकार की अविरति तो पूर्व संस्कारवश हेयबुद्धि से रहती है। पृथ्वीकायिक, जलकायिक, तेजकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीवों को पांच स्थावरकाय कहते हैं अर्थात् एकेन्द्रिय जीवों को स्थावर कहते हैं। द्वीन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यंत के सर्व जीवों को त्रस कहते हैं। पांच स्थावरकाय और एक त्रसकाय- इस प्रकार षट्काय जीव हैं। सम्यग्दृष्टि जीव इन छह काय जीवों की हिंसा को न चाहते हुये भी उनकी हिंसा से पूर्व संस्कारवश एवं अपनी कमजोरी के कारण विरत नहीं है। यह पूर्व संस्कारवश तो उपचार से कहेंगे, लेकिन मूल बात क्या है ? कि अपनी कमजोरी। अपनी कमजोरी का अर्थ क्या है ? कि अपने स्वरूप में लीनता नहीं धारण करना वही उसकी कमजोरी है। हां, क्या कह रहे हैं ? यहां तो अपनी कमजोरी के कारण विरत नहीं है यानी स्वरूप में लीनता नहीं है इसलिये बाह्य में आता है और फिर वह ऐसा कोई कार्य करता है।

इसतरह सम्यग्दृष्टि जीव इन्द्रिय असंयम और प्राणी असंयम के कारण अविरत है। इस अविरति में अप्रत्याख्यानावरण कषाय कर्म का उदय भी निमित्तरूप से **रहता है। देखो परिणामों की विचित्रता ! सम्यग्दर्शन हो गया, बीच-बीच में यथायोग्य कालावधि व्यतीत होने पर आत्मानुभव भी होता है। गृहीत तथा अगृहीत मिथ्यात्व का अभाव तो हो ही गया है। अनंतानुबंधी कषाय चौकड़ी के अनुदयपूर्वक आंशिक वीतरागता प्रकट हो गयी है। जीवन अन्याय, अनीति और अभक्ष्य से रहित है। अनंत संसार को सांत** यानी **सीमित किया है; तथापि बारह प्रकार की अविरति होते हुये भी मोक्ष की साधना करनेवाला साधक के पुरुषार्थ की कमी से यह जीव।** यह क्या कहा ? पुरुषार्थ की कमी से, यह कौनसा पुरुषार्थ है ? स्वरूप में एकाग्र होने का, स्थिर होने का, रममाण होने का पुरुषार्थ है, उसकी कमी से **यह जीव इन्द्रियसंयम और प्राणीसंयम के अभाव के कारण अविरत ही है।**

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

१५. अविरतसम्यक्त्व – विशेषता, सम्यक्त्व के काल

अभी भी हम चौथे गुणस्थान के बारे में ही जानने की कोशिश करेंगे क्योंकि यह तो ऐसा महत्वपूर्ण गुणस्थान है कि वह प्राप्त होते ही इस जीव के संसार का किनारा नजदीक आ गया है इसका कन्फर्मेशन होता है। यानी क्या कहना चाहते हैं ? कोई अगर एक बार सम्यक्त्व प्राप्त करेगा तो उसका अभी संसार में रहना अर्धपुद्गलपरावर्तन से अधिक नहीं हो सकता। यानी क्या है ? सबको इतना लंबा काल रहना पड़ता है ऐसा थोड़े ही है ? कहीं तो ऐसा होता है, आपको शायद मालूम भी होगा कि जो निगोद में पड़ा हुआ बादर निगोदिया जीव है, वह वहां से निकलकर मनुष्यपर्याय में आयेगा, सम्यक्त्व प्राप्त करेगा और उसी भव में मोक्ष की प्राप्ति करेगा। ख्याल में आया ? यानी यह बात जरूरी नहीं है कि भाई आज सम्यक्त्व प्राप्त किया तो उसको अर्धपुद्गलपरावर्तन रुकना पड़े। ऐसी कतई आवश्यकता है नहीं।

लेकिन एक बात तो निश्चित है कि चौथे गुणस्थान की प्राप्ति हो जाये तो जैसा मान लो न कि अभी हम तो कृतकृत्य हो गये। वास्तविक नहीं है, अभी आगे मैदान तो दूर है लेकिन एक बात नक्की हो गयी कि वह जीव भव्य है इसका डिमार्केशन हो गया। इसलिये उस गुणस्थान को हम जितना डिटेल में जानेंगे, उतना वह हमारे लिये फायदेमंद है क्योंकि नहीं तो कुछ लोग गलतफहमी में रहते हैं कि हमें सम्यक्त्व हो गया है। तो ऐसी गलतफहमी न रहे। अभी एक प्रश्न आया है और जिस भाईसाहब ने प्रश्न पूछा है वे अभी गैरहाजिर हैं। आ गये, आ गये। सौ साल की उम्र रहेगी आपको, गैरहाजिर रहने के लिये नहीं, जल्दी आने के लिये। यह उसीका उत्तर हम देखेंगे क्योंकि आप अकेले नहीं, आपके साथ और कोई था। आने दो, मुझे बता देना, मैं बता दूंगा उत्तर। मुझे लगता है कि उस प्रश्न के बारे में हमने थोड़ा बहुत विवेचन किया था। अब प्रश्न पूछने से आपको ख्याल में आयेगा कि इस बात को हमने देखा था कि नहीं।

उसके पहले अभी हम देखेंगे, ११० नंबर के पृष्ठ पर आते हैं। गोम्मटसार में दूसरी अन्य गाथा में भी सम्यक्त्व के बारे में लिखा है, अलग तरीके से; अर्थ तो एक ही है। यहां कह रहे हैं **अप्रत्याख्यानावरण कषाय कर्म के उदय से असंयत होने पर भी।** असंयत कहो या अविरत कहो अर्थ तो एक ही है। लेकिन वहां कौनसे कर्म का उदय है ? *श्रोता: अप्रत्याख्यानावरण।* अप्रत्याख्यानावरण और किसका वहां अनुदय

है ? हां बहन आप बतायेंगी ? कौनसे कर्म का अनुदय है ? *श्रोता: अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ।* अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ। यहां कह रहे हैं कि वह तो है नहीं लेकिन किसका उदय है ? अप्रत्याख्यानावरण कषाय कर्म के उदय से। उसके उदय के कारण क्या हो गया है ? जीव अभी भी असंयत है। लेकिन एक बात हमें ध्यान में रखनी चाहिये कि अप्रत्याख्यानावरण कषाय कर्म का उदय है तो साथ में प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन का भी उदय चालू है। कह रहे हैं अप्रत्याख्यानावरण कषाय कर्म के उदय से असंयत होने पर भी, यह तो निमित्त का कथन है कि कर्मों ने उनको असंयत बनाया है। वे असंयत बने तो अपने परिणाम से लेकिन वहां जो कार्य हो रहा है, उसमें निमित्त की भी बात छेड़ी है। क्या कहते हैं ? **पांच, छह या सात** यानी **अनंतानुबंधी की चार और दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृतियों के** यह पांच, छह और सात उसका बहुत बार एक्स्प्लनेशन हुआ है। क्या कहते हैं इन प्रकृतियों के **उपशम, क्षय, क्षयोपशम की दशा में होनेवाले जीव के औपशमिक, क्षायिक** और **क्षायोपशमिक भावों को अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान कहते हैं।**

देखो एक बात बिलकुल हमें ख्याल में रखनी चाहिये- किसी भी जीव को, चौथे गुणस्थान में अभी हम बात करे रहे हैं न, तो एक साथ कितने सम्यक्त्व हो सकते हैं बहन ? हां बोलो ? *श्रोता: एक ही औपशमिक सम्यक्त्व।* एक ही औपशमिक सम्यक्त्व। आप क्या कहती हैं बहन ? *श्रोता: एक ही सम्यक्त्व एक समय में।* हां, जो पहली बार सम्यक्त्व प्राप्त करेगा उसको तो तीन में से औपशमिक सम्यक्त्व होगा। लेकिन हमने पहली बार नहीं पूछा है। चौथे गुणस्थान में एक ही होगा; एक साथ दो नहीं होंगे, एक साथ तीन नहीं होंगे। या तो औपशमिक होगा या तो क्षायोपशमिक होगा या तो क्षायिक होगा। यहां क्या कह रहे हैं ? कि औपशमिक, क्षायिक तथा क्षायोपशमिक भावों को। वह भाव यानी उसतरह के उनके सम्यक्त्व भी है तो वह होता है अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान। अब यहां थोड़ासा हम रॅपिडलि चलेंगे।

सम्यक्त्व अपेक्षा विचार - नीचे। **चौथे अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान में नाना जीवों की अपेक्षा से**। एक यह जीव की बात नहीं चल रही है, अनेक जीव, नाना जीव यानी अनेक जीव। अनेक जीवों की अपेक्षा से **औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक- ये तीनों सम्यक्त्व रह सकते हैं। एक जीव को एक समय में एक ही सम्यक्त्व रहता है।** यह बिलकुल मर्म की बात ध्यान में रखना। **तीनों सम्यक्त्वों में**

यथार्थ श्रद्धारूप धर्म की अपेक्षा से समानता होने पर भी अन्य अपेक्षाओं से असमानता भी है। यानी जो तीन अलग-अलग सम्यक्त्व हैं उनमें समानता भी है और असमानता भी है। तो समानता किस अपेक्षा से है वह बात पहले बताते हैं। **तीनों ही सम्यक्त्वी के नवीन कर्मों के बंध की अपेक्षा से समानता है;** यानी क्या कहना चाहते हैं ? **तीनों ही सम्यक्त्वी** हैं उनका अगर बंध होता हो तो उनमें से **४१ प्रकृतियों का बंध नहीं होता।** अभी इसके डिटेल में जायेंगे तो काफी उलझने पैदा होंगी क्योंकि अपना विषय तो गुणस्थानों को समझना है। इतना ध्यान रखना कि पहले गुणस्थान में १६ कर्मों के बंध की व्युच्छित्ति होती है और दूसरे गुणस्थान में २५ कर्मों के बंध की व्युच्छित्ति होती है। जीव पहले गुणस्थान से डायरेक्ट चौथे में जायेगा तो ४१ प्रकृतियों का बंध वहां नहीं होगा। यह कौनसे सम्यक्त्व के बारे में कह रहे हैं ? तीनों ही सम्यक्त्व के बारे में। और क्या कहते हैं ? तीनों ही सम्यक्त्वी चतुर्थ गुणस्थानवर्ती ही हैं यानी यह क्या बताना चाहते हैं कि चौथे गुणस्थान में, औपशमिक, क्षायोपशमिक या क्षायिक सम्यक्त्व, तीनों भी हो सकते हैं, अलग-अलग जीवों की अपेक्षा से कह रहे हैं।

अब उसमें क्या कहते हैं ? अभी असमानता की बात करेंगे। पहले क्षायिक सम्यक्त्व की बात कहते हैं। कह रहे हैं कि **क्षायिक सम्यक्त्व के पहले दो बार त्रिकरण परिणाम होते हैं।** यानी किसीको क्षायिक सम्यक्त्व होना है तो वहां दो बार त्रिकरण होते हैं। त्रिकरण यानी क्या है ? हां बहन ? अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण तीन करण हैं न ? तो त्रिकरण परिणाम ये जीवों के परिणाम हैं। कह रहे हैं कि दो बार होते हैं। **प्रथम त्रिकरण परिणाम द्वारा अनंतानुबंधी चतुष्क की विसंयोजना होती है।** अभी यह विसंयोजना होती है इस बात को हमें देखना है तो हम थोड़ासा प्रश्नोत्तरी में जायेंगे। वहां हम उसको देखेंगे कि विसंयोजना किसको कहते हैं। हां, प्रश्न क्रमांक ७४ और पृष्ठ है ४४। **विसंयोजना किसे कहते हैं ?** कह रहे हैं **अनंतानुबंधी चतुष्क के** यानी अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ के; क्या है उनके बारे में ? वे **अप्रत्याख्यानावरण** आदि **बारह कषाय और हास्यादि नोकषायरूप परिणमित होने को विसंयोजना कहते हैं।** यानी उनकी सत्ता वहां से खतम हो जाती है और वह अन्यरूप से संक्रमित हो जाते हैं उसको यहां कहेंगे विसंयोजना।

अभी हम दुबारा अपने पृष्ठ पर आते हैं। कहां पर थे हम ? पेज नंबर ११०, यह आखिर में जो एक पॉइंट लिखा है क्षायिक सम्यक्त्व के बारे में वहां तक हम आये थे।

फिर से, क्षायिक सम्यक्त्व के पहले दो बार त्रिकरण परिणाम होते हैं। **प्रथम त्रिकरण परिणाम द्वारा**, पहले जो तीन करण मांडे थे न करणलब्धि के, **उसमें अनंतानुबंधी चतुष्क की विसंयोजना होती है।** यानी वहां वे कर्म अन्य कर्मरूप हो जाते हैं और क्या है ? **फिर दर्शनमोहनीय के नाश के लिये त्रिकरण परिणाम होता है। जबकि औपशमिक सम्यक्त्व के लिये एक बार ही त्रिकरण परिणाम आवश्यक है।** अभी यह तुलना चल रही है और उसमें असमानता बता रहे हैं। क्षायिक सम्यक्त्व और औपशमिक सम्यक्त्व में असमानता क्या है ? तो औपशमिक सम्यक्त्व में एक बार त्रिकरण परिणाम करने पड़ते हैं और क्षायिक सम्यक्त्व के लिये दो बार करने पड़ते हैं।

अब पेज नंबर १११ पर। **औपशमिक सम्यक्त्वी के सम्यक्त्व विरोधी सातों प्रकृतियों की सत्ता बनी रहती है**, **एवं काल भी अंतर्मुहूर्त है।** औपशमिक सम्यक्त्व का काल कितना है ? तो कहते हैं अंतर्मुहूर्त ही है और वहां कर्मों का अनुदय है, कर्म उदय में नहीं आ रहे हैं लेकिन सत्ता में पड़े हैं और उसके साथ-साथ क्या कहते हैं ? क्षायिक सम्यक्त्वी का जो सम्यक्त्व है उसके विरोधी जो सात प्रकृतियां हैं, उनकी सत्ता ही नहीं है, वह सत्ता नष्ट हो गयी है और क्षायिक सम्यक्त्व का **काल सादिअनंत है।** यह सादिअनंत क्या है ? इसके बारे में हमने पहले देख लिया है। अगर किसीको याद नहीं आता हो तो बोलना, हम उसको रिपीट करेंगे। तो यहां कहते हैं कि औपशमिक सम्यक्त्व का काल एक अंतर्मुहूर्त है और क्षायिक सम्यक्त्व का काल सादिअनंत है।

तीसरा पॉइंट- **क्षायिक सम्यग्दृष्टि समय-समय प्रति गुणश्रेणी निर्जरा करता है।** यानी क्या है ? कि हर समय में गुणित प्रमाण में; गुणश्रेणी का अर्थ क्या है ? गुणित प्रमाण में उसकी निर्जरा होती है। यह गुणश्रेणी निर्जरा की बात जब हम सातवें-आठवें गुणस्थान में आयेंगे तब हम करेंगे। अभी इतना ही समझना कि हर समय उसकी सत्ता में जो कर्म पड़े हैं; अभी एक समय में उसने जो कुछ कर्म परमाणु की निर्जरा की है तो दूसरे समय में उससे असंख्यातगुणा, तीसरे समय में उससे भी असंख्यातगुणा, चौथे समय में उससे भी असंख्यातगुणा ऐसी उनकी गुणश्रेणीरूप निर्जरा होती है।

अब कह रहे हैं, चौथा पॉइंट। **पूर्व में मनुष्य या तिर्यंचायु का बंध न होने की दशा में उसी भव में अथवा तीसरे ही भव में मोक्ष प्राप्त करता है।** यह किसकी बात चल रही है ? क्षायिक सम्यक्त्वी की। क्षायिक सम्यक्त्वी को मोक्ष प्राप्त करने का

काल अधिक से अधिक कितना होगा ? तीसरे भव में वह मोक्ष अवश्य जायेगा। तो उन्होंने कंडिशन कौनसी डाली ? उस जीव ने मनुष्य या तिर्यंचायु का बंध न किया हो तो। एक पहली बात क्या बतायी ? उसी भव में जायेगा या तीसरे भव में जायेगा। उसने नरकायु का बंध किया हो तो नरक में जायेगा, वापस मनुष्य में आयेगा और फिर उसी भव में मोक्ष में जायेगा। अब क्या होगा ? देखो, मनुष्यायु बांधी है तो क्या होगा ? वह तो भोगभूमि का ही मनुष्य होगा और जो क्षायिक सम्यक्त्वी है, वही सम्यक्त्व के साथ भोगभूमि में जायेगा। वही जीव अगर सम्यक्त्व के पहले तिर्यंच की आयु बांधी हुयी हो तो भोगभूमि का ही तिर्यंच होगा और क्या बात कह रहे ? कि उसको क्षायिक सम्यक्त्व होना चाहिये तो ही सम्यक्त्व के साथ जायेगा। जो मनुष्य क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी है वह सम्यक्त्व के साथ मनुष्यपर्याय में या तिर्यंचपर्याय में जन्म नहीं ले सकता। लेकिन यह तीन जो हैं, कौनसे ? तिर्यंच, मनुष्य और नारकी- इन पर्यायों में मनुष्य को सम्यक्त्व के साथ जाना है तो नियम से वह क्षायिक सम्यग्दृष्टि ही होना चाहिये।

अभी क्या बताया देखो ? यहां तो उनको कहना है कि अगर मान लो कि किसी मनुष्य ने मनुष्यायु बांधी है और बाद में क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त किया है वह पहला भव तो उसके बाद क्या होगा ? भोगभूमि में जायेगा दूसरा भव। वहां से नियम से स्वर्ग में जायेगा - तीसरा भव और यह चौथा भव मनुष्य में आकर वह मोक्ष चला जायेगा। यानी टोटल चौथे भव में मोक्ष जायेगा। अब आगे, अब क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के बारे में बतायेंगे। क्या कह रहे हैं ? *श्रोता: पूर्व में तिर्यंच या मनुष्यायु का बंध न होने पर उसी भव में मोक्ष जायेगा, ऐसा उसका अर्थ है ?* ऐसा है, अभी इसके एक मिनट, एक मिनट, यहां जो शब्द लिखें हैं उस शब्द पर मत जाना, मैं जो कह रहा हूं वह आप कृपया सुनना। देखो, यहां यह कह रहे हैं कि जो तद्भव मोक्षगामी जीव रहता है वह आयुबंध करेगा ही नहीं। ऐसा हो सकता है कोई जीव क्षायिक सम्यक्त्वी हो जाये और उसने आयुबंध नहीं किया है तो वह उसी भव में मोक्ष जायेगा। अभी क्या है ? यहां लिखने में थोड़ा कम अधिक होता है तो उसको हम थोड़ासा निग्लेक्ट करके। *श्रोता: .../* भाई कभी-कभी रह जाता है। *श्रोता: यदि नरक का बंध किया हो तो तीसरे भव में मोक्ष जाता है/* लेकिन उन्होंने उल्लेख नहीं किया ऐसा कह रहे हैं। *श्रोता: .../* देखो-देखो मनुष्य और तिर्यंच आयु बांधी होगी तो वह चौथे भव में मोक्ष जायेगा यानी चालू भव छोड़कर आगे तीन भव लिये उन्होंने। *डॉ. उज्ज्वला शहा:- लेकिन नारकी और देव*

होगा तो तीसरे भव में मोक्ष जायेगा। यदि मनुष्य या तिर्यंचआयु का बंध किया है तो चौथे भव में मोक्ष जायेगा। कोई बात नहीं, नहीं लिखा है तो अभी आप समझ लो जो हम कह रहे हैं। नहीं लिखा है तो आप पं. ब्र. यशपालजी से मिलकर उनसे कन्फर्म कर लेना क्योंकि उन्होंने क्यों नहीं लिखा है, इसका उत्तर तो मेरे पास है नहीं।

आगे- **अब क्षायोपशमिक सम्यक्त्व की अपेक्षा असमानता को कहते हैं।** यहां अभी तक तो हमने क्षायिक और औपशमिक की बात की, अभी क्षायोपशमिक की बात कर रहे हैं। **इस सम्यक्त्व में सम्यक्त्वमोहनीय का उदय होने से चल-मल-अगाढ़ दोष होते हैं।** यह कहने का प्रयोजन क्या है ? अभी यह दर्शनमोहनीय कर्मों में से, वहां सम्यक् प्रकृति का उदय चल रहा है और यह सम्यक् प्रकृति जो है वह तो जिसको हम कहेंगे न, दुश्मन के पक्ष की है। क्या है ? दर्शनमोहनीय कर्म जो है, वह जीव को सम्यक्त्व होने में रुकावट करता है। लेकिन उसमें से जो मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व को छोड़कर जो सम्यक् प्रकृति है वह दर्शनमोहनीय की ही प्रकृति है और वह होते हुये जीव के सम्यक्त्व टूटे नहीं, सम्यक्त्व तो बना रहे, लेकिन उसमें कुछ न कुछ दोष रहता है उसकी बात कर रहे हैं। तो उन्होंने यह बताया देखो, इस सम्यक्त्व में सम्यक्त्वमोहनीय का उदय होने से चल-मल-अगाढ़ दोष होते हैं।

अब यह चल-मल-अगाढ़ दोष क्या हैं इसको अगर हमें देखना है, तो हम जरा देखते हैं। मेरे सामने मोक्षमार्गप्रकाशक नामक शास्त्र है। उसके पृष्ठ क्रमांक ३३४ पर हम देख रहे हैं। थोड़ासा लंबा है लेकिन समझने जैसा है। यहां तो यह उन्होंने पहले बता दिया है - **इसप्रकार उपशम सम्यक्त्व का स्वरूप कहा। तथा जहां दर्शनमोह की तीन प्रकृतियों में सम्यक्त्वमोहनीय का उदय हो**, **अन्य दो का उदय न हो** यानी सम्यक् प्रकृति का उदय है। सम्यक्त्वमोहनीय का यानी सम्यक् प्रकृति का जहां उदय हो **वहां क्षयोपशम सम्यक्त्व होता है।** इससे तो हम परिचित हैं। **उपशम सम्यक्त्व का काल पूर्ण होने पर यह सम्यक्त्व होता है व सादि मिथ्यादृष्टि के मिथ्यात्व गुणस्थान से व मिश्र गुणस्थान से भी इसकी प्राप्ति होती है।** यानी जो सादि मिथ्यादृष्टि होगा वह पहले गुणस्थान से चौथे में आयेगा या जो तीसरे में है वह भी चौथे में आ सकता है। **क्षयोपशम क्या ? सो कहते हैं- दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृतियों में जो मिथ्यात्व का अनुभाग है**, **उसके अनंतवें भाग मिश्रमोहनीय का है।** यानी जो फलदान शक्ति है मिथ्यात्व की, उसका अनंतवां भाग जो है वह

मिश्रमोहनीय की कपॅसिटि है। **उसके अनंतवें भाग सम्यक्त्वमोहनीय** यानी सम्यक् प्रकृति **का है। इनमें सम्यक्त्वमोहनीय प्रकृति देशघाति है; इसका उदय होने पर भी सम्यक्त्व का घात नहीं होता। किंचित मलिनता करे, मूलघात न करे, उसीका नाम देशघाति है।**

सो जहां मिथ्यात्व व मिश्रमिथ्यात्व के वर्तमानकाल में उदय आने योग्य निषेकों का उदय हुये बिना ही निर्जरा होती है वह तो क्षय जानना। उदयाभावी क्षय का उन्होंने कैसा ट्रान्स्लेशन किया है देखो फिर से। जहां मिथ्यात्व और मिश्रमिथ्यात्व यानी सम्यग्मिथ्यात्व, इनके वर्तमान काल में उदय आने योग्य निषेकों का उदय हुये बिना ही निर्जरा होती है। तो वह क्या है ? अन्यरूप से उदय में आते हैं न तो उनका वह क्षय जानना। किनका ? उन दो सर्वघाति प्रकृतियों का। **और इन्हींके आगामीकाल में उदय आने योग्य निषेकों की सत्ता पायी जाये, वही उपशम है।** इसीको सदवस्थारूप उपशम कहते हैं यह हमने देखा है। **और सम्यक्त्वमोहनीय का** यानी सम्यक् प्रकृति का **उदय पाया जाता है। ऐसी दशा जहां हो सो क्षयोपशम है।** यहां क्षयोपशम की परिभाषा उन्होंने घटित की है।

अभी कहते हैं **यहां जो मल लगता है, उसका तारतम्य स्वरूप तो केवली जानते हैं;** यह चल-मल-अगाढ़ दोष जो है, वह कौनसा मल है ? उसकी बात केवली भगवान ही जानते हैं ऐसा कह रहे हैं। **उदाहरण बतलाने के अर्थ चल मलीन अगाढ़पना कहा** जाता **है।** उदाहरण बताने के अर्थ यानी उसके लिये यह चल, मलीन, अगाढ़ क्या होता है वह बात बताते हैं। **वहां व्यवहार मात्र देवादि की प्रतीति तो हो, परंतु अरहंतदेवादि में- यह मेरा है यह अन्य का है।** यानी क्या कहना चाहते हैं ? अभी किसी जीव ने किसी भगवान की मूर्ति की स्थापना की है तो ये भगवान हमारे हैं। आप दिल्ली में गये थे क्या ? वह फलां-फलां दिल्ली में वहां एक मंदिर है, वहां हमारे भगवान हैं, अरे हमने वहां मूर्ति स्थापित की है। ऐसा कोई सम्यग्दृष्टि बोले, मेरी बात नहीं कर रहा हूं, घबराना मत, तो कहते हैं वह दोष है, छोटासा। क्या कहा ? अरहंत देवादि में यह मेरा है, यह अन्य का है **इत्यादि भाव सो चलपना है।** चल-मल-अगाढ़ दोष में से चलपना। **शंकादि मल लगे तो मलपना है।** यहां क्या कहते हैं ? यह शंका जो है न, शंका यानी सात तत्त्व संबंधी शंका नहीं, सात तत्त्व संबंधी शंका हो तो वह मिथ्यात्व में चला जाये। अन्य किसी बात पर अगर शंका हो तो वह मलीनपना है और

आगे कहते हैं, **यह शांतिनाथ शांतिकर्ता हैं,** पारसनाथ विघ्न हर्ता हैं, **इत्यादि भाव सो अगाढ़पना है। ऐसे उदाहरण व्यवहारमात्र बतलाये, परंतु नियमरूप नहीं हैं।**

क्षयोपशम सम्यक्त्व में जो नियमरूप कोई मल लगता है सो केवली जानते हैं। इतना जानना कि इसके तत्त्वार्थश्रद्धान में किसी प्रकार से समलपना होता है, इसलिये यह सम्यक्त्व निर्मल नहीं है। इस क्षयोपशम सम्यक्त्व का एक ही प्रकार है, इसमें कुछ भेद नहीं है। एक ही प्रकार किस अपेक्षा से ? जैसे औपशमिक सम्यक्त्व में प्रथमोपशम सम्यक्त्व और द्वितीयोपशम सम्यक्त्व ऐसे भेद किये, वैसे क्षयोपशम सम्यक्त्व में भेद नहीं है। देखो, यहां पर एक बात भी उन्होंने बतायी है कि क्षायोपशमिक में समलपना है यानी मलीनता है। इसलिये कोई भी जीव क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के साथ श्रेणी नहीं चढ़ता। जो क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि है और जो श्रेणी के सन्मुख हुआ है तो वह जो सत्ता में रहे हुये सम्यग्मिथ्यात्व और मिथ्यात्व को और उदय में आनेवाले सम्यक् प्रकृति ऐसे जो दर्शनमोहनीय के तीन भेद हैं न, उनको उपशमायेगा उसको द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहेंगे। उपशम सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व दोनों ही निर्मलता की अपेक्षा बराबर ही है, बिलकुल निर्मल हैं। लेकिन क्षायोपशमिक सम्यक्त्व में चल-मल-अगाढ़ दोष हैं इसलिये क्षयोपशम सम्यक्त्व के साथ कोई जीव श्रेणी नहीं चढ़ सकता। अब यहां तक की बात समझ में आयी ?

श्रोता: ... आपका प्रश्न सुनाई नहीं दिया, शंका जरा लिखकर देना साहब क्योंकि चालू विषय में शंका होवे तो फटाफट दे दो लिखकर, पास कर दो। क्योंकि क्या है, जिनको हमने सुबह मना किया था वे नाराज हो जायेंगे कि क्या वह आपके जात के हैं; आपके पहचान के हैं; आपके रिलेटिव्ह हैं; आपके ससुर हैं क्या ? क्यों उनको अलाउ करते हो और मुझे नहीं ? ऐसा नहीं होवे, नाराजी मत लेना, हम तो सबका भला चाहते हैं। कोई विशेष हो तो, लिखकर भेज दीजिये, अगर चालू विषय के कंटिन्युएशन में होगा तो तुरंत उत्तर दूंगा, नहीं तो जब विषय आयेगा तब देंगे। अब अपनी पुस्तक में देखना पृष्ठ १११ पर, वहां क्षायोपशमिक सम्यक्त्व की अपेक्षा की बात चल रही थी न, चल-मल-अगाढ़ दोषवाली अभी क्या होता है ? **इसके नाश होने में देरी नहीं लगती।** यानी क्षयोपशम सम्यक्त्व कैसा है ? एक अंतर्मुहूर्त टिका और फिर हो सकता है फिर दुबारा नष्ट हो जाये। यह क्षयोपशम सम्यक्त्व के बारे में चल रहा है। **यह सम्यक्त्व पल्य के असंख्यातवें भाग बार छूट सकता है।** कौनसा ? क्षयोपशम सम्यक्त्व।

उपशम सम्यक्त्व भी उतनी ही बार छूटता है। समझे ? चौथा पॉइंट है, इसके लिये यानी क्षयोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करने के लिये **त्रिकरण परिणाम आवश्यक नहीं है।** यानी दो करण से भी वह दुबारा प्राप्त किया जा सकता है। क्षायोपशमिक सम्यक्त्व में गुणश्रेणी निर्जरा नहीं होती। *डॉ उज्ज्वला: ऐसा पुस्तक में लिखा है परंतु यह चौथे गुणस्थानवाले के लिये सच है। पांचवे, छठे, सातवें गुणस्थान में तो क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी के भी गुणश्रेणी निर्जरा निरंतर चालू रहती है। क्षायिक सम्यक्त्वी जीव को भी चौथे गुणस्थान में निरंतर गुणश्रेणी निर्जरा नहीं होगी, लेकिन पुस्तक में पृष्ठ १११ पर तीसरे पॉइंट पर बताया था, वह ठीक नहीं है।* **चल-मल-अगाढ़ दोषों के कारण ही इस सम्यक्त्व के साथ श्रेणी चढ़ने का अपूर्व पुरुषार्थ नहीं हो सकता। जो जितना और जैसा भेद है, उसे भी स्वीकार करना चाहिये।**

अभी देखो यह सम्यक्त्व के काल की बात चल रही है यानी यह जो सम्यक्त्व है न, तीन प्रकार के सम्यक्त्व हमने देखे तो पुस्तक में देखे बिना पहले हम सोचते हैं। आप पुस्तक में नहीं देखेंगे तो आपको बात बिलकुल ध्यान में रहेगी। पुस्तक बंद कर दो या खुला रखो तो देखो मत और क्या है ? हमें अपने से प्रामाणिक होना है। देखो, आचार्य तो कहते हैं कि तू पर के साथ मायाचारी कर ही नहीं सकता है। क्या कहा ? पर के साथ मायाचारी नहीं कर सकता है, क्यों ? तू पहले स्वयं से मायाचारी करेगा तो दूसरे के करने के तेरे भाव होंगे। हम स्वयं अपनी भाषा में कहो तो सिन्सिअर टू युवर ओन सेल्फ, ऐसे होंगे तो पर को ठगाने के विचार ही नहीं आयेंगे। ख्याल में आया ? अब यहां क्या कह रहे हैं ?

जो उपशम सम्यक्त्व है उसका अधिक से अधिक या छोटे से छोटा यानी जघन्य काल कितना होगा और उत्कृष्ट काल कितना होगा ? यह पहले हम सोचते हैं। कौन बताना चाहेगा ? हां बोलो बहन, *श्रोता: ४८ मिनट।* कभी मिनटों में या सेकंडों में नहीं बताना, यथायोग्य अंतर्मुहूर्त कहना। वह जघन्य काल की बात कर रहे हैं या उत्कृष्ट काल की बात कर रहे हैं ? *श्रोता: जघन्य काल भी अंतर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल भी अंतर्मुहूर्त है।* बहुत अच्छा, बहुत अच्छा बहन फरमाती हैं कि जघन्य काल भी अंतर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल भी अंतर्मुहूर्त है। किसका ? औपशमिक सम्यक्त्व का। उसका एक्झॅक्ट प्रपोर्शन यहां पर दिया है कि जघन्य काल से संख्यात गुणा बड़ा ऐसा उत्कृष्ट काल होगा, बराबर। अभी क्षयोपशम सम्यक्त्व जो है वह क्षयोपशम सम्यक्त्व

का जघन्य काल कितना होगा, बताइये बहन आप ? सेलुवाली हमारी बहन। *श्रोता: मालूम नहीं।* मालूम नहीं, कोई बात नहीं। और कोई ? हां आप बतायेंगे, अच्छा बोलो बहन ? *श्रोता: अंतर्मुहूर्त।* अंतर्मुहूर्त, वह कौनसा है, उत्कृष्ट काल ? *श्रोता: जघन्य काल।* तो वह आपको बताना पड़ेगा न, मैं कितने प्रश्न पूछूं। तो आपका बताना है जघन्य काल अंतर्मुहूर्त है। किसका ? क्षयोपशम सम्यक्त्व का। और उत्कृष्ट काल आप ही बोलेंगे। *श्रोता: ६६ सागर।* ६६ सागर। हां, बहुत अच्छा, उन्होंने हिन्दी में बताया, आपने मराठी में बताया, कोई बात नहीं। हम तो सब बंदर के व्यापारी हैं, कच्छी छोड़कर। क्यों ?

देखो भैया, ६६ सागर में एक अंतर्मुहूर्त कम समझना। सामान्यरूप से ६६ सागर कहते हैं तो ठीक है, लेकिन उसमें अगर पूरा ६६ सागर वह जीव क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी होगा तो वह नियम से क्षायिक होगा। अगर आपको इस बात का मतलब ख्याल होगा या आप जानते होंगे तो देखो जो ६६ सागर में एक अंतर्मुहूर्त कम रहता है तो वह जीव, कोई जीव तीसरे गुणस्थान में आता है। क्षयोपशम सम्यक्त्व से हटकर तीसरे में आया - मिश्र में आया, फिर दुबारा चौथे में जायेगा और आगे ६६ सागर तक वह क्षयोपशम सम्यक्त्व में रहेगा और वह भी पूरा ६६ सागर करेगा तो क्षायिक होगा। उससे पहले मिथ्यात्व में आयेगा तो फिर से चालू गाड़ी पहले जैसी। ख्याल में आया ? तो आपने ६६ सागर कहा, उसमें एक अंतर्मुहूर्त कम समझना। जब ६६ सागर कहते हैं तो उसमें यह बात समझ लेना कि जो जीव ६६ सागर के अंतिम अंतर्मुहूर्त में दर्शनमोहनीय की क्षपणा का कार्य शुरू करता है, वह एक अंतर्मुहूर्त तक कृतकृत्यवेदक रहता है उस अपेक्षा से वेदक सम्यक्त्व यानी क्षयोपशम सम्यक्त्व का उत्कृष्ट काल ६६ सागर ऐसा शास्त्र में बताया है।

अभी मेरा यह प्रश्न है, बहुत ही इम्पॉर्टंट है। क्षायिक सम्यक्त्व का जघन्य काल कितना है और उत्कृष्ट काल कितना है ? सुमनबहन आप कहेंगे ? नहीं कहेंगे। अच्छा-अच्छा, अंजुबहन आप ? नहीं बतायेंगे। ये सब क्या बोलते हैं ? स्ट्राइक कर रहे हैं यह लोग हमारे से। हां-हां,आप बताना चाहते हैं, बोलो-बोलो। *श्रोता: जघन्य काल संसार अवस्था के ऊपर।* आपने क्या बताया, मैं भी नहीं समझा। मैं पूछ रहा हूं जघन्य काल कितना और उत्कृष्ट काल कितना ? *श्रोता: उत्कृष्ट काल तो अनंत हो गया। लेकिन संसार की अपेक्षा लेंगे, मोक्ष में जाने के बाद में अनंत काल।* अच्छा और कोई कहना चाहेगा ? देख लिया आपने ? बहुत अच्छा हां, देखो-देखो मैंने इसलिये आपको पहले से

ही रिक्वेस्ट की थी कि किताब मत खोलो क्योंकि अपना मोह होता है उधर देखने को तो सामनेवाला क्या उत्तर दे रहा है वही मालूम नहीं है। ऐसा हो सकता है न ?

यहां देखो भाईसाहब, क्षायिक सम्यक्त्व का अर्थ क्या ? एक दफे सम्यक्त्व की प्राप्ति हुयी तो वह क्षायिक सम्यक्त्व कभी छूटता ही नहीं क्योंकि सत्ता में अभी कोई कर्म नहीं रहे जो सम्यक्त्व के घातक थे। ख्याल में आया न ? उसका जघन्य काल है ही नहीं। जो है वह उत्कृष्ट काल है और वह सादिअनंतकाल है। आपने जो सादिसांत बताया, किस अपेक्षा से बताया मुझे मालूम नहीं है। *श्रोता: संसारमार्ग की अपेक्षा से।* हमने संसार और मुक्त की बात कहां की थी ? क्षायिक सम्यक्त्व का काल पूछा था। ख्याल में आया ? चलो यहां क्या कहते हैं, वह देखेंगे। हमारी तुम्हारी बात रहने दो। **सम्यक्त्व का काल। औपशमिक सम्यक्त्व का** काल, **जघन्य काल** तथा **उत्कृष्ट काल भी अंतर्मुहूर्त ही है; तथापि जघन्य काल से उत्कृष्ट काल संख्यात गुणा अधिक है।** यह तो हमने देख लिया था।

अब कहते हैं, नेक्स्ट पॅरेग्राफ- **क्षायोपशमिक सम्यक्त्व का जघन्य काल मात्र अंतर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल ६६ सागर है।** अभी उन्होंने क्या कहा ? **अथवा एक ६६ सागर के बाद एक अंतर्मुहूर्त के लिये मिश्र गुणस्थान में आकर पुनः क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के साथ ६६ सागर तक रह सकता है। यथायोग्य अंतर्मुहूर्त अधिक एक समय, दो समय आदि लेकर अंतर्मुहूर्त कम ६६ सागर पर्यंत बीच में होनेवाले काल के सर्व भेद** वगैरह-वगैरह सभी **मध्यम काल** है। मैंने जो बात बतायी कि अगर पूरा ६६ सागर वह रह जायेगा तो वह क्षायिक की प्राप्ति करेगा। उन्होंने यही बात बतायी पूरा ६६ सागर, लेकिन वह जीव आगे जाकर क्षायिक सम्यक्त्वी होगा ही होगा। इस हिसाब से ६६ सागर उत्कृष्ट काल है। क्षायिक की बात कहां की ? *श्रोता: १११ पेज पर।* जघन्य और उत्कृष्ट की बात नहीं की है। ठीक है क्योंकि क्षायिक सम्यक्त्व होने पर वह कायम रहता है, उसको सादिअनंत कहेंगे।

अब हम आगे बढ़ते हैं। यह जो है न, प्रश्न क्रमांक ३४, वह जो हमने बताया था कि पहला जो प्रथमोपशम सम्यक्त्व है पहली बार औपशमिक सम्यक्त्व होता है तो उसके बाद जीव मिथ्यात्व में जायेगा कि नहीं जायेगा, उसके बारे में जो कुछ कथन है वह आप पढ़ लेना। अभी चारित्र अपेक्षा बात करते हैं पेज नंबर ११३। **सम्यग्दर्शन**

अकेला नहीं होता। अकेला नहीं होता यानी उसके साथ में क्या-क्या होता हैं ? **उसके साथ ज्ञान और चारित्र भी सम्यक् होते हैं; इतना ही नहीं आत्मा के अन्य अनंत गुणों में भी आंशिक शुद्धता प्रकट होती है। सर्व गुणांश ते सम्यक्त्व, ऐसा उल्लेख भी आगम में मिलता है।** यह तो बात मैंने आपको बतायी थी कि आत्मा में अनंत गुण हैं। उन अनंत गुणों में अनंत गुण तो सम्यक् रूप से ही परिणमित होते हैं और अनंत गुण विभावरूप परिणमित होते हैं। तो जब किसी जीव को सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है तो जो अनंत गुण विभावरूप से परिणमित हो रहे थे, वे सम्यक् रूप से परिणमन करना चालू करते हैं। तो इसलिये यह जो बात है सर्व गुणांश ते सम्यक्त्व, यह बात तो श्रीमद्जी ने कही है।

अब **इसका भाव यह है कि सम्यक्त्व होने पर आत्मा के चारित्र आदि अनंत गुणों में सम्यक् पना नियम से हो जाता है। व्रतरूप संयम न होने से चौथे गुणस्थानवर्ती जीव को अविरत कहा है; फिर भी सम्यग्दर्शन का अविनाभावी अनंतानुबंधी के अभावपूर्वक होनेवाला सम्यक्त्वाचरण** यानी **स्वरूपाचरणचारित्र तो होता ही है।** अब क्या कहना चाहते हैं ? थोड़ासा समझने की कोशिश करेंगे। देखो पहले में पहले तो हमने देखा था, जो चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव है तो उस चौथे गुणस्थान का नाम क्या है साहब ? *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* अविरतसम्यक्त्व यानी सम्यक्त्व तो है लेकिन वह कैसा है ? व्रत रहित है यानी अविरति है उसके। यह बात हमने देखी थी सम्यक्त्व जब हम कहते हैं तो सम्यक्त्व में कम से कम तीन बातें तो गर्भित हैं ऐसा आगम का रिवाज भी है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र इन तीनों को मिलकर ही सम्यक्त्व कहने में आता है।

अब यहां कह रहे हैं कि जब जीव सम्यक्त्वी हो जाता है तो वहां क्या-क्या होता है ? तो अभी हम देखते हैं, वहां कषायों की चार चौकड़ी हैं तो एक अनंतानुबंधी कषाय चौकड़ी का वहां अनुदय है कहो यानी अप्रशस्त उपशम है या क्षय है - जो भी है। उसका उदय नहीं चल रहा है तो जितनी कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ है तो उतनी उस आत्मा में शांति प्रकट होगी कि नहीं ? उतने प्रमाण में वीतरागता प्रकट होगी क्या नहीं ? अगर ऐसा नहीं मानेंगे तो फिर चार टुकड़े ही क्यों किये ? दो ही करते थे न। एक कौनसा ? प्रत्याख्यानावरण और एक संज्वलन। क्योंकि कई भोले जीवों का ऐसा कहना है कि शुद्धोपयोग तो सातवें गुणस्थान में ही होता है। अब क्या करें ? फिर यह

अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण आदि का विवरण कहो, वर्णन कहो, शास्त्र में क्यों देते हैं ? अब हम तो जानते हैं कि जो कषाय हैं वे आकुलतावाले हैं, दुःख देनेवाले हैं। यह बात हमने-तुमने नहीं, कुन्दकुन्द आचार्य ने लिखी है समयसार में, राग दुःखरूप हैं, वर्तमान में दुःखरूप हैं, भविष्य में दुःख देनेवाले हैं, आकुलता स्वरूप हैं। अब उनमें से कुछ पार्ट वहां उदय में नहीं है, सत्ता में नहीं है, नष्ट हुये हैं जो कुछ होगा तो उतने प्रमाण में जीव में सुख का वेदन होगा कि नहीं ? आकुलता कम हुयी कि नहीं ? यह हम सोचे। यह शुद्धोपयोग सहित आत्मानुभूति के द्वारा ही सम्यग्दर्शन होता है, उसके बिना नहीं होता।

कौन यह कहता है ? दूसरों के कहने पर मत जाना, शास्त्र में जो बात लिखी है उसे हम जाने। तो यहां क्या कह रहे हैं ? देखो, फिर से मैं पढ़ूंगा, यह जो चारित्र अपेक्षा विचार लिखा है उसके पहले पॅरेग्राफ में नीचे से चौथी लाइन है- व्रतरूप संयम न होने से चौथे गुणस्थानवर्ती जीव को अविरत कहा है। फिर भी सम्यग्दर्शन का अविनाभावी; अविनाभावी का अर्थ समझते हैं आप ? हां साहब ? क्या है यह अविनाभावी ? *श्रोता: एक होगा तो दूसरा होगा ही होगा।* हां, एक होगा तो दूसरा होगा ही होगा। यह अविनाभावी संबंध किसका किसके साथ होता है ? भाईसाहब आप जानते हैं ? बोलो, अविनाभावी संबंध किसका किसके साथ होता है ? हां, बोलो साहब ? *श्रोता: द्रव्य और गुण का अविनाभावी संबंध होता है ?* बहुत अच्छा। आपका कहना है कि द्रव्य और गुण का अविनाभावी संबंध होता है, क्या यह बात सही है रमेशभाई ? *श्रोता: नहीं है।* नहीं है, ये नाराज हो गये भैया, बाबूजी आप बतायेंगे ? *श्रोता: द्रव्य, गुण, पर्याय तीनों का अविनाभावी संबंध है।* अरे वाह रे वाह ! यह बिलकुल सर्वधर्म समभाववाले हैं। बहन आप बतायेंगी ? अच्छा आप बतायेंगी बोलो-बोलो, *श्रोता: जीव का पुद्गल के साथ अविनाभावी संबंध है।* जीव का पुद्गल के साथ कौनसा है ? वाह-वाह, बहुत अच्छा ! आपका कहना है जीव का पुद्गल के साथ अविनाभावी संबंध है। हां और कोई कुछ कहना चाहेगा, बहन आप बतायेंगे ? *श्रोता: मालूम नहीं।* मालूम नहीं, कोई बात नहीं।

देखो-देखो, अविनाभावी संबंध किसका किसके साथ होता है उसको हम देखने के पहले द्रव्य का गुण के साथ नित्यतादात्म्य संबंध रहता है। द्रव्य का पर्याय के साथ अनित्यतादात्म्य संबंध रहता है। एक द्रव्य के एक गुण का उसी द्रव्य के अन्य गुणों के साथ अविनाभावी संबंध होता है। यानी जहां ज्ञान गुण है वहां चारित्र गुण भी

होगा, वहां दर्शन गुण भी होगा, वहां सुख गुण भी होगा। एक है तो अन्य है। परसों ही मैंने आपको उदाहरण दिया था यह आप पंखे के नीचे क्यों बैठते हो ? बोले कि ठंडी-ठंडी हवा आती है। तो हवा दिखती है आपको ? नहीं। तो उसमें वर्ण गुण है ? भगवान जाने। अरे भगवान क्यों जाने ? तुम नहीं जानते हो ? अगर उसमें स्पर्श नाम का गुण है तो वर्ण नाम का गुण होगा, होगा और होगा। क्योंकि वह पुद्गल है, जो स्पर्श लग रहा है न, वह हवा जो है वह पुद्गल है और उस पुद्गल में जो स्पर्श गुण है तो वर्ण गुण होगा ही। क्योंकि शास्त्र में ऐसी बात बतायी है - एक गुण होगा तो दूसरा गुण होगा ही होगा। उसको अविनाभावी संबंध कहते हैं।

जो मैंने आपसे कहा था अग्नि में स्वाद होगा कि नहीं ? तो आपने बताया, आप ही उसे चखकर हमको बताना। क्यों ? अरे उसमें वर्ण गुण है, दिख रहा है न स्पष्ट ? उसमें स्पर्श गुण गरम-गरम है तो उसमें रस गुण भी होगा ही होगा, स्वाद लेने की क्या जरूरत है। ख्याल में आया ? देखो यह आगमचक्षु हम लगायेंगे न, तो हमें सारे प्रश्नों का उत्तर फटाफट मिलता है। तो इसको क्या कहा ? एक गुण होगा तो दूसरा गुण होगा ही होगा। अभी यहां कह रहे हैं कि जब सम्यग्दर्शन होता है, सम्यक् श्रद्धा होती है, सम्यग्ज्ञान होता है तो वहां सम्यक् चारित्र होगा ही होगा क्योंकि इन सबका अविनाभावी संबंध है। फिर से पढ़ते हैं। हां, देखो क्या कह रहे हैं ? देखो-देखो, **व्रतरूप संयम न होने से चौथे गुणस्थानवर्ती जीव को अविरत कहा है; फिर भी सम्यग्दर्शन** यानी यह श्रद्धा गुण की जो सम्यक् पर्याय है उस**का अविनाभावी अनंतानुबंधी के अभावपूर्वक होनेवाला** जो चारित्र गुण की स्वभाव पर्याय, उसका नाम क्या है ? **स्वरूपाचरणचारित्र** और इसीको कुन्दकुन्द आचार्य ने **सम्यक्त्वाचरण चारित्र तो होता ही है,** वह तो होगा ही होगा। **अणुव्रतों या महाव्रतों का पालन न होने से चतुर्थ गुणस्थानवर्ती को चरणानुयोग असंयमी कहता है।** देखो यहां क्या बात बताना चाहते हैं, हर अनुयोग की कथन शैली, पद्धति अलग-अलग है।

देखो, मैं आपसे पूछता हूं- कोई बहुत पैसेवाला आदमी है। उसके पास करोड़ों की संपत्ति है, कितने हजार करोड़ ? अभी वह हमारे कौनसे ? अंबानीबंधु हैं न, उनके पास हजारों करोड़ों की संपत्ति है और मेरे पास एक लाख रुपये हैं। कितने ? तो मैं संपत्तिवाला हुआ कि नहीं ? बोलते हैं जिसके पास एक लाख नहीं है उसकी अपेक्षा तो संपत्ति है, लेकिन जिसके पास करोड़ों, हजारों करोड़ों हैं उसके सामने तुम कुछ भी

नहीं हो। वैसे जो छठे-सातवें गुणस्थानवर्ती जीव हैं, उनके स्वरूप में दृढ़तापूर्वक जो तीन कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ है वहां वीतरागता का प्रमाण अधिक है। यानी चारित्र में स्थिरता अधिक प्रमाण में है जो सकलचारित्र के नाम से प्रसिद्ध है। उसकी अपेक्षा से स्वरूपाचरणचारित्र की स्थिरता कहो या उसमें जो वीतरागता है, वह नगण्य है। लेकिन वह है ही नहीं ऐसा नहीं है। हां साहब ? बिलकुल आंशिक है और सकलचारित्र भी आंशिक है, सुनना क्योंकि परिपूर्ण वीतरागता तो हुयी नहीं है यथाख्यातचारित्र की अपेक्षा से। ख्याल में आया ?

देखो क्या कह रहे हैं ? स्वरूपाचरणचारित्र तो होता है।अभी क्या बता रहे हैं ? अणुव्रती या महाव्रती। अणुव्रती यानी पंचम गुणस्थानवर्ती, महाव्रती यानी छठे-सातवें गुणस्थानवर्ती। इनका पालन न होने से चतुर्थ गुणस्थानवर्ती को चरणानुयोग असंयमी कहता है। **गुणस्थान यह विषय करणानुयोग का है और करणानुयोग इस सम्यग्दृष्टि को अविरत ही कहता है। अब करणानुयोग की ही अन्य अपेक्षाओं से थोड़ा विचार करते हैं। चारित्रमोहनीय कर्म की अनंतानुबंधी चौकड़ी इस चौथे गुणस्थान में नियम से नहीं है।** यानी नियम से नहीं है इन द सेन्स करणानुयोग कहेगा उसका अनुदय है। ख्याल में आया ? **इस कषाय चौकड़ी के अभाव से चारित्र गुण में आंशिक निर्मलता या अल्प वीतरागता यहां चौथे गुणस्थान में व्यक्त होती है। अतः चारित्र का बीज** यानी **अंश यहां प्रकट हो गया है। सूक्ष्म विषयों का कथन करनेवाले करणानुयोग शास्त्र की दृष्टि से सतर्क सिद्ध होने से यहां चारित्र प्रमाणित ही है।** यानी वहां सम्यक् चारित्र की अस्ति है। **तथा इसके बाधक कारण का भी अभाव है**। छह प्रकार के जो बाधक कर्म हमने देखे थे न अनंतानुबंधी चार - क्रोध, मान, माया लोभ; मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व। ये बाधक कारण वहां उपलब्ध नहीं हैं।

द्रव्यानुयोग की अपेक्षा भी चतुर्थ गुणस्थान में स्वरूपाचरणचारित्र है ही। वस्तुतः तो स्वरूप में आचरण करना ही चारित्र है। इसी विषय को आचार्य श्री अमृतचंद्र ने प्रवचनसार ग्रंथ की गाथा क्रमांक सात की टीका में स्पष्ट कहा है स्वरूप में चरण करना, यानी स्वरूप में रममाण हो जाना, रमना यहां लिखा है, **सो चारित्र है। स्वसमय में प्रवृत्ति करना** यानी **अपने स्वभाव में प्रवृत्ति करना ऐसा इसका अर्थ है। आचार्य श्री जयसेन ने भी कहा है- शुद्धचैतन्य स्वरूप में चरण,**

प्रवृत्ति, लीनता चारित्र है। अब क्या कहते हैं देखो ? **आचार्य श्री कुन्दकुन्द ने इसे ही सम्यक्त्वाचरणचारित्र नाम दिया है। चौथे गुणस्थान में यदि आंशिक वीतरागता प्रकट हो गयी है तो चारित्र तो है ही। सम्यग्दर्शन का अविनाभावी या सहचारी होने से स्वरूपाचरणचारित्र को ही सम्यक्त्वाचरणचारित्र नाम दिया गया है।** यह उन्होंने अन्य-अन्य दृष्टि से ही उनकी बात बतायी है। नीचे २-३ पॅरेग्राफ छोड़कर; यह काल अपेक्षा लिखा है न, उसके ऊपर दूसरा पॅरेग्राफ **सम्यक्त्वाचरण चारित्र का शब्द का प्रयोग आचार्य श्री कुन्दकुन्द ने अष्टपाहुड ग्रंथ के चारित्र पाहुड की गाथा ८ व ९ में किया है।** यानी यह अपनी मनगढ़ंत बातें नहीं हैं जो आगम से सिद्ध है उसीकी बात यहां बतायी है। अभी काल अपेक्षा विचार करने के पहले एक प्रश्न जो आया है उसको मैं थोड़ासा बताना चाहता हूं।

देखो यह प्रश्न का उत्तर तो मैंने दे दिया है। शायद वे गैरहाजिर होंगे या उनको ख्याल में नहीं आया होगा। यहां कह रहे हैं, *यदि कोई व्यक्ति सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के यथार्थ स्वरूप को जानता, मानता, श्रद्धान करता है पर लौकिक व्यवहार के प्रसंग में कुदेव और कुगुरु के आत्मद्रव्य के शुद्ध स्वरूप की स्मृतिपूर्वक उनको नमन, विनयादि करता है तो उसके सम्यग्दर्शन में अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार भंगरूप दोषों का स्पष्टीकरण करने की कृपा करें ?* यह प्रश्न का उत्तर दिया गया था कि नहीं ? उदाहरण के साथ दिया था। अब यहां दो अर्थ निकलते हैं। जो पहला अर्थ ऐसा है कि व्यवहार के प्रसंग में कुदेव, कुगुरु के उनके आत्मद्रव्य के शुद्धस्वरूप की भी स्मृतिपूर्वक उनको नमन। देखो भाई, हम नमन किसको करते हैं ? द्रव्य को नहीं, जिनेन्द्र भगवान को भी हम नमस्कार करते हैं तो उनकी पर्याय में जो वीतरागता प्रकट हुयी है, उनकी पर्याय में जो सर्वज्ञता प्रकट हुयी है, उनको नमन है। अगर हमें शुद्ध स्वरूप को ही नमन करना है तो चींटी जा रही है उसको भी नमन करना चाहिये। जो सात व्यसनों में लिप्त हैं ऐसे जीवों को भी नमस्कार करें। क्यों ? अरे हम उनके शुद्ध आत्मा की तरफ देखकर नमस्कार कर रहे हैं। क्यों ? ऐसा ही आपका कहना है न ? उनके शुद्ध स्वरूप को देखकर। *श्रोता: लौकिक प्रसंग में थोड़ी लिमिटेशन आ जाती है व्यवहार के बारे में। दूसरे का ख्याल करना पड़ता है। उस ख्याल के कारण करना पड़ रहा है, करना नहीं चाहते हैं।* करना पड़ रहा है, इसलिये हमारे में ही कमी है, यह बात समझना।

देखो-देखो, बात ऐसी है अगर शुद्ध द्रव्य को ही आपको नमस्कार करना है तो अपने आप की आरती उतारो न भाई। मैं शुद्ध हूं, है न ? मैं भी जीवद्रव्य हूं। चलो आरती उतार ले, आईने में देखे और करे। सुरेशभाई हंसो मत। यहां तो पर्याय में जो प्रकटता है कौनसी ? शुद्ध स्वरूप की, उसको हम नमन कर रहे हैं। अब यह कुदेव है, कुगुरु है। पहले में पहले तो कुदेव होते ही नहीं, यह कल्पना है। अभी रास्ते में जाओ घूमने को तो पत्थर को सिंदूर लगाते हैं और यह भगवान है। तो यह कल्पना है या सच में भगवान है ? कुदेव है ? काहे का कुदेव है ? यह कल्पना में है सब। कुदेव नाम की कोई वस्तु अस्तित्व में नहीं है। जो नहीं है उसको हमने माना है, कल्पना से माना है। शांति, मुझे बोलने को आप अवसर दीजिये। नहीं तो आप यहां आओ तो आपको एक माइक देता हूं बात करेंगे। पहले में पहले वे तो देव ही नहीं है। देव का स्वरूप हमें मालूम नहीं है इसलिये इतनी हमारी विविध कल्पनायें उड़ान लेती हैं। अरे देव तो उसको कहेंगे कि जो वीतरागी और सर्वज्ञ हैं। लेकिन लोगों ने माना हुआ जो श्रीकृष्ण हैं वे साथ में राधिकायें लिये घूम रहे हैं, माखन चुरा रहे हैं; चोर को आप देव बना रहे हैं। क्या बात है ? मेरा मुंह मत खुलवाना, हां, वह भी कल्पना है।

यथार्थ में जो श्रीकृष्ण थे, जो भविष्य में तीर्थंकर होनेवाले हैं, वे वीतरागी होंगे, सर्वज्ञ होंगे तभी तो आगे जाकर मोक्ष जायेंगे। ख्याल में आया ? हम उनकी कौनसी अवस्था को नमस्कार कर रहे हैं ? यह बिलकुल श्वेताम्बर मत की मैं कहता हूं पुष्टि कर रहे हैं हम। मेरी बात नहीं है, मैं आपको बताता हूं भैया। यह देखो, आप जरा लेकर बैठो, क्या नाम है ? मोक्षमार्गप्रकाशक। जिनको लेना है ले सकते हैं, हां, पेज नंबर १८७ है मेरे यहां। जो आपका होगा देख लेना, यहां वही प्रश्न है; **यहां कोई कहे** कि **हमारे अंतरंग में श्रद्धान तो सत्य है।** यहां क्या कहा ? यदि कोई व्यक्ति सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के यथार्थ स्वरूप को जानता, मानता और श्रद्धान करता है, अरे जो कुदेव को नमस्कार करे उसके तो सम्यग्दर्शन पैदा होने का सवाल ही नहीं है। तो उसका अतिचार, व्यभिचार जो कुछ है वह होने का प्रश्न ही कहां है ? पंडितजी मैं गलत हूं तो आप मेरा कान पकड़ो, आपको पूरा अधिकार है, आप मेरे से सीनिअर हो।

क्या कहते हैं ? यहां कह रहे हैं हमारे अंतरंग में श्रद्धान तो सत्य है **परंतु बाह्य लज्जादि से शिष्टाचार करते हैं।** हमें तो क्या कह रहे हैं ? भाईचारा करना पड़ता है, समाज में रहने का है, हमारे पड़ोसी-अड़ोसी को खुश रखना है क्योंकि हम बच्चों को

घर में छोड़कर जायेंगे तो देखेगा कौन। तुम आनेवाले हो क्या ? या तुम्हारा वीतरागी भगवान आनेवाला है ? ऐसा भी लोग पूछते हैं। तो उत्तर दिया है षट्पाहुड में- **लज्जादि से वन्दनादिक का निषेध बतलाया था, वह पहले ही कहा था। कोई जबरदस्ती मस्तक झुकाकर हाथ जुड़वाये, तब तो यह संभव है कि हमारा अंतरंग नहीं था।** आपको कोई गन पॉइंट दिखाता है, चल झुकता है कि नहीं ? तो क्या करे ? अभी यहां ज़िन्दगी का सवाल है तो शायद, हमारा अभिप्राय तो नहीं है, अंतरंग में विचार तो नहीं है। क्या कह रहे ? कोई जबरदस्ती मस्तक झुकाकर हाथ जुड़वाये तब तो यह संभव है कि हमारा अंतरंग नहीं था; **परंतु आप ही मानादिक से नमस्कारादि करे वहां अंतरंग कैसे न कहें। जैसे- कोई अंतरंग में तो मांस को बुरा जाने; परंतु राजादिक को भला मनवाने को मांसभक्षण करे तो उसे व्रती कैसे मानें ?** तो उसे सम्यग्दृष्टि कैसे माने ? **उसी प्रकार अंतरंग में तो** कुदेव-**कुगुरु सेवन को बुरा जाने, परंतु उनको व लोगों को भला मनवाने के लिये सेवन करे तो श्रद्धानी कैसे कहें।**

देखो कितना अच्छा है कि आपके प्रश्न का हूबहू उत्तर यहां है। मैं बोलू तो मैं खोटा हो जाऊंगा, लेकिन पं. टोडरमलजी को कोई सज्जन व्यक्ति ठुकरा नहीं सकता। मुझे पढ़ने दो- **इसलिये बाह्यत्याग करने पर ही अंतरंग त्याग संभव है। इसलिये जो श्रद्धानी जीव हैं, उन्हें किसी प्रकार से भी कुगुरुओं की सुश्रुषा आदि करना योग्य नहीं है।** अब एक और थोड़ासा देख लो। यह षट्पाहुड में मोक्षपाहुड की गाथा है ९२ नंबर की। वहां लिखते हैं **यदि लज्जा से, भय से व बड़ाई से भी** यानी मान कषाय के कारण **कुत्सित् देव को, कुत्सित् धर्म को व कुत्सित् लिंग को वंदन करता है तो वह मिथ्यादृष्टि होता है।** इसलिये क्या कहा ? **इसलिये जो मिथ्यात्व का त्याग करना चाहे वह पहले कुदेव, कुगुरु, कुधर्म का त्यागी हो।**

सम्यक्त्व के पच्चीस मलों के त्याग में भी अमूढ़दृष्टियों में व षडायतन में इन्हीं का त्याग कराया है; इसलिये इनका अवश्य त्याग करना। और कितनी बातें हैं इसमें ? हां साहब ? अच्छा है **तथा कुदेवादिक के सेवन से जो मिथ्यात्वभाव होता है सो वह हिंसादिक पापों से बड़ा पाप है।** मैं तो मेरी भाषा में बोलता हूं यह जो हिंसा, चोरी, झूठ, कुशील और परिग्रह जो पाप हैं, वह तो लोभ के वशीभूत होकर जीव करता है। तो लोभ इन पापों का बाप है और मिथ्यात्व उस बाप का बाप है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

१६. अविरतसम्यक्त्व - काल अपेक्षा विचार, गमनागमन

मैं, जो बोल चुका हूं वही बात दुबारा बोलना चाहता हूं क्योंकि अभी यहां एक प्रश्न आया है उस प्रश्न के संदर्भ में इस बात को मैं फिर से दोहरा रहा हूं कि कोई भी अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव जो है वह अगर सम्यक्त्व की प्राप्ति करेगा तो नियम से औपशमिक सम्यक्त्व को ही प्राप्त करेगा और उसका औपशमिक सम्यक्त्व टिका रहे तो वह तुरंत ही क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी होगा। जब क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी होगा उस समय उपशम सम्यक्त्व रहेगा नहीं और उसी भव में वह क्षायोपशमिक से क्षायिक सम्यक्त्वी भी हो सकता है।

इसके लिये मैंने आपको अभी एक उदाहरण दिया था। जो निगोद में रहनेवाला बादर निगोदिया जीव है वह वहां से बाहर निकलकर मनुष्यपर्याय में आयेगा और उसी मनुष्यपर्याय में से वह मोक्ष जायेगा। यह इंद्रगोप कीड़े की बात लेते हैं; भरत के इतने पुत्र थे, उन्होंने निगोद से निकलकर बीच में एक पर्याय इंद्रगोप की धारण की थी। की थी उसका अर्थ यह नहीं कि निगोद से निकलकर मनुष्य नहीं होता है। ख्याल में आया ? प्रश्न ऐसा है देखो-देखो, मैं यह क्यों बता रहा हूं ? यहां किसी भाईसाहब ने हमें प्रश्न पूछा है, *चौथे गुणस्थान में एक जीव को एक समय में एक ही सम्यक्त्व रहता है, जब जीव औपशमिक सम्यक्त्वी हुआ है तो वह जीव क्षायोपशमिक या क्षायिक सम्यक्त्वी हो सकता है ?* हां, हो सकता है, लेकिन क्रम से होगा। यह भी मैंने बताया था कि डायरेक्ट औपशमिक सम्यक्त्व से क्षायिक नहीं होगा। डायरेक्ट प्रथम में प्रथम क्षायोपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त नहीं करेगा, डायरेक्ट पहले ही पहले क्षायिक सम्यक्त्वी नहीं होगा। वह अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि की बात कर रहे हैं न हम, तो पहले में पहले वह औपशमिक सम्यक्त्व की ही प्राप्ति करेगा। बाद में वह क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी होगा और उसके बाद क्षायिक सम्यक्त्वी होगा। लेकिन एक काल में एक ही सम्यक्त्व होगा, एक साथ दो नहीं होंगे। आपके प्रश्न का उत्तर आ गया है। ख्याल में आया न ? किसीके और कोई प्रश्न हों तो जरूर लिखकर देना।

अभी हम पेज नंबर ११४ पर आयेंगे। वहां लिखा है **काल अपेक्षा विचार।** यानी अभी तक हमने सम्यक्त्व का काल देखा। ख्याल में आया न ? वह सम्यक्त्व कौनसा ? औपशमिक सम्यक्त्व और क्षायोपशमिक सम्यक्त्व। क्षायोपशमिक सम्यक्त्व का

उत्कृष्ट काल ६६ सागर होगा। बीच में फिर दुबारा नीचे गिरता है, फिर क्षायोपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त करता है। तो गिर गया न, तो उसका वह काल टूट गया। अधिक से अधिक उत्कृष्ट काल क्षायोपशमिक सम्यक्त्व का ६६ सागर है। ६६ सागर पूरा हो, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व रहता है तो वह क्षायिक हो जायेगा यानी फिर वह उस तरह से पुरुषार्थ करके अपने स्वरूप में लीनता, वह जो प्रोसेस है क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति का वह तो करेगा ही करेगा। अब आगे। हमने क्या देखा अभी तक ? तीनों ही जो सम्यक्त्व हैं उसका जघन्य काल और उत्कृष्ट काल की चर्चा की। यह सम्यक्त्व के काल की चर्चा की।

अब हम चौथे गुणस्थान के काल की बात को देख रहे हैं यानी चौथे गुणस्थान में कोई जीव रहेगा तो जघन्य काल कितना रहेगा और उत्कृष्ट काल कितना रहेगा उसकी बात अभी यहां होगी। पहले हमने क्या देखा था ? सम्यक्त्व के काल। अभी देखो ६६ सागर तक जीव चौथे ही गुणस्थान में रहेगा ऐसा हो नहीं सकता। वे मुनि भी हो जाये क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के साथ, पांचवां गुणस्थानवर्ती भी हो जाये। अभी ६६ सागर यानी कहां जायेगा ? देव में जायेगा कि नहीं ? देव में कौनसा गुणस्थान होगा, आप जानती है बहन ? सम्यक्त्वी के देव में कौनसा गुणस्थान होगा ? आप जानती हो ? *श्रोता: नहीं जानती।* नहीं जानती हैं। देखो सुनना अभी, बहुत अच्छी बात है, आप नहीं जानती हैं तो हमें और विशेष जानकारी देने का भाव आता है।

देखो नरक में और देवों में यानी देवगति के जो देव हैं उनमें और नरकगति के जीवों में - पहला, दूसरा, तीसरा और चौथा ऐसे चार ही गुणस्थान होते हैं। इसमें से सम्यक्त्व के सहित तो चौथा गुणस्थान ही होता है। सर्वार्थसिद्धि के देव क्यों न हो, वे भी चौथे के ऊपर के गुणस्थान में जा ही नहीं सकते। वैसे सातवें नरक का नारकी भी चौथे गुणस्थान से और ऊपर के गुणस्थान में जा ही नहीं सकता है। लेकिन तिर्यंचगति का जीव पांचवें गुणस्थान तक जा सकता है, लेकिन वह पांचवें के ऊपर छठा, सातवां आदि की प्राप्ति नहीं करेगा। यह मनुष्य की जो पर्याय है, वहां कितने गुणस्थान होंगे साहब ? *श्रोता: १ से १४ सभी होंगे।* १ से १४ सभी होंगे। ख्याल में आया ? यह हमने क्या देखा ? देवों में और नारकियों में सम्यक्त्व के साथ एक ही गुणस्थान होगा। वहां सासादनसम्यक्त्व भी होगा, जो औपशमिक सम्यक्त्व से भ्रष्ट होकर होता है।

देखो-देखो, काल अपेक्षा विचार करते हैं। पृष्ठ क्रमांक ११४ देखना। **चौथे गुणस्थान के इस प्रकरण में ही पहले सम्यक्त्व के काल का वर्णन किया है और अब यहां अविरतसम्यक्त्व नामक चौथे गुणस्थान के काल विषयक स्पष्टीकरण किया जाता है। जघन्य काल** कितना है ? तो कहते हैं **चौथे गुणस्थान का जघन्य काल अंतर्मुहूर्त है।** यानी अंतर्मुहूर्त से कम काल तक वह चौथे में नहीं रह सकता। मिनिमम अंतर्मुहूर्त है तो उसके नीचेवाला जो काल होगा यानी एक समय, दो समय, दस समय, सौ समय, हजार समय, करोड़ों समय। नहीं, नहीं, अंतर्मुहूर्त यानी असंख्यात समय। तो वह चौथे का काल है और क्या बताते हैं ? **चारों गतियों में जीव सम्यक्त्व की प्राप्ति कर सकता है। एक भव से अन्य भव में सम्यक्त्व लेकर जा भी सकता है।** यह बात हमने देखी थी कि जीव अपर्याप्त अवस्था में सम्यक्त्व के साथ जाता है करके। वहां जाने के बाद अपर्याप्त अवस्था में उसका सम्यक्त्व रहता है। यानी देखो, यहां कोई सम्यग्दृष्टि मुनिराज हैं और उनके मुनि अवस्था में ही अगर मरण हो जाये तो वे सम्यक्त्व के साथ देवगति में जायेंगे और वहां चौथे गुणस्थान में रहेंगे। तो कहते हैं एक भव से अन्य भव में सम्यक्त्व लेकर जा भी सकता है। कौन ? जो सम्यक्त्वी हो वह। जिसके सम्यक्त्व ही नहीं है वह कहां से लेकर जायेगा ?

यदि कोई जीव एकदेश संयम या सर्वदेश संयम के बिना अर्थात् पांचवें अथवा छठवें, सातवें गुणस्थान के बिना मात्र सम्यग्दर्शन सहित चौथे अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान में कम से कम काल रहे तो वह मात्र एक अंतर्मुहूर्त ही रह सकता है। यह जघन्य काल की बात चल रही है। अब आगे कहते हैं- **एक अंतर्मुहूर्त से कम अर्थात् एक समय, दो** समय, **तीन** समय, **चार समय आदि अथवा एक आवली काल पर्यंत नहीं रह सकता है।** यह एक आवली काल पर्यंत नहीं रह सकता है तो कितना रहेगा ? बोलो-बोलो, कौन बताना चाहेगा ? एक आवली अधिक एक समय उसको जघन्य अंतर्मुहूर्त कहा न ? तो वह बात यहां पर बता रहे हैं कि वह संख्यात आवली तक रहेगा। अब **उत्कृष्ट काल,** यहां क्या कह रहे हैं ? उत्कृष्ट काल कितना है ? **साधिक तैंतीस सागर है।** यह **अनुत्तरवासी देवों में एक समय कम तैंतीस सागर पर्यंत अविरतसम्यक्त्व** अर्थात् **चौथा गुणस्थान रहता है।** अभी यहां दो-तीन बातों का जरा खुलासा हम करना चाहेंगे।

यहां एक बात है कि अनुत्तरवासी यानी क्या ? हां, देखो, देखो, यहां जो स्वर्गों

की रचना बतायी गयी है तो दक्षिण और उत्तर के जो स्वर्ग हैं उनमें एक और दो ऐसा नंबर दिया गया है यानी १, २, ३, ४ ऐसा नहीं है, एक और दो। ख्याल में आया ? दक्षिण के और उत्तर के। तो वे सौधर्म ईशान ऐसा जो कहेंगे वे एक लेव्हल में हैं। वैसे सोलह स्वर्ग हैं, दो-दो, दो-दो, करते-करते आठ जोड़ी हैं। वह आठ स्वर्गों के बाद ग्रैवेयक हैं, वे ग्रैवेयक भी नौ हैं। एक के ऊपर दूसरा, दूसरे के ऊपर तीसरा, ऐसे नौ ग्रैवेयक हैं और उन नौ ग्रैवेयकों के बाद नौ अनुदिश हैं। यानी वह अनुदिश यानी कैसा है ? कि उत्तर, दक्षिण, पूरब, पश्चिम यह मुख्य दिशायें और बाकी चार विदिशायें जिसको हम कहते हैं नैऋत्य, ईशान, आग्नेय, वायव्य वगैरह-वगैरह ऐसे आठ और बीचों बीच एक - ऐसे नौ विमान जो हैं उनको कहते हैं अनुदिश। उसके ऊपर पांच जो विमान हैं जिसमें बीच में सर्वार्थसिद्धि है, इसतरह स्वर्गों की - उनके विमानों की रचना है तो अनुदिश के ऊपर अंत में जो पांच विमान हैं उनको अनुत्तर कहते हैं।

अनुत्तरवासी यानी क्या ? अनुत्तर में वास करनेवाले यानी रहनेवाले ऐसे जो देव हैं, उनकी क्या बात कर रहे हैं ? देवों में एक समय कम तैंतीस सागर पर्यंत अविरत अर्थात् चौथे गुणस्थान में रहे। अभी ऊपर उसके पहले क्या बताया ? साधिक तैंतीस सागर; साधिक यानी तैंतीस सागर प्लस समथिंग। साधिक कितना है वह भी बतायेंगे। **अनुत्तरवासी देव स्वर्ग से च्युत होकर** यानी वहां से मरकर **पूर्वकोटि वर्ष की आयुवाले मनुष्य में उत्पन्न होते हैं।** यह एक पूर्व यानी कितना बताया था किसको याद है ? एक पूर्व का काल कितना बड़ा है ? बहन आपको याद है एक पूर्व ? *श्रोता: नहीं याद है।* नहीं याद है। आपको ? वाह-वाह, आप नहीं याद रखोगे तो कौन रखेगा ? आप जानती हैं बहन ? कोई बात नहीं, बहनों में कोई जानता है ? हां बहुत अच्छा, हां-हां, फिर से बोलना। *श्रोता: ८४ लाख पूर्व...* कोई बात नहीं। ८४ लाख वर्ष गुणा ८४ लाख वर्ष। उसका गुणाकार कितना आता है ? ७० लाख, ५६ हजार करोड़ वर्ष। यह कितना होगा ? एक पूर्व, ऐसे एक पूर्व, दो पूर्व, तीन पूर्व, दस पूर्व, हजार पूर्व - ऐसे करते जाओ, एक करोड़ पूर्व की आयु किसी जीव की हो सकती है ? अभी इस काल में हमें सौ वर्ष की आयु मिले तो ओहो हो ! सौ साल का हो गया ? और वहां तो कितना है ? ख्याल में आया ?

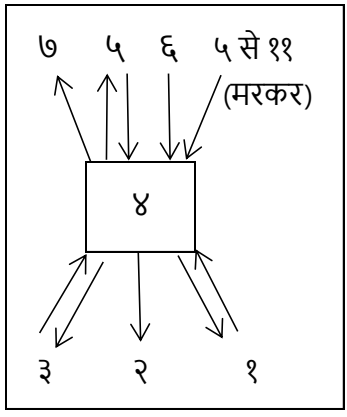
यहां कह रहे हैं, ऊपर से तीसरी लाइन उस पॅरेग्राफ की। अनुत्तरवासी देव स्वर्ग से च्युत होकर पूर्वकोटि वर्ष की आयुवाले मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं। **वहां पर वे**

अंतर्मुहूर्त प्रमाण आयु के शेष रह जाने तक अविरत सम्यग्दृष्टि होकर रहे तो एक समय कम तैंतीस सागर और अंतर्मुहूर्त कम कोटि पूर्व काल पर्यंत चौथे गुणस्थान का उत्कृष्ट काल होता है। ख्याल में आया ? यह बात समझ में आयी सबके ? देखो, **इस अपेक्षा** से **अविरतसम्यक्त्व का उत्कृष्ट काल साधिक** देखो यह साधिक यानी इसका अर्थ क्या हो गया ? यह सागरों का काल है वह इससे भी कितना बड़ा है। इसके सामने जो पूर्वकोटि जो कोई काल है वह कुछ अधिक है। साधिक का अर्थ क्या है ? कुछ अधिक है। यहां अनुत्तरवासी की ३३ सागर की आयु नहीं ली, क्योंकि वे मनुष्य होकर नियम से मोक्ष जायेंगे ही और वे कुछ अधिक काल तक संयम में भी रहेंगे इसलिये उनका चौथे गुणस्थान में रहने का काल उत्कृष्ट नहीं हो सकता।

अब कहते हैं **सातवें नरक में नारकियों की अपेक्षा छह अंतर्मुहूर्त कम तैंतीस सागर काल अविरतसम्यक्त्व चौथे गुणस्थान का है।** यानी देखो, कोई भी जीव सम्यक्त्व के साथ सातवें नरक में जन्म नहीं ले सकता। वहां जाने के बाद, वह जीव कुछ अंतर्मुहूर्त में सम्यक्त्व की प्राप्ति करेगा। ३३ सागर में कुछ अंतर्मुहूर्त कम काल तक वह सम्यक्त्वी रहेगा और वहां सम्यक्त्व से गिरकर फिर आयुबंध करेगा, फिर एक अंतर्मुहूर्त रहेगा और फिर मरेगा। इसलिये वहां क्या कहा ? छह अंतर्मुहूर्त कम तैंतीस सागर काल अविरतसम्यक्त्व चौथे गुणस्थान का है - यह नारकियों की अपेक्षा बताया है लेकिन इन जनरल जो बात कर रहे हैं वह साधिक ३३ सागर जो बताया है वह है। अब यह तो देव और मनुष्य में मिलकर ही होगा। अभी जो नरक में छह अंतर्मुहूर्त कम किये हैं वे कैसे घटित किये हैं उनका यहां एक्स्प्लनेशन है, वह हम घर में जाकर देखेंगे। अभी तो हम आगे बढ़ेंगे, नहीं तो हमें चौथे गुणस्थान से बाहर निकलने का रास्ता ही नहीं मिल रहा है।

अब कहते हैं **मध्यम काल।** मध्यम काल कितना ? **एक अंतर्मुहूर्त जो** है, उस**से लेकर साधिक तैंतीस सागर काल के बीच में जितने भी भेद हो सकते हैं, वे सर्व अविरतसम्यक्त्व के चौथे गुणस्थान के मध्यम काल के प्रकार समझना चाहिये।** अभी हम पुस्तक बंद कर दें, फिर देखेंगे हम पुस्तक से ही। देखो, अभी चौथे गुणस्थान में पहले में पहले हम देखेंगे कि चौथे गुणस्थान से गमन कहां-कहां होगा ? ऊपर के गुणस्थानों की बात करेंगे। तो बिना चार्ट को देखते हुये हम पहले सोचेंगे क्योंकि चार्ट में तो सब लिखा लिखाया है और हम देखकर बोलेंगे लेकिन शाम के

आखरी क्लास तक भूल जायेंगे।



अभी हम पहले विचार करते हैं कि चौथा गुणस्थान है तो चौथे गुणस्थान से ऊपर में ऊपर, अधिक से अधिक ऊपर के कौनसे गुणस्थान में जा सकेंगे ? चौदहवें गुणस्थान में जायेंगे कि नहीं भाईसाहब ? चौथे से चौदहवें में जायेंगे कि नहीं ? जायेंगे न, अरे बोलो भैया, आप बहुत नाराज हैं हमसे ? आप बताना साहब ऊपर में ऊपर कौनसे गुणस्थान में जायेंगे। *श्रोता: सातवें।* सातवें और उसके लिये कंडिशन क्या होनी चाहिये ? क्योंकि सात तो यहां लिखा है और आपने बताया भी है। लेकिन हम ऐसा थोड़े ही छोड़नेवाले हैं क्योंकि हम दिल से बोल रहे हैं, समझकर बोल रहे हैं या ऐसे ही देखा देखी बोल रहे हैं ? क्योंकि गोली मारनी, लगी तो लगी, नहीं तो होली। क्यों ? *श्रोता: वे मुनिराज होने चाहिये।* यानी वे द्रव्यलिंगी अवस्था में होने चाहिये। द्रव्यलिंगी मुनिराज होने चाहिये और वे अगर अंदर में इतना पुरुषार्थ करे तो चौथे से सातवें में चले जायेंगे। यह बात नक्की हो गयी।

अब उसके बाद में कौनसा गुणस्थान है ? सात के बाद छठा आता है। तो चौथे गुणस्थान से छठे गुणस्थान में कोई जायेगा कि नहीं ? *श्रोता: नहीं जायेगा।* क्यों नहीं जायेगा ? *श्रोता: वह गिरने का गुणस्थान है।* वह गिरने का गुणस्थान है। अभी हम आसानी से बोलेंगे, सातवें के बाद में आता है, बराबर है। चढ़ने के गुणस्थान में छठे का नंबर नहीं आता है, चढ़ने के गुणस्थान में दूसरे का नंबर नहीं आता है। वह ख़ास स्पेशल, गिरनेवालों को लँडिंग - सेफ लँडिंग के लिये है।

अब फिर उसके बाद और कौनसा गुणस्थान रह गया ? पांचवां। तो चौथे से

पांचवें में जायेगा कि नहीं ? हां साहब ? *श्रोता: जायेगा।* जायेगा। आप क्या कहते हैं भाईसाहब ? तो उसके लिये कंडिशन क्या होनी चाहिये ? हां रमेशभाई आप बता रहे हैं ? *श्रोता: दो कषाय चौकड़ी के अभाव सहित हों।* अभी आपने अलग भाषा में बताया। आपको यह बताना है कि वह द्रव्यलिंगी मुनि हो सकेगा या द्रव्यलिंगी श्रावक हो सकेगा। अब उन्होंने कर्मों की भाषा में बात बतायी। हमने जो यहां जो है न, आप आये नहीं थे उस समय सारी बात हुयी थी। द्रव्यलिंगी श्रावक यानी क्या ? वह बाह्य में तो अणुव्रत आदि पालन करता है, प्रतिमाधारी है, लेकिन अंतरंग में उस प्रकार की विशुद्धि नहीं है। ऐसा जीव अगर उग्र पुरुषार्थ करे तो चौथे से पांचवें में चला जायेगा। इसका अर्थ यह है कि पहले बाह्य लिंग धारण करने की आवश्यकता है जो भूमिका अनुसार जहां जैसा हो।

हम अभी मुनि की बात करते हैं तो २८ मूलगुण का पालन भी आगम के अनुसार-आगमोचित, आगमानुसार ही होना चाहिये। उसमें जरा भी कहीं गड़बड़ी होती है तो उसको द्रव्यलिंगी भी नहीं कहेंगे। वैसे ही वही जीव पुरुषार्थ करने में थोड़ी कमी आ जाये पांचवें में चला जायेगा। बाह्य में तो नग्नत्व आदि सब चालू है, अणुव्रत आदि जो हैं उसका पालन जो बराबर करता हो वह जीव पांचवें में जायेगा और कोई अणुव्रत आदि नहीं लिये हैं और वह एकदम डायरेक्ट चौथे से पांचवें में जाये, ऐसा कभी हो नहीं सकता। भाईसाहब पंचम गुणस्थान में जाना है तो बाह्य में अणुव्रत इत्यादि का पालन होना चाहिये। जैसे जिसने जो प्रतिमा धारण की है उसके अनुसार उतना जिसका अंदर से पुरुषार्थ होगा वैसे वह वहां जायेगा।

अब क्या कहते हैं ? चौथे से पांचवें में यानी ऊपर के जो गुणस्थान हैं वे तो हमने देख लिये- सातवां, पांचवां और चौथे से चौथे में जायेगा कि नहीं ? है ही न, जाने की क्या जरूरत है ? अब नीचे की तरफ हम देखते हैं, चौथे के नीचे। तो चौथे से कहां-कहां जा पायेगा ? हां, बहन आप बोलना ? *श्रोता: तीसरे में जायेगा।* तीसरे में बताया आपने, हां तो उसके लिये क्या कंडिशन होनी चाहिये ? किसका उदय होगा तीसरे में जाने के लिये और किसका उदय नहीं होगा ? दर्शनमोहनीय कर्म की अपेक्षा से सोचेंगे हम। *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व का उदय होना चाहिये।* सम्यग्मिथ्यात्व का उदय होना चाहिये। देखो, बहुत अच्छा। हम बिना कारण डरते हैं क्या होगा, क्या होगा? अरे, यह तो आसान है।

हम तो उस जीव की बात कर रहे हैं जो चतुर्थ गुणस्थान में गये हैं और उनके सम्यक् प्रकृति का उदय चल रहा है और जो मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व का जिनके सदवस्थारूप उपशम है। एक समय बाद में उदय में आने योग्य है। लेकिन सम्यग्मिथ्यात्व उदय में आ जाये तो वह जीव तीसरे में जायेगा। अब और कौनसा गुणस्थान है, कौन बताना चाहेगा ? हां, महिलाओं में से कोई बतायेंगी, *श्रोता: दूसरे में जायेगा।* दूसरे में जायेगा तो उसके लिये कंडिशन क्या होनी चाहिये ? *श्रोता: अनंतानुबंधी का उदय।* हां, अनंतानुबंधी का उदय और वह कब होगा ? और वह कौनसा- क्षायिक सम्यक्त्वी होगा या क्षायोपशमिक ? क्या बोलते हैं ? वह कौनसे सम्यक्त्व के साथ होना चाहिये ? *श्रोता: औपशमिक सम्यक्त्व।* हां, बहुत अच्छा, यहां से किसीने जोर से बोला, आपने ? बहुत बढ़िया-बहुत बढ़िया। देखो दूसरे गुणस्थान में जाने के लिये प्रायर कंडिशन, अटमोस्ट कंडिशन वह जीव औपशमिक सम्यग्दृष्टि होना चाहिये तो ही वह दूसरे में जायेगा। यह मुख्य बात है।

क्या कहा ? क्षायिक सम्यग्दृष्टि क्यों नहीं जायेगा दूसरे गुणस्थान में- आप ही बोलो ? *श्रोता: सात कर्मों का क्षय हो गया।* सत्ता में वे सात कर्म हैं ही नहीं तो सवाल ही किधर है ? उन कर्मों की सत्ता अभी क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि के भी है तो वह क्यों नहीं जायेगा ? इस प्रश्न का उत्तर मैंने दिया था। दिलीपभाई आप बोल रहे हैं, कौन बोल रहे हैं ? आप हां साहब ? आप जरा जोर से बोलेंगे। क्या होता है माइक की आवाज है न, वह हमारे दिमाग में बैठी है। तो आप जितना स्लो बोलोगे वह कुछ नहीं समझता है। टाइम वेस्ट होता है। देखो, क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि किसको कहा जाता है ? अरे जिसके सम्यक्त्व मोहनीय का उदय चल रहा है। ख्याल में आया ? वहां दूसरे गुणस्थान में सासादन में क्या हो रहा है ? वहां दर्शनमोहनीय कर्म की तीनों प्रकृतियों में से किसीका भी उदय नहीं है। उन तीनों का प्रशस्त उपशम है, वे अंतर के ऊपर पड़ी हैं। लेकिन यहां सम्यक् प्रकृति का उदय है और मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व तो दूसरे निषेक में पड़े हैं क्योंकि उनका सदवस्थारूप उपशम चल रहा है। क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि के अनंतानुबंधी के उदय के साथ मिथ्यात्व का भी उदय होता है इसलिये वह सीधा पहले गुणस्थान में आता है।

अभी और कहां नीचे जायेगा ? हां सुरेशभाई ? *श्रोता: पहले गुणस्थान में।* पहले गुणस्थान में। बहुत अच्छा। हां अभी जो गमनागमन देखा है वह कौन बताना चाहेगा ?

भले बोर्ड की तरफ देखकर बोलना। सुरेशभाई आप ढाढ़स करोगे ? बोर्ड की तरफ देखकर बोलना चौथा गुणस्थानवर्ती ऊपर गमन करेगा तो कहां-कहां गमन करेगा ? *श्रोता: चौथे से पांचवें में और चौथे से सातवें में।* चौथे से पांचवें में और चौथे से सातवें में। यह कितना आसान है, उसमें क्या डरना ? डर लगता है तो दो रोटी ज्यादा खाना, उसमें क्या है, नहीं तो अन्य को खिलाना अपना क्या जाता है ? नीचे गमन करेगा तो कहां-कहां ? तो बोलते हैं तीन, दो और एक। यह बात समझ में आयी ? अशोकभाई बात कुछ गले उतरती है कि नहीं ? बहुत बढ़िया। आज तो सबने लापसी खायी है न तो फटाफट गले के नीचे उतरेगा अभी जो सिखायेंगे हम !

अभी आगमन कहां-कहां से होगा ? कौन-कौनसे गुणस्थान से चौथे गुणस्थान में जीव आयेगा ? महिलाओं से जवाब चाहिये और जो बोलती नहीं ऐसी महिलाओं से जवाब चाहिये। हां बहन आपके बाजू में जो बहन बैठी हैं, हां आप अभी बोलो आप, देखकर बोलो चिंता नहीं। *श्रोता: पांचवें गुणस्थान से चौथे गुणस्थान में आयेगा।* पांचवें गुणस्थान से चौथे गुणस्थान में आयेगा। है न ? पांचवें से आयेगा और कौनसे ? छठे से भी आयेगा। सातवें से आयेगा कि नहीं ? नहीं। देखो-देखो, अभी मैं बताता हूं सातवें से भी आयेगा, सुनना। अगर सातवें गुणस्थान में रहते हुये किसी जीव का मरण हो जाये तो वह चौथे में चला जायेगा; मरण की अपेक्षा से। कोई बात नहीं, यह बात आज की तारीख में हमारे लिये नयी है न, क्योंकि अभी तक हम सम्यक्त्व देखे ही नहीं थे। अभी सम्यक्त्वी हुये, मर जावे तो चौथा गुणस्थान कंटिन्यू रहेगा। हां,अभी वह सातवांवाला भी सम्यक्त्वी है उनका मरण हो जाय तो वह चौथे में आयेगा यानी सात, छह, पांच।

अब नीचे के गुणस्थान से कहां-कहां से आयेगा ? हां बोलो, आप बोलना चाहते हैं, हां बोलो बहन ? *श्रोता: पहले से आयेगा।* पहले से आयेगा। दूसरे से ? *श्रोता: नहीं आयेगा।* नहीं आयेगा। क्यों नहीं ? दूसरे से आयेगा न बहन ? ठहरो, ठहरो, हां मिसेस प्रमोद मेहता ? दूसरे से आयेगा कि नहीं ? *श्रोता: आयेगा।* वही तो मैं कह रहा था और सब लोग ना बोलते हैं। यह महिलाओं में हमेशा झगड़ा ही होता है, एक हां बोलती है तो दूसरी ना बोलती हैं। अरे दूसरा गुणस्थान तो केवल गिरने के लिये हैं, वहां से ऊपर चढ़ने के लिये अन्य गुणस्थान है ही नहीं; क्योंकि हमने देखा सम्यक्त्व से छूट गया है और वह मिथ्यात्व के सन्मुख है तो पहले ही गुणस्थान में वह जायेगा। तो दूसरे से चौथे में कोई नहीं आयेगा। और कहां से आयेगा बहन ? *श्रोता: तीसरे से।* तीसरे से। अभी

बात समझ में आयी ? क्या अभी इसमें कोई संदेह है पन्नालालजी ? आगे बढ़ेंगे ? चलो पुस्तक उठाओ और खोलो पन्ना नंबर ११६।

देखो **गमनागमन अपेक्षा विचार** हम कर रहे हैं। मिल गया सबको ? गमन, **कोई अविरतसम्यक्त्व गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनिराज हो, यदि वे अपने त्रिकाली निज शुद्धात्मा का विशिष्ट पुरुषार्थपूर्वक ध्यान करते हैं तो वे तुरंत अगले समय में सातवें अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में गमन करते हैं। अर्थात् भावलिंगी मुनिराज बन जाते हैं।** क्या कहा ? चौथे से सातवें में जायेगा वह कौनसा जीव होगा ? देखो भाई, हम एक दफे किसी गांव में गये थे सुभाषभाई। वहां के कुछ लोग कहने लगे कि कोई भी जीव पहले गुणस्थान से सातवें गुणस्थान में ही जाता है क्योंकि वह बाह्य चारित्र बिलकुल २८ मूलगुण पालन करता है इसलिये वह सातवें में ही जाता है। वह पांचवें में, चौथे में नहीं जा सकता है। ऐसा उनका हमारे से विवाद चला। लेकिन भाईसाहब ऊपर जब कोई गुणस्थान चढ़ता है तो वह शुद्धोपयोग से चढ़ता है, शुभभाव से चढ़ता ही नहीं है। अगर शुभभाव से चढ़े तो फिर शुद्धोपयोग करने की गरज ही क्या है ? शुभभाव करे, करे और ऊपर चले जाये- ऐसा कभी नहीं होता।

ऐसी बात होती है, लोगों की कुछ-कुछ गलतफहमियां होती हैं। अरे भाई तो फिर वह चौथे में कैसे गये ? बाह्य में तो २८ मूलगुण थे न। अरे भाई, उनके ऐसा पुरुषार्थ हुआ नहीं कि जिसके निमित्त से तीन कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ, एक ही कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ। तो कहते हैं वह चौथे गुणस्थान में बाह्य में तो नग्न दिगम्बर हैं २८ मूलगुण यथोचित पालन कर रहे हैं, लेकिन शुद्धात्मा में उतनी एकाग्रता या दृढ़तापूर्वक स्थिरता नहीं है तो एक कषाय चौकड़ी का अभाव हो जाये या दो कषाय का हो जाये तो चौथे या पांचवें में जायेंगे। तीन कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक ऐसी जो वीतरागता जिनमें प्रस्थापित हुयी वे सातवें में जायेंगे। परंतु शुभभाव के कारण कोई ऊपर के गुणस्थान में जा नहीं सकता। देखो आज सुबह ही बात हुयी थी न ! उन लोगों की मान्यता में राग करते-करते वीतरागता बढ़ जाये इसी बात की सिद्धि हुयी न भाई ? ऐसा है नहीं। तो यहां जो बात चल रही है, वहां कह रहे हैं कि जो जीव सातवें में जायेगा वह क्या है ? द्रव्यलिंगी होना चाहिये और उसका पुरुषार्थ ऐसा उग्ररूप से हो जाये कि वह डायरेक्ट सातवें में चला जाये। यह बात ख्याल में आ गयी ?

अब कहते हैं **चतुर्थ गुणस्थान में तो एक कषाय चौकड़ी के अभाव से उत्पन्न वीतराग परिणति सहित थे और सातवें में जाते ही तीन कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक व्यक्त महान वीतरागता के अपूर्व आनंद का रसास्वादन करने लगते हैं।** अभी प्रश्न थोड़ासा जल्दी-जल्दी पढ़ लेते हैं। **क्या चौथे से सातवें गुणस्थान में जानेवाले मुनिराज को यह अपूर्व परिवर्तन समझ में आता है ?** यानी मैं अभी चौथे में था, अभी मैं सातवें में गया हूं तो क्या मुझे पता लगता है ? बिलकुल पता लगता है। अनुभव हो रहा है न ! काहे का ? अतीन्द्रिय आनंद का और आनंद में जो वृद्धि हुयी है। अभी रोज हम भोजन करते हैं तो भोजन करने से हमको आनंद आता है। लेकिन आज लापसी खायी तो ? विशेष आनंद आया ऐसा लोग समझते हैं। यह तो उदाहरण है। वहां एक कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक जो अतीन्द्रिय आनंद का उनके सुख का वेदन था, अतीन्द्रिय सुख का जो अनुभव था और उससे उसमें वृद्धि हो जाये तो पता नहीं लगे ? हम भी घर में क्या करते हैं ? बहुत गर्मी होती है तो पंखा लगाते हैं और पंखा लगाने से हमारा मन नहीं भरता है तो एसी चालू करते हैं। तो एसी से जो ठंडक हो रही है वह हमें पता नहीं लगे क्या ? यह बाह्य में जो हम जिसके सुख के साधन मानते हैं उसमें भी हम सुखी बनना चाहते हैं वह तो हमें पता लगे और यहां अंतरंग में सुख का, अतीन्द्रिय आनंद का वेदन हो रहा है वह अधिक प्रमाण में हो रहा है या कम प्रमाण में हो रहा है इस बात का एहसास नहीं होगा ? बिलकुल होगा। वही उत्तर अभी यहां दे रहे हैं।

देखो-देखो कह रहे हैं क्या चौथे से सातवें गुणस्थान में जानेवाले मुनिराज को यह अपूर्व परिवर्तन समझ में आता है ? **क्यों नहीं, अवश्य समझ में आता है। जो आत्मा क्रोधादि विभावभावों का अनुभव कर सकता है तो वही आत्मा चारित्र गुण के व्यक्त सुखद स्वभाव परिणमन का अनुभव क्यों नहीं कर सकेगा ? यथा पदवी व्यक्त वीतरागता से उत्पन्न आनंद का अनुभव मुनिराज अवश्य करते ही हैं। उन्हें गुणस्थान को जानने का विकल्प ही नहीं होता।** अभी मैं कौनसे गुणस्थान में आया हूं ऐसा विकल्प नहीं आता है क्योंकि वह पर का ध्यान हो गया, पर्याय का ध्यान हो गया। वे तो अपने स्वरूप में, अपने स्वभाव में एकमेक हुये हैं। उन्हें गुणस्थान को जानने का विकल्प नहीं होता। अतः गुणस्थान का ज्ञान नहीं होता। लेकिन वहां क्या है ? कि अतीन्द्रिय आनंद में जो वृद्धि होती है उसका वेदन तो अवश्य होगा।

आगे, **चतुर्थ गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनिराज अथवा चतुर्थ गुणस्थानवर्ती व्रती द्रव्यलिंगी श्रावक चौथे गुणस्थान से देशविरत यानी पंचम गुणस्थान में भी प्रवेश** यानी **गमन कर सकते हैं।** इसकी चर्चा तो हमने की है, अभी यहां पर पढ़ लेते हैं। **पहले से चौथे गुणस्थान में प्रवेश करना हो अथवा चौथे से ऊपर के किसी भी गुणस्थान में प्रवेश करना हो, तो निज शुद्धात्मा का ज्ञान तथा ध्यान अनिवार्य है।** यानी वे चौथे में गये न, यह पहले से चौथे की बात कर रहे हैं। तो कह रहे हैं कि निज शुद्धात्मा का ज्ञान और साथ में क्या बताया ? निज शुद्धात्मा का ध्यान दोनों की आवश्यकता है। **शुद्धोपयोगपूर्वक ही चतुर्थ गुणस्थान में व इससे ऊपर के गुणस्थानों में जाना संभव है। ऐसा होने पर जहां जितने कर्मों का उपशम, क्षयोपशम, क्षय होना होता है, वे सभी कार्य भी एक साथ अपने आप ही हो जाते हैं।** इस जीव को कुछ करना नहीं पड़ता है कि कर्मों का मैं उपशम करूं, या कर्मों का मैं क्षय करूं। कर्मों की तरफ देखेगा तो आत्मानुभूति नहीं होगी। बात ख्याल में आती है न ? उसको क्या करना है ? अपने स्वरूप में गुप्त हो जाना है, स्वरूप में रमणता करनी है। बाहर में क्या हो रहा है सो होगा, उससे मेरा कोई संबंध नहीं है। जो कुछ हो रहा है और मेरे ज्ञान में आ रहा है उसका मैं ज्ञाता हूं ऐसा उनके तो निश्चित होता है।

प्रश्न ३७- मिथ्यात्व गुणस्थान से सातवें अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में और चौथे अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान से सातवें अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में द्रव्यलिंगी मुनिराज ही गमन करते हैं, ऐसा क्यों कहा ? कोई भी व्रती या अविरत सम्यग्दृष्टि श्रावक सातवें में गमन करके छठे गुणस्थान में आकर बाह्य दिगम्बर मुनिदीक्षा धारण क्यों नहीं करते ? अभी हो सकता है कि हमारे लेखक हैं पं. ब्र. यशपालजी, उनको किसीने ऐसे ढंग से प्रश्न पूछा होगा तो उसका उत्तर देते हैं। **जब तीन कषाय चौकड़ी के अनुदयरूप अभावपूर्वक वीतरागता व्यक्त होती है, तब कपड़े पहनने का राग परिणाम ही नहीं रहता** है। **और रागभाव नहीं रहने से कपड़े आदि बाह्य परिग्रह भी नहीं रहते** हैं। **यही सुमेल है। राग परिणाम कपड़े पहनने का काम कराता है, जब राग ही नष्ट हो गया तो कपड़े पहनेगा कौन ? बाह्य परिग्रह के अभावपूर्वक ही अप्रमत्तपने का सुमेल है। ऐसा ही दोनों में सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। इसलिये सातवें अप्रमत्तसंयत गुणस्थान की प्राप्ति के पहले ही कपड़े आदि सर्व बाह्य परिग्रह का बुद्धिपूर्वक त्याग पहले, चौथे अथवा पांचवें**

गुणस्थान में कषाय के मंद। यानी पहले में से वह त्याग करेगा तो उस समय कषाय **मंद**, चौथे में आयेंगे तो **मंदतर** और पांचवें में आयेंगे तो **मंदतम उदय में हो ही जाता है। अतः द्रव्यलिंगी मुनिराज ही सातवें गुणस्थान में गमन करते हैं।**

अब आगे चले, अभी बहुत सारे प्रश्नोत्तर हैं उनको छोड़ते हुये हम आगे बढ़ेंगे। पेज नंबर ११९ यहां तीसरा पॉइंट दिया है। अभी तक हमने क्या देखा ? पांचवें में और सातवें में जाता है या सातवें में या पांचवें में जाता है। अभी क्या कह रहे हैं ? अब चौथे गुणस्थान से यह पेज नंबर ११९ पर एक पॅरेग्राफ के बाद दो लाइन हैं वह पढ़ रहा हूं। **अब चौथे गुणस्थान से नीचे के गुणस्थानों में गमन करने के संबंध में विचार करते हैं।** यह तीसरा पॉइंट। **चतुर्थ गुणस्थानवर्ती अविरत सम्यग्दृष्टि के सम्यग्मिथ्यात्व नामक दर्शनमोहनीय कर्म की सत्ता हो और उसकी निर्मल श्रद्धा अपने ही अपराध से** यानी दूसरा कोई करावे ऐसा नहीं, वह जो श्रद्धा में जो कोई मलिनता मतलब ढिलास हो जाती है वह अपने ही कारण से होती है, अपने ही अपराध से या **पूर्व कुसंस्कारवश से मिश्र भावरूप हो जाये** यह भी निमित्त का कथन है। **तो उसी समय मिश्र कर्म का उदय आने से** यानी सम्यग्मिथ्यात्व कर्म का उदय आने से **वह तीसरे मिश्र गुणस्थान में प्रवेश करता है।**

अब चौथा नंबर- यह हमने देखा था अभी, इसलिये सिर्फ पढ़ लेते हैं। **यह चतुर्थ गुणस्थानवर्ती यदि औपशमिक सम्यग्दृष्टि हो और स्वयमेव ही विपरीत पुरुषार्थ से उसे अनंतानुबंधी कषाय परिणाम हो जाये तो उसी समय अनंतानुबंधी कषाय कर्म का उदय भी स्वयमेव ही आता है और यह जीव सासादनसम्यक्त्व नामक दूसरे गुणस्थान में गमन करता है।** यह भी हमने देखा था कि चौथे से दूसरे में जानेवाला जीव औपशमिक सम्यग्दृष्टि ही होना अनिवार्य है। अब आगे कहते हैं, पांचवां नंबर- यदि **क्षायिक सम्यग्दृष्टि को छोड़कर,** यानी क्या ? दोनों होने चाहिये- **किसी अविरत सम्यग्दृष्टि की परिणति।** यानी जो औपशमिक सम्यग्दृष्टि या क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि हैं, ऐसे जीव की परिणति **मिथ्यात्व भावरूप हो जाये और उसी समय मिथ्यात्व कर्म का उदय आ जावे तो वह मिथ्यात्व गुणस्थान में प्रवेश करता है।** यह तो गमन की बात हुयी।

अभी **आगमन** को भी देख लेते हैं। आगमन को कह रहे हैं यानी चौथे

गुणस्थान में कहां-कहां से जीव आयेंगे तो उनका आगमन कहां-कहां से होता है यह बात बता रहे हैं। **सादि या अनादि मिथ्यादृष्टि जीव शुद्धात्मा के आश्रय से मिथ्यात्व मिथ्यात्व गुणस्थान से सीधे अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान** यानी चौथे गुणस्थान **में आ सकते हैं।** देखो, यहां दो बातें बतायी हैं- मूल में तो वह मिथ्यादृष्टि होना चाहिये, भले ही वह अनादिकालीन होवे या सादि होवे। सादि यानी एक बार सम्यक्त्व प्राप्त करेगा और बाद में उससे गिर जावे फिर मिथ्यादृष्टि हो जाये। लेकिन मिथ्यादृष्टि जो है वह पहले से चौथे गुणस्थान में आते हैं ऐसा बता रहे हैं। दूसरा पॉइंट- सम्यग्मिथ्यात्व यह सम्यग्मिथ्यात्व यानी कौनसा गुणस्थान बहन ? *श्रोता: तीसरा।* तीसरा। हां, उसका दूसरा नाम क्या है ? *श्रोता: मिश्र।* मिश्र, भूलना नहीं, कोई बात नहीं। **सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती जीवों का भी शुद्धात्मा के आश्रय से अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान में आगमन हो सकता है।** तीसरा पॉइंट -देशविरत, देशविरत यानी कौनसा गुणस्थान गणेशजी ? *श्रोता: पांचवां।* पांचवां। याद है न ? तो कहते हैं **देशविरत गुणस्थानवर्ती जीवों का अपनी पुरुषार्थ-हीनता से।** यानी वह जो गिर गया है वह तो कर्म का उदय आया है इसलिये नहीं गिरा है। अपनी ही कचास से, अपनी ही कमजोरी से क्या हो गया ? पुरुषार्थ हीनता हुयी यानी अप्रत्याख्यानावरण कषाय हो जाये तो **अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान में आना संभव है।**

उसके आगे- **छठे गुणस्थानवर्ती महामुनिराज भी अपने पुरुषार्थ की कमी से सीधे चौथे गुणस्थान में आ सकते हैं।** अब पेज नंबर १२१ पर हम आयेंगे। वहां ५ नंबर का जो पॉइंट है, वहां कह रहे हैं **उपशमश्रेणी की अपेक्षा उपशमश्रेणी के चारों गुणस्थानों में मरण हो जाये तो सीधे चौथे गुणस्थान में आते हैं अर्थात् मरण के अंत समय पर्यंत तो श्रेणी का वही गुणस्थान रहता है।** अभी यहां उन्होंने श्रेणी की बात की है, मैंने तो आपको सातवां गुणस्थान भी बताया था। यहां चार्ट में तो बहुत बढ़िया लिखा है। क्या लिखा है ? पांचवें से लेकर ग्यारहवें तक; यह पांचवें से लेकर ग्यारहवें यानी ? पांचवां, छठा, सातवां, आठवां, नौवां, दसवां और ग्यारहवां - इन गुणस्थानों में अगर किसी जीव का मरण हो जावे, तो वह नियम से मरकर चौथे गुणस्थान में आता है। यहां तो उन्होंने केवल श्रेणी की बात की है।

मेरा एक प्रश्न ऐसा है जो क्षपकश्रेणी चढ़नेवाला आठवें या दसवें गुणस्थान में होगा, आठवां या दसवां- नौवां चाहिये तो नौवां ले लो; अगर उसका मरण हो जाये तो

चौथे में आयेगा या नहीं दिलीपभाई ? जोर से बोलना। *श्रोता: आयेगा।* आयेगा। पन्नालालजी के बगल में बैठे भाईसाहब ? हां, बोलो-बोलो उनको बताओ कि मैं पन्नालाल हूं। *श्रोता: आयेगा।* आयेगा, बहुत अच्छा चारुबहन आप क्या कहती है ? *श्रोता: नहीं आयेगा।* अरे वाह, दिव्यध्वनि खिरी ! यह बहन कहती हैं, अभी बहन बोलना पड़ता है वह मेरी सास है। इतना अच्छा मौका कहां कि हम उनको चुप बिठाये। क्या कह रहे हैं ? अरे क्षपकश्रेणी जो जीव चढ़ता है वह मरता ही नहीं। क्या बात कर रहे हो ? हां उनका तो निर्वाण होगा, उनका मरण नहीं होगा। आठवें में, नौवें में, दसवें में, बारहवें में, तेरहवें में, चौदहवें में और चौदहवें के बाद तो उनका निर्वाण होना है। वे नीचे गिरकर चौथे गुणस्थान में आने का सवाल ही नहीं है। आगे बढ़ते हैं।

अब ४५ नंबर का प्रश्न देखते हैं। **अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान** के यानी चौथे गुणस्थान **की प्राप्ति के लिये पात्रता का स्वरूप क्या है ?** यह मैं प्रश्न लेनेवाला नहीं था लेकिन हमारे भाईसाहब, अब नाम तो मैं नहीं जानता हूं, जिन्होंने यह प्रश्न पूछा था यह कुदेव को नमन करे वगैरह-वगैरह तो उन्होंने कहा यह बात मैंने जानबूझकर आपसे पुछवायी थी क्योंकि आप दस बार भी बोलो तो लोगों की भावना बदलती नहीं। वे अपने ही आंखों को झापड़ लगाकर घूमते हैं, इधर-उधर देखने को तैयार नहीं हैं। ऐसा भाईसाहब ने अभी मुझे कहा। तो उनके लिये यह प्रश्न मैं दुबारा ले रहा हूं। क्या कहा ? अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान की प्राप्ति के लिये पात्रता का स्वरूप क्या है ? **गृहीत मिथ्यात्व का पूर्ण त्याग आवश्यक है।** यह गृहीत मिथ्यात्व किसको कहना ? कि कुदेव, कुगुरु, कुशास्त्र और उनके सेवक जो हैं उनके पीछे लगना जिसको छह अनायतन कहते हैं। वह कौन है ? गृहीत मिथ्यात्वी है। तो गृहीत मिथ्यात्व का पूर्ण त्याग आवश्यक है तब वह सम्यक्त्वी होगा।

यहां तो पूछा गया था सम्यक्त्व में क्या बोलते हैं ? कोई दोष लगता है क्या ? उसके लिये उन्होंने चार शब्द वापरे- अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार या अनाचार। भैया जिसके सम्यक्त्व होगा उसके यह दोष लगेंगे। जिसके अभी सम्यक्त्व है ही नहीं तो उसे दोष लगने का सवाल ही कहां उठता है ? यहां क्या कह रहे हैं ? **रागी-द्वेषी देवी-देवताओं को मानने, पूजनेवाले गृहीत मिथ्यादृष्टि जीव को चौथा अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान प्राप्त नहीं हो सकता।** यह मैं बोल रहा हूं इसलिये नहीं, यहां तो लिखा है और यह आगम के अनुसार ही लिखा है। **वीतरागी, सर्वज्ञ व हितोपदेशी देव ही**

सच्चे देव हैं; वीतरागता की पोषक वाणी ही सच्चे शास्त्र हैं। छठे-सातवें गुणस्थान में झूलनेवाले भावलिंगी दिगम्बर साधु ही गुरु हैं ऐसा दृढ़ श्रद्धावान मिथ्यादृष्टि ही सम्यग्दृष्टि होने के लिये ही पात्र हैं। सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की अंतरंग-बहिरंग लक्षण दृष्टि से निर्णयात्मक ज्ञान-श्रद्धा के बिना कोई कितना ही प्रयास करे वह जीव अविरतसम्यक्त्व नामक चौथे गुणस्थान को प्राप्त नहीं कर सकता।

देखो, मैं आपको इसके साथ-साथ एक बात बताता हूं। जिसको-जिसको सम्यग्दर्शन होता है किसी भी जीव को, हम मनुष्य की अपेक्षा से सोचेंगे अभी, उसको नियम से निमित्तरूप से सच्चे देव-गुरु-शास्त्र ही होंगे। ख्याल में आया ? बहुत से लोग बोलते हैं यह फलां-फलां एक्स वाय झेड। अभी नाम लेने के लिये मैं नाम ले रहा हूं कि उनकी बात बताने की नहीं है। यह रामकृष्ण परमहंस, रामकृष्ण परमहंस क्या वे सम्यक्त्वी थे या नहीं ? क्यों साहब ? अरे उनके पंथ में भी नग्न घूमते हैं। तो क्या बोलना उनको ? सच बोलो तो डंडे पड़ जावें ऐसी बात है। हम उनसे इतना ही पूछना चाहते हैं यानी हमने उस समय ऐसा बोला था क्या वे सच्चे देव-गुरु-शास्त्र को मान रहे हैं या नहीं ? उनका तो अलग पंथ है। इसका अर्थ क्या हो गया ? यानी निमित्त भी होता है निमित्त कार्य कुछ नहीं करता, लेकिन निमित्त को देखते हुये हम यह निर्णय करते हैं कि अभी क्या चल रहा है। ख्याल में आया ?

यहां देखो क्या बताते हैं ? सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के अंतरंग-बहिरंग लक्षण के निर्णयात्मक ज्ञान, श्रद्धा के बिना कोई कितना ही प्रयास करे वह जीव अविरतसम्यक्त्व नामक चौथे गुणस्थान को प्राप्त नहीं कर सकता। **देव-शास्त्र-गुरु इन तीनों में से किसी एक का भी यथार्थ श्रद्धान ना हो तो** ? कौन तीन लिये ? हां सुरेशभाई, तीन किसकी बात करी ? इन तीनों में से एक का भी श्रद्धान यथार्थ ना हो ऐसा बताया। देखो-देखो फिर से पढ़ना- देव-शास्त्र-गुरु इन तीनों में से किसी एक का भी श्रद्धान यथार्थ न हो तो **तीनों का सच्चा श्रद्धान नहीं है।** देखो, यहां क्या कहना चाहते हैं ? आज की तारीख में वर्तमान में तो ऐसा प्रसंग है, कैसा ? कि हम अगर देव के बारे में कुछ कहें कि यह देव नहीं है, वह देव है और वह देव नहीं है, यह देव है ऐसा करें तो कोई किसीको गुस्सा नहीं आता है। ख्याल में आया ?

अरे उसके लिये एक ही क्रायटेरिया है। कौनसा क्रायटेरिया ? जिनके बारे में वे देव हैं ऐसी अपनी मान्यता कर रहे हैं क्या वे वीतरागी हैं ? क्योंकि वे सर्वज्ञ हैं कि नहीं हम तो नहीं समझ सकते हैं। आपको देखकर आपको कितना नॉलेज है यह पता लगेगा क्या ? वैसे सर्वज्ञ को देखकर सर्वज्ञ हैं कैसे पता लगे ? लेकिन वीतरागी हैं कि नहीं यह तो पता लगे कि नहीं ? ख्याल में आया ? तो वीतरागता जो है वह तो बिलकुल ख्याल में आवे ऐसी बात है। यहां कह रहे हैं कि जब तक देव और हम गुरु की बात करेंगे न, तो बिलकुल गड़बड़ हो जाती है। अरे उनका भी श्रद्धान होना आवश्यक है। क्या लिखा है इधर ? देव-शास्त्र-गुरु इन तीनों में और शास्त्र भी हमें कौनसा है ? कैसा है ? किसने लिखा है ? उसमें राग का पोषण होता है या नहीं होता है ? इस बात का हम निर्णय नहीं कर रहे हैं तो कहते हैं इनका यथार्थ श्रद्धान ना हो तो तीनों का यानी देव का कहो, शास्त्र का कहो, गुरु का कहो, तीनों का सच्चा श्रद्धान नहीं है। **अन्याय, अनीति और अभक्ष्य के बाह्य त्यागमय सदाचारी जीवन के बिना धर्म समझ में आना भी कठिन है।**

क्या कहते हैं ? जब किसी जीव के तीव्र कषाय, संक्लेश परिणाम चलते हो और उसको हम धर्म की बातें बताये तो थोड़े ही वह ॲबसॉर्ब करेगा ? क्या कहते हैं ? जैसे देखो, उदाहरण बहुत अच्छा है घर में महिलाओं को तो जल्दी मालूम पड़ेगा। क्या हैं ? गॅस पर कढ़ाई लगी है और उसमें तेल डाला हुआ है और तेल इतना गरम हो गया जहां टेलीफोन आया तब तक तो बहुत गरम हो गया तेल। अभी तेल बहुत गरम हो गया और उबलने लगा तो उसको ठंडा करने के लिये अगर हम उसमें थोड़ासा ऐसा जल डाल दे। नहीं डालते ? ठंडा करने का है न ? क्या होगा बहन ? अरे आग भड़क जायेगी। वैसा जो तीव्र कषायी जीव है उसको धर्मरूपी जल का सिंचन करो वह भी भड़क उठेगा।

यह बनी हुयी बात है रमेशभाई। एक हमारे यहां आनेवाले एक भाई हैं, उनकी मम्मी बहुत बीमार थी। वह हार्ट पेशंट है और वह कब जावे, कब रहे उसका कोई अता पता नहीं था। डॉक्टर ने हाथ ऊपर कर डाले। तो वह जरा ऐसी कुछ तकलीफ में आने लगी। वह पति पत्नी दोनों जाकर णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं ऐसा मां के सामने... 'ऐ अभी इतनी जल्दी मैं मरनेवाली नहीं हूं, चुप बैठो' ऐसा उनकी मम्मी ने बोला। यह क्या बताता है ? तीव्र कषायी है, संक्लेश परिणामी है। उनको तो उपदेश

देना भी योग्य नहीं है। क्या कहा यहां पर ? क्या बता रहे ? अन्याय, अनीति और अभक्ष्य के बाह्य त्यागमय सदाचारी जीवन बिना धर्म समझ में आना भी कठिन है क्योंकि अंदर में ऐसी तीव्रता है कषायों की। दयाभाव नहीं हैं, शांत परिणाम नहीं हैं। जो शांत परिणामी होगा जो मंद कषायी होगा वह अन्याय से धन उपार्जन नहीं करेगा, अनीति से अपना आचरण नहीं रखेगा और अभक्ष्य का सेवन नहीं करेगा। ख्याल में आया ?

कहते हैं **जैन कुलाचार पालन करनेवालों को अर्थात् अष्ट मूलगुणों** यानी हमने कल देखा था **मद्य, मांस, मधु- इन तीन मकार और पांच उदम्बर फलों के त्यागरूप अष्ट मूलगुणों को धारण किये बिना सम्यक्त्व की प्राप्ति की पात्रता भी नहीं आ सकती है।** यह तो पात्रता की बात की है यानी वह जीव पालन करता हो तो वह सम्यक्त्वी हो गया ऐसा नहीं समझना। यह तो पात्रता है, बेसिक रिक्वायरमेंट है और ऐसा जीव ही अपने आत्मा के बारे में सोच सकेगा। अपने आत्मा के बारे में चिंतन करेगा। ख्याल में आया ? यह तो उसकी पात्रता है। देखो **अन्याय** में क्या बता रहे हैं ? **जिस काम को सरकार भी अयोग्य मानती है, दंडयोग्य समझती है, मनुष्य को जेल में डालती है,** यानी जैसा हम चोरी करें या शेअर बाजार में गफलत करें, कुछ चलता है न आजकल क्या होता है वह ? तो वह कह रहे क्या है ? अन्यायपूर्वक कमाई है- जिसको सरकार दंडयोग्य समझती है, मनुष्य को जेल में डालती है, **देश से बाहर निकाल देती है, फांसी आदि की सजा देती है; ऐसा कोई भी काम करनेवाला मनुष्य अन्यायी है और वह सम्यक्त्व की प्राप्ति के लिये अपात्र है।** जिस समय उसके परिणाम ऐसे तीव्र हैं तो उस समय उसको वह पात्रता नहीं है।

अब **अनीति- जिस काम के कारण जैन समाज अथवा जैनेतर समाज भी मनुष्य की निंदा करे, ऐसा कार्य अनीति की कोटि में आता है। जैसे वृद्ध माता-पिता की सेवा नहीं करना, दूसरों की निंदा करते रहना, लौकिक नीति से विरुद्ध आचरण रखना,** इत्यादि। **अधिक जानकारी के लिये भावदीपिका शास्त्र का औदयिक भावाधिकार देखें।** यह भावदीपिका नामक जो शास्त्र है पंडित दीपचंदजी कासलीवाल ने लिखा हुआ है। बहुत ही असामान्य ग्रंथ है, पढ़ने लायक है। आप अवश्य पढ़ना। अभी **अभक्ष्य** की बात करते हैं- **जिस खान-पान की जैन शास्त्रों में सहमति नहीं है; ऐसे वस्तुओं के भक्षण को अभक्ष्य कहते हैं। जैसे- अनंतकाय**

जीव जिसमें हैं; ऐसे पदार्थ। अनंतकाय यानी क्या ? अनंत जीव जिसमें रहते हैं। कौन है वह ? **प्याज, लहसुन, मूली, आलू, शकरकंद, गाजर आदि जमीकंद का भक्षण।**

देखो-देखो, अभी भक्षण करना क्या और उसका युटिलायझेशन करना क्या ? वह भक्षण के समान ही है। यह आप जानते हैं ॲलोव्हेरा ? ॲलोव्हेरा जानते हैं ? इसको मराठी में कोरफड कहते हैं। अभी गुजराती में क्या बोलते हैं ? मुझे मालूम नहीं है। *श्रोता: गवार फाटा।* हां, वह हिन्दी में गवार फाटा। समझ गये न ? आजकल तो वह साबुन में भी आता है, तेल में भी आता है और किसमें-किसमें नहीं आता है ? तो उसका युटिलायझेशन करना यानी अनंत निगोद जीवों की वहां हिंसा करना है। जहां निगोद जीव रह रहे हैं उसका युटिलायझेशन कर रहे हैं तो हम उसका उपयोग कर रहे हैं। पेट में जाना क्या और शरीर पर लगाना क्या ? ख्याल में आया ? यह बात बिलकुल सत्य है कि वह ॲलोव्हेरा जो होता है उसमें निगोद जीवों का रहठान है; रहठान यानी निवास है। हमने तो यहां तक सुना है कि वह जो गवारफाटा होता है, उसके ऊपर के छिलके निकाल दें तो अंदर का जो गर होता है उसको काटकर उसका आचार बनाकर लोग खाते हैं। बोलो क्या करें ? उसको लेकर यहां इधर-उधर-उधर लगाये क्योंकि स्किन सॉफ्ट होती है। तू स्किनवाला है क्या ? जिसने शरीर को अपना स्वरूप माना है वह जीव ऐसा कार्य कर सकता है। ख्याल में आया ?

अब देखो यहां क्या कह रहे हैं ? यह अभक्ष्य का त्याग कह रहे न। तो यहां पर बता रहे हैं प्याज, प्याज यानी समझ में आया न ? प्याज, लहसुन, मूली, आलू, शकरकंद, गाजर आदि। आगे और क्या कहते हैं ? रात्रिभोजन करना, यह रात्रिभोजन करना भी अभक्ष्य का भक्षण करने समान है। अरविंदबाबू क्यों ? कि देखो यह शाम जब होती है यानी सूर्यास्त हो जाता है तो उस सूर्यास्त के पहले एक अंतर्मुहूर्त यह अपने वातावरण में कीड़े पैदा होते हैं। देखो, अगर आपको इस पर भरोसा नहीं हो तो बारिश के दिनों में...

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

१७. अविरत गुणस्थान - विशेषता, देशविरत गुणस्थान

अपने पिछले क्लास में हम देख रहे थे कि जो जीव सम्यक्त्व प्राप्त करता है उसकी पात्रता क्या होती है ? वहां तो हमने देखा था अन्याय, अनीति और अभक्ष्य का सेवन जो नहीं करता है वही जीव सम्यक्त्व के लिये पात्र है। क्या कहा ? देखो-देखो, यानी वह पात्रता है इसलिये वह सम्यग्दृष्टि है ऐसा नहीं समझना, लेकिन जिसकी पात्रता है उसीको सम्यग्दर्शन होने के चान्सेस हैं। जो मांसभक्षण, मदिरापान आदि करता होगा उसको तो बिलकुल चान्सेस हैं नहीं।

उन्होंने अभक्ष्य में और कौन-कौनसी बातें बतायी हैं ? तो वह हमने देखी थी कि रात्रिभोजन करना। तो रात्रिभोजन करने में क्या दोष है ? हम जब भोजन बनाते हैं रात को तभी तो उसमें कितने ही त्रस जीवों की हिंसा होती है और कुदरती ऐसे जीव उत्पन्न होते हैं कि जिस प्रकार का हमारा भोजन हो। ख्याल में आया ? आप मटर समझते हैं ? महाराष्ट्रियन लोग समझेंगे। गुजराती हां, गीला-गीला मटर, गीला वटाना आपके हिसाब से, मटर। उसके अंदर कौनसे रंग की इयल निकलती है ? लाल रंग की न ? *श्रोता: ग्रीन।* ग्रीन। ख्याल में आया ? और जो सूखी मिर्ची होती है तो सूखी मिर्ची के अंदर भी जीव होते हैं और जरा आप ऐसा खोलकर देखेंगे तो लाल-लाल निकलेंगे। यानी कुदरती ऐसा है कि जिस प्रकार का जो कोई अन्न हो उस प्रकार के जीवों की उत्पत्ति होती है और हमें पता ही नहीं लगता है कि वे जीव हैं या हमारा खाना है। मैं यह बताना चाहता हूं कि रात्रिभोजन पकाने में यह दोष तैयार होता है और उसका हम सेवन करते हैं तो हमें मांसभक्षण का दोष लगता है भाई। ख्याल में आया ? हमें इस बात पर बिलकुल विचार करना चाहिये।

यह रात्रिभोजन करते हैं, अभी हमने कॅण्डल लाइट की बात की थी। वहां तो कोई ऐसे जीवाणु, कीड़े जो कुछ आकर गिरते हैं तो हमें पता ही नहीं लगता यह राई है या जीरा है। ख्याल में आया ? और वह स्वाहा हो जाता है। रात्रिभोजन करने में; दिन में जब भोजन बनाया जाता है तो उस समय जीवों की हिंसा नहीं होती है ऐसा नहीं, लेकिन जो रात्रि में भोजन बनता है उसमें जिस पैमाने पर जीवों की उत्पत्ति और हिंसा होती है उससे निश्चितरूप से कम हिंसा और जीवों की कम उत्पत्ति होती है। ऐसा है कि लोग ऐसा मानते हैं कि रात्रिभोजन नहीं करते हो ? तुम कौनसे ज़माने के हो ?

अभी तो २१वीं सदी चल रही है। क्या बतायें अभी उनको ? भाई हम बिलकुल अनाड़ी लोग हैं मतलब क्या है ? पुराने ज़माने के हैं, चलेगा हमको। परंतु ऐसा दोष हमसे न होवे इसकी हमें खबरदारी लेनी चाहिये।

अब कहते हैं अगालित यानी अनछना जलपान। अनछना जलपान यानी जो जल हम इस्तेमाल करते हैं या तो पीने की बात है। यहां तो ऐसा है कि जो हम पानी पीते हैं वह छना हुआ होना चाहिये। तो वह भी हम करें और क्या है ? यानी वह अनछना पानी होगा तो वह अभक्ष्य है, सेवन करने योग्य नहीं है यह बात बता रहे हैं। ये कह रहे हैं यह अभक्ष्य की कोटी में गिने जाते हैं। **इसतरह अन्याय, अनीति और अभक्ष्य के बुद्धिपूर्वक त्यागी पात्र जीव को सम्यक्त्व की प्राप्ति के अधिकारी समझना चाहिये।** अधिकारी यानी क्या ? उनकी वह पात्रता है यह समझना चाहिये।

अभी और क्या कहते हैं ? यह तो बहुत अच्छा वाक्य है देखो, **सप्तव्यसन और तीव्र हिंसादि पापों का त्याग तो नामधारी जैन भी करता ही है।** यह नामधारी जैन क्या होता है ? हां, हां, बोलो-बोलो ? *श्रोता: जन्म से ही जो जैन है।* अच्छा-अच्छा, आपका कहना है जो जन्म से जैन है यानी जैन कुल में जन्मा है उसको नामधारी जैन कहेंगे। तो ऐसी बात है नहीं। हमने तीन प्रकार के जैन देखे हैं- एक तो जन्मधारी जो आप कह रहे, कुलधारी जैन यानी जैन में जन्मा यानी जैन कुल में जन्मा तो उसे जैन कहेंगे। दूसरे जो होते हैं वे नामधारी जैन और तीसरे जो होते हैं वे भावधारी जैन। तो अभी अपने को नक्की करना है इन तीन जैनियों में हमारा नंबर कहां लगता है और वह अपने पास रखना किसीको बताना मत ! क्या कह रहे हैं ?

यह नामधारी जैन कौन होते हैं ? तो कह रहे हैं जिन्होंने पांच उदम्बर फल और तीन मकार का त्याग किया है, उसका सेवन नहीं करते हैं ऐसे जीव नामधारी जैन हैं। जैन कुल में जन्मा; अभी हम नॉर्थ इंडिया में जाते हैं तो आप कौन हैं ? राजकुमार जैन, आप कौन हैं ? चेतनकुमार जैन, सब जैन, सी. के. जैन, आर. के. जैन, आर. पी. जैन, जे. पी. जैन, जैन, जैन, जैन। तो केवल जैन कुल में जन्मा है उसको तो जैन भले उपचार से, नाम से जैन कहे। वह अच्छा है कि झट से पता लगता है कि जैन कितने हैं। हमारे यहां तो कोई शाह है, कोई दोशी है, कोई मेहता है और क्या-क्या है। यह नामधारी जैन किसको कहा ? जो अष्ट मूलगुण के धारक हैं यानी पांच उदम्बर फल और तीन मकार

का जिनके त्याग है। यह तीन मकार में कौन-कौन आया ? तो हमने कल देखा था मद्य, मांस और मधु; मधु यानी हनी; इनका तो त्याग ही होता है। लेकिन दवा में लेने को क्या हर्जा ? हम रोज नहीं लेते तो हम खाये तो ? वह भी योग्य नहीं है।

पहले यह तो नक्की कर कि तू शरीर है या जीव है ? तू शरीररूप स्वयं को अगर मान ही रहा है तो तुझे दवा खाने में भी, दवा खाने में; दवाखाना नहीं, ऐसा लगेगा कि मैं शरीर का किसतरह से पोषण करूंगा। मुझे तो बहुत मतलब गर्व लगता है यह जो हमारे पं. बाबूभाई मेहता-बड़े बाबूभाई जिनकी फोटो यहां लगी है न, उनको तो रात को भोजन का त्याग तो था ही था, रात को पानी तक नहीं पीते थे। अगर बहुत सर दुःख रहा है, माथा दुःख रहा है या पैर दुःख रहा है जो भी हो तो ॲप्लिकेशन यानी लोशन भी नहीं लगाते थे। ख्याल में आया ? अभी समझो यहां अमृतांजन या कोई विक्स फॉर्म्युला जो कुछ दवा लीजिये वह भी नहीं लगाते थे। यानी आहार भी जो होता है वह अन्य-अन्य प्रकार से होता है तो लेपाहार का भी त्याग था उन्हें। तो क्या उनको शरीर के प्रति मोह नहीं था ? था लेकिन जितना तुम्हारा मेरा है उतना नहीं था।

क्या कहना चाहते हैं ? यहां तो यह बता रहे हैं कि मधु भी खाने योग्य नहीं है। वह विषभक्षण से भी भयंकर है क्योंकि विषभक्षण से तो एक बार तुम्हारी मौत आती है और यह मधु, मांस और मद्य का सेवन करने से तो भव भवान्तर का मतलब अनेक भवों तक उसका आपको इफेक्ट मिलेगा। ऐसी खोटी गति में पहुंचेंगे कि वहां आत्मा क्या है यह सुनने को, समझने को कोई चान्स ही नहीं है। निगोद में चला जाये तो उधर आपको कौन संबोधन करने के लिये आयेगा ? नरक में जाओ- सातवें नरक में, चौथे नरक में, आगे जो कोई है; पहले और दूसरे नरक में जाओ तो भी आपके नसीब कहां कि कोई आपको आकर वहां उपदेश देवे ! ख्याल में आया ? यहां जो बात कर रहे हैं नामधारी जैन किसको कहना ? तो जो अष्ट मूलगुण के धारक हैं।

तीसरा जैन कौनसा बताया ? भावधारी जैन। यह भावधारी जैन कौनसे हैं ? कि जिन्होंने आंशिक राग-द्वेष का त्याग किया है और जिनका मोह का भी त्याग है यानी जो सम्यग्दृष्टि हैं, जिनके दर्शनमोहनीय कर्म का अनुदय है और आंशिक राग-द्वेष यानी अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ की वहां अनुपस्थिति है। इनको भावधारी जैन कहते हैं। यह बात समझ में आयी भाईसाहब ? प्रमोदजी आपके लिये मैंने यह बात

बतायी है। मेरे पास जैनियों के चार प्रकार भी हैं लेकिन उसकी बात अभी हम नहीं करेंगे क्योंकि हमें अपने विषय पर आगे जाना है। अब क्या कहना चाहते हैं ? जो भावधारी जैन होता है वह नियम से नामधारी जैन होता है। लेकिन नामधारी जैन है इसलिये वह भावधारी जैन हो ऐसा भी नहीं है। सुभाषभाई बात ख्याल में आती है ? क्या कहा ? जो भावधारी जैन होते हैं वे नियम से नामधारी जैन होंगे। कुलधारी नहीं भी होंगे भाई। क्या कहा ? जैन कुल में जन्मना यह कोई आवश्यक नहीं है सम्यक्त्व के लिये। क्यों ऐसा क्यों ?

अरे चारों गति में सम्यक्त्व होता है। यह हमारे महावीर भगवान थे उनके जो गणधर थे वे जन्म से जैन थे कि नहीं ? क्यों सुरेशभाई ? अरे हमारे पास आगम के प्रूफ है न भाई। हम जरा ऐसा बोलेंगे कि सम्यक्त्व के लिये जैन होने की, जैन कुल में जन्मने की आवश्यकता नहीं है तो लोगों को लगता है क्या बात कर रहा है ? अरे आगम सामने दिखा रहे हैं, हां, सही है बात। अरे ! कितने बतायें आपको ? यह हमारे श्रीमद् राजचन्द्रजी, वह क्या ? बनारसीदास, चलो न और आगे और कितने चाहिये उतने अपने पास हैं। वे क्या जन्म से जैन थे ? मतलब क्या वे दिगम्बर जैन थे ? और तो और लंबा मत जाना। यह हमारे कानजीस्वामीजी हैं वे भी जन्म से दिगम्बर जैन नहीं थे। बोलो अब है कोई आवाज ? अरे जिन्होंने जैन कुल में जन्म नहीं लिया, अजैन थे। कौन थे ? माफ़ करना, अगर आपको वे अजैन हैं कि नहीं यह देखना हो यह क्या बोलते हैं ? मोक्षमार्गप्रकाशक में श्वेताम्बर मत को अन्यमत में डाला है। जैनमत में नहीं रखा है, देख लेना पांचवें अधिकार में। वे स्थानकवासी थे, उन्होंने जैनदर्शन का अभ्यास किया और किसीके पास जाकर साहब मुझे अभी जैन दीक्षा देना ऐसा बोला नहीं। स्वयं घोषित किया कि मैं आज से दिगम्बर धर्म को फॉलो करूंगा। ख्याल में आया ? हम यह देख रहे हैं कि सम्यक्त्व प्राप्त करने के लिये जैन कुल में जन्मना आवश्यक नहीं है। हां साहब कौन ? *श्रोता: वर्णीजी।* वर्णीजी - गणेशप्रसाद वर्णीजी। अरे कितने हैं ? अभी हम जितने ढूंढे उतने कम है। आप वर्णीजी की बात कर रहे हैं, बहुत सारे हैं।

हमने क्या देखा ? जो भावधारी जैन होते हैं उनका मिनिमम क्वॉलिफिकेशन, उनकी पात्रता है कि वे नामधारी जैन होने चाहिये। लेकिन वह पात्रता है इसलिये भावधारी है ऐसा नहीं है। देखो हमने तो जाते-जाते जैनियों के तीन भेद देखे प्रमोदजी के मेहरबानी से और उसमें से कितने बड़े सिद्धान्त मिले हमें। ख्याल में आया न ?

अभी आगे बढ़ते हैं। हां-हां, बराबर है। वही मैंने बताया चारों गति में सम्यक्त्व की प्राप्ति हो सकती है। यह कोई हाथी की पर्याय में, कोई सिंह की पर्याय में तो वह जैन सिंह होना चाहिये। क्यों ? चलो अब यहां तक हम आये हैं। अब हम क्वेश्चन नंबर ४६ देखेंगे। क्या कह रहे हैं ? देखो अणुव्रतों या महाव्रतों का स्वीकार करना सम्यक्त्व के लिये आवश्यक है या नहीं ? अणुव्रत पालन करना या महाव्रत पालन करना यह भाव कौनसा भाव है ? यह मेरा प्रश्न है। कौन बताना चाहेगा ? जमनाबहन आप बतायेंगी ?

देखो, मैं फिर से पूछता हूं, हम पेज नंबर १२२ पर है। नीचे ४६ नंबर का प्रश्न है, वहां पूछ रहे हैं अणुव्रतों या महाव्रतों का स्वीकार करना सम्यक्त्व के लिये आवश्यक है या नहीं ? मेरा यह प्रश्न है कि अणुव्रत का पालन करना या महाव्रत का पालन करना, यह कौनसा भाव है ? कौनसा भाव के लिये आपको चॉइस देता हूं- अशुभभाव है, शुभभाव है या शुद्धभाव है ? *श्रोता: शुभभाव।* शुभभाव तो प्रश्न यही है सम्यक्त्व प्राप्त करने के लिये शुभभाव की आवश्यकता है क्या ? अभी उत्तर देखते हैं **सम्यग्दर्शन प्राप्त करने के लिये अणुव्रतों अथवा महाव्रतों का पालन करना आवश्यक नहीं है। हां, यदि सम्यग्दर्शन के पहले कदाचित् बाह्य व्यवहार व्रत ले लिये हों तो उनके पालते हुये भी तत्त्वचिंतन की मुख्यता हो तो सम्यग्दर्शन हो सकता है; परंतु व्रतों के बिना भी अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान की प्राप्ति हो सकती है।**

देखो साहब अगर हम कोई व्रत पालते हैं और आत्मा का अनुभव के प्रयत्न में हैं तो वह सोने पे सुहागा है। क्यों ? मान लो कोई अणुव्रत पालता है और उसके अभी सम्यग्दर्शन हुआ नहीं है और वह ऐसा पुरुषार्थ करे कि दो कषाय चौकड़ी का अभाव हो जाये और उसको देशचारित्र की प्राप्ति भी हो सकती है। जिसने अणुव्रत पालन नहीं किये और पुरुषार्थ करे तो अधिक से चौथे गुणस्थान में जायेगा; पांचवें की तो बात ही नहीं है। ख्याल में आया ? तो यहां क्या कहते हैं ? चतुर्थ गुणस्थान की प्राप्ति के लिये व्रत का पालन होना अनिवार्य है नहीं। अब आगे बढ़ते हैं।

विशेष अपेक्षा विचार- अविरतसम्यग्दृष्टि को विशिष्ट प्रशस्त राग के कारण ही तीर्थंकर प्रकृति नामकर्म का बंध प्रारंभ होता है। बहुत अच्छा यानी वहां से प्रारंभ होता है और वह आठवें गुणस्थान के छठे भाग तक होता है। देखो, आगे बढ़ते हैं। **दर्शनविशुद्धि आदि सोलह कारण भावनाओं से तीर्थंकर प्रकृति का बंध**

हो सकता है। इन सोलह भावनाओं में भी मुख्यरूप से तो एक दर्शनविशुद्धि भावना ही कारण है। यह एक भावना हो और अन्य पंद्रह भावनायें हीनाधिक भी हों तो भी तीर्थंकर प्रकृति का बंध हो सकता है। यह एक भावना ही अन्य सभी भावनाओं की उत्पादक है। अब आगे जो बोल्ड अक्षर हैं उसके नीचे का पॅरेग्राफ। **चौथे गुणस्थान से लेकर सातवें गुणस्थान तक कहीं भी तीर्थंकर प्रकृति नामकर्म का बंधना प्रारंभ हो सकता है।** यानी मिनिममवाला गुणस्थान कौनसा है ? चौथा और प्रारंभ के लिये ऊपर का कौनसा गुणस्थान है ? सातवां। क्या हमारे पास इसका कोई प्रमाण है ? हमने एक दफे आपको बताया था, कौनसी बात बतायी थी ? कि जो अरिहंत अवस्था के जीव हैं, वहां तीर्थंकर की बात ली थी। तो तीर्थंकर भी तीन प्रकार से होते हैं। कैसे ? यह भावनाओं की अपेक्षा से नहीं। जिनके पांच कल्याणक होते हैं वे भी तीर्थंकर होंगे। कोई तीन कल्याणक, ऐसे भी तीर्थंकर हैं तीन कल्याणक जिनके मनाये जायेंगे। गर्भकल्याणक नहीं होगा, जन्मकल्याणक नहीं होगा लेकिन तपकल्याणक अवश्य होगा। जो तीर्थंकर प्रकृति बांधे और जो उसी भव में तीर्थंकर होने वाले हैं उनके ही कल्याणक होते हैं। कई जीवों के दो कल्याणक ही होते हैं। मुनि होने के बाद उनके तीर्थंकर प्रकृति बंधना चालू हो गयी हो तो उनका तपकल्याणक नहीं होगा, केवलज्ञानकल्याणक और मोक्षकल्याणक होगा।

यहां क्या बात बता रहे हैं ? चौथे गुणस्थान से लेकर सातवें गुणस्थान तक कहीं भी तीर्थंकर प्रकृति नामकर्म का बंधना प्रारंभ हो सकता है। आठवें गुणस्थान के छठे भागपर्यंत तीर्थंकर प्रकृति का बंध होता है। शास्त्रों में आठवां गुणस्थान जो है उसके सात भाग किये हैं, उसमें से छठे भाग तक तीर्थंकर प्रकृति का बंध होता है। **परंतु तीर्थंकर प्रकृति का उदय तेरहवें** और **चौदहवें गुणस्थानों में ही रहता है।** तीर्थंकर प्रकृति बंधे तो पहले, उदय बाद में। **इस अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान से ही जीव को पारमार्थिक अतीन्द्रिय सुख का अंश प्रकट होता है।** यानी यह जो अतीन्द्रिय आनंद की प्राप्ति, अनुभव होना या जिसको हम कहते हैं सम्यक्त्व हुआ, जब से वह शुरू होता है। **विपरीत श्रद्धानी अर्थात् प्रथम गुणस्थान से तीसरे सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान पर्यंत तीनों गुणस्थानवर्ती सर्व जीव नियम से दुःखी ही हैं।** यह बात पहले दिन में दूसरे लेक्चर में हमने देखी थी। है न,

अब आगे क्या कहते हैं ? **पूर्व पुण्योदय के उदय से कुछ जीवों को बाह्य**

अनुकूल वस्तुओं के संयोग में सुख जैसा लगता है; परंतु वह सच्चा सुख नहीं है। पांच इन्द्रियों के विषय से हमें लगता है कि हमें सुख मिल रहा है तो वह इन्द्रियजन्य सुख है यानी वह तो काल्पनिक सुख है, सुख है ही नहीं। **वीतरागता** इसका ही अर्थ **समताभाव ही सच्चा सुख है। यह सुख यथार्थ श्रद्धा के साथ ही उत्पन्न होता है। यथार्थ श्रद्धा आत्मानुभवपूर्वक ही होती है। आत्मानुभव के लिये अनंत सर्वज्ञ भगवंतों द्वारा कथित देव-शास्त्र-गुरु, षड्द्रव्य** यानी छहद्रव्य **और सप्ततत्त्वों के भेदज्ञानपूर्वक यथार्थज्ञान और श्रद्धान की भी अत्यंत आवश्यकता है।** अब तीसरा पॉइंट देखेंगे। **सम्यक्त्व प्राप्ति के कारण ही जीव अंतरात्मा संज्ञा को प्राप्त होता है।** यानी जब जीव को अपने स्व का अनुभव होगा तो उसको अंतरात्मा कहेंगे। यह चौथे गुणस्थान से हमने देखा था। बहिरात्मा, अंतरात्मा और परमात्मा के गुणस्थान हमने देखे थे। एक से तीन गुणस्थानवाले तो बहिरात्मा हैं, चार से बारह तक के अंतरात्मा हैं और तेरहवें और चौदहवें परमात्मा हैं।

यह हमने पहले देखा था तो आपको लग रहा है कि क्यों ऐसा कर रहे हैं ? तो अभी यह बात समझने में कितना आसान हो गया देखो। **चौथे गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान पर्यंत के सर्व जीव अंतरात्मा ही हैं।** अब चौथा पॉइंट देखेंगे- **अविरतसम्यक्त्व इस नाम में जो अविरत शब्द है, वह अंत्य दीपक है।** यह अंत्य दीपक क्या होता है ? यह कोई जानता हो तो हाथ उठाये। आप जानते हैं बहुत अच्छा। मैंने इसलिये पूछा आप भी जानती हैं, बहुत अच्छा। मान लो हमारे यहां पच्चीस लोग हैं तो पांच लोग जानते हैं, बीस लोग बहुभाग नहीं जानते हैं तो हम बतायेंगे। मैं बताऊंगा आपको उत्तर नहीं देना है, मैं उत्तर दूंगा। देखो शास्त्र में तीन बातें आती हैं। एक अंत्य दीपक, एक मध्य दीपक और एक आदि दीपक; आदि दीपक, मध्य दीपक और अंत्य दीपक। इसका अर्थ क्या है ? मान लो एक बहुत बड़ा हॉल है तो हॉल के शुरू में एक बल्ब जलायें तो उसका प्रकाश कहां फैलेगा ? पूरे हॉल में। ख्याल में आया न ? तो वह हो गया आदि दीपक। बीच का बल्ब जलावें तो उसका भी प्रकाश पूरे हॉल में तो वह हो गया मध्य दीपक और यहां से हम एंटर कर रहे हैं और वहां अंत है मतलब वह हॉल के अंत की बाजू है वहां का बल्ब जलायेंगे तो उसका प्रकाश पूरे हॉल में फैलेगा। तो यह है आदि दीपक, मध्य दीपक और अंत्य दीपक शब्दों का उदाहरण।

अंत्य दीपक का यहां उदाहरण दिया है इसके अलावा आपको कोई उदाहरण

मालूम है ? कौन बतायेंगे ? हां बहनजी आप बताना ? *श्रोता: णमोकार मंत्र।* अच्छा-अच्छा आपका कहना है। आप क्या कहना चाहते हैं मैं समझ गया। आप तो णमोकार मंत्र रोज़ाना बोलते हैं कि नहीं ? तो वहां पर क्या लिखा है ? लोए सव्व- यह जो शब्द है वह अंत्य दीपक है। यानी हम तो णमो लोए सव्व साहूणं ऐसा कहते हैं। शुरू में क्या कहते हैं ? कि णमो अरिहंताणं। तो वहां क्या है ? णमो लोए सव्व अरिहंताणं, णमो लोए सव्व सिद्धाणं; ऐसा लोए सव्व शब्द जो है वह अंत्य दीपक है और वह सबके लिये ॲप्लिकेबल है। आप रोज़ाना पेपर पढ़ते हैं तो हमारे यहां मराठी में पेपर आता है तो उसमें ऐसा लिखते हैं कि सर्वश्री और सब आगे के नाम आयेंगे। यह फलां है, यह इंदिरा गांधी है, यह राजीव गांधी है, जो-जो भी गांधी, गांधी; गांधी जो-जो भी होंगे। यह फोटो में सर्वश्री सो अँड सो हैं तो वह सबके सामने सर्वश्री, सर्वश्री समझना। यानी श्रीमान, श्रीमान जो लगाना है वह सबके लिये, तो वह क्या हो गया ? आदि दीपक।

यहां कह रहे हैं यह विरत जो शब्द है वह अंत्य दीपक है। इसका अर्थ क्या हो गया कि उसके पहले के सारे गुणस्थान अविरतिवाले ही हैं, कोई व्रतवाले नहीं है। क्या कहा ? देखो फिर से यह पढ़ेंगे तो हमें बहुत जल्दी समझ में आयेगा। चौथा नंबर का जो पॉइंट है। अविरतसम्यक्त्व इस नाम में जो अविरत शब्द है, वह अंत्य दीपक है। **अर्थात् प्रथम गुणस्थान से लेकर चौथे अविरत गुणस्थान पर्यंत के सर्व जीव अविरत ही हैं।** जैसे अभी इन्होंने उसको एक्स्प्लेन भी कर के बताया। पेज नंबर १२४ पर आये हैं, कह रहे हैं **जैसे- अविरत मिथ्यात्व, अविरत सासादनसम्यक्त्व, अविरत सम्यग्मिथ्यात्व; क्योंकि मिथ्यात्व से लेकर चौथे गुणस्थान पर्यंत के सर्व जीव सामान्यतया अविरत ही हैं; तथापि प्रत्येक की अविरति में महान अंतर है।** यानी जो चतुर्थ गुणस्थानवर्ती अविरत होगा और जो मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती अविरत होगा, उसमें बहुत फर्क है यह बात बताना चाहते हैं।

आगे पांचवां पॉइंट। यहां पांचवें पॉइंट में बता रहे हैं **मिथ्यात्व से रहित होने के कारण अविरत सम्यग्दृष्टि को श्रद्धा की अपेक्षा दृष्टिमुक्त कहते हैं।** दूसरी भाषा में कहो तो सम्यग्दृष्टि हुआ है तो उसको तो दृष्टिमोक्ष हुआ है यानी उसकी श्रद्धा इतनी दृढ़ है कि मान लो कि उसका मोक्ष अभी होना है, हुआ नहीं है लेकिन यहां उसको मुक्त कहा है। किस अपेक्षा से ? श्रद्धा की अपेक्षा से उसको दृष्टिमुक्त कहा। **मुक्त के अनेक भेद निम्नप्रकार समझ सकते हैं- जिस जीव की श्रद्धा यथार्थ हो गयी, उसे**

दृष्टिमुक्त कहते हैं। बारह प्रकार की अविरति से अतीत होने के कारण छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराज को अविरतिमुक्त कहा है। पंद्रह प्रमादों से अतीत, यानी वह ख़तम होने के कारण अप्रमत्तसंयत आदि आगे के चार गुणस्थानवर्ती जीवों को प्रमादमुक्त कहते हैं। उपशांतमोह और क्षीणमोह गुणस्थानवर्ती सर्व जीवों को मोहमुक्त कहना योग्य है। क्यों ? वह ग्यारहवें और बारहवें में मोह से रहित हैं न, इसलिये उनको मोहमुक्त कह दिया और चौथे गुणस्थानवाले को दृष्टिमुक्त कह दिया।

इसतरह से **सयोग** और **अयोग केवलियों को जीवनमुक्त कहना स्वाभाविक ही है। इन्हें ईषत् सिद्ध भी कहते हैं।** ईषत् यानी जिसको हम कहते हैं छोटे पैमाने पर। देखो-देखो, आपको समझाना हो तो इसतरह से कि आपने रिव्हर देखी है, रिव्हर यानी नदी। उसका छोटा रूप होगा तो उसको क्या कहेंगे ? रिव्हरलेट; जो बुक होता है उसका छोटारूप है बुकलेट वैसे ईषत् यानी जो किंचित, छोटे हैं क्योंकि सिद्ध आठ कर्मों से रहित हैं और ये चार कर्मों से रहित हैं। इसलिये उनको किसी अपेक्षा से ईषत् सिद्ध भी कहते हैं। गुणस्थानातीत जीव, यह गुणस्थानातीत जीव कौन होंगे बहन ? सिद्ध गुणस्थानातीत जीव हैं, पीछे से कोई बोल देते हैं फट से। जरा उनको मैं सतर्क करना चाहता हूं। गुणस्थान में रहनेवाले जीवों को क्या कहेंगे ? अंजूजी आप बतायेंगी ? गुणस्थान में जो जीव हैं उन जीवों को क्या कहेंगे ? *श्रोता: संसारी जीव।* संसारी, बहुत अच्छा, संसारी जीव हैं। देखो भाई अरिहंत को भी संसारी कहा है। कौन ऐसा कहता है ? साहब हम नहीं कहते हैं, उमास्वामीजी तो जरूर कहेंगे। कहते भी हैं, उन्होंने सूत्र में ऐसा लिखा है कि जीव दो प्रकार के हैं। एक संसारी और एक मुक्त। तो मुक्तों में सिद्धों को लिया और अरिहंतों को संसारी कहा।

हम संसारी कहने से क्या मानते हैं ? अरे जिसके बीवी, बाल-बच्चे, सारा घरबार होगा, वही संसारी है। हम किसीसे कहते हैं कि भाई चलो न, अब यहां शिबिर हो रहा है आपको बहुत बढ़िया चान्स मिलेगा। अरे आपका क्या है हमारा तो इतना संसार पड़ा हुआ है उसको कौन देखेगा ? अच्छा, वह संसार है ? अब मैं आपसे पूछता हूं, ऐसे होवे नहीं, पर हो जावे तो क्या होगा यह मैं समझना चाहता हूं। आपको मालूम है कुछ साल पहले, गांगजीभाई बतायेंगे कौनसे साल में हुआ था। यह हमारे कच्छ में बहुत बड़ा भूकंप हुआ था, भूचाल हुआ था। कौनसे साल में हुआ था साहब ? *श्रोता: २००१ में।* २००१ में चलो २००१ में। वहां क्या हो गया था ? हमारे जैसा कोई जीव कच्छ

छोड़कर कहीं इधर-उधर दूसरे गांव में बम्बई वगैरह आया था। वहां भूकंप हुआ तो पूरा का पूरा घर जमीन के अंदर धस गया, सब उसके घर के सदस्यों के साथ। मैं तो बम्बई आया था तो मैं मुक्त हुआ कि नहीं ? मेरा संसार तो नष्ट हो गया अभी तो मैं मुक्त हुआ कि नहीं ? *श्रोता: नहीं।* नहीं ? अरे और फंसे रहे। अरे यह हो गया, वह हो गया, अभी मैं क्या करूं-मैं क्या करूं। ख्याल में आया ? यहां तो हम जिसको संसार मानते हैं, वह संसार है ही नहीं। संसारी तो उसे कहा है जो कर्मों से युक्त हैं वे संसारी और जो कर्मों से मुक्त हैं वे मुक्त, ख्याल में आया ? यह तत्त्वार्थसूत्र भी बहुत पढ़ने लायक ग्रंथ है। पढ़ते-पढ़ते बहुत मज़ा आता है।

देखो, यहां कह रहे हैं, **गुणस्थानातीत जीव द्रव्यकर्म, भावकर्म और नोकर्म से रहित होने के कारण सिद्ध जीवों को देहमुक्त अर्थात् साक्षात् मुक्त कहते हैं।** अभी देखो हमें एक तकलीफ यह होती है एक वाक्य पढ़ते हैं तो तीन शब्द के अर्थ हमें पता नहीं है। सुमनबहन आप बतायेंगे यह द्रव्यकर्म क्या होता है ? बोलो-बोलो, आप नहीं बतायेंगी तो आपकी छोटी बहन बतायेंगी। हां बोलो चारुबहन। *श्रोता: आठ कर्मों को द्रव्यकर्म कहते हैं।* हां, आठ कर्मों को द्रव्यकर्म कहते हैं। और भावकर्म ? हां जी ? *श्रोता: मोह-राग-द्वेष को भावकर्म कहते हैं।* मोह-राग-द्वेष को भावकर्म कहेंगे। और नोकर्म ? *श्रोता: शरीर, मन, वाणी।* देह यानी शरीर, मन, वाणी। यह शास्त्र में शब्द आते हैं बारंबार, अगर हम उसका अर्थ ही नहीं जानेंगे, पढ़ लेते हैं फटाफट कि क्या कहते हैं ? द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म से मैं रहित हूं क्योंकि मैं तो एक ज्ञायक स्वभावी आत्मा हूं। परंतु भैया यह क्या होता है, भावकर्म क्या होता है ? अरे वह तो पंडित लोग जाने हमें क्या करना है। सिर्फ पंडितों को ही मोक्ष जाना है क्या ? आपको नहीं जाना है ? यानी हम उसका अर्थ जानने के लिये और नहीं जानते तो अपनी भूल कबूल करने के लिये तैयार नहीं है और हमें तो मुक्तता चाहिये। कैसी मिले ? ख्याल में आया ?

देखो क्या कह रहे हैं यहां पर ? क्या कहते हैं कि देहमुक्त अर्थात् साक्षात् मुक्त कहते हैं। **अब किसीसे मुक्त होना उन्हें शेष रहा नहीं।** किनको ? सिद्धों को। **मोक्षमार्ग अर्थात् मुक्त होने का प्रारंभ तो सम्यग्दर्शन होने पर चौथे गुणस्थान से होता है।** यह छठा पॉइंट हमने देखा भी था। **भव्यत्व शक्ति की अभिव्यक्ति** यानी उसकी व्यक्तता उसका **प्रारंभ** होता है। कहां ? **चौथे गुणस्थान** में। अब एक पॉइंट इसके आगे के पॅरेग्राफ में है। देखो **चौथे गुणस्थान में मोक्षमार्ग का प्रारंभ होता है**

और सिद्ध अवस्था में भव्यत्व शक्ति का फल प्राप्त होता है। इस अपेक्षा से सिद्ध अवस्था में भव्यत्व शक्ति का अभाव बताया गया है। इस बात की हमने चर्चा भी की थी। वह डॉक्टर होने योग्य उसको भी हम डॉक्टर कहते हैं, लेकिन डॉक्टर होने के बाद उसको डॉक्टर होने योग्य कोई कहेगा क्या ? इसीतरह यहां यह भव्य जो है, वह भव्यत्व उनका ख़तम हो जाता है। चलो, अभी आगे बढ़ते हैं।

अभी हम पेज नंबर १२८ पर आयेंगे। चौथे गुणस्थान के बारे में कोई आपके प्रश्न हो तो अभी पूछ लेना मौखिकरूप से। किसका प्रश्न है ? अच्छा-अच्छा, हां देखो बहनजी का ऐसा प्रश्न है किसी बहन का, वह ऐसा पूछती है *यह जो वेदक सम्यक्त्व है और क्षयोपशम सम्यक्त्व है, इसमें क्या अंतर है ? कई जगह तो वेदक सम्यक्त्व लिखते हैं और कई जगह तो क्षयोपशम सम्यक्त्व लिखते हैं। तो इसका जरासा खुलासा कीजिये।* हम मोक्षमार्गप्रकाशक नौवें अधिकार के ३३५ पृष्ठ से देखेंगे। यहां क्या कहते हैं ? **तथा इस क्षयोपशम सम्यक्त्व ही का नाम वेदक सम्यक्त्व है।** क्या बता रहे हैं ? जिसको हम क्षयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं, उसीको हम वेदक सम्यक्त्व कहते हैं। अब वह किस अपेक्षा से ? **जहां मिथ्यात्व, मिश्रमोहनीय की मुख्यता से कहा जाये,** यानी क्या कहना चाहते हैं ? **वहां क्षयोपशम नाम पाता है।** देखो, हमने देखा है कि जो क्षयोपशम सम्यक्त्व होता है, उस क्षयोपशम सम्यक्त्व में दर्शनमोहनीय की कौनसी प्रकृति का उदय रहता है, बहन आप कहेंगी ? आपका प्रश्न है न ? हां, बोलो मैंने क्या पूछा ? जो क्षयोपशम सम्यक्त्वी होगा उसके दर्शनमोहनीय कर्म में से जो तीन टुकड़े हुये थे उनमें से कौनसी प्रकृति का उदय है ? हां आप बता रहे हैं ? हां बोलो बहन ? *श्रोता: सम्यक् प्रकृति।* सम्यक् प्रकृति का उदय है। और उसकी सत्ता में कौन-कौन पड़े हैं ? मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व। बात ख्याल में आ गयी ?

अभी आगे क्या कहते हैं देखे ? कह रहे हैं जहां मिथ्यात्व और मिश्र, मिश्र यानी सम्यग्मिथ्यात्व, इन दोनों मोहनीय की मुख्यता से कहा जाये वहां क्षयोपशम नाम पाता है क्योंकि हमने उसमें क्षयोपशम देखा था न क्षयोपशम की परिभाषा के वक़्त। अभी कहते हैं **सम्यक्त्व मोहनीय की मुख्यता से कहा जाये** यानी दो अपेक्षायें हैं। जो उदय में नहीं है, जिसका क्षयोपशम चल रहा है उसकी अपेक्षा से देखा जाये तो उसको क्षयोपशम सम्यक्त्व कहेंगे और अनुभव किसका कर रहे हैं ? वेदन किसका कर रहे हैं ? तो सम्यक् प्रकृति का कर रहे हैं। उसकी अपेक्षा से कहा जाये यानी सम्यक्त्व

मोहनीय की मुख्यता से कहा जाये **वहां वेदक नाम पाता है।** उसका उदय है तो उसका वेदन चल रहा है न ! तो इसके लिये उसी सम्यक्त्व को वेदक सम्यक्त्व कहेंगे। देखो हैं तो दोनों एक ही लेकिन अपेक्षा से नाम जुदे-जुदे हैं। **सो कथनमात्र दो नाम हैं,** *श्रोता: ...* आप क्या कहना चाहते हैं मैं समझ नहीं पा रहा हूं। हम पर्सनलि मिलेंगे तो इस पर बात करेंगे। बाद में शांति से बात करेंगे। यहां क्या कहते है ? सो कथनमात्र दो नाम हैं, **स्वरूप में भेद नहीं है।** यानी आप उसे वेदक सम्यक्त्व कहो या क्षयोपशम सम्यक्त्व कहो उसमें नाम भेद हैं लेकिन दोनों एक ही हैं, स्वरूप में कोई भेद नहीं हैं। **तथा यह क्षयोपशम सम्यक्त्व चतुर्थादि सप्तम गुणस्थान पर्यंत पाया जाता है।**

देखो, यह बात अच्छी बतायी उन्होंने। हमने एक बार देखा था उपशम सम्यक्त्व कौनसे से कौनसे गुणस्थान तक होता है ऐसा हमने पूछा था, याद होगा तो। उसका उत्तर क्या है ? क्या मैंने पूछा ? फिर से, उपशम सम्यक्त्व कौनसे गुणस्थान से कौनसे गुणस्थान तक होता है ? कौन बताना चाहेगा ? हां साहब, आप बता रहे हैं, हां बोलो। *श्रोता: पहले से चौथे तक उपशम सम्यक्त्व होता है।* पहले से चौथे तक उपशम सम्यक्त्व होता है ? *श्रोता: चार से ग्यारह।* हां चार से ग्यारह क्योंकि चौथे से या चौथे, पांचवें या छठे-सातवें में तो प्रथमोपशम सम्यक्त्व रहेगा। लेकिन ऊपर में यानी सात, आठ, नौ आगे हम जायेंगे ग्यारह तक वहां द्वितीयोपशम सम्यत्व पाया जायेगा। और कोई जीव गिरते-गिरते नीचे आवे तो चौथे गुणस्थान तक द्वितीयोपशम सम्यत्व रहेगा। उसके नीचे जायेगा तो उपशम सम्यक्त्व की विद्यमानता नहीं रहेगी। इसलिये हमने देखा था कि उपशम सम्यक्त्व जो है उसके गुणस्थान चार से लेकर ग्यारह तक। यह हमने देखा था न, बहन देखा था कि नहीं ? आपको याद है न ?

अभी मेरा यह पूछना है कि क्षयोपशम सम्यक्त्व के गुणस्थान कौन-कौनसे हैं ? हां बहन आप बतायेंगी ? आपको मालूम है। क्षयोपशम सम्यक्त्व के गुणस्थान कौन-कौनसे होंगे ? *श्रोता: चार और पांच।* हां चौथा, पांचवां और सातवां, आठवां, नहीं ? कौनसे होंगे ? ठहरो-ठहरो उनको बोलने दो। आप ही बोल रही हैं ? कितना बताया आपने ? चार, पांच बस उतना ही ? हां और कोई बताना चाहेगा ? हां बोलो बेटा, *श्रोता: चार से सात।* चार से सात। अरे अभी हमने पढ़ा था न इधर। उस पर से तो विचार आया बताने का। देखो फिर से पढ़ता हूं देखो-देखो, यहां क्या कहते हैं ? **तथा यह क्षयोपशम सम्यक्त्व चतुर्थ आदि सप्तम गुणस्थान पर्यंत पाया जाता है।** मैं जानता

हूं आपके पास पुस्तक नहीं हैं फिर भी आपके पास कान तो जरूर हैं, मन भी जरूर है। आप कान और मन दोनों यहां लगायेंगे तो मैं जो पढ़ रहा हूं उसीमें से प्रश्न पूछता हूं। हां अभी तो यहां कोई पुस्तक नहीं, यहां तो अपने सामने नहीं है फिर भी क्षायिक सम्यक्त्व के गुणस्थान कौनसे-कौनसे होंगे ? अरविंदबाबू आप बतायेंगे ? नहीं बतायेंगे, बहुत अच्छा। और कौन बतायेगा ? हां, साहब बोलो, *श्रोता: चार से चौदह।* चार से चौदह। गुणस्थान गिनने हैं तो चार से चौदह। अब यह बात तो पूरी हो गयी।

अभी हम पांचवें गुणस्थान में जायेंगे। उसके पहले अभी जो हमको प्रश्न पूछा गया था वेदक सम्यक्त्व और क्षयोपशम सम्यक्त्व क्या है वह तो हमने देखा। अभी यहां पर एक प्रश्न आया हुआ है उस प्रश्न को फिर से देखते हैं। *व्यक्ति के यानी जीव के आत्मकल्याण के पुरुषार्थ में प्रत्यक्ष गुरु की महिमा श्रीमद् राजचन्द्रजी ने गायी है। भावलिंगी दिगम्बर ज्ञानी साधु की अनुपस्थिति में वीतरागता की पोषक वाणी का सदुपदेश करनेवाले चतुर्थ गुणस्थानवर्ती अथवा सम्यक्त्व सन्मुख ज्ञानी पंडित को गुरु मानने में क्या दोष है ?* उन्होंने किसी व्यक्ति विशेष का नाम लिखा है, वह तो मैं आपके सामने नहीं पढ़ूंगा क्योंकि मैं विवाद में फंसना नहीं चाहता।

पहले में पहले आपने ऐसा कहा है कि आत्मकल्याण के पुरुषार्थ के लिये प्रत्यक्ष गुरु। तो यह गुरु आप किसको मान रहे हैं ? देखो आगम में गुरु संज्ञा तो मुनियों की अपेक्षा से ही कही गयी है। बाकी आप कहेंगे कि साहब आप हमारे गुरु हो तो-तो शिक्षा गुरु हो सकते हैं। ख्याल में आया ? अभी हमारे स्कूल में जो शिक्षक थे उनको भी हम गुरु कहते हैं। तो वे गुरु या मुनि की अपेक्षा से गुरु की बात कर रहे हैं ? प्रत्यक्ष गुरु यानी प्रत्यक्ष गुरु क्या केवल श्रीमद्जी ही थे ? श्रीमद्जी के पहले कोई सम्यग्दृष्टि नहीं हुये ? तो उनको गुरु मिले या नहीं मिले ? बात ख्याल में आती है ? गुरु किसे कहना चाहते हैं ? उस पर बहस हो सकती है। हमारे आगम के अनुसार गुरु की व्याख्या तो छठे-सातवें गुणस्थानवर्ती मुनियों को विशेषरूप से कहा है, उनमें से भी छठे गुणस्थानवर्ती उपदेश देंगे, सातवेंवाले भी नहीं देंगे। आठवें, नौवें, दसवें, बारहवेंवाले का तो सवाल ही नहीं और जो तीर्थंकर नहीं हैं, जिनके क्या कहते हैं ? जिनका समवशरण नहीं, गंधकुटी की रचना नहीं, वे भी अरिहंत आपको उपदेश नहीं देंगे। जो मूक केवली हैं वे भी उपदेश नहीं देंगे। ख्याल में आया ?

यह गुरु जो आप कहना चाहते हो किसको ? तो यहां कहा कि उन्होंने प्रत्यक्ष गुरु की महिमा गायी है। वहां तो अभी आपको क्या बतायें, उन्होंने गुरु की जो बात कही है वह तो अपने आत्मा को गुरु कहा है। मालूम है आपको ? आत्मसिद्धि में आप देख लो। प्रश्न में आगे क्या कहना है- भावलिंगी दिगम्बर ज्ञानी साधु की अनुपस्थिति में वीतरागता की पोषक वाणी का सदुपदेश करनेवाले चतुर्थ गुणस्थानवर्ती। जिनका नाम आपने लिखा है जो स्वयं श्वेताम्बर मूर्तियों की पूजा करते हैं, श्वेताम्बर मंदिर बांधते हैं क्या उनको सम्यग्दर्शन हो सकता है ? यह पहले नक्की करो। मैं नाम इसलिये नहीं ले रहा हूं कि मैं झगड़े में नहीं पड़ना चाहता हूं। आप जानते हो आपने जो पूछा है। ख्याल में आया ? वे तो किसी भी हालत में सम्यग्दृष्टि हो ही नहीं सकते क्योंकि निमित्तरूप से उनके तो सच्चे देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा ही नहीं है। ख्याल में आया ?

आगे आपने लिखा है अथवा सम्यक्त्व सन्मुख ज्ञानी पंडित। अभी इसमें इतने बैठे हैं, कौन सम्यक्त्व सन्मुख है ? कहां से आपको पता लगना है ? ख्याल में आया ? तो हम स्वयं समझ सकते हैं कि मैं सम्यक्त्व सन्मुख हूं या अन्य कहीं जा रहा हूं। आप बता सकते हैं कि यह आपके बाजुवाले वह सम्यक्त्व सन्मुख है या मिथ्यादृष्टि है ? हम लोग कौन होते हैं उनको सम्यक्त्व सन्मुख कहनेवाले ? अरे जिनके अभी सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का भी निर्णय नहीं है वह तो सम्यक्त्व सन्मुख नहीं गृहीत मिथ्यात्वी हैं। ख्याल में आया ? तो यहां कह रहे हैं ऐसे पंडितों को गुरु मानने में क्या दोष है ? गृहीत मिथ्यात्व का दोष है। क्या करें ? हम अभी भी डोलायमान हैं तो क्या कर सकते हैं। चलो देखो साहब यहां कोई ऐसे किसीका निषेध करने की बात नहीं है। हमें आगम से जो ज्ञान प्राप्त है उसके द्वारा हमें स्वयं को निर्णय करना है। मैं फिर से बताता हूं- देखो भैया, बाजार में खोटे सिक्के तो इतने चलते हैं तो खोटा सिक्का जो बना रहा है उसके पीछे लगोगे तो उसके हाथ बहुत तगड़े हैं, लंबे हैं। तुमको वहां के वहां ही ख़तम कर देंगे। लेकिन आज की तारीख में हमारा इतना ही काम है कि वह जो खोटा सिक्का है कि वह हमारे पल्ले तो नहीं पड़ रहा है न ? तो उस खोटे सिक्के से हम बचें, इतनी खबरदारी हमें लेनी है।

वह खोटे सिक्के बनानेवाले के पीछे मत लगना क्योंकि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है। यह मूलभूत जो जैनदर्शन का सिद्धान्त है वह अगर हमें मान्य है; मैं तो हर जगह जाता हूं न तो वहां बोलता हूं मैं यहां तावीज देने को आया हूं।

तावीज समझते हैं आप ? आपको क्या मालूम ? हमारे इंडिया का क्रिकेट कप्तान था कौन ? अझहरूद्दीन। वह जब सिक्सर मारता था, सेंचुरी मारता था तो गले में से एक तावीज निकालता था उसको ऐसा-ऐसा कुछ-कुछ करता था फिर अंदर डालता था। वह तावीज-वह तावीज हम बेचने आये हैं, बेचने नहीं मुफ्त देने आये हैं। उस तावीज में लिखा है एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं कर सकता। यह जिनेन्द्र भगवान की वाणी है। जब-जब आप कोई संकट में आ जाये, जब-जब आप कोई दुःख के प्रसंग में आ जाये तो वह तावीज को निकालकर याद करना कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है। अंदर डाल दो, कहां ? हृदय में। क्या ? यह बात, कौनसी ? एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है।

इसलिये हम आपको यह कहते हैं कि दूसरे को सुधारने में कतई पुरुषार्थ मत गंवाओं। कुछ हाथ में आनेवाला नहीं है। अरे तू आजतक मिथ्यात्वी रहा है वह अपने अपराध से रहा हुआ है, दूसरे किसीने तुझे अपराधी किया है या दूसरे किसीने तुझे मिथ्यात्वी बनाया है ऐसी बात हो ही नहीं सकती है। अगर तुझे मिथ्यात्व में से निकलकर सम्यक्त्व की प्राप्ति के साथ मुक्तता प्राप्त करनी है तो तुझे तेरा अपराध स्वीकार करके उस अपराध से दूर कैसे होवे इस बात के लिये प्रयत्न करना चाहिये और उसके लिये एक ही उपाय है- वह तो अपने स्वरूप की जानकारी लेना, स्वरूप को पहचानना और उसीको जानकर, मानकर, उसीमें स्थिर हो जाना, यह एकमेव उपाय है। हम उस उपाय को तो दूर करना चाहते हैं और यह सच्चा कि यह झूठा, इनके पीछे लगूं, या इनके पीछे लगूं ? अरे तू अपने पीछे लग मेरे बाप ! क्या कह रहे ? यह बात ऐसी होती है तो इतना ही हम समझ लेवे कि गुरु, गुरु की कोई आवश्यकता नहीं है। गुरु ज्ञान देता नहीं है। गुरु बड़ा कि तीर्थंकर बड़े ? इतना तो नक्की करो। तीर्थंकर के समवशरण में कितने असंख्यात जीव होते हैं ? लाखों केवली होते हैं उनके समवशरण में। तो मैं कहता हूं असंख्यात जीव हैं- देव ही असंख्यात होते हैं, बाकी हमारे तुम्हारे जैसे मनुष्य और तिर्यंच तो मामूली संख्यात होंगे।

मेरा यह प्रश्न है- देव असंख्यात हैं, तिर्यंच कुछ संख्यात हैं, मनुष्य कुछ संख्यात हैं तो नारकी कितने होंगे ? हां कविताबहन ? *श्रोता: नारकी नहीं होते हैं।* नहीं होते, अरे वाह आप बराबर जानती हैं, नारकी जीव आते ही नहीं उसमें। क्यों ? तो मैं यह कह रहा था कि जो असंख्यात जीव हैं उनमें से उस परमगुरु ने, अनंतचतुष्टय से युक्त ऐसे

तीर्थंकर ने सिर्फ लाखों लोगों को ही केवलज्ञान दिया ? बाकी जीवों के साथ ऐसा क्यों व्यवहार किया कि उनको तो सम्यक्त्व भी नहीं हुआ। अगर दूसरे से तुम्हें नॉलेज होता हो तो कॉलेज में जो प्रोफेसर सौ विद्यार्थियों को सिखाते हैं तो नजदीक बैठनेवाले को अधिक सिखाते हैं और पीछे बैठनेवाले को कम सिखाते हैं, ऐसा होता होगा कि नहीं ? हमारी यह जो मान्यता है गुरु, गुरु, गुरु, गुरु ! काहे का गुरु ? तू स्वयं स्वयं का गुरु है। कब कहलायेगा ? कि जब तू अपने आत्मा का ज्ञान अपने को देगा। क्या करें ?

किसी एक को पकड़कर उसीकी महिमा - गाना गाये। लेकिन वह साहब जो कह रहे हैं उसको जान तो सही। जो कह रहे हैं उसका भावभासन हमें नहीं होता है। जैसे मैंने आपको उदाहरण दिया था वह जो विधवा औरत थी। उसका इतना छोटा बच्चा था। वह सिनेमा देखने गया, आया देरी से तो उसने बोला जा-जा तू बहुत सियाना है बेटा, दूसरा पिक्चर देखकर आ। तो लड़का कितना खुश हुआ वापस गया। तो उसको भावभासन हुआ कि नहीं ? वैसी हमारी पद्धति है। जो शब्दशः लिखा है वह व्यवहार का वचन है या निश्चय का कथन है इसका कोई सारासार विचार है नहीं। जैसे है वैसा पढ़ा और माना। तो नुकसान किसका हुआ ? कहनेवाले का, लिखनेवाले का या पढ़नेवाले का ? ख्याल में आया ? चलो अभी हम थोड़ासा गुणस्थान की तरफ चलते हैं। देखो यहां क्या लिखते हैं ? पेज नंबर १२८-

पांचवें गुणस्थान का नाम देशविरत है। बाह्य में बुद्धिपूर्वक अणुव्रत ग्रहण करने पर और अंतरंग में सम्यग्दर्शनपूर्वक अनंतानुबंधी व अप्रत्याख्यानावरण कषाय चौकड़ी के अनुदय होने से देशचारित्ररूप आंशिक वीतराग परिणाम प्रकट होने के कारण पंचम गुणस्थान होता है। यह बहुत लंबा-लंबा वाक्य है। देखो अभी हम इसको शॉर्ट करके समझाते हैं और समझते हैं। देखो यहां क्या कहना चाहते हैं ? पहले में पहले पंचम गुणस्थानवर्ती जीव किसको कहना ? यह बात हम समझेंगे तो आगे का पूरा पोर्शन एकदम आसान हो जायेगा। यहां कह रहे हैं कि कोई ऐसा कहता है कि मुझे तो निश्चय से देशचारित्र की प्राप्ति हुयी है, मैं पंचम गुणस्थानवर्ती जीव हूं। तो साहब आपने कोई बाह्य आचरण-अणुव्रत लिये हैं ? अरे उसकी क्या आवश्यकता है ? उसकी कोई जरूरत नहीं। मैं तो पंचम गुणस्थानवर्ती हूं, मुझे आत्मा का अनुभव हुआ है तो वह कभी भी पंचम गुणस्थानवर्ती जीव नहीं हो सकता। तो क्या कह रहे हैं ? कोई ऐसा कहे कि मैंने तो पहली सात प्रतिमायें अंगीकृत की हैं, मैंने उसका अंगीकार किया

है। मैं तो ब्रह्मचर्य प्रतिमा लिया हुआ हूं। तो साहब आपके सम्यग्दर्शन हो गया होगा ? दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक जो वीतरागता है वह तो हुयी होगी ? अरे उसकी क्या आवश्यकता है ? मैं यह बाह्य में पालन कर रहा हूं न। तो दोनों ही पांचवें गुणस्थान में हैं नहीं। फिर भी ऐसा कोई मानता हो तो वह खतरे में है।

फिर पंचम गुणस्थानवर्ती जीवों की क्या विशेषता है ? तो उनके तो वीतरागता है। कितनी ? कि दो कषाय के चौकड़ी के अभावपूर्वक जो वीतरागता वर्तती है। जो अंतरंग में शुद्धि है वह तो होगी ही होगी और उस समय उनके जो दो कषाय चौकड़ी की विद्यमानता है, वह विद्यमानता के अनुसार जिन्होंने अणुव्रत आदि जो बारह व्रत हैं, जो प्रतिमायें हैं उनको अंगीकार किया है तो वह सच्चा पंचम गुणस्थानवर्ती श्रावक है। ख्याल में आया ? यानी वहां देखो रागधारा और वीतरागधारा ईक़ल प्रमाण में हैं। दो कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ है। कौनसी दो चौकड़ी का बहन ? *श्रोता: अनंतानुबंधी और अप्रत्याख्यानावरण।* अनंतानुबंधी और अप्रत्याख्यानावरण। और दो कषाय चौकड़ी की विद्यमानता है। पन्नालालजी कौनसे दो कषाय चौकड़ी हैं ? *श्रोता: प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ और संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ।* प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ और संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ। इन दो कषाय चौकड़ी की विद्यमानता है। उन कषायों के कारण वह जीव अणुव्रत और जो प्रतिमायें हैं उसको धारण करता है और उसके साथ-साथ उसकी वीतरागता भी है जो दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक है। तो ऐसा जीव पंचम गुणस्थानवर्ती है।

केवल बाह्य आचरण करे तो जो हमने अभी देखा था न, नामधारी जैन। वैसे यह नामधारी पंचम गुणस्थानवर्ती। उसीको यहां क्या कहा है ? द्रव्यलिंगी श्रावक। यह कोई ख़राब बात नहीं है बहुत अच्छी बात है। हम कोई ऐसे व्रत लेते हैं, हम ऐसी कोई प्रतिमा धारण करते हैं बहुत बढ़िया बात है। लेकिन वह राग का परिणाम है। उस राग के परिणाम से हम स्वयं को पंचम गुणस्थानवर्ती निश्चय से मानते हैं तो हम पंचम तो छोड़ो, चौथे को तो छोड़ो पहले गुणस्थान में हैं भाई। ब्रह्मदेवजी आपका प्रश्न था न, इसलिये हमने बोला कि अभी हम बतायेंगे आपको। यह बात ऐसी है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

१८. देशविरत गुणस्थान

हमने इसके पहले के लेक्चर में देशविरत यानी पंचम गुणस्थान की बात देखी थी और वहां पंचम गुणस्थानवर्ती जीवों की कैसी अवस्था होती है। दो बातें तो निश्चित होती हैं- एक बात यह है कि वह जीव सम्यक्त्वी तो है ही है, केवल सम्यक्त्वी नहीं है तो उसके तो दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक वीतरागता है, उसको शास्त्रीय भाषा में देशविरत कहा है। उतना ही नहीं तो उसके उस भूमिका के अनुसार शुभराग भी वर्त रहे हैं। उसके तो गुणव्रत, शिक्षाव्रत और अणुव्रत ये बारह व्रतों का पालन तो होगा ही होगा। उसके पहले तो उसके दर्शनप्रतिमा होती है। अब वह सारी बातें आयेंगी। या तो आगे की जो प्रतिमायें हैं वे भी होंगी।

देखो बात ऐसी है कि जीवों के परिणाम जो होते हैं उनमें इतने भेद हैं, आगम की भाषा में उनके इतने स्थान हैं; अपनी तुम्हारी भाषा में इतने व्हेरिएशन्स हैं कि वे कितने हैं ? तो असंख्यातलोकप्रमाण परिणामों के भेद हैं। हम सिर्फ क्रोध कषाय लेते हैं तो वह क्रोध कषाय के भी असंख्यातलोकप्रमाण भेद हैं। अब कषायों को छोड़ो, यहां जो वीतरागता के परिणाम हैं वे भी असंख्यात हैं। फिर भी उन असंख्यात परिणामों को समेटते हुये यहां पंचम गुणस्थान के हिसाब से उनको ग्यारह प्रतिमाओं में संलग्न किया है। क्योंकि इतने परिणाम के भेद और उतने अलग-अलग उनके भाव। तो यहां देखो मैं यह बताना चाहता हूं कि जो पहली प्रतिमाधारी हैं और जो ग्यारहवीं प्रतिमाधारी हैं इन दोनों जीवों को पंचम गुणस्थान है।

हां जैसा मैं अभी कहता हूं यह बच्चे आये न तो मुझे उनके उदाहरण याद आते हैं। कोई विद्यार्थी है वह स्कूल चालू होता है और वह पांचवीं क्लास में पहले दिन में गया है और कोई विद्यार्थी है वह पांचवीं का विद्यार्थी, अभी कल परीक्षा है और उसके पूर्व के दिन वहां गया है। तो दोनों ही कौनसे कक्षा के विद्यार्थी हैं ? पांचवीं । वैसे यहां जो पंचम गुणस्थान में जीव है जो पहली प्रतिमाधारी है और जो ग्यारहवीं प्रतिमाधारी है, लेकिन उनको एक कॅटेगरी में रखा है उनको कहेंगे कि ये पंचम गुणस्थानवर्ती जीव हैं। आपके मन में जो प्रश्न आया है न, मैं समझ गया कि उनकी वीतरागता एक जैसी होती है ? है न ? पहलेवाले को भी पांचवां गुणस्थान और ग्यारहवेंवाले को भी पांचवां गुणस्थान। यह अन्याय हमसे तो सहन नहीं होता है क्या करें ! सहन करना पड़ेगा

क्योंकि जो आगम में बात है, आगम के सामने हमारी बुद्धि तो कुछ काम नहीं करेगी।

हम तो इतना बोलने को सीख गये हैं प्रमाण वचन गुरुदेवश्री ! वह तो सीख गये न हम, परंतु भैया यहां ये जो हमारे आचार्य हैं, वे तो गुरु हैं न, तो उनका वचन हमें प्रमाण क्यों नहीं होता है क्योंकि हमारे इमॅजिनेशन के बाहर की बात आती है, तो हमें लगता है कि नहीं, नहीं यह सही नहीं हो सकता है। जरा धीरज रखो तो यह भी बात हमें सही लगेगी। क्योंकि हमें उसके आगे पीछे की मालूमात हो जाये तो यह बात सहीरूप से अपने ध्यान में आयेगी। यह जो पॅरेग्राफ हमने पढ़ा था उसीको दुबारा मैं पढ़ूंगा। देखो, यह देशविरत गुणस्थान हम देख रहे थे, पेज नंबर १२८, वहां **पांचवें गुणस्थान का नाम देशविरत है। बाह्य में,** बाह्य में यानी जो अंतरंग में नहीं वह बाह्य में। **बुद्धिपूर्वक अणुव्रत ग्रहण करने पर** और **अंतरंग में** क्या हो रहा है ? **सम्यग्दर्शनपूर्वक** यानी जीव सम्यग्दृष्टि है और वह क्या कर रहा है ? **अनंतानुबंधी** और **अप्रत्याख्यानावरण कषाय चौकड़ी के अनुदय होने से**। अभी उनके कौनसी चौकड़ी विद्यमान है, चल रही है ? प्रत्याख्यानावरण। प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया लोभरूप जो कषाय की चौकड़ी है वह क्या काम करती है ? वह महाव्रत धारण करने नहीं देती। संज्वलन क्रोध, मान, माया लोभ क्या कर रहे हैं ? जिसके यह तीन कषाय चौकड़ी निकल गयी हैं; उसके संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ अभी बाकी हैं, वे यथाख्यातचारित्र की प्राप्ति नहीं होने देते।

जो अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ हैं, वे क्रोध, मान, माया, लोभ क्या कर रहे हैं ? सम्यक्त्व नहीं होने देते। जो अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ की विद्यमानता है तो अन्य दो भी हैं- तीसरी और चौथी चौकड़ी- वे अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ क्या कर रहे हैं ? अणुव्रत धारण करने के परिणाम नहीं होने दे रहे हैं। अब यहां क्या कह रहे हैं ? सम्यग्दर्शनपूर्वक। तो सम्यग्दर्शन हुआ है तो उसके अनंतानुबंधी है नहीं और साथ-साथ में क्या है ? अप्रत्याख्यानावरण कषाय चौकड़ी का अनुदय है। तो वहां क्या हो रहा है ? **देशचारित्ररूप आंशिक वीतरागता प्रकट होने के कारण**। यानी वहां पर आंशिक वीतरागता है उसका नाम देशचारित्र है और उसको **पंचम गुणस्थान होता है** ऐसी बात बतायी। अभी फिर आगे बताते हैं देखो,

मात्र वीतरागभाव को पंचम गुणस्थान नहीं कहते, **वीतरागता के**

अविनाभावी बाह्य अणुव्रतादि पालन करने का रागभाव अर्थात् पुण्य परिणाम भी इस गुणस्थान के स्वरूप में अंतर्गर्भित हैं। इसलिये मैंने पहले कहा था कि हम तो बाह्य में तो पाल रहे हैं साहब और अंतरंग में ? अभी होगा-होगा चिंता मत करो। अभी तो हम पंचम गुणस्थान में हैं। केवल राग है उसको पंचम गुणस्थान नहीं होगा। केवल वीतरागता है, यह परिणाम नहीं है बाह्य में वह भी पंचम गुणस्थान नहीं है। दोनों ही सायमल्टेनिअस्-एक साथ होंगे तो ही वह पंचम गुणस्थान है। **कोई मनुष्य अणुव्रतादि को ग्रहण करे और उसे दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक वीतरागता व्यक्त न हो तो उसे पांचवां गुणस्थान होगा या नहीं ?** यानी बाह्य में अणुव्रत है और अंतरंग में वीतरागता नहीं है तो उसके पांचवां गुणस्थान होगा कि नहीं ? **नहीं होगा; क्योंकि मात्र अणुव्रतादि के ग्रहण करनेरूप राग अर्थात् पुण्य परिणाम को देशविरत गुणस्थान नहीं कहते;** क्योंकि -

हमने देखा है कि ऊपर का गुणस्थान कब आता है ? शुद्धोपयोग में। चतुर्थ गुणस्थान की प्राप्ति हुयी वही जीव कुछ काल के बाद दुबारा जिसको हम कहते हैं बारंबार स्वरूप में एकाग्रता करने की कोशिश करेगा और बाह्य में उसके व्रतादि का पालन चालू हो, ऐसा जो जीव है वह ऐसा अंतरंग में अधिक दृढ़तर स्थिर हो जाता है कि उसके सहजरूप से पंचम गुणस्थान की प्राप्ति होती है। प्रोव्हाइडेड यहां अपनी भाषा में कि वह द्रव्यलिंगी श्रावक होना चाहिये। ख्याल में आया ? तो क्या कहा ? उत्तर फिर से पढ़ रहा हूं। क्योंकि कोई जीव मात्र अणुव्रतादि के ग्रहण करनेरूप राग से गुणस्थान नहीं चढ़ता है। पुण्य परिणाम को देशविरत गुणस्थान नहीं कहते, **क्योंकि यह मान्यता व्यवहाराभासरूप है।** अरे बाप रे ! क्या कहा ? जो अंतरंग में स्थिरता है वह निश्चय से पंचम गुणस्थान है और उसके साथ-साथ जो राग वर्त रहा है उसको व्यवहार देशचारित्र है कहो।

वैसे-जैसे वहां हमने देखा न, निश्चय सम्यग्दर्शन और व्यवहार सम्यग्दर्शन ऐसे यहां पर भी उसका व्यवहार से वह पांचवां गुणस्थान है और जिसके पुण्य परिणाम - रागरूप परिणाम हैं और अंतरंग की विशुद्धि नहीं है तो वह व्यवहाराभासरूप है। **दो कषाय चौकड़ी के अनुदय से वीतरागतारूप सच्चा धर्म व्यक्त हो गया हो और उसीसमय अणुव्रतादि के पालन करने का शुभ परिणाम भी चल रहा हो तो ही देशविरत गुणस्थान होता है क्योंकि यहां व्यवहार-निश्चय का सुमेल है।** उनके

बाह्य में जो परिणाम - शुभ परिणाम चल रहे हैं, प्रतिमा आदि धारण करने के वह उसका व्यवहार है और स्वरूप में जो स्थिरता है वह उसका निश्चय है। **अणुव्रतादि या महाव्रत पांचवें अथवा छठवें-सातवें गुणस्थान के उत्पादक कारण नहीं हैं;** क्योंकि अणुव्रतादि या महाव्रत पालन करने के परिणाम शुभराग हैं। वह ऊपर के गुणस्थानों को प्राप्त करने का कारण नहीं हैं, **मात्र ज्ञापक कारण हैं।** यह क्या होता है ज्ञापक ? ज्ञापक का अर्थ ऐसा है दर्शानेवाले। नहीं समझ में आया आपको ? देखो मैं बताता हूं।

जैसे हम बुखार नापने के लिये थरमॉमिटर वापरते हैं और जो हवामान, मतलब जो टेम्परेचर बतानेवाले को क्या बोलते हैं आप लोग ? *श्रोता: बॅरॉमिटर।* बॅरॉमिटर, तो बॅरॉमिटर में मर्क्युरी होता है। तो उसमें क्या होता है ? मर्क्युरी जैसे-जैसे ऊपर जाता है तो बाहर में क्या होता है ? उष्णता बढ़ती है न ? हां साहब पन्नालालजी क्या होता है ? बॅरॉमिटर में जो मर्क्युरी है वह ऊपर जाता है तभी तो बाहर में टेम्परेचर बढ़ता है ? या टेम्परेचर बढ़ता है इसलिये वह बॅरॉमिटर का मर्क्युरी ऊपर जाता है ? वह मर्क्युरी जो है, पारा जो है वह तो ज्ञापक है। काहे का ? टेम्परेचर कितना है ? वह मापता है, नापता है तो उसको ज्ञापक कहेंगे। भाईसाहब बात ख्याल में आ गयी ? जैसा हम कहते हैं न कि हमें टेम्परेचर आ गया तो हम थरमॉमिटर लगाकर देखते हैं। तो थरमॉमिटर में जो पारा है वह अंदर में टेम्परेचर बढ़ाता है न अपने बॉडी में ? या जो बॉडी में बढ़ा है वह उधर दिखता है ? तो वह जो थरमॉमिटर है या बॅरॉमिटर है, वह क्या है ? ज्ञापक है।

यहां क्या कह रहे हैं अणुव्रतादि या महाव्रतादि पांचवें अथवा छठे गुणस्थान के उत्पादक नहीं, क्या हैं वे ? ज्ञापक कारण हैं यानी बतानेवाले हैं कि यह इस गुणस्थान में हो सकता है। इसतरह से, **ज्ञापक कारण अर्थात् निमित्त है। निमित्त को उत्पादक कारण मानना महान अज्ञान है।** कौनसा संदेशा दिया हमको ? कि निमित्त से कार्य नहीं होता। क्या भाई ? गुरु से ज्ञान नहीं होता यह बता रहे हैं। अभी हो गयी न गुरु की बात। मैंने ऐसा कहा था कि हम अगर श्रीमद्जी को गुरु मानते हैं तो मेरा यह प्रश्न था बहन कि श्रीमद्जी के पहले कोई मोक्ष गया है क्या नहीं ? मैंने यह नहीं कहा था कि श्रीमद्जी मोक्ष गये करके। आपके सुनने में गलती है। ख्याल में आया ? तो उनके पहले कोई मोक्ष गया है तो उनके भी कोई गुरु होंगे कि नहीं ? ऐसा मेरा सवाल था। आपने गलत सुना है। ख्याल में आया ? मेरा कहने का तात्पर्य यह था श्रीमद्जी के पहले कोई मोक्ष गये हैं या नहीं ? वे बिना गुरु के गये ? यह मेरा प्रश्न था। श्रीमद्जी तो

अभी-अभी हुये, यह कानजीस्वामी के थोड़े साल पहले ही हुये थे।

हम ऐसा मानते हैं कि गुरु से ज्ञान होता है और जिनको गुरु नहीं मिले वह क्या करेंगे ? नारकी को कौन गुरु मिलता है ? तिर्यंचों को हर तिर्यंच को कोई गुरु मिलता होगा कि नहीं उपदेश देनेवाला ? क्योंकि हमारे महावीर भगवान की दस भव पूर्व में जो सिंह की पर्याय थी तब तो दो चारणरिद्धिधारी मुनि आये थे, सम्यक्त्व प्राप्ति में उनका निमित्त बना था और जो स्वयंभूरमण समुद्र में असंख्यात मत्स्य पंचम गुणस्थानवर्ती हैं ? वहां मनुष्य जा नहीं सकता है उनको कौन गुरु मिलता होगा ? यह जो गलतफहमी है न हमारे दिमाग में ! 'गुरु बिन ज्ञान नहीं' वह गाता है बैजू बावरा में और हम भी नाचते हैं वाह-वाह, वाह-वाह। यह बच्चें लोग नहीं जानेंगे बैजू बावरा क्या होता है। अरे भाई तू सुन तो सही। गुरु से अगर ज्ञान होता हो तो सबको एक जैसा होना चाहिये। तो यहां जो बात है क्या कह रहे हैं ? कि निमित्त को उत्पादक कारण मानना महान अज्ञान है। ये लिखनेवाले लिखेंगे और हम पढ़ेंगे तो हमारे प्रति गुस्सा आता है लोगों को। अरे परंतु वह सत्य बात है वह समझने की कोशिश तो कर।

चलो अभी हम पेज नंबर १२९ पर जो ३० नंबर की गाथा है वह न पढ़ते हुये आगे उसका हम अर्थ पढ़ते हैं। प्रत्याख्यानावरण कषाय कर्म के उदय के काल में। देखो-देखो, आपको भी रिपीट करना है, क्योंकि यह बात जल्दी समझ में आने जैसी है। क्या कह रहे हैं ? **प्रत्याख्यानावरण कषाय कर्म के उदय के काल में**, *श्रोता: प्रत्याख्यानावरण कषाय कर्म के उदय के काल में।* मैं सोचता हूं कि आप एक साथ शुरू करेंगे और बोलेंगे तो सबको मज़ा आयेगा। क्या कहते हैं ? **अर्थात्** *श्रोता: अर्थात्।* **निमित्त से** यानी किसके निमित्त से ? प्रत्याख्यानावरण कषाय कर्म के उदय के निमित्त से यह बात समझना है। निमित्त से आगे में पढ़ूंगा आप पढ़ना। **पूर्ण संयमभाव प्रकट नहीं होने पर भी**, *श्रोता: पूर्ण संयमभाव प्रकट नहीं होने पर भी,* **सम्यग्दर्शनपूर्वक**, *श्रोता: सम्यग्दर्शनपूर्वक।* **अणुव्रतादि सहित**, *श्रोता: अणुव्रतादि सहित।* **तथा**, *श्रोता: तथा।* **दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक**, *श्रोता: दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक।* **व्यक्त होनेवाली वीतराग दशा को**, *श्रोता: व्यक्त होनेवाली वीतराग दशा को।* **देशविरत गुणस्थान कहते हैं।** *श्रोता: देशविरत गुणस्थान कहते हैं।*

देखो अभी हम उलटी दिशा से चलेंगे। क्या कहते हैं ? देशविरत गुणस्थान

कहते हैं। किसको कहते हैं ? क्या कहते हैं ? वीतराग दशा को। यह गुणस्थान जो है उसका जो देशविरत नाम है वह कौनसी अवस्था है ? चारित्र गुण की वीतराग अवस्था है। कह रहे हैं उस वीतराग दशा को या राग दशा को देशविरत कहा है ? मैं आपके सामने प्रश्न रखता हूं। उसका उत्तर आप ही ढूंढना और आप ही समझना क्योंकि प्रत्येक जन स्वयं स्वयं का गुरु है। 'आजे मानो, काले मानो, आ मान्या वगर छुटको नथी।' यह समझ गये न, हिन्दी में तो समझ गये न ? क्या कह रहे हैं ? आज मानो या कल मानो, यह माने बिना तुम्हे मार्ग मिलेगा नहीं। क्या कहा ? कि यह जो देशविरत गुणस्थान है वह वीतराग दशा का नाम है तो वह वीतराग दशा कैसी पैदा होती है ? कहते हैं कि दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक वह वीतराग दशा व्यक्त होती है। मेरा यह प्रश्न होगा फिर से दिलीपभाई इनका नाम क्या है बताना मुझे, आपका नाम ? हां बोलो-बोलो, दीपकभाई, अरे वाह दीपक, दिलीप सभी मौजूद हैं तो दीपकभाई मुझे यह पूछना है पहले वीतरागता आयेगी या पहले दो कषाय चौकड़ी का अभाव होगा ? *श्रोता: पहले वीतरागता आयेगी।* पहले वीतरागता आयेगी। बराबर, आप क्या कहती हैं अंजुबहन ? *श्रोता: दोनों एक साथ होंगे।* दोनों एक साथ होंगे। हां, सभी लोग ऐसा-ऐसा करते हैं, दोनों एक साथ-दोनों एक साथ। बिलकुल सही है।

देखो मैं आपसे पूछता हूं यह हमारे सातारा नाम का गांव है। है न ? वहां नांदगिरि नामक एक पहाड़ है। पहाड़ के अंदर एक गुफा है और गुफा में अपनी दिगम्बर प्रतिमा है। तो हमारे रिश्तेदार हैं वे बोले चलो दिनेशभाई हम जायेंगे उधर। तो हमने कहा चलो। पहाड़ था तो पहाड़ चढ़ने लगे। तो एक आदमी ने बोला तुम कहां जा रहे हो ? बोले ऊपर जो प्रतिमा है हम देखने जा रहे हैं। पागल हो गये हैं क्या ? अरे वहां तो इतना अंधेरा है तुम जाओगे कैसे ? उसमें क्या है ? तो हमने गांव के १०-१२ मजदूरों को बुलाया। किसीके हाथ में कुदाल, फावड़ा, जो कुछ है क्योंकि हमें अंधेरे को बाहर निकालना था न। तो हम उसको ऐसा खदेड़कर निकालना चाहते थे। इतनी सारी भीड़ देखकर एक बुजुर्ग आदमी मिले वह बोले क्यों, क्या बात है ? ऊपर क्या हो गया ? अरे साहब वहां सालों से अंधेरा है, उसको हमें निकाल बाहर करना है। तो बोले इधर आओ, उसने जेब में हाथ डाला, एक माचिस की डिब्बी दी और बोले उधर जाकर जला दो। देखो, उजाला होता है कि नहीं। अब मेरा यह प्रश्न है पहले उजाला हुआ या पहले अंधेरा निकल गया ? दीपकभाई बात समझ में आती है ? कौनसी बात

पहले हो गयी होगी ? पहले अंधेरा भागा होगा, जगह हुयी होगी तभी उजाला हुआ, क्यों ? उमास्वामीजी को आपने नहीं पढ़ा। वे क्या कहते हैं ? उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्। नयी पर्याय का उत्पाद और पुरानी पर्याय का व्यय दोनों एक समय में होता है।

यहां तो पहले अंधेरा था वह पूर्व पर्याय और अभी उजाला हुआ वह है नयी पर्याय और नयी पर्याय का उत्पाद और पूर्व पर्याय का व्यय एक ही समय में होता है। यहां जो वीतरागता हुयी है और वहां दो कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ है दोनों का समय एक है। यहां तो दो भिन्न द्रव्य हैं भाई। ख्याल में आया ? क्योंकि हमने कभी यह बात सुनी नहीं है न और ना सुनने का ढाढ़स किया है। ब्रह्मदेवजी आप कैसा डट कर आये हैं, जो होगा सो होगा देखेंगे, हम तो जायेंगे। तो क्या बात है ? यहां कह रहे हैं, जो वीतरागता हुयी है; क्या कह रहे हैं ? देखो-देखो, दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक क्या हुआ ? वीतरागता व्यक्त हुयी। तो अभी अभाव तो हो गया, लेकिन वीतरागता होने में एक-दो समय लग जावें तो ? ऐसा कभी नहीं होगा। उसीतरह यहां वीतरागता हुयी है लेकिन अभी वह कर्म की मौजूदगी है ऐसा भी नहीं होगा। ख्याल में आया ? तो क्या कह रहे हैं ? वहां दो कषाय के पहले क्या लिखा है ? अणुव्रतादि सहित। यानी क्या कहना चाहते हैं ? वहां राग भी चल रहा है और वीतरागता भी चल रही है। क्या कहा देखो ? अणुव्रतादि सहित दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक व्यक्त होनेवाली वीतराग दशा को देशविरत गुणस्थान कहते हैं। यह बात निश्चित हो गयी न वहां अणुव्रतादि पालन करने का राग भी मौजूद है और वीतरागता भी मौजूद है। ख्याल में आया ?

आगे क्या कहते हैं उसके पहले ? सम्यग्दर्शनपूर्वक यानी यह कब पॉसिबल है ? कि उस जीव के सम्यग्दर्शन है तभी वीतरागता प्रस्थापित होगी और सम्यग्दर्शन बिना वीतरागता का होना नामुमकिन है। तो कहते हैं कि **पूर्ण संयम भाव प्रकट नहीं होने पर भी।** यह पूर्ण संयमभाव कब प्रकट होता है ? आप बतायेंगी बहन ? *श्रोता: नहीं मालूम।* नहीं मालूम, कोई बात नहीं। और कोई बताना चाहता है ? हां आप, आपके बगल में मिसेस मेहता ? आप हमसे पूछो उनसे क्या पूछती हो ? प्रश्न फिर से पूछूं ? यह प्रश्न है कि पूर्ण संयमभाव प्रकट नहीं हुआ है तो मेरा यह प्रश्न है पूर्ण संयम भाव कब प्रकटता है ? कौनसे गुणस्थान में ? हां पुरुषों में कौन बता रहे हैं ? दिलीपभाई आप बता रहे हैं ? *श्रोता: सातवें गुणस्थान में।* छठे गुणस्थान में या सातवें गुणस्थान में ? छठे सातवें गुणस्थान में। वह सकलसंयम है न तो उसको पूर्ण संयम

कहा और अभी जो पांचवें गुणस्थान में संयमासंयम कहेंगे या तो विरताविरत कहेंगे। ख्याल में आया ? क्योंकि वहां अणुव्रतादि जो पार्शल व्रत चालू हैं न वे पूर्ण व्रत नहीं हैं। तो क्या कहते हैं वहां उसमें निमित्त कौन है ? कह रहे हैं कि प्रत्याख्यानावरण कषाय कर्म के उदय के निमित्त से। क्या हुआ ? अभी हमने देखा था कि प्रत्याख्यानावरण कर्म जो है वह जीव को सकलसंयम प्राप्त होने नहीं देते। यह निमित्त का कथन है। यहां तो जीव के परिणाम उसरूप नहीं होते वह जीव के कारण और वहां कर्मों का जो उदय है वह कर्म के कारण। दोनों में अत्यंत अभाव है, वे एक दूसरे को छूते तक नहीं। भाई बात तो व्यवहार से कही जाती है। और हमने क्या माना ?

सुनो मैं एक उदाहरण देता हूं आपको। यह हमारे जो केवली भगवान हैं या अरिहंत भगवान हैं, उन्होंने चार घातिकर्मों का नाश करके अनंतचतुष्टय की प्राप्ति की। यह शास्त्र का वचन है या हमारे तुम्हारे जैसे बोलनेवालों का वचन है ? सुभाषभाई आप क्या कहते हैं ? *श्रोता: शास्त्र का वचन है।* शास्त्र का वचन है और हम ऐसा ही माने तो ? महान अपराध है यहां लिखा। क्या लिखा ? अरे भाई वह तो अनंतचतुष्टय के धनी हैं। लेकिन मैं आपको दावे के साथ बात कर रहा हूं कि वे केवली भगवान जो अरिहंत भगवान हैं उन्होंने कर्मों को छुआ तक नहीं है। क्या हुआ ? तो उनका नाश कैसा करेंगे ? क्यों नहीं छुआ साहब ? क्योंकि दो द्रव्यों में अत्यंत अभाव होता है। जीवद्रव्य का स्वचतुष्टय जुदा है और पुद्गलकर्मों का अपना-अपना स्वचतुष्टय जुदा है। एक पुद्गल परमाणु का दूसरे परमाणु में भी अत्यंत अभाव है और जो कोई स्कंधरूप है तो एक स्कंध का दूसरे स्कंध में अन्योन्य अभाव है। जहां जिसका अभाव है वह उसका कार्य करे यह कहां से बात लायी ? ये तो दो भिन्न द्रव्य हैं।

जीवद्रव्य जो अरिहंत है वह कर्मों को छू भी नहीं सकता है तो कर्मों का नाश कहां से करेगा ? और हमने माना है कि गुरु से ज्ञान होता है। ख्याल में आया ? शास्त्र में लिखा है, बिलकुल लिखा है। लेकिन वह तो उपचार का कथन है, व्यवहार का कथन है और व्यवहार का कथन निश्चय कथन के सामने तद्दन झूठा ठहरता है। ख्याल में आया ? तकलीफ यह है कि जिस अपेक्षा से जो कथन किया हो उस अपेक्षा से तो हम लेना ही नहीं चाहते। देखो, यहां पर लिखा है कि नहीं लिखा है ? अपनी आंखों में उंगलियां डालते हैं। दिखता नहीं, तुमको दिखता नहीं ? अरे प्रभु तेरे भेजे में नहीं घुसता उसको हम क्या करें ? दिलीपभाई, नाराज नहीं होना हो, मेरे शब्द ही ऐसे

कड़क हैं। क्या करें ? सोनेवाले को जगाना यह हमारा काम है। आप नाराज हो जायेंगे अगली टाइम हमको नहीं बुलायेंगे। कोई बात नहीं। हमारे हाथ में तो डुगडुगी है, हम जहां डुगडुगी बजायेंगे वहां लोग आयेंगे और हम अपना खेल चालू ही रखेंगे।

यहां क्या कह रहे हैं ? देखो, यहां कह रहे हैं **प्रत्याख्यानावरण कषाय कर्म के उदय** के निमित्त से, क्या हुआ ? पूर्ण संयमभाव नहीं प्रकट होने पर भी, क्या हुआ ? सम्यग्दर्शनपूर्वक अणुव्रतादि सहित तथा दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक व्यक्त होनेवाली वीतराग दशा को देशविरत गुणस्थान कहते हैं। अभी यहां क्लिअर कट बात हो गयी न, जो पंचम गुणस्थानवर्ती जीव है वह पंचम गुणस्थानवर्ती जीव सम्यग्दृष्टि जीव है। उसे दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक वीतरागता वर्तती है, उसको देशविरत कहा है और उसके साथ उसके शुभ परिणाम भी चल रहे हैं। कौनसे ? अणुव्रतादि पालन करने के और ऐसे जीवों के परिणामों को; यहां कौनसे परिणाम ? वीतरागी परिणाम जो हैं उसको देशविरत गुणस्थान कहेंगे।

अब इसके अलावा अगर हमारी कोई अन्य मान्यता हो तो उसके जिम्मेदार हम हैं। क्यों ? यहां कहते हैं, **उक्त परिभाषा में,** परिभाषा यानी डेफिनिशन में '**प्रत्याख्यानावरण कषाय के उदयकाल में**' **ऐसा वाक्य है। तथा आगे कहा है** क्या कहा है ? **कि** '**पूर्ण संयम भाव प्रकट न होने पर भी**' **इन कथनों का अर्थ यह हुआ कि प्रत्याख्यानावरण कषाय के उदयकाल में आंशिक वीतरागतारूप देशसंयम होता है। श्रावक के अणुव्रतादि शुभोपयोगरूप व्रतों के पालन का भाव प्रत्याख्यानावरण कर्म के उदय का कार्य है। यह विचारणीय है कि अणुव्रतादि के पालन का भाव औदयिक भाव है; जो कर्म के उदय के निमित्त से होता है।** यह औदयिक भाव है वह वीतराग भावरूप निश्चयधर्म कैसे हो सकता है ? यह औदयिक भाव क्या होता है ? क्षायोपशमिक भाव क्या होता है ? अभी वह यहां समझाने के लिये अपने पास टाइम नहीं है। लेकिन कर्मों के उदय के निमित्त से जो भाव होते हैं उसको औदयिक भाव कहते हैं। तो यहां कह रहे हैं जो औदयिक भाव हैं कि अणुव्रतादि के पालन का भाव यानी यह जो शुभभाव है वह औदयिक भाव है। अब आगे कहते हैं-

जो कर्मोदय के निमित्त से होगा, वह तो शुभ अथवा अशुभभावरूप विभाव ही होगा, वह वीतरागभावरूप धर्म नहीं हो सकता। व्रत पालन के शुभ

परिणाम वह बाह्य क्रिया को तो उपचार से व्यवहार धर्म कहा है। इसे व्यवहार धर्म भी इसलिये कहा है कि इसके साथ में दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक आंशिक वीतरागरूप निश्चय धर्म होता है। इसकी बात तो हमने देखी थी। जहां निश्चय होगा वहीं व्यवहार होगा दोनों एक साथ होंगे। **चौथे गुणस्थान से ही आंशिक वीतरागतारूप ज्ञानधारा** यानी **धर्मधारा प्रारंभ हो गयी है; चौथे में रागधारा अर्थात् कर्मधारा विशेष अधिक थी। अब देशविरत गुणस्थान में वीतरागधारा बढ़ गयी है और रागधारा चौथे गुणस्थान की अपेक्षा हीन हो गयी है।** जो हमने पहले देखा था कि पहले गुणस्थान से तीसरे गुणस्थान तक घटता हुआ अशुभोपयोग, चौथे गुणस्थान से ऊपर जो हमने देखा था छठे गुणस्थान तक बढ़ता हुआ शुभोपयोग। यहां बढ़ते हुये शुभोपयोग की बात कर रहे हैं। है न ? पर हमने पहले पढ़ा था उसका हमें अभी रेफरन्स देखना चाहिये। यह ऐसा जो लिखा है, क्या लिखा ? अब देशविरत गुणस्थान में वीतरागधारा बढ़ गयी है और रागधारा चौथे गुणस्थान की अपेक्षा से हीन हो गयी है - यह राग में यहां समझना अशुभराग और बढ़ रहा है शुभराग।

नाम अपेक्षा विचार। अभी उसको कौन-कौनसे नाम से जाना जाता है ? तो यह पंचम गुणस्थान है उसको कहते हैं **विरताविरत,** यह क्यों विरताविरत कहेंगे उसको भी हम देखेंगे। **संयमासंयम, देशसंयम, देशचारित्र, इत्यादि अनेक नाम पांचवें गुणस्थान के लिये हैं।** पंचम गुणस्थान में अभी यहां देखो-देखो, इसका नाम हमने क्या देखा था ? विरताविरत, पहला नाम जो है विरताविरत और चौथे गुणस्थान का नाम क्या है दीपकभाई ? चौथे गुणस्थान का नाम ? जोर से बोलना भाई। हां दिलीपभाई आप उनको मदद करो जोर से बोलकर। *श्रोता: अविरतसम्यक्त्व।* अविरतसम्यक्त्व। यह अविरति कितने प्रकार की देखी थी बहन हमने ? अविरति कितने प्रकार की देखी थी ? पीछे से ४-५ लोग तो बोल चुके। बहन आप बताना। मालूम नहीं ? आप बोलना बहन, *श्रोता: बारह।* बारह। बहुत अच्छा, अभी यह कैसा है जीव ? विरताविरत है यानी वह विरत भी है और अविरत भी है। अभी हमने अविरत तो बारह प्रकार के देखे थे। उसके नाम याद है ब्रह्मदेव आपको ? हां, बोलो- *श्रोता: प्राणीसंयम और इन्द्रियसंयम।* प्राणीसंयम और इन्द्रियसंयम। इनका पालन नहीं होता है इसलिये वह उनसे अविरत है। ख्याल में आया ?

अभी यह पांचवां गुणस्थानवाला क्या करता है ? तो मेरा यह प्रश्न है, जरा ध्यान

से सुनना, दुबारा मत बुलवाना कि यह अविरति जो हमने बारह प्रकार की देखी तो अभी पंचम गुणस्थानवाले को विरताविरत कहा है तो उसका प्रपोर्शन क्या होगा ? विरत कितना होगा और अविरत कितना होगा ? मिनिमम ५०% तो होना चाहिये न ? सुरेशभाई आप क्या कहते हैं ? *श्रोता: ५०-५०।* हां जी ? ५०-५०। बहुत अच्छा, अभी तो २०-२० का जमाना चल रहा है। हां बोलो साहब, आपको बोलना है न ? *श्रोता: विरताविरत में षट्कायिक जीवों की हिंसा।* आपको नंबर बताना हैं, बाकी ११ अंग और ९ पूर्व की बातें हमें सुननी नहीं हैं। आप बताये कि विरताविरत में कितने से विरत है और कितने से अविरत है ? नहीं मालूम, कोई बात नहीं। बोलो साहब- *श्रोता: प्रपोर्शन कुछ भी हो सकता है, जरूरी नहीं की ५०-५० हो।* अच्छा-अच्छा, बहुत अच्छा और कोई बताना चाहेगा ? हां दिलीपभाई ? *श्रोता: विरत एकदेश है, एक हिंसा का त्याग।* हां एकदेश है और अविरति हां बहनों में से किसको बोलना है ? हां बहुत अच्छा, बोलो फटाफट, *श्रोता: त्रस हिंसा से विरत, पांच स्थावर की हिंसा से अविरत, यह प्राणीअसंयम की बात हुयी।* और इन्द्रियअसंयम में क्या लेना ? हां अब हमारी दूसरी बहन से पूछ ले न तो फिर बताना। हां बोलो जी, नहीं, नहीं जाने दो अपने पास वक़्त कम है। नहीं है तो क्या होगा ? बारह अविरति हैं और वह आंशिक कितना है वही तो हम जानना चाहते हैं भैया। अच्छा मालूम नहीं तो कोई बात नहीं। बहन आप बताना चाहती है ? बोलो-बोलो, उनके साथ मत बोलना मेरे से बोलना हां।

देखो, आपको जो कहना है मैं बराबर सुन नहीं पाया लेकिन मैं जो बोलूंगा वह तो आप सुन पायेंगे क्योंकि मैं माइक से बोल रहा हूं। देखो, बारह प्रकार की अविरति हमने देखी। यह बारह प्रकार में क्या-क्या देखा था हमने ? पांच स्थावर और एक त्रस, इनकी हिंसा से वे बच नहीं पाते। अभी यह जो पांच स्थावरकायिक की हिंसा से अविरत है और यहां पांच इन्द्रिय और मन यह छह हो गये। तो यह जीव पांच इन्द्रियां और मन के विषयों से निवृत्त नहीं होता है, वहां तो अविरति ही चालू है और यहां पांच स्थावर और एक त्रस छह हैं न ? तो इनमें से त्रस जीवों की हिंसा नहीं होने देते, स्थावर जीवों की हिंसा नहीं चाहते हुये भी होती है। तो वह सिर्फ एक त्रस हिंसा से विरत है और बाकी अन्य ग्यारहों से अविरत है। कभी सोचा था यह विरताविरत का जो कोई प्रपोर्शन है वह ऐसा है। ख्याल में आया ? *श्रोता: उनका प्रपोर्शन कैसा है ?* बताया न १:११ यानी वन टू इलेव्हन।

अरे सही उत्तर नहीं आने के लिये मैं मिसगाइड करता हूं। ५०-५० होगा न ? हां साहब आप बोलते हो तो होगा। अरे क्या करे साहब ? धंधा ही वही है क्योंकि हम अब बिलकुल बोलते रहेंगे न तो यह पहले गुणस्थान से सब लोग सातवें गुणस्थान में जायेंगे और छठे से सातवें, सातवें से छठे झूलते रहेंगे। इसलिये आपको इसतरह जागृत रखना और जो गुणस्थान का अभ्यास है वह भी करवाना डबल ड्यूटी है हमारी। ख्याल में आया ? वह सब हम बिलकुल ख़ुशी से कर रहे हैं। अरे जिनवाणी की सेवा करने का मौका भाग्यवंत के हाथ ही आता है। हमें तो बहुत ख़ुशी है। ऐसा महान अवसर दुबारा कब आयेगा और हम तो अपने घर की कोई बात नहीं बता रहे हैं। जो आगम में है और जो युक्ति से, लॉजिक से आपके ख्याल में आवे ऐसा बता रहे हैं। मेरे पास में ऐसा कोई मेस्मरिझम् नहीं है कि मैं आपको हिप्नोटाइज करूं और मैं जैसा कहूं वैसा आपको मानना पड़ेगा। यह तो बिलकुल १+१ =२ जैसा सिम्पल है।

वैसे हमने पहले बारह अविरति देखी थी। वह बारह अविरति में हमने देखा था कि षट्कायिक जीवों की हिंसा से वे अविरत ही है और पांच इन्द्रिय और मन के विषयों से वे विरत नहीं है यानी अविरत है। यह बारह प्रकार की अविरति हैं। अभी यहां पांच स्थावर और एक त्रस, तो यह अणुव्रतधारी या पंचम गुणस्थानवर्ती जीव त्रस जीवों की हिंसा से तो निश्चितरूप से बचता है यानी वह त्रस जीवों की हिंसा करता नहीं है। लेकिन स्थावर जीवों की हिंसा से वह बच नहीं पाता। आप कहेंगे कौनसी-कौनसी हिंसा करता होगा ? तो कोई पंचम गुणस्थानवर्ती जीव है भोजन करता होगा कि नहीं ? क्यों साहब ? अरे खुद नहीं बनाता होगा, घर से तो कोई बनाता होगा ? तो उसकी अनुमोदना है कि नहीं ? तो वहां तो अग्निकायिक जीवों की हिंसा हो गयी और अब क्या-क्या हो गया। ख्याल में आया ? जलकायिक जीवों की भी हिंसा हो रही, धंधा पानी मोटर वगैरह चलाता है तो मोटर के नीचे पृथ्वीकायिक जीवों का क्या होता है ? यह सब, सब, सब समझ लेना आप। इसलिये हमारे मुनिराज मोटर में नहीं घूमते, विमान से नहीं जाते। क्यों ? वहां जीवों की हिंसा होती है और वे तो महाव्रतधारी हैं। उनकी न त्रस जीवों की हिंसा से मतलब उससे वह बिलकुल विरत हैं और स्थावर जीवों की भी हिंसा नहीं करते हैं। इसलिये तो उनके अहिंसा महाव्रत होता है। क्या बतायें साहब अभी। मेरे पास मराठी में एक कहावत है, बोलूंगा। 'रात्र थोड़ी आणि सोंगं फार।' मॅटर इतना है और वह भी ३० घंटों में आपको समझाना है। ख्याल में आया ? क्या करें ?

यहां तो यह बात है, अरे एक-एक बात निकालेंगे तो आप बोलेंगे कि यह आगे क्यों नहीं बढ़ रहा है, आगे क्यों नहीं बढ़ रहा है। क्योंकि एक-एक बात ऐसी इम्पॉर्टंट है। यहां तो ग्यारह जो हैं उससे तो वह अविरत है और एक से विरत हो गया है। *श्रोता: उनसे जो स्थावर जीवों की हिंसा होती है वह आरंभी हिंसा है। यह प्रतिक्रमण आदि से ख़तम हो जाती है।* ऐसा नहीं है, यह आपकी गलतफहमी है। प्रतिक्रमण करने से कोई हिंसा टलती नहीं है। अभी विषयांतर मत करो आप। हम तो यह कह रहे हैं कि वह जो जीव है पंचम गुणस्थानवर्ती वह स्थावर जीवों की हिंसा से बच नहीं सकता। यह मैं कह रहा हूं और आप जो कह रही हैं कि ऐसा यह करने से वह सब नलीफाय हो जाता है ऐसा कभी नहीं होता है। यह जैनदर्शन का सिद्धान्त नहीं है कि हमने इतना पाप किया और इतना पुण्य किया तो हमारा इतना पुण्य बाकी रह गया। ऐसा कभी नहीं होता है। ख्याल में आया ?

देखो अभी ऐसी बात हो गयी मैं आपको एक उदाहरण देता हूं, समझना जरा आपस में बात मत करना। आपने प्रश्न उठाया न तो आप यहां ध्यान रखे। एक महिला हमारे पास आयी, वृद्ध थी। मान लो ७५ साल की होगी उसने कहा कि पंडितजी हमें आप जवाब देना। मैंने कहा क्या हो गया ? वह बोली मेरी बहुत ख्वाइश थी कि मैं शिखरजी जाऊं और मेरा बेटा भी मुझे गये पंद्रह साल से कहता था कि मैं तुझे ले जाऊंगा, ले जाऊंगा, ले जाऊंगा। लेकिन अभी मेरी ऐसी पोझिशन हो गयी कि मुझे चलने-फिरने में भी तकलीफ है तो वहां पहाड़ कहां चढ़ूं मैं ? तो उसके लिये मैं प्रायश्चित करना चाहती हूं। आप मुझे बताइये कि मैं कौनसा प्रायश्चित करूं। मुझे तो मालूम नहीं कौनसा प्रायश्चित करना है। क्या करना है ? मुझे किसीने बोला कि तू दिनभर जो नवकारवाली माला होती है, क्या बोलते हैं आप लोग ? १०८ बार णमोकार मंत्र बोलते हैं। किसीने मुझे बताया कि तू दिन में पच्चीस बार माला जपना। मैंने संकल्प किया था कि मैं जाऊंगी, तो अभी नहीं जा पाऊंगी तो मेरा पाप हो रहा है तो उससे मैं बच जाऊंगी कि नहीं ? यह प्रायश्चित यानी क्या होता है ? एक तरह की सजा है क्या ? भगवान का नाम १०८ बार लेना और वह भी पच्चीस बार। अभी कितना हो गया ? पौने पच्चीस - अच्छा ठहरो अभी ठहरो, पच्चीस। ऐसा थोड़ी होता है ?

यह तो हिंसा करे और बोले कि हमने प्रतिक्रमण किया और वह नलीफाय हो जाये ऐसा कभी नहीं होगा बहन। बिलकुल समझना, डंके की चोट मैं आपको बता रहा

हूं। यह हिन्दू धर्म की मान्यता है इसलिये हम भी ऐसा ही मानने को सीख गये कि दिन में २४ घंटे होते हैं। २३ घंटे और ५५ मिनट पाप ही पाप करो और ५ मिनट णमोकार मंत्र बोलो। णमो अरिहंताणं, णमो अरिहंताणं, एसो पंचणमोयारो, सव्व पावप्पणासणो इसमें लिखा है कि जो णमोकार मंत्र बोलता है उसके सब पाप धुल जाते हैं। अरे वाह ! कैसा महान मंत्र है ? जो २४ घंटों में से २३ घंटे और ५५ मिनट तुम पाप, पाप, पाप करो ५ मिनट में सब धुल जायेगा, क्या ऐसा है ? यह कैसी मान्यता है जीवों की ? वहां तो लिखा है न, एसो पंचणमोयारो यह पांच नमस्कार जो बोलेगा सव्व पावप्पणासणो उनके सर्व पाप। अरे जब तक तू बोल रहा है तब तक, जो णमोकार मंत्र बोलता है, उसको हिंसा करने के परिणाम हो रहे हैं कि चोरी करने के परिणाम हो रहे हैं ? अरे पांचों पापों से वह उस समय दूर है। वह तो जिनेन्द्र भगवान या पांच परमेष्ठी के नाम ले रहा है तब पांचों ही पाप वहां उत्पन्न नहीं हो रहे हैं तो यह कह रहे हैं कि पांच पापों का नाश होगा। पापों का नाश होगा तो हमने ऐसा माना कि दिनभर हम जो करते हैं और रात को सोने से पहले भगवान को दर्शन दे या ले और पाप धुल जाये। ऐसा है नहीं।

जितने प्रमाण में तुम पाप परिणाम करोगे; पाप कार्य नहीं, पाप परिणाम करोगे उतना तो पाप बंधेगा ही बंधेगा और जितने पुण्य के परिणाम करोगे उतना पुण्य तो बंधेगा ही बंधेगा। लेकिन वह एक दूसरे को कॅन्सल करे ऐसी बात जैनदर्शन के अनुसार की मान्यता नहीं है। यहां कोई चित्रगुप्त बैठा नहीं है; इसने इतना पाप किया, इसने इतना अच्छा तो तू नरक में जा, तू स्वर्ग में जा, तू जहन्नम में जा, ऐसा कुछ होता होगा ? लेकिन भैया हम जानते नहीं हैं यह कोई निगोदिया जीव होते हैं वे एक साथ अनंत मरते हैं और अनंत जन्मते हैं। अनंत जीवों का लेखा-जोखा कौन रखेगा ? ये सब कल्पनायें हैं, भ्रमित कल्पनायें हैं कि यमराज आया। तो अनंत जीवों को लेकर जाने के लिये एक यमराज काफी है क्या ? तू कहां जायेगा ? नीचे के भाग में कि ऊपर के भाग में ? अरे कुछ भी बोलते हो और हम हां; सही बात है- सही बात है। ब्रह्मदेव मैं तो कहूंगा, अभी जो नवागढ़ में तीन जून से शिबिर होनेवाला है वहां लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका चलनेवाली है। वह समझना अत्यंत अनिवार्य है।

वे मूलभूत सिद्धान्त जब हमारे पक्के हो जायेंगे तो ऐसी बातें अपने दिमाग से हट जायेगी। आप अवश्य आना, आपको आमंत्रण है और सभी को है। कोई लोग पूछते हैं कि किसको बताना-किसको बताना ? जो परभणी का ॲड्रेस दिया गया है

आप लोगों को हमने जो पर्चा भेजा है, वहां पर आप लिखितरूप से बतायें कि हम लोग आ रहे हैं, इतने लोग आ रहे हैं और इस गाड़ी से आ रहे हैं। जो गाड़ी से या बस से जो आयेंगे उस स्टँड पर वहां से वहां ले जाने के लिये सुविधा होगी। यह चालू प्रवचन में मैं इसलिये बोल रहा हूं कि रास्ते में लोग पूछते हैं हम किसको बतायें-किसको बतायें ? मुझे भी मत बताना। वहां परभणी का जो ॲड्रेस दिया है वहां पर आप संपर्क करो या तो फ़ोन से करो या पत्र तो डालो जो भी करो लेकिन आओ जरूर। जो चाहो अपनो कल्याण। यह जिनेन्द्र भगवान की वाणी सहीरूप से समझने के लिये मूल सिद्धान्तों का आकलन कहो, पहचान कहो आवश्यक है। अब अपनी बात कौनसी चल रही है यहां पर कि यह ऐसा हमने सुना है न कि पाप और पुण्य एक दूसरे को कॅन्सल करते हैं - एक दूसरे को नलीफाय करते हैं ऐसा बिलकुल नहीं है। वे संक्रमित हो जाये वह बात जुदी है, लेकिन ऐसा संक्रमण जो होता है वह विशेषरूप से सम्यग्दृष्टि के ही होता है। विशेषरूप से मैं कह रहा हूं मिथ्यादृष्टि को नहीं होता है ऐसी बात नहीं कह रहा हूं मैं।

अब आगे, क्या कह रहे ? देखो, हां-हां मैंने बताया था कि जो बारह प्रकार के अविरति है उसमें से त्रस की हिंसा से यह जीव बचते जरूर हैं लेकिन स्थावर जीवों की हिंसा करने का उनका जरा भी अभिप्राय है नहीं लेकिन स्वरूप में उतनी स्थिरता नहीं है कि जिसके कारण वे स्थावर जीवों की हिंसा से बचे। तो उसको विरताविरत कहा, उसको संयमासंयम कहा। संयम प्लस असंयम = संयमासंयम। अब आगे **बारह प्रकार की अविरति में से आंशिकरूप से संयम का पालन करते हैं और शेष असंयम है; ऐसा जिसका जीवन हो, उसे संयमासंयमी कहते हैं। जो चारित्र सकलचारित्र नहीं है उसे देशचारित्र कहते हैं।** अभी भेद बता रहे हैं। क्या बताया ? देखो, **ग्यारह प्रतिमाओं की अपेक्षा देशविरत गुणस्थान के ग्यारह उपभेद हैं, जो इस प्रकार हैं**- जो ये प्रतिमायें जो हैं तो उनमें पहला नाम है **दर्शनप्रतिमा**, यहां पहले को ही सिर्फ दर्शनप्रतिमा लिखा है। लेकिन दूसरा नाम है **व्रत**प्रतिमा, **सामायिक** प्रतिमा, **प्रोषध** प्रतिमा, **सचित्तत्याग** प्रतिमा, **दिवामैथुनत्याग** प्रतिमा उसीका नाम रात्रिभोजनत्याग प्रतिमा है, सातवीं **ब्रह्मचर्य** प्रतिमा, आठवीं **आरंभत्याग** प्रतिमा, **परिग्रहत्याग** प्रतिमा, **अनुमतित्याग** प्रतिमा, **उद्दिष्टत्याग** प्रतिमा।

अभी यहां यह हम थोड़ासा समझने की कोशिश करेंगे। देखो बात ऐसी होती है कि यह पहली प्रतिमाधारी जीव होवे जिसका नाम दर्शनप्रतिमा है या ग्यारहवीं

प्रतिमाधारी जीव होवे - दोनों ही पांचवें गुणस्थान के ही जीव हैं। लेकिन जैसे चौथे गुणस्थान में; अभी यह तो उदाहरण के तौर से कह रहा हूं; जैसा हम समझते हैं कि चौथे गुणस्थानवर्ती जीव कुछ काल के बाद दुबारा आत्मानुभव करेगा। अभी कई लोगों का ऐसा मानना है कि छह महीने के अंदर वह आत्मानुभवी होता ही है। छह महीना जो बताया जा रहा है वह तो जो कर्मों का जो वासनाकाल यानी जो कितने टाइम तक वे कषाय रहेंगे उसकी अपेक्षा से कथन किया है। लेकिन शास्त्र में हमें तो कहीं नहीं मिला इसलिये वह नहीं है ऐसी बात नहीं है। हमें कहीं पढ़ने में नहीं मिला जो छह महीने जो बताते हैं ऐसा कोई क्लिअर कट छह महीने का समय नहीं बताया है। वह अप्रत्याख्यानावरण कर्म है उनका वासनाकाल छह महीने का है उसके पहले वे आत्मानुभूति करते हैं। हम समझते हैं दो महीने में करे न, हमारा क्या जाता है।

चौथे गुणस्थानवाला जब आत्मानुभूति करता है उसे अतीन्द्रिय आनंद का वेदन होता है तो उसके उस रस का-अतीन्द्रिय रस का इतना स्वाद आता है तो बारंबार आत्मानुभूति करने की कोशिश करता है और इसलिये यहां देखो सामायिक प्रतिमा जो बतायी है न तीन नंबर की, तो सामायिक प्रतिमा में क्या होता है ? कि यह जीव पर्टिक्युलर सुबह, दोपहर और शाम - तीन बार सामायिक करने के लिये बैठता है। तो सामायिक करना यानी क्या ? सम + आय यानी समता वृत्ति जो है उसकी प्राप्ति। आप आयकर भरते हैं क्या ? आयकर-इन्कम टॅक्स। इसको क्या बोलते हैं ? आयकर। तो इसकी समता की प्राप्ति। प्राप्ति कर भरते हैं न आप जो कमाई करते हो उसके ऊपर टॅक्स। तो यहां समता वृत्ति जो है या समताभाव है उसकी प्राप्ति करने के लिये यह जीव प्रयत्नशील होता है। जैसा जो क्रिकेट खेलनेवाले होते हैं। यह मेरे सब क्रूड एक्झॅम्पल्स हैं। क्रिकेट खेलनेवाले क्या करते हैं ? दिन में ६-६ घंटे, ४-४ घंटे प्रॅक्टिस करते हैं। वह गाने के रियाज करनेवाले १०-१० घंटे रियाज करते हैं। वैसे यह जीव जो पंचम गुणस्थानवर्ती सामायिक प्रतिमाधारी हैं, वे भी आत्मानुभूति के लिये एक जगह बैठकर अपने स्वरूप का अवलंबन लेने की कोशिश करते हैं और उसमें सक्सेसफुल भी हो जाते हैं। वह उनके लिये मेरी भाषा में एक प्रकार की प्रॅक्टिस है।

वह प्रतिमा धारण करना तो हमने तो क्या सोचा ? जो सामायिक पाठ शास्त्र में लिखा है उसको आदि से अंत तक पढ़ जाना और थई गयुं सामायिक यानी हो गया सामायिक। यह सामायिक तो शुरू में राग परिणाम हैं लेकिन उस राग परिणाम से भी

जुदा होकर अपने स्वरूप का अनुभव करना वही सच्चा सामायिक है। ख्याल में आया ? मैं यह बता रहा था कि पहले प्रतिमाधारी से लेकर ग्यारहवीं प्रतिमाधारी जो जीव हैं वे पंचम गुणस्थान में ही हैं। लेकिन जैसे-जैसे आत्मा में स्थिरता बढ़ती जाती है वैसे-वैसे उस जीव के उच्च प्रकार के राग भी शुरू हो जाते हैं और उसको और-और ऊपर की प्रतिमा धारण करने के परिणाम सहज ही होते हैं। यानी मान लो कि आज पहले नंबर की प्रतिमा जिसने धारण की है उस जीव की जो वीतरागता है उससे भी जो पांचवीं प्रतिमाधारी जीव होगा उसकी वीतरागता अधिक है और वीतरागता अधिक है तो उसको उच्च प्रकार के राग भी आयेंगे और वह पांचवीं प्रतिमा धारण करेगा। जो पांचवीं प्रतिमा धारण करता है उसके पहले की चार प्रतिमा भी हैं। वह छोड़ नहीं देगा। ख्याल में आया ?

इसतरह जैसे-जैसे स्वरूप में वीतरागता बढ़ती जाती है वैसे-वैसे उस जीव के सहजरूप से ऊपर-ऊपर की प्रतिमा धारण करने के परिणाम होते हैं और ऐसे होते-होते वह क्या कह रहे हैं ? वह आखरीवाला है न, उद्दिष्टत्यागप्रतिमा तो उद्दिष्टत्यागप्रतिमा जो है उसके भी यहां दो भेद बताये हैं। देखो-देखो, हम पढ़ते हैं पुस्तक में १३० पृष्ठ पर, **उद्दिष्टत्यागप्रतिमा के भी दो भेद हैं।** कौनसे-कौनसे हैं ? **एक वस्त्रधारी श्रावक** उनका नाम है **ऐल्लक** और **दो वस्त्रधारी श्रावक** उनका नाम है **क्षुल्लक इन प्रतिमाओं का सामान्य स्वरूप नाटक समयसार के चौदहवें अधिकार के ५८वें छंद में शास्त्रकार के शब्दों में निम्नानुसार** कहा **है।** तो वह क्या कहना चाहते हैं ? **संजम अंश जग्यौ जहाँ, भोग अरुचि परिणाम।** यानी क्या कहते हैं ? संयम का जो अंश जगा है, जिनके उत्पन्न हुआ है तो उनके भोग के अरुचि परिणाम हैं। भोग में रुचि नहीं है। **उदय प्रतिज्ञा कौ भयौ, प्रतिमा ताकौ नाम।** यह कहते हैं ऐसी विरक्ति यानी अभोग अरुचि परिणाम जिनके शुरू हुये हैं तो उनके प्रतिज्ञा का उदय होता है। प्रतिज्ञा लेना यानी मैं ऐसा करूंगा, यह प्रतिमा लूंगा ऐसे जो होता है उसको प्रतिमा कहते हैं। अभी हम यहीं रुकेंगे, हम दुबारा कल विशेषरूप से यह जानकारी लेने की कोशिश करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

१९. देशविरत गुणस्थान – विशेषता, गमनागमन

लगातार गये तीन दिन से हम गुणस्थानों के बारे में कुछ न कुछ विशेष जानकारी ले रहे हैं। अभी हम यहां पंचम गुणस्थान में यानी उसके अभ्यास तक पहुंचे हैं। यह पंचम गुणस्थान है उसका नाम है देशविरत और उसके अन्य नाम भी हमने देखे - विरताविरत, संयमासंयम, आदि। इसमें क्या विशेषता होती है यह हम देखेंगे।

यहां बात यह हो रही है कि कल हमने बनारसीदासजी का जो दोहा है उसको भी देखा था। उस छंद में यह कह रहे हैं, जो नीचे के पॅरेग्राफ में यह जो छंद है उसके नीचे लिखते हैं **संयम का अंश प्रकट होना, परिणामों का भोगों से विरक्त होना और प्रतिज्ञा का उदय होना, इसको प्रतिमा कहते हैं।** यानी प्रतिमा धारण करना - प्रतिमा धारण करना यानी क्या ? इसमें तीन बातें होती हैं। क्या कह रहे हैं ? पहले में पहले चौथे गुणस्थान तक अविरति थी, अभी क्या हो गया ? संयम का अंश प्रकट होना। सकलसंयम नहीं, संयम का अंश प्रकट होना। तो कह रहे हैं संयम का अंश भी प्रकट होता है और साथ में क्या होता है ? जो परिणाम हैं, जीवों के जो परिणाम हैं यानी जो सराग परिणाम हैं। कौनसे ? भोगों के, पंचेन्द्रिय के विषय और मन का जो विषय है उनका भोग लेना इसमें क्या हो जाता है ? विरक्ति आ जाती है। पहले कैसा था ? भोगों में रक्त था। रक्त था यानी रत था, उसमें उसको आसक्ति थी और उसमें उसको अच्छा लगता था। अभी उससे विरक्ति हो गयी है और वहां उस प्रकार की प्रतिज्ञा करना इसको कहते हैं प्रतिमा को धारण करना।

अब देखो नीचे और तीन पॉइंट उन्होंने दिये हैं। **संजम अर्थात् चारित्र का अंश प्रकट हुआ है। दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक व्यक्त वीतरागता ही यहां निश्चय चारित्र है।** यानी यहां पहले में पहले किसकी बात करी ? निश्चय चारित्र की क्योंकि निश्चय चारित्र जिनके होगा उनके ही व्यवहार चारित्र भी होगा। यहां इसलिये पहले कहते हैं कि जो वीतरागता व्यक्त हुयी है, जो चारित्र का अंश प्रकट हुआ है वही चारित्र है। अब दूसरे पॉइंट में कहते हैं **विशिष्ट आंशिक वीतरागता व्यक्त होते ही उसी समय स्पर्शनादि पांच इन्द्रियों के स्पर्शादि विषय संबंधी भोगों से विरक्ति** यानी **अरुचि का भाव उत्पन्न हुआ।** वही बात जो पहले दो लाइन में बतायी उसको थोड़ासा और खोलकर बताया। और **प्रतिज्ञा का उदय**, **अर्थात् पंचेन्द्रियों के भोगों से**

अरुचिरूप भाव उसके कारण भोग का त्याग करने के लिये बुद्धिपूर्वक व्रत लेने लेने का जो शुभभाव हुआ, वही व्यवहार प्रतिमा है। अच्छा तो इसको व्यवहार प्रतिमा कहा। किसको ? जो शुभभाव है उसको व्यवहार प्रतिमा कहा और जो स्वरूप में स्थिरता है वह निश्चय प्रतिमा है। जिसके केवल बाह्य प्रतिमायें हैं, क्या कन्नुभाई ? और अंतरंग में वीतरागता पंचम गुणस्थान योग्य नहीं है, वह शुभभाव तो हुआ लेकिन उसको व्यवहार प्रतिमा भी नहीं कहेंगे वह तो व्यवहाराभास है। ख्याल में आया ?

बात यह है कि प्रतिमा लेना बहुत अच्छी बात है। इतना पुरुषार्थ है कि यह जीव अनेक चीजों का त्याग तो कर रहा है यानी उसमें उसके अरुचि परिणाम हैं। परंतु अगर वह यह मान रहा है अरे मुझे तो इतनी प्रतिमा हैं, मैं तो इतना प्रतिमाधारी हूं, वह मान रहा है कि मैं ऊपर के गुणस्थान तक पहुंच गया हूं तो उसकी वह मान्यता यथार्थ नहीं है। इसलिये यहां पर समझा रहे हैं कि अंतरंग में वीतरागता का होना बिलकुल आवश्यक है और साथ में यह परिणाम होंगे ही होंगे, दोनों एक साथ होंगे। इसके लिये क्या बताते हैं ? जैनधर्म भावप्रधान है। और क्या बताते हैं ? भावप्रधान का अर्थ जीवों के जो चारित्र गुण की जो परिणति हो रही है उसको यहां भाव कहा। तो कह रहे हैं आत्मा मात्र भाव ही करता है। मैं तो ऐसा भाव करता हूं कि यह मुम्बई का मैं राजा बन जाऊं। भाव करने से कुछ होना है ? मैं ऐसा भाव करता हूं कि शेअर मार्केट पच्चीस हजार के ऊपर जाये। तो मेरे भाव से कुछ होनेवाला है ? यहां तो जो हमें फल मिल रहा है, जो कर्मबन्धन हो रहा है या कर्मों का छूट जाना हो रहा है, निर्जरा होने जा रही है वह तो हमारे भाव के अनुसार होगी। इसलिये क्या कहा ? आत्मा मात्र भाव ही करता है। अतः भाव के अनुसार क्रिया में भी परिवर्तन हुये बिना नहीं रहता।

देखो यहां पर अलग बात बता रहे हैं। यहां तो यह बता रहे हैं कि जैसे-जैसे अंतरंग में वीतरागता बढ़ेगी और उच्च प्रकार के शुभभाव सहज ही आयेंगे, लाने नहीं पड़ते हैं। ख्याल में आया ? जो भाव आते हैं उसके अनुसार बाह्य क्रिया सहज होती है क्योंकि बाह्य क्रिया का तो यह जीव कर्ता है ही नहीं। लेकिन सहज ऐसे होता है कि हम भाव करते हैं और अंतरंग में स्थिरता हुयी है तो उच्च प्रकार के शुभभाव होते हैं तो बाह्य में ऐसी क्रियायें सहज होती हैं। कह रहे हैं लेकिन उसके आगे क्या बता रहे हैं ? फिर से मैं पढ़ता हूं, अतः भाव के अनुसार क्रिया में भी परिवर्तन हुये बिना रहता नहीं। यानी वह परिवर्तन करता है ऐसी बात नहीं, वह परिवर्तन हो जाता है। आगे क्या बताते

हैं ? बहुत अच्छी बात है- तथापि बाह्य क्रिया के अनुसार भाव में परिवर्तन होने का नियम नहीं है। ख्याल में आया ? यानी कॉन्ह्र्स इज नॉट टू। क्या कहा ? बाह्य क्रिया चल रही है लेकिन उसके अनुसार यहां भाव होंगे इसकी गॅरंटी नहीं। लेकिन भाव सही हो रहे हैं तो क्रिया भी सही होगी यह बात बता रहे हैं। देखो **दोहे में व्यक्त तीन विशेषताओं में प्रथम दो अर्थात् संयम और भोगों से अरुचिरूप विरक्तता का भाव तो वीतरागतारूप अर्थात् निश्चयधर्मरूप है और प्रतिज्ञा ग्रहण करने का** जो **परिणाम शुभभावरूप** क्या है ? **औदयिकभाव है।** यह कर्मों के उदय से होनेवाले जो परिणाम हैं उसको औदयिकभाव कहते हैं।

अभी ऐसा पूछना तो अच्छा नहीं लगता है; यह औदयिकभाव कितने प्रकार के होते हैं ? हां बोलो बहन ? *श्रोता: इक्कीस प्रकार के।* इक्कीस प्रकार के। बहुत अच्छा। होशंगाबादवाले ने आज झंडा फहराया। और क्षायोपशमिक भाव ? *श्रोता: अठारह।* अठारह। और क्षायिकभाव ? *श्रोता: नौ।* बहुत अच्छा। और पारिणामिकभाव ? एक या तीन ? कोई एक ऊंगली बताता है, कोई ऐसा हाथ ऊपर उठाता है, मुझे पता नहीं लग रहा है क्या बताना चाहते हैं। अभी कौनसा रह गया ? औपशमिक कितने प्रकार के हैं ? हां सुरेशभाई आप तो जानते हैं ? नहीं, आपने कभी औपशमिक भाव नहीं किये ? कोई बात नहीं, कौन बताना चाहेगा ? हां बोलो साहब, आपने उपशमभाव किया है कि नहीं कभी ? उपशमभाव किसके होते हैं ? उसको हम देखेंगे। औपशमिक भाव, भाईसाहब आप ? *श्रोता: दो भाव होते हैं।* दो भाव होते हैं। कौनसे-कौनसे ? औपशमिक सम्यक्त्व और औपशमिक चारित्र। उसमें से कौनसा किया आपने ? *श्रोता: दोनों साथ में।* दोनों एक साथ कब होंगे ? मैंने आपसे पूछा दोनों में से आपने कौनसे किये ? अरे भाई औपशमिक सम्यक्त्व हो जाये तो सम्यग्दृष्टि हो जाये। वह हुआ है कि नहीं मैं तो नहीं जानूंगा, आप ही स्वयं जानेंगे। ख्याल में आया ?

अब यहां क्या बताते हैं ? यह जो औदयिकभाव है वह स्वभावभाव है क्या ? अभी हमने एकदम स्थूलरूप से उसका थोड़ासा स्वरूप देखा। यह औदयिक भाव है वह स्वभावभाव नहीं है। क्या कहा ? यह थर्ड लाइन पढ़ रहा हूं, १३१ पेज पर। यहां कह रहे हैं कि प्रतिज्ञा ग्रहण करने का परिणाम शुभभावरूप औदयिकभाव है। यानी वह धर्मरूपभाव नहीं है यह बात हम कन्फर्म कर सकते हैं न। अब कह रहे हैं **पहली प्रतिमा का नाम दर्शनप्रतिमा है और ग्यारहवीं प्रतिमा का नाम उद्दिष्टत्यागप्रतिमा**

है। देखो-देखो अभी दर्शनप्रतिमा का अर्थ क्या है वह भी देखेंगे। अभी यह तो सम्यग्दृष्टि जीव है। हमारे-तुम्हारे जैसा जीव भी रोज भगवान के दर्शन करते हैं। हम रोज भगवान के दर्शन करते हैं न तो हमें दर्शनप्रतिमा है कि नहीं ? क्या कह रहे हैं ? देखो, चौथे गुणस्थानवर्ती जीव है - जो सम्यग्दृष्टि है वह तो दर्शन करेगा कि नहीं ?

हम तो समझो यहां से और कहीं गांव गये तो शायद हम भूल भी जाते हैं, ट्रेन में रहते हैं, यहां से कोई अमेरिका जाता है तो उसको तो २४ घंटे वह प्लेन में ही, एअरोड्रम में ही बैठना पड़ता है। तो उसके दर्शन नहीं होते होंगे। *श्रोता: दर्शनप्रतिमा में नियम लेना पड़ता है।* हां आप क्या कह रहे हैं ? दर्शनप्रतिमा में नियम लेना पड़ता है। क्या नियम लेना पड़ता है ? *श्रोता: मैं रोज दर्शन करूंगा।* हां, मैं रोज दर्शन करूंगा। यह दर्शनप्रतिमा का अर्थ नहीं है। क्या अर्थ है वह हम देखेंगे आगे जाकर, घबराना मत और दूसरी बात कौनसी पूछी ? उद्दिष्टत्यागप्रतिमा। यह उद्दिष्टत्यागप्रतिमा यानी क्या होता है ? यह कौनसे गुणस्थान की बात चल रही है प्रवीणजी ? *श्रोता: पांचवें गुणस्थान की।* पांचवें गुणस्थान की। अभी क्या बता रहे हैं ? पांचवें गुणस्थानवर्ती ग्यारहवां प्रतिमाधारी जीव, उनके प्रतिमा का नाम ही उद्दिष्टत्यागप्रतिमा। यानी सुनना हो, उनके उद्देश्य से अगर कोई भोजन बनावे और उनको पता लगे कि इन्होंने मेरे लिये भोजन बनाया है, मेरे उद्देश्य से भोजन बनाया है तो वह वहां भोजन ग्रहण नहीं करेंगे। उनके लिये वसतिका बनायी है ऐसा पता लगे तो वहां वे रहेंगे नहीं। किसकी बात चल रही है साहब ? ग्यारहवें प्रतिमाधारी पंचम गुणस्थानवर्ती जीव की बात है।

उद्दिष्टत्यागप्रतिमा का अर्थ है; देखो भैया उसके पहले जो अनुमतित्यागप्रतिमा है न दसवें नंबर की, वहां तक तो जीव हो सकता है कि शायद घर में रहे। रहना ही चाहिये ऐसा नहीं। अनुमतित्यागप्रतिमा है तो वह कोई सांसारिक बातें हैं तो उसको अनुमति नहीं देगा। मान लो मेरे जैसा कोई बुजुर्ग व्यक्ति है और उनके अनुमतित्याग प्रतिमा है। अगर उसका पोता या लड़का आकर बोले मैं यह धंधा बंद करके यह धंधा करना चाहता हूं, आपकी क्या राय है ? चुप, बोले नहीं। ख्याल में आया ? अरे साहब अपने पोते को फलां फलां घर से यह क्या बोलते हैं ? शादी के लिये प्रस्ताव आया है। लड़की बहुत अच्छी है। यह है, वह है, तो हम रिश्ता नक्की करें क्या नहीं करें ? क्योंकि अपने पिताजी अभी ज़िंदा हैं, तो पूछना तो पड़े न उनको ? तो भी नहीं बोलेंगे कुछ, अनुमति नहीं है। कोई भी सांसारिक प्रयोजन के लिये अनुमति नहीं है तो वह

अनुमतित्यागप्रतिमा है। वहां तो अनुमति नहीं है और भोजन मेरे लिये बनाया है और मैं ग्यारहवें प्रतिमाधारी हूं और मैं वहां जाकर भोजन करूं तो वहां अनुमतित्यागप्रतिमा कहां रही ? अनुमति टूट गयी न कि भाई हमने तो कृत-कारित-अनुमोदना से त्याग किया था वह रहा नहीं। ख्याल में आया ? यह प्रश्न क्यों आयेगा अभी आगे बताते हैं, देखो क्या कहा ?

पहली प्रतिमा का नाम दर्शनप्रतिमा है और ग्यारहवीं प्रतिमा का नाम उद्दिष्टत्यागप्रतिमा है। **इन दोनों प्रतिमाओं के बाह्य त्याग में अंतर तो बहुत है; तथापि दोनों का गुणस्थान पांचवां ही है; क्योंकि दोनों में दो कषाय चौकड़ी का ही अनुदय है।** यह क्या बताना चाहते हैं ? जो पहली प्रतिमाधारी जीव है उनके भी कितने कषायों का अनुदय है वहां पर ? कहते हैं दो चौकड़ी और पांचवें प्रतिमाधारी के ? उसके भी दो, दसवें प्रतिमाधारी के ? उसके भी दो, ग्यारहवें प्रतिमाधारी के ? उसके तीन ? दो। तो कहते हैं दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक जो वीतरागता है इसमें कोई अंतर नहीं है। लेकिन उसमें भी सूक्ष्मता से देखा जाये तो डिफरन्स है। परंतु यहां क्या कहते हैं ? दोनों ही कषाय चौकड़ी का अनुदय है। अभी बता रहे हैं प्रमोदजी सुनना। **दर्शनप्रतिमाधारी आत्मानुभवी सम्यग्दृष्टि श्रावक मूलगुणों में तथा सप्त व्यसन के त्याग में अतिचार नहीं लगाता।** और हमारे-तुम्हारे में तो यह सारा चलता है, अतिचार लगता है और उनके कैसा है ? बिलकुल अतिचार नहीं है, कहां ? अष्ट मूलगुण जो हैं न। श्रावक के मूलगुण कौनसे है ? उनमें भी अतिचार नहीं लगता है। केवल प्रतिज्ञापूर्वक यानी मैं आज से प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं रोज़ाना दर्शन करूंगा, वह बात यहां नहीं है। कह रहे हैं कि आत्मानुभवी सम्यग्दृष्टि श्रावक मूलगुणों में तथा सप्त व्यसन के त्याग में अतिचार नहीं लगता, निरतिचार पालन होता है उनका।

अभी **देवपूजा आदि षट्कर्मों का पालन करता है।** यह षट् कर्म कौनसे होते हैं अंजू आप जानती है ? *श्रोता: देवपूजा, स्तवन...* देवपूजा, स्तवन और किसकी बात बता रहे हैं आप ? यहां हम श्रावक की बात देखना चाहते हैं। आप जानती है बहन ? नहीं। उन्होंने तो कबसे हाथ उठाये रखा है। वह बोली कि हमको पूछते ही नहीं हैं। बोलो बहन। *श्रोता: देव पूजा, गुरुपास्ति स्वाध्यायः संयमस्तपः। दानं चेति गृहस्थानां, षट्कर्माणि दिने दिने॥* **देवपूजा, गुरुपास्ति स्वाध्यायः संयमस्तपः। दानं चेति गृहस्थानां, षट्कर्माणि दिने दिने॥** यह तो हमने बिलकुल याद करके रखा है। परंतु

किसके लिये बोल रहे हैं ? मालूम नहीं वह शास्त्र में लिखा है न। अपने को क्या लेना देना ? रहने दो न शास्त्र में से हमने उठाकर तो नहीं लिया। अरे नहीं भैया वह किनके लिये बता रहे हैं ? कह रहे हैं यह देवपूजा आदि षट्कर्मों का पालन करता है। देखो यह पंचम गुणस्थानवर्ती जीवों की प्रवृत्तियां कैसी होती है ? इसका इन शॉर्ट वर्णन किया है। **वह माता-पिता, भाई-बहन, पत्नी तथा बाल बच्चों के साथ घर में रहता है; नीति-न्यायपूर्वक व्यापारादि आरंभ कार्य करके धन कमाता है; हेय बुद्धिपूर्वक अरुचि से** कितनी बार ? हां आगे पढ़ो भैया **अनेक बार भोजन करता है।** हां, हां, हां घबराना मत।

हेय बुद्धिपूर्वक और अरुचि से अनेक बार भोजन करता है। यह क्या है ? आज भोजन में चटनी नहीं बनी है, आज भोजन में यह फलां शाक क्यों बना है ? क्या हमारे पास पैसे नहीं थे ? जाओ वह शाक बनाकर ले आओ। तो वह कैसे रुचिपूर्वक भोजन कर रहा है और जरा खाने में रोटी ऐसी ख़राब आयी तो फेंक दिया। ऐसा नहीं करेगा वह। वह तो तीव्र कषायी - अनंतानुबंधी का जिसके तीव्र उदय है ऐसा ही जीव ऐसा करेगा। ख्याल में आया ? तो उनके क्या है ? जो आया बस। तो हेय बुद्धिपूर्वक अरुचि से अनेक बार भोजन करता है। **परिणामों में उत्साह नहीं होने पर भी भूमिका के अनुसार लौकिक व्यवहार में अनेक प्रकार के सुंदर कपड़े पहनता है।** किसकी बात चल रही है ? अनेक प्रकार के सुंदर कपड़े ? ऐसा बिलकुल हमारे जैसा सफ़ेद कपड़ा पहनकर ऐसा मुंह नीचे लटकाकर पंचम गुणस्थानवर्ती बैठता होगा कि नहीं ? देखो-देखो, यह शास्त्र के आधार से बात है। अभी मैं उसके आगे दूसरी बात बताना चाहता हूं, वह भी बताऊंगा, यह पूरा तो करें। कह रहे हैं परिणामों में उत्साह नहीं होने पर भी भूमिका के अनुसार; भूमिका यानी वह कौनसी प्रतिज्ञा लिये हुये है उसके अनुसार यानी कौनसी प्रतिमाधारी है उसके अनुसार; क्या कह रहे हैं ? लौकिक व्यवहार में अनेक प्रकार से सुंदर कपड़े पहनता है। **अपनी परिणामों की कमजोरी तथा पुण्योदयानुसार अल्प या अधिक परिग्रह भी रखता है।**

भाईसाहब देखो-देखो, यह जो सर्वार्थसिद्धि के देव हैं; परसों मैंने सर्वार्थसिद्धि के देव ऐसा बोलने के बदले सर्वार्थसिद्धि स्वर्गों के देव बोला था वह गलत है, स्वर्ग तो सोलह ही हैं। कहां गये मनोहरजी ? अच्छा है उन्होंने यह मेरी भूल निकाली। सोलह स्वर्ग होते हैं। वहां के देवों को स्वर्ग के देव कहेंगे। ऊपर तो अनुत्तरवासी या ग्रैवेयक

रहनेवाले ऐसे कहेंगे। अब यहां क्या बात कह रहे हैं ? सर्वार्थसिद्धि के देव जो हैं उनका क्या है मालूम है ? उनकी आयु तो ३३ सागर की है। उन्हें ३३ हजार वर्ष के बाद खाने का विकल्प आयेगा और वे सिर्फ ऐसा घूंट पिये जैसा करेंगे तो उनके कंठ से अमृत झरता है और उनका पेट भरता है। कितने साल के बाद ? ३३ हजार वर्ष के बाद और यह पंचम गुणस्थानवर्ती दिन में अनेक बार भोजन करता है लेकिन अरुचि से करता है। वे भी कुछ रुचिपूर्वक करते हैं ऐसी बात नहीं है। मैं यह डिफरन्स क्यों बता रहा हूं ? अब वे तो नियम से ब्रह्मचारी होते हैं। एक बात नक्की करना वहां देवांगनायें होती ही नहीं। ख्याल में आया ?

अब आगे क्या कह रहे हैं ? ऐसा होते हुये वे दिन-रात तत्त्वों की ही चर्चा करते हैं और यह पंचम गुणस्थानवर्ती जीव क्या करेगा ? व्यापार करेगा। अरे आगे जाकर तो ऐसा भी आपको कथन मिलेगा कि वह लड़ाई भी करेगा, बोलो। कोई राजा का सेनापति हो या कोई अन्य सिपाही हो, जो भी हो, उसको राजा ने आर्डर दी कि जा तू लड़ाई कर तो हेय बुद्धि से करेगा वह। और भी अनेक बातें हैं, फिर भी यह सर्वार्थसिद्धि के देवों से भी पंचम गुणस्थानवर्ती जीव अधिक सुखी है। ख्याल में आया ? वहां तो उन देवों को कुछ काम करना ही नहीं पड़ता है। सारी व्यवस्था फोकट है। जैसे अपने यहां देवलाली में खाना फोकट, रहना फोकट। हम तो अभी सर्वार्थसिद्धि के देव हो गये कुछ दिन के लिये। क्या ? ख्याल में आया ? कोई व्यापार आदि करना नहीं पड़ता है। यहां तो यह सारे लौकिक कार्यों में कहीं न कहीं अटका हुआ है। फिर भी उसके दो कषाय चौकड़ी का अभाव है, इसलिये उसके जो अतीन्द्रिय आनंद का वेदन है, अनुभवन है वह अधिक है। किनसे ? चौथे गुणस्थानवर्ती जो सर्वार्थसिद्धि के देव हैं उनसे। देखो यह विचित्रता कैसी है ?

हमें इस पर भरोसा ही नहीं लगता है और हम तो चाहते हैं स्वर्ग में जायें, स्वर्ग में जायें। अरे वहां बहुत अच्छा है, यह है, वह है। अरे प्रभु ! बात तो कह रहे हैं, आपने पंचकल्याणक तो अटेंड किया ही होगा असली ? नहीं ? अच्छा जाने दो। अब तो हम कहते हैं यहां पर अपने हिंदुस्तान में कितनी ही बार पंचकल्याणक होते हैं; वह भी तो आपने देखा है। जो आगे तीर्थंकर बननेवाले हैं, वे जब मुनि अवस्था धारण करने के लिये निकलते हैं तो उनकी पालकी उठाने का प्रसंग आता है तो वहां फर्स्ट प्रेफरन्स मनुष्यों को दिया जाता है। स्वर्ग के देव तो बहुत बोलते हैं कि हमने उनका

जन्माभिषेक किया है; स्वर्ग से वस्त्रालंकार लाये हैं, रत्नों की वर्षा की है, उनका यह किया है, वह किया है। आपने क्या किया है ? मनुष्य कहते हैं लेकिन कुछ भी हो हम तुम्हारे से उच्च दर्जे के हैं। क्यों साहब ? क्योंकि हमारे में दो कषाय चौकड़ी का अभाव है और आप तो एक कषाय चौकड़ी के अभाववाले हो। तो देवों को भी मानना पड़ता है। यह आपने देखा ही होगा, अभी हम क्या बतायें। देखी हुयी बातों को क्या बतायें ? यहां कह रहे हैं कि पंचम गुणस्थानवर्ती जीव कहने से लोगों को कुछ अलग सा महसूस होता है। इसलिये यह पॅरेग्राफ मैंने पढ़ा। ख्याल में आया ?

अब कहते हैं देखो, **ग्यारहवीं प्रतिमाधारी उत्कृष्ट श्रावक, क्षुल्लक और ऐलक तो नियम से घर छोड़कर**। किसकी बात कह रहे हैं ? ग्यारहवीं प्रतिमाधारी की। दसवीं प्रतिमाधारी को हमने देखा था, घर में भी रह सकता है, मठ में भी रह सकता है, धर्मशाला में भी रह सकता है। यह मुनियों के साथ कभी जावे तो जावे। यहां कह रहे हैं कि ग्यारहवीं प्रतिमाधारी उत्कृष्ट श्रावक वे दो प्रकार के हैं- एक क्षुल्लक और ऐलक। क्षुल्लक यानी क्या ? जो दो वस्त्रधारी हैं लेकिन वह भी खंड वस्त्रधारी। यानी खंड का अर्थ क्या होता है ? मान लो किसी श्रावक की हाइट पांच फीट की है, मानने के लिये है, कोई छह फीटवाला भी होगा। तो उनके पैर ढके उस कपड़े से उनका मुंह नहीं ढकना चाहिये और मुंह ढके तो पैर खुला रहना चाहिये - इसको खंड वस्त्र कहते हैं और एक कौपीन; कौपीन यानी लंगोट जिसको बोलते हैं लंगोटी, ऐसे दो वस्त्रधारी जो होते हैं वे हैं क्षुल्लक। ऐलक सिर्फ लंगोटी रखते हैं।

यहां क्या कह रहे हैं ? ग्यारहवीं प्रतिमाधारी उत्कृष्ट श्रावक, क्षुल्लक और ऐलक नियम से घर छोड़कर **दिगम्बर मुनिराज के संघ के साथ वन-वसतिका आदि में निवास करते हैं। व्यापारादि अशुभोपयोगरूप आरंभ**, मिसेस मेहता, यहां आरंभ की बात कर रहे हैं। देखो क्या कह रहे हैं ? मुनिराज के संघ के साथ वन-वसतिका आदि में रहते हैं। व्यापारादि अशुभोपयोगरूप; यह आरंभ कैसा है ? अशुभोपयोगरूप और कैसा है ? परिग्रह। इनके क्या है ? व्यापारादि अशुभोपयोगरूप आरंभ **परिग्रह के सर्वथा त्यागी हैं; धन रखने का भाव भी उनके मन में नहीं आता हैं।** प्रमोदजी किसकी बात चल रही है ? ग्यारहवीं प्रतिमाधारी पंचम गुणस्थानवर्ती जीव है, उनके क्या कह रहे हैं ? धन रखने का भाव भी नहीं आता है। क्या बात बता रहे हैं ?

उद्दिष्ट रहित दिन में एक बार ही भिक्षावृत्ति से प्रासुक भोजन करते हैं। भिक्षावृत्ति यानी भीख मांगते फिरते नहीं हैं। कहीं भी घर में अंदर जाकर लाओ खाना दो ऐसा भी नहीं करते। वे आहार के लिये निकलते हैं और श्रावक उनको बाइज्जत बुलायें तो फिर अंदर जायें। यानी खुद खाना नहीं बनाते इसके लिये भिक्षावृत्ति कही। दिन में एक बार ही भिक्षावृत्ति से प्रासुक; प्रासुक यानी शुद्ध भोजन करते हैं। **दूध, पानी आदि पेय भोजन के समय ही लेते हैं; अन्य समय में नहीं।** वैसे देखा जाये तो ये मिनी मुनि हैं। मेरी ज़रा लँग्वेज थोड़ीसी गलत है मैं समझता हूं यानी मुनियों का ही छोटारूप है। जो भी हैं आप समझदार हो, हमारे जैसे थोड़े हैं भैया। हम तो सिर्फ आपको टच करेंगे आप बाकी समझ लेना। तो कह रहे हैं दूध, पानी आदि पेय भोजन के साथ ही लेते हैं; अन्य समय में नहीं।

क्षुल्लक दो- खंड वस्त्र तथा कौपीन और ऐलक मात्र एक कौपीन का ही उपयोग करते हैं। दो यानी क्या-क्या है ? खंड वस्त्र और लंगोटी और ऐलक मात्र सिर्फ कौपीन का ही यानी लंगोटी का ही उपयोग करते हैं। **पूर्वोक्त प्रकार पहली और ग्यारहवीं प्रतिमाधारी श्रावक के बाह्य जीवन में बहुत बड़ा अंतर होने पर भी दोनों के मात्र दो ही कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक वीतरागता है; अतः दोनों पंचम गुणस्थानवर्ती ही हैं।** यह जो अपनी बात चल रही थी वह हमने देख ली। यह प्रश्न भी देख लेते हैं। **पहली प्रतिमाधारी और क्षुल्लक-ऐलक ग्यारहवीं प्रतिमाधारी- इन दोनों की व्यक्त वीतरागता** यानी व्यक्त **शुद्धि** व्यक्त **धर्म एक समान ही है या कुछ भेद भी है ? दो कषाय चौकड़ी के अनुदयरूप निमित्त से इनका गुणस्थान पांचवां ही है; क्योंकि दो कषाय चौकड़ी के अभाव में होनेवाली व्यक्त वीतरागतारूप परिणति** यानी **शुद्धता में कुछ अंतर नहीं है। तथापि दोनों की व्यक्त वीतरागता में बहुत बड़ा अंतर है।** ख्याल में आया ?

पहलेवाले की वीतरागता कम रहेगी क्योंकि हमने देखा था कि जैसी-जैसी इन पंचम गुणस्थानवर्ती जीवों की आत्मा में रमणता अधिक-अधिक हो रही है, वीतरागता अधिक-अधिक बढ़ रही है, वैसे-वैसे उनके ऊपर-ऊपर की प्रतिमायें धारण करने के भाव होंगे। इसलिये उनकी वीतरागता में अंतर है। **क्योंकि पंचम गुणस्थानवर्ती साधकों के सूक्ष्म परिणामों की दृष्टि से असंख्यात भेद हैं; उन असंख्यात भेदों को ग्यारह प्रतिमाओं में विभक्त किया है। इन भेदों का मूल कारण त्रिकाली, सहज,**

निजशुद्धात्मा की साधनारूप पुरुषार्थ की हीनाधिकता है।

अब थोड़ासा आगे बढ़ेंगे। **काल की अपेक्षा विचार** करते हैं १३४ नंबर के पृष्ठ पर। देखो यहां क्या लिखते हैं ? **जघन्य काल अंतर्मुहूर्त** है। पंचम गुणस्थान का जघन्य काल अंतर्मुहूर्त है। यानी कोई जीव पांचवें गुणस्थान में जायेगा तो एक अंतर्मुहूर्त तक तो पांचवें गुणस्थान में ठहरेगा ही ठहरेगा। यानी अभी-अभी एंटर हो गया; एक समय बीत गया और उसका मरण हो जाये ऐसा नहीं होगा, दो समय के बाद मरण- नहीं; दस समय- नहीं; हजार समय- अरे नहीं कह रहे हैं न। तो कितना ? अंतर्मुहूर्त यानी असंख्यात समयों के बाद। तो कह रहे हैं मनुष्य या तिर्यंच जीव; अभी पहले तो हमें यह नक्की करना है न, यह पंचम गुणस्थान जो है वह कौनसी-कौनसी गति में होता है ? आप जानती हैं बहन ? पंचम गुणस्थानवर्ती, शांति, मैंने बहन को पूछा आप ? हां पंचम गुणस्थानवर्ती जीव कौनसी-कौनसी गति के जीव हो सकते हैं ? चार गतियां हैं न तो उनमें से कौनसी-कौनसी ? *श्रोता: मनुष्य और तिर्यंच।* मनुष्य और तिर्यंच।

आप लोग सुबह नाश्ता करके आना। इतना टाइम वेस्ट होता है अपना। हमारी बहन कहती है कि तुम बहुत स्लो जा रहे हो। अभी तो पांचवें गुणस्थान में ही लटक रहे हैं। अभी और नौ गुणस्थान कब तक आयेंगे। अब क्या करें ? अब सामनेवाले को जो बात बतायी जा रही है वह उन्हें मालूम है कि नहीं वह तो हमें समझना चाहिये। हम सिर्फ पढ़ते-पढ़ते जायेंगे, हमें तो सबको साथ में ले जाना है भाई। तो क्या कह रहे हैं ? दो ही गति के जीव हैं जो पंचम गुणस्थानवर्ती हो सकते हैं - वे हैं तिर्यंच और मनुष्य। तो यहां क्या कह रहे हैं ? देखो, **मनुष्य या तिर्यंच जीव विरताविरत नामक गुणस्थानवर्ती हो जाता है और वह इस पंचम गुणस्थान में रहता है तो कम से कम अंतर्मुहूर्त काल ही रहता है।** यह क्यों ऐसा बता रहे हैं ? देखो, जो ऊपर के गुणस्थान हैं छठा गुणस्थान है, सातवां गुणस्थान है, आठवां अभी जो उपशमश्रेणीवाला है तो वहां जीव उस गुणस्थान में जाये, एक समय में उसका मरण हो सकता है। उस अपेक्षा से उन गुणस्थानों का जघन्य काल एक समय रहेगा और पंचम गुणस्थान में एक अंतर्मुहूर्त रहेगा ही रहेगा कायदे से, फिर भले बाद में जो कुछ होना है सो होगा।

इसलिये क्या कहते हैं ? **इससे कम काल में साधक इस गुणस्थान से अन्य गुणस्थानों में गमन नहीं करता है।** आगे वह लिखा ही है- **छठवें-सातवें गुणस्थान**

से लेकर उपशमश्रेणी के चारों गुणस्थानों का काल मरण की अपेक्षा एक, दो समयादि हो सकता है। सासादन का काल एक-दो समयादि हो सकता है; पहले, तीसरे, चौथे, पांचवें इन गुणस्थानों का जघन्य कल एक-दो आदि संख्यात समय कभी नहीं हो सकता, वह अंतर्मुहूर्त ही होगा। **किन्तु पंचम गुणस्थान का काल अंतर्मुहूर्त से कम हो ही नहीं सकता। उत्कृष्ट काल** की बात पूछतें हैं तो, **मनुष्य की अपेक्षा गर्भकाल सहित आठ वर्ष व एक अंतर्मुहूर्त कम एक कोटिपूर्व वर्ष है।** यह क्या कहना चाहते हैं ? देखो-देखो, अभी हम क्या करते हैं कि तुम्हारी उम्र क्या है ऐसा किसीसे पूछा जाये तो जो हॉस्पिटल में जन्म होता है उसके टाइम से हम गिनते हैं कि भाई फलां दिन से, इतने बजे, इतने मिनट पर, इतने सेकंड पर। अरे भला मानस उस डॉक्टर की घड़ी भी तो सही होनी चाहिये कि नहीं। ख्याल में आया ? यहां तो क्या कहते हैं ? जब वह जीव माता के गर्भ में आता है उस समय से कहां तक ? आठ वर्ष। देखो-देखो, मनुष्य की अपेक्षा; यहां तिर्यंच की बात क्यों नहीं की ? वह भी हम देखेंगे।

मनुष्य की अपेक्षा गर्भकाल सहित आठ वर्ष व एक अंतर्मुहूर्त कम। अभी हम स्थूल बात करते हैं। जन्मा और आठ वर्ष हो गये और एक अंतर्मुहूर्त कम हुआ। किसमें से कम ? आठ वर्ष और एक अंतर्मुहूर्त कम किससे ? तो एक कोटिपूर्व वर्ष। यानी कोई जीव अगर पंचम गुणस्थान में आठवें वर्ष के करीबन पंचम गुणस्थान की प्राप्ति करता है और उसकी आयु है एक करोड़ वर्ष पूर्व तक की, तो वहां मरण तक पंचम गुणस्थान में रह सकता है। क्या कह रहे हैं ? मनुष्य की अपेक्षा गर्भकाल सहित आठ वर्ष व एक अंतर्मुहूर्त कम एक कोटिपूर्व वर्ष है।

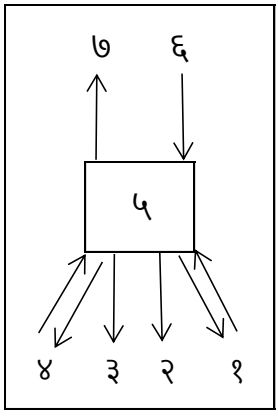
अब तिर्यंच के बारे में क्या कह सकते हैं **तथा सम्मूर्च्छन तिर्यंच**, यह सम्मूर्च्छन क्यों लिया ? सम्मूर्च्छन का अर्थ ऐसा होता है जो वातावरण में पैदा हो जाते हैं, इनके पैदा होने में माता-पिता के निमित्त की कोई अपेक्षा नहीं है। आप बोलेंगे ऐसा कैसा होता है ? बहनों को जल्दी समझ में आवे। अपने-अपने घर में हम क्या करते हैं मालूम है ? एक-एक साल की दाल, चावल और क्या-क्या गेहूं ऐसा लाकर रखते हैं। जमा कर रखते हैं। क्यों साहब ऐसा क्यों करते हैं ? अरे समझते नहीं हर साल महंगाई बढ़ती है तो पैसा खर्चा होता है न। अरे परंतु उसमें छोटे-छोटे कीड़े, काले कीड़े क्या बोलते हैं आप लोग ? हां, वह तैयार होते हैं न। कहां से तैयार होते हैं ? अरे साहब हमारी तो ऐसी बात है कि हमने कभी आज तक पाव किलो से अधिक दाल मंगायी नहीं हैं।

मसूर की दाल, इसकी दाल, उसकी दाल क्योंकि हम यहां आये ८ - १० दिन तो हमारे घर में उसमें फंगस तैयार होता है, अंदर कीड़े तैयार होते हैं। घर बंद रहता है न, कोई नहीं घर में। ख्याल में आया ?

यहां कह रहे हैं कि ये जो सम्मूर्च्छन, अभी सम्मूर्च्छन की बात आपको देखना; यह जो हमारी दीवारे हैं लकड़ी की, जो फर्नीचर है, उसके अंदर व्हाइट वह अँट्स तैयार होती हैं, दीमक जिसको बोलते हैं। गुजराती में उधई कहवाय ने ? वह कौन तैयार करता है ? वातावरण में अपने आप तैयार होती हैं। ख्याल में आया ? तो वह सम्मूर्च्छन जीव। अभी सम्मूर्च्छन जीव पंचेन्द्रिय भी हो सकते हैं, संज्ञी पंचेन्द्रिय, वह भी पर्याप्त। हां देखो-देखो, अभी क्या कह रहे हैं ? यहां देखो, **सम्मूर्च्छन तिर्यंच की अपेक्षा तीन अंतर्मुहूर्त कम** एक करोड़ पूर्व **एक पूर्वकोटि वर्ष है** और वहां मनुष्य की अपेक्षा आठ वर्ष और एक अंतर्मुहूर्त कम एक करोड़ पूर्व। सम्मूर्च्छन तिर्यंच में कहते हैं तीन अंतर्मुहूर्त कम एक करोड़ पूर्व। यानी सम्मूर्च्छन जीव पैदा हुआ, केवल तीन अंतर्मुहूर्त गये तो पांचवां गुणस्थान प्राप्त कर सकता है और ऐसे पंचम गुणस्थानवर्ती तिर्यंच जीव असंख्यात हैं। ख्याल में आया ? यहां पर यह बता रहे हैं कि यह उत्कृष्ट काल की बात चल रही है न, तो पंचम गुणस्थान का उत्कृष्ट में उत्कृष्ट काल कितना होगा ? तो एक करोड़ पूर्व या एक कोटिपूर्व मायनस तीन अंतर्मुहूर्त। बीच में जो मध्यम काल है वह तो आप समझ सकते हैं। ख्याल में आया ?

देखो, संज्ञी पंचेन्द्रिय गर्भज तिर्यंचों में गर्भ का काल और जन्म के बाद कुछ महीनों के बाद ही सम्यक्त्व हो सकता है, परंतु सम्मूर्च्छन तिर्यंच जो संज्ञी पंचेन्द्रिय हैं और जो सादि मिथ्यादृष्टि हैं वे जन्म के अंतर्मुहूर्त बाद वेदक सम्यक्त्व के साथ पंचम गुणस्थान प्राप्त कर सकते हैं। ये सम्मूर्च्छन जीव कहां हैं ? हमें तो मालूम है कि स्वयंभूरमण समुद्र जो है वहां जो मत्स्य हैं, कछुअे हैं और अन्य भी कोई जीव हैं जैसे फ्रॉग, क्या बोलते हैं ? आप लोग गुजराती में देडका, मेंढक, वे भी पंचम गुणस्थानवर्ती होंगे। उन बिचारों को कौन गुरु मिले होंगे यह मेरा प्रश्न है। अरे हम तो क्या हो गया मालूम है ? इतने-इतने कुए में रहकर, ओहो इतना पानी, इतना पानी। अरे तू समुद्र में जाकर तो देख ! तू आगम समुद्र में उतर तो सही तो तुझे पता लगे असल क्या है, नक़ल क्या है। ख्याल में आया ? यहां क्या बता रहे हैं देखो कि सम्मूर्च्छन तिर्यंच की अपेक्षा पंचम गुणस्थान का उत्कृष्ट काल तीन अंतर्मुहूर्त कम एक करोड़ पूर्व है। अभी

हम पुस्तकें बंद करते हैं क्योंकि हमें गमन भी करना है, आगमन भी करना है।



हां देखो, अभी पंचम गुणस्थानवर्ती यानी पंचम गुणस्थान में जो जीव है वह कहां-कहां गमन करेगा ? अभी ऐसा है वह ऊपर भी जा सकता है और नीचे भी आ सकता है। पहले हम ऊपर की बात देखेंगे। कौन बताना चाहेगा ? क्योंकि सबने अभी बोर्ड तो देख ही लिया है क्योंकि आपकी नजर उधर और मेरी नजर आपकी तरफ। प्रमोदभाई कुछ गलत है ? बिलकुल गलत है न, नहीं ? नहीं मैं जो बोलता हूं कि बोर्ड देख लिया न, वह गलत है या सही है ? सही है। अच्छा-अच्छा, हां कौन बतायेगा कि गमन ऊपर सबसे ऊपर के गुणस्थान में यानी चौदहवें गुणस्थान में पांचवां गुणस्थानवर्ती जीव जायेगा कि नहीं जायेगा ? साहब आप बोलना ? अरे मैं क्या पूछता हूं उधर ध्यान रखो भाई। आपका दिमाग थोड़ा ठंडा रखो।

मैंने यह पूछा पांचवां गुणस्थानवर्ती जीव चौदहवें गुणस्थान में डायरेक्ट जायेगा कि नहीं ? हां या ना बोलो न, जायेगा न ? अरे मैं पूछ रहा हूं पांचवें से चौदहवें में जायेगा कि नहीं ? देखो जरा आउट ऑफ़ द ट्रॅक; प्रश्न यहां जो लिखा है वह पूछूंगा तो फटाक, फटाक, झटाक वह देख लिया न अभी। लेकिन वही प्रश्न मैं दूसरी तरफ से पूछता हूं तो एकदम गड़बड़ी हो जाती है। तेरहवें में जाता है कि चौदहवें में ? तो ऊपर के कौनसे गुणस्थान में जायेगा ? *श्रोता: छठे में नहीं जा सकता सातवें में जायेगा।* हां तो कहां जाता है ? इतना बोलने का। आपने खाना खाया क्या ? अरे नहीं भैया सुपारी भी खायी। अरे भैया तूने खाना खाया कि नहीं यह पूछ रहा हूं ख्याल में आया ? तो अभी हमने क्या देखा ? कि ऊपर के गुणस्थान में जायेगा पांचवें से ऊपर तो कौनसे में

जायेगा ? अभी बताया सबने ? *श्रोता: सातवें में।* सातवें में। यह पक्का है ! छठे में क्यों नहीं जायेगा ? अभी आपका उत्तर है - छठा गुणस्थान गिरने का गुणस्थान है, चढ़ने का नहीं है। इसलिये कोई भी जीव पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे पांचवें जहां से भी होगा छठे गुणस्थान में जायेगा ही नहीं। पांचवेंवाला भी छठे में नहीं जायेगा, सातवें में जायेगा। आठवें में जायेगा कि नहीं सुरेशभाई ? पंचम गुणस्थानवर्ती जीव आठवें में जायेगा कि नहीं ? वहां कुछ नहीं लिखा है। बोलो शारदाताई ? *श्रोता: आठवें से सातवें में चला जायेगा, सातवें से आठवें में नहीं।* अरे हम वाया मिडिया नहीं चाहते हैं डायरेक्ट की बात होती है। हमारे यहां डायरेक्ट फ्लाइट होती है। आठवें में जायेगा नहीं, अब ऊपर का रास्ता बंद हो गया।

पांचवें से नीचे के कौनसे-कौनसे गुणस्थान में जायेगा ? हां कविताबहन आप बतायेंगी ? *श्रोता: चौथे गुणस्थान में।* चौथे गुणस्थान में। और ? *श्रोता: तीसरे गुणस्थान में।* तीसरे गुणस्थान में। और ? *श्रोता: दूसरे गुणस्थान में।* दूसरे गुणस्थान में जानेवाला जीव कैसा होना चाहिये ? क्योंकि वहां लिखा नहीं है, मुझे पक्का मालूम है। आप कहो बहन ? *श्रोता: औपशमिक सम्यक्त्व सहित होना चाहिये।* औपशमिक सम्यक्त्व सहित होना चाहिये। वहां उसके उपशम सम्यक्त्व के काल में केवल छह आवली से लेकर एक समय तक का काल बाकी रहना चाहिये तब वह जायेगा, अन्यथा नहीं जायेगा। देखो-देखो, यहां पांचवां गुणस्थान है यहां से ऊपर कहां जायेगा ? सातवें में ही जायेगा। अब नीचे जायेगा तो कहां जायेगा ? तो कहते हैं चौथे में जायेगा, तीसरे में जायेगा, दूसरे में जायेगा और पहले में जायेगा। यह तो गमन हुआ।

अभी आगमन यानी पांचवें गुणस्थान में कहां-कहां से आयेगा सुरेशभाई आप बतायेंगे अभी ? बोलो-बोलो, *श्रोता: पहले से जायेगा।* पहले से, पहले से जानेवाले जीव की क्या विशेषता-पात्रता होनी चाहिये ? क्या बोल रहे हैं ? *श्रोता: सादि मिथ्यादृष्टि होना चाहिये।* सादि मिथ्यादृष्टि, जरूरी नहीं, अनादि मिथ्यादृष्टि भी पहले से पांचवें में जायेगा न ? हां, होशंगाबादवाले सुभाषभाई आप बोलो ? हां गांगजीभाई ने हाथ उठाया, बहुत अच्छा। आपका कहना है मैं समझ गया, आप बता नहीं पा रहे हैं कोई बात नहीं लेकिन आपने बिलकुल सही बताने की कोशिश की है। आपका यही कहना है कि वह द्रव्यलिंगी श्रावक होना चाहिये। यानी उन्होंने यह बताया, बाह्य में जो उनके व्रत आदि जो होते हैं, प्रतिमायें जो होती हैं वह उन्होंने अंगीकार की हो और ऐसा उग्र पुरुषार्थ

करे कि डायरेक्ट पहले से पांचवें में चला जाये। देखो, कैसी परिणामों की विशेषता है ! अभी चौथा भी नहीं पकड़ा, डायरेक्ट पांचवां।

यहां कह रहे हैं आगमन कहां-कहां से होगा ? तो कहते है पहले से पांचवें में। और दूसरे से पांचवें में जायेगा कि नहीं ? इधर आरोहण नहीं निकाले तो कैसे हां बोल सकते हैं ? *श्रोता: सासादन गुणस्थान से नीचे आते हैं।* बहुत अच्छा। भाईसाहब फरमा रहे हैं अरे भैया दूसरे गुणस्थान से तो जीव नीचे पहले में गिरता है, ऊपर चढ़ने का नाम मत लेना क्योंकि वह गिरने के लिये गुणस्थान रखा हुआ है। तीसरे में से पांचवें में जायेगा कि नहीं, हां दीपकभाई ? *श्रोता: नहीं जायेगा।* नहीं जायेगा, बहुत अच्छा। क्यों नहीं जायेगा और जायेगा तो कहां तक जायेगा ? हां, हां ? नहीं ? भाईसाहब आप बतायेंगे ? नहीं बतायेंगे ? गणेशजी तीसरे से ऊपर में कौनसे गुणस्थान में जायेगा यह मेरा प्रश्न है ? मधुभाई तीसरे गुणस्थान से ऊपर के कौनसे गुणस्थान में जायेगा ? छठे, सातवें, आठवें, कौनसे ? *श्रोता: चौथे में ही जायेगा।* चौथे में ही जायेगा, ऊपर नहीं जायेगा ? तो घबराते क्यों हो, बोलो न फट से।

तीसरे से चौथे में जायेगा, पांचवें में जा ही नहीं सकता। वह तो हमने तीसरे गुणस्थान की बात देखी थी अभी तो पांचवें में आये हैं हम। तो क्या कहा ? पहले से पांचवें में जायेगा, दूसरे से नहीं जायेगा, तीसरे से नहीं जायेगा। और चौथे से भी ? नहीं जायेगा ? *सभी श्रोता: जायेगा।* जायेगा, जायेगा, जायेगा- बहुत अच्छा। चौथे से जायेगा। अभी हमने गमनागमन को देख लिया। किसीको बात समझ में नहीं आयी हो तो अवश्य पूछना। आपको फुल पर्मिशन है - गमनागमन के बारे में हो !, हां चलो सबको बात समझ में आयी बहुत अच्छी बात है। देखो क्या कहते हैं ? **गमनागमन अपेक्षा विचार** अभी हम पेज नंबर १३५ पर आये हैं। देखो गमन लिखा है न गमनागमन अपेक्षा विचार यह तो हमने देख लिया है फिर भी हम शास्त्र के आधार से समझने की कोशिश करेंगे।

कोई पंचम गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनिराज देखो उन्होंने दो बातें ली, द्रव्यलिंगी मुनि और द्रव्यलिंगी श्रावक। **पहले जितना शुद्धात्मा का आश्रय ले रहे थे, उससे भी विशेष अधिक रीति से निज शुद्धात्मा का आश्रय लेकर, अर्थात् शुद्धोपयोग द्वारा ही अप्रमत्तविरत गुणस्थान में गमन करनेवाले भावलिंगी**

मुनिराज हो जाते हैं। यानी इनका सब कहने का मतलब पांचवें से सातवें में जाते हैं। अब कहते हैं **भावलिंगी पंचम गुणस्थानवर्ती श्रावक हो अथवा पंचम गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनिराज हो, वे पांचवें से चौथे गुणस्थान में** यानी हम बाकी सब छोड़ दो पंचम गुणस्थानवर्ती जीव नीचे कहां आयेगा तो चौथे में आयेगा। **तीसरे गुणस्थान में अथवा औपशमिक सम्यक्त्व के साथ हो तो दूसरे गुणस्थान में,** अथवा **परिणामों में विशेष अधःपतन होने कारण सीधे मिथ्यात्व गुणस्थान में भी गमन कर सकते हैं।** यानी उन्होंने क्या बताया, गमन में कहां बताया ? ऊपर के बाजू सातवें में और पांचवें से गिरे तो चौथे में, तीसरे में, दूसरे में या पहले में आता है।

अब आगे बताते हैं। **आगमन** कहां-कहां से होगा ? सातवें से आगमन होगा कि नहीं दिलीपभाई ? पांचवें में आना है तो सातवें से आयेगा कि नहीं ? *श्रोता: नहीं आयेगा।* नहीं आयेगा, क्यों नहीं आयेगा ? देखो, मेरी आदत यह है कि मैं तोतारटन नहीं कराता हूं। बात हमारी बुद्धि में बैठ गयी तो याद भी नहीं करना पड़ता है। क्या कहा ? सातवें में से अगर कोई जीव गिरता है तो छठे में ही आयेगा। शुद्धोपयोग से च्युत हो जाये तो शुभोपयोग में तो उसके लिये स्पेशल एक व्यवस्था रखी है, वह छठे में आयेगा। सातवें में से कोई पांचवें में नहीं आयेगा, छठे में आयेगा। इसलिये कह रहे हैं छठे गुणस्थान से क्या लिखा ? आगमन **प्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती भावलिंगी मुनिराज सीधे देशविरत में आ सकते हैं।** और क्या कह रहे हैं ? **चौथे गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनिराज अथवा द्रव्यलिंगी श्रावक** गांगजीभाई, लिखा हैं न भैया यहां ? तो द्रव्यलिंगी श्रावक **देशविरत गुणस्थान** यानी पांचवें गुणस्थान **में आ सकते हैं**- यानी चौथे से पांचवें में।

अब आगे **प्रथम गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनिराज अथवा द्रव्यलिंगी श्रावक भी सीधे इस देशविरत गुणस्थान में आ सकते हैं** यानी पहले से पांचवें में आ सकते हैं। देखो, **विशेष अपेक्षा विचार- सर्वार्थसिद्धि आदि एक भवावतारी देवों के** यह एक भवावतारी का अर्थ क्या है ? तो कहते हैं उनका अभी का जो चालू भव है वह छोड़कर जो अगला भव है; वे अगले भव में निश्चितरूप से मोक्ष जानेवाले हैं। उनको कहते हैं एक भवावतारी। क्या कहा ? सर्वार्थसिद्धि आदि एक भवावतारी देवों के **सम्यक्त्व, बाल ब्रह्मचर्यत्व, द्वादशांग ज्ञानत्वादि की उपस्थिति में तथा उनके जनसामान्यवत्** पांच पाप, **पंच पाप, स्थूल विषय-कषाय, असि-मसि आदि**

हिंसाजन्य षट्कर्म दिखायी नहीं देने पर भी। अभी हम इसे जरा थोड़ासा एक्स्प्लेन कर रहे हैं, क्योंकि लंबा वाक्य हो गया न तो सुनते-सुनते थक गये आप। मैं बोलते बोलते नहीं थका हूं। यहां कहना चाहते हैं एक भवावतारी कौन हैं ? सर्वार्थसिद्धि आदि के देव, वे क्या हैं ? कि पहले में पहले सम्यक्त्व के साथ हैं। वे वहां बालब्रह्मचारी ही हैं तो उनके बालब्रह्मचारीपणा है- ब्रह्मचर्यत्व। और क्या है ? द्वादशांग ज्ञान भी उनके है और क्या है ? उनके हम तुम जैसे जनसामान्य हैं यानी लौकिक में जो हम सामान्य लोग हैं वे क्या कर रहे हैं ? पांच पाप कर रहे हैं, वे उनके नहीं होता।

अब क्या कह रहे हैं ? कि जो स्थूल विषय कषाय हैं उनमें वें रत नहीं रहते। असि-मसि आदि हिंसाजन्य जो षट्कर्म हैं - यह जो छह प्रकार के कर्म बताये हैं; वे क्या हैं ? हिंसा को उत्पन्न करनेवाले हैं। ऐसे षट्कर्म करते हुये दिखायी नहीं देने पर भी, **अंतरंग में एक कषाय चौकड़ी के अभाव में उत्पन्न वीतरागता से उन्हें देशसंयम नहीं है।** वे चौथे गुणस्थानवर्ती ही हैं। उनके देशसंयम नहीं हैं, वे पंचम गुणस्थानवर्ती से कम सुखी हैं यह बताना चाहते हैं। **परंतु असंयम ही है** यानी अविरत ही हैं। **और मनुष्य तिर्यंचों के उपर्युक्त बाह्य प्रवृत्ति दिखायी देने पर** उपर्युक्त यानी ऊपर जो बतायी गयी है न अभी हमने जो देखी है; वे बाह्य प्रवृत्ति दिखायी देने पर **भी अंतरंग में सम्यग्दर्शन सहित दो कषाय चौकड़ी के अनुदय में उत्पन्न वीतरागता विद्यमान होने से देशसंयम है।** जितनी कषाय चौकड़ी का अभाव है, उतनी उनमें अनाकुलता है, सुख है, अतीन्द्रिय आनंद का वेदन अधिक प्रमाण में है।

इसका स्पष्ट अर्थ यह हुआ कि बारह अंग के ज्ञाता कौन-कौन हैं ? **सौधर्म इंद्र, लौकान्तिक देव अथवा अहमिंद्र देव जिस आत्मानंद का अनुभव करके सुखी जीवन व्यतीत करते हैं; उनसे भी अति अल्पज्ञान के धारक, भूमिका में योग्य बाह्य हिंसादि पाप से आंशिक विरत रहनेवाले देशव्रती मनुष्य** या **तिर्यंच भी अधिक सुखी जीवन व्यतीत करते हैं।** हमको तो लगता है अरे तिर्यंच ! अरे भैया तिर्यंच नहीं, पंचम गुणस्थानवर्ती की बात कर रहे हैं। और वे कैसे हैं ? अधिक सुखी हैं क्योंकि उनके अतीन्द्रिय आनंद का वेदन अधिक प्रमाण में हो रहा है। वहां हमको बता रहे हैं कि आप दो पुस्तकें देखो मोक्षमार्गप्रकाशक और धर्म के दशलक्षण, उसमें ये सारी बातें अधिक स्पष्टता से बतायी हैं। देखो अभी क्या कह रहे हैं ?

सुख का सीधा संबंध व्यक्त वीतरागता से है। और हम सुख किससे प्राप्त करना चाहते हैं ? संयोगों से। ख्याल में आया ? अरे हमें शेवर्लेट् गाड़ी होनी चाहिये, यह आजकल कौनसी होती है ? मैं जानता नहीं हूं। हमें एसीवाला घर होना चाहिये। हमारे घर में दस-पांच नौकर होने चाहिये। यह बाह्य संयोगों से हम अपने को सुखी या दुखी मान रहे हैं। तो कहते हैं सुख का सीधा संबंध; तो यहां हमें इसतरह से सीख दे रहे हैं कि तुझे अगर सुखी होना है तो तू अपने सुखस्वरूप आत्मा में लीन हो जा। तो जो सुख से लबालब भरा हुआ ऐसा तेरा जो स्वभाव है, सुख का सागर तू है, उसमें से सुख व्यक्त होगा। क्या कहा ? हमारी तो आदत हो गयी है। मैं मराठी में समझाऊंगा, हिन्दीवाले और गुजरातीवाले अपनी-अपनी भाषा में समझ लेना। काखेत कळसा आणि गांवभर वळसा। नहीं समझे आप ? काखमां मटकुं होय अने गाममां गोतवा जाय, अेवी परिस्थिति छे। मैं स्वयं सुख स्वभावी ही हूं, सुख से लबालब भरा हूं और मैं सुख तो पांच इंद्रियों के विषयों से, मन के विषयों से प्राप्त करने की सोच रहा हूं तो कहते हैं, मूरख तू स्व तरफ तो देख ! तो तुझे सुख की व्यक्तता हुये बिना रहेगी नहीं।

यहां कहा कि सुख का सीधा संबंध तो व्यक्त वीतरागता से है। वीतरागता ही हम पैदा नहीं कर रहे हैं और हमें सुखी बनना है और कहते हैं **बाह्य प्रवृत्ति के अनुसार त्याग-ग्रहण से नहीं है।** यानी यहां तो हमें यह पक्का-नक्की करना है कि पर पदार्थ का त्याग तू कर सकता क्या ? अभी कल उठकर मैं बोलूंगा यह देवलाली का जो संकुल है न, मैंने आपको भेंट दे दिया। तो आप क्या करोगे मधुभाई ? पहले एक ॲम्ब्युलन्स बुलाकर हमको पागलखाने में दाखिल करोगे कि नहीं ? अरे तेरा जो है नहीं उसका तू क्या कर रहा है ? अरे मैंने गये पच्चीस, तीस, पैंतीस, चालीस साल से आलू-प्याज आदि का त्याग किया है; मालूम है तुमको ? मैं कौन हूं समझते हो तुम ? आलू-प्याज तेरे बाप का था कि तूने त्याग किया ? ख्याल में आया ? पहले मूल को पकड़े, ना हम परद्रव्य का त्याग कर सकते हैं और ना परद्रव्य का ग्रहण कर सकते हैं। अगर तुझे कुछ ग्रहण करना है तो अपने स्वभाव का ग्रहण कर।

गुरुदेवश्री ऐसा बोलते थे कि 'तुं परमात्मा छो अेम पेहला नक्की कर।' यह परमात्मा किसे कहते हैं कि जो अनंत गुण हैं वे अनंत स्वभावरूप से परिणमित हो रहे हैं वह तो परमात्मदशा है लेकिन तू स्वभाव से परमात्मा है ऐसा तू पहले नक्की तो कर, श्रद्धा में तो ला। हम तो ऐसे मूरख है कि हमें राजलक्ष्मी के लिये कहो या राजकन्या का

हमारे लिये प्रस्ताव आता है मतलब हमें प्रपोझल आता है कि तू हमारी बेटी से शादी कर, तिलक करने को कोई आया तो हम ऐसा मुंह करते हैं कि हमको नहीं चाहिये। तो तेरे जैसा दुर्भागी तो तू ही है। आपको कहे कि फलां फलां जगह यहां शिबिर चल रहा है, नहीं साहब वह हमको सूट नहीं होता है। क्यों साहब ? अरे वहां बहुत गर्मी है साहब। अरे यह तो हमारे धंधे का टाइम है, हमारा क्या बोलते हैं ? बूम पीरिअड है। बूम पीरिअड, यह हमको बाहर से कोई अच्छा कार्य करने के लिये प्रेरित कर रहे हैं तो हम मुंह मोड़ लेते हैं। यहां कह रहे हैं कि जिनेन्द्र भगवान तुझे तू सुख स्वभावी है ऐसा बता रहे हैं और तू बाह्य क्रिया में, बाह्य प्रवृत्ति में उसको भूल रहा है। ख्याल में आया ?

पहले हमें यह तो नक्की करना चाहिये कि पर का मैं कुछ लेन-देन कर सकता हूं या नहीं ? मैंने जो हजारों-करोड़ों रुपये कमाये हैं तो परपदार्थ का ग्रहण तू कर सकता है ? यानी तू जिनेन्द्र भगवान का अनुयायी है ? उनको माननेवाला नहीं न ? नहीं हमें पूरा विश्वास है। जिनेन्द्र भगवान कभी झूठ नहीं बोलते और तू क्या मान रहा है ? ख्याल में आया ? यहां बता रहे हैं सुख का सीधा संबंध तो वीतरागता से है। बाह्य प्रवृत्ति के अनुसार ग्रहण-त्याग में नहीं है। दो नंबर का पॉइंट, उसमें दूसरा पॅरेग्राफ। **धर्म व्यक्त करने के लिये, धर्म की वृद्धि करने के लिये अथवा धर्म की परिपूर्णता** करने **के लिये, बाह्य अनुकूलता या प्रतिकूलता अकिंचित्कर है।** यानी बाह्य संयोग अनुकूल हो या प्रतिकूल हो उसके कारण हमें धर्म की प्राप्ति होगी, ऐसा कतई है नहीं।

यहां कहते हैं कि विश्व में सारे द्रव्य स्वतंत्र हैं। उस स्वतंत्रता को जब तक हम ग्रहण नहीं करेंगे, उस स्वतंत्रता को जब तक हम नहीं मानेंगे तो हमें अपना सुखस्वभावी आत्मा कभी भी उपलब्ध नहीं होगा। उपलब्ध होते हुये भी हम उसकी तरफ नहीं देख रहे हैं। हमें यहां प्राप्त की प्राप्ति करनी है। ख्याल में आया ? इसतरह से यह पांचवां गुणस्थान जो है यहीं पर हम समाप्त करते हैं। अभी अगले क्लास में हम छठे गुणस्थान को प्रारंभ करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

२०. प्रमत्तविरत गुणस्थान

देखो अभी तक हम पांच गुणस्थान को पार करते हुये छठे गुणस्थान में आये हैं और हम तो जानते हैं छठा गुणस्थान जो है वह तो मुनियों के गुणस्थानों में से एक गुणस्थान है। हमने यह भी देखा था कि छठा और सातवां गुणस्थान जो होता है, वह मुनियों की अपेक्षा से उनका गुणस्थान कहा गया है। वैसे ही छठे से बारहवें गुणस्थान तक के भी मुनियों के गुणस्थान कहे जाते हैं। एक अपेक्षा से छठे से चौदहवें तक के भी मुनिराजों के ही गुणस्थान हैं क्योंकि जो जीव मुनि रहता है, वह क्षपकश्रेणी चढ़ते हुये, वह पूर्ण करके, परिपूर्ण वीतरागता को प्राप्त करता है। तब तक तो वह मुनि है ही है। लेकिन जब वह तेरहवें गुणस्थान और चौदहवें गुणस्थान में प्रवेश करता है तो उनको महामुनि कहा है अथवा परमगुरु कहा है। ख्याल में आया ?

यहां से अभी हमें बिलकुल सावधानी से एक-एक शब्द को सहीरूप से समझते हुये आगे बढ़ना है। मैं पहले ही आपको बताना चाहता हूं यहां किसी विशिष्ट मुनि की अपेक्षा से हम कथन नहीं कर रहे हैं। वर्तमानकालीन या जो कोई भूतकालीन या भविष्यकालीन जो मुनि हैं उनके बारे में कुछ नहीं बता रहे हैं। यहां आगम के आधार से मुनियों का जो स्वरूप होता है उसकी हमें जानकारी लेनी है। यह जानकारी लेने का प्रयोजन यह है कि भविष्य में मुझे भी मुनि बनना है और मुनि बनना है तो उसका स्वरूप क्या है ? यह हम अभी नहीं जानेंगे तो कब जानेंगे ? शांति से बिलकुल मन स्थिर रखते हुये ध्यान में रखना कि यहां हम किसी मुनि विशेष की बात नहीं कर रहे हैं। आगम में जिनको गुरु कहा है उन मुनिराज की बात है; क्योंकि हमें सम्यग्दर्शन प्राप्त करना है तो सच्चे देव, गुरु यानी सच्चे मुनि और सच्चा शास्त्र इनका यथार्थ श्रद्धान होना चाहिये। तो आप कहोगे कोई हमें दिखा तो दो तो हम श्रद्धान करें। भाईसाहब, आप कहेंगे कोई अरिहंत दिखा दो तो मैं कहां से दिखाऊं ? यह आज की तारीख में हमारे पास तो एक आगम ही है जो हमें शरणभूत है और जो प्रमाण है और उसके अनुसार हमारा जो कोई अभ्यास होगा वह हमें ध्यान में रखना है।

यहां क्या बात चल रही है ? हम प्रमत्त गुणस्थान के बारे में जानना चाहेंगे। तो पहले में पहले पृष्ठ क्रमांक १४३ से शुरू करते हैं। मिल गया सबको ? देखो पहली लाइन जो है यहां कहते हैं **जो वीतराग परिणाम,** तो जो वीतराग परिणाम है उसमें

निमित्त क्या है ? तो कहते हैं **तीन कषाय चौकड़ी का** जो **अभाव** है। उस अभाव के निमित्त से जो वीतराग परिणाम; कैसा है वह वीतराग परिणाम ? **सम्यक्त्व और सकल व्रतों से सहित हो**। देखो भैया जैसे-जैसे हम वीतरागता की ओर बढ़ रहे हैं तो चौथे से पांचवें में वीतरागता अधिक है, पांचवें से छठे-सातवें में उससे अधिक है तो उस भूमिका के अनुसार उनका रागभाव भी उत्कृष्ट दर्जे का होगा। यहां क्या कह रहे हैं ? सम्यक्त्व तो है ही है लेकिन वह जो वीतराग परिणाम है वह सकल व्रतों से सहित है। अभी हमने श्रावक का जो पंचम गुणस्थान देखा था वह सम्यक्त्व सहित लेकिन अणुव्रत के परिणामों के साथ था। वहां दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक जो वीतरागता होती है उसकी बात थी।

यहां पर सम्यक्त्व और सकल व्रतों से सहित **किन्तु संज्वलन कषाय और नौ नोकषाय के तीव्र उदय निमित्त, प्रमाद सहित हो।** क्या कहना चाहते हैं ? यह जीव कैसा है ? प्रमाद सहित है। यह प्रमाद क्यों खड़े होते हैं ? तो कहते हैं अभी उनके संज्वलन कषाय और नौ नोकषाय के तीव्र उदय बाकी है। उनके निमित्त से अभी उनके प्रमाद हो रहा है। उसे यानी उस परिणाम को **प्रमत्तविरत गुणस्थान कहते हैं।** यह ख्याल में आयी बात ? देखो, यहां प्रमत्तविरत गुणस्थान किसको कहा ? वीतराग परिणाम को। इसका अर्थ क्या हुआ ? क्या वे शुद्धोपयोग में हैं ? छठे गुणस्थान में शुद्धोपयोग में हैं ? बोलते हैं, नहीं। तो उनको वीतराग परिणाम हैं ? हां। क्योंकि जो जीव हमने देखा था पहले से, चौथे से या पांचवें गुणस्थान से डायरेक्ट सातवें गुणस्थान में जाते हैं तो वहां जाते ही उनको तीन कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक वीतरागता शुरू होती है। वहां शुद्धोपयोग है लेकिन जब शुद्धोपयोग से हटते हुये शुभोपयोग में आते हैं तो शुभोपयोग में उनका तो शुभोपयोग तो है ही है लेकिन साथ में वीतरागता यानी शुद्ध परिणति भी चालू है।

अगर हम ऐसा मानेंगे, कहेंगे कि छठे गुणस्थान में मात्र शुभोपयोग होता है और सातवें गुणस्थान में शुद्धोपयोग होता है, तो हम गलतफहमी में हैं। जो छठा गुणस्थानवर्ती जीव है उसमें भी उतनी ही वीतरागता है जितनी सातवें में है। वह वीतरागता में कोई कमी नहीं आयी है। वह वीतरागधारा तो चल रही है लेकिन साथ में यहां रागधारा भी है जो व्यक्त रागधारा है। अभी व्यक्त का अर्थ किन्हीं को पता नहीं लगा, व्यक्त यानी पर्याय में उसकी अभिव्यक्ति होना। यह व्यक्तता जो है वह किसीको

बताना ऐसा नहीं है। जैसे आप आये तो हम आनंद व्यक्त करते हैं, प्रसन्नता व्यक्त करते हैं; दूसरों को बताने के लिये व्यक्तता नहीं है। जैसा मेरा स्वभाव है, जो वीतराग स्वभाव है वह वीतराग स्वभाव पर्याय में व्यक्त होना वह व्यक्त वीतरागता है। तो दूसरे को कैसा पता लगे ? क्या जरूरत है दूसरे को पता लगाने की ? तू स्वयं तो जान सकेगा कि नहीं ? तेरे को स्वयं को अपना वेदन हो रहा है कि नहीं ? राग-द्वेष कर रहा है तो आकुलता का वेदन है कि नहीं ? वीतरागता हो रही है तो निराकुलता का भी वेदन है कि नहीं साथ में ? हमें स्वयं का वेदन है उसको व्यक्त वीतरागता कहेंगे।

यहां क्या बात कर रहे हैं ? कि यह जो वीतराग परिणाम है वह कैसा है ? तो कहते हैं वह सकल व्रतों से सहित है और उसके लिये एक बीच में कंडिशन भी डाल दी है कि सम्यक्त्व भी होगा। सुरेशभाई, सम्यक्त्व होगा इसका अर्थ जिसके सम्यक्त्व नहीं है उसके बाह्य में सकलव्रत होते हुये भी वीतरागता नहीं है। देखो अभी से थोड़ासा सिरिअसलि समझना हो ! क्योंकि मुनि के बारे में बोलना तो तलवार के धार पर चलने जैसा है। ख्याल में आया ? लेकिन हम तो आगम के अनुसार ही सोचेंगे, बोलेंगे। कह रहे हैं इनके अभी कौनसा-कौनसा कषाय बाकी है ? किसकी विद्यमानता है ? तो तीन कषाय तो निकल गये- अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ; अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ; प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ। अभी बाकी क्या है ? तो संज्वलन बाकी है, संज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभ बाकी है और साथ में नौ नोकषाय। यह नौ नोकषाय आप जानती हैं आप ? क्या हैं ? नाम जानती हैं आप ? हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा और तीन वेद- स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद। इनको किंचित कषाय या नोकषाय ऐसा कहने में आता है।

अभी यहां जो बता रहे हैं कि इन जीवों को कौनसे ? छठे गुणस्थानवर्ती जीवों को चार कषाय और नौ नोकषाय अभी विद्यमान हैं और उनके निमित्त से क्या हो रहा है ? वे प्रमादी हो रहे हैं। कौन ? मुनिराज ? क्या हिम्मत है तुम्हारी मुनिराजों को प्रमादी कह रहे हो ? भैया मैं नहीं कह रहा हूं, तो ? जिनेन्द्र भगवान कह रहे हैं। उनकी दिव्यध्वनि में यह बात है कि चौदह गुणस्थान होते हैं और चौदह में से छठे गुणस्थान का नाम प्रमत्तविरत है। प्रमत्त का अर्थ प्रमादी। कौनसा प्रमाद करते होंगे ? मुनिराज भी प्रमाद करते हैं ? हां-हां, कौनसा प्रमाद करते हैं ? अरे अपने स्वरूप में गुप्त नहीं होना यही उनका प्रमाद है। ख्याल में आया ?

हम स्वाध्याय में या व्याख्यान में या प्रवचन में सोते हैं, वह तो प्रमाद है ही है और कहीं स्वाध्याय चलता हो तो टेलीफोन बजता है वह भी प्रमाद है। क्या ? क्योंकि ना तो तुम्हारा अकेले का मन विचलित होता है। क्योंकि बार-बार अभी क्यों नहीं फ़ोन आया ? अभी क्यों नहीं आया ? तेरा ध्यान किधर है ? स्वाध्याय में है कि कभी फ़ोन आया ? कभी फ़ोन आया ? क्या है क्या ? तू स्वयं भी विचलित हो जाता है वह फ़ोन की आवाज से अन्य भी जितने दो, पांच, दस पच्चीस, पचास जो भी होंगे वे भी। मैं मेरी भाषा में कहता हूं कि उमास्वामीजी ने बंध के हेतु पांच ही बताये हैं। कौनसे ? मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग। उसके साथ में और एक आस्रव है हमारा कौनसा ? जिसका द्वार हमेशा खुला रहता है- ट्रिंग-ट्रिंग, ट्रिंग-ट्रिंग। ख्याल में आया ? भाई स्वाध्याय करने आया तो बंद करके आ न। जेब में रखने की आवयश्यकता है क्या ? घर में छोड़कर आना। नहीं ? तुमको मालूम नहीं है, तुम तो रिटायर्ड आदमी हो; तुमको कोई आगे-पीछे नहीं है। तुम मरोगे तो कोई रोनेवाले भी नहीं है। हमारे पीछे तो इतने हैं। हमें तो इतनी जवाबदारी है। हम तो उंगलियों पर दुनिया को नचाते हैं। अरे वाह रे वाह। और तू जिनेन्द्र भगवान का फॉलोअर है। क्यों ? जो कह रहे हैं कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ भी परिणमन नहीं करता है, तू दुनिया को नचा रहा है।

यहां कह रहे हैं यह प्रमाद है, किनके ? मुनियों का प्रमाद जो है वह क्या है ? तो कहते हैं, वे ऐसे इतने उच्च अवस्था में, उच्च पद में पहुंचे हैं कि हर जैनी उनको कम से कम नौ बार तो वंदना करता है। मैंने एक बार बताया था जो नौ बार णमोकार मंत्र नहीं बोले वह जैन नहीं है। यह बात बताई थी न ? तो णमोकार मंत्र में आचार्य, उपाध्याय और साधु आते हैं कि नहीं ? ऐसे पद में स्थित जीवों को प्रमादी कहना ? हां वह ढाढ़स मेरा नहीं है, नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती लिख रहे हैं। उनका कैसा ढाढ़स हुआ ? वह भगवानमहावीर ने बताया। भगवान महावीर ने क्यों बताया ? क्योंकि उनके पहले तीर्थंकर, ऐसे करते-करते हम आदिनाथ तक पहुंचते हैं। आदिनाथजी से जाकर पूछें, साहब यह आपने क्या कर दिया गजब ! तो बोले मैंने नहीं कहा है। तो किसने कहा है ? अनादिनाथ ने कहा है। अनादिनाथ के पास गये हम। क्यों साहब यह क्या बात हो गयी ? मैं क्या करूं, वस्तु का स्वरूप ही ऐसा है। ख्याल में आया ?

यहां कह रहे हैं जो प्रमाद है तो कौनसा प्रमाद ? अरे उनका प्रमाद तो हमारे लिये अनंत उपकारी है। अगर वे प्रमाद अवस्था में यह शास्त्र आदि का जिसको हम

कहते हैं गठन नहीं करते यानी शास्त्र लिखते नहीं तो आज हमारी क्या हालत होती ? और हमारा प्रमाद किसके लिये फायदेमंद है देखो ? ऐसे गुणस्थान को प्रमादी गुणस्थान कह रहे हैं। वे क्या कह रहे हैं ? वह प्रमाद क्यों उत्पन्न हो रहा है ? कहते हैं कि संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ और नौ नोकषाय के निमित्त से उनकी यह बातें चल रही हैं। देखो, यह इसीके अलग-अलग नाम हैं- प्रमत्तसंयत, विरत, संयत, सकलसंयत, सकलचारित्रवाले इत्यादि अनेक नामों से यह गुणस्थान जाना जाता है।

अब आगे बढ़ते हैं, पृष्ठ १४४। अभी जो छठा गुणस्थान है वह छठे गुणस्थान से दसवें गुणस्थान पर्यंत कषाय और नोकषाय किसतरह से कहे जाते हैं उसकी बात यहां बता रहे हैं। पहले तो कह रहे कि जो **प्रमत्तसंयत** गुणस्थान है यानी छठा गुणस्थान है, उनमें जो **संज्वलन तथा नोकषाय** हैं उनका उदय कैसा है ? तो **तीव्र उदय है।** यानी कर्मों का निमित्त ऐसा है। जीव अपने स्वयं के परिणामों से प्रमत्त हुआ है लेकिन उसमें निमित्त कर्म हैं। इसलिये कर्म पर आरोप करते हैं कि उसके तीव्र उदय के कारण यह जीव प्रमादी हो रहा है। कहते हैं **अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में संज्वलन कषाय चौकड़ी तथा नोकषायों का मंद उदय है।** देखो यहां क्या कहते हैं ? संज्वलन कषाय का उदय है। कौनसे गुणस्थान में ? सातवें गुणस्थान में। सातवें गुणस्थान में तो जीव स्वरूप में लीन है, शुद्धोपयोग चल रहा है फिर भी वहां कषायों का मंद उदय है, जिसको हमने अबुद्धिपूर्वक राग कहा था और जिसके कारण इस जीव को आस्रव भी हो रहा है और बंध भी हो रहा है और स्वरूप में गुप्त है, स्वरूप में लीनता है तो वहां संवर भी हो रहा है और निर्जरा भी हो रही है। ख्याल में आया ?

कह रहे हैं अप्रमत्त गुणस्थान में संज्वलन कषाय चौकड़ी का तथा नोकषायों का मंद उदय रहता है। **अपूर्वकरण गुणस्थान में** अपूर्वकरण यानी आठवें गुणस्थान में **संज्वलन तथा नोकषायों का मंदतर उदय है।** देखो वहां पर भी वही है, संज्वलन भी है और नोकषाय भी है। फिर आगे जाकर नौवें में क्या होगा ? **अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में संज्वलन तथा नोकषायों का मंदतम उदय होता है।** अभी आठवें में नोकषाय कम हो जाते हैं, नौवें में कुछ बाकी रहते हैं ऐसी जो विशेषता है वह अभी हम नहीं देखेंगे क्योंकि इतनी डिटेल में जायेंगे तो सारे लोग भाग जायेंगे। तो हम आगे बढ़ते हैं। यानी क्या कहा ? छठे में तीव्र उदय, सातवें में मंद उदय, आठवें में मंदतर और अनिवृत्तिकरण यानी नौवें गुणस्थान में संज्वलन और नोकषाय का मंदतम उदय

है और **सूक्ष्मसाम्पराय** जो दसवां **गुणस्थान** है, उस**में** सिर्फ **सूक्ष्मलोभ का** ही **उदय रहता है।** यह बात बताते हैं कि इसतरह यह कषायों की अवस्थायें बतायी हैं।

अब आगे बढ़ते हैं। नीचे जो बोल्ड अक्षरों में लिखा है **प्रथम गुणस्थान से लेकर चौदह गुणस्थानों में कषाय के स्वरूप का सामान्य कथन निम्नप्रकार है।** यह कोई ऐसा रिजिड अँड फ़ास्ट रूल नहीं है फिर भी सामान्यतः ऐसा कहेंगे तो उसमें कोई गड़बड़ी नहीं है। क्या कहते हैं ? जो **मिथ्यात्व से मिश्रगुणस्थान पर्यंत के तीनों गुणस्थानों में कषाय** कैसा है ? तो **सुमेरुपर्वत समान है।** यह सुमेरुपर्वत जो है उसकी ऊंचाई और चौड़ाई मालूम है ? हां-हां बोलो-बोलो, एक हाथी जितना ? बोलो-बोलो, जोर से बोलो, *श्रोता: एक लाख चालीस।* एक लाख चालीस। और वह क्या है लेकिन ? इंच क्या सेंटीमीटर ? *श्रोता: योजन।* योजन।अच्छा है, यह प्रॉम्टर भी आपके अच्छे नहीं हैं। क्या करें ? बहुत अच्छा आपने प्रयास किया बहुत अच्छा, दूसरों को सुनना मत क्योंकि वे गलत बतायेंगे तो तुम गलत बोलोगे। अपने भेजे से बोलना अगर होगा तो। क्या कह रहे हैं ? एक लाख चालीस योजन। अभी वह योजन यानी कितना है वैगेरह बात छोड़ो और उसकी ऐसी चौड़ाई है, ऐसा देखा जाये तो ऊपर एक हजार योजन और जमीन पर दस हजार योजन का चौड़ा है। दस हजार योजन ऐसी उसकी चौड़ाई है। ऊंचाई कितनी है ? तो एक लाख और चालीस योजन।

कह रहे हैं मिथ्यात्व से, मिथ्यात्व से लेकर मिश्र गुणस्थान पर्यंत तीनों गुणस्थानों में कषाय सुमेरुपर्वत के समान है यानी इतना प्रचंड कषाय है उसके पास। हां **क्योंकि अनंतानुबंधी आदि चारों कषायें अपने पूर्ण वैभव के साथ विद्यमान हैं।** उसको भी वैभव बता दिया। **वे संसार को बढ़ाने का ही काम कर रही हैं।** अब कहते हैं चौथा गुणस्थान कौनसा ? **अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान में कषाय** कैसी हैं ? तो **महापर्वतरूप हैं** यानी थोड़ासा कुछ कम हो गया है। **क्योंकि अनंत संसार का कारण अनंतानुबंधी का अभाव हो गया है, अतः कषायों की शक्ति आंशिक क्षीण हो गयी है।** अब पांचवां जो **देशविरत गुणस्थान** है उस**में कषाय** कैसी रह गयी तो **पर्वतरूप रह** गये हैं। पहले कैसे थे ? सुमेरु के समान, दूसरे होते हैं महापर्वत के समान, पांचवें में है पर्वत के समान। **क्योंकि उदय मात्र दो कषाय** यानी कौनसा ? **प्रत्याख्यानावरण** क्रोध, मान, माया, लोभ **और संज्वलन** क्रोध, मान, माया, लोभ ऐसी जो दो चौकड़ी हैं, उनका **ही है और वे भी नाशोन्मुख हो गयी हैं।** यह शब्द तो बहुत

हेवी-हेवी वापरे हैं। नाश के उन्मुख हो गये हैं यानी अभी नाश होने जा रहे हैं। **तथापि जीव के पुरुषार्थ की कमी से उनका अस्तित्व है।** किसके कहा ? पंचम गुणस्थानवर्ती जीव को कह रहे हैं कि तेरा पुरुषार्थ कम है और हम तो एक शिबिर में आये तो समझते हैं कि हम कितने पुरुषार्थी हैं। पांच दिन धंधा छोड़कर आये हैं, मालूम है आपको ?

प्रमत्तसंयत से सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान पर्यंत, पांचों गुणस्थानों में सकलचारित्र के सद्भाव में उत्तरोत्तर नष्ट होता हुआ संज्वलन कषाय तथा नोकषायों का उदय यथाख्यातचारित्र में तारतम्यरूप से बाधक है। यानी अभी जो बचा है वह जो कषाय है वह इस जीव को यथाख्यातचारित्र प्राप्त नहीं होने देते, इतना ही उसका अर्थ है। तो **उपशांतमोह गुणस्थान से लेकर** यह तारतम्यता की बात है न, मैंने एक बार यहां बतायी है, तो अभी अपने पास समय कम है जब आप पर्सनलि मिलोगे तो बताऊंगा। क्यों ? क्या वही बात रिपीट करूं कि आप कल नहीं थे तो आज आपने पूछा। परसों आप नहीं थे तो आपने पूछा। तो वही बात को बार-बार बोलने से अन्य लोग कंटाल जाते हैं।

तारतम्य यानी तरतमता हीनाधिक अवस्था। चलो, पांचवां पॉइंट क्या है ? उपशांतमोह गुणस्थान से लेकर यानी ग्यारहवें गुणस्थान से लेकर **अयोगकेवली** यानी चौदहवें **गुणस्थान पर्यंत के चारों गुणस्थानों में और गुणस्थानातीत सिद्धअवस्था में भी मात्र वीतराग भाव ही रहता है, कषायों का सर्वथा अभाव ही है।** अब आगे, अभी मुझे प्रश्न पूछना है कि जो जीव छठे गुणस्थान में होगा, वह कौनसे सम्यक्त्व के साथ हो सकता है ? पन्नालालजी आप बतायेंगे ? *श्रोता: क्षयोपशम सम्यक्त्व के साथ।* क्षयोपशम सम्यक्त्व के साथ, बहुत अच्छा। रमेशभाई आप कुछ बता रहे थे। नहीं-नहीं आप बोलो, आपको भी पर्मिशन है। तीन सम्यक्त्व में से कौन-कौनसे सम्यक्त्व छठे गुणस्थानवर्ती को हो सकते हैं ? अनिलजी आपने प्रश्न सुना ? मैंने पूछा कि छठे गुणस्थान में कौन-कौनसे सम्यक्त्व हो सकेगें ? आप बताना चाहेंगी ? *श्रोता: तीनों।* तीनों ? ॲट अ टाइम ? हां, तीनों भी हो सकते हैं ऐसा आपको बताना है। यानी ॲट अ टाइम - वन।

जो औपशमिक सम्यग्दृष्टि है, जो पहले से सातवें में जायेगा तो सातवां-छठा,

सातवां-छठा चलता रहेगा। तो वह औपशमिक सम्यग्दृष्टि है। जो क्षायोपशमिक आपने बताया वह भी हो सकता है और जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि होगा उसके तो एक दफे क्षायिक हो गया, तो वह सादि अनंतकाल तक रहना है। समझ में आया ? तो छठे गुणस्थान में उसकी भी विद्यमानता है। अब देखो यह पेज नंबर कौनसा है ? १४६, देखो नीचे बात की है। क्या कहते हैं ?

सम्यक्त्व अपेक्षा विचार। इस प्रमत्तसंयत गुणस्थान में भावलिंगी महामुनिराज को। यहां महामुनिराज कहने की और भावलिंगी मुनिराज कहने की क्या आवश्यकता रही ? तो यह बात है जो द्रव्यलिंगी मुनि होते हैं उनको छठे गुणस्थान की प्राप्ति ही नहीं होती। क्यों ? पहले सातवें में जायेगा तो सातवें में जायेगा तो तीन कषाय चौकड़ी का अभाव होगा तो वह भावलिंगी हुआ, वही जीव छठे में आयेगा। अरे जिसे सातवें गुणस्थान की ही प्राप्ति नहीं है, उसे छठे में आने का कहां अवकाश है ? ख्याल में आया ? देखो यहां जो एक-एक शब्द लिखे हुये रहते हैं उनको हमें समझना चाहिये कि यह क्यों लिखे हैं। कहते हैं इस प्रमत्तसंयत गुणस्थान में भावलिंगी महामुनिराज को **औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक सम्यक्त्व में से कोई एक सम्यक्त्व होता है।**

अभी थोड़ासा पुस्तक में न देखते हुये मैं पूछूंगा कि छठे गुणस्थान का जघन्य काल कितना होना चाहिये ? सुरेशभाई मत देखो, बंद करो। बहन आप बतायेंगे ? हां ? *श्रोता: एक अंतर्मुहूर्त।* एक अंतर्मुहूर्त। आपके सामने बहन बैठी हैं वह ? पुस्तक में नहीं लिखा है, आप बतायेंगे कि जघन्य काल; आपको तो बिलकुल परफेक्ट आना चाहिये। हां पीछे वह बहन है न, आप बताइये बहन, छठे गुणस्थान का, आपको ही पूछ रहा हूं। हां अच्छा, उन्होंने जैसे हमारी सोनिया गांधी दो उंगलिया बताती हैं व्हिक्टरी के लिये वैसे बहन ने एक उंगली बता दी। एक अंतर्मुहूर्त कहना चाहती है आप ? *श्रोता: एक समय।* हां, उन्होंने बताया एक समय। जघन्य काल कितना ? एक समय।

देखो-देखो, हां साहब, बात ऐसी है कि यह जघन्य काल तो एक समय किस अपेक्षा से कहा है कि अगर छठे गुणस्थान में कोई जीव छठा-सातवां, छठा-सातवां किया और छठे में आया और पहले समय में ही उसकी मृत्यु हुयी, मरण हुआ तो वह छठा गुणस्थान का काल एक समय कहा जायेगा, अन्यथा वह एक अंतर्मुहूर्त तक

टिकता है। क्या कहा ? आपने जो बताया एक अंतर्मुहूर्त वह तो रहेगा लेकिन एक समय तो जघन्य काल है न भाई। तो हम जघन्य काल पूछेंगे तो वह मरण की अपेक्षा से उसको एक समय कहेंगे और उत्कृष्ट काल कितना होगा, हां आप बोलो बहन ? *श्रोता: अंतर्मुहूर्त।* अंतर्मुहूर्त। पुस्तक बंद रखी आपने ? व्हेरी गुड। अभी हम पुस्तक खोलते हैं, १४७ पेज पर आ जायें।

देखो यहां कह रहे हैं **जघन्य काल एक समय है। कोई मुनिराज ध्यानमय अप्रमत्त गुणस्थान से छूटकर शुभोपयोगरूप छठे गुणस्थान में प्रवेश करते हैं और वहां मात्र एक समय काल व्यतीत होते ही उनकी मनुष्यायु पूर्ण हो जाये तो मरण की अपेक्षा प्रमत्तसंयत** या प्रमत्तविरत **गुणस्थान का जघन्य काल मात्र एक समय घटित होता है।** यह बात समझ में आयी क्या ? अब आगे कहते हैं। *श्रोता: अगर उनका मरण नहीं होगा तो ?* अगर उनका मरण नहीं होगा तो वह एक अंतर्मुहूर्त काल तक ही छठे में रहेंगे, उससे अधिक नहीं रहेंगे। और **उत्कृष्ट काल- प्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती मुनिराज मात्र यथायोग्य एक अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत ही यहां रहते हैं।** लिखा है न साहब ? है न पुस्तक आपके पास ? लिखा है देखो, यथायोग्य एक अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत ही यहां रहते हैं। **यह गुणस्थान तीन कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक व्यक्त शुद्ध परिणति सहित शुभोपयोगरूप है।** हां साहब यहां आ गया न व्यक्त। क्या ? वहां उनको तीन कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ है और व्यक्तता किसकी है ? शुद्ध परिणति की। और वह भी शुद्ध परिणति कैसी है ? राग सहितवाली है। तो वहां सरागधारा और वीतरागधारा दोनों ही एक साथ चल रही हैं।

देखो १४८ पेज पर लिख रहे हैं **मुनिराज शुद्धोपयोगरूप ध्यानावस्था की सतत रुचि रखते हैं और पुरुषार्थ भी वे वैसा ही करते हैं। अतः वे तुरंत ही अप्रमत्तविरत गुणस्थान में ही गमन करते हैं। यदि छठे से सीधे मिथ्यात्व गुणस्थान में गमन करेंगे तो ही प्रमत्तविरत गुणस्थानवर्ती मुनिराज का सर्वोत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त काल होता है।** यानी उस काल में भी थोड़ासा व्हेरिएशन है। जो छठे से पहले गुणस्थान में जानेवाला कोई जीव होगा तो उसका अंतर्मुहूर्त काल थोड़ासा बड़ा होगा। अभी यह बात बताते हैं कि यह बहुत स्थूलरूप से हम आपको उदाहरण देते हुये बता रहे हैं, छठा गुणस्थान और सातवां गुणस्थान। मुनिराज क्या करते हैं ? सातवें में से छठे में आते हैं छठे में से सातवें में जाते हैं। ऐसे एक अंतर्मुहूर्त में हजारों बार हो

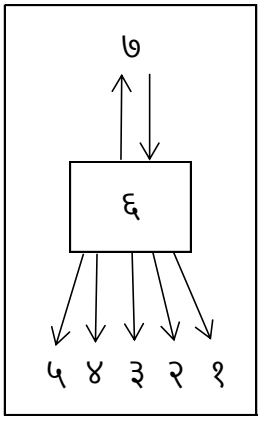
सकता है क्योंकि अंतर्मुहूर्त के भेद भी अनेक हैं।

यहां यह बताना चाहते हैं बात तो ऐसी है अगर हम मान लेते हैं कि चौबीस घंटा, ट्वेंटी फोर अवर्स यह मुनिराज का जो एक दिन का काल है उसमें से सोलह घंटे वे छठे गुणस्थान में रहते हैं और आठ घंटे सातवें गुणस्थान में रहते हैं। यह प्रपोर्शन क्या हो गया ? २ और १। ख्याल में आया ? लेकिन संभालना हो ! किसको ? अपनेको। यह जो सोलह घंटे बताये वह लगातार सोलह घंटे नहीं होते हैं। सातवें से छठे में जायें फिर छठे से सातवें में आयें, फिर छठे में जायें। इनका हम ॲग्रिगेटिव्हलि यह कॅल्क्युलेशन करते हैं तो वह प्रपोर्शन क्या होता है ? कि छठा गुणस्थान का काल अधिक-दोगुणा है और सातवें गुणस्थान का काल ओछा-कम है। तो वह क्या बताते हैं कि छठा गुणस्थान का जो भी यथायोग्य अंतर्मुहूर्त काल होगा उससे भी आधा काल सातवें गुणस्थान का है। क्या कहा ? अब थोड़ीसी आगे की भी बात बताता हूं।

सातवें गुणस्थान से आठवें गुणस्थान का काल भी उससे छोटा है। आठवें गुणस्थान से नौवें गुणस्थान का काल उससे भी छोटा है। नौवें गुणस्थान से दसवें गुणस्थान का काल उससे भी छोटा है और दसवें गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान का काल उससे भी छोटा है और बारहवें गुणस्थान से तेरहवें गुणस्थान का काल ? कितना होगा ? छोटा होगा न ? *श्रोता: ज्यादा है।* हां ज्यादा है, डरना मत। वह तो एक करोड़ पूर्व आयु जो है उसमें से आठ वर्ष और कुछ अंतर्मुहूर्त कम कर दो, इतना बड़ा भी हो सकता है। लेकिन हम छोटा, छोटा कहेंगे न तो बारहवें से तेरहवां छोटा बोलो तो भी गड़बड़ हो जायेगी। ख्याल में आया ? यहां क्या कह रहे हैं ? छठे गुणस्थान का काल बड़ा है और सातवें गुणस्थान का काल छोटा है। यही बात यहां लिखी है देखो पेज नंबर १४८, बोल्ड अक्षरों में मध्यम काल के नीचे लिखा है- **प्रमत्तसंयत गुणस्थान के अंतर्मुहूर्त काल से अप्रमत्तसंयत गुणस्थान का काल नियम से आधा है।**

अब अभी आप ईमानदारी से पुस्तकें बंद करें क्योंकि हमें गमनागमन करना है न। अभी क्या बताते हैं ? छठे गुणस्थान से गमन करेगा तो जीव कहां-कहां गमन करेगा ? छठे गुणस्थान से जीव अगर गमन करेगा, जायेगा तो कहां-कहां जायेगा ? हां, बहन आप बतायेंगी ? नहीं मालूम, कोई बात नहीं। आप बतायेंगी ? हां बोलो, *श्रोता: सातवें में जायेगा।* सातवें में जायेगा। और कहां जायेगा ? ऊपर कहीं जाने का रास्ता

नहीं, नीचे कहीं जायेगा कि नहीं ? तो कहां जायेगा ? ऊपर से नीचे आना फिर गड़बड़ी नहीं होती है। *श्रोता: छठे से पांचवें में, चौथे में, दूसरे में, पहले में।* छठे से पांचवें में, चौथे में, दूसरे में, पहले में। और कोई रह गया तो देख लो अभी यहां। यहां तो लिखा है न यह छठा गुणस्थान तो यहां से किधर जायेगा ? सातवें में। और नीचे कहां आयेगा ? पांचवें में, चौथे में; तीसरे में यह आप भूल गये थे, दूसरे में और पहले में।



फिर अपना पुराना प्रश्न होगा, जिनको उत्तर देना है वह फट से हाथ ऊपर उठायें। जो छठे गुणस्थान से दूसरे गुणस्थान में आनेवाला जीव है उसको कौनसी कंडिशन ऑप्लिकेबल होगी ? हां-हां बहुत अच्छा, दो हाथ उठ गये। आपने हाथ उठाया न बहन ? बाहर में जो कुर्सी पर बैठे हैं। नहीं हाथ नीचे तो आप हमको फंसा रहे हैं। हां पुरुषों में कौन बतायेगा ? आप अच्छा, बहुत अच्छा और कोई ? हां अभी यह बहुमान हम हमारे मधुभाई को देंगे। जवाब देने का है आपको। *श्रोता: सादि सम्यग्दृष्टि।* सादि सम्यग्दृष्टि ऐसा होना चाहिये ? अनिल जी आपकी राय क्या है ? अच्छा अभी बहनजी से पूछते हैं कहां गयी किसने हाथ उठाया था ? हां आपने, अच्छा बोलो। *श्रोता: उपशम सम्यग्दृष्टि होना चाहिये।* हां क्या कह रही हैं वे ? कि छठा गुणस्थानवर्ती जीव औपशमिक सम्यग्दृष्टि होगा तो उसके उपशम सम्यक्त्व के काल में छह आवली से लेकर एक समय तक का काल बाकी रहेगा, तब अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ में से किसी एक का उदय होगा तो वह नियम से दूसरे गुणस्थान में आयेगा। आपने सादि सम्यग्दृष्टि कहा, सम्यग्दृष्टि तो अनादि से कोई होता ही नहीं, अनादि से सारे ही जीव मिथ्यादृष्टि होते हैं।

हां देखो यह करणानुयोग ऐसा है न हमारा ब्रेन वॉश करता है, हमारा दिमाग कैसा चलना चाहिये वह हमें सिखाता है। क्योंकि जरा यहां से वहां गड़बड़ी हो गयी। सादि मिथ्यादृष्टि कहा आपने, अरे परंतु वह तो छठा गुणस्थानवर्ती तो भावलिंगी मुनि है। वह मिथ्यादृष्टि होगा कि सम्यग्दृष्टि ? *श्रोता:सम्यग्दृष्टि।* सम्यग्दृष्टि। हमको यह भी याद रखना है न। तो देखो, अभी हमने क्या देखा ? छठे से पांचवें में, छठे से चौथे में, तीसरे में, दूसरे में, पहले में। अभी मैं यह पूछ रहा था कि यह जो आंकड़े लिखे हैं उसकी जगह हमें नाम बताने हैं तो कौन बतायेगा ? अंजू आप बतायेंगी ? *श्रोता: पहला मिथ्यात्व, दूसरा सासादनसम्यक्त्व, तीसरा सम्यग्मिथ्यात्व, चौथा अविरतसम्यक्त्व, पांचवां देशविरत।* पहला मिथ्यात्व, दूसरा सासादनसम्यक्त्व, तीसरा सम्यग्मिथ्यात्व, चौथा अविरतसम्यक्त्व, पांचवां देशविरत। और कहां जायेगा ? *श्रोता: अप्रमत्तविरत गुणस्थान में जायेगा।* हां, अप्रमत्तविरत में। देखो कभी हमको गुणस्थान के नाम पूछे जायेंगे या उनके गुणस्थान का नंबर भी पूछा जायेगा। तो इसलिये हमने पहले ही दिन सबको याद करवाया था।

अब आगमन कहां-कहां से होगा ? यानी छठे गुणस्थान में जीव कहां-कहां से आयेगा ? हां, कनुभाई आप बोलवा चाहो छो ? बोलो- बोलो, *श्रोता: सातवें में से।* सातवें में से। और पांचवें में से ? *श्रोता: केवल सातवें में से।* केवल सातवें में से क्योंकि हमने देखा है यह ऊपर चढ़ने के लिये गुणस्थान नहीं है, वह गिरने के लिये हैं। तो गिरने के लिये छठे से ऊपर के गुणस्थान में होना चाहिये न, तो सातवां ही गुणस्थान है। तो आठवें से क्यों नहीं आता यह बात भी हम देखेंगे। यहां तो इतना ही नक्की करना है कि सातवें से छठे में आयेगा। यहां पर भी लिखा है न, दो ॲरो बताये हैं न ! एक ऊपर जाने के लिये और एक नीचे आने के लिये। इससे क्या प्रतीत होता है कि सातवें से छठे में आयेगा।

अब यहां तक हमने देखा है, अभी १४९ पेज पर देखते हैं दुबारा। **गमन**- जब गमनागमन की अपेक्षा हम विचार करते हैं न, तो यह गमन का नाम आता है तो हमें हमारे गमनभाई की याद आती है। कह रहे हैं- **प्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती भावलिंगी मुनिराज अपना यथायोग्य एक अंतर्मुहूर्त काल व्यतीत करने पर हमेशा अभ्यस्त हो जाने के कारण, त्रिकाली निज सहजानंदमय शुद्धात्मा के ध्यान द्वारा शुद्धोपयोग प्रकट करके ऊपर के एकमेव अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में ही गमन**

करते हैं; अन्य अपूर्वकरण आदि गुणस्थानों में सीधे गमन नहीं करते। यह इतना लंबा -लंबा जो चार लाइनवाला जो कोई पॅरेग्राफ है उसका अर्थ इतना ही, छठे गुणस्थान से ऊपर सातवें गुणस्थान में ही प्रवेश करेगा अन्यत्र कहीं नहीं। फिर दूसरा पॉइंट- **छठे से नीचे की ओर गमन करें तो अपनी पुरुषार्थ की हीनता से,** यानी क्या ? **अपने अपराध से और अन्य गुणस्थान के लिये यथायोग्य कर्मों के उदयादि से।** यानी यह निमित्त बताया। **प्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती भावलिंगी मुनिराज सीधे देशविरत गुणस्थान में गमन कर सकते हैं।** यह देशविरत कौनसा नंबर है बेटा ? *श्रोता: पांचवां।* अरे वाह, इतने लोगों ने बोल दिया और बाद में तुमने बोला। क्या कहा ? पांचवां गुणस्थान और चौथे गुणस्थान का नाम क्या है ? *श्रोता: अविरत सम्यग्दृष्टि।* अविरतसम्यक्त्व, कोई बात नहीं- कोई बात नहीं। तुम नये हो न क्योंकि हम तो आपको इन्ड्यूस करेंगे, गुणस्थानों के नाम याद करें इसलिये। बच्चे लोगों को तो बहुत जल्दी-जल्दी याद हो जाता है। देखो क्या कह रहे हैं ? यह छठे गुणस्थान से देशविरत नामक पंचम गुणस्थान में वह आ जाते हैं।

अब तीसरा पॉइंट- यहां पर कह रहे हैं, **अंतर्मुहूर्त पहले जो तीन कषाय चौकड़ी के अनुदय से भावलिंगी मुनिराज थे, वे ही पूर्व कुसंस्कारों की तीव्रतावश अपने परिणामों में हीनता आने से अगले अंतर्मुहूर्त में छठे से सीधे अप्रत्याख्यानादि कषाय कर्म के उदय से अविरतसम्यग्दृष्टि हो जाते हैं।** यहां वह जीव के परिणामों की भी बात की है और उसमें निमित्तरूप रहनेवाले जो कर्म हैं उनकी भी बात की है। अब आगे कहते हैं- **कोई छठे गुणस्थानवर्ती सच्चे मुनिराज अपनी व्यक्त परिणतिरूप वीतरागता से च्युत हो**ते हैं और **उसी समय श्रद्धा में सम्यक् मिथ्यापनारूप परिणमित होकर मिश्र दर्शनमोहनीय कर्म के उदय के निमित्त से छठे से सीधे तीसरे मिश्र गुणस्थान में गमन करते हैं।**

अब पांचवां पॉइंट- **द्वितीयोपशम सम्यक्त्व सहित** यानी कोई प्रथमोपशम सम्यक्त्ववाला जीव है और कोई द्वितीयोपशमवाला यानी जो उपशमश्रेणी चढ़कर वापस नीचे आये हैं ऐसा जो जीव है वह द्वितीयोपशम सम्यक्त्व सहित **प्रमत्तसंयत मुनिराज चारित्र एवं सम्यग्दर्शन से च्युत होकर अनंतानुबंधी कषाय परिणाम के व्यक्त होने से तथा उसी समय अनंतानुबंधी कषाय कर्म का उदय भी आ जाने से दूसरे सासादन सम्यक्त्व गुणस्थान में गमन करते हैं और द्रव्यलिंगी मुनिराज बन**

जाते हैं। अब और एक पॉइंट जो है कि **कोई प्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती भावलिंगी मुनिराज छठे से सीधे मिथ्यात्व और अनंतानुबंधी कषाय कर्म के उदय होने से मिथ्यात्व गुणस्थान में भी गमन करते हैं अर्थात् जो पहले समय में भावलिंगी मुनिराज थे, वे ही अपने पुरुषार्थ की विपरीतता के कारण विशिष्ट वीतरागतारूप धर्म से च्युत हो जाने से प्रथम गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनिराज हो जाते हैं।**

देखो, यह परिणामों की विचित्रता ! बाह्य में द्रव्यलिंगरूप मुनिपना तो यथार्थरूप से वैसा का वैसा ही है; लेकिन अंदर में ना मुनियोग्य धर्म (शुद्धता) रहा और **ना व्रती श्रावक के योग्य** और **ना सम्यग्दृष्टि के योग्य परिणाम।** इसलिये वे पहले गुणस्थान में गये। अब कह रहे हैं **आगमन,** तो आगमन की बात कह रहे हैं कि **प्रमत्तसंयत गुणस्थान में आगमन मात्र अप्रमत्तसंयत गुणस्थान से ही होता है। अपूर्वकरण आदि उपरिम** यानी ऊपर के **किसी भी गुणस्थानों से सीधे छठे गुणस्थान में आगमन नहीं होता।** देखो अभी हम पेज नंबर १५२ पर आते हैं। यहां लिखते हैं- **हम द्रव्यानुयोग की अपेक्षा गुणस्थानों का विभाजन निम्न प्रकार कर सकते हैं। मिथ्यात्व गुणस्थान से तीसरे मिश्र गुणस्थानपर्यंत नियम से शुभ और अशुभोपयोग ही होते हैं।**

पेज नंबर १५२ लास्ट लाइन हमने पढ़ी अनिलभाई, अभी हम १५३ के फर्स्ट लाइन पर आये हैं। क्या कहा ? मिथ्यात्व गुणस्थान से तीसरे मिश्र गुणस्थानपर्यंत नियम से शुभ और अशुभ उपयोग ही होते हैं। आगे क्या बताते हैं ? चौथा तथा पांचवां- **चौथे तथा पांचवें गुणस्थानों में** क्या-क्या हो गया ? शुभ भी है, अशुभ भी है और शुद्ध भी है। यानी वहां **शुभोपयोग** है, **अशुभोपयोग** है **और शुद्धोपयोग** इसतरह के **ये तीन उपयोग रह सकते हैं। छठे गुणस्थान में मात्र शुभोपयोग** ही है और **सातवें गुणस्थान से लेकर आगे के सर्व गुणस्थानों में मात्र शुद्धोपयोग ही रहता है।** अभी देखो यहां केवल शुद्धोपयोग रहता है कह रहे हैं और फिर यह भी आपको पता है कि यह द्रव्यानुयोग की अपेक्षा से हम कह रहे हैं और करणानुयोग की अपेक्षा से कहेंगे तो चौथे से लेकर दसवें तक उसमें से हम पहले को छोड़ देंगे। विशेषरूप से तो यह बात है कि छठे से, सातवें से लेते हैं; सातवें से लेकर दसवें तक वहां शुद्धोपयोग भी है और शुभोपयोग भी चल रहा है क्योंकि अबुद्धिपूर्वक राग की बात है, वह बात यहां पर उन्होंने नहीं बतायी है। अभी क्या कहते हैं ? **प्रमत्तसंयत यह छठवां गुणस्थान**

शुद्धपरिणति सहित कैसा है ? **शुभोपयोगरूप है। यद्यपि यह दशा मुनिजीवन में** अवश्यम्भावी **है, तथापि बंधकारक है।** यानी मुनिदशा में छठवां गुणस्थान आता ही आता है लेकिन उस गुणस्थान में उन्हें विशेषरूप से बंध होता है।

अब आगे, मुक्ति जो बोल्ड लेटर है न, **मुक्ति प्राप्त करने के पूर्व अनिवार्य गुणस्थानों के संबंध में यहां थोड़ा विचार करते हैं।** यानी क्या कहते हैं ? किसीको मोक्षमार्ग में आगे बढ़ना है तो उसको कौन-कौनसे गुणस्थान होते ही होते हैं और उन गुणस्थानों के बिना वह ऊपर जा सकता है कि नहीं - इस बात का यहां विवेचन होगा। हमने कितने गुणस्थान देखे थे टोटल ? चौदह। उन चौदह में से कौन-कौनसे गुणस्थान मोक्षमार्ग में आते ही हैं - इस बात का यहां विवेचन होगा। कई-कई गुणस्थान ऐसे हैं कि वह मोक्षमार्ग में किसीके आवे भी नहीं। तो वे कौनसे हैं उसका यहां विवेचन कर रहे हैं। बहुत इंटरेस्टिंग है। देखो क्या कह रहे हैं ? मुक्ति प्राप्त करने के पूर्व अनिवार्य गुणस्थानों के संबंध में यहां थोड़ा विचार करते हैं।

अनेक जीव दूसरे सासादन गुणस्थान को प्राप्त किये बिना भी मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। कौनसा गुणस्थान छोड़ा हैं ? बोलो-बोलो, *श्रोता: सासादन।* अरे भाईसाहब मैं पूछ रहा हूं यह सासादन गुणस्थान की बात की, उसके पहले वह नहीं होगा तो चलेगा ऐसा कौनसा गुणस्थान छोड़ा मोक्षमार्ग में ? *श्रोता: पहला।* पहला ? मिथ्यात्व की बात नहीं करी, डायरेक्ट दूसरे की बात करी। इसका अर्थ क्या है ? जो मोक्षमार्ग में अग्रेसर होनेवाला है वह मिथ्यात्वी होना ही चाहिये। पहले यह बात रखो। अब वह दूसरे में नहीं जायेगा तब भी मोक्षमार्ग में आगे बढ़ सकता है यह बात बताना चाहते हैं। फिर क्या कहते हैं ? तीसरा गुणस्थान अभी वह पूरा नहीं पढ़ा है। अनेक जीव दूसरे यानी सासादन गुणस्थान को प्राप्त किये बिना भी मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। **क्योंकि जो जीव औपशमिक सम्यक्त्व के साथ चौथे आदि ऊपर के गुणस्थानों से पतित होता है, वही दूसरे गुणस्थान में आता है। ऐसे उपरिम** यानी ऊपर के **गुणस्थानों से सासादन में पतित न होनेवाले अनेक जीव मोक्ष जा सकते हैं।** इसीलिये यानी **अतः दूसरा गुणस्थान अनिवार्य नहीं है।** वह होना ही चाहिये ऐसा नहीं है। तो चौदह में से एक को हटा दिया।

अब आगे, **तीसरा गुणस्थान भी अनिवार्य नहीं है; इस तीसरे गुणस्थान में**

प्रवेश किये बिना भी मुक्ति संभव है; क्योंकि यदि जीव पहले गुणस्थान में से ही चौथे गुणस्थान में आता है अथवा पांचवें, सातवें में आता है तो छठे-सातवें में आत्मानंद का रसपान करते-करते नीचे गमन किये बिना ही मुक्ति को प्राप्त कर सकता है। अतः तीसरा गुणस्थान भी अनिवार्य नहीं है। अनिवार्य यानी वह होना ही चाहिये ऐसी कोई बात नहीं है। मतलब दो गुणस्थान को उड़ा दिया- पहले दो नंबर का सासादन सम्यक्त्व, उसके बाद तीसरा सम्यग्मिथ्यात्व भी नहीं होगा, मोक्षमार्ग में आवे नहीं ऐसा भी हो सकता है। अब आगे क्या कह रहे हैं ? अभी यह तो सरप्राइज़िंग बात है देखो-देखो।

चौथे अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान की प्राप्ति के बिना भी जीव मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है। और हम तो सम्यक्त्व के लिये पसीना बहे इतने परेशान हो जाते हैं। तो कह रहे हैं **क्योंकि अनादि मिथ्यादृष्टि मिथ्यात्व गुणस्थान से सीधे** अच्छा अनादि से जो मिथ्यात्व गुणस्थान है उससे सीधे **सातवें अप्रमत्त में आकर छठे-सातवें में झूलते हुये आगे श्रेणी मांडकर मुक्त हो सकता है। अतः मुक्ति के पूर्व अविरतसम्यक्त्व चौथे गुणस्थान की अनिवार्यता नहीं है।** अब आगे चौथा नंबर का पॉइंट- **यदि द्रव्यलिंगी मुनिराज अनादि मिथ्यादृष्टि मिथ्यात्व गुणस्थान से ही सातवें अप्रमत्तसंयत में जाते हैं और छठे-सातवें में हजारों बार झूलते हुये श्रेणी मांडकर मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं तो उन्हें पांचवां देशविरत गुणस्थान भी अनिवार्य नहीं है।** देखो कितने-कितने, २, ३, ४ और ५ ये गुणस्थान आपको मिलने ही चाहिये ऐसा नहीं है। तो क्या करना साहब ? अरे डायरेक्ट सातवें में जा न भाई ! छठा-सातवां, छठा-सातवां होकर आगे बढ़ेगा। देखो और क्या-क्या बताते हैं।

अब कह रहे हैं **यदि मुनिराज उपशमश्रेणी पर आरोहण करते हैं तो ही उपशांतमोह नामक ग्यारहवें गुणस्थान की प्राप्ति होती है। जो मुनिराज उपशमश्रेणी में आरोहण न करते हुये मात्र** यानी सिर्फ **क्षपकश्रेणी पर ही आरोहण करते हैं।** यानी क्षपकश्रेणी मांडते हैं, आरोहण करना यानी चढ़ना। **तो उन्हें उपशांतमोह नामक गुणस्थान की प्राप्ति होती ही नहीं; इसलिये ग्यारहवां गुणस्थान भी अनिवार्य नहीं है।** और उपशमश्रेणी के प्रथम तीन गुणस्थान भी अनिवार्य नहीं है। यानी उसको ८, ९, १० और ११। पहले कितने देखे थे हमने ? २, ३, ४, ५ अभी अब कह रहे हैं ८, ९, १०, ११। यानी कितने गुणस्थान हट गये ? आठ। ये

किसीके लिये मोक्षमार्ग में नहीं आये ऐसा भी हो सकता है। ख्याल में आया ? तो अभी आगे क्या बताया ? **इसतरह संक्षेप में दूसरा, तीसरा, चौथा, पांचवां** और बीच में लिखे नहीं हैं लेकिन उपशमश्रेणी के आठवां, नौवां, दसवां, **ग्यारहवां इन पांचों गुणस्थान के बिना तो कदाचित् जीव मुक्ति प्राप्त कर सकता है। लेकिन छठे प्रमत्तसंयत गुणस्थान के बिना तो कोई जीव मुक्ति प्राप्त कर नहीं सकता।**

तो इसका अर्थ क्या बताया उन्होंने ? **अर्थात्** मिथ्यात्व**,** अभी आपको बताना है कि नंबर ऑफ़ गुणस्थान। कौनसा नंबर है ? मैं पढ़ूंगा आपको नंबर बोलना है सबको। **मिथ्यात्व,** *श्रोता: मिथ्यात्व।* **प्रमत्तविरत,** *श्रोता: प्रमत्तविरत।* अरे एक दम ठंडे हो गये। छठवां बोलो सब लोग, अभी मैं नाम बोलूंगा तो आपको नंबर बताने हैं। **अप्रमत्तविरत** *श्रोता: सात।* **और क्षपकश्रेणी के चारों गुणस्थान** कौनसे-कौनसे ? आठ, नौ, दस, बारह। *श्रोता: आठ, नौ, दस, बारह।* और क्या कहते हैं ? **सयोगकेवली और अयोगकेवली**, **इन नौ गुणस्थानों के बिना जीव मुक्त नहीं हो सकता।** देखो-देखो क्या बात कही ? शुरू में डायरेक्ट, पहले से सातवें में जायेगा, फिर छठे में आयेगा- तीन हो गये। फिर आठ, नौ, दस, बारह; कितने हुये ? सात हुये। फिर तेरह और चौदह यानी यह किसीको मोक्ष जाना है तो अन्य गुणस्थानों को छोड़ते हुये, यह जीव डायरेक्ट नौ गुणस्थानों में से मोक्ष जा सकता है। अभी देखो यह बात हमने देखी।

अभी मैं आपको कुछ और बात बताना चाहता था। ख्याल में आया न ? तो यह जो मुनिराज जिन्हें हम कहते हैं, उनके तो अट्ठाईस मूलगुण तो होते ही हैं। यह अट्ठाईस मूलगुणों के नाम कौन बताना चाहेगा ? अट्ठाईस मूलगुणों के नाम जानते हैं आप ? हां प्रमोदजी आप जानते हैं ? नहीं, कोई बात नहीं, लेकिन मुख्य-मुख्यरूप से तो आप बता पायेंगे ? *श्रोता: पांच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति, छह आवश्यक।* पांच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति, अच्छा हां और ठहरो-ठहरो, अरे उनको बोलने दो। प्रमोद नाम तो मेरे हिसाब से पुरुषों का होता है। हां तो आप बिलकुल मत बोलना, आपसे जब मैं पूछूंगा तो कोई हाथ नहीं उठता है। अब वह बोल रहे तो उनको बीच में डिस्टर्ब भी कर रहे हैं आप या प्रॉम्प्ट कर रहे हैं मैं तो समझ नहीं पा रहा हूं। हां फिर से बोलना साहब- पांच महाव्रत, पांच समिति, कितने ? तीन गुप्ति अब कितने हो गये ? तेरह। हमको अट्ठाईस गिनाने हैं। छह आवश्यक, कितने हो गये ? आप गिनो साहब। तेरह और छह उन्नीस। हां, यानी कहीं न कहीं आपकी गलती हो रही है।

अरे भैया यह तो बाह्य आचरण है, व्यवहार से उनके जो कोई मूलगुण कहे हैं वही हमें पता नहीं हैं तो हम मुनि का स्वरूप कैसा निश्चित करेंगे ? हे द्रव्यलिंगी-द्रव्यलिंगी ! अरे द्रव्यलिंगी का; द्रव्यलिंग क्या होता है इसको तो तू पहले पहचान। अरे हमें तो उनके अट्ठाईस मूलगुणों के नामों का पता नहीं हैं। ख्याल में आया ? और हम इसको यह बराबर है; यह खोटा है; यह अच्छा है; यह अच्छा है वह... अरे कम से कम कुछ तो नहीं, कोई परिग्रह नहीं है भाई। सिर्फ वह तो बात बाद में आयेगी सातवें में। अभी यहां कह रहे हैं अट्ठाईस मूलगुण जो हैं उनके नाम तक हमें याद नहीं हैं तो हम स्वरूप कैसा नक्की करेंगे ? गुरु का स्वरूप जो होता है वह नक्की किये बिना सम्यग्दर्शन होगा क्या ? मैं फिर से बोलता हूं, हमें दूसरे को सुधारना नहीं है, दूसरे की टीका नहीं करनी है। हमें स्वरूप निश्चित करना है, हमारा श्रद्धान सही करना है। ख्याल में आया ?

अभी महिलाओं में से कौन बोलना चाहता था ? हां, आप-आप नहीं, हां बहुत अच्छा एक है, दो है, तीन हैं, हमारी बहन चार हैं, ये एक पांच हैं। प्रमिला बहन सेलूवाले आप बतायेंगे ? *श्रोता: पांच महाव्रत, पांच समिति, पांच इन्द्रियविजय, छह आवश्यक और सात शेष गुण।* पांच महाव्रत, पांच समिति, पांच इन्द्रियविजय, कितने हो गये ? गिनना भाई पंद्रह; शाबाश, छह आवश्यक और सात शेष गुण। हां यह टोटल २८ हुये। अभी पांच महाव्रत में कौन-कौनसे महाव्रत होते हैं ? यह तो हम बाद में देखेंगे, हां, अपने को अभी रुकना है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

२१. प्रमत्तविरत गुणस्थान, अप्रमत्तविरत गुणस्थान

अब तक हम छठे गुणस्थान के अभ्यास में आ पहुंचे हैं और यह मुनि जीवन में आवश्यक ऐसा एक गुणस्थान है। क्योंकि मुनि इस गुणस्थान में आते ही हैं। हमें मालूम है कि भरत चक्रवर्ती ने भी जब राजपाट छोड़ा और कुछ ही अंतर्मुहूर्त में वे केवलज्ञानी हुये तो उनको भी अनेकों बार छठे-सातवें, छठे-सातवें गुणस्थान में झूलना पड़ा यानी एक आवश्यक ऐसा यह गुणस्थान है और उसका नाम है प्रमत्तविरत।

देखो, बात तो यह है यह प्रमाद सहितवाला गुणस्थान होने पर भी यहां मुनियों के द्वारा अलौकिक कार्य किया जाता है। आचार्य जो होते हैं वे इस छठे गुणस्थान में ही दीक्षा, शिक्षा आदि देने का कार्य करते हैं। जो उपाध्याय परमेष्ठी होते हैं वे इसीमें पठन-पाठन का कार्य करते हैं, स्वयं भी पढ़ते हैं और औरों को यानी मुनिसंघ के जीवों को भी पढ़ाते हैं। यहां पर केवल शुभोपयोग का ही कार्य होता है और इसके साथ-साथ मुनिदशा में जीव अट्ठाईस मूलगुण पालन करता है। ये अट्ठाईस मूलगुण क्या होते हैं ? यह हम देख रहे थे। पहले उनके मुख्यतया जो हमने नाम देखे थे, कौन रिपीट करना चाहेगा ? वह जो बहन बतानेवाली थी वह अभी आयी नहीं कि आ गयी है ? हां बहुत अच्छा, बोलो बहन, *श्रोता: पांच महाव्रत, पांच समिति, पांच इन्द्रियविजय, छह आवश्यक और सात शेष गुण।* पांच महाव्रत, पांच समिति, पांच इन्द्रियविजय, छह आवश्यक, सात शेष गुण। ये बात आपने बतायी, बहुत अच्छा। यानी यह अट्ठाईस मूलगुण तो पले ही जाते हैं, पालने नहीं पड़ते। इसमें क्या अंतर हो गया ? यह पालने का राग उन्हें करना नहीं पड़ता। जो वीतरागता उनमें वर्त रही है, उस समय उन्हें इस प्रकार के शुभभाव हेय बुद्धि से आते हैं। हेय बुद्धि यानी त्यागने योग्य, त्याज्य-छोड़ने योग्य। वे यह नहीं चाहते कि राग मुझे आ जाये।

हमने देखा था कि छठे गुणस्थान में संज्वलन कषाय और नौ नोकषाय का तीव्र उदय है। तीव्र उदय है तो वहां आकुलता होगी, मंद उदय होगा तो वहां आकुलता कम होगी। फिर भी यह ऐसे परिणाम उनको आते हैं और उन परिणामों में जगत का कल्याण हो जाये; ऐसे भाव सहजरूप से आ जाते हैं। जो हमने पहले पांच महाव्रत देखे, वे पांच महाव्रत के नाम क्या हैं ? आप जानती हैं बहन ? नहीं जानती हैं। पीछे कोई जानता है ? हां बोलो जी ? *श्रोता: अहिंसा महाव्रत, सत्य महाव्रत, अचौर्य महाव्रत,*

ब्रह्मचर्य महाव्रत, अपरिग्रह महाव्रत। अहिंसा महाव्रत, सत्य महाव्रत, अचौर्य महाव्रत, ब्रह्मचर्य महाव्रत, अपरिग्रह महाव्रत। देखो कभी-कभी भूल से हो ! भूल से हां, अब्रह्मचर्य महाव्रत बोला जाता है और परिग्रह महाव्रत बोला जाता है तो बहुत गड़बड़ी हो जायेगी। हां, ख्याल में आया ? हमें भी याद करते समय अर्थ को बिलकुल ध्यान में रखते हुये याद करना चाहिये नहीं तो अर्थ का अनर्थ जाता है। हां तो ये तो महाव्रत हैं।

देखो, ये पांच छोड़कर बाकी के जो तेईस मूलगुण हैं, वे इन पांच महाव्रतों की पुष्टि करनेवाले हैं, उनको सार्थक बनानेवाले हैं। जैसे हम देखते हैं पांच समिति होती हैं, वे पांच समिति में पहली समिति तो ईर्यासमिति है। ईर्यासमिति का अर्थ क्या है ? तो कहते हैं चार हाथ जमीन देखकर चलना। क्यों साहब ? चार हाथ जमीन देखकर क्यों चलें ? क्योंकि ५० फीट आगे कौनसा जीव वहां है और जिसे हमें टालकर आगे चलना है वह थोड़ी दिखायी देगा ? ख्याल में आया न ? इसलिये चार हाथ। हाथ यानी मान लो यह यहां से यहां तक - डेढ़ फीट गिन लो न, फॉर द टाइम बीइंग। तो छह फीट यानी उनकी हाइट भी छह फीट होगी, पांच फीट होगी, साढ़े पांच फीट होगी तो यहां से वहां तक देखने में सुविधा होती है और स्पष्टता भी होती है। इसलिये चार हाथ जमीन देखकर चलना। तो यह ईर्यासमिति है। अगर ऐसा कोई जीव न करे तो क्या होगा ? तो जीवों की हिंसा होगी और मुनिराज कैसे हैं ? त्रस जीवों की हिंसा पंचम गुणस्थानवर्ती जीवों से भी नहीं होती मतलब अहिंसा पली जाती है, हिंसा टाली जाती है और मुनिराजों के तो स्थावर जीवों की हिंसा भी नहीं होती।

इसको हम थोड़ासा और अन्य पुस्तक के आधार से देखेंगे। क्योंकि इसमें से देखेंगे तो हम वह पूरे के पूरे जल्दी-जल्दी ख़तम करेंगे। क्योंकि अभी तक हमने आधे भी गुणस्थान पार नहीं किये हैं। लोगों का आरोप है कि आप यहां कितने दिन हमको रखनेवाले हो ? घबराना मत, परसों से अपना रोटी-पानी बंद होनेवाला है। क्या ? अभी यहां क्या कहते हैं ? देखो जो पांचवें गुणस्थानवर्ती जीव है, वह बारंबार शुद्धोपयोग में जाता है। उसकी आत्मस्थिरता अधिक समय तक टिकती है और उसे दिगम्बर मुनिदीक्षा धारण करने के भाव आते हैं। यह अपनी पुस्तक में कहीं पर नहीं है, मैं इस दूसरी पुस्तक में से पढ़ रहा हूं। क्या नाम है ? करणानुयोग परिचय जो उज्ज्वला ने लिखी है। अब एक दफे मेरे ऊपर ऐसा आरोप किया था कि आप उनको उज्ज्वला कैसे बोलते हैं ? वह हमारी गुरु हैं और आप उनको ऐसा बोलते हैं ? अरे भाई, वह तेरी

गुरु हैं हम कहां नहीं बोलते हैं ? मेरी पत्नी है तो मैं उसको उसी नाम से बोलूं या उज्ज्वलाजी ? यह दूर का अंतर हो गया मेरे लिये। क्यों ? क्या करें ? अब जो बैठा है मुंह में वही आयेगा न। क्या कह रहे हैं ?

देखो-देखो, कह रहे हैं उसे दिगम्बर मुनिदीक्षा धारण करने के भाव आते हैं तब वह जीव नग्न दिगम्बर मुनिदीक्षा अंगीकार करता है। देखो अभी यह जीव पंचम गुणस्थानवर्ती है, यह देखो 'रॉयल' वे यानी जो राजमार्ग है वह ऐसा ही होता है कि कोई भी मिथ्यादृष्टि जीव पहले चतुर्थ गुणस्थान की प्राप्ति करता है। बाद में पंचम गुणस्थानवर्ती हो जाता है और जभी उसको ऐसा विश्वास होने लगा, कषायों की मंदता होने लगे और स्वरूप में स्थिरता अधिक दृढ़ता से होने लगे तो उसे मुनिदीक्षा लेने का भाव सहजरूप से आता है। उस समय वह क्या करता है ? वह जीव नग्न दिगम्बर मुनिदीक्षा अंगीकार करता है। वह प्रतिज्ञापूर्वक, क्या कहा ? प्रतिज्ञापूर्वक पांच महाव्रत धारण करता है। अट्ठाईस मूलगुण पालन करने की वह प्रतिज्ञा लेता है।

देखो, यह प्रतिज्ञा लेता है या प्रतिज्ञापूर्वक वैगेरह की बात होती है तो मैं यह बताना चाहता हूं कि कोई लोग ऐसे होते हैं कि कहते हैं हम तो रात को भोजन नहीं करते हैं। क्यों साहब ? नहीं-नहीं हमने तो कई सालों से यह चालू रखा है। अच्छा आपने प्रतिज्ञा ली थी क्या भाई ? नहीं ली थी। क्यों साहब ? क्यों नहीं ली थी ? अरे अभी ठीक है हम बम्बई में हैं, घर में हैं। हमको तो टाइम टू टाइम खाना मिलता है,परंतु बाहरगांव जावें तो ? तो क्या होगा ? वहां समय पर भोजन नहीं मिलेगा तो ? क्योंकि हमारे जैसा दिन में भोजन करनेवाले थोड़े ही सब जगह होते हैं ? रात को वे भोजन करें तो हमारे लिये कौन बनायेगा ? तो देखो अभी भी जिसकी अंदर में ऐसी अभिलाषा है कि मेरा एक भी भोजन न छूटे। क्यों ? समझो एक दिन में एक भोजन छूट जायेगा तो कोई मरनेवाला थोड़ी है ! लेकिन अभी अंदर से तो ऐसी अभिलाषा है कि मुझे एक दिन तो कम से कम सहूलियत मिले। तो इसलिये मैं प्रतिज्ञा नहीं लेता। क्यों साहब ? अरे आप जानते नहीं हैं ? प्रतिज्ञा नहीं लेना गुनाह नहीं है - अपराध नहीं है लेकिन प्रतिज्ञा लेकर तोड़ना अपराध है। अच्छा इतना तू जानता है तो प्रतिज्ञा क्यों नहीं लेता है क्योंकि प्रतिज्ञापूर्वक तू अगर कोई क्रिया करेगा तो उसका तुझे उच्च प्रकार का पुण्य बंधेगा। यह पुण्य बांधने के लिये इन्ड्यूसमेंट नहीं हो रही है। लेकिन जो रीत होती है उसको हमें समझना चाहिये।

यहां क्या कहते हैं देखो ? अभी मेरे पास कथायें तो बहुत हैं, कथा नहीं, यह तो वास्तविकता है। आप जानते नहीं होंगे, मैं पहले यानी मेरे रिटायरमेंट के पहले, मैं फोटोग्राफी का व्यवसाय करता था, सुभाषभाई। तो क्या हो गया ? मुझे भावनगर के बाजू में कहीं एक जगह व्हिडिओ निकालने को बुलाया था। उस समय तो ८ एमएम पर फिल्मिंग करता था मैं। तो कुछ कारणवश वहां गये। वे दो भाई थे, उनके घर में कुछ खजाना है, ऐसा उनके सपने में आता था तो दोनों भाई मुझे लेकर गये। पहले दिन तो उनको कुछ प्राप्त हुआ नहीं है। तो फिर मुझे बोले चलो साहब, रात के आठ बज गये है, चलो भोजन करने के लिये चलो। मैंने कहा नहीं साहब मैं भोजन नहीं करता हूं। क्यों-क्यों ? मैं जैन हूं और मैं सूर्यास्त के बाद रात में भोजन नहीं करता। क्या बात करते हो ? हम भी तो जैन हैं। होंगे साहब हम कहां मना करते हैं कि आप जैन हो कि नहीं हो ? मैं तो नहीं करूंगा। अरे-अरे बहुत ख़राब बात हुयी। दूसरे दिन उन्होंने पांच बजे मेरे लिये खाने का प्रबंध किया। बोलो ? हमें तो अपने पुण्य पर भी भरोसा नहीं है। हमें लगता है अरे एक दिन का खाना नहीं मिले तो मेरा क्या होगा ?

यहां तो कहते हैं प्रतिज्ञापूर्वक ही हमें कोई भी बात करनी चाहिये। व्रत इत्यादि जो कुछ हम लेते हैं; यह तो सदाचार है। प्रतिज्ञापूर्वक पांच महाव्रत धारण करता है। अट्ठाईस मूलगुण पालन करने की वह प्रतिज्ञा लेता है। वे अट्ठाईस मूलगुण इस प्रकार हैं- पांच महाव्रत, अभी आप सब लोग बोलेंगे ? क्योंकि मैं पूछनेवाला हूं यह जो हम डिव्हिजन देख रहे हैं न। तो सब लोग कहेंगे जो मैं पढ़ूंगा। पांच महाव्रत, *श्रोता: पांच महाव्रत।* पांच समिति, *श्रोता: पांच समिति।* पांच इन्द्रियविजय, *श्रोता: पांच इन्द्रियविजय।* छह आवश्यक, *श्रोता:छह आवश्यक।* सात शेष गुण। *श्रोता: सात शेष गुण।* तो समिति कितनी देखी थी भाईसाहब हमने ? *श्रोता: पांच।* पांच। और शेष गुण कितने देखे थे ? *श्रोता: सात।* हां बहुत अच्छा सात। और आवश्यक ? *श्रोता: छह।* छह। और महाव्रत ? *श्रोता: पांच।* अब कौनसा रह गया ? सब आ गये, अट्ठाईस के अट्ठाईस हो गये, बहुत अच्छा। तो किसको बताने का भाव है उन अट्ठाईस मूलगुणों को ? आपने हाथ उठाया न दीपकभाई ? नहीं, गलती हो गयी ? अच्छा अनिलजी आप बोले। *श्रोता: पांच महाव्रत, पांच समिति, पांच इन्द्रियविजय, छह आवश्यक, सात शेष गुण।* पांच महाव्रत, पांच समिति, पांच इन्द्रियविजय,छह आवश्यक, सात शेष गुण।

यह मूल-मूल ओरिजिनल तो हमारे याद में आ गये। अभी जो उसके सब

डिव्हिजन हैं, पेटा भेद हैं वे भी अभी याद हो जायेंगे, उसमें कौनसी बड़ी बात है ? अभी हम याद नहीं करायेंगे, घबराना मत। नहीं तो आये हुये लोग मैदान छोड़कर भाग न जाये। पहले से ही आधे हो गये न। क्या कह रहे हैं ? देखो, अहिंसा महाव्रत, सत्य महाव्रत, अचौर्य महाव्रत, ब्रह्मचर्य महाव्रत और परिग्रहत्याग महाव्रत ये पांच महाव्रत हैं। चरणानुयोग में इन सब व्रतों और मूलगुणों का विस्तृत वर्णन है। समिति का अर्थ है प्रवृत्ति। प्रमाद रहित यत्नाचार सहित प्रवृत्ति मुनि के लिये आवश्यक है। मुनि जीवन में मुनि की प्रवृत्ति यानी आहार-विहार आदि क्रियायें इस प्रकार होती हैं कि जिसमें अहिंसा महाव्रत पले। देखो यह समितिवाली जो कोई बातें बतायी हैं वे काहे के लिये ? उससे मुनियों का अहिंसा महाव्रत जो है उसका दृढ़ता से पालन हो जाये।

कहते हैं पांच समिति कौनसी हैं ? तो ईर्यासमिति, भाषासमिति, आप बोलेंगे, बहुत अच्छा मैं रिपीट करूंगा। ले लो, बहुत अच्छा। यह आपका उत्साह देखकर मुझे भी बहुत अच्छा लगा। ईर्यासमिति बोलो, *श्रोता: ईर्यासमिति।* भाषासमिति, *श्रोता: भाषासमिति।* एषणासमिति, *श्रोता: एषणासमिति।* आदाननिक्षेपण समिति, *श्रोता: आदाननिक्षेपण समिति।* प्रतिष्ठापनसमिति, *श्रोता: प्रतिष्ठापनसमिति।* देखो यह समिति हमने पांच प्रकार की देखी, पांच महाव्रत भी पांच प्रकार के देखे। पांच महाव्रत तो सबको याद हैं। अहिंसा महाव्रत, सत्य महाव्रत,अचौर्य महाव्रत, ब्रह्मचर्य महाव्रत और अपरिग्रह महाव्रत। समिति भी पांच प्रकार की हमने देखी। पहली कौनसी ? *श्रोता: ईर्यासमिति।* दूसरी कौनसी ? *श्रोता: भाषासमिति।* भाषासमिति। पांचवीं ? *श्रोता: प्रतिष्ठापनसमिति।* हां, और चौथी ? *श्रोता:आदाननिक्षेपणसमिति।* और तीसरी ? तीसरी बहन, *श्रोता: एषणासमिति।* एषणासमिति। सबको याद है। बहनें तो बिलकुल याद रखती हैं। यह पांच कौन बताना चाहेगा ? सुरेशभाई आप बतायेंगे ? हां, ईर्यासमिति बोलो, *श्रोता: ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदाननिक्षेपणसमिति और प्रतिष्ठापनसमिति।* भाषासमिति, एषणासमिति, आदाननिक्षेपणसमिति और प्रतिष्ठापनसमिति। बहुत अच्छा !

देखो हम अगर सीखना चाहें न तो बहुत आसान है। अरे मैं स्वयं तो ज्ञान का पिंड हूं, मैं तो ज्ञायक स्वभावी हूं, मैं तो केवलज्ञान प्राप्त करूं ऐसी मेरे में ताकत है, केवलज्ञान मेरा स्वभाव है। फिर भी हमें ये पांच नाम क्यों याद नहीं रहते हैं, ऐसा अपने को ही प्रश्न पूछना। क्या कह रहे हैं ? देखो, प्रासुक और जीवरहित स्थान पर चार हाथ

जमीन देखकर चलना, इसीका नाम ईर्यासमिति है। यानी हमारे में और उनमें क्या अंतर है ? तो हम क्या करते हैं ? जब चलते हैं तो रास्ते में बम्बई की बात कर रहा हूं, आपके गांव की बात तो मुझे पता नहीं है। तो होर्डिंग्स यानी कौनसे पिक्चर की पाटी लगी हैं ? इधर देख, उधर देख, उधर देख, उधर देख और नीचे क्या हो रहा है ? भगवान जाने ! क्यों ? ऐसा मुनिराज चलते होंगे क्या ? बिलकुल नहीं। हम रास्ते में किसीके साथ चलते हैं तो उसके बगल में हाथ डालेंगे क्या बोलते हैं ? ऐसा करके गप्पा-टप्पा मारते-मारते चलें तो नीचे क्या हो जाता है ? मालूम नहीं है। मुनिराज कभी भी चलते वक्त किसीसे बात नहीं करेंगे क्योंकि उनका पूरा ध्यान तो मेरे द्वारा, मेरे निमित्त से किसीका मरण नहीं हो रहा है न, इस पर होगा। इसलिये चार हाथ जमीन देखकर चलते हैं।

आगे और क्या बताया ? प्रासुक और जीवरहित स्थान पर, प्रासुक यानी जो मार्ग है उस मार्ग पर पहले से कोई चलकर निकल गये हैं ऐसा मार्ग और कैसा है ? वह जीव रहित है; ऐसे मार्ग पर वे चलेंगे। ऐसा कभी नहीं सोचेंगे क्या ? कि अरे अभी तो गर्मी के दिन हैं सुबह-सुबह जल्दी-जल्दी चार-पांच बजे उठकर निकलेंगे तो जहां जाना है वहां तो ठंडे- ठंडे जमीन पर चलकर हम जल्दी पहुंच जायेंगे; नहीं तो पैर जलेंगे। ऐसा विचार उनके मन में कभी भी नहीं आयेगा। ख्याल में आया ? यहां यह समझा रहे हैं कि ईर्यासमिति का अर्थ क्या है ? कि जो कुछ उनकी प्रवृत्ति हो रही है उस प्रवृत्ति से हिंसा नहीं होती है न, इस बात का विशेष ख्याल है। इसीलिये तो यह समिति उनको अहिंसा महाव्रत पालन करने में वह विशेषरूप से सहायभूत है।

अब आगे, हित-मित प्रिय वचन बोलना वह भाषासमिति है। हित यानी काहे का हित ? कि जो सुननेवाले जीव हैं उनका आत्मकल्याण हो यही हित है। ख्याल में आया ? मित यानी क्या ? मर्यादित-अल्प शब्दों में बात करेंगे, प्रिय यानी मीठे वचन हो, प्रिय वचन हो क्योंकि किसीका दिल दुखाना भी हिंसा है। वह मेरे जैसे ऐसी कड़क भाषा में नहीं बोलेंगे। किसीका दिल दुःखे ऐसा नहीं करेंगे। बिलकुल शांति से हित-मित-प्रिय वचन बोलेंगे। बड़ी जोर-जोर से आवाज कर-कर के कभी नहीं बोलेंगे। क्योंकि हित-मित प्रिय वचन होना चाहिये। तो कहते हैं दूसरों की निंदा करने, अपशब्द बोलने, मन दुखानेवाली बात कहने का उन्हें भाव ही नहीं आता। अब कहते हैं जो जीव हर अंतर्मुहूर्त में शुद्धोपयोग में जाता हो उसकी वाणी में भी शुद्धात्मा की ही कथा-वार्ता

होती है। यहां क्या बताना चाहते हैं ? पन्नालालजी आपको समझ में आया ? मान लो आप यहां से कश्मीर गये, वापस आये तो यहां आने के बाद कौनसी बात करेंगे ? अरे कश्मीर में तो ऐसा है, इतनी ठंडक है, इतना बर्फ है, ॲपल फ़ोकट में मिलते हैं, वहां ऐसा होता है, वैसा होता है। जो कुछ वहां की बातें हैं। शिमला गये तो शिमला की और अमेरिका गये तो अमेरिका की ही बात चलेगी।

हमारे मुनिराज क्या कर रहे हैं ? वे तो एक-एक अंतर्मुहूर्त में स्वरूप में लीनता कर रहे हैं और अपने स्वभाव का इतना वेदन कर रहे हैं, अतीन्द्रिय आनंद का रस ले रहे हैं। तो उनकी वाणी में आत्मा के बारे में बातें आयेगी या सांसारिक बातें आयेगी ? कि बहू ने सास के साथ कैसा संबंध रखना ? भाई ने भाई के साथ कैसा व्यवहार रखना ? पिता ने बेटे के साथ बेटे ने... ऐसी बातें आयेंगी ? यहां क्या कह रहे हैं ? जो हर अंतर्मुहूर्त में अपने स्वरूप में जाते हैं वे तो आत्मा के ही बारे में बोलेंगे। वह जो अतीन्द्रिय आनंद उन्होंने चखा है वह सबको प्राप्त हो इसलिये वे सबको भी उसीका उपदेश देंगे। क्या कह रहे हैं ? देखो, यहां समझा रहे हैं। जो जीव हर अंतर्मुहूर्त शुद्धोपयोग में जाता हो उसकी वाणी में भी शुद्धात्मा की ही कथा-वार्ता होती है। दुनियाभर की बातें करने में उन्हें कोई रस नहीं लगता। अरे रस ही नहीं लगता है तो बात क्या करेंगे ? कोई ऐसे दुनियाभर की रस भरी बातें करते हो तो समझना कि वहां आत्मा का अनुभव है नहीं। ख्याल में आया ? यह तो सहज स्वाभाविक बात है।

एषणासमिति कैसी है ? आहार संबंधी है। मुनि जो आहार ग्रहण करते हैं वे ध्यान और स्वाध्याय की स्थिरता के हेतु, शरीर की स्थिरता के लिये करते हैं, जिव्हा इन्द्रिय की लोलुपता के लिये नहीं करते। क्या बताना चाहते हैं ? देखो आपको तो यह बात निश्चित परिचित ही होगी कि मुनिराज जो होते हैं वे अगर आहार करेंगे तो वे एक दिन में एक ही बार आहार करते हैं और वह भी खड़े-खड़े आहार लेते हैं। यह बात अभी आयेगी और वे रोज आहार करे ऐसा भी नहीं है। उन्होंने कोई ऐसा व्रत लिया है, उपवास करना है, जो कुछ उनका चलता होगा वह तो चलेगा ही चलेगा। तो कहते हैं जब आहार लेते हैं तो; मैं मेरे बचपन की बात बताता हूं, आप अपनी समझ लेना। मैं जब छोटा था तब देखा देखी - हमारे घर में किसीने उपवास किया है तो हमसे तो उपवास होता ही नहीं था, हम एकाशन करते थे। एकाशन समझते हैं न आप ? एक टाइम खाना खाने का। तो हमारी मम्मी हमको बोलती अरे कल तेरा एकाशन है, दो

रोटी और खा ले और जिस दिन एकाशन होगा अरे थोड़ा और खा ले शाम को भोजन नहीं करनेका है तुझे। हम दबादब दो-चार रोटियां ज्यादा भी खाते थे।

मुनिराज कैसा करते हैं ? हम मान लेते हैं न हमारे पेट के हमने चार डिव्हिजन कर दिये, चार भाग कर दिये। उसमें तो दो भाग तो अन्न से भरते हैं और एक भाग पानी पीते हैं और एक भाग - वन फोर्थ पोर्शन - कुछ नहीं, खाली रहता है। क्यों ऐसा क्यों ? देखो अभी आप ही अपनी सोच लेना। कल आपने भरपेट लापसी खायी तो हर दो मिनट बाद पानी पीने का मन होता है। क्यों साहब ? अरे आज इतना हो गया साहब, जरा पानी। उनको तो मालूम है एक ही बार पानी पीना है जब भोजन हो रहा है। बाद में दूसरे दिन में जाकर भोजन करना है। इसलिये वे कभी भी पेट से अधिक यानी आधे पेट से अधिक भोजन नहीं करते। क्या कहा ? शरीर की स्थिरता के हेतु लिये यानी क्या ? अब आहार समझो उन्होंने नहीं लिया तो शरीर में कमजोरी आयेगी और उसके कारण क्या होगा ? आकुलता बढ़ेगी तो आत्मा में स्थिरता नहीं होगी। इसलिये कह रहे हैं वह ध्यान और स्वाध्याय की स्थिरता के हेतु शरीर की स्थिरता के लिये सीमित आहार करते हैं, जिव्हा इन्द्रिय की लोलुपता के लिये नहीं करते।

जब श्रावक शास्त्रोक्त विधि से यानी कैसा ? नवधा भक्तिपूर्वक आहारदान देते हैं तब मुनि ४६ दोष और ३२ अंतराय टालकर निर्दोष आहार ग्रहण करते हैं। हमने देशविरत गुणस्थान में उद्दिष्टत्यागप्रतिमा देखी थी। उस प्रतिमा के धारी श्रावक भी उनके उद्देश्य से बनाया हुआ आहार ग्रहण नहीं करते और उनके उद्देश्य से बनायी गयी वसतिका में नहीं रहते क्योंकि उसमें हिंसा की अनुमोदना का दोष लगता है। यहां तो मुनियों की बात है। उन्हें भी उद्दिष्टआहार का त्याग होता है। अब एषणासमिति में, उनके कर में जो हम अन्न देते हैं वे भी वे शोध-शोधकर; वहां ऊपर लिखा है न ? ३२ अंतराय और ४६ दोष को टालते हुये वे आहार ग्रहण करेंगे।

अब कहते हैं आदाननिक्षेपण समिति। यह आदाननिक्षेपण समिति में क्या है ? मुनि भले प्रकार अपनी आंखों से देख शोधकर पिच्छी से परिमार्जन करके किसी वस्तु, शास्त्र, कमण्डलु, पुस्तक आदि को उठाते या धरते हैं। स्थान का भले प्रकार शोधन कर, परिमार्जन करके वे रखते हैं। अभी हम अपनी भाषा में समझायेंगे – मान लो कि यह चश्मा हमने उतारा। अब मुनियों की बात करनी है, यह तो मैं मेरी बात बताता हूं।

तो हम कहीं भी छोड़ देते हैं। तो मुनिराज क्या करेंगे ? जो भी उनके हाथ में वस्तु है; शास्त्र है तो शास्त्र को उठाना है या पन्ना पलटाना है तो पहले पिच्छी से उसको परिमार्जन करते हैं। यानी वहां कोई जीवजंतु है नहीं न, हो तो अलग हो जाये, निकल जाये फिर उसको पलटाते हैं। अब वह पिच्छी जहां रखनी है तो वहां पर भी पहले उसको परिमार्जन करते हुये वहां रखते हैं। इसको क्या कहा ? आदाननिक्षेपण समिति। अब आगे, प्रतिष्ठापन समिति। इसका अर्थ है हरितकाय रहित और त्रसकाय रहित स्थान पर शरीर के मलमूत्र का क्षेपन करना। इस प्रकार से पांच समितियों का अर्थ हमने देखा।

अब कहते हैं स्पर्शनेन्द्रियविजय, रसनेन्द्रियविजय, घ्राणेन्द्रियविजय, चक्षुरिन्द्रियविजय और श्रोत्रेन्द्रियविजय पांच प्रकार के इन्द्रियविजय हैं। इन्द्रियविजय यानी क्या करना ? कि पांचों इन्द्रियों के जो विषय हैं उनमें किसी भी प्रकार से आसक्त नहीं होना, वही उनका विजय है। मुनि पांचों इन्द्रियों को अपने वश में रखते हैं, उनका निरोध करते हैं। यह तो बताने की, बोलने की बात है लेकिन उनके विषयों में रत नहीं होते। इन्द्रियों के विषयों में उन्हें आसक्ति नहीं होती। उनमें उन्हें राग भी नहीं होता और द्वेष भी नहीं होता। मुनि के षट् आवश्यक। मुनि अपने कर्तव्य प्रति दक्ष रहते हैं। आवश्यक कर्तव्य को आवश्यक कहते हैं। यह आवश्यक कर्तव्य यानी मुनि प्रतिदिन ये बातें नियमितरूप से करते हैं।

पहले हमने श्रावक के षट् आवश्यक देखे थे। याद है किसीको ? हां, बोलो ? *श्रोताः देवपूजा, गुरुपास्ति, स्वाध्याय, संयम, तप, दान।* देवपूजा गुरुपास्ति स्वाध्यायः संयमस्तपः। दानं चेति गृहस्थानां षट्कर्माणि दिने दिने॥ वह तो श्रावक की बात है, अभी यहां मुनियों की बात है। उनके आवश्यक कर्तव्य जो हैं वे इस प्रकार हैं उनके नाम। कहते हैं - सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव, वंदना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान और कायोत्सर्ग। अभी इसके डिटेल में नहीं जाते हुये हम आगे बढ़ेंगे। अब बाकी रहे सात मूलगुण; शेष सात मूलगुण जो हैं न उसमें कह रहे हैं - केशलोच, वस्त्रत्याग; वस्त्रत्याग का दूसरा ही नाम नग्नत्व है कहीं नाग्न्य लिखते हैं, अर्थ तो तीनों का एक ही है; अस्नान अर्थात् क्या ? स्नान का त्याग, भूमिशयन यानी भूमि पर उसे प्रासुक करके वहां वे शयन करेंगे। पांचवां है अदंतधोवन, अदंतधोवन यानी मुंह धोना यानी दांत वगैरह साफ करना वह भी वे नहीं करते।

अभी हमें ऐसा लगेगा यह कैसी बात है। अरे हम दिन में तीन बार तो कम से कम नहाते हैं। बिलकुल स्वच्छ होते हैं, शुचिर्भूत होते हैं और इनको एक बार ? वह भी नहीं। हम तो जब-जब खाना खाते हैं तब दंतधोवन यानी ब्रशिंग करते हैं। क्यों साहब ऐसा क्यों करते हैं ? आप समझते नहीं हैं क्या बात है ? अरे दांत में कहीं कुछ अटक गया, अन्न के कण वगैरह अटक गये तो दांत सड़ जाते हैं, जल्दी गिर जाते हैं। फिर वह क्या है डेंचर बिठाना पड़ता है। यानी तूने अपने को क्या माना है ? शरीर माना है। यह शरीर को कितनी भी बार आप नहलाओ तो उसमें से गंदगी ही बाहर आनेवाली है। लेकिन वह शरीर जो है वह मैं नहीं हूं ऐसी श्रद्धा तो चौथे गुणस्थान से ही हुयी है सम्यग्दृष्टि जीव को। मैं जुदा और यह शरीर जुदा ऐसी श्रद्धा, ऐसा ज्ञान और ऐसा अनुभव उनके तो चौथे से हुआ है। लेकिन अभी सातवें में तो इतनी उसमें गहरायी आयी है उस श्रद्धान में। शरीररूप मैं नहीं हूं तो शरीर का लालन, पालन, पोषण यह उनसे नहीं होगा। इसलिये ये जो बातें हैं और यह शरीर के लालन, पालन के लिये जो पानी वगैरह का इस्तेमाल होगा उससे जलकायिक जीवों की हिंसा होगी कि नहीं ? तो उनसे क्या अहिंसा महाव्रत पाला जायेगा ?

देखो, कितनी बातें एक से एक कनेक्टेड हैं लेकिन हमको यहां सोचने के लिये टाइम ही कहां है ? क्यों टाइम नहीं है ? क्योंकि पहले तो अट्ठाईस मूलगुण के नाम ही मालूम नहीं हैं। अदंतधोवन हो गया। अभी कहते हैं स्थितिभोजन, खड़े-खड़े आहार, खड़े-खड़े करपात्र भोजन और एक वक्त यानी उसका अर्थ क्या है ? दिन में एक बार आहार ग्रहण करना। इसतरह से हमने इन अट्ठाईस मूलगुणों के नाम और उनका स्वरूप इन शॉर्ट में देखने की कोशिश की।

अब कहते हैं मुनियों के आचार संबंधी अनेक नियम होते हैं और मुनिसंघ में उन नियमों का बड़ी सावधानीपूर्वक पालन किया जाता है। हम देखते हैं कि सैनिक शिक्षण यानी मिलिटरी ट्रेनिंग लेनेवाले व्यक्तियों को कठोर शासन एवं कानून का पालन करना पड़ता है। उसमें उन्हें बहुत मेहनत और कष्ट उठाने पड़ते हैं। देखो यह थोड़ीसी तुलना करने के लिये बात निकाली है। अब कहते हैं- परंतु मुनिजीवन कष्टदायक जीवन नहीं है। सम्यग्दृष्टि जीव निरंतर आत्मिक आनंद का उपभोग लेता है। इन मुनियों को इन्द्रियविषयों में कोई रस नहीं लगता। देह और राग से भिन्न अपने ज्ञानानंद में स्वभाव के अस्तित्व का भान उन्हें सदैव वर्तता है। इसलिये मुनियोग्य

क्रियाओं में उन्हें कष्ट या जबरन मेहनत नहीं लगती।

देखो हम कभी भी मुनि की अपेक्षा से जब सोचते हैं तो ऐसा लगता है अरे उनको तो खुले पांव चलना पड़ता है। ना चप्पल मिलती है, ना कुछ वस्त्र आदि हैं। उनको तो ऐसे नंगे पांव चलना पड़ता है। कितनी तकलीफ होती होगी ? यह कौन सोचते हैं ? हम। क्योंकि हमने क्या सोचा है ? मैं और शरीर एक है और उन्हें तो अंतर्मुहूर्त में अतीन्द्रिय आनंद का वेदन साक्षात् चल रहा है। शरीर से मैं जुदा हूं यह पक्का विश्वास हुआ है फिर शरीर का जो कुछ होना हो वह होगा। देखो यहां आपके सामने एक फोटो लगी है। उन मुनिराज के माथे पर सिगड़ी रखी है। तो उनको कुछ तकलीफ होती होगी कि नहीं ? अरे उनके ज्ञान में आया है कि मेरे पर उपसर्ग हो रहा है तो अपने स्वरूप में ऐसे गुप्त हो जायेंगे कि बाहर शरीर का, पुद्गल का जो होना हो सो होगा। वह मैं नहीं हूं ऐसा उनकी निश्चितरूप से श्रद्धा है। वे तो अन्य तरफ अपना उपयोग जा रहा है उसको समेटकर अपने स्वरूप में एकाग्र होंगे, हो सकता है कि उसी टाइम उनको केवलज्ञान भी हो जाये। ख्याल में आया ? ऐसी बात है।

यहां तो हमें ऐसा लगता है गुजराती में बोलूंगा तो मुझे अच्छा लगेगा। आप समझ जायेंगे। बेचाराओ- वे बेचारे; कौन ? मुनिराज ? इ बेचाराओ, उघाड़ा पगे चाले छे। वे बेचारे ! और हम दो-चार सॉक्स पहनकर ऊपर जूते पहनेंगे तो हम अच्छे ? और वे बेचारे ? तो अेमने केटली तकलीफ थती हशे ? अरे भैया ! उनके तकलीफ नहीं, आनंद का वेदन चल रहा है। अतीन्द्रिय आनंद का वेदन हो रहा है और उनके ऐसा अतीन्द्रिय आनंद का वेदन होता है तो इन बातों पर ध्यान ही नहीं जाता है। लेकिन हम उनको अपनी नजरिया से देखते हैं। वे कैसे हैं और कौनसी-कौनसी उनकी अवस्था है ? वे किस पोज़िशन में हैं ? इसलिये तो हम पांच नमस्कारों में मुनियों को यानी साधु, उपाध्याय और आचार्यों को इन्क्लूड करते हैं। उनमें जो वीतरागता है उस वीतरागता को हम नमन करते हैं। उनके बाह्य २८ मूलगुण धारण करने के जो शुभभाव हैं उनको हमारा नमस्कार नहीं है।

हमको बहुत लोग मिलते हैं ऐसे कहनेवाले कि आपको क्या अधिकार पहुंचता है उनके बारे में बोलने का ? तुम तो दिन में चार बार खाते हो। पांच बार तो चाय पीते हो। कपड़ा आदि पहनते हो। जरा ठंडी हो, गर्मी हो बारिश हो वे तो बेचारे ! ऐसे कैसे

नग्न रहते हैं ? तुम तो बारिश आयी तो रेनकोट पहने, बहुत धूप आयी तो छाता, ठंडी आयी तो दो-चार स्वेटर पहने। देखो वह उनका चारित्र देखो और तुम्हारा क्या चारित्र है ? ऐसा भी बोलनेवाले मिलते हैं। क्या ? अरे चारित्र यह क्या है साहब ? सुरेशभाई, चारित्र यह द्रव्य है, गुण है या पर्याय है ? बोलो-बोलो ? *श्रोता: पर्याय है।* पर्याय है। अच्छा, दिलीपभाई आप क्या बताते हैं ? *श्रोता: पर्याय है।* हां पर्याय है। कौनसे गुण की पर्याय है ? *श्रोता: चारित्र गुण की चारित्र पर्याय है।* चारित्र गुण की चारित्र पर्याय ?

देखो यही हमारी बहुत बात है कि हम अपने को पहले टटोल कर देखें। अरे हमें जिनागम में द्रव्य, गुण, पर्याय का पता नहीं है और हम धर्म करने खड़े हो गये और मान रहे हैं कि हम धर्म कर रहे हैं। आपकी बात नहीं कर रहा हूं, मैं आपको बता रहा हूं एक रिप्रेझेंटेटिव्ह ऑफ़ समबडी एल्स। मैं यह कहना चाहता हूं चारित्र है वह गुण है। दिलीपभाई आप जरा बतायेंगे कौनसे द्रव्य का गुण है ? *श्रोता: जीवद्रव्य का।* जीवद्रव्य का। जीवद्रव्य का चारित्र गुण है तो वह चारित्र गुण कहां रहता है ? आपने बताया कि जीवद्रव्य में। वह जीवद्रव्य के संपूर्ण भागों में और उसकी संपूर्ण अवस्थाओं में रहता है उसको चारित्र गुण कहेंगे। तो वह गुण शरीर में है या आत्मा में है ? हम कहां देख रहे हैं ? उघाड़ा पगे चाले छे, ठंडी में, क्या बोलते हैं ? गर्मी में और बारिश में। तो किसकी सहनशीलता चल रही है ? मतलब हम शरीर और आत्मा एक है ऐसे माननेवालों में से एक हैं। इसलिये हम उन मुनियों को भी शरीर और आत्मा एक मानकर उनको कितनी तकलीफ होती होगी ? ऐसा त्रैराशिक लगाते हैं।

अरे वे तो स्वयं, मैं ज्ञान स्वभावी आत्मा हूं, मैं अतीन्द्रिय आनंद का वेदन करनेवाला हूं ऐसा जानते हैं और उसी का वेदन भी उनका चलता है। मैं शरीर से भिन्न हूं, राग से भिन्न हूं, अनंत परपदार्थों से भिन्न हूं ऐसी जब उनकी निश्चिती हो गयी है; ज्ञान हो गया है इतना ही नहीं, अनुभव भी जो कर रहे हैं - क्या उनको बाहर की किसी बात की पड़ी होगी ? ख्याल में आया ? यहां यह बात बता रहे हैं कि ऐसे लोग बोलते हैं कि तुम्हें क्या अधिकार पहुंचता है ? देखो, उनका चारित्र तो देखो ! अरे चारित्र तो अंतरंग में होगा, आत्मा में होगा कि बाहर होगा यह तो नक्की कर प्रभु ! क्यों ? यह ऐसी तकलीफें खड़ी होती हैं। आपको क्या अधिकार है ? मेरे को कोई अधिकार नहीं है लेकिन आगम पढ़ने का तो अधिकार है कि नहीं ? और जो आगम में लिखा है वह दूसरे को बताने का भी अधिकार है या नहीं ? अरे वह तो मुनियों का काम है। परंतु

मुझे मुनि बनना है कि नहीं और मुनि बनूंगा तो बाद में क्या उपदेश दूंगा ? आगम का ही दूंगा कि अपने घर का कोई दूंगा ? क्या करें ? जिसका जो होना है सो होगा, हम तो अपनी चाल से चलें।

चलो आगे, इस प्रकार २८ मूलगुणों का निरतिचार पालन करनेवाला जीव जब स्वसन्मुखता करता है, शुद्धोपयोग में रहता है उसकी आत्मस्थिरता बढ़कर तीन कषाय चौकड़ी का अभाव होता है; यह पंचम गुणस्थानवाला आगे बढ़ रहा है उसकी बात कर रहे हैं; तब उसको सातवां अप्रमत्त गुणस्थान प्राप्त होता है। सातवें गुणस्थान का यानी शुद्धोपयोग का काल अल्प है - एक अंतर्मुहूर्त है और उसके बाद जीव नियम से छठे गुणस्थान में आता है। यह शुभोपयोग का काल है इसमें अध्ययन, अध्यापन, आहार, विहारादि क्रियायें होती हैं। पुनश्च अंतर्मुहूर्त में सातवां गुणस्थान प्राप्त होता है। इसतरह निरंतर छठा-सातवां गुणस्थान प्राप्त होता रहता है। आचार्य, उपाध्याय और साधु सदैव छठे-सातवें गुणस्थानों में झूलते रहते हैं। ख्याल में आया ?

अभी एक बात भाईसाहब अभी बोल रहे थे उसके अनुसार हम देखते हैं। यहां वे कह रहे थे कि आप बोलते हैं द्रव्यलिंगी मुनि - द्रव्यलिंगी मुनि तो द्रव्यलिंगी मुनि किसको कहना ? यह लिखितरूप से तो नहीं दिया है मौखिक पूछा था हमको। तो कहते हैं द्रव्यलिंगी मुनि हम उन्हीं को कहेंगे कि जिनके २८ मूलगुण आगम के अनुसार, आगम में जिस उचित प्रकार से उसका पालन करने के लिये कहा है, उसी प्रकार जो उसका पालन करते हैं, वह तो शुभराग है और हमें तो बाह्य में जो उनके प्रवृत्ति या आचार दिख रहे हैं, उसीको हम देख सकते हैं। अंतरंग में उनकी स्वरूप में लीनतारूप जो कोई शुद्धोपयोग की बातें चल रही हैं वह तो हमारे ज्ञान में नहीं आती हैं। लेकिन जिनके अंतरंग में तीन कषाय के चौकड़ी के अभावपूर्वक वीतरागता वर्तती है, ऐसे जीवों के २८ मूलगुण तो सहजरूप से पले जाते हैं। लेकिन कुछ जीव ऐसे होते हैं कि अंतरंग में स्थिरता की प्राप्ति हुयी नहीं है; कितनी ? तीन कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक जो होनी चाहिये वैसी और वह बाह्य में तो २८ मूलगुण तो यथोचित पालते हैं तो उनको द्रव्यलिंगी कहने में आता है। ख्याल में आया ?

अब यहां यह कहते हैं कि वे द्रव्यलिंग मतलब २८ मूलगुण जो पालन कर रहे हैं, इसमें एक भी मूलगुण का पालन यथार्थ रीति से नहीं पलता हो तो वे द्रव्यलिंगी मुनि

भी नहीं हैं। और थोड़ी कड़क भाषा में बोलना हो तो वह द्रव्यलिंगाभास है। सुरेशभाई, ऐसे मुनियों को नमन करना, उनका आहार-विहार आदि की व्यवस्था करना, उनको क्या कहें ? मुनिवत् उनसे व्यवहार रखना यह बिलकुल गृहीत मिथ्यात्व का पाप है। बाप रे ! क्योंकि हमने कुगुरु को गुरु माना। अब क्या बताये ? मेरे दिमाग में तो इतने प्रसंग आ रहे हैं जो मैंने भुगते हैं, मैंने अनुभव किये हैं। लेकिन मैं उसके बारे में कुछ नहीं बताऊंगा। क्योंकि हमें क्यों खतरा मोल लेना है ? जो आगम के अनुसार बात है वह आपको बता रहे हैं। यानी जिसके एक मूलगुण भी यथोचित नहीं पला जाता है वह तो मुनि है ही नहीं और हम उनके आहार-विहार आदि की सारी की व्यवस्था करते हैं।

अभी इतनी बार यहां बताया है उद्दिष्टआहार के त्यागी होते हैं। बाकी की बातों से आप वाकिफ हैं, आप उनको जानते हैं। मैं कुछ नहीं बोलूंगा, बोलना भी नहीं चाहिये। ख्याल में आया ? देखो भाई, मैंने कल ही आपको बताया था; दुनिया में खोटे सिक्के तो बहुत चलते हैं हमें तो इतना ही ध्यान रखना है कि वह खोटा सिक्का मेरी जेब में नहीं आ रहा है न, बस। यही प्रिकॉशन हमें लेनी है। अन्य के साथ जाकर उसको कुछ भी सिखायें - उसको समझायें ऐसा सोचो तक नहीं।

यह तो हमने एक आगम पढ़ा था संयमप्रकाश नाम का। सुभाषभाई आपके पास है क्या वह पुस्तक संयमप्रकाश ? दिल्ली से प्रकाशित हुयी, अभी-अभी कोई एक मुनिराज हो गये सौ साल के आस-पास - उन्होंने वह पुस्तक लिखी है। उन्होंने तो ऐसा लिखा है यह श्रावक का कर्तव्य है कि मुनि को जाकर बताये कि साहब आपसे यह-यह भूल हो रही है। यह श्रावक का कर्तव्य है। हां लेकिन मैं आपको हाथ जोड़कर बोलूंगा आप उस खतरे में मत पड़ना। अपना लोटा छानकर पानी पीना, दॅट्स ऑल। हमें दूसरे से कोई लेना-देना है नहीं। जो अपनी चाल से चलता है, जो अपने परिणामों से चलता है, उसका फल तो उसे अवश्य मिलेगा ही मिलेगा। ख्याल में आया ? हम तो इतना ही देखे कि मेरे से ऐसी कोई गड़बड़ तो नहीं हो रही है न !

इसके पश्चात् यहां एक प्रश्नोत्तर है मैं आपको पढ़ाना चाहता हूं। आप पुस्तक खोलियेगा उसमें पेज नंबर १५८ पर हम आते हैं। यहां लिख रहे हैं **अट्ठाईस मूलगुणों में से यदि मुनिराजों द्वारा एक-दो मूलगुणों का पालन न हो सके तो उन्हें मुनि माना जाये या नहीं ?** यह प्रश्न क्रमांक ६३ मैं पढ़ रहा हूं। मिल गया सबको ? क्या

कहा ? **अनंत तीर्थंकरों के परम सत्य उपदेश को आचार्यों ने शास्त्रों में लिपिबद्ध किया है। ऐसे परमश्रद्धेय एवं आराध्य शास्त्रों की आज्ञा मानना हमारा कर्तव्य है; जिनसे इहलोक तथा परलोक में जीव का आत्मकल्याण होता है।** ऐसा करने से इस भव का और अगले भव का भी कल्याण होगा। **उन शास्त्रों की तो आज्ञा है कि २८ मूलगुणों का समग्र रीति से पालन करना ही सच्चे साधु का स्वरूप है।**

देखो भाई, हम उनके बाह्य आचरण से ही उनकी मुनि दशा समझ सकते हैं। ख्याल में आया ? क्योंकि हमें अंतरंग की तो कोई खबर है नहीं और ना तो कभी हमने उसका स्वाद लिया है तो हम समझ सकेंगे कि भाई ऐसा-ऐसा है। लेकिन बाहर में उनकी जो कुछ बातें हो रही हैं उससे हम नक्की कर सकते हैं। इसलिये क्या कहा ? उन शास्त्रों की आज्ञा है कि २८ मूलगुणों का समग्र रीति से पालन करना ही सच्चे साधु का स्वरूप है। **कदाचित् पूर्व संस्कारवश मूलगुणों के पालन में कुछ अतिचार भी लग सकते हैं। यदि एक-दो अथवा तीन-चार मूलगुणों का पालन न हो तो भी सच्चे गुरुपने की मान्यता स्वीकृत होने लगे; तो फिर ५-६ या ७-८ मूलगुणों के अभाव में भी गुरुपने की मान्यता रूढ़ हो सकती है। या मात्र ४-५ मूलगुणों के पालन से भी गुरुपना मानने में भी आपत्ति नहीं रहेगी; कोई निश्चित नियम ही नहीं रह पायेगा। इसलिये अट्ठाईस मूलगुणों का पालन अखंड करना ही सच्चा गुरुपना है।** अभी बहुत सारी बातें हैं, क्या-क्या पढ़ें और क्या-क्या छोड़ें ? यहां तक हमने यह छठे गुणस्थान के बारे में जो कुछ देखना था वह देख लिया। अब हम थोड़ासा आगे बढ़ने की कोशिश करते हैं।

देखो, पेज नंबर १६१ पर **दिगम्बर मुनिराज के अट्ठाईस मूलगुण** लिखें हुये हैं। वहां पर आवश्यक में थोड़ासा सुधार करना। यानी यह अर्थ तो एक ही होता है लेकिन इनसे हम परिचित नहीं हैं इन शब्दों से यहां जो बताये गये। वहां लिखा है ६ आवश्यक, उसके सामने समता लिखा है। तो समता की जगह आप सामायिक कीजिये और स्तुति लिखा है, स्तुति की जगह पर चतुर्विंशतिस्तव। दोनों का अर्थ एक ही है, स्तुति तो तीर्थंकरों की ही की जाती है। लेकिन हम चतुर्विंशतिस्तव शब्द से अधिक परिचित हैं। वंदना, प्रतिक्रमण और यह आलोचना और ब्रॅकेट में स्वाध्याय लिखा है उसकी जगह कायोत्सर्ग चाहिये। अभी ऐसा नंबरिंग होगा - (१) सामायिक, (२) स्तुति यानी चतुर्विंशतिस्तव (३) वंदना, (४) प्रतिक्रमण, (५) प्रत्याख्यान और (६)

कायोत्सर्ग। अभी केशलुंचन कहो या केशलोच कहो एक ही है। बाकी वही की वही बात है। आलोचना निकालने को बताया न मैंने, उसकी जगह मैंने कायोत्सर्ग जो रह गया है वह बताया। अभी अच्छा है स्वाध्याय तो तप है न इसलिये। अब आगे अभी हम सातवें गुणस्थान में जायेंगे।

श्रोता: छहढाला में यह शब्द आया है। छठी ढाल में मुनिराज के छह आवश्यक के लिये यह शब्द आया समता सम्हारै। उस अपेक्षा से यह लिखा है। यह गलत है ऐसा मैंने नहीं कहा, फिर से समझना। हम यह क्रम कहो या इन नामों से विशेष परिचित नहीं हैं। अन्य शास्त्रों में तो मैंने जो बताया कि चतुर्विंशतिस्तव है वह स्तुति की जगह और समता जो है वहां सामायिक लिखे हैं और जो आलोचना है वहां पर कायोत्सर्ग नहीं लिखा है इसलिये उसको हटाकर कायोत्सर्ग लिखा है। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि मैं हमारे पं. ब्र. यशपालजी अण्णा से अधिक जानता हूं, यह मेरा कहना नहीं है। वे तो हमारे गुरु हैं भाई। ख्याल में आया न ?

अब आगे बढ़ते हैं, पेज नंबर १६२ पर आयें। यहां कह रहे कि **सातवें गुणस्थान का नाम अप्रमत्तसंयत है; यह गुणस्थान ध्यानस्थ मुनिराज का है।** ध्यानस्थ कहो या शुद्धोपयोगरूप कहो एक ही बात है। **विचार किया जाये तो वास्तविक मुनिजीवन का प्रथम गुणस्थान तो अप्रमत्तसंयत ही है।** क्या कहना चाहते हैं ? यहां पर कोई भी जीव ऊपर चढ़ते-चढ़ते छठे में नहीं जायेगा, पहले से, चौथे से या पांचवें से सातवें में जायेगा। इसलिये मुनि जो होते हैं उनके मुनित्व की जो स्थापना कहो या उनका कन्फर्मेशन कहो सातवें गुणस्थान से ही होता है और उसका नाम है अप्रमत्तविरत कहो या अप्रमत्तसंयत कहो। तो क्या कहते हैं ? वास्तविक मुनिजीवन का प्रथम गुणस्थान तो अप्रमत्तसंयत ही है क्योंकि प्रमत्तसंयत गुणस्थान तो अप्रमत्तसंयत से नीचे गिरने के बाद ही होता है। अभी देखो आप यह पुस्तक देखोगे तो उसके मुखपृष्ठ पर प्रमत्तविरत लिखा है और अप्रमत्तविरत लिखा है और यहां चर्चा की है प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत। दोनों का अर्थ एक ही है, नाम भेद है। ख्याल में आया न ? तो उससे घबराना नहीं।

कहते हैं, **जब कोई साधक भावलिंगी मुनिराज हो जाता है, तब मिथ्यात्व, अविरतसम्यक्त्व अथवा देशविरत गुणस्थान से,** यानी पहले, चौथे या पांचवें

गुणस्थान से **सीधे इस अप्रमत्त गुणस्थान में आकर ही होता है। इस विवक्षा की मुख्यता से अथवा प्रवचनसार ग्रंथ की चरणानुयोग चूलिका की दृष्टि से व मोक्षमार्गप्रकाशक के प्रथम अध्याय पृष्ठ ३ के साधु के स्वरूप का विवेचन** करते समय, पृष्ठ ३ पर यह वर्णन बहुत फेमस है, सब लोग जानते हैं। कहते हैं **जो विरागी होकर** तो विरागी यानी क्या ? वीतरागी होकर, रागरहित होकर **समस्त परिग्रह का त्याग करके शुद्धोपयोगरूप मुनिधर्म अंगीकार करके**। अभी आगे बहुत बातें हैं।

यहां दो-तीन बातों का खुलासा होना चाहिये- जो मुनिधर्म होता है या मुनित्व होता है, मुनीपना होता है, वह प्राप्त होने का जो तरीका है या जो मेथड है वह तो शुद्धोपयोगरूप है यानी शुद्धोपयोग से ही यह जीव सातवें गुणस्थान में जायेगा। लेकिन उसके लिये कौनसी कंडिशन है ? तो कहते हैं समस्त परिग्रह का त्यागकर। समस्त परिग्रह यानी परिग्रह कितने होते हैं ? यहां से हमें चालू करना पड़ेगा। परिग्रह कितने प्रकार के हैं कोई जानता है ? बहुत अच्छा, एक-दो बहनों का तो हर प्रश्न के लिये हाथ ऊपर है लेकिन हमें उनका हाथ नीचे करना पड़ता है। यह मत समझना कि हम बीजेपी के हैं, हाथवालों का नीचे हाथ कराते हैं। ऐसी बात नहीं है। जिनको मालूम नहीं है उनको जरा सोचने के लिये अवसर देंगे हम। हां, सुमनबहन आपको याद आ गया हां बोलो-बोलो ? *श्रोता: अंतरंग परिग्रह और बहिरंग परिग्रह।* वाह-वाह उन्होंने बताया दो प्रकार के परिग्रह हमने शास्त्रों में देखे हैं। कौनसे हैं ? तो कहते हैं अंतरंग परिग्रह और बहिरंग परिग्रह यानी दो प्रकार के परिग्रह।

वे दो प्रकार जो हैं अंतरंग परिग्रह और बहिरंग परिग्रह इनके भी कुछ भेद होंगे कि नहीं ? हां अच्छा, आप बतायेंगे बहुत अच्छा, जोर से बोलना बहन। *श्रोता: छह अंतरंग परिग्रह और छह बहिरंग परिग्रह।* छह अंतरंग परिग्रह अच्छा-अच्छा, आपका कहना है छह अंतरंग परिग्रह और छह बहिरंग परिग्रह कोई बात नहीं,अच्छी बात है। बहनों में और कोई बताना चाहेगा ? आप बतायेंगे ? *श्रोता: अंतरंग परिग्रह १४ हैं और बहिरंग परिग्रह १० हैं।* आपका कहना है अंतरंग परिग्रह १४ हैं और बहिरंग परिग्रह १० हैं। ख्याल में आया ? अभी आपको क्या कहना है ? बताओ, *श्रोता: वही जो इन्होंने कहा।* कोई बात नहीं। भाई बात ऐसी होती है यह रोज की बात नहीं है न, तो कभी-कभी भूल हो जाती है। उसमें क्या बड़ी बात है ? बाद में याद आता है। यह तो विशेषता है अपने ज्ञान की, क्षयोपशम कभी ढीला हो जाये और कभी उछल जाये।

यह जो पर्यायात्मक क्षयोपशम ज्ञान है उसके ऊपर कभी अहम् मत करना, गरूर मत करना कि मैं कितना जानता हूं। अरे एक मिनट में कहां जायेगा तू पता नहीं तेरे को याद भी नहीं आयेगा कि तूने क्या किया था। बहुत कुछ जानकारी हो जाये तो उछलना मत क्योंकि जो केवलज्ञान है उसके अनंतवें भाग भी तेरा ज्ञान नहीं है। समझ भाई ! यह सारा उपदेश मेरे लिये है। मैं तो कहूंगा कि जब हम शास्त्र का स्वाध्याय करते हैं तो इसमें से प्रत्येक शब्द; वाक्य नहीं, प्रत्येक शब्द - मेरे लिये आचार्यों ने लिखकर रखा है। यह मुझे एप्लाय होता है ऐसा समझकर जब तक हम स्वाध्याय नहीं करेंगे तो वह बात अपने दिल को और दिमाग को छुयेगी तक नहीं।

परिग्रह

अंतरंग परिग्रह	बहिरंग परिग्रह
मिथ्यात्व	क्षेत्र, मकान
क्रोध	धन, धान्य
मान	सोना, चांदी
माया	दास, दासी
लोभ	वस्त्र, बर्तन
९ नोकषाय	

लेकिन यह बात जो है क्या ? कि जो परिग्रह हैं वे २४ प्रकार के हैं। उनमें से १० तो बाह्य परिग्रह के भेद हैं और १४ तो अंतरंग परिग्रह के भेद हैं। यह जो परिग्रह हैं इनसे रहित मुनिराज होते हैं तो मैं भी भविष्य में मुनि बनने जा रहा हूं और मुझे भी इन परिग्रहों से रहित होना चाहिये। कम से कम हमें उनके नाम भी तो याद होने चाहिये क्योंकि जिनसे रहित होना है उनके नाम भी तो मालूम होना चाहिये कि नहीं दिलीपभाई ? अभी अगले प्रवचन के लिये १५ मिनट का अवकाश है, २४ परिग्रह याद नहीं होंगे क्या ? जरूर याद करना।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

२२. अप्रमत्तविरत गुणस्थान - गमनागमन

अभी हम अप्रमत्तविरत गुणस्थान के बारे में देख रहे थे और वहां पर यह बात चल रही थी कि जो विरागी होता है और समस्त परिग्रह का त्याग करता है और शुद्धोपयोगरूप मुनिधर्म अंगीकार करता है। यानी यहां मुनियों की बात चल रही है और वहां पर यह बताना चाहते हैं कि शुद्धोपयोग में ही मुनिपना आता है - प्राप्त होता है। अब आगे यह बता रहे हैं वह जीव समस्त परिग्रह का त्याग करता है। वह क्यों त्याग करता है ? कि वीतरागता उसे प्राप्त हुयी है इसलिये।

यह परिग्रह क्या होता है ? यह देखते हुये हम इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि परिग्रह तो टोटल चौबीस प्रकार के होते हैं। पहले उसके हमने दो भेद देखे थे। एक अंतरंग परिग्रह और एक बहिरंग परिग्रह। बहिरंग परिग्रह १० प्रकार के हैं और अंतरंग परिग्रह १४ प्रकार के हैं। अभी हम देखना चाहेंगे कि जो अंतरंग परिग्रह हैं उनमें से सबसे पहला परिग्रह कौनसा है ? *श्रोता: मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व। आगे ? कौनसे ? *श्रोता: क्रोध, मान, माया और लोभ और नौ नोकषाय।* क्रोध, मान, माया और लोभ; अच्छा, आगे ? नौ नोकषाय, बहुत अच्छा। तो कितने हो गये ? चौदह हो गये।

जो बहिरंग परिग्रह हैं यानी जिनको हम बाह्य परिग्रह कहेंगे वे दस हैं। वे याद हैं ? हां-हां एक मिनट-एक मिनट प्रवीणभाई आप रुकना। हमारे प्रमोदभाई हैं न, मित्र हैं हमारे। तो उनको पहला प्रेफरन्स। हां बोलो साहब- *श्रोता: धन, धान्य, सोना, चांदी, दास, दासी, वस्त्र, बर्तन और क्षेत्र, मकान।* धन, धान्य, सोना, चांदी आगे बोलो, जो आपके पास है वह उनके पास नहीं है इतना ध्यान रखना। दास, दासी, धन, धान्य, सोना, चांदी, वस्त्र, बर्तन हां और क्या रह गया ? अभी दो रह गये। हां क्षेत्र और आगे क्या ? मकान, अच्छा। यानी आपके पास यह निश्चित है इनके पास क्षेत्र है, यानी बहुत ज़मीन-जुमला है इनके पास और मकान तो कितनी मंजिलों के हैं ? पूछो ही मत।

हां, देखो यहां पर क्या कह रहे हैं ? जो मुनिराज होते हैं इनके दस प्रकार के बाह्य परिग्रह नहीं होते। धन नहीं होता है और धान्य भी नहीं होता है। वस्त्र भी नहीं होता है और जिसको हम कहेंगे पात्र भी नहीं होता, बहुत अच्छा। यह आप किसके पास देखते हो वह आप समझ लेना, और क्या कहा ? सोना और चांदी। यहां कहीं भी रुपयों की बात नहीं की है क्योंकि रुपयों की व्हॅल्यू, कभी भी आगे पीछे हो सकती है,

नाम भी बदल जाता है। लेकिन सोना सोना ही है और चांदी चांदी ही है। तो कह रहे हैं इस प्रकार के ये जो दस बाह्य परिग्रह हैं, वे मुनियों के होते ही नहीं। क्यों ? तो कहते हैं उनमें सबसे पहला मिथ्यात्व जो है, जो अंतरंग परिग्रह का सबसे बड़ा जो है अंतरंग परिग्रह। देखो, हमने परसों देखा था मिथ्यात्व को क्या नाम दिया था, याद है आपको ? हां, हां क्या बताया था ? पाप का बाप, किसका बाप ? पांच पापों के बाप का बाप। वह भी पाप है और यहां मिथ्यात्व को परिग्रह कह रहे हैं। देखो साहब यहां तो अलग-अलग अपेक्षा से अलग-अलग चीज़ों का वर्णन करते हैं।

तो यह क्यों कहते कि जिसके मिथ्यात्व है, जिसके अंतरंग परिग्रह है, उनके यह बाह्य परिग्रह दिखायी देंगे। जिसके अंतरंग परिग्रह हैं और बाह्य परिग्रह हैं तो वह तो अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव हो ही नहीं सकता है। ख्याल में आया ? अभी और क्या कहे ? देखो शास्त्र में तो ऐसी बात आती है; कुन्दकुन्द आचार्य ने लिखी है, अष्टपाहुड नामक शास्त्र है उसमें लिखते हैं मुनिराज कैसे होते हैं ? कहते हैं यथाजात स्वरूप। यह यथाजात स्वरूप यानी क्या ? समझ में आया, बेटा ? यथाजात यानी जैसा बालक जन्मता है वैसा वे एकदम निर्ग्रंथ होते हैं। निर्ग्रंथ होते हैं यानी किसी प्रकार की, किसी बात में उनकी गांठ, ग्रंथि नहीं होती। यानी किसीसे लगाव नहीं होता। ख्याल में आया ? वह तो कह रहे हैं; यह तो स्वयं आचार्य लिख रहे हैं; स्वयं मुनि हैं; यह पंचमकाल के मुनिराज हैं जिनका हम नाम लेते हैं हर बार। क्या कहा ? **मंगलं भगवान वीरो, मंगलं गौतमो गणी। मंगलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोस्तु मङ्गलम्॥** जिनका नाम हम बार-बार लेते हैं ऐसे कुन्दकुन्द आचार्य ने यह बात लिखी है। किसके बारे में ? अपने स्वयं के बारे में कि मुनियों का जो स्वरूप है वह यथाजातरूप होता है।

देखो आपको देखना है तो अभी हमने निकालकर रखा है आपके लिये, यह मोक्षमार्गप्रकाशक इसलिये रखते हैं कि वह जल्दी मिलता है और बाकी अभी यहां तुम्हारा अष्टपाहुड़ ढूंढ़ने जाओ तो फिर और गड़बड़ होती है। यहां मोक्षमार्गप्रकाशक १७९ नंबर का पृष्ठ है, यह उसका छठा अधिकार चल रहा है। वहां सूत्रपाहुड में यह १८ नंबर का श्लोक है। मैं सिर्फ अर्थ पढ़ता हूं। **मुनिपद वह यथाजातरूप सदृश है।** यानी यथाजात यानी जैसा बालक का जन्म होता है और उसका जैसा रूप है उसके सदृश मुनियों का रूप होता है। अभी हमारे भाईसाहब कुछ बोल रहे थे। तो उसके साथ कोई बालक जन्मता होगा क्या ? यह हम अपना अपन सोचें। बाकी बोलने में

कोई मज़ा नहीं है। क्यों ? क्यों अपनी जुबान ख़राब करें भाई ? ख्याल में आया ? **जैसा जन्म होते हुये था वैसा नग्न है। सो वह मुनि अर्थ यानी धन- वस्त्रादिक वस्तुयें, उनमें तिल के तुषमात्र भी ग्रहण नहीं करता।** यह तिल समझते हैं ? तिल उसका तुष यानी ऊपर का छिलका, उतने मात्र भी उनके पास कोई परिग्रह नहीं होता है। उनमें तिल के तुषमात्र भी ग्रहण नहीं करता। **यदि कदाचित् अल्प-बहुत ग्रहण करे तो उससे निगोद जाता है।**

क्या कहा ? और उनकी अनुमोदना करनेवाले ? वे भी उनके साथ जायेंगे, उपलनाव में बैठेंगे। यह उपल नाम का स्टोन होता है एक, हीरा जैसा होता है न वैसा। यानी वह क्या है ? पत्थर है भाई। उसकी नाव पानी में कहां जायेगी ? डूबेगी और उस पर बैठनेवाले भी उसके साथ डूब जायेंगे। तो जो ऐसे मुनियों की अनुमोदना करनेवाला है वह भी उनके पीछे-पीछे जायेगा। अब मैं मराठी में बोलूंगा, घबराना मत। 'अगं अगं म्हशी मला कुठे नेशी' हम तो उसकी पूंछ पकड़े किसकी ? भैंस की और वह दौड़ रही है और हम पूंछ नहीं छोड़ रहे हैं। हम बोल रहे हैं, हे भैंस मुझे कहां ले जा रही है ? अरे तू उसको छोड़ न। तुझे कौन जबरदस्ती करके, पूंछ पकड़कर बैठ ऐसा कह रहा है ? ख्याल में आया ? देखो शास्त्र में एक-एक ऐसी बात है।

यहां तो देखो कैसी बात लिखते हैं ? **लोगों की अज्ञानता तो देखो,** क्या ? कि **कोई एक छोटी भी प्रतिज्ञा भंग करे उसे तो पापी कहते हैं और ऐसी बड़ी प्रतिज्ञा भंग करते देखकर भी** उन्हें **गुरु मानते हैं, उनका मुनिवत् सन्मानादिक करते हैं; सो शास्त्र में कृत-कारित-अनुमोदना का फल कहा है; इसलिये उनको भी वैसा ही फल लगता है।** अरे एक नहीं जहां नजर डालो वहां यही बात मिलती है। यह मोक्षमार्गप्रकाशक तो ऐसा अद्‌भुत ग्रंथ है, मेरी भाषा में कहो तो आउटस्टॅडिंग ग्रंथ है। यह हमारा दुर्भाग्य है कि यह ग्रंथ जहां मोक्षमार्ग की प्रकाशना की शुरुआत की तो हमारे दुर्दैव से पं. टोडरमलजी का देहांत हो गया। अगर वे यह शास्त्र पूरा करते तो अन्य कोई शास्त्र को हाथ लगाने की आवश्यकता भी नहीं रहती - पूरा जैनिझम आपके हाथ में आ जाता। क्या करें ? हमारा भाग्य इतना है कि कुन्दकुन्द जैसे उत्कृष्ट मुनियों के ग्रंथ कुछ-कुछ अभी अपने हाथ में हैं, सारे के सारे हैं नहीं। सुभाषभाई, कुन्दकुन्द आचार्य ने परिकर्म नाम का एक ग्रंथ लिखा था, विपिनजी वह करणानुयोग पर है - षट्‌खण्डागम के तीन खण्डों की वह टीका है। उसका उद्धरण अन्य आचार्य

देते हैं। लेकिन वह ग्रंथ अपने पास उपलब्ध है नहीं। क्या करें ? पहले के मुनिराज भी सारे अनुयोगों का अभ्यास करते थे।

चलो अभी यह परिग्रह की तो बात हमने देख ली। देखो एक बात निश्चित मुनि की अपेक्षा से कहूंगा कि जिसके बहिरंग परिग्रह की विद्यमानता है उसको अंतरंग परिग्रह रहेंगे, रहेंगे और रहेंगे। ख्याल में आया ? चलो अभी हम आते हैं पेज नंबर १६३ पर। कह रहे हैं **संज्वलन कषाय तथा नौ नोकषाय के मंद उदय के समय में** अभी छठे गुणस्थान में हमने तीव्र उदय देखा था यहां कैसा है ? मंद उदय **के समय में** यानी **निमित्त से प्रमाद रहित होनेवाली वीतराग दशा को अप्रमत्तसंयत गुणस्थान कहते हैं।** छठे में प्रमाद सहित होनेवाली वीतराग अवस्था थी; यहां प्रमाद रहित कहा है। वहां पर भी वीतराग दशा को छठा गुणस्थान कहा था। यहां पर भी वीतराग दशा को ही सातवां गुणस्थान कहा है। कैसी है वीतराग दशा ? प्रमाद रहित है। उसको यहां कह रहे कि वह अप्रमत्तसंयत गुणस्थान है। **यहां** ध्यान अवस्था है, **ध्यानावस्था है, शुद्धोपयोग है; इसलिये व्यवहार सकलसंयम पालने का शुभविकल्प नहीं होता।** यह जो शुभ विकल्प है वह छठे गुणस्थान में ही होगा। **मुनिराज बुद्धिपूर्वक तो निज शुद्धात्मा में मग्न हैं। इस कारण ध्यानजन्य आत्मानंद का रसपान करते रहते हैं।**

अब देखो, **अप्रमत्तविरत गुणस्थान में संज्वलन देशघाति कषाय कर्म और हास्यादि नौ नोकषाय कर्मों का मंद उदय है; जो मुनिराज को प्रमादभाव उत्पन्न करने में समर्थ नहीं है; परंतु आत्मा में अबुद्धिपूर्वक विभाव परिणाम का अस्तित्व बना रहता है।** इस बात की चर्चा हमने यहां दो-तीन बार की है। देखो भाई, वहां अभी भी मुनिराज के पास संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ है और साथ में नौ नोकषाय भी हैं। यह सातवें गुणस्थानवर्ती मुनि की बात चल रही है। उनके यह संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ जो हैं, वे परिणाम जो हैं वे अबुद्धिपूर्वक रीति से उनमें उत्पन्न हो रहे हैं और उसके कारण उनको बंध भी हो रहा है। इसलिये यहां क्या कह रहे हैं देखो कि जो मुनिराज को प्रमादभाव उत्पन्न करने में समर्थ नहीं है परंतु आत्मा में, थर्ड लाइन पढ़ रहा हूं मैं, अबुद्धिपूर्वक विभाव परिणाम का अस्तित्व बना रहता है। **इन परिणामों के निमित्त से हीन स्थिति-अनुभागवाला नया कर्मबंध भी नियम से होता ही है।**

यह बात मैंने बहुत बार बतायी है मुनिअवस्था के जीवों के आस्रव, बंध, संवर,

निर्जरा ये चारों ही तत्त्व चल रहे हैं। छठा गुणस्थान भी शुभोपयोग का है लेकिन वहां पर भी आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा हैं क्योंकि वहां पर शुद्ध परिणति चल रही है न। तो वह भी है और यह भी है। अब आगे, **संज्वलनजन्य मंद विभाव परिणाम और तीन कषाय चौकड़ी के अनुदयपूर्वक उत्पन्न वीतराग परिणाम- इन दोनों की मिश्र दशा को अप्रमत्तसंयत गुणस्थान कहते हैं।** वीतरागता व राग-द्वेष दोनों चारित्र गुण की पर्यायें हैं। मोह व योग के निमित्त से आत्मा के श्रद्धा व चारित्र गुणों में होनेवाली तारतम्यरूप अवस्थाओं को गुणस्थान कहते हैं। यह तो हमने पहले पढ़ा था। **मात्र वीतराग परिणामों को अप्रमत्त गुणस्थान नहीं कहा।** क्या कहा ?

जैसे हमने पांचवें गुणस्थान में देखा था कि वहां जो वीतरागता है, कौनसी ? दो कषाय के अभावपूर्वक जो वीतरागता है, उस वीतरागता को ही पांचवां गुणस्थान नहीं कहा। उसके साथ-साथ जो राग चल रहा है, कौनसा ? प्रतिमा आदि धारण करने का जो शुभराग है, वे दोनों साथ में हैं तो उसको देशविरत गुणस्थान कहा। यहां पर भी ऐसी ही बात कर रहे हैं। सिर्फ वीतराग परिणाम जो हैं वह अप्रमत्त गुणस्थान नहीं है। उसके साथ-साथ वहां राग परिणाम भी हो रहा है। वह भी कैसा है ? अबुद्धिपूर्वक है। **सप्तम गुणस्थान में स्थित मुनिराज मात्र वीतराग परिणामों के धारक नहीं हैं। उन्हें कषाय-नोकषाय कर्मों के मंद उदय के निमित्त से अबुद्धिपूर्वक मंद राग परिणाम भी धारावाहीरूप से चलते ही रहते हैं।** अभी यहां कषाय और नोकषाय बतायें; यह कौनसे कषाय की बात चल रही है ? हां जी ? संज्वलन।

आगे बढ़ते हैं, देखो पेज नंबर १६४ पर आये हैं हम, यह बुद्धिपूर्वक और अबुद्धिपूर्वक राग की बात हमने बहुत बार यहां समझाने की कोशिश की है और समझ भी गये हैं हम। अभी उसके बारे में बार-बार बात नहीं करेंगे। यह बीच में जो छंद है उसके आगे **जिनके व्यक्त और अव्यक्त सभी प्रकार के प्रमाद नष्ट हो गये गये हैं;** क्योंकि हमने देखा था पहले से छठे गुणस्थान तक सारे ही गुणस्थान प्रमाद सहित हैं। तो यह प्रमाद जो शब्द है वह यहां छठे में अंत्य दीपक है। यानी प्रमत्त मिथ्यात्व, प्रमत्त सासादनसम्यक्त्व ऐसा सबके साथ लगाना। जैसा हमने वहां अंत्य दीपक देखा था, वहां एक से छह गुणस्थान तक सभी प्रमादी गुणस्थान हैं; इसतरह यहां क्या कह रहे हैं कि जिनके व्यक्त और अव्यक्त सभी प्रकार के प्रमाद नष्ट हो गये हैं। **जो व्रत, गुण और शीलों से मंडित हैं** मंडित हैं यानी शोभायमान हैं, **जो निरंतर**

आत्मा और शरीर के भेदविज्ञान से युक्त हैं, जो उपशम और क्षपकश्रेणी पर आरूढ़ नहीं हुये हैं और जो ध्यान में लवलीन हैं, उन्हें अप्रमत्तसंयत कहते हैं।

देखो, सातवें गुणस्थान की चर्चा चल रही है। यहां कहते हैं कि इनके प्रमाद नहीं हैं। कौनसे प्रमाद नहीं हैं ? व्यक्तरूप से भी नहीं और अव्यक्तरूप से भी नहीं हैं। और क्या कर रहे हैं ? व्रत, गुणों और शीलों से शोभायमान हैं। यानी वे सकलव्रत के धारक हैं। उनमें जो गुण हैं वे भी स्वभावरूप से परिणमित हो रहे हैं। और शील; शील यानी यहां पर आप लेना कि जो स्वरूप में स्थिरता है उसको यहां शील कहने में आता है। यह ब्रह्मचर्यवाले शील की यहां बात नहीं है। स्वरूप में जो स्थिरता है उसको यहां शील कहते हैं। वह इसीलिये आगे बताया कि जो निरंतर आत्मा और शरीर के भेदज्ञान से युक्त हैं यानी उनका भेद-विज्ञान तो चल रहा है और जो श्रेणी नहीं चढ़े हुये हैं। श्रेणी भी दो प्रकार की होती हैं- एक उपशमश्रेणी और एक क्षपकश्रेणी। लेकिन वे क्या कर रहे हैं अभी ? कि अपने स्वरूप में लीन हैं। ध्यान में हैं। ऐसी अवस्था को यहां अप्रमत्तविरत कहा गया है।

इस गाथा से यह स्पष्ट है कि सातवें गुणस्थान में मुनिराज को नियम से ध्यान होता ही है, जिसे शुद्धोपयोग नाम से भी कह सकते हैं। अभी **भेद अपेक्षा विचार** करते हैं। देखो यहां जो मुनि की अवस्था बतायी न, उसमें तीन भेद कर दिये उन्होंने- एक शुभोपयोगवाला; अभी जो अप्रमत्त शुद्धोपयोग है उनके भी दो भेद कर दिये- **एक स्वस्थान अप्रमत्त** और दूसरा **सातिशय अप्रमत्त**। यह सातिशय अप्रमत्त और स्वस्थान अप्रमत्त क्या होता है ? उसको हमने बहुत बार देखा है, फिर भी दुबारा देखते हैं। यहां लिखा है सामने, कहते हैं, स्वस्थान अप्रमत्त उसका दूसरा नाम क्या है ? **निरतिशय अप्रमत्त।** क्योंकि वह सातिशय है तो यह कैसा है ? निरतिशय है। यानी क्या कहते हैं ? यह पहली परिभाषा थोड़ीसी समझने में दिक्कत आयेगी लेकिन दूसरी परिभाषा है उसमें हम सहीरूप से समझेंगे सभी लोग।

सर्वप्रमाद नाशक यानी जो अभी प्रमत्त अवस्था थी उनका उन्होंने नाश किया है, **व्रत-गुण-शीलों से सहित** जो हमने ऊपर देखा था, **अनुपशमक,** अनुपशमक यानी क्या ? जिन्होंने उपशमश्रेणी चढ़ी नहीं है वह अनुपशमक और **अक्षपक** यानी जिन्होंने क्षपकश्रेणी चढ़ी नहीं है, फिर भी वे कैसे हैं ? कि **ध्यान में लीन मुनिदशा**,

ऐसी जो मुनिदशा है वह **स्वस्थान अप्रमत्त है।** अभी उसीका खुलासा और कर रहे हैं दूसरे नंबर में। **जिस अप्रमत्तसंयत गुणस्थान से मुनिराज नियम से छठे प्रमत्तसंयत गुणस्थान में जाते हैं, उस अप्रमत्तसंयत गुणस्थान को स्वस्थान या निरतिशय अप्रमत्त कहते हैं।** यह क्या कहना चाहते हैं ? हम अपनी भाषा में समझेंगे तो जल्दी समझ में आयेगा। उस स्वस्थान अप्रमत्त गुणस्थान की क्या विशेषता है ? कह रहे हैं कि सातवें गुणस्थान से छठे में आयेंगे, फिर छठे से सातवें में जायेंगे, फिर सातवें से छठे में आयेंगे। तो वे अपना स्थान नहीं छोड़ रहे हैं इसलिये उसको निरतिशय अप्रमत्त अवस्था कही। अब दूसरी कैसी है ? कि सातिशयवाली है। सातिशय अप्रमत्त उसमें क्या होता है कि वह जीव सातवें में रहते हुये, श्रेणी के सन्मुख होकर या तो उपशमश्रेणी चढ़ेगा या तो क्षपकश्रेणी चढ़ेगा। उसको क्या कहेंगे ? सातिशय।

अब देखो तीसरे पॉइंट में बता रहे हैं कि **भावलिंगी मुनिराज सातवें-छठे और छठवें-सातवें गुणस्थान में सतत गमनागमन करते ही रहते हैं।** उसका दूसरा अर्थ क्या है ? **झूलते ही रहते हैं। ऐसे काल में उन्हें प्राप्त होनेवाले अप्रमत्तसंयत गुणस्थान को स्वस्थान या निरतिशय अप्रमत्त कहते हैं।** यह उसी बात का खुलासा उन्होंने किया है। अब कहते हैं, **सातिशय अप्रमत्तसंयत** कह रहे हैं - **चारित्रमोहनीय कर्म की २१ प्रकृतियां,** यह २१ प्रकृतियां कौनसी अभी उनके साथ हैं ? तो कह रहे हैं **अप्रत्याख्यानावरण ४** यानी अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार, **प्रत्याख्यानावरण ४, संज्वलन ४ और हास्यादि ९ नोकषाय**। यह ४+४+४ = १२ हो गये और ये ९ इसतरह २१ प्रकृतियां हो गयी। अब कह रहे हैं चारित्रमोहनीय की २१ प्रकृतियों **के उपशम तथा क्षय में निमित्त अधःकरणादि तीन करणों में से प्रथम अधःप्रवृत्तकरण दशा सातिशय अप्रमत्तसंयत है।**

देखो, यहां करणलब्धि सातवें गुणस्थान से चालू होती है। श्रेणी के गुणस्थान कौन-कौनसे हैं ? बहन आप बतायेंगी, श्रेणी के गुणस्थान कौन-कौनसे हैं ? आपको पूछ रहा हूं, होशंगाबादवाले ? जानती हैं आप ? हां कविता मामीजी आप ? *श्रोता: ८, ९, १० और ११।* ८, ९, १० और ११। ये कौनसे हैं ? कौनसी श्रेणी के हैं ? *श्रोता: उपशमश्रेणी के हैं।* उपशमश्रेणी के और दूसरा कौनसा नाम है ? *श्रोता: क्षपकश्रेणी।* क्षपकश्रेणी। उनके कौनसे गुणस्थान हैं ? *श्रोता: ८, ९, १०, १२।* ८, ९, १०, १२। देखो, ये सब महाराष्ट्र के हैं इसलिये मराठी में बोलते हैं। गलती से मैं भी मराठी जानता हूं तो जम जाता है

हमारा। क्या कह रहे हैं ? देखो यहां बता रहे हैं कि यह श्रेणी तो अभी चढ़े नहीं, सातवें में हैं, फिर भी अधःप्रवृत्तकरण यहां चल रहा है और उसीको यहां सातिशय अप्रमत्त कहा है। क्योंकि अभी वह जीव श्रेणी के सन्मुख हुआ है। अभी वह छठे में नहीं आयेगा, जायेगा तो ऊपर ही जायेगा। इसलिये उसको कहते हैं सातिशय अप्रमत्त।

ये तीन करण परिणाम के नाम क्या है बहन ? *श्रोता: अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण।* हां, अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण। बिलकुल याद हो गया देखो सबको। यह तो बिलकुल नयी है, उसको याद हो गया तो बाकी लोगों को तो याद हो ही गया होगा। क्यों ? पीछेवाले कोई बताना चाहेगा ? *श्रोता: अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण।* अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण। लोग बोलते हैं करणानुयोग बहुत डिफिकल्ट है। काहे का डिफिकल्ट है ? आज कौनसा दिन है तीसरा दिन है ? चौथा दिन है ? चौथे दिन में सब याद हो गया और आप एक महीना रखो तो यहां से पंडित बनकर ही बाहर निकलेंगे सब। रखना नहीं चाहते न ? चलो, *श्रोता: अधःकरण और अधःप्रवृत्तकरण दोनों एक ही हैं ?* दोनों एक ही हैं। अधःकरण कहो या अधःप्रवृत्तकरण कहो दोनों एक ही करण परिणाम हैं, नाम जुदे-जुदे हैं। कहीं वहां अधःकरण लिखा है और यहां अधःप्रवृत्तकरण लिखा है। लेकिन दोनों का अर्थ एक ही है, दोनों एक ही प्रकार के परिणाम यानी परिणाम वैसे ही होंगे।

अब उसमें दूसरा पॉइंट- **जिस अप्रमत्तसंयत गुणस्थान से विशेष पुरुषार्थी मुनिराज नियम से छठे प्रमत्तसंयत गुणस्थान में नीचे आते ही नहीं, उस अप्रमत्त दशा को सातिशय अप्रमत्तसंयत कहते हैं।** अब यह बात समझ में आ रही न ? तीसरा पॉइंट यह है कि **जिस अप्रमत्तसंयत गुणस्थान से विशेष पुरुषार्थी मुनिराज नियम से प्रमत्तसंयत में न जाकर ऊपर अपूर्वकरण गुणस्थान में ही जाते हैं, अर्थात् श्रेणी पर आरूढ़ होते हैं, उसे सातिशय अप्रमत्तसंयत** गुणस्थान **कहते हैं।** देखो, तीनों ही पॉइंट में वही बात है सिर्फ शब्द अलग-अलग हैं। लेकिन हमारे पढ़ने में वह बात पक्की हो जाय इसलिये किसी न किसी बहाने से वही-वही बात बतायी है। कंटाल मत जाना। अब कहते हैं **श्रेणी तो आठवें अपूर्वकरण गुणस्थान से ही प्रारंभ होती है; तथापि श्रेणी की पूर्व तैयारी सातिशय अप्रमत्तविरत गुणस्थान में होती है।** अब आगे बढ़ेंगे हम, पेज नंबर १६६,

श्रोता: सातिशय अप्रमत्तविरत गुणस्थानवाले मुनिराज आहार के लिये निकलते हैं क्या ? हां, बिलकुल अच्छा प्रश्न है आपका। आपका प्रश्न यह है यह सातिशय अप्रमत्त की बात कर रहे हैं या अप्रमत्त की कर रहे हैं ? *श्रोता: सातिशय अप्रमत्त ?* सातिशय अप्रमत्त यानी वह अप्रमत्त गुणस्थान में ही हैं। देखो छठे गुणस्थान सुनना-सुनना, छठे गुणस्थान तक ही ये चारों संज्ञायें होती हैं। मालूम है आपको ? आहार, भय, मैथुन और परिग्रह। तो उनमें से यह आहारसंज्ञा जो है मात्र आहारसंज्ञा है वह छठे गुणस्थान तक ही होती है। संज्ञा यानी वह अभिलाषा, खाने के परिणाम, भाव। तो यह कहां तक है ? यह तो भैया कर्मों का उदय है उस अपेक्षा से यह कथन है। क्योंकि आहार, भय, मैथुन वगैरह, कोई मुनिराज करेंगे नहीं। लेकिन वहां उस प्रकार के कर्म की विद्यमानता है उस अपेक्षा से कहा गया है। छठे गुणस्थान में यह आहार जो है वह छठे गुणस्थान तक ही वहां होगा। सातवें से आगे कहीं पर भी- सातिशय अप्रमत्त हो या स्वस्थान अप्रमत्त हो, मुनिराज को आहार का विकल्प ही नहीं आयेगा। बहुत अच्छा प्रश्न है आपका। परंतु आहार-विहार की प्रवृत्ति हो रही है, उस काल में भी मुनिराजों का छठे-सातवें में आना-जाना चलता है, वहां स्वस्थान अप्रमत्त ही होगा, सातिशय अप्रमत्त नहीं होगा।

देखो कई जीव तो ऐसा मानते हैं कि केवली भगवान को भी आहार होता है। वह आपको मालूम नहीं है क्योंकि महाराष्ट्र में यह प्रचलित नहीं है। क्या करें ? यह श्वेतांबर मान्यता है न ! तो बिलकुल ध्यान में रखना- छठे गुणस्थान के बाद किसी जीव को भूख ही नहीं लगती। ऊपर के गुणस्थानों में आहारसंज्ञा ही नहीं है। उनके खाने के विकल्प ही नहीं उठेंगे। क्या भोजन करने से ही जीव ज़िंदा रहता है ? यह पहले सोचो। हवा पानी से, कम से कम श्वासोच्छ्वास करने से तो ज़िंदा रहेगा कि नहीं ? क्यों प्रमोदभाई, श्वास बंद हो जाये तो क्या होगा ? मैं आपसे पूछता हूं सिद्ध भगवान जीव हैं कि नहीं ? वे भी जीवद्रव्य हैं न, वे कितना श्वासोच्छ्वास करते होंगे ? यह भाई हम कभी सोचते नहीं हैं न, तो हमें अचरज लगता है। हमने कल ही देखा था कि आहार से कोई ज़िंदा रहता होगा ? आज ही सुबह देखा था कौनसे ? सर्वार्थसिद्धि के देव को तैंतीस हजार वर्ष के बाद विकल्प आता है कि भूख लगी और कंठ से अमृत झरता है, उनका पेट भर जाता है और नारकी में तैंतीस सागर तक कुछ खाने को नहीं मिलता है।

देखो, जो हमारे विद्यागुरु हैं, कौन ? डॉ हुकुमचंदजी भारिल्ल, वे हमको कहते हैं; कोई बहुत खा रहा है, दिन-रात खा रहा है - दिन में भी खाये, रात में भी खाये, भक्ष्य

भी खाये, अभक्ष्य भी खाये तो समझना कि दो बातों की पॉसिबिलिटि है। काहे की ? या तो वह नरक में जाने की तैयारी कर रहा है। वहां कुछ खाने को मिलनेवाला नहीं है इसलिये यहीं खा ले रहा है। कोई विधि निषेध नहीं। या तो वहां से आया है; कितने दिन का भूखा है ! देखो, यह थिंकिंग कैसी है ? इससे क्या बताना चाहते हैं ? वे यह कहते हैं कि हमारा मुंह पोस्ट ऑफिस का डब्बा मत बनाओ। क्या बता रहे हैं ? पोस्ट ऑफिस का डब्बा देखा है न आपने ? वह २४ घंटा खुला रहता है। कुछ भी उसके अंदर डालों - दिन हो, रात हो, भक्ष्य हो, अभक्ष्य हो। अरे हमारे मुम्बई में तो वह क्या नाम है ? बच्चे लोग होते हैं, वे मेंढक को पकड़कर उसके अंदर डालते हैं। पोस्टमन जाकर नीचे से निकालने आया तो हाथ में मेंढक आ जाये। तो हम उस पर हंसते हैं। और हम ? हम यानी हम नहीं, आम जनता - क्या कोई विवेक रखता है खाने पीने में, भक्ष्य-अभक्ष्य का, वक्त-बेवक्त का ? वह नारकी तैंतीस सागर तक कुछ नहीं खावे तो ज़िंदा है कि नहीं ? वह छोड़ो, सिद्ध भगवान भी तो हैं कि नहीं ? जीवित हैं कि नहीं ?

अरे जीव उसीको कहते हैं जो सदा काल जीवित रहता है और हम पर्याय की अपेक्षा से सोचते हैं अभी मैं मर गया। मैं मरूंगा, हाय-हाय मेरा क्या होगा ? जब तेरे ज्ञान में आयेगा कि मैं अनादिअनंत हूं, मैं सदैव अजर-अमर हूं, मेरा कभी नाश भी नहीं होनेवाला है क्योंकि मेरे में अस्तित्व नाम का गुण है, सत्ता है। मैं उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्त हूं। ऐसा जब अपने स्वरूप का ख्याल आयेगा तो मैं मरूंगा यह बात कहां रही ? अरे मरूंगा-मरूंगा करके ही तू मर रहा है। अभी अपनी बात कहां से निकली ? कि सातवें गुणस्थानवर्ती मुनिराजों को भूख नहीं लगती ? नहीं लगती। खाने का विकल्प नहीं आता है ? नहीं आता है। बात ख्याल में आयी प्रमोदभाई ? हां तो बोलो भाई। तो मैं अपने विषय की तरफ जाऊं नहीं तो और तुम्हें समझाऊं।

कहां आये थे हम ? हां १६६ पेज पर आये थे। वहां सम्यक्त्व अपेक्षा विचार करते हैं। अभी पुस्तक में देखने का ढाढ़स मत करना। मैं यह कहूंगा कि यह सातवें गुणस्थान में कौन-कौनसे सम्यक्त्व हो सकते हैं ? हां साहब बोलो ? *श्रोता: देख लिया है।* देख लिया है, कोई बात नहीं, बोलो। *श्रोता: द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में सातिशय।* हां मैंने क्या पूछा ? सातवें गुणस्थान में कौन-कौनसे सम्यक्त्व हो सकते हैं ? जो स्वस्थान अप्रमत्तवाला होगा उसको क्षायोपशमिक सम्यक्त्व होगा कि नहीं ? क्योंकि हमने क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के गुणस्थान कौनसे देखे थे ? हां, बोलो बहन ? *श्रोता: चार,*

पांच, छह और सात। चार, पांच, छह और सात। तो सातवें में क्षायोपशमिक सम्यक्त्व, मैंने ऐसा नहीं पूछा था कि सातिशय; मैंने यह पूछा था अप्रमत्त गुणस्थान में कौनसे-कौनसे सम्यक्त्व होते हैं ? इसलिये मैंने पहले ही बोला था कि आप किताब मत देखो। किताब में देखते-देखते प्रश्न क्या पूछा गया था वह सपाट हो गया। यह हमारी विशेषता है कि कोई कानून बनावे तो वह तोड़े तो मैं तगड़ा हूं और नहीं तोडूं तो क्या फ़ायदा। हम किसीके गुलाम बन गये ? ख्याल में आया न ? सुरेशभाई बोलते हैं तुम बहुत कड़वा बोलते हो। क्या करूं साहब ?

देखो-देखो, यहां देखते हैं **सम्यक्त्व अपेक्षा विचार, स्वस्थान अप्रमत्त मुनिराज को तो औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक इन तीनों सम्यक्त्व में से कोई भी एक सम्यक्त्व रह सकता है; परंतु सातिशय अप्रमत्त मुनिराज को** लिखा है न ? सातिशय अप्रमत्त मुनिराज को **द्वितीयोपशम सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व- इन दोनों में से ही कोई एक रहता है।** आगे कहते हैं- **सातिशय अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती मुनिराज को तो श्रेणी पर आरोहण करना है। क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के साथ वे श्रेणी आरोहण नहीं कर सकते।** यह ऐसा क्यों कहा है ? चारुबहन आप कहेंगे ? *श्रोता:चल-मल-अगाढ़ दोष हैं।* क़िसमें ? *श्रोता: क्षायोपशमिक सम्यक्त्व में।* हां, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के साथ चढ़ नहीं सकते क्योंकि उसमें चल-मल-अगाढ़ दोष हैं। इसकी भी हमने चर्चा की थी। इसलिये क्या कह रहे हैं ? कि **क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के साथ वे श्रेणी आरोहण नहीं कर सकते क्योंकि क्षायोपशमिक सम्यक्त्व में जो केवलज्ञानगम्य चल-मल-अगाढ़ दोष होते हैं, वे सूक्ष्म दोष भी श्रेणी के आरोहण कार्य में बाधक हैं।**

अब आगे बढ़ते हैं। **यद्यपि ये दोष सम्यक्त्वरूपी धर्म में तो विशेष बाधा तो नहीं उत्पन्न कर पाते; लेकिन श्रेणी-आरोहण के अलौकिक कार्य में बाधक अवश्य होते हैं।** यह क्या कहना चाहते हैं यह चल-मल-अगाढ़ दोष होते हैं फिर भी उस जीव का सम्यक्त्व टूटता नहीं। सम्यक्त्व टिका रहने में कोई तकलीफ नहीं, लेकिन श्रेणी चढ़ना है तो उस दोष के साथ कोई नहीं चढ़ पायेगा। **अतः बाधकपने को दूर करने के लिये ही मुनिराज का क्षायोपशमिक सम्यक्त्व ही औपशमिक सम्यक्त्वरूप से परिणमित हो जाता है। इस कारण औपशमिक सम्यक्त्व में क्षायिक सम्यक्त्व जैसी निर्मलता आ जाती है।** यहां क्या बता रहे हैं कि औपशमिक

सम्यक्त्व है और जो क्षायिक सम्यक्त्व है उनमें जो विशुद्धि कहो या निर्मलता कहो, वह बिलकुल एक जैसी है।

अभी यहां क्या होता है ? यह जीव - कौनसा ? जो क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी है, ऑलरेडि सम्यग्दर्शन सहित है ऐसा जीव उसकी सत्ता में दर्शनमोहनीय की कौन-कौनसी प्रकृतियां हैं ? हां, बोलो बहन आप ? नहीं मालूम। बहन आपको मालूम है प्रश्न क्या है ? बहुत अच्छा, देखो मैंने यह प्रश्न पूछा कि जो अप्रमत्त गुणस्थान में है अभी जो सातिशय अप्रमत्त है तो उसकी सत्ता में दर्शनमोहनीय कर्म की कौन-कौनसी प्रकृतियां हैं ? *श्रोता: एक भी नहीं।* एक भी नहीं, बहुत अच्छा, आपके बाजू में ? तीनों हैं बोलो न, उनके विरुद्ध बोलने का है। क्या ? नहीं ? अरे क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि है अभी हमने कहा। क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि के सम्यक् प्रकृति का उदय है और बाकी जो मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व हैं, वे सत्ता में हैं यह सीखा था न हमने, फिर भूल गये आप। क्या कहा ? यह क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी है, उस सम्यक्त्व के साथ वह चढ़ नहीं सकता।

अभी वह क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी है, उसको उपशम करने का है तो वह उपशम करेगा तो कितनी प्रकृतियों का करेगा ? उदय में आनेवाली जो सम्यक् प्रकृति है वह और जो सत्ता में पड़ी है, एक समय पीछे हैं न वे मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व दो। देखो यह सम्यक् प्रकृति उदयरूप है; ये दोनों एक समय पीछे हैं तो इन तीनों को उपशमायेगा। वहां भी अंतरकरण हो जायेगा और इन तीन प्रकृतियों का उपशम करेगा, उसीको हम द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं। आप में से किसीने पूछा था प्रथमोपशम और द्वितीयोपशम में क्या अंतर है ? किसीने पूछा था न ! देखो, जो जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करेगा वह तो मिथ्यादृष्टि है, सादि हो या अनादि हो; लेकिन है कौन ? मिथ्यादृष्टि। और यहां क्या है ? जो द्वितीयोपशम करनेवाला जीव है वह आलरेडि क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी है। ख्याल में आया ? अप्रमत्त गुणस्थान में है। वह जो क्षायोपशमिक सम्यक्त्व है उसमें से औपशमिक सम्यक्त्व होनेवाला है। इसलिये इसका नाम द्वितीयोपशम सम्यक्त्व है। यह बात ख्याल में आयी ? अब आगे चलते हैं।

यहां क्या कहा ? देखो, फिर से पढ़ता हूं यह नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ, पेज नंबर १६६। **अतः बाधकपने को दूर करने के लिये मुनिराज का क्षायोपशमिक सम्यक्त्व ही औपशमिक सम्यक्त्वरूप से परिणमित हो जाता है।** यह इन्होंने ऐसा

डायरेक्ट लिखा है, लेकिन वे जो तीन प्रकृतियां हैं उनका उपशम करेगा। इस कारण औपशमिक सम्यक्त्व में क्षायिक सम्यक्त्व जैसी निर्मलता आ जाती है। **इसी सम्यक्त्व को द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।** यह बात ख्याल में आयी अभी ?

अब देखो यहां क्या लिखते हैं ? **चारित्र अपेक्षा विचार- इस अप्रमत्तसंयत सातवें गुणस्थान में क्षायोपशमिक चारित्र होता है।** अब अगला पॅरेग्राफ देखियेगा, **मुनिजीवन में व्यक्त** यानी **प्रकट वीतरागभाव तो निश्चय चारित्र है और** उस **वीतरागता के साथ उसी समय अबुद्धिपूर्वक राग परिणाम, वह व्यवहार चारित्र है।** छठे गुणस्थान में कौनसा व्यवहार चारित्र है ? २८ मूलगुण पालन करने का परिणाम और सातवें में जो अव्यक्त राग चल रहा है वह व्यवहार चारित्र है। फिर से ध्यान में रखना, मैं दुबारा पढ़ूंगा। क्या कह रहे हैं ? मुनिराज जो हैं उनका प्रकट जो वीतराग परिणाम चल रहा है उसको निश्चय चारित्र कहा। निश्चय चारित्र है तो उसके साथ व्यवहार चारित्र होगा कि नहीं ? तो हां है। वह किसको कहेंगे ? तो कह रहे हैं कि वीतरागता के साथ उसी समय, क्या हो रहा है साहब ? अभी वे शुद्धोपयोग में हैं, उनको यह २८ मूलगुण का पालन तो नहीं हो रहा है लेकिन वहां अबुद्धिपूर्वक राग परिणाम चल रहा है उसको यहां व्यवहार चारित्र कहा है। **निश्चय चारित्र तो मोक्षमार्ग स्वरूप होने से उससे संवर-निर्जरा सतत होती है। उसी समय जो अबुद्धिपूर्वक कषायरूप परिणमन है, वह व्यवहार चारित्र है। उससे आस्रव-बंध भी होते हैं।** यह बार-बार हम कहते हैं कि छठे गुणस्थान में भी आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा है और सातवें गुणस्थान में भी आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा है तो इसका खुलासा यहां आ गया।

अब पुस्तकें बंद कीजिये। देख लिया तब तक ? देखो अभी हम **काल की अपेक्षा** विचार करते हैं। काल की अपेक्षा विचार है तो पहले में पहले किसी सप्तम गुणस्थानवर्ती जीव का उत्कृष्ट काल कितना होगा ? क्योंकि हम हमेशा जघन्य से चालू करते हैं और पुस्तक बंद करने के पहले हम जघन्य काल देख लेते हैं। सुरेशभाई बोलते हैं सबकी पोल मत खोलो भाई। हां कौन बताना चाहेगा ? उत्कृष्ट काल कितना होगा ? पीछे यहां पर कोई बतायेंगे ? गांगजीभाई आप बताओगे ? *श्रोता: ख्याल में नहीं है*/ ख्याल में नहीं है। देखो-देखो अभी बहुत आसान है। हमने क्या देखा था ? छठे गुणस्थान का काल जितना है, उससे आधा काल किसका होगा ? सातवें गुणस्थान का - यह देखा था न ? तो छठे गुणस्थान का काल कितना है ? एक अंतर्मुहूर्त है। उसका

आधा काल भी अंतर्मुहूर्त ही होगा। यह है हाउ टू डिराइव्ह। अंतर्मुहूर्त के तो अनेक भेद होते हैं क्योंकि एक आवली अधिक एक समय यह जघन्य अंतर्मुहूर्त है।

एक आवली और दो समय, एक आवली और तीन समय, ऐसे असंख्यात समय जाने के बाद दूसरी आवली चालू हो जाती है। फिर ऐसा करते-करते एक सेकंड में हजारों आवली होती हैं तो उसमें कितने भेद होंगे और एक मिनट में कितने, पांच मिनट में कितने और ४८ मिनट में एक समय कम तक कितने अंतर्मुहूर्त होंगे ? उनकी व्हरायटी कितनी होंगी ? असंख्यात, असंख्यात, असंख्यात। ख्याल में आया ? यहां पर जो छठा गुणस्थान है, उसका जो अंतर्मुहूर्त है वह कितना है ? यथायोग्य जो है। उससे आधा काल है वह सातवें का है। तो उसका उत्कृष्ट काल कितना है ? तो एक अंतर्मुहूर्त। हां, यह बात ख्याल में आयी ?

अब कहते हैं, सातवें गुणस्थान का जघन्य काल कितना है ? मैंने गलती से जघन्य अंतर कहा। यह मॉनिटर - मेरी पत्नी उज्ज्वला साथ में रहना अच्छा रहता है क्यों ? वह तो तुरंत सुधार देती है। क्योंकि भाई बात तो ऐसी है अपने मुख से कोई गलत बात नहीं जाये। जो जानकार हैं, ये हमारे नांदगावकर जैसे, उन्होंने तो शांति से बाद में बताया। मुझे मेरी कोई गलती होती है और कोई तुरंत बतावे तो मुझे कभी बुरा नहीं लगेगा क्योंकि मेरे द्वारा खोटा प्रचार, प्रसार नहीं होना चाहिये। जिनेन्द्र भगवान की जिनवाणी जिस प्रकार से है। यह मेरी गलती है कि मैं बोलना चाहता हूं कुछ और बोला जाता है कुछ। मैं ऐसा कभी नहीं कहूंगा यह मेरा अपराध थोड़ी है, यह भाषावर्गणा ऐसी निकली - ऐसा उन्माद मुझे करना नहीं है। गलती है तो गलती है।

आपने बताया कि जघन्य काल किसका ? सातवें गुणस्थान का जघन्य काल कितना है ? हां-हां, कौन बता रहे हैं साहब ? आप बता रहे हैं। किसने बताया भैया ? हां, अनिलजी बोलो ? *श्रोता: एक समय।* एक समय। कैसे ? एक समय का आधा कर दो वह हो ही नहीं सकता। एक समय यह उत्तर तो बिलकुल बराबर है लेकिन उसका कारण क्या है ? कैसा यह एक समय आप गिनते हो ? वह भी हमें जानना चाहिये न, ख्याल में आया न ? यहां कह रहे हैं कोई छठे से सातवां, सातवें से छठा, ऐसा करते-करते सातवें में आ जाये और एक समय बाद उसका मरण हो जाये तो वहां सातवें का जघन्य काल एक समय गिनेंगे। अभी देखो हम यहां देखते हैं, निकालिये पृष्ठ १६७

काल अपेक्षा विचार लिखा है न राइट साइड पर। **कोई प्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती भावलिंगी संत शुभोपयोग का अभाव करके शुद्धोपयोगरूप अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में मात्र एक समय ही रहे और तत्काल ही मनुष्यायु का क्षय हो जाये, तो ध्यानावस्था में** भी एक समय में **ही मरण होता है।** यह मरण होता है बताया न ? **इस प्रकार मरण की अपेक्षा से ही मात्र एक समय घटित होता है।** और मरण नहीं हुआ तो ? वह बाद में बतायेंगे। जब उपशमक मुनिराज श्रेणी से उतरते समय, हां जी यहां पर भी एक समय घटित करा रहे हैं, ठीक है। नीचे से ऊपर या ऊपर से नीचे आने के वक्त की बात है।

जब उपशमक मुनिराज श्रेणी से उतरते समय अपूर्वकरण गुणस्थान से नीचे सातवें अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में आते हैं, तब अप्रमत्तसंयत में मात्र एक समय रह पाये और तत्काल मनुष्यायु का क्षय हो जाये तो मरण की अपेक्षा मात्र एक समय घटित हो जाता है। यानी उन्होंने छठे गुणस्थान से सातवें में या आठवें में से सातवें में आनेवाले की बात की है। **यदि अप्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती मुनिराज का मरण नहीं होता है तो वे यथायोग्य अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत इस सातवें गुणस्थान में रहते हैं** और **सातवें गुणस्थान का उत्कृष्ट काल यथायोग्य** एक **अंतर्मुहूर्त है।** यानी वह जो ज़िंदा रहनेवाला जो कोई अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव है उसका जघन्य काल भी एक अंतर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल भी एक अंतर्मुहूर्त। हां साहब ?

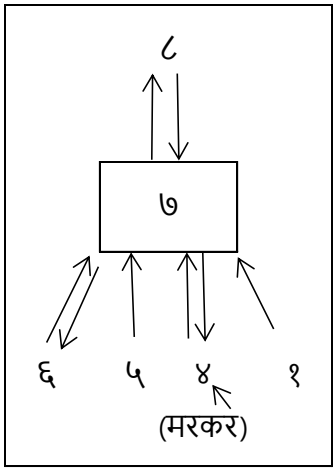
श्रोता: सातवें गुणस्थान में मरण होगा ही नहीं। आपका कहना है कि सातवें गुणस्थान में मरण होगा ही नहीं ? ऐसा बिलकुल नहीं है। अगर वह औपशमिक सम्यक्त्वी होगा तो मरण नहीं होगा, प्रथमोपशमवाला। क्षायिक भी होगा तो मरेगा न। *श्रोता:गुणस्थान चौथा हो जायेगा तब मरण होगा ?* मरण कहां होगा ? मरण सातवें में होगा और ट्रान्झिट पिरिअड विग्रहगति में चौथा होगा। *श्रोता: मरण का जो समय है वही जन्म का समय है ?* नहीं, वह सीधी गति से जावे तो। नहीं परंतु मैं यह कहता हूं कि मरण तो सातवें में है; मुनिराज का मरण है, चौथे गुणस्थानवर्ती का नहीं है। *श्रोता: मरण के समय वह जीव चौथे में ही आयेगा।* आप जरा समझ लीजिये वह मरेगा सातवें में और दूसरे समय में चौथ में जायेगा, मरण के समय चौथे में नहीं आयेगा। बिलकुल यह बात तो निश्चित है। यहां लिख रहे हैं न।

अभी दो बार तो आपको बताया, ऊपर से नीचे आया, सातवें में आया तो सातवें में चौथा गुणस्थान होगा-कौनसा होगा ? और नीचे छठे से सातवें में गया और एक समय में मरण हुआ तो मरण मुनि अवस्था में ही हुआ है और वह वहां से मरने के बाद चौथे में जायेगा यह बात सच्ची है। हां, *श्रोता: मरण का समय और विग्रहगति का समय एक नहीं है ?* देखो इसके बारे में हम बाद में बात करेंगे क्योंकि अन्य लोगों का समय बरबाद नहीं होना जाना चाहिये। लेकिन इस बारे में हम कन्फर्म हैं कि मरण सातवें में होता है, मुनि अवस्था की बात है। ख्याल में आया ? मरण हुआ और वह अनंतर समय में चौथे में गया। अभी अपना पोर्शन जो है उसको पूरा करेंगे। क्योंकि एक के लिये हम अपना टाइम वेस्ट करें उसमें अन्यों का नुकसान होता है।

देखो, **छठे गुणस्थान से ऊपर अप्रमत्तसंयत में जाने की अपेक्षा तथा अपूर्वकरण गुणस्थान से नीचे अप्रमत्तसंयत में आने की अपेक्षा भी विचार करते हैं और मरण की विवक्षा से भी सोचते हैं तो दो, तीन, चार आदि समयरूप काल से लगाकर यथायोग्य अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत बीच के जितने भी भेद हैं; वे सब अप्रमत्तसंयत गुणस्थान के मध्यम काल के भेद हैं।** यानी दो समय के बाद मर जावे तो उसका काल दो समय होगा वह मध्यम काल में आयेगा। दस समय बाद मर जाये तो उसका मध्यम काल दस समय का होगा। इसतरह कहते हैं जो कोई यथायोग्य अंतर्मुहूर्त काल है, उससे एक समय कम और जो मरण का एक समय बताया उससे एक समय अधिक यह बीच के सारे मध्यम काल हैं।

अब फिर से पुस्तक बंद करें, अभी हम गमनागमन को देखना चाहेंगे। कौनसे गुणस्थान की बात चल रही है ? सातवें गुणस्थान की। सातवें गुणस्थान में आगमन कहां-कहां से होगा ? पहले हम गमन देखते थे, अभी हम उलटा करेंगे। सातवें गुणस्थान में आगमन कहां-कहां से होगा ? पन्नालालजी आप बतायेंगे ? *श्रोता: आठवें से सातवें में आयेगा।* आठवें से सातवें में आयेगा और ? *श्रोता: छठे से सातवें में आयेगा।* छठे से सातवें में आयेगा। और ? *श्रोता: पांचवें से सातवें में आयेगा।* पांचवें से सातवें में आयेगा। और ? *श्रोता: चौथे से सातवें में आयेगा।* चौथे से सातवें में आयेगा। और ? *श्रोता: पहले से सातवें में जायेगा।* अरे वाह पन्नालाल तो फिट है भाई। बहुत अच्छी बात है। सातवें में से कहां-कहां जायेगा, गणेशजी आप बताना ? सातवें में से ? *श्रोता: ऊपर आठवें में और नीचे छठे में।* ऊपर आठवें में और नीचे छठे में। अभी

देखो, मुनिराज होने की तैयारी चल रही है सबकी साहब, बहुत सुन्दर।



अभी यहां देखते हैं न,अपने पास लिखा है न। तो आपने जो देख लिया है वह यहीं लिखा है। देखो, यहां सातवें गुणस्थान की बात है। सातवें गुणस्थान से जायेगा तो ऊपर जायेगा तो वह आठवें में जायेगा और नीचे जायेगा तो कहां-कहां जायेगा ? छठे में जायेगा। और कहां जायेगा ? चौथे में जायेगा ? अरे नहीं। वह देखो-देखो, नीचे से ऊपर जो मतलब आगमन की बात आप करेंगे। पहले मैंने यहां घटित किया गमन की, गमन यानी सातवें से कहां-कहां जायेगा। यानी वह गमन की बात हुयी, गमन कहां-कहां करेगा ? सातवें से आठवें में और सातवें से छठे में, हां और अगर मरेगा तो चौथे में जायेगा। मरने की जो अपेक्षा है वह मरने के बाद चौथे में जायेगा, मरते समय चौथा गुणस्थान नहीं रहेगा उसका। यहां क्या कह रहे हैं ? सातवें में कहां-कहां से आयेगा ? ऊपर आठवें में से आयेगा, जिसको हम आगमन कहेंगे। और कहां-कहां से आयेगा ? तो नीचे से चालू करते हैं। पहले गुणस्थान से जीव सातवें में आ सकता है। फिर कहते हैं चौथे गुणस्थान से सातवें में आ सकता है। पांचवें गुणस्थान से सातवें में आ सकता है और छठे गुणस्थान से सातवें में आ सकता है। यह गमनागमन की बात आयी।

अब पुस्तक में देखेंगे। यह पेज नंबर है १६८ **गमन - सातिशय अप्रमत्तसंयत मुनिराज का ऊपर की ओर गमन मात्र अपूर्वकरण गुणस्थान में ही होता है।** यह अपूर्वकरण गुणस्थान का नंबर कौनसा है ? *श्रोता: आठवां।* आठवां। बहुत अच्छा और **स्वस्थान अप्रमत्तसंयत मुनिराज का गमन नीचे प्रमत्तसंयत गुणस्थान में ही होता**

है, वह छठा गुणस्थान है। **यदि उपशमश्रेणी से नीचे पतन काल में कोई मुनिराज अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में आये हैं तो उनका गमन भी प्रमत्तसंयत गुणस्थान में ही होता है।** छठे से फिर वे अन्य गुणस्थान में जावें, वह बात छोड़ो। हां उपशमश्रेणी से नीचे यानी आठवें में से नीचे आयेगा तो सातवें में आकर, अप्रमत्त गुणस्थान में आये हैं उनका भी गमन सातवें में से छठे में ही होगा। सातवें में से डायरेक्ट अन्यत्र कहीं नहीं जायेगा।

छठे से सातवें में आये हों अथवा आठवें से सातवें गुणस्थान में आये हों तो भी यदि ध्यानमग्न मुनिराज का शुद्धोपयोग के काल में ही मरण हो जाता है तो उन मुनिराज का गमन विग्रहगति के प्रथम समय से ही चौथा अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान हो जाता है। अब आगे कहते हैं, आगमन। **आगमन** के लिये बता रहे हैं कि **सादि या अनादि मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनिराज का मिथ्यात्व से सीधे अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में आगमन हो सकता है** यानी पहले से सातवें में। फिर कहते हैं, **अविरतसम्यक्त्व गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनिराज का सीधे अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में आगमन संभव है** यानी कहां ? चौथे से सातवें में। **देशविरत गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनिराज का सीधे अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में आगमन हो सकता है** पांचवें से सातवें में। **प्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती भावलिंगी संतों का आगमन सातवें अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में तो हमेशा होता ही है** यानी छठे से सातवें में।

अब कहते हैं **उपशमश्रेणी से नीचे की ओर पतन करनेवाले अपूर्वकरण गुणस्थान से अप्रमत्तसंयत में आना होता है** वे कहां से आ रहे हैं ? आठवें गुणस्थान से। यहां बार-बार एक ही बात लिख रहे हैं, कौनसी ? कि यहां तो अप्रमत्त में आनेवाले उपशमश्रेणी से ही आते हुये बता रहे हैं। अभी मेरा यह प्रश्न है कि क्षपकश्रेणी से क्यों नहीं आते ? क्योंकि क्षपकश्रेणी में कर्मों का क्षय करते-करते चढ़ते हैं। वे बारहवें गुणस्थान से तेरहवें में ही जाते हैं। तेरहवें में से चौदहवें में जाकर पश्चात् वे गुणस्थानातीत सिद्ध भगवान ही होते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

२३. अप्रमत्त गुणस्थान - विशेषता

हम यह सातवें गुणस्थान के बारे में जान रहे थे जिसको अप्रमत्त गुणस्थान कहते हैं। इस अप्रमत्त गुणस्थान में हम गमनागमन की बात तो देख चुके हैं। लेकिन अभी क्या हो गया है यहां जो बोर्ड था जिस पर गमनागमन लिखा था वह बोर्ड निकाला गया। तो अभी हम पूछेंगे कि सातवें गुणस्थान से गमन कहां-कहां होता है ? पुस्तक में मत देखना, हां बहुत अच्छा, पुस्तक बंद कर दो।

सातवें गुणस्थान से गमन कहां होगा ? कौन बतायेगा बिलकुल सही ? आप बता रही हैं ? हां, बोलो-बोलो, *श्रोता: सातवें से छठे में, पांचवें में, चौथे में और पहले में जायेगा।* सातवें से छठे गुणस्थान में और पांचवें में जायेगा। सातवें से छठे में जायेगा, पांचवें में जायेगा और चौथे में जायेगा और पहले में जायेगा। क्या यह बात सही कह रही हैं ? *श्रोता: सही है।* आप भी वही कह रही हैं। अच्छा, चारुबहन आप क्या कहती हैं ? *श्रोता: सातवें से आठवें में जायेगा, सातवें से छठे में जायेगा, मरकर चौथे में जायेगा।* सातवें में से आठवें में जायेगा, सातवें में से छठे में जायेगा और ? और कहां जायेगा ? मरकर चौथे में जायेगा, मरेगा तो चौथे में जायेगा।

आप जो बता रही हैं पांचवें में जायेगा, चौथे में जायेगा, पहले में जायेगा क्या यह बात सही है ? हां, बहन आप क्या कहती हैं ? इन्होंने बात बतायी वह सही है क्या ? है या नहीं इतना तो बोलो ? *श्रोता: नहीं।* नहीं। तो सही क्या है ? हां ? *श्रोता: सातवें से आठवें में जायेगा और छठे में जायेगा।* हम केवल सातवें में से कहां-कहां जायेगा पूछेंगे। ख्याल में आया ? *श्रोता: सातवें में से छठे और आठवें में जायेगा।* सातवें में से छठे में भी जायेगा और आठवें में भी जायेगा। अभी उन्होंने जो बताया वह सही है कि नहीं ? यह हमारा प्रश्न है। आपने कहा पांचवें में जायेगा, चौथे में जायेगा, पहले में जायेगा। क्या इनका कहना सही है ? हां, बहन आप क्या कहती हैं ? सही है या नहीं ? *श्रोता: उनका सही नहीं है।* उनका सही नहीं है। तो उन्होंने क्या बताया ? आगमन कहां-कहां से होता है वह गमन में बता दिया। क्या कहा ? पहले से सातवें में आगमन होगा, चौथे से सातवें में आगमन होगा और पांचवें से सातवें में आगमन होगा। तो आपने गमन करा दिया उनको।

देखो, मैं यही कहता हूं कि यहां बोर्ड लगाते हैं तो आपके लिये नुकसानदायक

है। क्यों ? हम दिमाग का इस्तेमाल नहीं करना चाहते। रेडिमेड है उसको देखने को चाहते हैं। वह जभी का तभी उत्तर तो जरूर आयेगा और अपने सारे साथी भी इतने अच्छे हैं कोई न कोई तो प्रॉम्प्ट कर ही देता है। देखो, अब हम आते हैं पृष्ठ क्रमांक १७३। यहां सातिशय अप्रमत्त में होनेवाली चार बातें लिखी हैं। कौन-कौनसी बातें लिखी हैं ? **ऊपर लिखित** ऐसा लिखा है न, वहां से हम पढ़ेंगे। मैं बोलूंगा,आपको रिपीट करना है और मन से रिपीट करना है क्योंकि यह याद होना चाहिये। शुरू करते हैं।

प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि। *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि।* फिर से, प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि। *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि।* फिर से, प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि। *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि।* क्या अभी आपने सुनाया ? बोलो, हिन्दी में, प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि। *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि।* यह देखो अभी सातवां गुणस्थान है न, तो इस सातवें सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान में कौनसी-कौनसी बातें होती हैं, इनके नाम से हम परिचित हो जायें और फिर उनका अर्थ क्या है ? वह बाद में देखेंगे।

हां, पहले में पहले क्या बताया ? सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान में प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि होती है। हां, बोलो, प्रति समय *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि होती है।* क्या बोला आपने ? *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि होती है।* हां, आप रिपीट करेंगी बहन ? *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि होती है।* हां, बहुत अच्छा। सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान जो है सातवां ही गुणस्थान है तो उस वक्त उसमें क्या-क्या बातें बनती हैं ? वह हम देखेंगे। दिलीपभाई आप बतायें पहले अभी जो हमने पढ़ा था, वह क्या पढ़ा ? मैं एक बार बोलूंगा, रिपीट करना क्योंकि हमें इन चारों ही बातों को आज देखना है। कह रहे हैं प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि। *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि।* हां, अब आगे बढ़ते हैं। यह तो बहुत छोटा है। **स्थितिबंधापसरण**, *श्रोता: स्थितिबंधापसरण।* स्थितिबंधापसरण। *श्रोता: स्थितिबंधापसरण।* रविकांत जी आपने क्या बताया अभी ? हमने कौन-कौनसे प्रकार देखे ? देखो, एक मिनट में भूल जाते हैं। बोलो साहब, *श्रोता: दूसरा स्थितिबंधापसरण।* क्या कहा इन्होंने कन्नुभाई ? *श्रोता: स्थितिबंधापसरण।* स्थितिबंधापसरण। देखो यह सारे वर्ड्स जो हैं, बिलकुल हमारे लिये नये हैं। हम दो-दो बार, चार-चार बार जब तक रिपीट नहीं करेंगे तब तक बात कुछ हमारे ख्याल में नहीं आयेगी। अब नाम ही जिसको याद नहीं होंगे तो उसका

अर्थ भी कहां से पता लगेगा। और वहां जो क्रिया हो रही है वह कैसे पता चलेगी ?

इसलिये फिर से, पहला जो पॉइंट हम देख रहे हैं उसमें लिखा है प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि। बोलो, *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि।* फिर से, *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि।* प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि। *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि।* हां गणेश जी क्या अभी बात बताया आपने ? *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि।*बहुत अच्छा, देखो सबको याद हो गया। क्या गड़बड़ है उसमें ? और दूसरा पॉइंट जो है वह कौनसा है ? *श्रोता: स्थितिबंधापसरण।* अरे वाह, महिलायें बोलेंगी एक साथ। *श्रोता: स्थितिबंधापसरण।* स्थितिबंधापसरण। *श्रोता: स्थितिबंधापसरण।* सब लोग कहेंगे स्थितिबंधापसरण। *श्रोता: स्थितिबंधापसरण।* अभी देखो क्या बता रहे हैं यहां ? अपसरण का अर्थ क्या है ? कम होते जाना। किसमें कमी हो रही है ? स्थितिबंध में। यह स्थिति किसकी हो रही है ? जो नये कर्म बंधे जाते हैं वे कम-कम स्थिति के बंधेंगे। ऐसी अलौकिक बात सातवें गुणस्थान में होती है। वह आगे जाकर हम देखेंगे कैसा होता है क्या होता है। पहले नाम तो याद करेंगे।

अभी हमारे कौन ऐसा वीर होगा कि जो दोनों पॉइंट्स के नाम बतायेंगे ? आप बतायेंगे, बहुत अच्छा दीपकभाई व्हेरी गुड। *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि, स्थितिबंधापसरण।* बहुत अच्छा, प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि और दूसरा पॉइंट स्थितिबंधापसरण। किसको याद नहीं हुआ हाथ उठायें। सबको याद हुआ ? बहुत अच्छा, आप बोलना चाहेंगी बहन ? *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि, स्थितिबंधापसरण।* बहुत अच्छा, आपने सही उत्तर दिया। क्या कहा कि प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि- एक पॉइंट, दूसरा पॉइंट स्थितिबंधापसरण। अभी यहां क्या कहते हैं ? देखो, यह प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि की बात मैंने आपको नहीं बतायी है फिर भी थोड़े में हम देख लेते हैं। आगे जाकर डिटेल में देखनेवाले हैं।

यह विशुद्धि जो होती है वह विशुद्धि जिसको हम कहेंगे मंद-मंद परिणाम। शुद्धोपयोग हो रहा है और अशुद्धोपयोग तो ख़तम हो गया; अशुद्धोपयोग ख़तम हो गया और विशुद्धि बढ़ रही है यानी उसके शुभ-शुभ परिणाम अधिक हो रहे हैं। वह तो मंद-मंद परिणाम होंगे तो बढ़नेवाले यानी जिसको हम कहते हैं अनंतगुणी विशुद्धि हो रही है। यानी संक्लेशता कम हो रही है और विशुद्धि बढ़ रही है। ख्याल में आया ? तो

वह कह रहे हैं कि कैसी बढ़ रही है ? तो प्रति समय, हर समय अनंतगुणी। पहले समय में अनंतगुणी विशुद्धि, दूसरे समय में उससे भी अनंतगुणी विशुद्धि यानी अनंतगुणा मल्टिप्लाइड बाय अनंतगुणा, तीसरे समय भी उससे भी अनंतगुणी विशुद्धि, चौथे समय में ऐसा कब तक चलेगा ? तो कहते हैं जब तक यह जीव सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान में होगा, तो उसकी कषायों की इतनी मंदता-मंदता होगी यानी संक्लेश परिणाम नहीं के बराबर हो जायेंगे और यहां मंदता यानी विशुद्धि बढ़ती जायेगी। कितनी ? हर समय अनंतगुणी, हर समय अनंतगुणी। ख्याल में आया ?

अब क्या कह रहे हैं देखो- फिर से मैं पहला और दूसरा पॉइंट बोलूंगा, आपको कुछ भी बोलना नहीं। तीसरा पॉइंट बोलूंगा तो सबको खड़े आवाज में बोलना है। क्या कह रहे हैं ? पहला पॉइंट है प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि और दूसरा पॉइंट है स्थितिबंधापसरण। अभी तीसरा पॉइंट मैं पढ़ूंगा आपको रिपीट करना है। **प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना।** *श्रोता: प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना।* फिर से, प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना। *श्रोता: प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना।* देखो आपको मालूम है ? ये घातिकर्म जो हैं ये घातिकर्म कैसे हैं ? प्रशस्त हैं या अप्रशस्त हैं ? *श्रोता: अप्रशस्त हैं।* अप्रशस्त हैं। कौनसे ? ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय यह सब कैसे हैं ? अप्रशस्त हैं, पाप प्रकृतियां हैं, ख्याल में आया ?

जो अघातिकर्म हैं उनमें दो भेद हैं- प्रशस्त प्रकृतियां और अप्रशस्त प्रकृतियां। फॉर एक्झॅम्पल, गोत्र अघातिकर्म है उसमें उच्चगोत्र प्रशस्त प्रकृति है, नीचगोत्र अप्रशस्त प्रकृति है। वेदनीयकर्म है उस वेदनीयकर्म में दो भेद हैं- एक सातावेदनीय है वह प्रशस्त प्रकृति है, असातावेदनीय है वह अप्रशस्त है। अब आयु है यह आयु कितने प्रकार की होती है साहब ? आयु कितने प्रकार की होती है ? नहीं मालूम, अच्छा। कन्नुभाई बताना चाहते हैं, बिलकुल बढ़िया बोलो साहब, *श्रोता: एक ही प्रकार की।* एक ही प्रकार की। बहुत अच्छा, आप क्या कह रहे हैं ? *श्रोता: आयु चार प्रकार की होती है।* आयु कितने प्रकार की होती है उतना बोलो आप। चार प्रकार की, है न ? देखो मनुष्यायु, तिर्यंचायु, नरकायु और देवायु। तो उसमें से जो मनुष्यायु है, देवायु है और तिर्यंचायु है ये प्रशस्त प्रकृतियां हैं। आप कहेंगे तिर्यंचायु को भी प्रशस्त प्रकृति ? हां क्यों ? देवायु और मनुष्यायु के समान तिर्यंचायु की भी विशुद्धि में लंबी स्थिति बंधती

है, वे तीनों प्रशस्त प्रकृतियां हैं और नरकायु की संक्लेश परिणामों में लंबी स्थिति बंधती है, वह अप्रशस्त प्रकृति है। वैसे नामकर्म में तो ९३ भेद हैं, सब डिव्हिजन्स। तो उसमें अभी हम गिनने में अटकेगें तो यहीं सातवां गुणस्थान सबको प्राप्त होगा। तो हम इतना कहेंगे कि उसमें से कुछ प्रशस्त हैं और कुछ अप्रशस्त हैं। यहां तक समझ में आया ?

अभी क्या कहना चाहते हैं ? तीसरा पॉइंट- **प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग** अनुभाग यानी फलदान शक्ति। क्या हो रहा है ? **अनंतगुणा** बढ़ रहा है यानी क्या हो रहा है ? वह सातवां गुणस्थान जो है न वह तो अंतर्मुहूर्तवाला है; उसमें क्या हो रहा है ? प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि बढ़ रही है और क्या हो रहा है ? स्थितिबंधापसरण हो रहा है। तीसरी बात क्या है ? प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना। बोलो अभी, *श्रोता: प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना।* अभी समझ गये न यह क्या बात चल रही है। पहले केवल हम पढ़ लेते हैं न तो जरा थोड़ासा माथा ठनक जाता है। क्या हो रहा है ? क्या हो रहा है ? घबराना मत, सातवें में जायेगा तो यह सारा ऑटोमॅटिकलि होगा तुझे कुछ करना-धरना नहीं है। क्योंकि तू तो स्वरूप में गुप्त है, स्वरूप में लीन है तो बाकी करने-धरने की कोई जवाबदारी-रिस्पॉन्सिबिलिटि तेरी है नहीं। जहां जो होना है कर्मों में, वह उसके अपने-अपने से होगा। तुझे कोई तकलीफ लेने की आवश्यकता नहीं है। तुझे केवल स्वरूप में लीन रहना है। बाकी सब बातें ऑटोमॅटिकलि होती हैं। कितना आसान काम है कि नहीं ?

अब चौथा पॉइंट क्या है ? तीसरे में क्या कहा ? प्रशस्त प्रकृतियों का, अभी कह रहे हैं **अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटना।** अभी अप्रशस्त प्रकृतियों में हमने असातावेदनीय कहा। हां सुरेशभाई आप जरा यहां ध्यान रखना मैं आपके लिये पॉइंट बता रहा हूं। जो आपने बोला था कि सातवें गुणस्थान में भोजन वगैरह कुछ नहीं होता है ? अब हमने बताया कि केवली के भी नहीं होता है और कई लोग ऐसा मानते हैं कि केवली को आहार होता है, वह भी कवलाहार होता है। कुछ लोग ऐसा माननेवाले हैं। क्या करें ! अभी यहां बता रहे हैं देखो सातवें गुणस्थान में अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटता जाता है। अनुभाग यानी फलदान देने की शक्ति। अभी असातावेदनीय कर्म है वह प्रशस्त प्रकृति है या अप्रशस्त है ? हां, बोलो-बोलो, *श्रोता: अप्रशस्त है।* अप्रशस्त है। उसका अनुभाग यानी उसका फलदान जो है वह कम, कम, कम कितना ? अनंतगुणा, अनंतगुणा, अनंतगुणा घटते ही जा रहा है।

अब बात ऐसी होती है देखो, अपनी-तुम्हारी बात करते हैं जभी हमारा असातावेदनीय कर्म का उदय होता है और हमारे साथ मोहनीयकर्म भी है तो हमें भूख लगती है और हमें खाने की इच्छा भी होती है। सुनना- अब जो केवली भगवान हैं उनके क्या है ? इच्छा है कि नहीं उनको ? वे तो वीतराग हैं। किसी प्रकार की इच्छा है नहीं और उनके मोहनीयकर्म है कि नहीं ? तो मोहनीयकर्म और असातावेदनीय दोनों होंगे तो भूख लगती है और इनका जो असाता है वह तो एकदम जिसको हम कहते हैं कि वीक-वीक यानी एकदम दुबला-पतला हो गया है क्योंकि अनंतगुणा उसके अनुभाग घट रहे हैं और सामने मोहनीय नहीं है तो उनके खाने के भाव ही नहीं होंगे। ख्याल में आया ? यह केवली की बात कर रहा हूं। ऐसी ही बात यहां कह रहे हैं कि सातवें गुणस्थान में जो अप्रशस्त प्रकृतियां हैं उनका अनुभाग अनंतगुणा घटते जाता है, घटते जाता है, घटते जाता है।

ये चार बातें हो गयी। अभी कौन बताना चाहेगा ? हां, अरे वाह शाबाश, *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना, स्थितिबंधापसरण, प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना और चौथा अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटना।* प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना, स्थितिबंधापसरण, प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना, बहुत अच्छा और चौथा क्या है ? अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटना। देखो कितनी व्यवस्था अच्छी है आपको कुछ करना-धरना रह गया क्या ? ख्याल में आया ? यह सहज हो रहा है। हमको क्या करना है साहब ? अरे तू आत्मा में लीन हो जा न, बाकी कुछ करना ही नहीं है यहां क्योंकि सातवें गुणस्थानवर्ती शुद्धोपयोग में ही होते हैं। वह अभी कितना कर्म बाकी है ? अरे ये ये असाता चल हठ, हठ, हठ। ऐसा कुछ नहीं करना है उसको। हां ख्याल में आया न ?

इन चारों ही का नाम है चार आवश्यक। क्या नाम है सुरेशभाई ? *श्रोता:चार आवश्यक।* चार आवश्यक। यह कहां होते हैं ? यहां अप्रमत्त गुणस्थान जो सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान है और वह जीव क्या कर रहा है ? श्रेणी के सन्मुख है। श्रेणी चढ़ने के लिये उद्यत हुआ है, उसकी बात यहां कर रहे हैं। अभी यह जो चार बातें हैं पुरुषों में से कोई बताना चाहेगा ? हां, रमेशभाई बोलो आप, आपको तो चान्स ही नहीं मिल रहा है सॉरी। *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना, स्थितिबंधापसरण, प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना और अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग*

अनंतगुणा घटना। यह बात हमने देखी। प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना कहो या विशुद्धि कहो बहुत अच्छा हां। स्थितिबंधापसरण दूसरा पॉइंट, तीसरा ? प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना और चौथा ? हां और चौथा है अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना ? *सभी श्रोता: घटना।* हां ठीक है, ठीक है। यह बात हमने देखी। अब उसके डिटेल देखने के लिये हम पेज नंबर १६९ पर आयेंगे। अब थोड़ी ही देर में मैं ये चार बातें पूछनेवाला हूं, हां तैयारी रखना।

देखो अभी यहां क्या कह रहे हैं ? हमने गमनागमन की अपेक्षा से विचार किया था अभी १६९ पृष्ठ पर विशेष अपेक्षा विचार करेंगे। यह सातवें गुणस्थान की विशेषता क्या है ? उसमें कौनसी विशेष बातें घटित होती हैं ? यह हमें देखना है। यहां कह रहे हैं **विशेष अपेक्षा विचार- सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान में** इसका अर्थ क्या हो गया ? स्वस्थान अप्रमत्त गुणस्थान में ये चार आवश्यक नहीं होते। वे किसमें होते हैं ? सातिशय आगे क्या ? हां पूरा बोलो, सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान तो क्या कहा ? सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान में ये **चार आवश्यक कार्य होते हैं।** पहला, **समय-समय प्रति आत्मा में अनंतगुणी विशुद्धि होती रहती है।** देखो, यानी उसके जो परिणाम हैं वे विशुद्ध उसके आगे अनंत विशुद्ध, उसके आगे अनंत विशुद्ध, ऐसे हर समय।

सातवें गुणस्थान का काल कितना होता है साहब ? *श्रोता: अंतर्मुहूर्त।* अंतर्मुहूर्त। अंतर्मुहूर्त में कितने समय होते हैं ? असंख्यात। असंख्यात समय में अनंतगुणी विशुद्धि, अनंतगुणी विशुद्धि। कितनी विशुद्धि बढ़ेगी ख्याल में आया ? जरा सोचो तो सही ! हां भाई अनंत होगी। नहीं समझ में आया ? सुनो-सुनो, असंख्यात बार अनंतगुणा। जो कुछ उत्तर आयेगा उससे गुणा अनंत। यानी एक को भी अनंत से गुनेंगे तो उसका गुणाकार अनंत ही होगा और दो को गुनेंगे तो उसका दो अनंत हो गया। असंख्यात से गुनेंगे तो असंख्यात अनंत होंगे। उसके आगेवाले गिन लो आप। वह पहले समय में ऐसा हुआ। दूसरे समय में उससे अनंतगुणा, उससे अनंतगुणा। ऐसा करते-करते जाना असंख्यात टाइम तक। क्या कहा देखो ? **पहले समय में जितनी मात्रा में** यानी जितने प्रपोर्शन में **विशुद्धि है, उससे अनंतगुणी नयी विशिष्ट विशुद्धि दूसरे समय में हो जाती है। दूसरे समय की वीतरागता से तीसरे।** यह वीतरागता जो लिखा है न, उसकी जगह हम विशुद्धि शब्द वापरेंगे। हां, क्या कह रहे ? यहां कह रहे हैं कि दूसरे समय की विशुद्धि से क्योंकि ऊपर टायटल क्या दिया है ? अनंतगुणी

विशुद्धि होती है और विशुद्धि यह तो राग परिणाम की बात चल रही है। हां साहब ? कषायों की मंदता की बात चल रही है। मंद कषाय होंगे तो राग परिणाम ही होगा न भाई। तो बता रहे हैं फिर से सेकंड लाइन पढ़ रहा हूं। पहले समय में जितनी मात्रा में विशुद्धि है उससे अनंतगुणी नयी विशिष्ट विशुद्धि दूसरे समय में हो जाती है। दूसरे समय की विशुद्धि **से तीसरे समय की** विशुद्धि **अनंतगुणी बढ़ती है; ऐसा क्रम अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत लगातार चलता है।**

अभी यहां जो कह रहे हैं **विशुद्धि** या विशुद्धता **में वृद्धिंगत वीतराग परिणाम और घटता हुआ कषाय का अंश- दोनों गर्भित हैं।** यानी वहां विशुद्धि भी बढ़ रही है और घटता हुआ कषाय का अंश, यह कषाय का जो अंश है वह मंद-मंद हो रहा है यानी वह घट रहा है। यह दोनों ही बातें उसमें गर्भित हैं। अभी उन्होंने एक उदाहरण देने की कोशिश की है क्योंकि हमको अनंतगुणा, अनंतगुणा, अनंतगुणा करने से तो कुछ समझ में ही नहीं आता है। क्योंकि हमने इंग्लिश में पढ़ा इन्फिनिट तो इन्फिनिट के आगे कुछ होता ही नहीं उनके। यहां कह रहे हैं कि अनंत के अनंत भेद हैं। प्रमोदभाई डू यू अॅग्री विद धिस ? मैं आपको एक उदाहरण देता हूं फट से समझ जायेंगे आप।

अनंत के अनंत भेद हैं, असंख्यात के असंख्यात भेद हैं और लाख के लाखों भेद हैं। देखो, अभी हम पहला प्रश्न पन्नालालजी से ही पूछेंगे। मेरे पास एक लाख रुपया है तो आप मुझे क्या कहोगे ? लखपति कहोगे या लक्षाधीश जो भी आपके भाषा में होता हो और हमारे ब्रह्मदेवजी के पास एक लाख रुपया और एक पैसा है। उनको क्या कहोगे ? लखपति। इनके पास लाख प्लस दो पैसा, तीन पैसा, चार पैसा, पांच पैसा, एक लाख एक रुपया। वह कौन होगा ? यह सौ भेद हो गये लखपति के। एक लाख एक रुपया एक पैसा, ऐसे करते-करते निन्यानवें लाख निन्यानवें हजार नौ सौ निन्यानवें रुपये पॉइंट निन्यानवें पैसे उसको क्या कहोगे ? करोड़पति ? *श्रोता: लखपति।* लखपति। तो लाखों के कितने भेद हुये ? लाख के कितने भेद ? लाखों भेद हो गये न भैया ? हां, लाखों भेद हो गये। वैसे जैनदर्शन के अनुसार अनंत के भी अनंत भेद हैं, कुछ आपके सामने रखता हूं। परीत अनंत यानी परीतानंत, युक्तानंत और अनंतानंत। ये तीन तो मेन भेद हैं। आपको बताया था वह परीतासंख्यात, युक्तासंख्यात और असंख्यातासंख्यात। तो यहां असंख्यातासंख्यात नहीं, अनंतानंत अनंतगुणा अनंत जो

होगा वह - सुनना, यह सबके जघन्य परीतानंत, मध्यम परीतानंत और उत्कृष्ट परीतानंत; ऐसे आगे के लेना जघन्य युक्तानंत आदि-आदि। यह प्रत्येक के तीन-तीन यानी ये नौ भेद यहां मुख्य रूप से दिये हैं। लेकिन जो मध्यम है न, जो जघन्य है और जो उत्कृष्ट है उनके बीचवाले जो मध्यम अनंत के भेद हैं वे अनंत-अनंत हैं। हमें तो जैनदर्शन यानी ऐसा कुछ लगता है। अरे हमारी अपनी बुद्धि काम न करे ऐसे इन आचार्यों के पास ऐसी एक-एक बातें हैं। यह सब तो वास्तविकता है। यह जिनेन्द्र भगवान के दिव्यध्वनि में आयी हुयी बात है। ख्याल में आया ?

अब यहां कह रहे हैं कि विशुद्धि अनंतगुणी बढ़ रही है। वह बात अपने फिट नहीं बैठ रही है तो यहां उदाहरण दिया है सादा। बहुत ही अच्छा है देखो-देखो, क्योंकि यह क्या है ? यह जैन दर्शन है न, जैनधर्म आप तो नहीं समझोगे बनियों के हाथ में आया है। बनिया यानी क्या ? व्यापारी। पैसे की बात बतायेंगे तो वे जल्दी समझते हैं। क्या बता रहे हैं ? देखो, जैसे उदाहरण दिया न **किसी आदमी को आज पहले दिन दस रुपये का लाभ हुआ। वह दस रुपये का लाभ प्रत्येक दिन दस गुणा बढ़ता रहता है, तो उसे सातवें दिन कितना लाभ होता है ? इसका निर्णय कर लेते हैं। इसीसे वीतरागता में अनंतगुणी वृद्धि का अनुमान हो जाता है।**

हमें समझने के लिये यह बात बताना चाहते हैं। कह रहे हैं यहां एक आंकड़ा लिखा है, **पहले दिन का लाभ मात्र दस रुपया का है। दूसरे दिन का लाभ दसगुणा** है - अर्थात् **१० x १० = १०० रुपये।** बराबर ? **तीसरे दिन का लाभ १०० x १० = १००० रुपये। चौथे दिन का लाभ १००० x १० = १०००० रुपये। पांचवें दिन का लाभ १०००० x १० = १००००० रुपये। छठे दिन का लाभ एक लाख x १० = दस लाख रुपये। सातवें दिन का लाभ दस लाख x १० = एक करोड़ रुपये।** यह तो दस गुणा की बात की। वृद्धि कितनी हुयी ? प्रतिदिन १० गुणा-१० गुणा। और यहां क्या हो रहा है ? विशुद्धि का बढ़ना जो चल रहा है वह कितना है ? *श्रोता: प्रतिसमय अनंत गुणा।* तो कितना अच्छा लगा कि नहीं ? परंतु वह अच्छा कब लगेगा ? जब हम सातिशय अप्रमत्त में जायेंगे। अभी कम से कम उसका व्हिजुअलायझेशन तो हमारी आंखों के सामने आता है कि यह जो मोक्षमार्ग है, इस मोक्षमार्ग में क्या-क्या बातें कर्मों में घटित होती हैं, जीवों के परिणामों में क्या-क्या होता है ? ये सारी बातें आयेगी।

यहां हमें अपने परिणामों को संभालना है। हमें कर्मों में कुछ भी हेरा-फेरी करनी नहीं है, कुछ भी अदल-बदल करना नहीं है। क्यों ? कर ही नहीं सकते न भाई ! नहीं समझे आप ? देखो हमारे प्रमोदजी हैं न, उनका चेहरा बिलकुल आयना है। उनके अंदर में जो विचार आते हैं चेहरे पर आते हैं। यह कैसा पॉसिबल है ? कर्मों का कुछ नहीं कर सकते ? हां ! क्योंकि कर्म पुद्गलद्रव्य है, मैं जीवद्रव्य हूं। दो द्रव्यों में अत्यंताभाव है। इसलिये ऐसा भी आप कहो कि मैंने आज तक कर्म को बांधा ही नहीं तो तुम गलत नहीं हो। क्या ? अरे यहां तो कहते हैं तुमको उपशम करना है, तुमको क्षयोपशम करना है, तुमको क्षय करना है। भैया करना है नहीं, जो होता है उसका कथन है और निमित्त की अपेक्षा से कथन किया जाता है कि जीव ने दर्शनमोहनीय को उपशमाया, दर्शनमोहनीय का क्षय किया।

यह सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध है, वहां उपचार से एक द्रव्य ने दूसरे द्रव्य का काम किया ऐसा कहने में आता है। वास्तविकता जो है उसे हमें कभी भी भूलना नहीं चाहिये कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को स्पर्श तक नहीं करता क्योंकि दोनों द्रव्यों के स्वचतुष्टय भिन्न हैं। अब यह स्वचतुष्टय भिन्न है क्या होता है ? स्पर्श नहीं करता यानी क्या होता है ? यह तो भैया कैसे यहां बताऊं ? यहां हमें इतना ही देखना है कि कर्मों में जो कोई बदलाव-तबदीली हो रही है वह उसकी अपनी स्वतंत्र योग्यता से अपने में अपने से हो रही है और यहां जीव के परिणाम अपने में अपने से हो रहे हैं। दोनों एक साथ घटित होते हैं इसलिये उसको निमित्त-नैमित्तिक संबंध कहने में आता है।

अब आगे **व्यापार में यदि किसीको रोज दस गुणा लाभ होता है तो उस व्यापारी को सातवें दिन ही एक करोड़ रुपये का लाभ हो जाता है।** अब क्या बता रहे हैं ? **यहां अप्रमत्त गुणस्थान में तो प्रति समय अनंतगुणी वीतरागता** यह वीतरागता नहीं विशुद्धि **बढ़ती ही जाती है। यदि सातिशय अप्रमत्तसंयत मुनिराज के यथायोग्य** मात्र एक **अंतर्मुहूर्त काल के असंख्यात समयों में समय-समय प्रति अनंतगुणी विशुद्धि बढ़ती जाती है तो वह विशुद्धि आगे कितनी बढ़ सकती है।** क्योंकि यह राग तो दसवें गुणस्थान तक है न, तब तक तो विशुद्धि, विशुद्धि, विशुद्धि कितनी हो जायेगी आगे। **इसका सामान्य बोध हमें आगम प्रमाण से हो जाता है। अनंत का प्रत्यक्ष ज्ञान तो मात्र** किसको होता है ? क्योंकि अनंत की बात तो केवल केवलज्ञानी ही जानेंगे। असंख्यात की बात अवधिज्ञानी जानेंगे और संख्यात की बात

मतिश्रुतज्ञानी जानेंगे। ख्याल में आया ? इसलिये क्या कह रहे हैं ?

अनंत का प्रत्यक्ष ज्ञान मात्र यानी सिर्फ-ओनलि **सर्वज्ञ भगवान को ही होता है। वीतरागता के अनंतगुणी वृद्धि का एवं कषाय के उत्तरोत्तर हानी/ हीन-हीन होने का यह क्रम जीव जब तक पूर्ण वीतरागतारूप नहीं परिणमता है तब तक अर्थात् ग्यारहवें या बारहवें गुणस्थान पर्यंत लगातार चलता ही रहता है।** यानी ग्यारहवां या बारहवां गुणस्थान प्राप्त होगा तो यह सिलसिला रुक जायेगा। उसके पहले दसवें में सूक्ष्मलोभ है तब तक यह अनंतगुणी विशुद्धि-अनंतगुणी विशुद्धि चलती ही रहेगी। अब आगे कहते हैं, **बारहवें गुणस्थान से आगे वीतरागता में** कहो या विशुद्धि में **अनंतगुणी वृद्धि क्यों नहीं होती ?** तो कहते हैं **बारहवें गुणस्थान के प्रथम समय में ही वीतरागता परिपूर्ण प्रगट हो गयी है।** अभी वहां पहले समय में कोई राग रहा ही नहीं है। **तो अब आगे बढ़ने के लिये कुछ अवकाश बचा ही नहीं है। अतः पूर्व वीतराग होने पर अनंतगुणी विशुद्धिरूप पूर्ण वीतरागता** सतत **अखंड और अविचलरूप से अनंतकाल पर्यंत बनी ही रहती है।**

यह अनंतगुणी विशुद्धि की बात समझ में आ गयी ? पहला पॉइंट कौनसा देखा था हमने ? पीछे में कोई उत्तर देगा ? हां-हां बोलो-बोलो अलकाबहन, क्यों आपके सामने पुस्तक है न। अभी हमने किसको देखा ? प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना। यह कितनी ? दस बार तो याद कराया था। हां जरा उपयोग यहां पर लगायें सब बात ख्याल में रहेगी। क्या बताया बहन अभी ? हमने कौनसे पॉइंट को देखा ? *श्रोताः प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना।* हां, अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना। सबको ख्याल में आया ? हां साहब, अब आगे बढ़ते हैं।

दूसरा पॉइंट कौनसा था हमने देखा था ? *श्रोताः स्थितिबंधापसरण।* बहुत अच्छा, किताब में देखकर बोला कि याद है ? याद है। अच्छा, अनिलभाई तीसरा पॉइंट कौनसा रहेगा अपना ? कोई बात नहीं, चलो-चलो। अभी हम दूसरा पॉइंट देखते हैं- स्थितिबंधापसरण। ६६ नंबर का प्रश्न है वहां लिखते हैं। **स्थितिबंध किसे कहते हैं ?** अपसरण की बात बाद में करेंगे। अपसरण यानी कम-कम होना और उत्सरण यानी बढ़ते जाना। यहां क्या हो रहा है ? स्थिति का अपसरण हो रहा है। दोनों शब्द मिलकर स्थितिबंधापसरण। हम उसको स्प्लिट करते हैं न, उसको अलग-अलग करते हैं तो

समझने में आसानी होती है। एक ही बड़ा शब्द वापरते हैं तो अपने को समझ में नहीं आता है कि किसके बारे में क्या बात चल रही है।

इसलिये कहते हैं स्थितिबंध किसे कहते हैं ? तो ज्ञानावरणादि; ज्ञानावरणादि में किसको-किसको लेना ? *श्रोता: ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय।* हां, अरे सभी आठों कर्म। हां, यहां देखो किसको-किसको कहते हैं देखेंगे। यहां स्थितिबंधापसरण में आयु को छोड़कर की बात है हो। आयु कम हो जायेगी तो आप कितने नाराज होंगे न ? यहां स्थितिबंधापसरण की बात नहीं कर रहे। स्थितिबंध किसे कहना वह बता रहे हैं। **ज्ञानावरणादि कर्मरूप परिणमित पुद्गल स्कंधों का आत्मप्रदेशों के साथ एकक्षेत्रावगाह स्थितिरूप कालावधि के बंधन को स्थितिबंध कहते हैं।** अरे बाप रे यहां क्या कहना चाहते हैं ? यहां कह रहे हैं ज्ञानावरणादि कर्म हैं वे कैसे हैं ? कर्मरूप परिणमित जो पुद्गल स्कंध हैं यानी जो कार्माणवर्गणा है। जीव जब कोई विशिष्ट परिणाम करता है तो कार्माणवर्गणा कर्मरूप हो जाती हैं। वह कर्मरूप परिणमित पुद्गल स्कंध का आत्मप्रदेशों के साथ यानी जहां जिस क्षेत्र में आत्मा के प्रदेश हैं उसी क्षेत्र में कर्म आकर रुकते हैं। उनका आत्मप्रदेशों के साथ एकक्षेत्रावगाह स्थितिरूप; यानी एक क्षेत्र में ही अवगाहना जिनकी है यानी एक ही क्षेत्र में रहने का उनका जो कुछ कालावधि है उसको - वह स्थितिरूप रह रहे हैं न। जैसे किसीने दर्शनमोहनीय कर्म का उत्कृष्ट स्थितिबंध किया तो ७० कोड़ाकोड़ी सागर का हो सकता है।

जहां आत्मा के प्रदेश हैं वहीं पर कर्म हैं; तो इन दोनों का एक ही क्षेत्र में वे हैं उनकी अवगाहना कहो या स्थिति रहना कहो एकक्षेत्र में हैं उसको एकक्षेत्रावगाह कहते हैं। स्थितिरूप कालावधि के बंधन को यानी वे कितने काल तक रहेंगे उसको कहते हैं स्थितिबंध। यह हमने देखा था न, प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, स्थितिबंध और अनुभागबंध। उसमें हमने स्थितिबंध को देखा था, कितने काल तक यह कर्म आत्मा के साथ रहेगा उसको स्थितिबंध कहेंगे। यह बात समझ में आयी कि नहीं ? एकक्षेत्र में रहना यानी क्या ? देखो अभी मैं आपको दूसरी तरह से बताता हूं। एकक्षेत्रावगाहरूप संबंध समझ में आया ? हां साहब आपको ? फर्स्ट चेयर हां ? एकक्षेत्रावगाह आकाश के एक ही क्षेत्र में रहना उसको एकक्षेत्रावगाह संबंध कहते हैं। हां क्या बता रहे कोई ? *श्रोता: दूध और पानी जैसा एकक्षेत्रावगाह संबंध।* हां दूध और पानी जैसा।

देखो-देखो, उससे भी हम दूसरी बात करेंगे। अभी यह हॉल है। बिलकुल सब दरवाजे खिड़कियां बंद कर दिये और यहां एक बल्ब जलाया। एक बल्ब का प्रकाश आया। वह लाल रंग का बल्ब था। वह पूरे हॉल में वह प्रकाश फैला। अब वहां से पीले रंग का बल्ब जलाया तो उसका भी प्रकाश पूरे हॉल में फैला। एक बल्ब जलाये, दो बल्ब जलाये, दस बल्ब जलाये, बीस बल्ब जलाये, सौ बल्ब जलाये तो उनका प्रकाश कहां जायेगा ? हॉल के बाहर जायेगा न, अभी ज्यादा गर्दी हो जाये तो ? उस हॉल का जो क्षेत्र है उसी क्षेत्र में सारे अलग-अलग रंग के जो कोई प्रकाश थे वे एकक्षेत्र में रहे। एक-एक बल्ब बंद कर दिया तो जो बंद किया वह रंग ख़तम हो गया ऐसा समझ लेना।

यहां कहते हैं कि यह सब प्रकाशों का एकक्षेत्रावगाह संबंध है। एक ही क्षेत्र में अवगाहना हुयी है उनकी। रहने का ठिकाना एक ही जगह रहा। तो यहां एक बात ध्यान में रखनी है कि यह एक क्षेत्र में आये थे, जुड़ गये थे तो अलग-अलग हो सकते हैं। वैसे आत्मा और शरीर, इन दोनों का क्षेत्र एक ही है। आत्मा और कर्म दोनों एक ही क्षेत्र में हैं। जो आकर एक क्षेत्र में रहे हैं वे जुदे-जुदे होंगे कि नहीं ? तो किसीका मरण हो जाये तो क्या होगा ? मेरा प्रश्न यह है कि जीव मरेगा या शरीर मरेगा ? कविताबहन, आपको बताना ही चाहिये जीव मरेगा कि शरीर मरेगा ? कौन नहीं मरेगा ? *श्रोता: जीव नहीं मरेगा, शरीर मरेगा।* जीव नहीं मरेगा, शरीर मरेगा। हां आप क्या कहते हैं ? आप नहीं, आपके पीछे, *श्रोता: जीव भी नहीं मरेगा, शरीर भी नहीं मरेगा।* अरे वाह एकदम फटाफट बोल दिया आपने, सही बोल दिया। क्योंकि प्रत्येक द्रव्य अनादिअनंत है, उसकी पर्याय में बदल हो जायेगा लेकिन द्रव्य नहीं मरेगा।

हमको ऐसा ही लगता है कि जीव तो नहीं मरता है क्योंकि जीव किसको कहते हैं कि जो सदा जीता है, वह मरता ही नहीं । तो कौन मरेगा ? शरीर ? अरे शरीर भी नहीं मरेगा वह भी पुद्गलद्रव्य है। उसका अवस्थांतर होगा। ख्याल में आया ? वह पुद्गल के परमाणुओं की पर्याय पलटेगी लेकिन पुद्गलद्रव्य तो कायम रहेगा। तो अभी उनका क्या हुआ था ? एक क्षेत्र में वे आये थे। कहां ? जहां जीव का क्षेत्र है, वहीं शरीर का क्षेत्र है और वहीं कर्म का क्षेत्र। तो क्या ? जिसको हम कहते हैं ओव्हरलॅप हो गये या मर्ज हो गये एक साथ। लेकिन वे जो अलग-अलग से आये वे अलग हो जायेंगे। इसलिये कहते हैं वह एकक्षेत्रावगाह संबंध है। अभी यहां जो बात चल रही है क्या कहा देखो ? आत्मप्रदेशों के साथ एकक्षेत्रावगाह स्थितिरूप कालावधि के बंधन को स्थितिबंध कहते

हैं। वे एक क्षेत्र में रहते हैं। अपना-अपना समय पूरा होने के बाद कर्म निकल जाते हैं। लेकिन यह बंध स्थितिबंध जो है उसके घटने की यानी अपसरण की बात अभी करेंगे।

कह रहे हैं- **स्थितिबंधापसरण** अभी हम पूरा पॅरेग्राफ पढ़ते हैं फिर उसका विशेष कथन देखेंगे। प्रत्येक संसारी जीव को, यह संसारी किसको कहना ? कल हमने देखा था। हां बहन आप जानती हैं ? *श्रोता: जो अभी कर्म सहित हैं वे संसारी हैं।* हां जो अभी कर्म सहित हैं वे संसारी हैं। और जो कर्म रहित हैं ऐसे कोई होंगे कि नहीं कर्म रहित ? *श्रोता: सिद्ध भगवान हैं।* सिद्ध भगवान हैं तो वे मुक्त हैं। और हम आप ? संसारी हैं क्योंकि हमारे पास बहुत धन-संपत्ति है। काहे की ? कर्मों की ! अनंत-अनंत कर्म अपने साथ हैं। सिद्धों के पास तो कुछ नहीं है। तो ऐसे क्या कह रहे हैं ? **प्रत्येक संसारी जीव को अपनी-अपनी भूमिकानुसार मोह-राग-द्वेष परिणामों के निमित्त से** अब अपनी-अपनी भूमिकानुसार, मोह-राग-द्वेष परिणामों के निमित्त से, इसको न पढ़ते हुये क्योंकि यह निमित्त की बात है।

हम पढ़ेंगे नीचे की लाइन में- प्रत्येक संसारी जीव को **प्रत्येक समय में नया कर्म का बंध होता ही रहता है।** उसमें निमित्त क्या है ? अपनी-अपनी भूमिकानुसार यानी क्या ? जो पहले गुणस्थानवर्ती जीव हैं, जो चौथे गुणस्थानवर्ती जीव हैं, जो पांचवें गुणस्थानवर्ती जीव हैं और जो छठे-सातवें गुणस्थानवर्ती जीव हैं, उनकी-उनकी भूमिकानुसार यानी उनके परिणाम जैसे होंगे उसके अनुसार; मोह-राग-द्वेष परिणाम क्योंकि जो छठे गुणस्थानवर्ती जीव हैं उसके संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ चल रहा है। पहली भूमिकावाला जो है मतलब पहले गुणस्थानवाला जीव जो है उसके मिथ्यात्व है, अनंतानुबंधी है, अप्रत्याख्यानावरणादि सब हैं तो उसके मोह-राग-द्वेष के परिणाम जुदे होंगे। इसतरह से भूमिका के अनुसार और मोह-राग-द्वेष परिणामों के निमित्त से प्रत्येक समय में नया कर्म बंध होता ही रहता है। अभी जो ऊपर के गुणस्थानवाले जीव हैं न, उनके मोह नहीं रहेगा। ख्याल में आया ? उनके तो राग-द्वेष के परिणाम होंगे। उससे और ऊपर जायेंगे तो वहां द्वेष के भी परिणाम नहीं रहेंगे।

अब आगे बताते हैं, **इस सातिशय अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती मुनिराज को विपरीत मान्यतारूप मिथ्यात्व तो है ही नहीं**। बतायी न बात इन्होंने ? **वह तो चौथे गुणस्थान से ही नहीं रहता।** कौन ? मिथ्यात्व। विपरीत मान्यता चौथे गुणस्थान से

नहीं रहती है, **अतः दर्शनमोहनीय के निमित्त से तो नया कर्मबंध होता ही नहीं।** तो चारित्रमोहनीय के कारण से होगा। **अप्रमत्तसंयत मुनिराज के राग-द्वेष परिणाम भी अत्यंत हीन हो गये हैं। अगले अंतर्मुहूर्त से तो ये मुनिराज श्रेणी पर ही आरूढ़ होनेवाले हैं।** क्योंकि यह सातिशय अप्रमत्तवाले की बात चल रही है न ? वहां कह रहे हैं कि उनका क्या होगा ? एक अंतर्मुहूर्त में श्रेणी पर चढ़नेवाले हैं। **तथा वर्तमानकाल में वीतरागता** यानी विशुद्धि **समय-समय प्रति बढ़ती ही जाती है। अतः नया होनेवाला कर्मबंध उत्तरोत्तर** यानी आगे-आगे, इन फ्युचर **कम स्थिति लेकर बंधता रहता है**, **इसे ही स्थितिबंधापसरण कहते हैं।** अभी क्या बताना चाहते हैं ? यह जीव की हर समय विशुद्धि बढ़ती जा रही है। इसलिये उसके परिणामों में मंदता-मंदता आ रही है। यहां क्या कहते हैं कि यह जो नया बंध होनेवाला है वह कम स्थिति का बंधेगा। अभी उसकी कोई विशिष्ट पद्धति है, एक अंतर्मुहूर्त के लिये तो स्थितिबंध एक जैसा होता है, फिर एकदम कम हो जाता है। फिर अंतर्मुहूर्त तक उतना का उतना बंधेगा और फिर कम हो जायेगा। इसतरह कम-कम स्थिति बंधती जाती है।

यहां क्या कहते हैं देखो, **जैसे किसीको पहले अंतर्मुहूर्त में सौ वर्ष के कर्म का स्थितिबंध हुआ था।** यह उदाहरण जैसे हमने दस का दस गुणा देखा न, वैसे यहां कम स्थितिवाले की बात कर रहे हैं। अपने समझ में आवे। यहां सागरों में स्थिति बंधती है भाई। यहां कह रहे हैं कि किसीको पहले अंतर्मुहूर्त में कर्म का स्थितिबंध सौ वर्ष का हुआ था। **उसे ही दूसरे अंतर्मुहूर्त में ९० वर्ष का स्थितिबंध होता है। तीसरे अंतर्मुहूर्त में ८० वर्ष का स्थितिबंध होता है। चौथे अंतर्मुहूर्त में ७० वर्ष का।** इसतरह नये कर्म का अभी तुम और एक ८-१० बार आगे जाओगे तो झिरो होयेगा ऐसा नहीं है। हम यहीं रुके हैं तो यहां तक ही वह ॲप्लिकेबल समझना। क्योंकि यह शुरू किया सौ से तो दस अंतर्मुहूर्त के बाद तो उसको बंध ही नहीं होगा ऐसा मत समझना। यह किस प्रपोर्शन में कम होते जा रहा है यानी एक अंतर्मुहूर्त में कुछ कम हो जाता है यह बताना है और क्या कह रहे हैं ? **इसतरह नये कर्म का स्थितिबंध कम कालावधि का ही होता** रहता **है; उसे स्थितिबंधापसरण कहते हैं।**

देखो, लब्धिसार ग्रंथ के आधार से उज्ज्वला ने लिखी हुयी जो पंचलब्धि नामक पुस्तक है उसमें पेज नंबर ९८ पर यह बात लिखी है। यह स्थितिबंधापसरण समझने के लिये हम उसका भी थोड़ा सहारा लेते हैं। देखो यहां क्या कहते हैं ? **लब्धिसार ग्रंथ में**

स्थितिबंधापसरण का वर्णन इस प्रकार है। स्थितिबंध कषाय के अनुसार होता है। क्या कहा ? स्थितिबंध कषाय के अनुसार होता है, **इसलिये मिथ्यात्व और कषाय हीन होने से- मंद होने से स्थितिबंध घटता है।** यहां जो बात है वह प्रथमोपशम सम्यक्त्व के पूर्व की बात है। इसलिये यहां मिथ्यात्व और कषाय की बात ली है। अभी हम सातवें गुणस्थान में हैं न, तो वहां मिथ्यात्व नहीं होगा। तो वह बात यहां लागू नहीं होगी। सातवां गुणस्थान है वहां मिथ्यात्व तो होगा ही नहीं, कषाय होंगे। तो कषाय हीन-हीन होने से, मंद होने से स्थितिबंध घटता है। **नया बंध कम स्थितिवाला होता है। घटने को अपसरण कहते हैं, स्थितिबंध घटने को स्थितिबंधापसरण कहते हैं।**

प्रायोग्यलब्धि में, अभी यहां प्रायोग्यलब्धि नहीं होगी हम अभी सातवें गुणस्थान में हैं। **स्थितिबंध क्रमशः घटता जाता है। जितनी स्थिति कम बंधी अर्थात् स्थितिबंध में जितनी घट हुयी उतना तो स्थितिबंधापसरण हुआ और घटने पर जितने प्रमाण में स्थिति बंधेगी वह तो स्थितिबंध शेष रहा।** यानी कम बंधा न ! **जितना स्थितिबंध रहा उतना स्थितिबंध अंतर्मुहूर्त काल तक समान प्रमाण में होता रहता है।** अभी यह जो बता रहे हैं देखो हम उसको समझेंगे। अभी पहले कुछ विशिष्ट स्थितिबंध हुआ। मान लो इतना, यहां से लेकर पहले के हिसाब से यह सौ वर्ष की यहां बात हुयी। अभी इसके आगे, यह एक अंतर्मुहूर्त पर्यंत उसको यहां ९० वर्ष की स्थिति एक अंतर्मुहूर्त तक बंधेगी। फिर वहां से एकदम कट होते हुये और नीचे आवेगी। ऐसा दस-दस साल की जो बात बतायी न। तो कह रहे हैं कि जितना स्थितिबंध रहा उतना स्थितिबंध अंतर्मुहूर्त काल तक समान प्रमाण में होता है। बाद में कहते हैं इसके पश्चात् दुबारा स्थितिबंधापसरण होता है।

इसे दृष्टांत देकर कथन किया है। यहां लब्धिसार में भी दृष्टांत दिया है। **जैसे, पहले एक लाख वर्ष का स्थितिबंध होता था** वहां तो केवल सौ वर्ष की बात थी, यहां एक लाख वर्ष की। **उसमें १००० वर्ष प्रमाण स्थितिबंधापसरण हुआ तब ९९००० वर्ष जितना स्थितिबंध रहा। स्थितिबंधापसरण काल के पहले समय में, दूसरे समय में, इसतरह अंतर्मुहूर्त काल तक इतना ही समान स्थितिबंध**, यानी ९९ हजार होता रहेगा। **पश्चात् ८०० वर्ष प्रमाण दूसरा स्थितिबंधापसरण हुआ, तब ९८ हजार २०० वर्ष जितना स्थितिबंध रहा।** यह लब्धिसार है न, तो इन्होंने बहुत ॲप्रोप्रिएट वर्णन किया है। इस गुणस्थान की पुस्तक में तो बहुत स्थूलरूप से १०-१०

वर्ष का अपसरण कहा है। वह घटता जाता है। पहले हजार वर्ष का स्थितिबंधापसरण हो रहा था, अभी ८०० वर्ष का हुआ। **अंतर्मुहूर्त काल तक इतना समान स्थितिबंध होता रहेगा। पश्चात् तीसरा स्थितिबंधापसरण होगा।** इस **दृष्टांत में १००० वर्ष और ८०० वर्ष का यह काल्पनिक प्रमाण बताया है। प्रत्यक्ष में पल्य के संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिबंधापसरण होता है।**

अभी यह पल्य क्या है ? यह भी हमें मालूम नहीं है। यह एक काल का बड़ा नाप है और यथार्थ में पल्य के संख्यातवें भागप्रमाण अपसरण बताया। इतना स्थितिबंधापसरण होता है। **इस प्रकार संख्यात** यानी **हजारों बार स्थितिबंधापसरण होने पर जब पृथक्त्व सौ सागर** यानी **७०० से ८०० सागर।** यहां उन्होंने ७०० से ८०० सागर का प्रमाण बताया। यानी हम यहां इतना ही देखना चाहेंगे यह जो पृथक्त्व सौ सागर **जितनी घट होती है तब पहली बार प्रकृतिबंधापसरण होता है** यानी काल बताया है। यहां तो हमें इतने डिटेल में नहीं जाते हुये यहां जो दिखाया है वहीं देखेंगे। वहां इतना ही कहते हैं कि वह कम-कम स्थिति बंधना इसको ही स्थितिबंधापसरण कहते हैं। अब उसके आगे भी जरा देखेंगे।

अभी तीसरा पॉइंट जो हमें देखना है वह कहते हैं कि प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग समय-समय प्रति अनंतगुणा बढ़ता है। इसके पहले अभी तक हमने दो पॉइंट कौनसे देखे हैं किसको याद हैं ? आपको याद है हां बोलो ? *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना और स्थितिबंधापसरण।* प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना दूसरा ? स्थितिबंधापसरण। आगे के दो पॉइंट किसको याद हैं ? पुरुषों में कोई बतायेगा ? हां, एक-एक मिनट कन्नुभाई, हां आप बताना चाहते हैं साहब ? आपने हाथ उठाया था न कि नहीं ? *श्रोता: प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग बढ़ना और अप्रशस्त का घटना।* बहुत अच्छा, कितना घटेगा वह ? हां, अनंतगुणा अनुभाग घटेगा। चलो यह बात हम देखेंगे अभी यहां तो पॉइंट यह दिया है प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग समय-समय प्रति अनंतगुणा बढ़ता है। यह बढ़ता है और क्या घटता है ? तो अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग और वह क्या है ? उसको हम अगले पिरिअड में देखेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

२४. अप्रमत्तविरत गुणस्थान, अपूर्वकरण गुणस्थान

अभी हम सातवें गुणस्थान की बात कर रहे हैं जिसका नाम अप्रमत्तविरत है। उस अप्रमत्तविरत गुणस्थान के दो भेद हैं। एक स्वस्थान अप्रमत्त और दूसरा सातिशय अप्रमत्त। अभी हम यह जो चार प्रकार के आवश्यक देख रहे हैं वे तो सिर्फ सातिशय अप्रमत्त में ही होते हैं, स्वस्थान अप्रमत्त में नहीं होते।

अब यहां क्या बता रहे हैं ? हमने ये जो आवश्यकों के चार प्रकार देखे उनके नाम कौन बतायेगा ? हां पुरुषों में कोई बताना चाहता है ? आपने बताया था न दीपकभाई, चार आवश्यक कौनसे हैं ? समय-समय प्रति आपने बताया था न अभी, हां बोलो-बोलो, समय-समय प्रति अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना, हां, दूसरा है स्थितिबंधापसरण, तीसरा है, *श्रोता: प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना।* हां प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग क्या ? बढ़ना, स्थिति नहीं हो ! क्योंकि स्थिति का हमने अपसरण किया है। देखो बात कैसी मजे की है यहां तो समय-समय प्रति अनंतगुणी विशुद्धि बढ़ रही है। क्यों ? कषायों की मंदता हो रही है, संक्लेश परिणाम नहीं हैं। यहां विशुद्ध, विशुद्ध परिणाम वह भी अनंतगुणे बढ़ते हुये ऐसे विशुद्ध परिणाम कर रहे हैं। तो उसके कारण देखो, तीव्र कषाय होंगे तो स्थिति बड़ी बंधती है और मंद कषाय होंगे तो स्थिति छोटी रहती है। यह स्थितिबंधापसरण का कारण भी विशुद्ध का बढ़ना है।

और क्या बात है ? जो पहले हमारे पास बंधे हुये कर्म का स्टॉक है उनमें परिवर्तन हो रहा है। क्या है ? कि उनमें प्रशस्त प्रकृतियां है उनका अनुभाग बढ़ता जा रहा है। यानी आपको अच्छा-अच्छा, फल मिलेगा। कहां मिलेगा ? अरे तुम शुद्धोपयोग में हो, फल का क्या करना है ? और क्या कहते हैं ? अप्रशस्त प्रकृतियों, यह सहजरूप से हो रहा है। क्योंकि विशुद्धि बढ़ रही न साहब और यहां अनुभाग जो है, कौनसा ? अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग घटता-घटता जा रहा है। हां, घटता-घटता जा रहा है। देखो, यह कैसी सहज बात है कि हमें कोई तकलीफ करनी नहीं है। सिर्फ अपने स्वरूप में दृढ़ता से जम जाना है, स्थिर हो जाना है। यहां बाकी जो कुछ कर्मों में घट-बढ़ होनी है वह उसके स्वयं के कारण से ही होगी। ख्याल में आया ?

अभी हमने दो बातें तो देखी थी। कौनसी-कौनसी दो बातें देखी थी बहन ? आप बोलो, आप रिपीट करो। *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना।* दूसरा

पॉइंट ? *श्रोता: स्थितिबंधापसरण।* स्थितिबंधापसरण; अपसरण किसका ? स्थिति का अपसरण। स्थितिबंध जो हो रहा है उसका अपसरण। यानी हर अंतर्मुहूर्त में स्थिति ओछी-ओछी, कम-कम बंधती है। अभी उसका जो प्रपोर्शन है हमने देखने की कोशिश की है। उसमें आप अधिक माथा न मारते हुये इतना समझना कि कुछ काल के बाद स्थिति और कम बंधेगी, कुछ काल के बाद स्थिति और कुछ कम बंधेगी। उसको कहेंगे स्थितिबंधापसरण। यह क्या है ? हमने एक बार ही सुना है न तो जरा अपने को लगता है यह बहुत डिफिकल्ट है। कुछ डिफिकल्ट नहीं है।

यहां भाई, एक पॉइंट हमने क्या पकड़ा ? कि प्रति समय, प्रति समय यानी एव्हरी समय। प्रत्येक समय में क्या होगा ? कि विशुद्धि कितनी बढ़ेगी ? अनंतगुणा बढ़ेगी। यानी जीव के तीव्र परिणाम छूटकर मंद, मंद, मंद, परिणाम होंगे वे भी कैसे ? अनंतगुणा-अनंतगुणा बढ़ती हुयी ऐसी जो विशुद्धि है। वह विशुद्धि बढ़ती है तो स्थिति भी ओछी यानी कम बांधेंगे और तो और हमारे फेवर में कौनसी बात है ? हमने जो पूर्व में बांधे हुये जो प्रशस्तकर्म हैं उनमें भी अनुभाग की बढ़ोतरी होगी।

यानी फॉर एक्झॅम्पल आप यहां शिबिर अटेंड करने आये हैं और आपका प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग बढ़ता जा रहा है ऐसा समझो; अभी नहीं बढ़ेगा सातवें में वह भी सातिशय में बढ़ेगा। पहले आप अगर बाहर जाते तो आपको एक रुपये का कॉइन मिलनेवाला था। लेकिन आपके क्या हो गया ? प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग बढ़ गया और आप बाहर गये और आपको एक हजार रुपये का नोट मिला। यह तो कथा है। यह हमें प्रपोर्शन से देखना है कि हमारे जो अनुभाग है न, किसमें ? प्रशस्त प्रकृतियों में वे बढ़ जायेंगे और जो अप्रशस्त प्रकृतियां हैं; हम बाहर जाते हैं तो मोटर ॲक्सिडेंट में पैर टूटता। अब यहां क्या हो गया ? अनुभाग घट गये तो जाते-जाते पैर को पत्थर की जरासी ठेस लग जायेगी बस। यह समझने के लिये मैं बता रहा हूं। यह सातवें गुणस्थान में कौन-कौनसा जीव है ? सातिशय अप्रमत्त अभी श्रेणी चढ़नेवाला है। वह देवलाली के बाहर जाकर एक रुपये का नोट देखनेवाला नहीं है। ख्याल में आया ? यह तो सहज समझने के लिये यह बात हम बता रहे हैं।

अब देखो तीसरी जो बात है वह पृष्ठ १७२ पर हम देख रहे हैं। क्या कह रहे हैं **प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग** अनुभाग यानी फलदान जो होनेवाला है। फल की जो

प्राप्ति होनेवाली है उसका क्या होगा ? **समय-समय अनंतगुणा बढ़ता है।** अनुभाग बढ़ते जाता है। तो कहते हैं **प्रशस्त प्रकृति का अर्थ है सातावेदनीय आदि पुण्य प्रकृति।** यह सातावेदनीय आदि में हमने देखा यह तो पहले-पहले में एक बात बिलकुल ध्यान में रखना- कि जो घातिकर्म हैं न, वे सारी ही प्रकृतियां कैसी हैं बहन ? *श्रोता: प्रशस्त।* प्रशस्त ? आप क्या कहती हैं ? जोर से, *श्रोता: अप्रशस्त।* दोनों में से एक तो होनी ही चाहिये या तो प्रशस्त हो या तो अप्रशस्त हो। कौन जज बनना चाहता है ? बोलो बहन, *श्रोता: अप्रशस्त।* अप्रशस्त। देखो अभी क्या बतायें आपको ? बात तो ऐसी है कि हम; इन शॉर्ट में मैं बताऊंगा- हर समय हम सात कर्म तो बांधते ही हैं, आयु कभी-कभी बंधती है। हर समय सात कर्म बंधते हैं, तुम पुण्य के परिणाम करो या पाप के परिणाम करो सात कर्म तो बंधते ही हैं।

अभी हम क्या कर रहे हैं स्वाध्याय कर रहे हैं तो वह स्वाध्याय कैसा भाव है ? पुण्य भाव है कि पाप भाव है ? *श्रोता: पुण्य भाव है।* पुण्य भाव है पक्का ? आप ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय कर्म को बांध रहे हो या नहीं ? ख्याल में आया ? वे डेफिनेटलि अप्रशस्त प्रकृतियां ही हैं, वे भी बंधेगी। अभी यहां क्या बात कर रहे हैं ? हमने अभी देखा था सातावेदनीय है वह प्रशस्त प्रकृति है, उच्चगोत्र है वह प्रशस्त प्रकृति है और तीन आयु देखी थी; कौनसी तीन आयु देखी थी दिलीपभाई ? गणेशजी ? *श्रोता: देवायु, मनुष्यायु और तिर्यंचायु।* वाह-वाह यह औरंगाबाद का आवाज जोरदार है। बहुत अच्छा, आपने क्या बताया ? एक नरकायु छोड़कर बाकी तीन आयु ये प्रशस्त प्रकृतियां हैं। लेकिन एक बात समझना यहां सातिशय अप्रमत्त में या ऊपर के किसी भी गुणस्थान में आयु का बंध होता ही नहीं। नामकर्म की कुछ प्रकृतियां प्रशस्त हैं। अब वे कौनसी हैं ? क्या है ? एक तो डेफिनेटलि तीर्थंकर प्रकृति है। यह तो प्रशस्त है यह नक्की है, बाकी अन्य को छोड़ देते हैं। तो यहां यह बता रहे हैं कि देखो- देखो दूसरी लाइन से पढ़ते हैं प्रशस्त प्रकृतियों का अर्थ है सातावेदनीय आदि। आदि को तो हमने देख लिया।

इस विषय को समझने के लिये हम पहले यह निर्णय करें कि पुण्यकर्म का बंध श्रावक को अधिक होता है या मुनिराज को ? उन्होंने प्रश्न पूछा है तो अपना उत्तर क्या होगा ? प्रमोदभाई, पुण्य प्रकृति का बंध श्रावक को अधिक होगा या मुनि को होगा यह प्रश्न है। *श्रोता: श्रावक को।* श्रावक को। बहुत अच्छा, आप क्या कहते हैं ?

श्रोता: मुनिराज को। मुनि को ज्यादा होगा। अच्छा क्या कह रहे हैं देखो ? हम पहले यह निर्णय करें कि पुण्यकर्म का बंध श्रावक को अधिक होता है या मुनिराज को ? **श्रावक के जीवन में बाह्य पुण्यक्रिया अधिक होती है क्योंकि पूजा, प्रतिष्ठा, विधान, दान, परोपकार, यात्रादि, सर्व पुण्य क्रियायें श्रावक ही तो करता है। मुनिजीवन में पुण्यरूप बाह्य क्रियाकाण्ड के लिये अवकाश ही नहीं है** क्यों ? **क्योंकि** आपने विधान रचाया, कोई पूजा रचायी यानी विधान रखा तो आपको ३-४ घंटे वहां जायेंगे और मुनिराज ३-४ घंटे पूजा में बैठेंगे तो क्या हालत होगी ? छठे गुणस्थान का काल कितना बड़ा है ? एक अंतर्मुहूर्त। और हमारी पूजा चल रही है दो घंटे। एक अंतर्मुहूर्त से दो घंटे बड़े हैं कि अंतर्मुहूर्त बड़ा है ? ख्याल में आया ?

देखो, मुनिजीवन में पुण्यरूप बाह्य क्रियाकाण्ड; इसमें कौनसे-कौनसे दिये हैं ? पूजा है, प्रतिष्ठा है, यात्रा, वगैरह-वगैरह। तो अवकाश ही नहीं यानी देअर इज नो चान्स, टाइम ही नहीं है उनको। **क्योंकि पुण्य क्रियायें आरंभमूलक होती हैं और मुनिराज तो आरंभ के त्यागी हैं; तथापि मुनिजीवन में पुण्य भाव अधिक होता है।** बोलो क्योंकि उनके अभी कषाय कम हैं न, तीन कषाय चौकड़ी का अभाव हो गया है। **इसका मूल कारण मुनि महाराज के कषायों की मंदता, अर्थात् विशेष विशुद्धता ही है। जहां कषायों की अधिक मंदता होती है, वहां पुण्य का अनुभागबंध अधिक होता है, ऐसा स्वाभाविक नियम है।** अभी यहां कौनसी बात चल रही है ? **सातिशय अप्रमत्तसंयत अवस्था में विराजमान मुनिराज की वीतरागता तो विशेष है ही और प्रतिसमय अनंतगुणी बढ़ भी रही है।** यह वीतरागता की जगह विशुद्धि पढ़ना भूलना नहीं। **उसके साथ ही साथ विद्यमान संज्वलन कषाय उत्तरोत्तर** यानी हर समय आगे-आगे भविष्य में **अति अति मंद होती जा रही है। इस कारण नया पुण्यकर्म का बंध तो अल्प स्थिति और अधिक अनुभागवाला होता ही है**।

देखो, स्थिति कम है और फलदान की शक्ति अधिक है। **लेकिन पूर्वबद्ध प्रशस्त पुण्य प्रकृतियों का**, यानी यह पहले जो बंधी हुयी पुण्य प्रकृतियां हैं उनका **अनुभाग भी प्रतिसमय अनंतगुणा बढ़ता** है। देखो कैसी व्यवस्थित व्यवस्था है। अपने फेवर में है न ! क्या कह रहे हैं ? देखो, यह तीसरा पॉइंट भी हमने यहां पढ़कर पूरा किया। अभी तीन जो पॉइंट हमने पढ़े हैं वह उलटे क्रम से कौन बतायेगा ? तीसरा, दूसरा और पहला। गणेशजी आपके बाजू में जो बैठे हैं भाईसाहब, हां, बोलो,

बोलो ? तीन पॉइंट्स देखे हमने तो अभी तीसरा पॉइंट कौनसा देखा ? *श्रोता: प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग प्रतिसमय अनंतगुणा बढ़ना।* हां प्रतिसमय, क्या बढ़ता है ? हां देखो मत भैया, बिना देखे बोलना। दूसरा नंबर क्या था ? *श्रोता: स्थितिबंधापसरण।* बहुत अच्छा, स्थितिबंधापसरण। और पहला पॉइंट ? *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना।* बहुत अच्छा, देखो कितना जल्दी याद हो गया आप लोगों को। हम कॉन्फिडन्ट नहीं हैं। अरे भले ही गलती हो जाये न एक बार, उसमें क्या तकलीफ है ?

आपने यह फ़रमाया तीसरा पॉइंट था प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग बढ़ता जायेगा। दूसरा पॉइंट था स्थितिबंधापसरण और पहला पॉइंट था प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना। चौथा पॉइंट कौनसा होगा अंजू ? *श्रोता: अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग घटना।* हां अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग घटना। वह भी कैसा घटेगा ? प्रति समय वह भी कैसा ? अनंतगुणा घटेगा। क्या कहते हैं ? इस जीव को देखो, अभी तो उसके मंद कषाय चल रहे हैं। सातिशय अप्रमत्तवाला जो सातवें गुणस्थानवाला जीव है उसके मंद, मंद, मंद कषाय हो रहे हैं। उनके अभी अघातिकर्मों में नया पापकर्म बंधने से रहा। परंतु ज्ञानावरणादि सभी तो अप्रशस्त हैं न ! अभी उनके पास अप्रशस्त कर्मों का स्टॉक जो पड़ा है उसमें भी यह अनुभाग घटेगा। देखो क्या कहते हैं ?

अप्रशस्त पाप प्रकृतियों का अनुभाग समय-समय प्रति अनंतगुणा घटता है। मुनिराज की विशुद्धि का बढ़ना, **कषाय का सतत मंद होते जाना- इन विशुद्ध परिणामों के निमित्त से सत्ता में स्थित** यह अपने पास जो स्टॉक है न, सत्ता में अपने पास जो कर्म बंधे हुये हैं वह सत्ता में स्थित **तथा नये पाप कर्मों का अनुभाग घटना भी स्वयमेव होता जाता है।** ज्ञानावरण आदि को आप पाप कर्म में डालेंगे। चलो अच्छा है। **जैसे गुड़ मीठा होता है, शक्कर मीठी होती है और मिश्री भी मीठी होती है** यह मिश्री यानी क्या और शक्कर यानी क्या इसमें फर्क जानते हैं आप ? हां बोलो, *श्रोता: मिश्री यानी शक्कर।* शक्कर यानी मिश्री ? कोई बात नहीं, सुनो-सुनो, मैं आपको आपकी भाषा में समझाऊंगा। गुड़ यानी गुड़, मिश्री यानी शक्कर। *श्रोता: पिसी हुयी शक्कर।* ना, यहां दूसरा पॉइंट दिया है शक्कर और तीसरी है मिश्री - मिश्री यानी डली होती है ऐसी जिसको खड़ी शक्कर बोलते हैं आप लोग। हां तो यहां क्या कह रहे हैं ? जैसा गुड़ मीठा होता है उससे शक्कर मीठी होती है जो हम रोज चाय में डालते हैं वह और मिश्री यानी वह ऐसी डली होती है उसकी वह और मीठी होती है।

तथापि इन तीनों के मीठेपन में अंतर होता है। वैसे ही कर्मों की फलदान शक्ति में भी अलग-अलग बढ़ती हुयी अथवा घटती हुयी विशेषतायें होती हैं। उसे ही अनुभागबंध समझना चाहिये। देखो प्रकृति की विचित्रता ! मिथ्यादृष्टि जीव अंतरंग की रुचि से पुण्य चाहता है; लेकिन उसे पुण्य मिलता नहीं। चाहने से किसीको कोई चीज़ नहीं मिलती यह कह रहे हैं। लेकिन **उलटा पुण्य की चाह से पाप की ही प्राप्ति होती है।** यह ऐसा क्यों होता है ? यह चाहना इटसेल्फ पाप है। चाह जो है न। हां, **सम्यग्दृष्टि पुण्य चाहता नहीं**, **अर्थात् पुण्य को हेय मानता है तो भी उसे सातिशय पुण्य का बंध होता रहता है। आगे श्रेणी के सन्मुख या श्रेणी पर आरूढ़ साधक के धर्म तो विशेष बढ़ता ही जाता है, साथ ही पुण्य का अनुभाग भी प्रतिसमय अनंतगुणा बढ़ते जाना और उसी समय पाप का अनुभाग प्रतिसमय अनंतगुणा घटते जाना ये कार्य स्वयमेव तथा सतत होते रहते हैं।**

ये जो चार आवश्यक बताये हैं अभी, वे चार आवश्यक, सातवें सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान में, आठवें में, नौवें में, दसवें में चालू ही रहेंगे। इसके अलावा अन्य भी कुछ बातें आठवें से शुरू होंगी। अभी ये चार तो हमें बिलकुल याद रखना है। क्या कह रहे हैं ? **आगे श्रेणी के सन्मुख या श्रेणी पर आरूढ़ साधक के धर्म तो विशेष बढ़ता ही जाता है।** और क्या हो रहा है ? **साथ ही पुण्य का अनुभाग भी प्रतिसमय अनंतगुणा बढ़ते जाना और उसी समय पाप का अनुभाग भी प्रतिसमय अनंतगुणा घटते जाना ये कार्य स्वयमेव तथा सतत होते रहते हैं।** सातवें, आठवें, नौवें, दसवें गुणस्थान तक की यह बात है। अभी फिर से दोहरायेंगे जो चार बातें हमने देखी थी। **ऊपर लिखित- १. प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि २. स्थितिबंधापसरण ३. प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना और ४. अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटना, ये चारों आवश्यक कार्य सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान में प्रारंभ हो जाते हैं।** यहां लिखा ही है देखो **और आगे आठवें, नौवें और दसवें गुणस्थानों में भी होते ही रहते हैं।** देखो अब आगे, **उपशांतमोह आदि आगे के चारों गुणस्थानों में ये ऊपर लिखित चारों आवश्यक कार्य क्यों नहीं होते ?**

निम्न तीन कारण हैं जाने दो, अभी यहां एक और नयी बात बताते हैं पांचवें पॉइंट में, उसमें लिख रहे हैं **सातवें गुणस्थान के नाम में अप्रमत्त शब्द आया है, वह आदि दीपक है।** यानी इसके आगे के सारे गुणस्थान अप्रमत्त हैं। हमने पहले जो

गुणस्थानों का विभाजन किया था वहां प्रमत्त गुणस्थान और अप्रमत्त गुणस्थान का भेद किया था। वहां हमने देखा था कि पहले से छठे गुणस्थान तक सारे प्रमाद सहितवाले हैं और सातवें से चौदहवें तक अप्रमत्तवाले हैं। इसलिये कहते हैं अप्रमत्त यह जो शब्द है वह आदि दीपक है **क्योंकि इस सातवें गुणस्थान से लेकर ऊपर के सभी गुणस्थान अप्रमत्त ही होते हैं।**

अब आगे पेज नंबर १७६ देखो, ये अभी आठवां गुणस्थान है न तो उसके बारे में हम थोड़ी बहुत मौखिक जानकारी लेने की कोशिश करते हैं। यहां क्या बात बता रहे हैं ? देखो यहां से श्रेणी मांडना चालू होता है। ये श्रेणियों के गुणस्थान हैं। दो प्रकार की श्रेणी हमने देखी है, उसके नाम याद है सुरेशभाई ? *श्रोता: उपशमश्रेणी और क्षपकश्रेणी।* उपशमश्रेणी और क्षपकश्रेणी। बात ऐसी होती है फिर से ध्यान देना कि उपशमश्रेणी में कर्मों का यानी मोहनीय कर्मों की बात चल रही है। मोहनीय कर्मों का उपशम करते-करते जीव श्रेणी चढ़ता है। अब उपशमश्रेणी चढ़नेवाला जीव दो प्रकार के सम्यक्त्व के साथ चढ़ सकता है। कौनसे ? एक औपशमिक सम्यक्त्व जिसको द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहेंगे; द्वितीयोपशम सम्यक्त्ववाला जीव उपशमश्रेणी ही चढ़ेगा और दूसरा होता है क्षायिक सम्यक्त्वी। क्षायिक सम्यक्त्वी है वह जीव उपशमश्रेणी भी चढ़ सकता है और क्षपकश्रेणी भी चढ़ सकता है। लेकिन द्वितीयोपशम सम्यक्त्वी यानी औपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव किसी भी हालत में क्षपकश्रेणी नहीं चढ़ेगा। लेकिन क्षायिक सम्यक्त्वी जीव क्षपकश्रेणी भी चढ़ेगा और उपशमश्रेणी भी चढ़ेगा।

अब इस उपशमश्रेणी के गुणस्थान कौन-कौनसे हैं ? तो मैं बोलूंगा और आपको रिपीट करना है। आठवां गुणस्थान, *श्रोता: आठवां गुणस्थान।* नौवां गुणस्थान, *श्रोता: नौवां गुणस्थान।* दसवां गुणस्थान, *श्रोता: दसवां गुणस्थान।* और ग्यारहवां गुणस्थान। *श्रोता: और ग्यारहवां गुणस्थान।* अभी देखो हम अभी दूसरी तरफ से बोलते हैं कि जो क्षपकश्रेणी है उसके भी चार गुणस्थान हैं। तो आठवां अपूर्वकरण गुणस्थान, *श्रोता: आठवां अपूर्वकरण गुणस्थान।* नौवां अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, *श्रोता: नौवां अनिवृत्तिकरण गुणस्थान।* दसवां सूक्ष्मसाम्पराय, *श्रोता: दसवां सूक्ष्मसाम्पराय।* बारहवां क्षीणमोह। *श्रोता: बारहवां क्षीणमोह।* अभी मैंने इधर सिर्फ नंबर बताये हैं जान बूझकर और यहां जान बूझकर नंबर प्लस नाम भी बताये।

अभी उपशमश्रेणी के गुणस्थानों के नाम कौन बताना चाहेगा ? ठहरो एक मिनट यह हमारे नये मेहमान हैं उनसे पूछता हूं मैं। हां बेटा कहोगे ? उपशमश्रेणी के गुणस्थान के नाम आपको मालूम हैं ? नहीं हैं तो नहीं बोलना उसमें कोई डरने की बात नहीं है। हां, गणेशजी आप बताना ? *श्रोताः अपूर्वकरण आठवां गुणस्थान, नौ नंबर अनिवृत्तिकरण, दस नंबर सूक्ष्मसाम्पराय और ग्यारहवां उपशांतमोह।* हां, अपूर्वकरण कौनसा नंबर होगा ? हां वह नंबर भी बोलना भैया। नौ नंबर अनिवृत्तिकरण, दस नंबर सूक्ष्मसाम्पराय, बारहवां ? ग्यारहवां, ग्यारहवां उपशांतमोह। यहां लिखा है क्या ? अच्छा-अच्छा, वाह-वाह, बहुत होशियार हो लोग आप। बहुत अच्छा-बहुत अच्छा, मैं बोला सब लोग वहां क्या देख रहे हैं। मेरी समझ में नहीं आ रहा था।

देखो, पहले में पहले हमें एक बात का ध्यान देना है- दोनों ही श्रेणियों के ८, ९, १० नंबर के गुणस्थानों के नाम एक ही हैं। लेकिन दोनों ही अलग-अलग मार्ग हैं क्योंकि उपशमश्रेणीवाला चारित्रमोहनीय की २१ प्रकृतियों को उपशमाता, दबाता-दबाता ऊपर जाता है और ग्यारहवें में जायेगा तो एक अंतर्मुहूर्त के बाद वहां से उसके परिणाम ऐसे हो जाते हैं कि वह दसवें में आयेगा, फिर दसवें से नौवें में आयेगा, नौवें से आठवें में आयेगा, आठवें से सातवें में आयेगा और सातवें से छठे में आयेगा। ऐसे तो नियमरूप से क्रम से वह नीचे उतरेगा। कहां ? उपशमश्रेणी में। फिर छठे के बाद वह छठा-सातवां, छठा-सातवां करता रहे या अन्य भी मार्ग हमने जो अभी तक देखे हैं, वे भी हो सकते हैं। अब क्या कह रहे हैं ? यह जो क्षपकश्रेणीवाला है वह सातवें से आठवें में जायेगा, आठवें से नौवें में, नौवें से दसवें में, दसवें से बारहवें में जायेगा। तो जब वह जीव वापस लौटेगा तो किस क्रम से लौटेगा सुरेशभाई ? *श्रोताः नहीं लौटेगा।* नहीं लौटेगा। हां, भाईसाहब कहते हैं वह लौटेगा ही नहीं; कहां जायेगा ? *श्रोताः सिद्धालय में जायेगा।* अरे वाह यहां लिखा है, हम क्या करें ? हम बोलते नहीं थे लेकिन लिख दिया है तो बोलना पड़ता है। क्यों ?

देखो, हमें पहले यह नक्की करना है कि गिरनेवाला; देखो कभी-कभी कोई जीव ऐसा बोल देते हैं; अरे हम मिथ्यादृष्टि हैं, हमें मालूम है उपशमश्रेणी चढ़ेगा तो गिरनेवाला है। वह मुनिराज, बेचारे मुनिराज उनको पता नहीं है कि उपशमश्रेणी नहीं चढ़नी है, वह गिरनेवाले हैं ? ऐसा हम सोचते हैं। अरे हम समझते हैं; वे नहीं समझते ? वहां तो भैया मैं कौनसे गुणस्थान में चढ़ रहा हूं- मैं कौनसे गुणस्थान में चढ़ रहा हूं ऐसा

देखते बैठेगा तो गुणस्थान नहीं चढ़ेगा। स्वरूप में - अंतरंग में लीनता है, उसमें जो वह जीव एकाग्र होता है तब वह ऊपर के गुणस्थान में जायेगा। अब वह ऊपर जायेगा तो वह थोड़ी देखते बैठेगा- मैं इधर जा रहा हूं कि उधर जा रहा हूं और वह चाहने से कोई गुणस्थान नहीं बदल सकता, यहां लिखा है न अभी।

चाहने से तो वस्तु का स्वरूप बदलता भी नहीं और वस्तु का परिणमन भी होता नहीं है। यह सहज ऐसे होते रहता है। उसके अन्य कारण भी हैं। अब उस कारण के डिटेल में हम नहीं जाते हुये इतना देखते हैं कि कोई जानबूझकर कौनसी श्रेणी चढ़नी है वह नक्की नहीं करता। देखो कोई क्षायिक सम्यग्दृष्टि है उसको तो कम से कम समझना चाहिये कि नहीं कि क्षपकश्रेणी चढ़े। क्या है यह ? कुछ फ़ायदा नहीं है। अरे जैनदर्शन ही ऐसा है। बिलकुल भरोसा मत करो, ऐसा कहनेवाले भी मिलते हैं। क्या करें ? जैनदर्शन का अभ्यास मत करो, ऐसा बोल रहे हैं। कौन ? स्वयं जैन हैं भाई। हमें तो ऐसे लोगों से पाला पड़ा है कि आप सोच नहीं सकते। देखो अब आगे बढ़ते हैं।

यहां कह रहे हैं **अपूर्वकरण नाम का** यह **आठवां गुणस्थान श्रेणी के गुणस्थानों में** पहला यानी **प्रथम गुणस्थान है।** अभी **श्रेणी किसे कहते है ?** यहां श्रेणी की परिभाषा दी गयी है। देखो यह बहुत मार्मिक है- **चारित्रमोहनीय कर्म की** अभी वह चारित्रमोहनीय की कर्म की; ब्रॅकेट में क्या दिया ? **(अनंतानुबंधी चतुष्क रहित)** तो ये अनंतानुबंधी को छोड़ दो। चारित्रमोहनीय कर्म की **२१ प्रकृतियों के**। अभी हम यहां रुकते हैं, २१ प्रकृतियां कौनसी हैं ? अलकाजी आप बतायेंगी ? नहीं, यह होशंगाबादवाली हमारी बहन ? चारित्रमोहनीय की २१ प्रकृतियां कौनसी हैं ? अभी हमने पढ़ी थी पंद्रह-बीस मिनिट के पहले ! आप बोलेंगी बहन ? नहीं, अच्छा साहब आपने हाथ उठाया। हां, *श्रोता: अप्रत्याख्यानावरण की चार और फिर बाद में प्रत्याख्यावरण की चार, संज्वलन की चार ये बारह हो गयी और नौ नोकषाय - शोक, भय, जुगुप्सा, अरति, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद।* कितने हो गये ? हास्य, रति भूल गये आप, कोई बात नहीं। फिर भी आपने अपनी इज्जत रखी। बहुत अच्छा।

देखो साहब मुझे थोड़ी हंसी मजाक करने की आदत है। अभी आखरी आज का क्लास है न छठा, मैं बहुत सिरिअसलि बोलूंगा तो गड़बड़ी होती है। इसलिये थोड़ा बहुत लोगों को जागते रहो, ऐसा बोलना पड़ता है। देखो आप जानते हैं उनको ? वह

अलवर शहर के जो पंडित हैं क्या नाम है ? किशनचंदजी। वे जब सिखाते हैं न तो बोलते हैं जागते रहो, पड़ोसी का ध्यान रखो। यानी आपके बाजूवाले सोता होगा तो आप पड़ोसी को जगाना, ऐसा बोलते थे। देखो भैया, पड़ोसी का ध्यान रखो। हम तो कहते हैं थका हुआ है, सोने दो न इधर ही, अच्छी जगह है कोई डिस्टर्ब नहीं करता। घर में जायेंगे तो बच्चे खिटपिट करते हैं। कई लोग तो स्वाध्याय में इसके लिये ही आते हैं। चलो तो यहां क्या कह रहे हैं ?

देखो, चारित्रमोहनीय कर्म की २१ प्रकृतियों के **उपशम** यानी उपशमश्रेणी के लिये उपशम **और क्षय के निमित्त से** यह क्या हो रहा है आगे ? **वृद्धिंगत होनेवाले जीव की विशुद्धि को** अब यह जो वीतराग परिणाम तो उन्होंने ऑब्लीक दिया है उसको भी हम पढ़ते हैं कि विशुद्धि को **अथवा वीतराग परिणामों को** श्रेणी कहते हैं। **श्रेणी के दो भेद हैं- उपशमश्रेणी और क्षपकश्रेणी।** यानी यहां पर क्या कहना चाहते हैं कि जीव की विशुद्धि बढ़ती जाती है और वीतराग परिणामों की भी बढ़ौती होती है। दो प्रकार की श्रेणियां हैं- एक उपशमश्रेणी और एक क्षपकश्रेणी। **उपशमश्रेणी और क्षपकश्रेणी की क्या परिभाषा है ? जिसमें चारित्रमोहनीय कर्म की २१ प्रकृतियों के उपशम के साथ विशुद्धि या वीतरागता उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है, उसे उपशमश्रेणी कहते हैं। आठवां, नौवां, दसवां और ग्यारहवां, ये चार गुणस्थान उपशमश्रेणी के हैं। जिसमें चारित्रमोहनीय कर्म की २१ प्रकृतियों के क्षय के साथ वीतरागता/विशुद्धि उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है, उसे क्षपकश्रेणी कहते हैं।**

क्षपकश्रेणी की बात पढ़ रहे हैं। **आठवां, नौवां, दसवां और बारहवां, ये चार गुणस्थान क्षपकश्रेणी के हैं।** अभी देखो यह प्रश्न भी आपको बहुत इंटरेस्टिंग लगेगा। कह रहे हैं **चारित्रमोहनीय की २१ प्रकृतियों की क्षपणा** यानी **क्षय करनेवाले क्षपक मुनिराज सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान से क्या उपशांतमोह गुणस्थान को लांघकर क्षीणमोही हो जाते हैं ?** क्या है प्रश्न ? *श्रोता: वह कर्मों का क्षय करेगा ?* हां, क्षपकश्रेणी चढ़नेवाला क्षय करके जायेगा। क्षपकश्रेणी चढ़नेवाला नियम से क्षायिक सम्यग्दृष्टि होगा। उपशमश्रेणी चढ़नेवाला औपशमिक सम्यक्त्वी यानी द्वितीयोपशम सम्यक्त्वी हो सकता है या क्षायिक सम्यक्त्वी भी हो सकता है। क्षायिक सम्यक्त्वी उपशमश्रेणी चढ़ेगा तो उसको क्षायिक क्यों कहा ? क्योंकि उसने अनंतानुबंधी की चार और दर्शनमोहनीय की तीन इन प्रकृतियों का क्षय किया है। इसलिये उसे क्षायिक सम्यक्त्वी कहते हैं।

ऐसा जीव उपशमश्रेणी चढ़ेगा तो बाकी बची हुयी जो चारित्रमोहनीयकर्म की २१ प्रकृतियां हैं उनको क्रमशः उपशमित करते-करते ग्यारहवें में पहुंचेगा और वह भी वहां से उलटे क्रम से वापस आयेगा जो क्रम हमने बताया था। ख्याल में आया ?

वह द्वितीयोपशम सम्यक्त्वी हो या क्षायिक सम्यक्त्वी हो - वह तो कर्मों को उपशमित करते-करते ही उपशमश्रेणी चढ़ेगा। क्षपकश्रेणी चढ़नेवाला तो क्षायिक सम्यक्त्वी ही होगा और वह भी ऊपर-ऊपर जायेगा। आपके ज़माने में अभी कैसा बताऊं ? जैसे हम कहते हैं न रास्ते में वन वे एन्ट्री होती है। तो जाने के लिये रास्ता है वापस आने के लिये नहीं है। वैसे क्षपकश्रेणीवाला ऊपर जायेगा, वापस नहीं आयेगा। तो यहां प्रश्न क्या हो रहा है ? उसको समझना अभी। चारित्रमोहनीय की २१ प्रकृतियों की क्षपणा यानी क्षय करनेवाले क्षपक मुनिराज सूक्ष्मसाम्पराय से यानी दसवें गुणस्थान से, क्या उपशांतमोह गुणस्थान को लांघकर क्षीणमोही हो जाते हैं ? तो इस प्रश्न में क्या गलती है कौन बतायेगा ? पहले प्रश्न समझेगा तो उत्तर अपने आप आ जायेगा। आप बतायेंगे ? हां, *श्रोता: क्षपकश्रेणी चढ़ रहा है तो उपशांतमोह की बात क्यों हुयी ? क्षपक यानी क्षय करके चढ़ रहा है तो उपशांतमोह को लांघने की बात है नहीं।* हां, आप कह रहे हैं कि यह जीव क्षपणा करते जा रहा है तो उसका मार्ग ही जुदा है। नाम भले ही आठवें, नौवें, दसवें के एक हैं- उपशमश्रेणीवाले का मार्ग जुदा है और क्षपकश्रेणीवाले का मार्ग जुदा है। क्षपक कर्मों का क्षय करते-करते जा रहा है। उस लाइन में ग्यारह नंबर का गुणस्थान आता ही नहीं तो उसको लांघने का सवाल ही कहां है ?

हां अभी पुस्तक में देखो **नहीं ! यहां लांघकर जाने की बात ही नहीं है। क्षपक मुनिराज चारित्रमोहनीय कर्म का क्षय करते हुये उत्तरोत्तर वीतरागता बढ़ाते हुये उसे पूर्ण करते हैं। अर्थात् सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में शेष सूक्ष्मलोभ कषाय कर्म का भी क्षय करके सीधे क्षीणमोह नामक बारहवें गुणस्थान में पहुंच जाते हैं। इसलिये उनके मार्ग में उपशांतमोह गुणस्थान के आने का प्रश्न ही नहीं है।** क्योंकि हमने नियम से ऐसा देखा न कि पहला गुणस्थान, दूसरा गुणस्थान, दसवां गुणस्थान, ग्यारहवां गुणस्थान, बारहवां गुणस्थान तो लोगों को ऐसा लगता है कि ग्यारह आता है बीच में और उसको लांघकर आगे बढ़ते हैं। ऐसा नहीं है। इसलिये उनके मार्ग में उपशांतमोह गुणस्थान के आने का प्रश्न ही नहीं है। **क्षय करनेवाले के मार्ग में कर्मों के उपशम के स्थान कैसे आ सकते हैं ? दोनों का स्वरूप एक दूसरे से**

भिन्न ही है। अब आगे बढ़ते हैं-

अधःप्रवृत्तकरण संबंधी अंतर्मुहूर्त काल पूर्ण कर प्रति समय अनंतगुणी शुद्धि को प्राप्त हुये परिणामों को अपूर्वकरण गुणस्थान कहते हैं। अब यह जो आगे की बात है न **इसमें अनुकृष्टि रचना नहीं होती** इसको हम भूल जाते हैं। इसका हम रेफरेन्स आगे भी नहीं देंगे क्योंकि अनुकृष्टि रचना समझना थोड़ासा कठिन है। अपने पास अभी सिर्फ छह घंटे हैं और अभी हमको यह आठवां है न, और छह गुणस्थानों को देखना है। यह अनुकृष्टि रचना आगे प्रसंग आयेगा तो उसकी भी बात करेंगे, टाइम मिलेगा तो। यहां क्या कह रहे हैं ? देखो, फिर से अधःप्रवृत्तकरण संबंधी यानी सातवें सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान में जो कुछ क्रिया हो रही है उसका अंतर्मुहूर्त काल पूर्ण करके- अभी आगे क्या होगा ? प्रति समय अनंतगुणी शुद्धि को प्राप्त हुये परिणाम। अभी तक क्या हो रहा था ? विशुद्धि के परिणाम; अभी क्या है ? शुद्धि के परिणाम, ठीक है, प्राप्त करते हुये परिणामों को अपूर्वकरण गुणस्थान कहते हैं। आपका ऐसा कहना है कि यहां अनंतगुणी विशुद्धि भी कह सकते हैं। चलो ठीक है।

इस गुणस्थान का पूरा नाम अपूर्वकरण प्रविष्ट शुद्धिसंयत है। इस हिसाब से उन्होंने शुद्धि की बात ली है। **उपरिम समयवर्ती जीव के परिणाम और** अरे बाप रे हां, यह अनुकृष्टि रचना की बात ही बताना चाहते हैं। चलो, इसको हम लांघकर आगे जाते हैं। क्या है ? यह भी बात समझने जैसी है लेकिन अनुकृष्टि रचना समझने में कम से कम एक घंटा लगेगा। ऐसा आप चाहे तो मैं पढ़ लेता हूं लेकिन पढ़ने से कुछ हाथ में आवे ऐसी बात नहीं हैं। इसलिये उसे यहीं छोड़ना अच्छा है।

भेद अपेक्षा विचार। यह जो आठवां गुणस्थान है उसके दो भेद हैं **उपशमक अपूर्वकरण और क्षपक अपूर्वकरण।** यानी उपशमश्रेणी में जो अपूर्वकरण गुणस्थान आता है उसका नाम उपशमक अपूर्वकरण और क्षपकश्रेणी में आनेवाला जो आठवां गुणस्थान है उसका नाम क्षपक अपूर्वकरण। **अपूर्वकरणप्रविष्ट शुद्धिसंयत संबंधी स्पष्टीकरण।** ऐसा नाम क्यों हुआ ? अपूर्व लिखा है न - अ यानी नहीं, पूर्व यानी पहले। अपूर्व यानी अत्यंत नवीन, करण यानी परिणाम अर्थात् पूर्व में कभी भी प्रकट नहीं हुये हों ऐसे अत्यंत नवीन शुद्ध परिणाम; प्रविष्ट यानी प्रवेश प्राप्त, शुद्धि यानी शुद्धोपयोग, संयत यानी शुद्धात्मस्वरूप में सम्यक् पने से लीनता। **चारित्रमोहनीय कर्म की २१**

प्रकृतियों के उपशम या क्षय में निमित्त होनेवाले, पूर्व में अप्राप्त, विशिष्ट वृद्धिंगत, शुद्धोपयोग परिणाम युक्त जीव अपूर्वकरण प्रविष्ट शुद्धिसंयत है।

अभी यहां **सम्यक्त्व** की **अपेक्षा** वे **विचार** करनेवाले हैं तो हम ही पहले देखते हैं कि आठवें गुणस्थान में जानेवाले जीवों के कौनसे-कौनसे सम्यक्त्व हो सकते हैं ? हां प्रमोदभाई ? हां, फिर से, जोर से *श्रोता: क्षायोपशमिक और क्षायिक।* हां, क्षायोपशमिक और क्षायिक। गणेशजी आप क्या कहते हैं ? पुस्तक में देख लिया क्या ? *श्रोता: द्वितीय क्षयोपशम और क्षायिक।* हां, क्या-क्या ? द्वितीय क्षयोपशम और क्षायिक ? यानी आपने देखा परंतु बरोबर नहीं देखा है। जब तक हमारे दिलीपभाई ने तो देख लिया। हां, बोलो-बोलो, क्या करूं ? मेरी नजर ही ख़राब है। मैं समझता हूं कौन देख रहा है और कौन नहीं देख रहा है। कौनसे सम्यक्त्व हो सकते हैं, महेंद्रभाई आप बतायेंगे ? *श्रोता: द्वितीयोपशम सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व।* द्वितीयोपशम सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व। कौन-कौनसे हो सकते हैं ? *श्रोता: दोनों हो सकते हैं।* दोनों हो सकते हैं, दोनों की बात बतायी न हमने। हां, देखो हमने क्या कहा ? देखो यहां पढ़ते हैं न -

अपूर्वकरण गुणस्थान में द्वितीयोपशम सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व इन दोनों सम्यक्त्वों में से मुनिराज को कोई एक सम्यक्त्व रहता है। द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि मुनिराज तो उपशमश्रेणी पर ही आरूढ़ होते हैं और क्षायिक सम्यग्दृष्टि मुनिराज उपशम अथवा क्षपक इन दोनों श्रेणियों में से किसी भी एक श्रेणी पर आरोहण कर सकते हैं। लेकिन क्षपकश्रेणी चढ़ने में सिर्फ क्षायिक सम्यग्दृष्टि ही होना चाहिये। कहते हैं **द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि मुनिराज क्षपकश्रेणी नहीं चढ़ते; इसका कारण क्या है ? पुरुषार्थ की कमी के कारण जिन मुनिराजों ने यथार्थ श्रद्धा में बाधक दर्शनमोहनीय कर्मों का सत्ता में से सर्वथा नाश नहीं किया हो, उन्हें चारित्रमोहनीय कर्म का नाश करने का उग्र पुरुषार्थ कहां से और कैसे हो सकता है ? अर्थात् नहीं हो सकता।**

अभी आगे बढ़ते हैं हम १८० नंबर के पृष्ठ पर आते हैं। वहां कहते हैं कि **कर्मों की अपनी-अपनी योग्यतानुसार उपशमादि कार्य होते हैं, इसका अर्थ क्या है ?** अभी हमने प्रश्न नहीं पढ़ा है क्योंकि वह विशेष कुछ है नहीं। अब कहते हैं **पुद्गलमय ज्ञानावरणादि आठों ही कर्मों में अचेतनपना समान होने पर भी परिणमन**

स्वभाव के कारण प्रत्येक कर्म की परिणमन करने की अपनी-अपनी स्वतंत्र योग्यता होती है। यानी देखो सभी पुद्गल हैं, लेकिन उनमें परिणमन करने की जो कोई शक्ति है वह जुदी-जुदी है और वह अपने स्वयं से है, दूसरों के कारण नहीं है। कहते हैं **विशेष स्पष्टीकरण** क्या है ? कि **क्षयोपशम तो मात्र ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय- इन चार घातिकर्मों में ही होता है।** हमने देखा था न, क्षयोपशम घटित किया था वह घातिकर्मों में ही किया था। **अन्य चार अघातिकर्मों में नहीं तथा ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अंतराय इन तीनों कर्मों का क्षयोपशम अनादि से निगोद जीवों में भी नियम से पाया जाता है।**

अब कहते हैं **अंतरकरणरूप/** यानी **प्रशस्त उपशम।** यह अंतरकरणरूप हमने देखा था न कि जब जीव करणलब्धि मांडता है तो करणलब्धि के अनिवृत्तिकरण में वहां कुछ परमाणु ऊपर यानी द्वितीयस्थिति में जाते हैं और कुछ परमाणु प्रथमस्थिति में आते हैं और निषेकों के साथ उनका उदय होते-होते बीच में जो गॅप बना हुआ था, वहां कोई भी दर्शनमोहनीय कर्म नहीं है। अंतर के ऊपर द्वितीयस्थिति का उपशम किया जाता है उसको अंतरकरणरूप उपशम कहते हैं। अंतरकरणरूप यानी उसीका दूसरा नाम है प्रशस्त उपशम। **अनंतानुबंधी को छोड़कर दर्शनमोहनीय तथा चारित्रमोहनीय कर्मों में ही होता है।** क्योंकि हमने देखा था अनंतानुबंधी जो कर्म है उनका सदवस्थारूप उपशम अथवा अप्रशस्त उपशम हुआ था और यहां क्या कहते हैं ? बाकी जो चारित्रमोहनीय कर्मों में अंतरकरणरूप उपशम होता है। यह आगे नौवें गुणस्थान में जो बात चलेगी वह अभी उन्होंने यहां बतायी है। **अन्य सात कर्मों में नहीं।**

हमने सुबह में औपशमिक भाव भी दो देखे थे, याद है ? दोनों औपशमिक भाव कौनसे हैं ? औपशमिक भाव आपको याद है बहन ? हां, बोलो-बोलो। देखो, औदयिक भाव हमने देखे थे, क्षायोपशमिक भाव देखे थे। वैसे औपशमिक भाव कितने और कौनसे ? *श्रोता: दो हैं।* दो हैं, बहुत अच्छा, औपशमिक सम्यक्त्व और औपशमिक चारित्र। तो यहां यही बात कह रहे हैं देखो, क्या कह रहे हैं ? दर्शनमोहनीय तथा चारित्रमोहनीय कर्मों में ही क्या होता है ? उपशम। यह अंतरकरणरूप उपशम की बात चल रही है। **सदवस्थारूप उपशम,** इसीका दूसरा नाम है **अप्रशस्त उपशम**, **मात्र चारों घातिकर्मों में ही होता है, अन्य चारों अघातिकर्मों में नहीं।** अब कहते हैं

विसंयोजना मात्र अनंतानुबंधी कषायों की ही होती है।

यह विसंयोजना क्या है यह देखना है तो हमें प्रश्नोत्तर में जाना पड़ेगा। हमने एक बार देखा है, फिर भी दुबारा देखने में कोई तकलीफ नहीं है। देखो, पृष्ठ ४४ पर प्रश्न क्रमांक ७४। यह बात हम बार-बार पढ़ते नहीं हैं न तो हमको इसका पता नहीं होता है। पढ़ा हुआ भूल जाते हैं। इसलिये हम दुबारा रेफरन्स देखेंगे। **विसंयोजना किसे कहते हैं ? अनंतानुबंधी चतुष्क के अप्रत्याख्यानावरण आदि बारह कषाय** यानी क्या ?अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन हर एक के चार- चार, चार त्रिक बारह; तो बारह **और हास्यादि नौ नोकषाय कर्मरूप परिणमित होने को विसंयोजना कहते हैं।** *डॉ. उज्ज्वला शहा:- यहां नौ नोकषाय लिखा है परंतु विसंयोजना का कार्य करणलब्धि द्वारा होता है, वहां अरति-शोक का बंध नहीं होता, सम्यग्दृष्टि को स्त्रीवेद नपुंसकवेद का बंध नहीं होता और बंधनेवाली प्रकृतियों में ही संक्रमण होने का नियम होने से पांच नोकषायरूप ही परिणमित होंगे।* तो यह विसंयोजना अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ की ही होती है। फिर से पेज नंबर १८० पर आये हैं हम। यहां क्या कहते हैं ? **विसंयोजना**, यानी विसंयोजना होने का कार्य **मात्र अनंतानुबंधी कर्मों की ही होती है**; **अन्य किसी भी कर्म के यानी अप्रत्याख्यानावरण**, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन और नोकषाय **आदि कर्मों की भी नहीं होती।** यानी विसंयोजना सिर्फ अनंतानुबंधी की होती है।

संक्रमण भी सभी कर्मों में नहीं होता। संक्रमण होता है लेकिन सभी कर्मों में नहीं होगा तो किसमें होता है ? **जैसे-आयुकर्म के चारों भेदों का परस्पर में संक्रमण नहीं होता।** यानी किसीने आयु बांध ली है, तिर्यंचायु बांधी है तो वह पलटकर देवायु नहीं होगी, नरकायु नहीं होगी। तो आयु कर्मों का संक्रमण कभी नहीं होता है। फिर क्या कहते हैं ? **दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय** इन**में भी परस्पर संक्रमण नहीं होता।** यानी जो दर्शनमोहनीय कर्म हैं उनके जो सब डिव्हिजन्स हैं कौनसे ? मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति, इनमें एक दूसरे में संक्रमण हो सकेगा लेकिन दर्शनमोहनीय कर्म है वह चारित्रमोहनीय नहीं होगा और चारित्रमोहनीय वह दर्शनमोहनीय नहीं होगा। इसलिये क्या कहते हैं ? दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय में भी परस्पर संक्रमण नहीं होता। उन्होंने क्या कहा ?

मूल कर्मों में संक्रमण नहीं होता। ये मूलकर्म हैं, कौन-कौनसे ? आठ- ज्ञानावरण, दर्शनावरण आदि उनमें संक्रमण नहीं होता लेकिन उनके उत्तर भेद जो हैं- उत्तरप्रकृतियां, उनका आपस में संक्रमण होता है। **सजातीय प्रकृति के उत्तर भेदों में संक्रमण होता है।** सजातीय यानी अभी दर्शनमोहनीय यें तीनों हैं न, तो सजातीय प्रकृतियां हैं। उनके उत्तर भेदों में यानी ॲडिशनल सबडिव्हिजन्स में संक्रमण होता है। **जैसे** वेदनीय कर्म है उसका **साता का असातावेदनीय में**, **मिथ्यात्व का मिश्र में और मिश्र का सम्यक्त्व प्रकृति में** संक्रमण होता है उसकी बात बता रहे हैं। **अनंतानुबंधी चारों कषायों का १२ कषाय और ९ नोकषायों में; अप्रत्याख्यानावरण एवं प्रत्याख्यानावरण कषायों का अन्य कषाय-नोकषायों में आदि।** ये सजातीय प्रकृतियों में जो कोई संक्रमण होता है उसकी बात कही। संक्रमण होना यानी क्या ? एक प्रकृति दूसरे प्रकृतिरूप हो जाना यानी सजातीय प्रकृति में आपस में होता है लेकिन मूल प्रकृतियों में संक्रमण कभी नहीं होता।

आयुकर्म को छोड़कर ज्ञानावरणादि सातों कर्मों का निरंतर बंध होता है। कदाचित् किसीको एक अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत आठों कर्मों का भी बंध होता है। जब आयुबंध होता है वह भी एक अंतर्मुहूर्त के लिये होता है तो उस समय वह आठ कर्मों का- हां, आठों कर्मों का एक अंतर्मुहूर्त पर्यंत बंध होगा। अन्यथा आयु को छोड़कर सात कर्मों का तो निरंतर बंध होता ही है। अब कहते हैं **दर्शनमोहनीय कर्म के तीन भेदों में से मात्र मिथ्यात्व कर्म का ही बंध होता है।** यह भी हमने पहले देखा था न कि सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति बंधनेवाली प्रकृतियां नहीं है। वह तो किसी जीव को सम्यक्त्व होता है तो मिथ्यात्व के तीन टुकड़े हो जाते हैं लेकिन ये दो प्रकृतियां बंधी नहीं जाती। दर्शनमोहनीय कर्म के तीन भेदों में से मात्र मिथ्यात्व कर्म का ही बंध होता है। **मिश्र और सम्यक्त्व प्रकृति- इन दोनों की सत्ता होती है और इनका उदय भी होता है; परंतु नियम से बंध नहीं होता।** और क्या कहते हैं ?

मिथ्यात्व कर्म का क्षय स्वमुख से नहीं होता। यह क्या कहना चाहते हैं ? देखो क्षायिक सम्यग्दृष्टि होता है न तो क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त करने के लिये दर्शनमोहनीय की ये तीन प्रकृतियां हैं उनका भी वह नाश करेगा न। अनंतानुबंधी का तो बाद में देखेंगे। अभी यहां क्या कह रहे हैं ? वह मिथ्यात्व कर्म सम्यग्मिथ्यात्वरूप टर्न हो जाता है यानी मिथ्यात्व कर्म उदय में नहीं आता है। अपने मिथ्यात्वरूप से

उदय में आया तो उसको स्वमुख से उदय में आया कहेंगे। तो वह मिथ्यात्वरूप से उदय में न आते हुये सम्यक् प्रकृतिरूप से उदय में आता है और यहां ऐसा टर्न होते-होते यानी संक्रमित होकर यह ख़तम हो जाता है। इसलिये क्या कहते हैं ? मिथ्यात्व कर्म का क्षय स्वमुख से नहीं होता। **मिथ्यात्व कर्म मिश्ररूप परिणमित होता है। मिश्र दर्शनमोहनीय कर्म सम्यक् प्रकृतिरूप से परिणमित होता है।** तो ऐसा करते-करते क्या होगा ? कि मिथ्यात्व नष्ट हो जायेगा और सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति रहेगी। फिर कुछ काल के बाद सम्यग्मिथ्यात्व भी नष्ट हो जायेगा। सम्यक् प्रकृति रहेगी। वह भी उदय आते-आते नष्ट हो जायेगी। इसलिये कहते हैं मिश्रमोहनीय कर्म सम्यक् प्रकृतिरूप से परिणमित होता है।

तदनंतर सम्यक् प्रकृति कर्म उदय में आकर स्वमुख से नष्ट होता है। इसी प्रकार **क्रम से मिथ्यात्व का नाश होता है।** इसीतरह और एक बात बताते हैं कि **अनंतानुबंधी कषाय कर्म का भी स्वमुख से क्षय नहीं होता, उसका विसंयोजना द्वारा ही अभाव होता है।** हमने देखा न ये जो अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ हैं वे अन्य प्रकृतियों में संक्रमित होती हैं। कौनसी प्रकृतियां देखी थी अनिलभाई ? *श्रोता: अप्रत्याख्यानावरण चार, प्रत्याख्यानावरण चार और संज्वलन चार और नौ नोकषाय।* अप्रत्याख्यानावरण चार, प्रत्याख्यानावरण चार, संज्वलन चार और पांच नोकषाय इन रूप से वे परिणमित हो जाते हैं। अनंतानुबंधी कर्म का भी स्वमुख से क्षय नहीं होता। उसका विसंयोजना द्वारा ही अभाव होता है। **वास्तव में विचार किया जाये तो विसंयोजना का अर्थ सर्वसंक्रमण ही है।** अभी सर्वसंक्रमण वगैरह क्या है वह बात मत पूछो क्योंकि उसके साथ-साथ आपको विध्यात संक्रमण वगैरह-वगैरह अन्य बातें भी बतानी पड़ेगी। हम उसको जरा अभी विराम देते हैं।

तथापि विसंयोजित अनंतानुबंधी कषाय चौकड़ी कदाचित् फिर से संयोजित भी हो सकती है। क्या कहा ? यह अभी विसंयोजना हुयी न तो यदि वह जीव मिथ्यात्व में आता है, तो उसकी संयोजना भी होगी। तो कहते हैं **इसलिये उसे विसंयोजना कहा है। अन्य चारित्रमोहनीय प्रकृतियों में विसंयोजना नहीं होती।** अभी आगे की और बात हम कल सुबह देखेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

२५. अपूर्वकरण गुणस्थान - चार आवश्यक

आज हम आठवें नंबर का जो अपूर्वकरण गुणस्थान है उसके बारे में कुछ देखेंगे। देखो कल हमने पेज नंबर १८० पर अलग-अलग बातें देखी थी- क्षयोपशम, अंतरकरणरूप उपशम, सदवस्थारूप उपशम, विसंयोजना, संक्रमण आदि की बातें देखी थी। वहां तो इसी बात की चर्चा हो रही थी कि जीव के परिणाम तो विशुद्धि के हो रहे हैं; वीतरागता के हो रहे हैं। तो उसमें विशुद्धि के परिणाम के कारण यहां कर्मों में अलग-अलग अवस्थायें हो रही हैं। इसका ही मतलब यह है कि जीव कर्मों में कुछ नहीं करता लेकिन उसकी जो अपनी-अपनी अवस्था है वह अपने कारण से हो रही है। यह बात देखते हुये हम अभी आगे बढ़ेंगे।

हम **काल अपेक्षा विचार** करेंगे। उसका जघन्य काल कितना हो सकता है ? इस बात को देखते हुये हम उसका उत्कृष्ट काल भी देखेंगे। तो आठवें गुणस्थान का जघन्य काल कितना हो सकता है कौन बताना चाहेगा ? आप बतायेंगे ? हां, बोलो साहब। *श्रोता: एक समय।* एक समय। यह कैसा घटित करेंगे हम एक समय ? बिलकुल सही है आपका उत्तर, फिर वह एक समय किस अपेक्षा से कहा गया है यह हमें जानना चाहिये। रटने की बात नहीं है। देखकर बोलने की तो कोई बात नहीं है। हमको मालूम होना चाहिये एक समय क्यों कहा गया है। हां, बोलो सुरेशभाई आप बतायेंगे ? आसान है। *श्रोता: सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान में मरण की अपेक्षा एक समय।* यहां सातवें गुणस्थान की बात नहीं हो रही है। आप यह कहना चाहते हैं आठवें गुणस्थान में आया हुआ जीव एक समय होते ही उसका मरण हो सकता है। इस अपेक्षा से आठवें गुणस्थान का जघन्य काल एक समय है।

लेकिन उसमें एक बात ध्यान रखना हो, देखो, दो कंडिशन्स हैं यहां पर। पहले में पहले वह जीव उपशमश्रेणीवाला होना चाहिये। दूसरी बात, चढ़ते समय उपशमश्रेणी में आठवें गुणस्थान के पहले समय में मरण नहीं होगा। वहां तो कहते हैं पहले भाग में मरण नहीं होता है। उसमें भी वह भाग करते हैं। अपनी तो यहां एक समय की बात चल रही है न, तो एक समय में उसका मरण नहीं होगा। अब क्या कह रहे हैं ? वह जीव जब उपशमश्रेणी चढ़कर ग्यारहवें गुणस्थान तक पहुंचता है और वापस लौटता है तो नौवें गुणस्थान से आठवें गुणस्थान में आये और एक समय में उसकी मृत्यु हो जाये

तो हम कहेंगे कि आठवें गुणस्थान का जघन्य काल एक समय है। चढ़ते वक़्त आठवें के पहले भाग में मरण नहीं होता है, उतरते वक्त मरण हो सकता है। ठीक है। मेरा यह पूछना है कि उपशमश्रेणी उतरते हुये एक समय में उसका मरण हो जावे तो क्षपकश्रेणीवाला जो जीव है उसका चढ़ते वक़्त मरण होगा या उतरते वक्त होगा ? *श्रोता: मरण ही नहीं होगा।* हां साहब, चढ़ते वक्त होगा ? क्या कह रही हैं आप ? मरण ही नहीं होगा। देखो बहुत बढ़िया बात है कि जो क्षपकश्रेणी मांडनेवाला, जिसने क्षपकश्रेणी मांडने की शुरुआत की है तो समझना कि उनके मोक्ष हुये बिना रहेगा ही नहीं, उसी भव में मोक्ष होगा। क्या कह रहे हैं ? उसकी मृत्यु नहीं होगी। किसकी ? क्षपकश्रेणीवाले जीव की।

अभी हमने क्या देखा ? आठवें गुणस्थान का जघन्य काल जो होता है तो उपशमश्रेणी की अपेक्षा से कह रहे हैं एक समय। क्षपकश्रेणी की अपेक्षा से जघन्य काल कितना होगा ? आप बता पायेंगी बहन ? क्षपकश्रेणीवाला जीव उसका आठवां गुणस्थान है उसका जघन्य काल कितना होगा ? *श्रोता: जघन्य काल नहीं होगा।* जघन्य काल नहीं होगा ? तो कैसा होगा ? जघन्य कहो या उत्कृष्ट कहो उसका तो एक अंतर्मुहूर्त होगा। यह बात बराबर है। हम आगे बढ़ते हैं, अभी कहते हैं आठवें गुणस्थान का उत्कृष्ट काल कितना होगा ? अंजूबहन आपने देख लिया है, बोल सकती हैं आप ? *श्रोता: एक अंतर्मुहूर्त।* एक अंतर्मुहूर्त। यह किसकी बात कर रहे हैं ? उपशमश्रेणी की या क्षपकश्रेणी की ? *श्रोता: उपशमश्रेणी की।* हां, क्षपकश्रेणी की नहीं ? क्षपकश्रेणी का उत्कृष्ट काल कितना होगा ? *श्रोता: एक अंतर्मुहूर्त।* हां, फिर ना क्यों कह रहे हैं ? कोई बात नहीं, देखो हम जितना जल्दी-जल्दी बोलना सीखेंगे न, उतनी जल्दी-जल्दी बात अपने दिमाग में और दिल में उतरेगी।

देखो, अब हम आगे बढ़ते हैं। यहां हमने आठवें गुणस्थान का जघन्य काल भी देखा और उसका उत्कृष्ट काल भी देखा। अब पुस्तकें बंद करो आप, अच्छा नहीं लगता है। अभी हम **गमनागमन** की **अपेक्षा** से सोचेंगे। आठवें गुणस्थान से गमन कहां-कहां होगा और आगमन कहां-कहां से होगा ? इस बात का हम विवेचन देखेंगे। पहले तो हम इमॅजिन करेंगे अपनी बुद्धि के हिसाब से। तो कहते हैं कि आठवें गुणस्थान में आगमन कहां-कहां से है ? हां, भाईसाहब आप बतायेंगे प्रमोदभाई के पीछेवाले ? हां-हां, *श्रोता: आठवें में आगमन नौवें में से और सातवें में से होगा।* हां,

आठवें में से आगमन होगा ? नौवें में से होगा और ? सातवें में से होगा। देखो आपने बोर्ड देखा न इसलिये आप फंस गये। क्योंकि देखो साहब हम अपनी बुद्धि से सोचेंगे तो सोच बराबर होती है। दूसरे की बुद्धि से सोचेंगे तो गलत क्योंकि हमें मालूम नहीं न वहां क्या लिखा है ? किस लिये लिखा है और उसको पढ़ने को भी आना चाहिये। आप जरूर कहते होंगे कि यह बहुत खडूस पंडित मिला है। परंतु क्या करूं ? हमारी जो आदतें हैं न, नो एन्ट्रीवाला बोर्ड होगा तो उस रास्ते से हम बिलकुल स्कूटर चलायेंगे। ख्याल में आया ? हमें तो कायदा तोड़ने में मज़ा आता है। यहां तो भैया अपने कल्याण की बात हो रही है। हम जितनी बैसाखी लेकर घूमेंगे, उतना चलना देरी से सीखेंगे।

अभी हमारी बात क्या हो रही है कि आठवें गुणस्थान में आगमन कहां-कहां से होगा; कौन बताना चाहेगा ? *श्रोता: सातवें से आठवें में आयेगा।* सातवें से आठवें में आयेगा। और कहां से आयेगा ? हां बोलो चारुबहन ? *श्रोता: नौवें से आठवें में आयेगा।* नौवें से आठवें में आयेगा। और कहां से ? हां जी ? दसवें से आयेगा ? हां, सुनो-सुनो, एक मिनट- *श्रोता: उपशमश्रेणीवाला जीव होगा तो नीचे से आनेवाला सातवें से आयेगा।* हां उपशमश्रेणीवाला जीव होगा तो ? आठवें में आना है। सातवें मैंने समझा आठवें से और नौवें से आप बोल रही हैं। सातवें से यानी नीचे से आनेवाला होगा वह सातवें से आयेगा और ऊपर से आनेवाला नौवें से आयेगा। दसवें से आयेगा कि नहीं सुमनबहन ? हां, क्या बोल रही हैं ? प्रॉम्प्ट कर रहे हैं आपको, आप बोलो, *श्रोता: दसवें से डायरेक्ट नहीं आयेगा।* हां, बहुत अच्छा भाईसाहब कह रहे बहुत अच्छा कह रहे हैं कि डायरेक्ट आनेवाले की बात है यहां। ऐसे व्हाया मीडिया दूसरे ने किसीने बोला और हमने बोला ऐसा नहीं है।

जो आगमन है वह सिर्फ उपशमश्रेणीवाला जीव है, वही नौवें से आठवें में आयेगा, क्षपकवाला नहीं आयेगा। उपशमश्रेणीवाला जो आठवां गुणस्थान है उसमें भी और क्षपकश्रेणीवाला आठवां गुणस्थान है उसमें भी सातवें से आठवें में आयेगा। अभी गमन कहां-कहां होगा ? आठवें से गमन कहां-कहां होगा ? पन्नालालजी आपको मालूम है ? बोलो, बहुत अच्छा। *श्रोता: आठवें से नौवें में जायेगा।* नौवें में जायेगा और क्या आगे ? देखो-देखो, आपने बताया आठवें से नौवें में जायेगा। वे कौन जीव होंगे ? उपशमश्रेणीवाले और क्षपकश्रेणीवाले। अब आगे और गमन कहां होगा ? आठवें से सातवें में। बराबर ? तो आठवें से सातवें में जानेवाला कौनसी श्रेणीवाला होना चाहिये ?

उपशमश्रेणीवाला। कितना आसान है।

थोड़ा हम अपना है न भेजा, लाया होगा साथ में तो उसको वापरने का सोचो। माफ़ करो भैया, मैं बहुत ज़बान से कड़वा हूं लेकिन मैं सत्य बात बताता हूं। मैं कतराता नहीं सत्य बात बोलने को क्योंकि हमको तो क्या है ? ऐसा दूसरे को पूछकर या पुस्तक में देखकर उत्तर देने की आदत सी लगी है। वह छोड़ देना। एक दफ़े आप मेरे साथ बैठोगे तो आपको किसतरह से अभ्यास करना है, स्वाध्याय करना है, यह बात ख्याल में आयेगी और फिर आप याद करोगे जब मैं नहीं होऊंगा। क्यों ? मैं तो अनादिअनंत हूं लेकिन यह पर्यायवाली बात तो जभी याद आयेगी अरे ये कोई था हमारे रमेशबाबू की फॅमिली का। क्यों साहब ? अब आगे बढ़ते हैं। अभी हमने देखा गमन और आगमन और काल की अपेक्षा हमने यह आठवें गुणस्थान का सोचा था।

अभी हम आते हैं दुबारा पेज नंबर १८३ वहां **काल अपेक्षा विचार** कराया है। देखो, **जघन्य काल- यदि कोई मुनीश्वर उपशमक अपूर्वकरण गुणस्थान में कम से कम काल रहेंगे तो मात्र एक ही समय रह सकते हैं।** अब यह एक समय की अपेक्षा नीचे बता रहे हैं। **जैसे- कोई महामुनिराज उपशांतमोह गुणस्थान से उतरते समय नीचे अपूर्वकरण गुणस्थान में मात्र एक समय ही रह सके और उन महामुनिराज के मनुष्यायु का क्षय हो गया, तो मरण की अपेक्षा अपूर्वकरण गुणस्थान का जघन्य काल एक समय घटित होता है।** अब प्रश्न पूछ रहे हैं- **आपने यह कथन क्षपक अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती मुनिराज के ऊपर क्यों घटित नहीं किया ?** तो कहते हैं **भाई ! क्षपकश्रेणी पर आरूढ़ मुनिराज का मरण होता ही नहीं।** अब वह बाद की बात है वह छोड़ देते हैं हम।

अब उसके आगे प्रश्न ७८ है **आठवें उपशमक अपूर्वकरण में आनेवाले सातिशय अप्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती मुनिराज को क्यों नहीं लिया ?** उपशमश्रेणी चढ़नेवाले मुनिराज आठवें गुणस्थान के पहले भाग में मरते नहीं। वह पहला जो भाग है वह एक अंतर्मुहूर्त का है। क्योंकि अंतर्मुहूर्त के भेद तो अनेक होते हैं। यहां इसलिये बता रहे हैं कि ऊपर से नीचे आनेवाले की बात की है। श्रेणी चढ़नेवाले जीव हैं उनकी बात यहां नहीं कर रहे हैं। उत्तर: **उपशमश्रेणी चढ़नेवाले मुनिराज आठवें गुणस्थान के पहले भाग में मरते ही नहीं हैं- ऐसा कथन आगम में आया है। अतः आठवें**

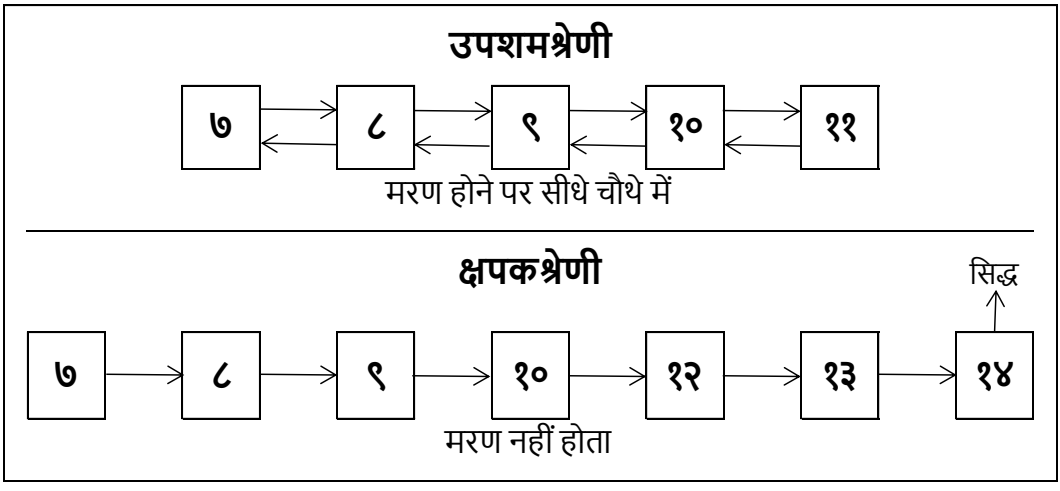
उपशमक अपूर्वकरणवाले मुनिराज को नहीं लिया है।

अब नीचे लिखा है **उत्कृष्ट काल** कितना है ? तो **यथायोग्य** एक **अंतर्मुहूर्त ही है। यदि उपशमक अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती मुनिराज अधिक से अधिक काल इस गुणस्थान में रहेंगे तो मात्र एक अंतर्मुहूर्त ही रहेंगे। क्षपक अपूर्वकरण गुणस्थान का काल भी यथायोग्य अंतर्मुहूर्त ही है। इसका जघन्य** और **उत्कृष्ट काल ऐसा भेद नहीं है।** हम कह सकते हैं कि जघन्य भी अंतर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट भी उतना ही अंतर्मुहूर्त है। हां साहब ? यानी यह कह रहे हैं कि उनका अंतर्मुहूर्त यानी जघन्य का और उत्कृष्ट का एक ही है इसलिये उसमें जघन्य और उत्कृष्ट ऐसा भेद नहीं करें तो भी चलता है। अब कहते हैं **मध्यम काल। उपशमक अपूर्वकरण गुणस्थान का मरण की अपेक्षा से दो, तीन, चार आदि समयों से लेकर यथायोग्य अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत बीच के होनेवाले काल के सर्व भेद मध्यम काल के होते हैं।** समझ लो एक है वह जघन्य है और १०० है वह उत्कृष्ट है तो २ से लेकर ९९ तक के जो कोई बीच के भेद हैं, वे सारे मध्यम भेद हो गये। ऐसा यहां लिया है।

अभी **गमनागमन अपेक्षा विचार** करते हैं। जो हमने बहुत आसानी से देखा है यहां उन्होंने भी वही बात बतायी है। देखो-देखो, **गमन-** यानी आठवें गुणस्थान से जीव कौनसे-कौनसे गुणस्थान में जायेगा ? उसको गमन कहेंगे। तो कहते हैं, **उपशमक या क्षपक अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती मुनिराज ऊपर की ओर नियम से अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में गमन करते हैं।** अनिवृत्तिकरण यह कौनसे नंबर का गुणस्थान है ? *श्रोता: नौवें।* नौवें। तो कह रहे हैं अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में गमन करते हैं। दूसरा पॉइंट- **उपशमक अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती मुनिराज श्रेणी से उतरते समय नियम से अप्रमत्तसंयत गुणस्थान में गमन करते हैं।** यानी सातवें गुणस्थान में। वह भी कौन होंगे ? उपशमक होंगे, उपशमश्रेणीवाले होंगे। तीसरा पॉइंट- यदि, यह हम भूल गये थे; क्या कहा ? **यदि आठवें गुणस्थानवर्ती मुनिराज का आठवें गुणस्थान में मरण होता है तो तत्काल ही विग्रहगति के पहले समय में ही वे चौथे अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान में ही गमन करते हैं।**

आपके प्रश्न का उत्तर आया है इधर, कल जो आपने पूछा था। चढ़ते समय उपशमक अपूर्वकरण के प्रथम भाग में मरण न होने का नियम हैं ? हां वही तो, **चढ़ते**

समय उपशमक अपूर्वकरण के प्रथम भाग में मरण न होने का नियम है; अन्य भाग में चढ़ते समय भी यानी नौवें में या आठवें के दूसरे, तीसरे आदि जो भाग हैं उनमें **मरण हो सकता है। उतरते समय उपशमक अनिवृत्तिकरण से नीचे अपूर्वकरण गुणस्थान में किसी भी समय,** यानी पहले समय, दूसरे समय आदि में **मरण हो सकता है।** भाई, यहां उपशमश्रेणी की बात चल रही है। देखो अभी हम थोड़ासा बोर्ड की तरफ देखेंगे।



यहां क्या कह रहे हैं ? सातवें से आठवें में आया हुआ जीव है तो वह आठवें से नौवें में जायेगा और श्रेणी उतरते समय आठवें से सातवें में जायेगा। यह उपशमश्रेणी की बात हो रही है और मरण हो जावे तो सीधे चौथे में जायेगा। अभी आगमन की बात देखते हैं हम। नहीं आगमन के पहले हम क्षपकश्रेणीवालों को देखते हैं। जो आठवां गुणस्थानवर्ती जीव है वह नियम से नौवें में जायेगा। यहां वापस कहीं आने की बात नहीं है। ये तो ऊपर ही ऊपर, ऊपर ही ऊपर जायेंगे और यहां क्या कह रहे हैं ? मरण नहीं होता। यह चार्ट पढ़ने को आ गया कि नहीं ? तो अगले गुणस्थान में आपको हेल्पफुल होगा लेकिन देखो मत। अब कहते हैं **आगमन** की बात हम देखना चाहेंगे।

उपशमक अपूर्वकरण गुणस्थान में आगमन नीचे के सातवें अप्रमत्तसंयत गुणस्थान से होता है। और क्या होगा ? **उपशमश्रेणी से उतरते समय क्रमशः उपशमक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान से भी आठवें गुणस्थान में आगमन होता है।** और **क्षपक अपूर्वकरण गुणस्थान में आगमन मात्र अप्रमत्तसंयत गुणस्थान से**

होता है। हमने देखा कि यहां से आगमन सात से आठ में आयेगा। वह कौन होगा ? क्षपकश्रेणीवाला जीव। **ऊपर के किसी भी गुणस्थान से नहीं; क्योंकि क्षपक नीचे उतरते ही नहीं; वे तो नियम से अरहंत बनकर सिद्ध ही हो जाते हैं।** अभी हम इस आठवें गुणस्थान में क्या-क्या विशेषता है वह देखेंगे। पहले में पहले सातवें में हमने चार बातों की विशेषता से विचार किया था यानी जो चार आवश्यक होते हैं उसको देखा था। वे चारों ही आवश्यक इस आठवें गुणस्थान में भी होंगे। ख्याल में आया ? इन ॲडिशन टू दॅट और चार बातें होंगी। जो और चार बातें होनेवाली हैं वह समझने के पूर्व कल जो हमने सातवें गुणस्थान से, कौनसा सातवां गुणस्थान ? सातिशय अप्रमत्त। स्वस्थान अप्रमत्त की बात नहीं है। तो सातिशय अप्रमत्तवाला जो कोई जीव है उसके चार आवश्यक हमने देखे थे। किसको-किसको याद हैं ? जो बोलना चाहे बहुत अच्छा, एक, दो, तीन, चार, पांच, छह, सात, आठ अरे वाह नौ, दस। बहुत बढ़िया, ग्यारह। एक रिव्हिजन तो कर डालो।

चलो-चलो, बहुत अच्छा तो अभी मैं किसको पहला प्रेफरन्स दूं मेरी समझ में नहीं आ रहा है। अच्छा बोलो, जोर से बोलना, आवाज़ जोर से चाहिये। हां एक-एक मिनट आपकी आवाज़ मुझे नहीं सुनायी दे रही है इसलिये दूसरे किसीको बोलेंगे। बहन आप बतायेंगी ? हां, *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना, स्थितिबंधापसरण, प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना, अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटना।* हां, प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना, दूसरा ? स्थितिबंधापसरण, तीसरा ? देखना मत, हां, प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना, बहुत अच्छा। अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटना। अभी मैं सबसे पूछूंगा, यह दूसरा आवश्यक कौनसा देखा था बहन अभी हमने ?, आप बोलो बहन ? *श्रोता: स्थितिबंधापसरण।* स्थितिबंधापसरण। और पहला ? *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना।* प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना। अभी बहुतों ने हाथ उठाया था न तो मैं पहले महिलाओं को पूछूंगा। चौथा नंबर कौनसा था ? हां, बहन आप बोलना ? *श्रोता: अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटना।* हां, अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटना। यह बहुत आसान है भाई। सिर्फ अपना उपयोग केंद्रित होना चाहिये। अभी रह गया कौनसा ? तीसरा। है न ? तो आप बतायेंगे। *श्रोता: प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना।* बहुत अच्छा। प्रशस्त

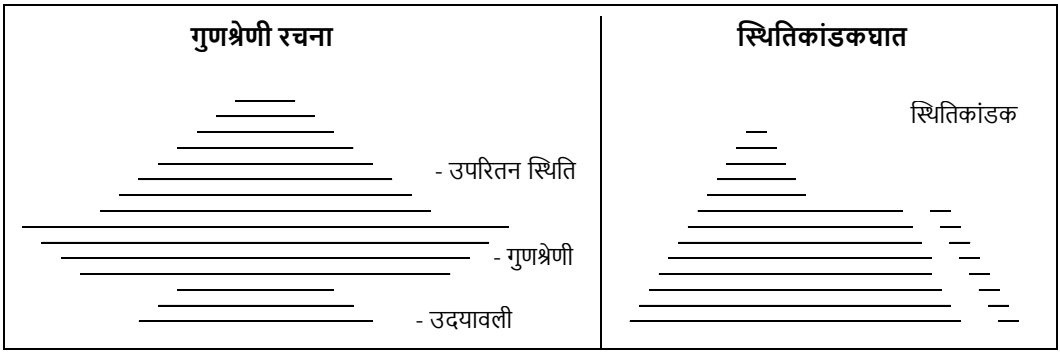
प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटना ? बढ़ना, अच्छा बढ़ना, बहुत अच्छा। हम तो बढ़ते हुये जा रहे हैं न, हमें तो उपशमश्रेणी चढ़नी नहीं है। हम चढ़ेंगे तो क्षपक ही चढ़ेंगे। ऐसा अभी तो सोचो। भले चढ़ना है जो है होना सो वह होगा।

अभी पुरुषों में से चारों ही बातें एक साथ बतानेवाला कौन है ? उनको मैं उपाधि दूंगा, वीर, अतिवीर, महावीर। हां देखो-देखो, अच्छा एक मिनट कन्नुभाई, यह हमारे भाईसाहब कुछ नया प्रयोग करना चाहते हैं। बोलो साहब, बोलो फटाफट, बैठकर, *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना, स्थितिबंधापसरण, प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ते रहना, अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटते रहना।* प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि का बढ़ना, हां स्थितिबंधापसरण, बहुत अच्छा। प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ते रहना, बढ़ते रहना। अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग घटते रहना। यह देखो कितना आसान लग रहा है अभी। ये बातें आठवें गुणस्थान में तो होगी ही होगी। तो और क्या है ? कल हमने देखा था आठवें, नौवें, दसवें तक होगीं ये बातें। ये चार आवश्यक तो होंगे ही होंगे लेकिन आठवें गुणस्थान में और चार बातें होती हैं। तो देखो जरा इमॅजिन करो वह बातें जब हम देखेंगे न तो हमें पता लगेगा कि वे रोज कितना माल खिपाते हैं। कौन ? यह मुनिराज की बात है। ऐसा नहीं समझना कि अभी इस हालत में हम तुम कर रहे हैं। यानी अपने पास कितना कर्म है ! देखो अभी आगे चलते हैं।

यहां जो चार बातें बतायी हैं तो वे बातें देखो गुणस्थान की पुस्तक में पेज नंबर १८५ पर दूसरा पॉइंट जो है, **पूर्वबद्ध कर्मों का** यानी पहले हमने जो कर्म बांधे हैं उनका **असंख्यातगुणा स्थितिकांडकघात** होना। मैं केवल पढ़ता हूं, वहां लिखा है असंख्यातगुणा स्थितिकांडकघात होता है। अब उसके आगे १८६ पेज पर जो कहा है **पूर्वबद्ध अशुभकर्मों का असंख्यातगुणा अनुभाग कांडकघात होता है।** क्या कह रही हो ? अच्छा यह पूर्वबद्ध अशुभकर्मों का अनुभाग कांडकघात होता है, ऐसा रखो। असंख्यातगुणा हटा दो। स्थितिकांडकघात के पहले लिखा हुआ असंख्यातगुणा शब्द भी हटा दो। क्या कहते हैं ? आप घबराना मत क्योंकि उज्ज्वला जो सजेस्ट कर रही हैं वह बिलकुल सही है। आगम के आधार से वह कहती है कि एक अनुभागकांडकघात में अनुभाग अनंतगुणा हीन होता है। और एक स्थितिकांडकघात में स्थितिसत्त्व संख्यातवें भागप्रमाण घटता है। आगे यहां कह रहे हैं अपूर्वकरण चौथा नंबर जो है न

नीचे, १८६ पर कि **अपूर्वकरण परिणामों के निमित्त से पूर्वबद्ध कर्मों की गुणश्रेणी निर्जरा।** यह पॉइंट कौनसा है ? गुणश्रेणी निर्जरा और उसके आगे **गुणसंक्रमण।** यह है पेज नंबर १८८ पर।

ये चार बातें- कौन-कौनसी ? गुणसंक्रमण, सब लोग बोलेंगे गुणसंक्रमण, *श्रोता: गुणसंक्रमण।* फिर से, गुणसंक्रमण। *श्रोता: गुणसंक्रमण।* गुणश्रेणी निर्जरा, *श्रोता: गुणश्रेणी निर्जरा।* अनुभागकांडकघात, *श्रोता: अनुभागकांडकघात।* और स्थितिकांडकघात। *श्रोता: स्थितिकांडकघात।* फिर से हम दुबारा देखते हैं, स्थितिकांडकघात, *श्रोता: स्थितिकांडकघात।* अनुभागकांडकघात, *श्रोता: अनुभागकांडकघात।* गुणश्रेणी निर्जरा, *श्रोता:गुणश्रेणी निर्जरा।* और गुणसंक्रमण। *श्रोता: गुणसंक्रमण।* ये चार बातें, ये चार आवश्यक आठवें गुणस्थान में होते हैं। यहां जो बात बतायी है उससे जरा हटकर यह मेरे पास पंचलब्धि नामक पुस्तक है। अभी दुर्भाग्य से आपके पास नहीं है। थोड़ासा ध्यान देकर आप सुनेंगे तो आपको सब बात आसानी से समझ में आयेगी।



यह पंचलब्धि का १३४ नंबर का जो पेज है उसमें देखकर बता रहा हूं। पहले हम स्थितिकांडकघात का वर्णन देखेंगे। देखो यहां क्या हो रहा है ? पहले हम उसका अर्थ देखते हैं। कांडक यानी एक टुकड़ा। आपने गन्ना देखा है ? गन्ने में क्या होता है ? ऐसे एक-एक, एक-एक भाग होते हैं। उसमें से एक भाग को हम कहेंगे कांडक। ख्याल में आया ? तो यह क्या है ? अपने पास बंधी हुयी स्थिति जो है, उस स्थिति में कटौती होती है, स्थिति कम हो जाती है। अब हम मान लेते हैं यह स्थिति की रचना है इसतरह से यानी यहां निषेक हैं। अब क्या होता है ? उसमें से जो ऊपर के अनेक

निषेकों का इतनासा कांडक यानी टुकड़ा, उसका क्या होता है ? प्रति समय एक-एक, एक-एक भाग ऊपर से नीचे के निषेकों में आ मिलता है। यानी यहां निषेक रचना ऐसी, ऐसी, ऐसी हमने देखी थी न यहां पर। एक-एक, एक-एक निषेक रचना इसतरह से। यह ऊपर का विशिष्ट कोई पोर्शन है वह पोर्शन जिसको हम कांडक कहेंगे उसके हर समय में मान लो इसका हमने ऐसा स्लाइस किया। उसके जो परमाणु हैं वे नीचे के निषेकों में आ मिलते हैं। तो एक समय में एक भाग, दूसरे समय में दूसरा भाग, तीसरे समय में तीसरा भाग। ऐसे करते-करते असंख्यात समयों में जो आखिर में जो बचा हुआ है वह पूरा का पूरा नीचे के निषेकों में आ मिलता है। ऐसे एक अंतर्मुहूर्त में इतने सारे निषेकों के जो परमाणु हैं ये सारे के सारे जल्दी उदय में आवे ऐसे हो जाते हैं। तो कह रहे हैं वहां स्थितिकांडकघात हुआ।

अभी मेरा बहुत खोटा उदाहरण है। हम तो ब्रेड खाते नहीं हैं, लेकिन आपने बाजार में देखा होगा, कैसे उसके स्लाइसेस; तो एक स्लाइस गया, दूसरा स्लाइस गया, ऐसे इस कांडक में से हमने एक-एक स्लाइस उतार दिये। हमने नहीं, वे सहज होते हैं। देखो इस एक-एक स्लाइस को शास्त्रीय भाषा में फाली कहते हैं- फाली। जो भी आपको पता हो, यह तो समझने के लिये एक फाली नीचे आयी तो दूसरे समय में उससे असंख्यागुणा अधिक परमाणु फिर नीचे आवेंगे। वह फाली वह एक-एक बढ़ती-बढ़ती और अभी मान लो कि यहां दस फाली हैं, मान लेते हैं दस समय। तो यह दस फाली में पहले समय में जो परमाणुओं की संख्या है उससे दूसरे में असंख्यातगुणा अधिक है। दूसरे से तीसरे में असंख्यातगुणा। ऐसे नौवें में आठवें से भी असंख्यातगुणा और दसवें में ? ये एक से नौ तक की फालियों में परमाणुओं की जितनी संख्या होगी उससे भी असंख्यातगुणा आखिर की फाली में होती है। तो मैं यही बता रहा था कि हम कितने स्टॉकिस्ट अँड ड्रगिस्ट हैं। काहे के ? कर्मों के। इतना स्टॉक भरा हुआ है। यह क्या कह रहे हैं ? स्थिति का जो कांडक यानी एक टुकड़ा है उसका घात हो जाता है। इसको कहेंगे स्थितिकांडकघात।

अब यहां हम पढ़ेंगे और आसानी से हमें समझ में आयेगा। देखो अभी यहां क्या कह रहे हैं ? आपको सिर्फ सुनना है क्योंकि आपके पास पंचलब्धि पुस्तकें तो हैं नहीं। **सत्ता में पड़े हुये कर्मों की स्थिति अर्थात् स्थितिसत्त्व** यानी सत्ता की स्थिति, **कांडकरूप से हीन होना,** हीन होना यानी कम हो जाना, निकल जाना उसे

स्थितिकांडकघात कहते हैं। **कांडक का अर्थ है टुकड़ा- अनेक निषेकों के समूह को यहां कांडक कहते हैं।** अभी अपने पास यहां बोर्ड नहीं है और यहां लिखने की सुविधा नहीं है। कह रहे हैं अनेक निषेकों के समूह को यहां कांडक कहते हैं। **एक कांडक में अनेक समयों के जो निषेक हैं उनका अभाव होकर उनके सर्व परमाणु एक अंतर्मुहूर्त काल में नीचे के निषेकों में आ मिलते हैं।** यानी यह क्या कहना चाहते हैं ? अभी एक समय में हमने कुछ कर्म बांधे। उसकी कोई विशिष्ट स्थिति आदि है। दूसरे समय में बांधे, तीसरे समय में बांधे। *डॉ. उज्ज्वला शहा:- कर्म बंधने के बाद सत्ता के निषेकों में आ मिलते हैं। यहां स्थितिकांडकघात सत्ता के निषेकों में होता है। कम से कम पल्य के संख्यातवें भागप्रमाण और अधिक से अधिक ७-८ सागर प्रमाण निषेकों का एक अंतर्मुहूर्त में घात होकर उनके सारे परमाणु नीचे के निषेकों में आ मिलते हैं। ऐसे कांडकघात लगातार होते जाते हैं और कर्मों की स्थिति बहुत शीघ्र घटती जाती है।*

फिर कहते हैं **हमने देखा था कि अधःप्रवृत्तकरण के प्रथम समय से ही स्थितिबंधापसरण होता रहता है।** जो अभी हमने चार आवश्यक देखे थे उसमें स्थितिबंधापसरण आवश्यक था उसका नंबर कौनसा था साहब ? दूसरा। हमने देखा था कि अधःप्रवृत्तकरण के प्रथम समय से ही स्थितिबंधापसरण होता रहता है। **जिसके कारण नया होनेवाला बंध कम स्थितिवाला होता रहता है; वह भी हर अंतर्मुहूर्त में घटता जाता है।** यानी स्थिति कम, कम, कम बांधी जाती है, एक अंतर्मुहूर्त तक उतनी की उतनी रहेगी। फिर घटकर एक अंतर्मुहूर्त तक उतनी, फिर घटकर एक अंतर्मुहूर्त तक उतनी; ऐसा कह रहे हैं कि हर अंतर्मुहूर्त में स्थितिबंध घटता जाता है। **अपूर्वकरण में स्थितिबंधापसरण तो होता ही रहता है।** आठवें गुणस्थान में स्थितिबंधापसरण तो चलता ही रहेगा।

साथ-साथ हजारों कितने ? हजारों **स्थितिकांडकघात द्वारा स्थितिसत्त्व घटता जाता है।** यानी जो सत्ता है वह घटती जा रही है। कितनी बार ? हजारों। हमने तो एक कांडक को देखा ऐसे हजारों कांडक यहां एक अंतर्मुहूर्त में होते हैं। **स्थितिबंध अर्थात् बंधनेवाले कर्मों की स्थिति और स्थितिसत्त्व अर्थात् सत्ता में पड़े हुये कर्मों की स्थिति, यहां संख्यात हजार स्थितिकांडक होते हैं।** देखो, कितने कर्म नीचे आते होंगे जल्दी-जल्दी उदय में आने योग्य होते होंगे। **कांडक का प्रमाण छोटा यानी**

जघन्य या बड़ा यानी उत्कृष्ट तथा मध्यम हो सकता है। हर कांडक एक ही जैसा नहीं होगा, छोटा-बड़ा हो सकता है। **यह प्रमाण स्थितिसत्त्व के अनुसार होता है।** यानी हमारी सत्ता में कितने कर्म है उसके अनुसार उसका कांडक का प्रमाण होगा।

भिन्न-भिन्न जीवों का स्थितिसत्त्व का प्रमाण अन्य-अन्य होता है यानी जुदा-जुदा रहता है। **किसीके जघन्य स्थितिसत्त्व- अंतःकोड़ाकोड़ी सागर होता है तो किसीके उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व- अंतःकोड़ाकोड़ी सागर होता है।** अभी हम इतना ही समझेंगे कि जघन्य का जो प्रमाण है वह छोटा है और उत्कृष्ट उससे बहुत बड़ा है। अभी वह क्या है क्या नहीं है उसमें अभी और उलझन में हम नहीं जायेंगे। आप उससे परिचित हैं ही कि अनेक पल्यों का सागर होता है। दस कोड़ाकोड़ी पल्यों का एक सागर होता है। अभी सागर के भी तीन भेद हैं। इसलिये मैं उसमें नहीं उतरना चाहता हूं क्योंकि अपने पास टाइम बहुत कम है और उसमें हम जायेंगे तो हम उसीमें उलझे रहेंगे। हमारे चौदह गुणस्थान पूरे नहीं होंगे - अभ्यास में - तो हम सिद्धत्व कैसा प्राप्त करेंगे ? अभी हम अभ्यास कर रहे हैं और हमें एक बार क्लिअर पिक्चर मिल जाये तो हमारे जब प्रसंग आयेगा तो हमें ख्याल में आयेगा कि भाई यह क्या है।

देखो क्या कहते हैं ? कि अंतःकोड़ाकोड़ी के **मध्यम भेद असंख्यात हैं। इसलिये स्थिति के अनुसार,** यानी आठवें गुणस्थान में प्रवेश करनेवाले मुनिराजों के कर्मों की स्थिति किसी की बहुत होगी, किसी की अल्प होगी क्योंकि अंत:कोड़ाकोड़ी सागर के भी अनेक भेद हो सकते हैं। जिनकी स्थिति अधिक है, उनके स्थितिकांडक का प्रमाण यानी स्थितिकांडकआयाम भी बड़ा होगा, जिनकी स्थिति अल्प होती है, उनका स्थितिकांडकआयाम छोटा होगा। देखो, **जितने निषेकों का अभाव होता है उसे कांडक कहते हैं और उतने समयों को कांडक आयाम** कांडक आयाम अर्थात् क्या है ? **अर्थात् कांडक की लंबाई कहते हैं**। **जघन्य स्थितिकांडक आयाम** में निषेकों का प्रमाण **पल्य के संख्यातवें भाग प्रमाण होता है।** यह पल्य के जितने समय होंगे उसमें से संख्यातवां भाग ऐसी जघन्य स्थितिकांडक की लंबाई है।

उत्कृष्ट स्थितिकांडक आयाम पृथक्त्व सागर यानी सात या आठ सागर प्रमाण होता है। एक स्थितिकांडकघात होने पर इतनी स्थिति घटती है। यानी अगर उत्कृष्ट स्थितिकांडक हो जावे तो सात या आठ सागर जितने जो कोई सत्ता में

ऊपर के निषेक थे, उनके परमाणु वहां से हटकर नीचे के निषेकों में आ मिलते हैं। अभी उसकी भी बात अलग है। हमें तो स्थितिकांडक क्या है ? इतना ही समझना है, उसके बारे में अभी कुछ बोलेंगे नहीं। **एक बार स्थितिकांडक होता है उसे एक अंतर्मुहूर्त लगता है क्योंकि प्रत्येक समय में कुछ परमाणु अपकर्षित होकर नीचे के निषेकों में आ मिलते हैं और एक अंतर्मुहूर्त में कांडक के सर्व निषेकों के सभी परमाणु नीचे आकर उन निषेकों का अभाव होता है।** यानी मान लो कि यह इतना जो पोर्शन है उसकी स्थिति इतनी बड़ी है। वह ख़तम होने में बहुत टाइम लगे उसके पहले वे नीचे आकर स्थिति जल्दी घटती जाती है। एक अंतर्मुहूर्त में कांडक के सर्व निषेकों के सभी परमाणु नीचे आकर उन निषेकों का अभाव होता है। **इस काल को स्थितिकांडकोत्करण काल कहते हैं।** यानी स्थितिकांडक जो है उसका उत्करण होना यानी वह नीचे आ जाना। उसे जितना काल लगता है उसको स्थितिकांडकोत्करण काल कहते हैं।

यहां एक बात समझ लो कि ये सारे परमाणु सत्ता में ही रहते हैं, ऊपर के निषेकों में से नीचे के निषेकों में आते हैं। नीचे के निषेकों में परमाणु की संख्या बढ़ती चली जाती है। यानी उनका उदय का टाइम आयेगा तो अधिक संख्या में परमाणु खिर जायेंगे। देखो, **हमने पहले देखा था कि स्थितिकांडकघात के साथ-साथ यहां स्थितिबंधापसरण और अनुभागबंधापसरण होता है।** यानी स्थिति भी कम बंधती है, वह भी घटती हुयी और अप्रशस्त कर्मों का अनुभाग जो है वह भी हीन अनुभाग का बंध होता है। स्थितिबंध आयु को छोड़कर सभी कर्मों की घटती है परंतु अनुभागबंध तो अप्रशस्त कर्मों का घटता है। **स्थितिबंध घटता है, तब अंतर्मुहूर्त काल तक समान स्थितिबंध होता है, इस अंतर्मुहूर्त काल को स्थितिबंधापसरण काल कहते हैं।** वह बात पहले उन्होंने बतायी है।

हमने क्या-क्या देखा था ? चार कौन-कौनसे देखे थे ? स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात, गुणश्रेणीनिर्जरा और गुणसंक्रमण। पहली बात तो हमने देख ली। कौनसी ? स्थितिकांडकघात यानी स्थितियों का जो कोई एक टुकड़ा है उनकी एक-एक फाली करते-करते सारे के सारे निषेक एक अंतर्मुहूर्त में सत्ता में जो ऊपर पड़े थे यानी बहुत काल के बाद उदय में आनेवाले थे वे वहां से नीचे आकर जिसको हम कहेंगे उनका घात होता है। अपकर्षण होते हुये नीचे आते हैं और नीचे के निषेकों में

मिलते हैं। मान लो पहले का निषेक इतना है, मान लो तो ऊपर के निषेक आते हैं तो और बड़ा हो जाता है और दूसरे समय में आवे तो और-और बड़ा। यानी यह तो एक-एक, एक-एक उसका भी प्रमाण है कि पहले समय में कितना आयेगा ? उससे असंख्यातगुणा दूसरे समय में, उससे असंख्यातगुणा तीसरे समय में। फिर नयी फाली आयेगी फिर उसमें वही पोर्शन ऐसा चलता है। अभी यह बहुत डिटेल्स हैं न साहब अभी टाइम कम है। क्या करें ? मुझे तो ऐसा हो रहा है कि मैं क्या बोलूं और क्या छोड़ूं। जितना इम्पॉर्टंट हैं उसको हम देखेंगे।

अब **अनुभागकांडकघात**। यह दूसरा आवश्यक है, कौनसे ? आठवें गुणस्थान का। **एक-एक अंतर्मुहूर्त में एक-एक अनुभागकांडकघात होता है, उस अंतर्मुहूर्त काल को अनुभागकांडकोत्करण काल कहते हैं। अनुभागकांडकघात द्वारा अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागसत्त्व घटता है।** फिर से, क्या कह रहे हैं ? एक-एक अंतर्मुहूर्त में एक-एक अनुभागकांडकघात होता है। एक अंतर्मुहूर्त में कितने समय होंगे ? असंख्यात। अभी हमने देखा था कि निषेकों में स्थिति घटती जाती है। अभी यहां अनुभाग यानी स्पर्धक हैं, उनकी जो फलदान शक्ति है, वह घटती जाती है। वहां तो निषेक ऊपर से नीचे आते थे। यहां क्या है ? अनुभाग - जो फल देने की शक्ति थी वह एक साथ ग्रुप में कम, कम, कम होती जाती है। देखो एक अंतर्मुहूर्त में एक-एक अनुभागकांडकघात होता है, उस अंतर्मुहूर्त काल को अनुभाग कांडकोत्करण काल कहते हैं। अनुभागकांडकघात द्वारा अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागसत्त्व घटता है। देखो यहां प्रशस्त प्रकृतियों का नहीं घटता है; अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागसत्त्व घटता है यानी सत्ता में पड़े हुये अप्रशस्त कर्मों का अनुभाग घटता है।

पहले हमने स्पर्धकों का स्वरूप देखा था। एक-एक प्रकृति में अनंत स्पर्धक पाये जाते हैं। अप्रशस्त प्रकृतियों के अनंत स्पर्धकों को अनंत का भाग देने पर उसमें से बहुभाग स्पर्धकों का अनुभाग घटकर शेष एक भागरूप स्पर्धकों के समान हो जाता है। इसतरह अनंत बहुभाग स्पर्धकों का एक कांडक द्वारा घात होता है उसे अनुभागकांडकघात कहते हैं। यहां बहुत कुछ लिखा है, मैं जरा फ़ास्ट पढ़ता हूं अभी। क्या करूं ? पढ़ने का मोह भी है और समझ में आवे ऐसा भी सोचता हूं। देखो-देखो, **शेष स्पर्धकों का अनंत बहुभाग का दूसरे अनुभागकांडकघात द्वारा नाश होकर अनुभाग घटता है। इसीतरह एक-एक**

अनुभागकांडकघात द्वारा अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतवां भाग-अनंतवां भाग होता रहता है। देखो, अनंतवां भाग होना यानी अनंतगुणा घटना। पहले उज्ज्वला ने पृष्ठ १८५, १८६ पर 'असंख्यातगुणा' शब्द हटाने को कहा था उसका प्रूफ यहीं पर मिल गया। यह कौनसे गुणस्थान की बात चल रही है ? आठवें। आठवें में ऐसा हो रहा है। वहां जो अप्रशस्त प्रकृतियां हैं; असातावेदनीय प्रशस्त है कि अप्रशस्त है ? *श्रोता: अप्रशस्त है।* अप्रशस्त है, उसका अनुभाग घटता जा रहा है।

अब आगे कहते हैं, **ऐसे अनुभागकांडकघात संख्यात हजार बार होते हैं। उतने काल में स्थितिकांडकघात एक बार होता है।** यानी एक बार स्थितिकांडक होता है। उस एक स्थितिकांडक होने के काल में संख्यात हजार अनुभागकांडकघात होते हैं। देखो एक स्थितिकांडक होने के लिये एक अंतर्मुहूर्त लगता है। सुनना हो ! एक स्थितिकांडकघात होता है उतने काल में संख्यात हजार अनुभागकांडक होते हैं। एक अनुभागकांडकघात होने में एक अंतर्मुहूर्त लगता है। तो एक अंतर्मुहूर्त में कितने अंतर्मुहूर्त आ गये ? गणित समझ में आया ? तो कहते हैं, **अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण में ऐसे स्थितिकांडकघात संख्यात हजार बार होते हैं।** यानी यह आठ बातें जो हम देखने जा रहे हैं, वे आठवें गुणस्थान में भी होंगी और नौवें में भी होंगी। **एक बात ध्यान में रखो कि अनुभागकांडकघात में सातावेदनीय आदि प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागकांडकघात नहीं होता।** प्रशस्त प्रकृतियों में नहीं होगा। **उलटा प्रति समय उनका अनुभाग अनंतगुणा बढ़ता जाता है।**

आगे क्या कहते हैं ? **स्थितिकांडकघात द्वारा स्थिति तो प्रशस्त, अप्रशस्त** क्या कह रहे हैं ? स्थितिकांडकघात में दोनों की स्थिति कम हो जाती है। क्या कहते हैं ? स्थितिकांडकघात द्वारा स्थिति तो प्रशस्त और अप्रशस्त **दोनों ही प्रकार के प्रकृतियों की घटती है।** स्थिति घटेगी लेकिन प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग बढ़ेगा और अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग घटते जायेगा। देखो हमारे लिये कितनी फेवरेबल पोझिशन है इन कर्मों की। अब क्या कह रहे हैं ? **इसतरह अपूर्वकरण के प्रथम समय में प्रशस्त और अप्रशस्त प्रकृतियों का जो अनुभागसत्त्व था उससे उसके अंत समय में प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागसत्त्व अनंतगुणा बढ़ा हुआ तथा अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभागसत्त्व अनंतगुणा हीन हुआ पाया जाता है।** यह अनुभागकांडकघात और यह हमारे स्थितिकांडकघात आठवें गुणस्थान का एक

अविभाज्य अंग है।

आगे देखते हैं, अभी दो बातें रह गयी हैं- एक गुणश्रेणी निर्जरा और एक गुणसंक्रमण। गुणसंक्रमण यानी क्या ? गुणित प्रमाण में संक्रमण होना। पहले समय में जो कुछ संक्रमण हुआ उससे दूसरे समय में गुणित प्रमाण में होगा। गुणसंक्रमण यानी क्या है ? हर समय गुणित प्रमाण में कर्मों का संक्रमण होते जाना - असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा। पहले में जो है उससे असंख्यातगुणा दूसरे समय में, उससे असंख्यातगुणा तीसरे समय में, उससे असंख्यातगुणा चौथे समय में। ऐसे परमाणुओं का गुणित प्रमाण में संक्रमण होना उसको गुणसंक्रमण कहते हैं। अभी गुणश्रेणी निर्जरा जो बात है न उसकी बात चल रही है। अभी यह पढ़ते-पढ़ते तो टाइम बहुत जायेगा अपना। यह बात देखिये, गुणश्रेणी निर्जरा का अर्थ यह होता है कि जीव के विशुद्ध परिणाम इतने बढ़ते-बढ़ते जा रहे हैं कि जो पूर्व में बंधे हुये कर्म हैं उनकी गुणित प्रमाण में निर्जरा होती जाती है; वह भी असंख्यातगुणा, असंख्यातगुणा, असंख्यातगुणा। उसको गुणश्रेणी निर्जरा कहते हैं।

मैं यह पुस्तक पढ़ रहा हूं, वह बाद में हम घर में पढ़ सकते हैं। मैं इसलिये यह पढ़ रहा हूं कि इसमें अधिक अच्छी तरह से हमें समझाया है। अभी वहां उन्होंने उनके हिसाब से अलग-अलग डायग्रॅम्स निकालकर लिखें हैं। कहते हैं यह गुणश्रेणी निर्जरा जो है तो वह जो हमने देखो छहढाला में पढ़ा था। 'कोटि जन्म तप तपैं, ज्ञान बिन कर्म झरैं जे। ज्ञानी के छिनमांहि त्रिगुप्ति तैं सहज टरैं ते ॥' क्या कहा ? जो अज्ञानी है, ज्ञान बिन कर्म झरैं, ज्ञान यानी सम्यग्ज्ञान बिना जीवों के जो कर्म झरते हैं, एक समय में एक समयप्रबद्ध। वह नॉर्मली सबके होते हैं, वे तो झरते हैं। लेकिन यहां जो मुनिराज हैं उनके कैसे हैं ? गुणित प्रमाण में; वह एक समय में जितना हुआ है उससे भी दूसरे समय में गुणित प्रमाण में। उसके भी ऐसा कह रहे हैं कि गुणित प्रमाण में जो निर्जरा हो रही है वह निर्जरा कितनी होती है ? कि अज्ञानी अनेक भवों तक उसके जो कुछ कर्म झरेंगे उससे एक क्षण में कहो या थोड़े टाइम में, एक अंतर्मुहूर्त में ज्ञानी के कर्म झरते हैं। समझ में आया ?

गुणश्रेणी और गुणसंक्रमण को भी थोड़ासा देखेंगे। **गुणसंक्रमण** को यह कहते हैं कि **जिन अप्रशस्त प्रकृतियों का बंध नहीं होता उन प्रकृतियों का जो द्रव्य** यानी

द्रव्य का अर्थ ? **परमाणु** फिर से, जिन अप्रशस्त प्रकृतियों का बंध नहीं होता उन प्रकृतियों का जो द्रव्य **है वह प्रति समय असंख्यातगुणा क्रम से, जिनका बंध हो रहा है ऐसे स्वजातीय प्रकृतियों में संक्रमित होता है।** अब यह किसकी बात चल रही है ? जिन अप्रशस्त प्रकृतियों का आठवें गुणस्थान में बंध नहीं होता है लेकिन जो पहले बंधी थी उनका वहां बंधनेवाली सजातीय प्रकृतियों में संक्रमण होता है। क्या कहा ? फिर से, जिन अप्रशस्त प्रकृतियों का बंध नहीं होता उन प्रकृतियों का जो द्रव्य है यानी जो परमाणु हैं वे प्रति समय असंख्यातगुणा क्रम से, जिनका बंध हो रहा है ऐसे स्वजातीय प्रकृतियों में संक्रमित होते हैं। हमने देखा था कि मूलप्रकृति में कभी भी संक्रमण नहीं होता है लेकिन उनके जो भेद हैं उनमें वह हो सकता है।

कहते हैं **अपना स्वरूप छोड़कर उन अन्य प्रकृतिरूप परिणमता है। इस विधान को गुणसंक्रमण कहते हैं।** कह रहे हैं अभी उसका उदाहरण देंगे तो हमारी समझ में बात आयेगी। **इसप्रकार प्रतिसमय असंख्यातगुणा क्रम से सजातीय अन्य प्रकृतियों में संक्रमित होना गुणसंक्रमण कहलाता है। इसतरह का गुणसंक्रमण श्रेणी चढ़ते समय अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में होता है। वहां** अभी उदाहरण दे रहे हैं। **असातावेदनीय प्रकृति का सातावेदनीय प्रकृतिरूप संक्रमण होता है।** यहां क्या बताना चाहते हैं ? आठवें गुणस्थान में असातावेदनीय प्रकृति का बंध होता ही नहीं। वहां बंध है सातावेदनीय कर्म का। अब कह रहे हैं यह सातावेदनीय कर्म का जो बंध हो रहा है तो पूर्व में जो हमने असाता बांधी थी उसके परमाणु सातारूप परिणमित होते जाते हैं और वह भी हर समय में असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा प्रमाण में। तो उसकी पहले असातारूप से फल देने की जो कोई ताकत थी वह ढीली-ढीली होकर वह सातारूप हो जाती है। उसी प्रकार अभी उन्होंने और बहुत कुछ लिखा है। हम अभी यहां से तो पढ़ चुके हैं। अभी आप चाहो तो पुस्तक के द्वारा हम देखने की कोशिश करेंगे और उसमें जो समझेंगे वह समझेंगे।

देखो, पेज नंबर १८५, क्या कह रहे हैं ? पूर्व कर्म **पूर्वबद्ध** यानी पूर्व में जो बंधे थे ऐसे **कर्मों का स्थितिकांडकघात होता है। सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान में अधःप्रवृत्तकरण के निमित्त से नये बंधनेवाले कर्मों का उत्तरोत्तर अल्प स्थितिबंध होता है; इसी कार्य को स्थितिबंधापसरण कहते हैं।** वह सातवें में जो हुआ उनकी बात कह रहे हैं। **अपूर्वकरण के कारण पूर्वबद्ध कर्मों का स्थितिकांडकघात होता**

है। अभी ये दो पॅरेग्राफ हैं उसमें स्थितिकांडकघात क्या है उसकी बात नहीं बतायी है। हम आगे बढ़ते हैं। देखो १८६ पेज पर आते हैं। **स्थितिकांडकघात समझने के लिये नक़्शे की मदद लेते हैं। लकीर पूर्वबद्ध कर्म के स्थान पर है,** यानी वह काला जो कोई ऐसा दंड बनाया है उसको वह लकीर कहते हैं। वह पूर्वबद्ध कर्म के स्थान पर है। **लकीर के ऊपरी भाग के बगल में एक चौक दिखाया है, जो बहुत वर्षों के बाद उदय में आने योग्य सत्ता में पड़े हुये कर्मों का पुंज है। उस कर्मपुंज से नीचे की ओर जाता हुआ बाण दिखाया है। इसका अर्थ बहुत वर्षों के बाद उदय में आने योग्य कर्मों को विशुद्ध परिणामों के निमित्त होने से कम वर्षों में उदय आने योग्य विशिष्ट प्रमाण से अर्थात् उपरितन विभाग में स्थित कर्मों की स्थिति घटकर अधःस्तन**, यानी ऊपर जो चौकोन बनाया है वह उपरितन और नीचे है वह अधःस्तन।

अर्थात् उपरितन विभाग में स्थित कर्मों की स्थिति घटकर अधःस्तन **विभाग में मिल गयी, इसीको स्थितिकांडकघात कहते हैं।** अभी यहां जो बता रहे हैं, इन्होंने एक पर्टिक्युलर बॉक्स दिखाया है वहीं पर वह आकर मिलता है ऐसा नहीं होता है। यह ऊपर का जो चौकोन बनाया है न, उसके नीचे एक आवली छोड़कर, बाकी के सभी निषेकों में वे आ मिलते हैं। वहां जो केवल स्केअर दिखाया न, वहीं आकर मिलते हैं ऐसा नहीं है। अब जाने दो उसके पीछे हम नहीं लगते हैं।

अब तीसरा पॉइंट क्या है ? **पूर्वबद्ध अशुभ कर्मों का अनुभागकांडकघात होता है।** अभी बता रहे हैं **वृद्धिंगत वीतरागता और मंदकषायरूप परिणामों के कारण ऊपर स्थितिकांडकघात समझाया है। नक्शे से भी समझाने का प्रयास किया है। जिस पापकर्म का जितना स्थितिकांडकघात होता है, उस मात्रा में उस पापकर्म का अनुभाग नियम से कम होता है।** अभी यहां अनुभागकांडक की बात चल रही है न। पहले समय में उदय में आनेवाले पाप कर्मों में जितना अनुभाग है, उससे अगले-अगले समय में उदय में आनेवाले उन कर्मों का, उन कर्मों का असंख्यात लिखा है वहां अनंत कीजिये। अनंतगुणा अनुभाग घटकर फलदान शक्ति की हीनता होना अनंतगुणा अनुभागकांडकघात है। **अधिक अनुभागवाले कर्म परमाणुओं का नीचे कम अनुभागवाले कर्म परमाणुरूप विशिष्ट प्रमाण से शक्तिहीन होना ही अनुभागकांडकघात है।** यहां जो उनकी फलदान शक्ति है उसमें कमी आ जाती है। **अनुभाग अधिक और कर्म-परमाणु कम तथा अनुभाग कम और कर्म-परमाणु**

अधिक, ऐसा ही अनुभागबंध और प्रदेशबंध का स्वरूप है। *डॉ. उज्ज्वला शहा:- अब ऐसा क्यों लिखा है पता नहीं। प्रदेशबंध तो योग से संबंधित होता है। अनुभाग का प्रदेशों की संख्या का कोई भी संबंध नहीं होता इसलिये इस वाक्य को भी हटा दो। दूसरी बात, ऊपर अधिक अनुभाग और नीचे कम अनुभाग यह कथन स्थिति यानी निषेकों की अपेक्षा घटित नहीं होता। प्रत्येक निषेक में जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक अनुभाग पाया जाता है।*

अब क्या कहते हैं ? चौथा पॉइंट - **अपूर्वकरण परिणामों के निमित्त से पूर्वबद्ध कर्मों की गुणश्रेणी निर्जरा का प्रारंभ हुआ है। पहले समय में जितने कर्मों की निर्जरा होती है, दूसरे समय में उनसे असंख्यातगुणे अधिक कर्मों की निर्जरा होती है, उसे असंख्यातगुणी निर्जरा कहते हैं। पहले तो पूर्वबद्ध सत्ता के कर्मों में जीव के परिणामों के निमित्त से स्वयमेव कर्मों की गुणश्रेणी रचना होती है। तदनंतर फिर गुणश्रेणी निर्जरा का प्रारंभ होता है।** पहले पूर्वबद्ध सत्ता के कर्मों में जीव के परिणामों के निमित्त से स्वयमेव कर्मों की गुणश्रेणी रचना होती है। तदनंतर फिर गुणश्रेणी निर्जरा का प्रारंभ होता है। **नक़्शे से इस विषय को स्पष्ट करते हैं। पास के नक्शे में एक से लेकर सात पर्यंत संख्या क्रम से दिखायी गयी है।** अभी जल्दी-जल्दी पढ़ने में कोई मज़ा है नहीं। हम पेज नंबर १८८ पर जाते हैं। वह आप देख लेना, आप समझ जायेंगे।

वहां पांचवां नंबर का पॉइंट है। वहां गुणसंक्रमण कह रहे हैं, उसका अर्थ बता रहे हैं। **अनेक अशुभ प्रकृतियां शुभ प्रकृतियों में बदल जाती हैं।** यह गुणसंक्रमण का उन्होंने इतना ही वर्णन किया है जो हमने पंचलब्धि पुस्तक में से उसका विशेष वर्णन देखा है। अब हम यहीं रुकेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

२६. अनिवृत्तिकरण गुणस्थान

सुबह जो अपना प्रवचन चल रहा था उसमें कुछ बातों में और एक्स्प्लनेशन की आवश्यकता है ऐसा समझकर हम दुबारा उसको देखेंगे। देखो हम यह गुणस्थान विवेचन पुस्तक के पेज नंबर १८६ पर आते हैं। वहां जो बात है; क्या कह रहे हैं ? देखो, जो लास्ट दो लाइन हैं। **पहले तो पूर्वबद्ध सत्ता के कर्मों में जीव के परिणामों के निमित्त से स्वयमेव कर्मों की गुणश्रेणी रचना होती है। तदनंतर फिर गुणश्रेणी निर्जरा का प्रारंभ होता है।** इस बात का खुलासा किसीने पूछा है और हो सकता है कि आपको भी उसके खुलासे की मदद हो जाये। इसलिये हम फिर से देखते हैं।

अभी यह पंचलब्धि नामक पुस्तक है उसको मैं फॉलो कर रहा हूं, पेज नंबर १२९। **गुणश्रेणी** जो लिखा है वहां से मैं पढूंगा। कह रहे हैं कि **श्रेणी अर्थात् पंक्ति।** यह **निषेकों की पंक्तियां।** ये भाईसाहब बोल रहे हैं कि यह रेलवे लाइन के ट्रॅक जैसा क्या दिखाया आपने ? आपने बोला न, तो यह निषेक रचना है। यह निषेक रचना स्वयमेव अपने से होती है। किसमें ? पूर्वबद्ध कर्मों में। यह जो कर्म हैं एक समय में बंधे हुये कर्मों की अपेक्षा से यह बात नहीं बतायी जा रही है। सत्ता में जो हैं, बंधे हुये जो सत्ता में कर्म पड़े हैं उन सबकी मिलकर ऐसी निषेक रचना बतायी है। अब यहां कहते हैं **कर्मों की निषेक रचना में हमने आकृति द्वारा एक-एक समय के एक-एक निषेक को बताया है।** यह एक-एक निषेक यह काले रंग में जो है वह एक-एक निषेक की रचना बतायी है। **वर्तमान समय का निषेक सबसे नीचे आड़ी रेखा द्वारा बताया जाता है।** यह जो है सबसे नीचे वह वर्तमान निषेक है। **उसके ऊपर द्वितीयादि एक-एक समय का निषेक एक-एक आड़ी रेखा द्वारा बताया जाता है।**

पहले में पहले यह जो है यह वर्तमान में उदय में आनेवाला निषेक। निषेकों में अनेक परमाणु होते हैं। अनंत परमाणु कहो तब भी गलत नहीं है क्योंकि एक समयप्रबद्ध जो होता है उतने परमाणु तो इसमें से खिर जायेंगे। उसके बाद दूसरा समय, तीसरा समय। ऐसा अनेक समयों को यहां बताया है। **उसमें वर्तमान समय से लेकर एक आवली काल तक के निषेकों को उदयावली कहते हैं।** अब चार्ट में अलग-अलग रंगों में दिखाया है। ये जो लाल बाजू में बताये हैं वे अपकर्षित हुये परमाणु हैं और इसके आगे वह ऐसा लंबा लाल है वह गुणश्रेणी रचना है। वर्तमान

समय से लेकर गुणश्रेणी के नीचे तक जो निषेक बताये हैं उसको उदयावली कहते हैं। वह उदयावली भी असंख्यात समयों की होती है। यहां हम असंख्य लाइन नहीं बता सकते हैं लेकिन कम से कम ४, ५, ६ जो भी होंगी वह समझना उदयावली है।

ऊपर के निषेकों को यानी किसके ऊपर के ? उदयावली के **ऊपर के निषेकों को उपरितनस्थिति कहते हैं। परिणामों की विशुद्धि के निमित्त से सत्ता में पड़े हुये कर्मों का अपकर्षण होता है।** आपने पूछा था न साहब ? यह सत्ता में जो पड़े हुये हैं इनका अपकर्षण होता है। **अर्थात् उनकी स्थिति कम होती है। ऊपर के निषेकों के परमाणुओं की स्थिति घटने के कारण वे नीचे के निषेकों में आ मिलते हैं। यहां ऊपर नीचे जो बताया जाता है वह समझने के लिये बताया जाता है,** हमारी समझ में जल्दी आवे इसके लिये। अब आगे क्या लिखा है ? सुनना, **कर्म कहीं कतार से खड़े नहीं हैं।** ऐसे अपने जो आत्मप्रदेश हैं उनमें जो कर्म हैं वे इसतरह से लाइन में खड़े नहीं हैं। ये कर्म तो कहीं भी होंगे। अब जिनकी स्थिति पूरी हुयी है वे एक साथ उदय में आयेंगे उनको हम निषेक कहेंगे। **अपकर्षित किये हुये परमाणु जिन विवक्षित पंक्तिबद्ध निषेकों में गुणित प्रमाण में दिये जाते हैं उतने निषेकों की गुणश्रेणी रचना होती है।** यहां क्या बता रहे हैं ? हम गुणश्रेणी रचना और गुणश्रेणी निर्जरा को देख रहे हैं। अभी यहां स्थितिकांडकघात की बात नहीं बता रहे हैं।

यहां क्या कह रहे हैं कि अपकर्षित किये हुये परमाणु, अभी यहां मान लेते हैं कि यहां से इतने, यह स्थितिकांडक की बात बता रहे हैं। उसमें भी और अपकर्षण में वही हालत है। अभी हम स्थितिकांडकघात की अपेक्षा से देखेंगे। इतना है यह तो बहुत बड़ा बताया है। लेकिन समझ लो वह छोटा है क्योंकि उसके प्रमाण में यह अधिक प्रमाण में है। यहां प्रपोर्शन थोड़ासा छोटा बड़ा हो गया है तो हम समझ लेते हैं। यह आपको दूर से भी दिखे इसलिये उसको बड़ा बनाया है। यह अपकर्षित किये हुये परमाणु हैं, यहां से परमाणु हर समय में नीचे के हर निषेक में विभाजित होते हैं, डिस्ट्रिब्यूट होते हैं। कह रहे हैं अपकर्षित किये हुये परमाणु जिन विवक्षित पंक्तिबद्ध निषेकों में गुणित प्रमाण में दिये जाते हैं, उतने निषेकों की गुणश्रेणी रचना होती है।

एक समय में जितने परमाणु गुणश्रेणी में दिये जाते हैं उनका बटवारा किसतरह से होता है उसे देखते हैं। सबसे नीचे के निषेक में जितने परमाणु

परमाणु यानी कर्म **दिये जाते हैं उससे असंख्यातगुणा परमाणु दूसरे निषेक में दिये जाते हैं। उससे असंख्यातगुणा परमाणु तीसरे निषेक में इसतरह गुणश्रेणी के असंख्यात निषेकों में असंख्यातगुणा क्रम से दिये जाते हैं।** यह हमने पढ़ लिया, अभी हम यहां चार्ट की तरफ देखते हुये समझेंगे। यहां हर समय यहां से परमाणु नीचे की तरफ आते हैं। कुछ तो उदयावली में भी दिये जाते हैं और उदयावली के बाद कुछ तो गुणश्रेणीरूप से दिये जाते हैं। यानी क्या है ? पहले समय में जितने परमाणु दिये हैं दूसरे समय उससे असंख्यातगुणा, तीसरे समय में उससे असंख्यातगुणा हर समय ऊपर से नीचे आ रहे हैं और यह गुणश्रेणी रचना हो रही है और कुछ जो परमाणु हैं, ये उपरितनस्थिति में भी डिस्ट्रिब्यूट किये जाते हैं। यह लाल रंग में जो दिखायें हैं वे ॲडिशनल आये हुये नये कर्मों की निशानी है।

अब यहां बता रहे हैं देखो इस बाजू में जो यह A नंबर का चार्ट है, आकृति है और यहां दो नंबर B वहां क्या बताते हैं ? ये जो लाइनें हैं ये तो पूर्व जो पहले के बंधे हुये निषेक हैं उसकी बात बताते हैं। अब क्या होगा ? यहां पर कहते हैं कि हर समय असंख्यातगुणा - हर समय असंख्यातगुणा ऊपर के परमाणु आकर नीचे के निषेक में शामिल हो जाते हैं। उसके लिये हम देखते हैं कि प्रथम समय में क्या होता है ? प्रथम समय में देखो यहां पर चार गुणा जो बतायेंगे वह संख्यातगुणा है, लेकिन असंख्यातगुणा समझना। यह तो हमें समझने के लिये बता रहे हैं न। देखो पहले समय में क्या हो गया ? ये ओरिजिनल अपनी पूर्व स्थितिवाले जो हैं वे तो निषेक हैं; तो पहले समय में सबसे नीचेवाला यहां जो है उसको १ दिये, एक परमाणु। परमाणु अनंत होंगे लेकिन यहां बताने के लिये एक। फिर उससे दूसरे निषेक में असंख्यातगुणा यानी ४; यानी यह जो ओरिजिनल है यह दूसरे निषेक में; दूसरे निषेक में उससे असंख्यातगुणा दिये जायेंगे। तीसरे निषेक में पहले में तो १, फिर ४, फिर तीसरे निषेक में १६, चौथे निषेक में ६४। इसतरह से पहले समय में ८५ परमाणु दिये।

यहां जो गुणश्रेणीवाला पहला निषेक है यह उस पहले निषेक में १, दूसरे निषेक में ४, तीसरे निषेक में १६, चौथे निषेक में ६४ दिये। ऐसे ये असंख्यात होंगे लेकिन यहां हम चार में डिस्ट्रिब्यूट कर रहे हैं। अब दूसरे समय में क्या होगा ? तो पहले समय में जितने ८५ दिये हैं उससे भी असंख्यातगुणा - हम मान लेते हैं ८५ x ४ = ३४० परमाणु ऊपर से अपकर्षित होंगे। वे कह रहे हैं दूसरे-द्वितीय समय में क्या होगा ? जहां हमने

१ प्रमाण दिया था, उधर ४ होगा। दूसरे निषेक में जहां ४ दिये थे वहां १६ होंगे। तीसरे निषेक में जहां १६ दिये वहां ६४ होंगे और जहां ६४ दिये गये थे वहां पर २५६ देंगे। ऐसे हर समय, तीसरे समय, चौथे समय, ऐसे असंख्यात समय में यह ऊपर से नीचे आनेवाले परमाणु इसतरह डिस्ट्रिब्यूट होंगे। तो इन चार निषेकों को हम गुणश्रेणी रचना कहेंगे - वैसे तो असंख्यात निषेकों में गुणश्रेणी रचना होती है। अब क्या होगा ? हर समय यह उदयावली के जो निषेक हैं एक-एक समय में नीचे आयेंगे, नीचे आयेंगे; अभी नीचे आयेंगे इन द सेन्स उदय में आकर खिर जायेंगे। अब एक समय ऐसा आयेगा कि गुणश्रेणी में डिस्ट्रिब्यूट हुये जो परमाणु हैं; देखो जैसे-जैसे नये-नये समय में अधिक-अधिक परमाणु दिये जाते हैं तो यह जो अब मैं मेरी भाषा में बताता हूं।

यहां आपको एक नाव जैसी कोई रचना दिख रही है। तो जैसे-जैसे अधिक-अधिक परमाणु उसमें जोड़े जाते हैं तो वे परमाणु ऐसे-ऐसे बड़ी-बड़ी नाव बन जाती हैं। नाव नहीं बनती है, कर्मों की रचना होती है। यानी यह जो यहां बताया है मान लो वह वहां से वहां तक और यह यहां से यहां तक; क्योंकि हर समय में असंख्यातगुणा परमाणु, असंख्यातगुणा परमाणु दिये जाते हैं; यह है गुणश्रेणी की रचना। अब क्या होगा ? कि यह उदयावली में यहां जो कोई निषेक हैं वे क्रम से उदय में आकर खिर जायेंगे। फिर यहां यह गुणश्रेणी का पहला जो निषेक है वह उदय में आयेगा और उस समय इतने सारे परमाणु खिर जायेंगे ! दूसरे समय में क्या होगा ? ऊपर यहां के जो परमाणु हैं और ऊपर से जो आ रहे हैं तो पहले समय से भी असंख्यातगुणा परमाणु खिरेंगे। यह जो लास्ट लाइन दिख रही है उससे ऊपर की लाइन असंख्यातगुणा बड़ी होगी। इसतरह यह गुणश्रेणी निर्जरा चालू होती है। यह गुणश्रेणी रचना और गुणश्रेणी निर्जरा इनमें इसतरह से फर्क अपने ख्याल में आयेगा। अभी क्या था ? उस समय सोचा था कि उसको हम अव्हॉइड करेंगे, लेकिन लोगों की मांग रही कि भाई आप जरा और बतायें, इसलिये वह बात बतायी।

अभी यहां देखो फिर से पढ़ते हैं। अपकर्षित किये हुये परमाणु जिन विवक्षित पंक्तिबद्ध निषेकों में गुणित प्रमाण में दिये जाते हैं उतने निषेकों की गुणश्रेणी रचना होती है। एक समय में जितने परमाणु गुणश्रेणी में दिये जाते हैं उनका बटवारा किसतरह से होता है, वह दिखाया अभी। सबसे नीचे के निषेक में जितने परमाणु यानी द्रव्य दिये जाते हैं उससे असंख्यातगुणा परमाणु दूसरे निषेक में दिये जाते हैं, उससे

असंख्यातगुणा परमाणु तीसरे निषेक में दिये जाते हैं। इसतरह गुणश्रेणी के असंख्यात निषेकों में असंख्यातगुणा क्रम से दिये जाते हैं। अब कहते हैं पूर्व निषेकों में तो ओरिजिनल कर्म परमाणु थे, उसके यहां इतने तो हैं ही हैं। फिर ॲडिशनल बढ़ते जा रहे हैं। **पूर्व के निषेकों में तो कर्म परमाणु थे ही, अब उनके साथ इतने सारे परमाणु आ मिलते हैं, जो उनके साथ-साथ उदय में आ जायेंगे। मान लो एक समय में ८५ परमाणुओं का अपकर्षण होकर गुणश्रेणी में दिये गये।**

हमको समझने के लिये लिमिटेड नंबर लिया है **८५,** ये **८५** का डिस्ट्रिब्यूशन कैसा होता है ? वह यहां बताया है। आप मॅथ्स में तो पक्के हो न प्रमोदभाई ? १ + ४ + १६ + ६४ = ८५। वह आसान है न। हम **८५** परमाणु मान लेते हैं। ८५ परमाणुओं का अपकर्षण होकर गुणश्रेणी में दिये जाते हैं। **तो प्रथम निषेक में १,** यह प्रथम निषेक जो है उसमें १, **द्वितीय में ४,** यह ऊपरवाला; उसके ऊपर **तीसरे में १६** और **चौथे में ६४ परमाणु दिये गये। यहां हमने गुणश्रेणी ४ समयों की मान ली है तथा असंख्यात का प्रमाण भी ४ माना है। यह बात एक समय की है। दूसरे समय में उससे भी असंख्यातगुणा परमाणु अपकर्षित होते हैं। मान लेते** हैं यह जो **८५** है **x ४**, क्योंकि हमने ४ को असंख्यात माना है न। तो उसकी टोटल होती है ३४० परमाणु। कहते हैं **३४० परमाणु गुणश्रेणी में दिये जायेंगे। वे भी उसी पद्धति से असंख्यातगुणा क्रम से दिये जायेंगे। प्रथम निषेक में ४, द्वितीय में १६, तीसरे में ६४ और चौथे में २५६। इसी प्रकार प्रति समय असंख्यातगुणा क्रम से परमाणु अपकर्षित होते हैं और गुणश्रेणी में दिये जाते हैं। जब वे निषेक उदय में आयेंगे तब कर्मों की असंख्यातगुणा निर्जरा होती है। इसीको गुणश्रेणी निर्जरा कहते हैं।**

हमेशा जो ऑर्डिनरि हमारे जैसा कोई अज्ञानी होगा तो उसके एक समय में एक समयप्रबद्ध की ही निर्जरा होती है। लेकिन यह ज्ञानी जीव है और उनकी गुणश्रेणी कितनी हो रही है ? एक समय में असंख्यात समयप्रबद्ध। एक समयप्रबद्ध में अनंत परमाणु हैं तो असंख्यात समयप्रबद्ध में कितने होंगे ? ख्याल में आया ? वह अनंत ही होंगे। हां जी ? *श्रोता: यह प्लस का क्या अर्थ है ?* प्लस यानी पहले जो हैं उससे और आकर मिलनेवाले अधिक आयेंगे न। हर समय तो उसमें आते ही जायेंगे जब तक यह उदयावली के समय ख़त्म नहीं हो रहे हैं, तब तक आयेंगे तो इसमें भी थोड़े-थोड़े आयेंगे लेकिन इसमें अधिक प्रमाण में आयेंगे और उपरितनस्थितिवालों में भी मिलेंगे।

यहां अधिक से अधिक मिलेंगे। यह ऊपर- ऊपर, ऊपर- ऊपर कम-कम, कम-कम होते जायेंगे और यहां के परमाणु सारे नीचे उतर आयेंगे। यहां कह रहे हैं इसीप्रकार फिर से पढ़ रहा हूं; प्रति समय असंख्यातगुणा क्रम से परमाणु अपकर्षित होते हैं और गुणश्रेणी में दिये जाते हैं। जब वे निषेक उदय में आयेंगे तब कर्मों की असंख्यातगुणा निर्जरा होती है। **इसे गुणश्रेणी निर्जरा कहते हैं।**

अभी बहुत अच्छी बात बता रहे हैं। आयुकर्म को छोड़कर; आयुकर्म में भी गुणश्रेणी निर्जरा हो जावे तो ? मधुभाई बोलते हैं नहीं। जल्दी मत करो, अभी संसार की मज़ा चखने दो बोलते हैं। यहां कह रहे हैं **आयुकर्म को छोड़कर अन्य सात कर्मों में यह गुणश्रेणी निर्जरा होती है। यहां जो गुणश्रेणी होती है वह उदयावली के निषेकों के ऊपर के निषेकों में होती है। तुम पूछोगी कितने निषेकों में ? अर्थात् कितने समयवाले निषेकों में यह गुणश्रेणी होती है ? उसका उत्तर यह है कि गुणश्रेणी का आयाम अर्थात् निषेकों की संख्या समयों में बताते हैं। अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण दोनों का मिलाकर जो अंतर्मुहूर्त होता है उससे थोड़ा अधिक है उसमें जितने समय होते हैं उतने समयों में अर्थात् उन निषेकों में यह गुणश्रेणी रचना होती है।** यहां केवल इतने ही बताये हैं लेकिन वे असंख्यात हैं इतना समझ लेना। **थोड़े अधिक का जो प्रमाण है उसे गुणश्रेणी शीर्ष कहते हैं।**

अभी यह विषय फिर अलग हो जायेगा। मैं समझता हूं. जो हमने तभी भी पढ़ा था, अभी भी पढ़ रहा हूं। यह छहढाला की बात है- **कोटि जन्म तप तपैं, ज्ञान बिन** यानी जिसके आत्मज्ञान नहीं है, सम्यग्ज्ञान नहीं है, ऐसे कितने जन्म तक तप तपेगा ? करोड़ जन्म और करोड़ जन्म मनुष्य में आयेगा तो तप तपेगा भाई। ख्याल में आया ? कह रहे हैं कि **ज्ञान बिन कर्म झरैं जे।** यानी सम्यग्ज्ञान बिना जो कर्म खिरेंगे हर समय, एक समयप्रबद्ध, एक समयप्रबद्ध, एक समयप्रबद्ध ऐसा। फिर भी **ज्ञानी के छिनमांहि** यानी क्षण में, **त्रिगुप्ति तैं सहज टरैं ते।** यानी मान लो कि उसने करोड़ जन्मों में, करोड़ भवों में; एक समय में एक समयप्रबद्ध। तो करोड़ भव में कितने समय गये होंगे उसके ? और उसके समयप्रबद्ध जितने गये होंगे इतने सारे कर्म परमाणु ज्ञानी के एक क्षण में - एक अंतर्मुहूर्त में निर्जरित हो जाते हैं।

श्रोता: त्रिगुप्ति का अर्थ क्या है ? हां जब त्रिगुप्ति का अर्थ यहां स्वरूप में लीनता

लेना क्योंकि अभी वह जीव आत्मानुभूति में है न, अभी आठवें गुणस्थान में आया है न तो अभी मेरी गुप्ति किधर गयी, मेरा शरीर किधर गया उधर ध्यान नहीं होगा। यह अब स्वरूप में लीन होगा तो मन, वचन और काय बिलकुल स्थिर हो जाते हैं। यह सहज होनेवाली बात है और हम जिसको काययोग कहते हैं वह तो शरीर की ही अवस्था है। उसको जीव कुछ भी नहीं कर सकता क्योंकि वह परद्रव्य है। आपके दिमाग में जो मन, वचन, काययोग चल रहा है न, वह तो पुद्गल है भाई। आत्मा से कोई संबंध नहीं। कथन ऐसा होगा कि **नमहुं त्रियोग सम्हारिकैं**। लेकिन वह मनोयोग, वचनयोग और काययोग तो पुद्गल की परिणति है। यह आत्मा में स्थिरता है वह जीव का योग है। आप बार-बार वहीं अटक रहे हैं। ठीक है, अभी बाद में बात करेंगे भाईसाहब।

ज्ञानी के छिनमांहि, त्रिगुप्ति तैं यानी स्वरूप में लीनता से। आठवें गुणस्थानवर्ती जीवों के जो कोई राग के परिणाम चलेंगे वे अबुद्धिपूर्वक हैं। अभी बुद्धिपूर्वक मुझे शरीर को ठीक-ठाक रखना है। रीढ़ की हड्डी सीधी करनी है। अरे तू तो रीढ़ की हड्डी क्या खोपड़ी की हड्डी भी सीधी नहीं कर सकता है। ये हड्डी क्या तेरी है ? वह तो पुद्गल है। ख्याल में आया ? हम शब्दशः अर्थ लेना चाहते हैं तो हमें गड़बड़ी होती है। जैसे जिनेन्द्र भगवान विराजमान हैं, नासाग्र दृष्टि है तो हम भी नासाग्रदृष्टि करना चाहते हैं। तो आत्मानुभव नहीं होता है, नासाग्र का अनुभव होता है। देखो-देखो वह तो सहज हो जाता है हो ! जैसे अपना उपयोग कहीं एक जगह लगा है तो हमारा अन्य तरफ कहीं लक्ष ही नहीं जाता है।

आपके घर में बच्चे होंगे। आपको नहीं बोल रहा हूं, प्रवीणभाई बोलेंगे नहीं मेरे घर में नहीं हैं। जब वे टीव्ही देख रहे टॉम क्या ? टॉम जेरी कुछ ऐसा चलता है कार्टून फिल्म, उस समय उसको चार बार बुलावे; चल खाना खाने को चल, खाना खाने को चल तो उसका आपकी तरफ ध्यान होता है क्या ? देख लेना। वह यहां एक जगह देख रहा है तो आजु बाजू में जो कोई बुलाता है, इधर-उधर कर रहा है उसको मालूम नहीं है। अरे जाकर उसके सामने खाना रखो वह खाने में कौर भी तोड़ेगा और वह टीव्ही देखते बैठेगा तो मुंह में भी जायेगा। क्योंकि उसका उपयोग उधर लगा है। वहां मन का, वचन का और गुप्ति का कहां उसको ख्याल है ? हम कहेंगे वह एकाग्र हुआ है। और उसके लिये उसका दाखला भी नहीं यह निमित्त का कथन है।

पहले हमें यह बात मालूम नहीं कि **मैं जुदा, पुद्गल जुदा, यही तत्त्व का सार, अन्य कछु है नहीं, बस याहि का विस्तार।** शास्त्रों में तो वही बात बता रहे हैं और हमारी गाड़ी वहीं की वहीं। वह पहले के जमाने में रेकॉर्ड आती थी, मालूम है ? ऐसे गाना बजनेवाली। तो उसके ऊपर ऐसा पिन रख देवें और कहीं टूटा-फूटा है तो वहीं की वहीं, वहीं की वहीं। भैया तू पहला यह तो समझ कि तू जीव है कि पुद्गल है ? तो-तो तू पुद्गलपति होता है। गुरुदेवश्री कहते थे भैंस जो होती है उसका पति जो होता है वह भैंसा, उसको क्या बोलते हैं ? पाड़ा। तो भेंसनो पति पाड़ो छे, हमारे यहां पाड़ा तो बच्चे को कहते हैं। चलो ठीक है हम भैंसा कहेंगे। वैसा मैं पुद्गल हूं ऐसा अगर मैं मानता हूं तो मैं पुद्गलपति हो गया हूं। जरा शांति से सोचना हो ! किसीको यहां बताने की जरूरी नहीं। यह बीच में आप बोलते हैं तो ट्रॅक बदलती है। ख्याल में आया ? और मेरे से रहा भी नहीं जाता वह मेरी गलती है। हम क्या करें ? इनके बहाने अन्य को भी समझाने का राग हमें भी है। जैसे सास कहेगी बेटी को ऐ सीधी बैठकर काम कर तो उसको बताना होता है ? बहू को, अच्छा बहू को ! और किसका नाम लेती है ? बहन आप क्या करती हैं ? ऐसा ही करती है न ? ऐसे आपके सहारे सबके मन में अगर कोई ऐसी बात चलती हो तो समझाने का राग हमें भी है।

हम पूरे-पूरे रागी-द्वेषी हैं भाई। एक कषाय चौकड़ी का भी अभाव नहीं है, गॅरंटी से मैं बोलता हूं। घबराना मत, क्या करें ? ऐसा लगता है कि दुनिया के सारे जीव यह जिनेन्द्र भगवान ने बतायी हुयी जो वस्तु की अनंत स्वतंत्रता है उस अनंत स्वतंत्रता का ख्याल तो करें। अरे प्रत्येक द्रव्य में अपना-अपना परिणमन करने की क्षमता है। तू कौन होता है पुद्गल की परिणति परिणमानेवाला ? हम ऐसा मानते हैं हमने यह किया, वह किया, वह किया। इसको त्रिगुप्ति में लाये। उसको संभालकर रखा। अरे जा-जा, मेरी भाषा में कहे तो आयने में जाकर मुंह देखकर आ। दिखे ही नहीं। क्यों ? तू अरूपी है न भाई ! क्या करें ? चलो, विषयांतर के लिये मैं माफ़ी चाहता हूं। यहां बता रहे हैं कि ज्ञानी के छिनमांहि तैं सहज टरैं ते। त्रिगुप्ति तैं यानी अंतरंग में लीनता होने से अज्ञानी कोटि जन्मों में जो तप तपे हैं और हर समय में एक-एक समयप्रबद्ध जो कर्म झरे हैं वे इनके विदिन नो टाइम, एक अंतर्मुहूर्त में जायेंगे। छिनमांहि यानी एक समय में मत समझना। हां-हां फिर भी उसमें भी समझने की ताकत लगाना।

अब हम आगे बढ़ते हैं। मुझे लगता है कि हम आठवें गुणस्थान में ही भटक रहे

हैं, थोड़ासा आगे जायेंगे। अभी नौवें गुणस्थान का स्वरूप देखने की कोशिश करेंगे। हम पेज नंबर १९३ पर आयेंगे। मैं फिर से दोहराऊंगा हो ! माफ़ करना। जैनदर्शन को समझना है तो सिद्धान्त प्रवेशिका का अभ्यास अति, अति, अति आवश्यक है। जब तक हम मूल बातों को नहीं समझते हैं। जैसे हम बिल्डिंग बांधते हैं वह किधर गया हमारे ? अरविन्दभाई किधर गये ? तुम सिविल इंजिनिअर हो न। तो बिल्डिंग बांधते हो तो पहले नींव बराबर पक्की बांधते हो कि ऐसे ही ? हमारी नींव तो जगह पर नहीं। दो, चार, पांच शब्द हम जान गये कि जिनेन्द्र भगवान ने ऐसा कहा है, जिनेन्द्र भगवान ने ऐसा कहा है। अरे भाई परंतु वह क्या कह रहे हैं ? क्रमबद्ध किसको कहते हैं ? निमित्त किसको कहते हैं ? व्यवहार किसको कहते हैं ? निश्चय किसको कहते हैं ? इस बात का तो कुछ पता नहीं। शब्द आया, ठोक दिया। भैया यह जो अभ्यास करना है, दूसरों को सिखाने के लिये नहीं। मैं स्वयं समझ जाऊं ऐसी अंतरंग में भावना होवे तो उसके लिये तो यह मास्टर की है। मास्टर की समझते हैं आप ? मास्टर की वह होती है जो किसी भी ताले को चलती है। वैसे कोई भी शास्त्र आप निकालकर देखो- करणानुयोग का शास्त्र निकालो, द्रव्यानुयोग का निकालो या अन्य कोई अनुयोग हैं जो बाकी के दो, किसीमें आपको समझण करनी है; समझना है तो सिद्धान्त प्रवेशिका इज अ मस्ट। आगे का बोलूंगा नहीं आजे मानो काले मानो। अब क्या बतायें साहब ?

चलो अभी हम नौवें गुणस्थान में जाने की कोशिश करते हैं। नौवें गुणस्थान का नाम क्या है अंजू ? *श्रोता: अनिवृत्तिकरण।* अनिवृत्तिकरण। बहुत अच्छा अभी देखो, यह १९३ पर वहां जो श्लोक दिया है उसके नीचे से हम चालू करते हैं। क्या कह रहे हैं ? **अत्यंत निर्मल ध्यानरूपी अग्नि शिखाओं के द्वारा, कर्मवन को दग्ध करने में समर्थ, प्रत्येक समय के एक-एक सुनिश्चित वृद्धिंगत वीतराग परिणामों को अनिवृत्तिकरण गुणस्थान कहते हैं।** अभी यहां तीन-चार बातें एक साथ बतायी हैं उसको हम एक-एक, एक-एक अलग-अलग करके समझेंगे। पहले में पहले क्या बताते हैं ? देखो, अत्यंत निर्मल सब लोग बोलेंगे, *श्रोता: अत्यंत निर्मल।* वीतराग परिणामों को, *श्रोता: वीतराग परिणामों को।* अनिवृत्तिकरण गुणस्थान कहते हैं। *श्रोता: अनिवृत्तिकरण गुणस्थान कहते हैं।* हां तो अनिवृत्तिकरण गुणस्थान किसको कहते हैं ? तो कहते हैं कि वीतराग परिणामों को और वे वीतराग परिणाम कैसे हैं ? हां, निर्मल तो हैं। उसके पहले क्या कहते हैं ? प्रत्येक समय के एक-एक सुनिश्चित वृद्धिंगत ऐसे वे

वीतराग परिणाम हैं। तो वे यह बताना चाहते हैं कि जो जीव नौवें गुणस्थान में आते हैं उनका अंतर्मुहूर्त काल है, तीन काल के जितने जीव जब-जब अनिवृत्तिकरण गुणस्थान गुणस्थान में आयेंगे तो सबके प्रत्येक समय के परिणाम एक जैसे होंगे। यह बात अधःप्रवृत्तकरण में नहीं होती है ब्रह्मदेव। ख्याल में आया ?

इसमें क्या है ? तीन काल के जीव हैं और उनके मान लो कि आज अभी पांच मिनट पहले किसीने अनिवृत्तिकरण में पहले समय में प्रवेश किया है और पांच मिनट के बाद दूसरे किसीने इसमें प्रवेश किया है तो दोनों के वीतराग परिणाम एक जैसे होंगे। और क्या कहते हैं ? जो उनकी वृद्धि होती है वह भी नियम से उतनी, उतनी होगी। देखो-देखो, प्रत्येक समय के एक-एक सुनिश्चित वृद्धिंगत वीतराग परिणामों को और ये परिणाम कैसे हैं ? अत्यंत निर्मल हैं। यह क्यों बताना चाहते हैं ? उसके लिये हमें पहले अधःप्रवृत्तकरण में क्या होता है वह समझने की आवश्यकता है। लेकिन वह हम अभी नहीं समझेंगे। तो इतना ही कहते हैं कि वह कैसा है ? तो ध्यानरूपी अग्नि शिखाओं के द्वारा; जो अग्नि शिखा होती है न, शिखा यानी उसका टॉप जिसको लौ कहते हैं; क्या बोलते हैं आप लोग ? लौ कहते हैं न ! तो उससे क्या होता है ? कि जो लौ के द्वारा पूरा अरण्य-वन-जंगल भस्मीभूत हो जाता है उसमें ऐसी कपॅसिटि है।

यहां क्या कह रहे हैं ? किसका यह ध्यान कर रहे हैं ? अपने स्वरूप का ध्यान कहो, तप कहो, अपने स्वरूप का अनुभव कहो - एक ही बात है। जब यह जीव अपने स्वरूप में क्या कहते हैं ? लीन है कहो या स्थिर है कहो या रममाण है कहो तो वह जो ध्यान कर रहे हैं; किसका ? अपने स्वभाव का तो उसको क्या कहा ? तो वह अग्नि शिखा है। वह अग्नि शिखा है उसका रूपक बनाया। कहते हैं कर्मवन को दग्ध करने में; कर्मों को वन कहा और वह किससे नष्ट होगा ? कर्मदहन पूजन करने से ? क्यों ? तो यहां कह रहे हैं, वैसा नहीं है भाई, यह कर्मदहन पूजन करने से तो तुझे पुण्य का लाभ होगा, नया पुण्य बंधेगा। यहां तो कर्मों को दग्ध करने की बात है। आत्मा में, स्वरूप में लीनता करना उसीको ध्यान कहा है। ख्याल में आया ? तो कहते हैं ध्यानरूपी अग्नि शिखाओं के द्वारा कर्मवन को दग्ध करने में समर्थ है ऐसे जो अत्यंत निर्मल प्रत्येक समय के एक-एक सुनिश्चित वृद्धिंगत वीतराग परिणाम जो हैं उनको अनिवृत्तिकरण गुणस्थान कहते हैं।

अनिवृत्ति यानी जिसमें भेद नहीं है, निवृत्ति का अर्थ यहां भेद है। यह भेद मतलब दो जीव हैं उनके हर समय के परिणामों में उस पहले-पहले, दूसरे-दूसरे, चौथे-चौथे समय में कोई भेद नहीं है। ऐसे, अभी कह रहे हैं, **वृद्धिंगत शुद्धोपयोगरूप ध्यान का प्रारंभ सातवें अप्रमत्तसंयत गुणस्थान से होता है। अतः नौवें गुणस्थान में ध्यान अत्यंत निर्मल होना स्वाभाविक ही है। ध्यान को अग्नि की नहीं, अग्नि-शिखाओं की उपमा दी है, जो अत्यंत उपयुक्त है। अग्नि में तो उष्णता होती है; लेकिन दाह्य** दाह्य यानी जलने योग्य **वस्तु को विशेष रीति से जलाने का काम अग्नि की शिखा ही करती है। शिखा अग्नि के मानो हाथ हैं।** यानी अग्नि के हाथ को यहां शिखा कहा है। **दाह्य वस्तु को अपने कब्जे में लेने का काम शिखाओं द्वारा ही होता है। तदनंतर दाह्य वस्तु को अग्नि जलाती है अष्ट कर्मों में मुख्यता से चारित्रमोहनीय कर्म को वन कहा है, जिसको निर्मल ध्यानरूपी अग्निशिखा जलाती है।** यहां निमित्त वगैरह बात बतायी है उसको नहीं देखते हुये आगे बढ़ते हैं।

पेज नंबर १९४, ऊपर से दूसरा पॅरेग्राफ हम देखने जा रहे हैं। देखो क्या कह रहे हैं ? **अनिवृत्तिकरण गुणस्थान के यथायोग्य अंतर्मुहूर्त काल के जितने समय हैं, इस गुणस्थानवर्ती महामुनिराज के परिणाम उतने ही हैं और उत्तरोत्तर** उत्तरोत्तर यानी जैसा ऊपर-ऊपर का समय आवे तो **विशिष्ट शुद्धता सहित हैं। प्रत्येक समय का एक-एक परिणाम सुनिश्चित है।** वह सुनिश्चित है किसके बारे में ? अनादिकाल से अनंतकाल तक जितने जीव नौवें गुणस्थान में आयेंगे सबकी अपेक्षा से कह रहे हैं कि प्रत्येक समय का परिणाम सबका एक जैसा विशुद्ध होगा। **समझ लीजिये नौवें गुणस्थान का काल चार समय का है तो इसके परिणाम भी चार ही हैं।** अब यहां तक तो हमने इसके बारे में देखा।

अब **भेद अपेक्षा विचार** करते हैं। तो यह जो नौवां गुणस्थान है उसके भेद कौन-कौनसे हो सकते हैं ? हां, बहन आप कहेंगे ? यह जो हमने नौवां गुणस्थान अनिवृत्तिकरण देखा है उसके भेद कितने प्रकार के हो सकते हैं ? हां, बोलो-बोलो, नहीं बोलेंगी ? कोई बात नहीं। आप बताना बहन ? हां, बोलो, कितने भेद हो सकेंगे ? *श्रोता: दो भेद- उपशमश्रेणीवाले का उपशमक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान और क्षपकश्रेणीवाले का क्षपक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान।* अब बोलना दो कौनसे ? हां, उपशमश्रेणीवाले के उपशमक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान और क्षपकश्रेणीवाले के।

ख्याल में आया ? अब देखो **श्रेणी की अपेक्षा इसके तत्संबंधी दो भेद हैं।** क्या नाम लिखा है ? **उपशमक अनिवृत्तिकरण और क्षपक अनिवृत्तिकरण।**

अब आगे १९५ पेज पर। **मुनिराज के जिस वीतराग परिणाम के निमित्त से चारित्रमोहनीय कर्म की २१ प्रकृतियों के उपशमन के कार्य की तैयारी अपूर्वकरण गुणस्थान के प्रथम समय से प्रारंभ होती है।** वह बात आठवें गुणस्थान में तैयारी होती है और नौवें गुणस्थान में उसका उपशम होता है, आठवें में कुछ नहीं होता है। **तदनंतर नौवें गुणस्थान के अंतिम समय पर्यंत मात्र सूक्ष्मलोभ कषाय को छोड़कर २० कषायों एवं समग्र नोकषायों का पूर्ण उपशम हो जाता है; उस वीतराग परिणाम को उपशमक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान कहते हैं।** यहां क्या हो रहा है कि एक-एक, एक-एक, कर्म को उपशमाने का कार्य चालू होता है नौवें गुणस्थान में और वहां लोभ छोड़कर, यहां कहा सूक्ष्मलोभ। तो लोभ भी दो प्रकार का है ? हां ! एक बादरलोभ और एक सूक्ष्मलोभ। तो उस जीव के बादरलोभ का तो वहां नौवें गुणस्थान के अंत में अंत हो जाता है और दसवें गुणस्थान के पहले समय से सूक्ष्मलोभ का उदय चालू होता है। वहां वे कह रहे हैं २० यानी ग्यारह कषाय एवं समग्र नोकषाय, समग्र यानी जो नौ नोकषाय हैं उनका उपशम हो जाता है। उस वीतराग परिणामों को उपशमक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान कहते हैं।

अब दूसरा पॉइंट- **मुनिराज के जिस वीतराग परिणाम के निमित्त से चारित्रमोहनीय कर्म की २१ प्रकृतियों के क्षय** ऊपर क्या कहा ? उपशमन के कार्य **क्षय के कार्य की तैयारी आठवें अपूर्वकरण गुणस्थान के प्रथम समय से प्रारंभ होती है और तदनंतर नौवें गुणस्थान के अंतिम समय पर्यंत मात्र सूक्ष्मलोभ कषाय को छोड़कर ११ कषायों** क्योंकि १२ में से उन्होंने सूक्ष्मलोभ को निकाला लेकिन वहां बादरलोभ तो जायेगा ही। ११ कषायों **एवं ९ नोकषायों का पूर्ण क्षय हो जाता है। उस वीतराग परिणाम को क्षपक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान कहते हैं। अभी अनिवृत्तिकरण बादरसाम्पराय प्रविष्ट शुद्धिसंयत का स्पष्टीकरण** का वहां विवेचन है वह तो आपको फिर पढ़ने से समझ में आयेगा।

अभी यह कहते हैं यह उपशमश्रेणी चढ़नेवाला जो जीव है; पुस्तक से नहीं बता रहा हूं। उपशमश्रेणी चढ़नेवाला जो जीव है उसके कौन-कौनसे सम्यक्त्व हो सकते हैं

दिलीपभाई आप बतायेंगे ? *श्रोता: औपशमिक सम्यक्त्व।* औपशमिक सम्यक्त्व और क्षपकश्रेणी चढ़नेवाले के ? *श्रोता: क्षायिक सम्यक्त्व।* क्षायिक सम्यक्त्व। मैं आपसे यह पूछूंगा, आपने बताया उपशमश्रेणी चढ़नेवाले को उपशम; द्वितीयोपशम कह रहे हैं आप ? द्वितीयोपशम सम्यक्त्व। मेरा यह पूछना है क्या क्षायिक सम्यक्त्वी उपशमश्रेणी चढ़ेगा या नहीं चढ़ेगा ? सुभाषभाई आप क्या कह रहे हैं ? क्षायिक सम्यक्त्वी उपशमश्रेणी चढ़ेगा कि नहीं चढ़ेगा ? सुरेशभाई आप कहेंगे ? *श्रोता: चढ़ेगा।* चढ़ेगा।

अभी हमने क्या पूछा ? सुनना फिर से, अनिवृत्तिकरण गुणस्थान जो है उसमें कितने-कितने सम्यक्त्व हो सकते हैं ? हां, बोलो भाईसाहब आप ? *श्रोता: उपशम और क्षायिक।* देखो इन्होंने उत्तर दिया बिना पूछे हम तो आपको पूछ रहे थे। कितने मित्र अच्छे रखे हैं आपने ? क्या कह रहे हैं देखो ? हम तो सिर्फ नौवें गुणस्थान की बात कर रहे हैं। नौवें गुणस्थान में कौनसे-कौनसे सम्यक्त्व हो सकते हैं ? क्षयोपशम सम्यक्त्व होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा। तो कौनसा होगा ? बराबर बोलना, *श्रोता:द्वितीयोपशम और क्षायिक।* द्वितीयोपशम और क्षायिक बहुत अच्छा। यह हमें हर गुणस्थान में पहले इसको नक्की करना है। अब जब आप बारहवें में आ जाओगे न तो नो चॉइस, वहां क्षायिक सम्यक्त्वी ही होगा। उसके पहले तो ८, ९ और १० तक तो दोनों में रहेंगे- उपशमश्रेणी में भी रहेंगे और इसमें क्षपक में भी रहेंगे। वहां तो अपने को सोचना पड़ेगा। अभी आधा तो निकल गया है। आठवां भी गया और नौवां भी गया। अभी केवल दसवां रह गया है उसमें फिर सोचेंगे।

क्या कह रहे हैं देखो ? **सम्यक्त्व** की **अपेक्षा विचार** करते हैं। पेज नंबर १९५ नीचे आये हैं। **द्वितीयोपशम और क्षायिक सम्यक्त्व- इन दोनों सम्यक्त्वों में से यहां एक सम्यक्त्व रहता है।** किसकी अपेक्षा ? एक जीव की अपेक्षा एक सम्यक्त्व और अनेक जीवों की अपेक्षा दोनों सम्यक्त्व होंगे। **यदि मुनिराज उपशमक अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती हो यानी उपशमश्रेणी चढ़नेवाले हो तो उन्हें द्वितीयोपशम सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व इन दोनों में से कोई एक सम्यक्त्व रहता है।** बराबर है ? **यदि मुनिराज क्षपक अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवाले हो तो उन्हें क्षायिक सम्यक्त्व ही रहता है।** यानी नो चॉइस ॲट ऑल। देखो अब अगला पेज है १९६ वहां हम आयेंगे नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ, बीचवाला हम जरा छोड़ देते हैं।

अपूर्वकरण गुणस्थान में चारित्रमोहनीय कर्म का उपशम या क्षय करने का प्रारंभ तो किया; परंतु किन्हीं विशेष प्रकृतियों का उपशम या क्षय नहीं हो सका। क्षय प्रारंभ करने का श्रेय कहो अथवा बहुमान कहो, मिला तो अपूर्वकरण को ही; तथापि वहां प्रत्यक्ष में किसी भी चारित्रमोहनीय का पूर्ण उपशम या क्षयरूप कुछ **कार्य नहीं हुआ। अब बात आती है अनिवृत्तिकरण की। बारह कषायों में से मात्र सूक्ष्मलोभ को छोड़कर ग्यारह कषायों का और नौ नोकषायों का भी पूर्ण उपशम या पूर्ण क्षय करने का विशिष्ट महत्वपूर्ण कार्य तो मात्र एक अनिवृत्तिकरण परिणाम से ही हुआ है। अतः नौवें गुणस्थानवर्ती वीतराग परिणाम ने श्रेणी के अन्य तीनों गुणस्थानों की अपेक्षा विशेष महत्वपूर्ण काम किया है; यह बात स्वयं स्पष्ट होती है। इस दृष्टि से अनिवृत्तिकरण गुणस्थान असाधारण है** यानी विशेष है, स्पेशल है। असाधारण यानी क्या ? विशिष्ट।

अब हम आगे बढ़ते हैं। आप कृपया पुस्तक बंद कर दो। पुस्तक बंद करने का कारण क्या है कि अभी हम किसको देखनेवाले हैं ? काल को देखनेवाले हैं। किसको देखनेवाले हैं ? गमनागमन देखनेवाले हैं। आप पुस्तक बंद करते-करते; दीपकभाई पुस्तक क्यों खुला है ? हां बंद करो, बंद करो। सुरेशभाई पुस्तक बंद करो। शाबाश ऐसा क्यों ? स्वयं प्रोफेसर है तो प्रोफेसर कभी स्टुडंट का सुनता है क्या ? हां तो भाई यहां तो हम सब साधर्मी एक लेव्हल के हैं। कोई यहां प्रोफेसर नहीं, कोई स्टुडंट नहीं। यह हम अपने लिये देख रहे हैं। अभी मेरा पहला प्रश्न होगा क्योंकि आपने काल तो देख ही लिया बंद करते-करते, तो हम गमनागमन देखेंगे।

अभी हम कौनसे गुणस्थान की बात कर रहे हैं बहन, नाम बोलना ? *श्रोता: अनिवृत्तिकरण।* हां, यह ठीक है। अनिवृत्तिकरण गुणस्थान है। अभी हम उसमें क्षपक या उपशमक ऐसी कोई बात नहीं कर रहे हैं। पहले में पहले नौवें गुणस्थान में आगमन कहां-कहां से होगा ? आगमन, आना है हमें नौवें गुणस्थान में प्रवेश करना है तो कहां-कहां से होगा ? आप बोलेंगे ? हां, बहुत अच्छा बोलो, *श्रोता: आठवें से और दसवें से।* आठवें से और दसवें से। अच्छा आपको एक बात बताना है आठवें से नौवें में और उतरते वक्त दसवें से नौवें में। तो यह दसवें से नौवें में आनेवाला जो कोई जीव होगा उसकी क्या विशेषता होनी चाहिये ? वह कौन होना चाहिये ? *श्रोता: उपशमश्रेणीवाला उपशमक होना चाहिये।* हां, उपशमश्रेणीवाला उपशमक होना चाहिये। हां जी ? हां,

उतरनेवाला, नॅचरलि उतरते वक्त वह दसवें से नौवें में आयेगा। अब कहते हैं चढ़नेवालों में कहां से आयेगा ? *श्रोता: आठवें में से आयेगा।* आठवें में से आयेगा। अब देखो ! उपशमक जो जीव है वह भी आठवें से नौवें में जायेगा और क्षपक होगा वह भी आठवें से नौवें में जायेगा। लेकिन उपशमक दसवें से नौवें में आयेगा, क्षपकवाला नहीं आयेगा। क्षपकश्रेणीवाला, क्षायिक मत कहना। क्षायिक कहने से क्षायिक सम्यग्दृष्टि तो उपशमश्रेणी भी चढ़ेगा न, हां कोई बात नहीं।

यह थोड़ासा अपना भी माइंड क्लिअर हो जाता है न क्योंकि पुस्तक में पढ़ने से तो क्या होता है ? पढ़ लिया बस ख़त्म। लेकिन थोड़ासा हम भेजे का वापर करते हैं तो बात स्पष्ट समझ में आती है। अभी मेरे को स्टोरी भी याद आयी लेकिन बोलूंगा नहीं। लोहे को एक जगह रखो तो जंग पकड़ता है। वैसे बुद्धि को न चलाओ तो ? उसको चलाना चाहिये। वैसे बुद्धि को चलाये तो उसको जंग नहीं पकड़ेगा। अपने को एकदम आदतसी होती है कि फटाफट-फटाफट विचार करना शुरू करते हैं। यह करणानुयोग तो अपने बुद्धि को बहुत उत्कृष्ट रीति से चालना देने का काम करता है। क्या ? तुम सोचते हो तो दिमाग चलता है, और नहीं तो क्या है ? चुप बैठो तो कुछ नहीं है। अब आगे, अभी हमने देखा कि गमनागमन की अपेक्षा से विचार करते हैं तो कोई ऑल्टरनेटिव्ह ही नहीं है। जो उपशमक होगा वह आठ से नौ, क्षपक होगा वह आठ से नौ। लेकिन सिर्फ उतरनेवाला जो उपशमक है वह दसवें से नौ में आयेगा, क्षपकवाला उतरेगा ही नहीं। कितना आसान है न अभी गुणस्थान ?

अभी गमन देखेंगे। नौवें गुणस्थान से कहां-कहां गमन होगा सुरेशभाई आप बतायेंगे ? *श्रोता: उपशमक जायेगा आठवें में।* कौन जायेगा आठवें में ? हां उपशमक जायेगा बराबर। वह कहां से जायेगा ? नौवें से आठवें में। और कहां से जायेगा ? क्षपक के बारे में क्या होगा ? हां, क्या हो गया ? ठहरो-ठहरो, रुको भैया। आप बोलते नहीं उंगली से बताते हैं तो समझ जाते हैं, होशियार हैं वे। हां बिलकुल अच्छा है क्योंकि वहां उतरने का तो चान्स ही नहीं है। पहले ऐसा कहते थे इंग्लिश में रिव्हर ऑफ नो रिटर्न। हां, देखा यानी क्या ? ऐसी नदी इतनी खूंखार है कि एक दफे आप उसमें एंटर हो जाओ तो वापस नहीं आ सकते हो।। वैसे यह क्षपकश्रेणी कैसी है ? सुरेशभाई गलती से आप चढ़ जाओगे उसमें तो वापस आने को नहीं मिलेगा, मुक्तता ही लेनी पड़ेगी। मालूम है ? सोचना हो ! हां और एक सुरेशभाई हैं हमारे, हां, अच्छा चलो-चलो। अभी

हमने क्या देखा ? नीचे की ओर गमन देखा, अब ऊपर की ओर गमन होगा कि नहीं ? हां, नौवें से दसवें में जायेगा। कौनसी श्रेणीवाला ? दोनों ही श्रेणीवाले जीव नौवें से दसवें में जायेंगे। गमन भी देखा और आगमन भी देखा। इसमें किसीको कोई आशंका है गमन आगमन के बारे में तो आप पूछ सकते हैं। हां साहब ? अच्छा-बहुत अच्छा।

देखो मैं उनका प्रश्न पूछ रहा हूं, क्षपकश्रेणीवाला नौवां गुणस्थानवर्ती वह मरेगा तो कौनसे गुणस्थान में जायेगा ? सुरेशभाई आप बताना। बोलो-बोलो जोर से बोलो, अरे बोलते क्यों नहीं हो ? *श्रोता: मरेगा ही नहीं।* मरेगा ही नहीं क्योंकि उसने देवलाली का खाना खाया है। तो कह रहे हैं मरेगा तो कौन ? उपशमश्रेणीवाला मर सकता है। यानी उपशमश्रेणी चढ़नेवाला या उतरनेवाला उपशमक अनिवृत्तिकरण। वह मरेगा तो चौथे में जायेगा। मरता तो नौवें गुणस्थान के साथ और विग्रहगति से चौथे गुणस्थान के साथ देवगति में जायेगा। अब यह बात हो गयी। अभी गमनागमन भी हुआ।

अभी हम काल की अपेक्षा से देखते हैं। तो उत्कृष्ट काल कितना होगा ? हां, बोलो बहन ? *श्रोता: यथायोग्य अंतर्मुहूर्त।* हां यथायोग्य अंतर्मुहूर्त। यह किसकी बात कर रहे हैं आप ? उपशमक की या क्षपक की ? *श्रोता: दोनों की।* दोनों की। बहुत अच्छा और जघन्य काल कितना होगा ? बोलो-बोलो, जोर से बोलना। *श्रोता: एक समय।* एक समय। यह किस अपेक्षा से ? क्षपकश्रेणीवाला ? हां ? उपशमश्रेणीवाला। ख्याल में आया ? यह हम उपशमक जीव जो है उसकी अपेक्षा से जघन्य काल देखेंगे तो वह एक समय है और क्षपक की अपेक्षा उनका जो कोई अंतर्मुहूर्त है वह यथायोग्य। अब इसको हम देखते हुये आगे बढ़ते हैं। आप पेज नंबर १९७ निकालना।

देखो **जघन्य काल- कोई महामुनिश्वर उपशमक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में मरण की अपेक्षा से मात्र एक ही समय रहते हैं। जैसे कोई महामुनिराज सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान से नीचे उतरते समय नीचे अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में मात्र एक समय व्यतीत करते ही उनके मनुष्यायु का क्षय हो जाये तो मरण की अपेक्षा अनिवृत्तिकरण गुणस्थान का जघन्य काल एक समय घटित होता है।** देखो उन्होंने इतने बड़े-बड़े वाक्य बनाये हैं। उसका अर्थ एक ही है कि मरण की अपेक्षा से मात्र एक ही समय है। किसका ? उपशमक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान का और वह भी उतरते समय की बात की। अभी नीचे क्या बता रहे हैं ? **अथवा**

उपशमक अपूर्वकरण गुणस्थान से ऊपर चढ़ते समय कोई मुनिराज अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में आरूढ़ हुये और वहां मात्र एक समय रहे और तत्काल मनुष्यायु का क्षय हो जाये तो भी नौवें गुणस्थान का जघन्य काल एक समय हो सकता है। यह यहां क्यों बताना आवश्यक समझा उन्होंने चढ़ते और उतरते समय ? क्योंकि आठवें में चढ़ते समय एक समय में मरण नहीं होता है। उतरते समय में नौवें से आठवें में आ जाये तो उनका मरण हो जा सकता है।

अब कहते हैं **उत्कृष्ट काल- यथायोग्य मात्र अंतर्मुहूर्त है। यदि उपशमक अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती इस नौवें गुणस्थान में अधिक से अधिक काल रहेंगे तो यथायोग्य एक अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत ही रहेंगे। क्षपक अनिवृत्तिकरण मुनिराज के जघन्य या उत्कृष्ट काल का प्रसंग नहीं आता; क्योंकि उनका तो न पतन होता है न मरण। इसलिये जघन्य अथवा उत्कृष्ट काल नहीं है। जिसे जघन्य काल होता है, उसे ही उत्कृष्ट काल का व्यवहार होता है।** अब मध्यम काल तो आप समझ जायेंगे। दो समय से लेकर जो अंतर्मुहूर्त में एक समय कम है, वे सब मध्यम काल हैं। अभी **गमनागमन** संबंधी **विचार** करते हैं। तो पहले गमन बता रहे हैं। **उपशमक अथवा क्षपक** दोनों की बात करी। **अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती मुनिराज ऊपर की ओर सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में ही गमन करते हैं।** उपशमक भी और क्षपक दसवें में ही जायेंगे।

अब क्या कह रहे हैं ? उपशमश्रेणी से उतरते समय ऊपर दोनों का नाम लिया था उपशमक और क्षपक का। यहां सिर्फ उपशमक का क्योंकि हम जानते हैं। अभी हम बिलकुल होशियार हो गये हैं कि क्षपकश्रेणीवाले नीचे नहीं आते। इसलिये **उपशमश्रेणी से उतरते समय अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती मुनिराज उपशम अपूर्वकरण गुणस्थान में ही गमन करते हैं। यदि उपशमक अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती मुनिराज का आयुक्षय के कारण मरण होता है तो वे विग्रहगति के प्रथम समय में नियम से चौथे अविरत-सम्यक्त्व गुणस्थान में ही गमन करते हैं।** यह देखो मुनि अवस्था का जीव अगर उनका मरण हो जाये तो वह नियम से चौथे में जायेगा। यहां तक की पांचवें गुणस्थान तक का जीव भी मरे तो वह चौथे में ही आयेगा अगर सम्यक्त्व के सहित मरण हो जाये तो।

अब कहते हैं **आगमन- उपशमक अनिवृत्तिकरण में आगमन नीचे के उपशमक अपूर्वकरण गुणस्थान से ही होता है।** यानी वह आठवें से नौवें में आते हैं और **उपशमश्रेणी से नीचे उतरते समय दसवें उपशमक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान से ही इस नौवें गुणस्थान में आगमन होता है।** अब आगे और एक बात बताते हैं। **क्षपक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में आगमन मात्र क्षपक अपूर्वकरण गुणस्थान से होता है।** इसतरह से हमने इनके गमन और आगमन की बात देखी है।

अभी **विशेष अपेक्षा विचार** करते हैं। तो कहते हैं **अनंतगुणी विशुद्धि आदि सर्व आवश्यक कार्य इस अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में अष्टम गुणस्थानवत् ही होते हैं।** तो अष्टम गुणस्थान में हमने कितने आवश्यक देखे थे ? *श्रोता: आठ।* आठ देखे थे। नाम बतायेंगे साहब आप ? बहुत अच्छा, आंकड़ा आठ लिखा ही है उधर। हां कौन बताना चाहेगा ? शारदाबहन आप जानती हैं ? और कौन जानेगा ? देखो चार हमने सातवें गुणस्थान में देखे थे और चार ॲडिशनलि आठवें गुणस्थान में। वही आठ यहां होनेवाले हैं। कौन बताना चाहेगा ? हां बोलो बेटा, *श्रोता: प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि, स्थितिबंधापसरण, प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना, अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटना।* प्रत्येक समय में यानी प्रति समय अनंतगुणी-अनंतगुणी विशुद्धि, स्थितिबंधापसरण, अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना। आपने बताया प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा बढ़ना और अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग अनंतगुणा घटना। यह कितने हो गये ? *श्रोता: चार।* चार। यह कौनसे गुणस्थान से चालू होते हैं बहन ? जोर से बोलो, *श्रोता: सातवें गुणस्थान से।* हां, किसने उत्तर दिया ? बहुत अच्छा दिया। हम अंजूबहन को पूछते हैं आपने उत्तर दिया बहुत बढ़िया। अब आगे के चार कौन बोलेगा ? हां, बोलो-बोलो। *श्रोता: स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात, गुणश्रेणी निर्जरा, गुणसंक्रमण।* स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात, गुणसंक्रमण और गुणश्रेणी निर्जरा बहुत अच्छा। आठों ही बातें इस नौवें गुणस्थान में होती हैं। यह हमें ध्यान रखना है। जरा सोचो तो सही एक गुणस्थान का काल एक अंतर्मुहूर्त है। एक अंतर्मुहूर्त में हजारों-हजारों स्थितिकांडकघात होते हैं और एक-एक स्थितिकांडकघात के काल में हजारों-हजारों अनुभागकांडकघात होते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

२७. सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान, उपशांतमोह गुणस्थान

अभी तक हमने नौवें गुणस्थान के बारे में काफी कुछ समझने की कोशिश की है। यह बात हमें निश्चितरूप से मालूम हो गयी है कि अनिवृत्तिकरण नामक जो नौवां गुणस्थान है वह उपशमश्रेणीवाले के भी होता है और क्षपकश्रेणीवाले के भी होता है।

अभी हम **विशेष अपेक्षा विचार** कर रहे थे। पेज नंबर १९८ पर हम आये थे। यहां बता रहे हैं **अनंतगुणी विशुद्धि आदि सर्व आवश्यक कार्य** इस **अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में अष्टम गुणस्थानवत् ही होते हैं।** इसके बारे में भी हमने चर्चा की थी। देखे थे न ? हमने आठ नाम देखे थे न। प्रति समय अनंतगुणी विशुद्धि बढ़ती जाती है। वह बातें हमने देखी थी। अब दूसरा पॉइंट जो है- **चारित्रमोहनीय कर्म बादरकृष्टि से सूक्ष्मकृष्टिरूप हो जाता है।** चारित्रमोहनीय कर्म बादरकृष्टि से सूक्ष्मकृष्टिरूप हो जाता है। **इस कृष्टिकरण से सूक्ष्मलोभ कषाय के बिना शेष सर्व ग्यारह कषायें और हास्यादि सर्व नौ नोकषायों का सर्वथा उपशम या क्षय हो जाता है।** उपशम तो उपशमश्रेणीवालों के होगा और क्षय क्षपकश्रेणीवालों के होगा।

यहां प्रश्न उठता है कि **कृष्टिकरण किसे कहते हैं ?** कह रहे हैं **क्रम से** अभी क्रम को जरा हटा देते हैं। **कषायों को कृष** कृष यानी **हीन करने को** यह हीनता या कृषपना जो आनेवाला है, वह अनुभाग में आयेगा यानी जो फलदान शक्ति है; वह जो उसकी पॉवर है उससे अनंतवां भाग हो जाना यह उसका कृष्टिकरण है। क्या कहा ? फिर से देखो-देखो, यहां यह बता रहे हैं क्रम से कषायों को कृष; कृष यानी हीन करने को **कृष्टिकरण कहते हैं। अर्थात् अनुभाग** यानी दूसरा अर्थ क्या है ? **फल प्रदान करने की** जो **शक्ति** है, उस**का उत्तरोत्तर कम-कम होते जाना ही कृष्टिकरण है।** यह जो बात हो रही है यह बात नौवें गुणस्थान में हो रही है। **यह अति विशिष्ट महत्वपूर्ण कार्य अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में ही होता है।**

अब उसमें कह रहे हैं कि **बादर कृष्टि किसे कहते हैं ?** यहां पर एक बात नक्की करना है कि यह बात जो हो रही है वह कषायों में ही हो रही है, अन्य प्रकृतियों में नहीं। कह रहे हैं- **अनिवृत्तिकरण नामक नौवें गुणस्थान के पूर्व पाये जानेवाले स्पर्धकों को पूर्वस्पर्धक कहते हैं। अनिवृत्तिकरण के निमित्त से अनुभाग क्षीण स्पर्धकों को अपूर्वस्पर्धक कहते हैं।** अभी आगे क्या बताते हैं ? **अपूर्वस्पर्धक से भी**

अनंतवें भाग अनुभाग क्षीण स्पर्धकों को बादरकृष्टि कहते हैं। अर्थात् संज्वलन, क्योंकि अब यह नौवां गुणस्थान है न तो उनके तो अन्य कोई कषाय विद्यमान ही नहीं है। तो कह रहे हैं **संज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभ कषायों के अनुभाग को घटाना** यानी **क्षीण करना ही बादरकृष्टि है। बादर शब्द का अर्थ है स्थूल।** यानी अभी हमारे तुम्हारे जो कोई कषाय हैं वे सारे बादर कषाय हैं। अभी मैं थोड़ासा आपको अन्य प्रकार से समझाना चाहता हूं।

यहां नौवें गुणस्थान में आयेंगे तो नौवें गुणस्थान के पांच भाग किये जाते हैं। उसमें से पहले भाग में वेद का भी उदय है। देखो भाई यह कर्म की अपेक्षा से कह रहे हैं, जीवों के परिणामों की अपेक्षा से नहीं। यहां वेद कर्म का भी उदय है; तीन वेद में से किसी एक वेद कर्म का वहां उदय है और चार कषायों का उदय है। पहला भाग खत्म हो जाता है तो वहां वेद कर्म नष्ट हो जाते हैं; उनका उदय नहीं रहता है, सत्ता भी नहीं रहती है। चार कषाय में से एक कषाय का वहां उदय है। ऐसे हम कर्म से देखना चाहेंगे तो पहले समझ लो कि क्रोध का उदय है तो वह नौवें गुणस्थान के दूसरे भाग में; फिर तीसरे भाग में मान, फिर चौथे भाग में माया और पांचवें में लोभ। तो जैसे-जैसे एक-एक भाग का काल समाप्त होता है तो जो कुछ क्रोध बाकी है वह मानरूप टर्न होता है, मान मायारूप संक्रमित होता है, टर्न होता है और माया जो है वह लोभरूप होती है। नौवें गुणस्थान के पांचवें भाग में जो लोभ है उसको कहेंगे बादरलोभ।

अब यह बादरलोभ जो है तो पहले गुणस्थान से नौवें गुणस्थान तक जो कषाय है या लोभ है अभी, वह बादर ही है। क्रोध भी बादर ही है, सबमें समझना। लेकिन दसवें गुणस्थान का नाम क्या है ? हां साहब ? *श्रोता: सूक्ष्मसाम्पराय।* सूक्ष्मसाम्पराय। साम्पराय का अर्थ कषाय और यह कषाय कौनसा बाकी है अभी ? तो कहते हैं सिर्फ लोभ। यह सूक्ष्मलोभ का दसवें गुणस्थान में उदय है। तो यह सूक्ष्मलोभ अत्यंत हीन हो गया है उसकी बात यहां पर बता रहे हैं। पहले तो कह दिया कि जो अपूर्वस्पर्धक से भी अनंतवें भाग अनुभाग क्षीण-हीन स्पर्धकों को बादरकृष्टि कहते हैं। इस बादरकृष्टि में भी पहले उनकी जो फलदान शक्ति थी वह इतनी हीन हो जाती है और आगे क्या होता है ? अर्थात् संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ कषायों के अनुभाग को घटाना, क्षीण करना ही बादरकृष्टि है।

अब आगे ८५ नंबर का प्रश्न। **सूक्ष्मकृष्टि किसे कहते हैं ?** उत्तर है **बादरकृष्टि से भी अनंतवें भाग अनुभाग क्षीण स्पर्धकों को सूक्ष्मकृष्टि कहते हैं।** यह सहज जीवों के परिणाम तो स्व में लीनतारूप चल रहे हैं। लेकिन वहां लोभ कषाय कर्म का उदय है लेकिन वह जीव कुछ लोभ करता हो ऐसी बात नहीं है। लेकिन कर्मों के उदय की अपेक्षा से वहां जो कुछ चल रहा है वह बता रहे हैं। यह उदय भी कैसा है ? उनका पहले तो जो बादरलोभ था उसकी बादरकृष्टि की, उसमें भी अनुभाग अनंतवां भाग हो गया; सूक्ष्मकृष्टि की उसमें भी उससे अनंतवां भाग रह गया। कहते हैं **वस्तु- व्यवस्था की अद्‌भुतता तथा सूक्ष्मता को देखो ! क्षपक अनिवृत्तिकरणवाले महामुनिराज अब मात्र यथायोग्य दो अंतर्मुहूर्त समाप्त होते ही, अर्थात् दसवां और बारहवां गुणस्थान का समय व्यतीत करते ही सर्वज्ञ भगवान** यानी **अरहंत बननेवाले हैं; तथापि उन्हें अभी भी आठों कर्मों की सत्ता मौजूद है। उनमें से एक भी कर्म का पूर्ण नाश नहीं हुआ है। मोहनीयकर्म नष्टोन्मुख** यानी नष्ट होनेवाला **है; तथापि सूक्ष्मलोभ अपने सामर्थ्य से अपने अस्तित्व की जानकारी महामुनिराज को भी मानो गौरव से दिखा रहा है।** यह थोड़ीसी जिसको हम कहते हैं न पोऐटिक लँग्वेज है। उनका यही कहना है कि वहां अभी सूक्ष्मलोभ की सत्ता है।

बुझता हुआ दीपक अंत में भभक कर बुझ जाता है। अन्य ज्ञानावरणादि सातों कर्म अपनी-अपनी स्थिति अनुसार सत्ता में हैं; फिर भी उन सातों कर्मों की निर्जरा तो उत्तरोत्तर यथाक्रम तथा यथास्थान चालू है ही। अब कहते हैं **भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम सुनिश्चित, विसदृश तथा एकसमयवर्ती जीवों के परिणाम सुनिश्चित, सदृश ही होते हैं।** इसके डिटेल में नहीं जायेंगे क्योंकि अपना काफी टाइम उसके पीछे लगेगा। अभी आगे की बात बताते हैं। यह **जो बादर शब्द आया है वह अंत्य दीपक है।** यह अंत्य दीपक क्या होता है ? वह तो हम जान गये हैं। **पहले गुणस्थान से लेकर इस गुणस्थान पर्यंत** के **सर्व जीव बादर कषाय सहित ही हैं। जैसे मिथ्यात्व बादर साम्पराय** वगैरह, वगैरह। अब हम आगे बढ़ते हैं। यह हमने नौवां गुणस्थान तक़रीबन खत्म कर दिया ऐसा मान लो।

कहते हैं सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान भी दोनों श्रेणियों में आता है - उपशमश्रेणी में भी आता है और क्षपकश्रेणी में भी आता है। इसलिये क्या कह रहे हैं ? **चारित्रमोहनीय कर्म का साक्षात् उपशम या क्षय करनेवाला विशिष्ट सामर्थ्यवान**

गुणस्थान है। सामर्थ्यवान इसलिये कहने में आ रहा है कि अब तक सूक्ष्मलोभ हटा नहीं है। दसवें में ही उसका उपशम होगा या उसका क्षय होगा। इस अपेक्षा से कहते हैं कि यह गुणस्थान इटसेल्फ सामर्थ्यवान है। अब आगे कहते हैं यह उत्तर लिखा है न, उसमें आगे का जो पॅरेग्राफ है। उपरोक्त कथन संज्वलन कषाय की अपेक्षा से है। **संज्वलन लोभ कषाय नियम से स्वोदयी प्रकृति होने से अंत में ही नष्ट होती है।** यानी बाकी जो क्रोध है वह क्रोध मानरूप टर्न होकर उदय में आता है, मान है वह मायारूप में, माया है वह लोभरूप में लेकिन लोभ लोभरूप से ही उदय में आयेगा। अब आगे चलते हैं।

२०६ पृष्ठ पर हम आयेंगे। यह बाकी जो बातें हैं न वह ऐसी ही जनरल बातें हैं, मूलभूत बात तो अभी आगे आयेगी। यहां सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान है; हम देखते-देखते एक बात तो भूल गये कि सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान है उसमें कौन-कौनसे सम्यक्त्व हो सकते हैं ? हां बहन आप बोलेंगे ? हां, सुनो फिर से पूछूंगा। क्या कहा मैंने ? कि दसवां गुणस्थान है उसका नाम है सूक्ष्मसाम्पराय। तो सूक्ष्मसाम्पराय में कौन-कौनसे सम्यक्त्व हैं ? तीन सम्यक्त्व हैं न अपने पास, तीन भेद हैं तो उसमें से कौनसा सम्यक्त्व उसमें हो सकता है ? *श्रोता: द्वितीयोपशम सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व।* और दूसरा कौनसा ? क्षायिक सम्यक्त्व। ख्याल में आया ? द्वितीयोपशम सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व। क्यों ? कि इन दोनों ही श्रेणियों में दसवां गुणस्थान आता है। कौनसी दोनों ? एक उपशमश्रेणी और एक क्षपकश्रेणी। इसलिये आपने कहा कि इसमें दो ही; क्या कह रहे हैं ? सम्यक्त्व की अव्हेलेबिलिटी है कहो या वे उपलब्ध होते हैं। एक ही जीव के दो नहीं होंगे, अनेक जीवों की अपेक्षा से यह बात है।

अब यहां २०६ नंबर पर सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान की परिभाषा दी है उसको देखते हुये हम आगे बढ़ेंगे। यह क्या कहते हैं ? **धुले हुये कौसुंभी वस्त्र की सूक्ष्म लालिमा के समान।** अभी क्या होता है ? पहले के ज़माने में जो सफ़ेद कपड़े होते थे, उनको कलर करने के लिये कुछ फूलों का इस्तेमाल होता था। तो फूलों का उनमें रंग जाता था। लेकिन यह कौसुंभी नामक जो फूल है उसका जो रंग होता है वह जल्दी निकल जाता है। तो वह धुले हुये होने से क्या होता है ? पूरा-पूरा नष्ट तो नहीं होता है, लेकिन थोड़ा-थोड़ा वहां बाकी रहता है। धुले हुये कौसुंभी वस्त्र की सूक्ष्म लालिमा के समान यानी वहां अभी भी थोड़ासा लाल रंग विद्यमान है। अभी अपने सूक्ष्मसाम्पराय में

कौनसा कषाय विद्यमान है ? हां, चारुबहन ? दसवें गुणस्थान में कौनसा है ? *श्रोता: लोभ।* लोभ नहीं सूक्ष्मलोभ। क्योंकि यह कैसा है ? देखो, धुले हुये वस्त्र के समान। अभी कलर गया है बिलकुल थोड़ासा-हलकासा बाकी है।

वैसे लोभ भी बिलकुल नष्ट होने आया है। उसका अनुभाग इतना क्षीण-इतना क्षीण हो गया है कि अभी उसमें है नहीं जैसा है। इसलिये क्या कहा ? धुले हुये कौसुंभी वस्त्र की सूक्ष्म लालिमा के समान **सूक्ष्मलोभ का वेदन करनेवाले उपशमक अथवा क्षपक जीवों के यथाख्यातचारित्र से किंचित न्यून वीतराग परिणामों**, ये वीतराग परिणाम हैं लेकिन पूर्ण वीतरागी नहीं हैं, अभी भी उसमें कुछ खामी है, कमी है। इसलिये क्या कहा ? कि यथाख्यातचारित्र से किंचित न्यून वीतराग परिणाम इन**को सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान कहते हैं।** क्योंकि यह सूक्ष्मसाम्पराय दसवां गुणस्थान दोनों ही श्रेणियों में आ रहा है। इसलिये कह रहे हैं कि सूक्ष्मलोभ का वेदन करनेवाले कौन है ? कहते हैं उपशमक, उपशमक यानी उपशमश्रेणी चढ़नेवाले और दूसरा क्या है ? क्षपक। यह जीवों का कौनसा परिणाम चल रहा है ? वीतराग परिणाम चल रहा है। वह वीतराग परिणाम कैसा है ? यथाख्यातचारित्र से किंचित न्यून है।

हम बोलते हैं न अरे साहब सब काम हो गया। अभी समझ लो न ९९% काम हो गया, १% बाकी है, वैसे इनकी भी थोड़ी वीतरागता होनी अभी बाकी है। कषाय ऑज गुड ऑज खत्म हो गया, समझ लो न। कषाय बाकी रहा नहीं, अभी थोड़ासा बाकी है। तो कह रहे हैं किंचित न्यून। किससे किंचित न्यून ? यथाख्यातचारित्र से किंचित न्यून वीतराग परिणाम जो हैं उसको कह रहे हैं सूक्ष्मसाम्पराय। अभी देखो, **कौसुंभी वस्त्र लाल रंग का होता है। उस वस्त्र को पानी से धो लेने पर उसकी लालिमा** लालिमा समझते हैं न रेडिश कलर **कम हो जाती है। उस धुले हुये कौसुंभी वस्त्र की लालिमा के समान सूक्ष्मलोभ परिणाम का वेदन मुनिराज करते हैं। अर्थात् सूक्ष्मलोभ कषाय कर्म के उदय से महामुनिराज को अबुद्धिपूर्वक उत्तरोत्तर हीन-हीन सूक्ष्मलोभ परिणाम होता रहता है।**

यहां एक बात बता रहे हैं कि वहां अभी भी लोभ बाकी है यानी कषाय बाकी है। इसका अर्थ क्या हुआ कि दसवें गुणस्थान तक जीव पूर्ण वीतरागी नहीं है। लेकिन वह राग कैसा है ? तो कहते हैं अबुद्धिपूर्वक है और वह कैसा है ? हर समय भविष्य में

हर समय हीन, हीन होते जा रहा है। **वैसे तो** कह रहे हैं **सातवें अप्रमत्त गुणस्थान से ही मुनिराज निज सहजानंदमय शुद्धात्मा का वेदन** यानी **अनुभवन करते हैं; तथापि पूर्ण वीतरागतारूप यथाख्यातचारित्र की कमी का दिग्दर्शन कराने के उद्देश्य से सूक्ष्मलोभ का वेदन करनेवाले ऐसा कथन अशुद्ध निश्चयनय से आचार्य श्री नेमिचन्द्र ने इस गाथा में किया है। इसे ही अध्यात्म की अपेक्षा व्यवहारनय का कथन कहते हैं।**

यह व्यवहारनय का कथन किसलिये कहा ? कि जो राग है उस राग का वेदन जीव नहीं करता है। तो फिर राग आता है तो वह ख्याल में आया न हमें ? हां ! तो राग का जो ज्ञान आया वह ज्ञान का वेदन है। इसलिये उसे कहा राग का वेदन। यह उपचार का कथन है, व्यवहार का कथन है। यह किसकी अपेक्षा से ? अशुद्ध निश्चयनय की अपेक्षा से। अभी अशुद्ध निश्चयनय क्या है ? वह अभी बताते बैठेंगे तो हम द्रव्यानुयोग में जायेंगे।

भेद अपेक्षा विचार करते हैं, पेज नंबर २०७। यहां हम जानते हैं इसमें दो भेद हैं। किसके दो भेद हैं ? सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान है उसके दो भेद हैं। वह दो भेद कौन कहना चाहेगा ? हां बोलो बहन, *श्रोता: उपशमक सूक्ष्मसाम्पराय और क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय।* बहुत अच्छा, इन्होंने उत्तर दिया कि उपशमक सूक्ष्मसाम्पराय और क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय। अब आगे बढ़ते हैं, **जिस वीतराग परिणाम में मात्र सूक्ष्मसाम्परायरूप कलंक** यह क्या कहा ? यह सूक्ष्मसाम्पराय होना कलंक है। सूक्ष्मसाम्पराय ? और हमारे पास बादरसाम्पराय है उसका क्या ? महाकलंक है कह रहे हैं और हम इस कलंक के माध्यम से ही धर्म की प्राप्ति करना चाहते हैं। यानी क्या करना चाहते हैं ? शुभभाव करेंगे, हां और मानेंगे कि हमने धर्म किया ! मानेंगे हो ! होता कुछ नहीं।

यहां तो सूक्ष्मसाम्पराय को कलंक कह रहे हैं क्योंकि वह जीव जिसके अभी सूक्ष्मसाम्पराय हो रहे हैं वह तो ऐसे उच्च अवस्था में पहुंचे हुये हैं तो उनके लिये यह रहना भी योग्य नहीं है। देखो क्या कह रहे हैं ? सूक्ष्मसाम्परायरूप कलंक **अर्थात् राग शेष है और अन्य सर्व कषाय** और **नोकषायों का सर्वथा उपशम हो गया है।** ऐसी जो अवस्था है **उसे उपशमक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान कहते हैं।** उसीतरह बता रहे

हैं कि **जिस वीतराग परिणाम में सूक्ष्मसाम्परायरूप कलंक अर्थात् राग शेष है और अन्य सर्व कषाय- नोकषायों का सर्वथा क्षय अर्थात् नाश हो गया है; उसे क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान कहते हैं।** अभी थोड़ासा पुस्तक भी बंद करेंगे हम और आगे बढ़ेंगे। सब लोग पुस्तक बंद करेंगे ऐसी अपेक्षा है।

अभी हम कौनसा गुणस्थान देख रहे हैं ब्रह्मदेवजी ? *श्रोता: सूक्ष्मसाम्पराय।* सूक्ष्मसाम्पराय। सूक्ष्मसाम्पराय में सम्यक्त्व की अपेक्षा से हम विचार करेंगे। सूक्ष्मसाम्पराय में कौन- कौनसे सम्यक्त्व हो सकते हैं ? आप बता रहे हैं ? बोलो साहब। *श्रोता: द्वितीयोपशम और क्षायिक।* द्वितीयोपशम और दूसरा ? क्षायिक, तो यह क्षायिक और द्वितीयोपशम इसमें से कौनसा जीव उपशमश्रेणी चढ़ेगा? *श्रोता: द्वितीयोपशम।* द्वितीयोपशम। गणेशजी आप क्या कहते हैं ? दूसरा और कोई बताना चाहेगा ? हां सुरेशभाई ? जोर से बोलना भैया। सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान जिसमें अभी हमने क्या देखा ? कि सम्यक्त्व अपेक्षा से दो भेद देखे। एक द्वितीयोपशम सम्यक्त्व है और दूसरा क्षायिक सम्यक्त्व है। उपशमश्रेणी इसमें से कौनसा सम्यक्त्ववाला चढ़ेगा ? ऐसा मेरा सवाल है। आपने द्वितीयोपशम सम्यक्त्ववाला कहा फिर गणेशजी ने भी वही कहा। आप क्या कहना चाहेंगे ? *श्रोता: दोनों।* दोनों। और क्षपकश्रेणी ? क्षपकश्रेणी कौन चढ़ेगा ? *श्रोता: क्षायिक सम्यक्त्वी।* बहुत अच्छा। इतना आप जानते हैं और इतना टाइम लगाते हैं। नहीं लगाना चाहिये। बहुत अच्छा। अभी मेरे ख्याल से आपको घर जाने के विचार तकलीफ दे रहे हैं।

देखो क्या बात हो गयी ? यहां हमने देखा उपशमश्रेणी में दो-दो सम्यक्त्वी होते हैं। हमने तीन प्रकार के सम्यक्त्व भी देखे थे। महेंद्रभाई तीन प्रकार के सम्यक्त्व का नाम क्या है ? हां गांगजीभाई आप बोलो। उनको जरा अभी दोपहर का टाइम है न। हां सम्यक्त्व तीन प्रकार के देखे न हमने ? तीन सम्यक्त्व के नाम क्या हैं ? हां बोलो, *श्रोता: औपशमिक सम्यक्त्व, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व।* हां, औपशमिक सम्यक्त्व, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व। ख्याल में आया ? यह बार-बार हमें क्यों याद करना पड़ता है ? आसान बात है। फिर भी हमको कहां किसको अप्लाय करना है इसके लिये थोड़ासा विचार करना पड़ता है। अभी हमने क्या देखा कि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व ऐसे दो सम्यक्त्व यहां हो सकते हैं। लेकिन यहां क्या कह रहे हैं ? सूक्ष्मसाम्पराय में उपशमश्रेणीवाला जो सूक्ष्मसाम्पराय है

उसमें दोनों ही सम्यक्त्वी उपशमश्रेणी की तरफ जा सकते हैं। लेकिन क्षपकश्रेणी सिर्फ क्षायिक सम्यक्त्वी ही चढ़ेगा। अब आगे, देखो यहां क्या कहते हैं ?

पुस्तक उठाइये, २०७ नंबर का पृष्ठ। **द्वितीयोपशम और क्षायिक सम्यक्त्व, इन दोनों सम्यक्त्वों में से कोई भी एक सम्यक्त्व यहां रहता है।** कोई भी एक रहता है यानी दोनों भी होंगे अनेक जीवों की अपेक्षा। **यदि मुनिराज उपशमक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्ती हैं तो उन्हें द्वितीयोपशम सम्यक्त्व और क्षायिक सम्यक्त्व- इन दोनों में से कोई एक सम्यक्त्व रहता है।** यह एक जीव की अपेक्षा बात करी। अब कह रहे हैं **यदि मुनिराज क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्ती हैं तो उन्हें नियम से क्षायिक सम्यक्त्व ही रहता है।** अब आगे, अभी फिर पुस्तकें बंद करनी पड़ेगी भैया क्योंकि अभी हम गमनागमन की बात करेंगे, काल अपेक्षा बात करेंगे। बंद हो गयी पुस्तकें ? बहुत अच्छा।

पहले में पहले हम गमनागमन की बात सोचेंगे। कौनसे गुणस्थान की बात चल रही है सुरेशभाई ? *श्रोता: दसवें।* दसवें। दसवें का नाम क्या है साहब ? *श्रोता: सूक्ष्मसाम्पराय।* सूक्ष्मसाम्पराय। सूक्ष्मसाम्पराय में आगमन कहां-कहां से होगा ? दिलीपभाई आप बता सकेंगे ? *श्रोता: ग्यारह में से।* ग्यारह में से। इसमें कौनसी कंडिशन चाहिये ? अरे वाह रे वाह, वाह क्या हुआ आज किसीने चाय नही पी क्या ? सब लोग एकदम बेहोश हुये ऐसे हो गये हो। या अधिक पी है क्या ? क्या हैं क्या ? अधिक पी ली है चलो, सब लोग गलत उत्तर दे रहे हैं। सब होशियार लोग ऐसा करेंगे तो हम कहां जायेंगे ? क्या कहा ? अरे उपशमश्रेणीवाला जीव होना चाहिये।

ग्यारहवें में से दसवें में आयेगा और कहां- कहां से आयेगा ? हां बोलो, बोलो, *श्रोता: नौवें में से दसवें में आयेगा।* नौवें में से दसवें में आयेंगे। उसमें कौनसा आयेगा ? उपशमक आयेगा और क्षपक भी आयेगा। बराबर और ? *श्रोता: मरण की अपेक्षा से एक समय में चौथे गुणस्थान में जायेगा।* यानी वह आप मार भी डाल रहे हैं उनको, चलो। तो मरने के उपरांत वह चौथे गुणस्थान में जायेगा। वह गमन में आयेगा। अभी हम आगमन देख रहे हैं। गमन की अपेक्षा से हम देखेंगे तो वह बात आयेगी। तो गमन यानी कहां-कहां जायेंगे ? दसवें गुणस्थान से कहां-कहां जायेंगे ? आप बतायेंगी ? दसवें में से कहां-कहां जायेंगे ? जरा जोर से बोलना। *श्रोता: दसवें में से नौवें में और*

ग्यारहवें में जायेंगे। नौवें में और ग्यारहवें में जायेंगे। क्या यह सही बता रहे हैं ? और कुछ बाकी रह गया ? *श्रोता: उपशमश्रेणीवाला दसवें में से ग्यारहवें में जायेगे और क्षपकश्रेणीवाला सीधा बारहवें में जायेगा।* क्यों सही बात है यह उनकी ? दसवां गुणस्थान है न, दोनों श्रेणियों में आता है। तो दसवां जो क्षपकश्रेणीवाला है वह बारहवें में जायेगा कि नहीं ? ख्याल में आया ?

कोई बात नहीं। यह देखो हम सुभाषभाई हमारे होशंगाबादवाले उनसे बात कर रहा हूं। देखो यह करणानुयोग पढ़ते हैं न तो हमें सर्वांगीण विचार करने की आदत हो जाती है। हमारे पर कोई संकट आये, घर में कोई झगड़ा हो जाये, पड़ोसी के साथ कोई खिट-पिट हो जाये तो हम तुरंत ऐसा सोचते हैं कि क्यों ऐसा हुआ ? उसकी यह गलती है। अरे तेरी भी तो कुछ गलती हो सकती है कि नहीं ? तो हमें सर्व तरफ से सोचने की आदत पड़ती है। अभी हमने देखा कि दसवें से कहां-कहां गमन करेगा ? हमने अभी तक उपशमश्रेणी की अपेक्षा ही विचार किया था। बहनजी ने तुरंत उत्तर दिया कि जो क्षपकवाला होगा, क्षपकश्रेणी चढ़ेगा; वह दसवें से बारहवें में जायेगा। वह क्षपकश्रेणीवाला दसवें गुणस्थान में मरेगा तो किसमें पांचवें में जायेगा या छठे में ? हां, बोलो, बोलो या चौथे में जायेगा ? जोर से बोलना। *श्रोता: चौथे में जायेगा।* चौथे में जायेगा। क्या बहनजी सही कहती हैं ? क्षपकश्रेणीवाला, *श्रोता: उसका मरण ही नहीं होगा।* देखो भाई आपका ध्यान अटेंशन बराबर होगा तो उत्तर मिलेगा।

हम थोड़े ही ऐसा मामूली प्रश्न पूछेंगे कि आप फटाफट उत्तर देवें ? आपको सजग रहना चाहिये। क्या कहते हैं ? अरे भाईसाहब आपको हम सिखा रहे और आपको मालूम नहीं है कि क्षायिक सम्यक्त्वी जो क्षपकश्रेणी चढ़ रहा है उसका मरण ही नहीं होगा। तो उसका क्या होगा ? निर्वाण होगा, यह ध्यान रखना। यह हम निर्वाण महोत्सव डिक्लेअर करते हैं और सेलिब्रेट करते हैं। वह निर्वाण उसको कहते हैं कि दुबारा उसका जन्म नहीं होनेवाला है। बाकी जीवों का तो मरण होता है। ख्याल में आया ? अब आगे बढ़ते हैं, हमने देखा दसवें गुणस्थान से क्या कहा ? उपशमक होगा वह दसवें से ग्यारहवें में ऊपर जायेगा और नीचे नौवें में जायेगा और अगर उस अवस्था में मतलब दसवें में रहते हुये उस जीव का मरण हो जाये तो वह चौथे में ही जायेगा और क्षपकश्रेणीवाला होगा तो दसवें से बारहवें में जायेगा। फिर बिना कहे किताबें खोल दी आपने बहुत अच्छा। अभी बहुत बाकी है न बिना देखे देखने का। तो

क्या कह रहे हैं ? अभी आगमन भी हमने देखा था कि नहीं ? कहां-कहां से आगमन होगा ? दसवें में आगमन कहां से होगा ? नौवें से और ग्यारहवें से। नौवें के लिये दोनों श्रेणियों में चलेगा लेकिन क्षपकश्रेणी में ऊपर से कहीं से भी आगमन नहीं है।

अब मुझे पूछना है काल अपेक्षा अगर हम विचार करते हैं तो दसवें गुणस्थान का जघन्य काल कितना होगा, अंजूबहन आप बतायेंगी ? *श्रोता: एक समय।* एक समय। कैसे ? *श्रोता: ग्यारहवें गुणस्थान से जीव नीचे उतरेगा तो दसवें गुणस्थान में एक समय में मरण हो सकता है।* अच्छा बराबर, आपका कहना है उपशमश्रेणी में ग्यारहवें गुणस्थान से जीव उतरेगा, दसवें में आते ही उसका एक समय में मरण होगा। तो मुझे ऐसा पूछना है कोई नौवें से उपशमश्रेणीवाला दसवें में जायेगा और एक समय में ? उसके भी होगा न ? हां, होता है। जो उपशमश्रेणीवाला जीव है न, वह नौवें से दसवें में जायेगा तो एक समय में मरण होगा। हां होगा, उतरने की गरज नहीं है उसको। सिर्फ आठवें गुणस्थान में ही पहले समय में मरण नहीं होता है। क्योंकि हमने देखा पहले भाग में मरण नहीं होता है। तो ऊपर से जब नीचे आता है ग्यारह, दस, नौ, आठ ख़तम यानी उसका मरण आ गया ऐसा होता है। नौवें में, दसवें में, ग्यारहवें में ऐसी आवश्यकता नहीं है। वहां चढ़ते समय भी उसका मरण हो सकता है।

हमने क्या देखा कि जघन्य काल क्या है ? सिर्फ एक समय है और उत्कृष्ट काल कितना होगा सुभाषजी ? दसवें गुणस्थान का उत्कृष्ट काल ? आप बता रहे हैं ? बोलो-बोलो। सुभाषभाई आप बताइये। *श्रोता: यथायोग्य अंतर्मुहूर्त।* हां यथायोग्य अंतर्मुहूर्त। अंतर्मुहूर्त ही है लेकिन उस अंतर्मुहूर्त को कहीं पर डिफाइन नहीं किया है। लेकिन जो चौदहवें गुणस्थानवर्ती जीव है न वे भी एक अंतर्मुहूर्त रहते हैं। लेकिन उनका अंतर्मुहूर्त कितना है ? वह डेफिनेटलि डिफाइन किया है। कहते हैं अ इ उ ऋ ऌ, ये जो पांच ह्रस्व स्वर हैं, यह तो आपको समझने के लिये मैंने आहिस्ते-आहिस्ते बोले, लेकिन आपको जितना फ़ास्ट बोलने में आता है बोलो, उसमें जितना समय लगे वह अंतर्मुहूर्त है। उतने समय तक चौदहवां गुणस्थान रहता है और उसमें भी असंख्यात समय हैं।

देखो अभी क्या देखते हैं ? हम आते हैं पेज नंबर २०८ पर, देखो, यहां कह रहे हैं **काल अपेक्षा विचार** करते हैं। **यदि कोई महामुनीश्वर उपशमक सूक्ष्मसाम्पराय**

गुणस्थान में कम से कम रहेंगे तो मात्र एक समय रह सकते हैं; वह भी मरण की अपेक्षा। जैसे कोई महामुनिराज उपशांतमोह गुणस्थान से नीचे उतरते समय सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में एक समय रहें और तत्काल मनुष्यायु का क्षय हो जाय तो मरण की अपेक्षा सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान का जघन्य काल एक समय हो सकता है। दूसरा पॉइंट- **उपशमक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान से ऊपर चढ़ते समय कोई मुनिराज सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में मात्र एक समय आरूढ़ हुये और तत्काल मनुष्यायु का क्षय हो जाय तो भी सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान का जघन्य काल एक समय घटित हो सकता है।** यानी हमने दोनों तरफ से देखा न बहन, कि चढ़ते समय भी और उतरते समय भी।

अब कहते हैं **उत्कृष्ट काल** कितना है साहब ? तो कह रहे हैं **सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान का उत्कृष्ट काल यथायोग्य अंतर्मुहूर्त है।** यह यथायोग्य क्यों कह रहे हैं ? यह केवली के ज्ञान में आया है लेकिन कोई शास्त्र में उसका उल्लेख हमें नहीं मिलता है तो हम कहेंगे यथायोग्य अंतर्मुहूर्त। क्योंकि असंख्यात समयों का जो कुछ परिमाण है वह हमारे-तुम्हारे मति-श्रुतज्ञानी जीवों के ज्ञान का विषय नहीं है। इसलिये वहां यही बात बतायी है कि कितना है ? तो एक अंतर्मुहूर्त। कौनसा ? यथायोग्य, **यदि उपशमक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्ती मुनिराज अधिक से अधिक इस दसवें गुणस्थान में रहें तो यथायोग्य मात्र एक अंतर्मुहूर्त रह सकते हैं। क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान का उत्कृष्ट काल तो यथायोग्य एक ही अंतर्मुहूर्त है। क्षपक का जघन्य काल या मध्यम काल होता ही नहीं।** क्योंकि क्षपक का जो एक अंतर्मुहूर्त है न, उसमें कोई व्हेरिएशन नहीं है। अब मध्यम काल आप समझ जायेंगे यह हम जानते हैं।

अभी **गमनागमन की अपेक्षा विचार** करते हैं। **गमन** गमन यानी क्या कहा ? कि दसवें से कौन-कौनसे ऊपर के और कौन-कौनसे नीचे के गुणस्थान में जायेंगे। यानी वह जीव जायेगा उसकी बात हम कर रहे हैं। यहां पहले में पहले क्या बताया ? उपशमक सूक्ष्मसाम्पराय । **उपशमक** का अर्थ क्या है ? जो उपशमश्रेणी चढ़ रहे हैं ऐसे जो जीव हैं **सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्ती**। वे **ऊपर की ओर उपशांतमोह गुणस्थान में ही गमन करते** हैं। यह उपशांतमोह गुणस्थान का नंबर कितना है सुमनबहन ? *श्रोता: ग्यारह।* हां, ग्यारह। बहुत अच्छा। आपने बारह बोला है लेकिन मैंने ग्यारह बोल दिया। हां, कोई बात नहीं। मैं बहरा हूं लेकिन इतना नहीं। क्या कहते हैं ?

उपशमश्रेणी से उतरते समय सूक्ष्मसाम्पराय मुनिराज ही दसवें गुणस्थान से नीचे नौवें अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में गमन करते हैं। यहां नंबर भी दिया और नाम भी दिया तो हमें प्रश्न ही नहीं पूछना है। अब आगे बढ़ते हैं **यदि उपशमक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्ती मुनिराज का मरण हो जाये तो विग्रहगति के समय उनका चौथे गुणस्थान में ही गमन होता है।** कह रहे हैं **क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्ती महामुनिराज क्षीणमोह** यानी बारहवें **गुणस्थान में ही गमन करते हैं।**

अब नीचे आयेंगे हम। **आगमन** की तरफ, पहला पॉइंट- **उपशमक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में आगमन नीचे के उपशमक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान से ही होता है।** यानी नौवें से दसवें में; वह भी कौन चाहिये ? दोनों होंगे लेकिन यहां उपशमक की बात की है। बहुत अच्छा और **श्रेणी उतरते समय ऊपर के उपशांतमोह गुणस्थान से भी सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में आगमन होता है।** यानी आगमन कहां-कहां से ? चढ़ने के लिये नौवें से दसवें में और उतरते समय ग्यारहवें से दसवें में। अब क्या बता रहे हैं ? **क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में आगमन मात्र क्षपक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान से ही होता है।**

श्रोता: ... मैं समझ गया, आपका ऐसा प्रश्न है कि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के साथ जो उपशमश्रेणी चढ़े और जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशमश्रेणी चढ़े तो दोनों का रास्ता एक ही है ? क्योंकि वे दोनों ही चारित्रमोहनीय की २१ प्रकृतियां हैं उनको क्रम से उपशमाते-उपशमाते ऊपर जा रहे हैं ऊपर यानी ऊपर के गुणस्थान में। क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव जो क्षपकश्रेणी चढ़ेंगे, वे २१ प्रकृतियों को क्रम से नष्ट करते-करते, उनका क्षय करते-करते ऊपर जायेंगे। उपशमक की सत्ता में अभी कर्म पड़े हैं और क्षपक की सत्ता में कर्म नष्ट होते-होते वे ऊपर जा रहे हैं इतना अंतर है। वह द्वितीयोपशम सम्यक्त्वी है या क्षायिक सम्यक्त्वी है इसलिये उनके लिये दूसरा अलग रास्ता है ऐसा नहीं है। उपशमश्रेणी यानी एक ही रास्ता। कौनसा सम्यक्त्व है ? उसका यहां कोई महत्व नहीं है। बहुत अच्छा। ऐसा आप टू द पॉइंट और कनेक्टिंग टू द सब्जेक्ट ऐसा प्रश्न पूछो तो कोई तकलीफ नहीं।

अब यहां तीसरा पॉइंट देखते हैं। क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में आगमन मात्र क्षपक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान से होता है यानी नौवें गुणस्थान से दसवें में। अब

विशेष अपेक्षा विचार करते हैं। यहां एक बात बता रहे हैं कि **अनंतगुणी विशुद्धि आदि आवश्यक कार्य अष्टम गुणस्थानवत् इस सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में भी सतत होते रहते हैं।** देखो अभी जो हमने ८ आवश्यक देखे थे न - चार और चार। ये सातवें में चार, आठवें में आठ, नौवें में आठ और अभी दसवें में भी वही कार्य चल रहा है। तो आपको लगता है इतना स्टॉक है हमारे पास ? असंख्यातगुणा, असंख्यातगुणा, असंख्यातगुणा, हर समय असंख्यातगुणा खिर रहा है फिर भी ? अरे ! कितना है ? भैया तू क्यों चिंता करता है ? तू अनादि से एक समय में अनंत पुद्गल परमाणुओं को ग्रहण कर रहा है और अनंत परमाणुओं को छोड़ रहा है। फिर भी सत्ता में अनंतानंत कर्मपरमाणु पड़े हैं जिसको डेढ़ गुणहानि गुणित समयप्रबद्ध कहते हैं।

अब उसके भी डिटेल में जायेंगे तो और भी उसका खुलासा होगा। लेकिन अभी डेढ़ गुणहानि गुणित समयप्रबद्ध, इतना स्टॉक हर जीव के पास है। अभी वह डेढ़ गुणहानि वगैरह क्या है वह आप जरा शांति रखना। कभी अगले शिबिर में उसकी भी बात आयेगी। हमें ऐसा लगता है यार इतना असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा अभी इतनी बार हो गया, इतनी बार, कुछ ख़तम तो होता है कि नहीं ? नहीं ! क्योंकि तूने हर समय अनंत, अनंत, अनंत, अनंत हर समय तो सत्ता में इतना अनंत है कि वह असंख्यातगुणा चला जाये तो भी कुछ नहीं उसके सामने। ख्याल में आया ? अपने को तो लगता है हम तो सिकंदर बादशाह हैं, कब का उड़ा देंगे। नहीं भैया जल्दी मत कर।

अभी तुझे मुनिव्रत लेना है और मुनिव्रत लेते हुये ऐसा पुरुषार्थ करना है कि तू क्षपकश्रेणी चढ़ जाये। उसके लिये तुझे क्षायिक सम्यग्दर्शन चाहिये और क्षायिक सम्यग्दर्शन होने के लिये निमित्तरूप से केवली भगवान की या श्रुतकेवली की उपस्थिति चाहिये। यानी उसके सान्निध्य में होता है। वे कुछ नहीं करते; करता तो सब कुछ जीव स्वयं ही लेकिन निमित्तरूप से वे वहां हाजिर होने चाहिये। इसलिये कहते हैं इस पंचमकाल में भरतक्षेत्र में से कोई मोक्ष नहीं जाता है। तो हमें गुस्सा आता है क्यों नहीं जाता है ? यह हमारा गुस्सा जो है न, वह मारीचि से चलता आया है। क्यों ? यहां तो कह रहे हैं भाई तुझे गुस्सा करने की जरूरत नहीं है। वस्तु का स्वरूप ही ऐसा है कि क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति के लिये श्रुतकेवली या केवली के पादमूल में होती है यानी इन हिज प्रेझेन्स क्षायिक सम्यक्त्व होता है।

देखो भाई आप जरा सोचना हो ! मैं कोई अन्य बात नहीं बताना चाहता हूं, यह उदाहरण दे रहा हूं। अभी हम यहां आ गये, चार दिन से यहां सुन रहे हैं, तो कई लोगों की ऐसी हालत है कि आज की तारीख कौनसी है ? वार कौनसा है ? याद नहीं है। अभी जो पेपर पढ़ते हैं उनकी बात छोड़ो। क्यों अरविंदभाई ? हां, लेकिन हमें पता ही नहीं लगता है कौनसा दिन है। मंदिर में जाते हैं तो वहां लिखते हैं आज प्रथमा है, आज चतुर्दशी है। अच्छा-अच्छा, वह भी पता नहीं लगे। क्यों ? हम इस शिबिर के वातावरण में ऐसे घुल-मिल गये हैं कब ६ घंटे निकल जाते हैं इसका पता भी नहीं लगता है, ऐसे केवली के सान्निध्य में रहते हुये उस जीव के परिणाम कितने उत्कृष्ट होंगे ! होंगे तो अपने से, केवली के कारण नहीं। केवली मात्र निमित्त हैं और निमित्त से कार्य होता नहीं है। यह बात हमें ध्यान में रखनी है। लेकिन निमित्त की अपेक्षा से कथन करेंगे तो कहेंगे केवली या श्रुतकेवली के पादमूल में ही क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है। यहां कहते हैं जैनदर्शन ही ऐसा विशेष दर्शन है, वह बराबर समझने में थोड़ासा समय लगता है और उस थोड़ासा समय लगने के लिये अपने को काफी समय देना पड़ता है।

अब कह रहे हैं विशेष अपेक्षा विचार करते-करते दूसरा पॉइंट देखेंगे- **दसवें गुणस्थान के नाम के अनुसार ही दसवें में सूक्ष्मलोभ कर्म का उदय रहता है और उदय के निमित्त से अबुद्धिपूर्वक सूक्ष्मलोभ परिणाम भी होता रहता है; तथापि सूक्ष्मलोभरूप चारित्रमोहनीय विभाव परिणाम से** चारित्रमोहनीय क्रोध, मान, माया, लोभ अथवा हास्यादि नौ नोकषाय में से किसीका भी **नवीन बंध नहीं होता।** यह बहुत ही इम्पॉर्टंट पॉइंट है। लेकिन मैं चाहता था कि उसको न लूं लेकिन गलती से पढ़ गया। चलो बतायेंगे, यहां यह बताते हैं कि दसवें गुणस्थान में सूक्ष्मलोभ का उदय है लेकिन उसके कारण मोहनीय कर्म नहीं बंधता है। अन्य ज्ञानावरण, दर्शनावरण आदि बंधेंगे। यहां इस दसवें गुणस्थान में आयुकर्म और मोहनीय कर्म छोड़कर अन्य छह कर्मों का बंध होता है।

मोहनीय कर्म के बारे में हमने सामान्य से क्या देखा था ? जहां क्रोध, मान, माया, लोभ का उदय होवे तो वहां चारित्रमोहनीय कर्म बंधता है। यहां चारित्रमोहनीय कर्म का उदय है, कौनसा ? सूक्ष्मलोभ का फिर भी दुबारा मोहनीय कर्म नहीं बंधता है। यह यहां की खास विशेषता है। अगर वह बंधे ऐसा हम फॉर द टाइम बीइंग मान लेते हैं तो क्या गड़बड़ी हो जायेगी ? यह सूक्ष्मलोभ का उदय तो चालू ही रहेगा और

इस जीव को नया-नया, नया-नया बंध होगा तो वह कभी भी वीतरागी हो ही नहीं सकता। अभी यह समझाने के लिये तो बहुत क्या बोलते हैं ? एक्झॅम्पल्स हैं, आगम के अनुसार रीझनिंग है वह कभी फिर देखेंगे। अभी तो फ़िलहाल हम आगे बढ़ेंगे।

अभी हम पेज नंबर २११ पर आते हैं, दूसरा नया पॅरेग्राफ जो है- इसलिये दसवें गुणस्थान में अत्यन्त सूक्ष्मरूप लोभ परिणाम होने से किसी भी प्रकार के नये कषाय और नोकषाय मोहकर्म का बंध नहीं होता। तीसरा पॉइंट- **सूक्ष्मलोभ परिणाम से मोहकर्म का बंध तो नहीं होता है; तथापि इसी अबुद्धिपूर्वक सूक्ष्मलोभ परिणाम से ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय- इन तीनों घातिकर्मों का अंतर्मुहूर्त प्रमाण स्थिति का अल्प अनुभाग सहित तथा सातावेदनीय आदि का अल्प स्थिति का उत्कृष्ट अनुभाग सहित बंध तो होता ही है।** सातावेदनीय आदि में कौन-कौन आयेगा ? तो कहते हैं उच्चगोत्र और नामकर्म के यशस्कीर्ति नामक जो डिव्हिजन हैं, उसके क्या बोलते हैं ? पेटा भेद हैं यानी सब-डिव्हिजन जिसको हम कहेंगे। यह आदि में इसको लेना- सातावेदनीय, उच्चगोत्र और यशस्कीर्ति। इनका बंध यहां दसवें गुणस्थान में होता है।

देखो यह मोहनीय भी घातिकर्म है और मोहनीय के कारण आयु को छोड़कर निरंतर सात कर्मों का बंध होता है। लेकिन यह जो दसवां गुणस्थान है इसमें अभी इस जीव को मोहनीय के सूक्ष्मलोभ का वहां उदय है। फिर भी मोहनीय कर्म नहीं बंधता है। सातवें से आगे आयुकर्म तो बंधता ही नहीं। देखो अभी क्या कह रहे हैं ? **देखो, परिणाम और कर्म बंध की विचित्रता ! क्षपक- दसवें गुणस्थानवर्ती महामुनिराज** मात्र एक ही **यथायोग्य अंतर्मुहूर्त काल व्यतीत होते ही बारहवें क्षीणमोह गुणस्थान को नियम से प्राप्त करते हैं। बारहवें गुणस्थान के अंतिम समय में ही इन तीनों घातिकर्मों का क्षय भी करनेवाले हैं; क्योंकि वे अंतर्मुहूर्त में ही सर्वज्ञ भगवान होनेवाले हैं। तथापि जब तक दसवें गुणस्थान में हैं, तब तक तीनों घातिकर्मों का बंध होता ही रहता है।**

देखो, यह सूक्ष्मलोभ है तो ज्ञानावरणादि घातिकर्म तो बंधते हैं और हम कितने तीव्र कषाय करते हैं तो कितना लंबा-लंबा बंध होता होगा ! यह ज्ञानावरण कर्म जो है उसका उत्कृष्ट बंध कितने लंबे काल का किसी जीव को हो सकता है ? कविताबहन

आप जानती हैं ? नहीं ! आप ? नहीं ! बहन आप ? बोलो हाथ उठाया न आपने ? जोर से बोलना। *श्रोता: तीस कोड़ाकोड़ी सागर।* हां, तीस कोड़ाकोड़ी सागर। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अब वेदनीय को भी उसमें लेना और अंतराय बहुत अच्छा। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय और अंतराय इन चारों का ही अगर उत्कृष्ट बंध होवे तो तीस कोड़ाकोड़ी सागर का होता है। मोहनीय कर्म में दो डिव्हिजन्स हैं- एक दर्शनमोहनीय कर्म है, उसका ७० कोड़ाकोड़ी सागर बंध होगा और चारित्रमोहनीय है उसका ४० कोड़ाकोड़ी सागर होगा। नाम का ? *श्रोता: २० कोड़ाकोड़ी सागर।* हां, किसने बताया ? आप ही ने बताया, बहुत अच्छा। नाम और गोत्र का २० कोड़ाकोड़ी सागर होगा।

आयु का, अभी आप कोई नहीं बोलना, हम पूछेंगे हमारे भाइयों को। आयुकर्म का अधिक से अधिक बंध कितना बड़ा होगा ? प्रमोदजी आपने कभी बांधा है कि नहीं, आयुकर्म अधिक से अधिक ? कितने बोले ? ९ सागर ? *श्रोता: ३३ सागर।* अरे आप भूल गये। हां, देखो, सातवें नरक की उत्कृष्ट आयु ३३ सागर की है और यह जीव; मैं इधर मेरी तरफ हाथ कर रहा हूं, आपकी तरफ नहीं कर रहा हूं; अनंत बार सातवीं नरक होकर आया है। सुरेशभाई घबराना मत। अनंत बार और हम भूल गये कि हम वहां होकर आये हैं और हमारी आयु इतनी थी। यहां तो कोई २०-२५ साल हो गये तो हॅप्पी बर्थडे मनाते हैं हम। ७५ साल का हो गया तो क्या वह कौनसी ? डायमंड जुबिली। डायमंड क्या ? बर्थडे, अरे ३३ सागर कहां ? तो वह आयु का उत्कृष्ट बंध है।

अभी कौनसी बात चल रही है अपनी ? हां दसवें गुणस्थान में यह तीन घातिकर्मों के बंध की बात है। अब कहते हैं **साम्पराय से बंध होने का यह अंतिम गुणस्थान है।** यानी इसके आगे बंध होगा नहीं, तीनों का; अभी जो ऊपर बताये। **क्षीणमोह गुणस्थान तथा इसके आगे के गुणस्थानों में कषायजन्य बंध नहीं होता है; क्योंकि बंध का कारण मोहभाव का पूर्ण रीति से नाश हो गया है।** अभी मुझे एक बात पूछनी है कि जो आपको सबको याद होनी चाहिये। देखो, हमने बंध के चार प्रकार देखे थे। याद है भाईसाहब ? बोलो-बोलो प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध। तो इसमें से कषायों के निमित्त से कौनसा बंध होता है ? *श्रोता: प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध।* हां-हां, क्या ये सही बता रहे हैं ? सुना आपने ? नहीं सुना, गड़बड़ हो गयी। बोलो जोर से, देखा कैसा आदमी डरपोक है। मास्टर का नाम लिया तो डरकर फटाक से बोलता है नहीं-नहीं, यह बात सही है। क्या बताया आपने ? कषायों के

निमित्त से स्थितिबंध और अनुभागबंध होता है और योग के निमित्त से प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध होता है। यह जब हमने बताया था तो आपको लगता है काहे को टाइमपास कर रहा है। हमको सब मालूम है। तो काहे को ये बात बता रहे हैं ?

देखो, अभी क्या बोल रहे हैं ? यह दसवां गुणस्थान है तो वहां बंध का कारण मोहनीय का उदय तो है; लेकिन दसवें के बाद ग्यारहवें में या बारहवें में मोह का उदय भी नहीं और क्षपकश्रेणीवालों के सत्ता भी नहीं। क्या कह रहे है- उनके बंध होगा कि नहीं ? तो कहते हैं हां होगा-होगा लेकिन वह बंध कैसा होगा ? कहते हैं वह अभी शास्त्र में बहुत अच्छा उदाहरण दिया है। यह कषाय नहीं है न, तो कषाय के कारण उसमें जो चिकनाहट है; उसके कारण स्थितिबंध होता है यानी अधिक काल तक सत्ता में रहता है और अनुभागबंध के कारण उसका फल भी देता है। लेकिन यहां तो कह रहे है कि यहां कषाय तो ख़तम हो गये। वहां क्या हो रहा है ? बंध तो हो रहा है, वहां वेदनीयकर्म का बंध हो रहा है। लेकिन वह कैसा है ? तो एक समय में आया और निकल गया। यानी जैसे हम लोग यहां आये; कम से कम ५ दिन रहे। लेकिन आप लोग कायम रहते हैं न इधर। लेकिन ईर्यापथास्रव यानी जाने के लिये ही आये हैं, उनकी स्थिति नहीं है। एक समय से अधिक रहेंगे नहीं। जैसे दीवार है, दीवार के ऊपर आप सूखी रेती डालो वह कितने टाइम टिकेगी ? जैसे डाली, नीचे गिर गयी। ऐसा ग्यारहवें, बारहवें और तेरहवें में वेदनीयकर्म का बंध है, वह भी सातावेदनीय का बंध है। सातावेदनीय आया और गया, फल ही नहीं देगा। क्यों ? यहां कषाय नहीं है इसलिये स्थिति और अनुभाग नहीं बंधते। ख्याल में आया ?

देखो-देखो, यहां क्या कह रहे हैं ? यह जो पॉइंट हमने देखा था बंध होने का यह अंतिम गुणस्थान है। कौनसा ? दसवां। क्षीणमोह गुणस्थान तथा इसके आगे के गुणस्थानों में बंध नहीं होता; क्योंकि मोहभाव का पूर्ण रीति से नाश हो गया है। यह स्थिति और अनुभाग की अपेक्षा से कहा है लेकिन आगे यह ईर्यापथास्रव की बात आनेवाली है। यहां साम्पराय शब्द अंत्य दीपक है। साम्पराय का अर्थ है कषाय। **अतः यह सूक्ष्मसाम्पराय नामक दसवें गुणस्थानवाले साम्पराय अर्थात् सूक्ष्मकषाय सहित ही हैं। मिथ्यात्व गुणस्थान से लेकर सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्ती सर्व जीव नियम से कषाय सहित हैं। इसे समझने के लिये प्रथम गुणस्थान से सर्व दसों गुणस्थान को निम्नानुसार लिख सकते हैं।** क्या कहते हैं ? **बादरसाम्पराय**

मिथ्यात्व, बादरसाम्पराय सासादन सम्यक्त्व, बादरसाम्पराय मिश्र, बादरसाम्पराय अविरतसम्यक्त्व आदि।

इन छह कर्मों का जघन्य स्थितिबंध इस दसवें गुणस्थान में होता है। *श्रोता: अंतर्मुहूर्त।* हां, वह आपने कहा बराबर है। अच्छा-अच्छा, उज्ज्वला डिटेल में जानती हैं न, तो उन्होंने यह बताया कि सातावेदनीय का जघन्य स्थितिबंध बारह मुहूर्त प्रमाण है, अंतर्मुहूर्त नहीं। दूसरा कौन है ? नाम और गोत्र का आठ मुहूर्त है; और बाकी जो बताये हैं कौनसे-कौनसे ? तीन घातिकर्म- ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अंतराय उनका अंतर्मुहूर्त है। ठीक है। हां साहब ? *श्रोता: सातावेदनीय ?* सातावेदनीय बारह मुहूर्त, अंतर्मुहूर्त नहीं, बारह मुहूर्त; नाम और गोत्र आठ मुहूर्त - यह उनका मिनिमम बंध होता है उसका काल बताया। जैसे हमने मॅक्झिमम देखा था न, ७० कोड़ाकोड़ी, ४० कोड़ाकोड़ी, ३० कोड़ाकोड़ी, २० कोड़ाकोड़ी। वैसे इनका जघन्य स्थितिबंध कितना होगा ? तो वह बात आपने बतायी। बहुत अच्छा।

देखो अभी हम पेज नंबर २१३ पर आयेंगे। हम जानते हैं यह अभी उपशांतमोह है न, उपशांत यानी उन्होंने मोहनीय कर्म को उपशमाया है वह ग्यारहवां गुणस्थान है। यह उपशमश्रेणी का अंतिम गुणस्थान है। अब यह ९७ नंबर का प्रश्न हम पढ़ेंगे। **आठों कर्मों की सत्ता होने पर और सातों कर्मों का उदय होते हुये उपशांतमोही महामुनिराज पूर्ण सुखी कैसे हो सकते हैं ?** क्योंकि ग्यारहवें गुणस्थान में मोहनीय कर्म उदय में ही नहीं आ रहे हैं। सत्ता में पड़े रहे तो क्या हो गया ? सत्ता में भले पड़े हैं लेकिन सत्ता में पड़ा हुआ कर्म हमें कोई भी फल नहीं देता। इसकी बात हमने पहले भी की थी। जैसे हमने देखा था कि पार्श्वनाथ मुनिराज थे, उनकी सत्ता में तीर्थंकर प्रकृति थी और उनके ऊपर इतना बड़ा उपसर्ग हुआ। तो उस सत्ता का क्या फायदा ? हम फायदे में ही बात गिनते हैं न ! वह सत्ता में हो तो भी उदय में आये बिना उसका कुछ फल मिलता नहीं।

यहां प्रश्न यह है कि आठों कर्मों की सत्ता है और सात कर्मों का उदय है। यह उदय में कौनसा ? एक मोहनीय छोड़कर अन्य कर्मों का वहां उदय है। फिर भी आप मुनिराजों को पूर्ण सुखी क्यों कह रहे हैं ? क्योंकि हमने देखा था कि जो वीतरागी गुणस्थान के नाम हमने देखे थे। पूर्ण वीतरागी जो हैं वे कौन-कौनसे गुणस्थान हैं ?

श्रोता: ग्यारहवां, बारहवां, तेरहवां और चौदहवां। हां, ग्यारहवां, बारहवां, तेरहवां और चौदहवां। वहां तो पूर्ण सुखी आप बता रहे हैं। अभी तो उनकी सत्ता में इतने कर्म हैं, उदय में भी सात आ रहे हैं। उसका उत्तर दे रहे हैं, **दुःख का मूल कारण एक मोह परिणाम ही है। उपशांतमोह गुणस्थानवर्ती महामुनिराज को मोह का पूर्ण उपशम हो गया है, उनके रंचमात्र मोह परिणाम नहीं रहा है। अतः वे पूर्ण सुखी हैं।** अभी देखो यह जो बता रहे हैं न, इसका अर्थ क्या है कि कुछ आंशिक मोहनीय कर्म का नाश हो जाये या वह अनुदय हो जाये; नाश को छोड़ो, अनुदय रहे तो वह जीव आंशिक सुखी हो सकता है कि नहीं ? उसके अतीन्द्रिय आनंद का वेदन है कि नहीं ? और वह सम्यक्त्वी है कि नहीं ? क्योंकि जो सम्यक्त्वी होता है उसके तो अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ का अनुदय है।

पन्नालालजी यह बहुतों का ऐसा आर्ग्युमेंट है न कि चौथे गुणस्थानवर्ती को सम्यक्त्व ही नहीं होता है। उसके चारित्र ही नहीं है। अरे भाई एक कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक जो अनाकुलता है उनके पास; जो सुख का वेदन चल रहा है वह कैसा ? स्वरूप में स्थिरता है इसी के कारण चारित्र वहां सम्यक् रूप से परिणमित हो रहा है। यहां क्या कह रहे हैं ? देखो, इस गुणस्थान में उनके मोह का पूर्ण उपशम हो गया है। उनके रंचमात्र भी मोह का परिणाम नहीं रहा। किसके ? ग्यारहवें की बात कर रहे हैं। अतः वे पूर्ण सुखी हैं। **सत्ता में स्थित कर्मों का वर्तमानकालीन भावों से कुछ संबंध नहीं रहता।** यानी सत्ता में भले न कोई कर्म हों, उसके कारण वर्तमान में जो परिणाम हो रहे हैं उसमें वे निमित्त नहीं हैं। अभी बाकी की बात हम बाद में देखेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

२८. उपशांतमोह गुणस्थान, क्षीणमोह गुणस्थान

हम अभी उपशांतमोह गुणस्थान से छूट गये न ? नहीं अभी उपशांतमोह गुणस्थान में ही आये हैं। देखो, हम पेज नंबर २१४ पर आये हैं यानी मैं तो खुश ही हो गया था कि क्षीणमोह में आये हैं हम, लेकिन अभी भी उपशांतमोह में हैं हम। चलो-चलो, देखो, यहां परिभाषा दी गयी है वहां हम देखेंगे। **निर्मली फल से सहित स्वच्छ जल के समान** यहां क्या कहना चाहते हैं ? देखते हैं हम। आप भी जरा रिपीट करें तो बहुत बढ़िया रहेगा। मैं फिर से दोहराऊंगा।

निर्मली फल से सहित स्वच्छ जल के समान, *श्रोता: निर्मली फल से सहित स्वच्छ जल के समान।* **अथवा,** *श्रोता: अथवा।* **शरदकालीन सरोवर-जल के समान** *श्रोता: शरदकालीन सरोवर-जल के समान।* **सर्व मोहोपशमन के समय,** *श्रोता: सर्व मोहोपशमन के समय।* **व्यक्त होनेवाली पूर्ण वीतराग दशा को,** *श्रोता: व्यक्त होनेवाली पूर्ण वीतराग दशा को।* **उपशांतमोह गुणस्थान कहते हैं।** *श्रोता: उपशांतमोह गुणस्थान कहते हैं।* देखो यहां एक बात बतायी है कि पूर्ण वीतरागी दशा को उपशांतमोह गुणस्थान कहते हैं। देखो, यह अजब ऐसी बात है जैसे सिद्ध भगवान की परिपूर्ण निर्मल वीतरागी दशा है, ऐसी वीतरागी दशा ग्यारहवें गुणस्थानवर्ती जिसका नाम है उपशांतमोह गुणस्थान, ऐसे जीवों की है।

हमने पहले ही देखा था ११, १२, १३, १४ ये वीतरागियों के गुणस्थान हैं हमने डिव्हिजन की थी न पहले अलग-अलग से। यहां बता रहे हैं कि यह वीतराग दशा कब पैदा हुयी है ? तो कहते हैं कि सर्व मोहोपशमन के समय। यानी अभी कोई उदयरूप मोह बाकी रहा नहीं है। सर्व जो मोह था उसका क्या हुआ है ? उपशांत यानी उपशमन हुआ है। उसमें से अभी उदय में कोई नहीं है, लेकिन सत्ता में है। हां, इसलिये तो वह जीव उपशम का काल पूर्ण होते ही वहां से नीचे आता है। वह कैसा है ? व्यक्त दशा जो पूर्ण वीतराग दशा है वह कैसी है ? तो उसके लिये उन्होंने दो उदाहरण दिये हैं।

देखो, आपको मालूम होगा कि हमारे गांव में कहो या बम्बई में कहो जभी बारिश गिरती है तो पानी में थोड़ीसी मिट्टी भी आती है। हम क्या करते हैं ? भले छन्ना लगाये एक लगायें, दो लगायें फिर भी वहां उसका कुछ न कुछ अंश तो आता है। तो पानी के अंदर हम ॲलम, ॲलम समझते हैं आप ? फिटकरी अच्छा हां, गुजराती में

फिटकरी कहते हैं, वह डालते हैं या उसमें ऐसा घुमाते हैं। थोड़ी देर में क्या होता है ? वह सारा जो मिट्टीरूप मैल है वह नीचे दब जाता है और ऊपर एकदम स्वच्छ-स्वच्छ निर्मल पानी हो जाता है। इसलिये क्या कहते हैं ? देखो, निर्मली फल आजकल उसको कतक फल भी कहते हैं। हां जी ? गाथा में **कदकफलजुदजलं वा** ऐसा लिखा है।

क्या कहते हैं ? निर्मली फल के सहित स्वच्छ जल के समान - एक उपमा हुयी। दूसरी कहते हैं शरदकालीन सरोवर जल के समान। यह शरदकाल में क्या हैं ? ज्यादा हवा वगैरह नहीं होती तो पानी एकदम शांत-शांत रहता है। शरदकाल में जो चांद रात में उगेगा और जो चांदनी होगी उसका पूरा रिफ्लेक्शन उसमें दिखता है। वह कब पॉसिबल है ? जब वह पानी पूरा-पूरा निर्मल होता है। इसलिये उन दो उदाहरणों के द्वारा, यह किसके साथ कंपॅरिझन की है ? तो कह रहे हैं कि मोह का उपशम हुआ है उस समय जो व्यक्त वीतरागता है वह कैसी है ? पूर्ण वीतराग दशा है और उस गुणस्थान को उपशांतमोह गुणस्थान कहा है।

देखो, पृष्ठ २१५ पर देखते हैं। **परिभाषा में उपशांतमोही जीव के वीतरागी परिणाम को स्वच्छ जल की उपमा दी है। कतकफल (निर्मली नाम की वनस्पति का बीज जो मलिन जल को निर्मल बनाने के लिये उपयोग में लाया जाता है)** तो अभी कहते हैं कतकफल **से निर्मल किया हुआ जल अर्थात् जल तो निर्मल हुआ है; तथापि मल नीचे दबा हुआ सत्ता में है; यह पहले दृष्टांत का भाव है। दूसरा दृष्टांत शरदकालीन सरोवर का लिया है। यहां भी जल तो निर्मल है; लेकिन नीचे कीचड़ का अस्तित्व है। फिर भी वर्तमान में उस स्वच्छ जल में मुख या चन्द्रमा का प्रतिबिंब ज्यों का त्यों झलकता है। इसका भाव यह है कि वर्तमान काल में तो वीतरागभाव पूर्ण निर्मल है; तथापि एक अंतर्मुहूर्त के बाद ही पूर्व संस्कारवश अपने अपराध से,** यह किसका अपराध है ? वह जीव का स्वयं का। **कालक्षय या आयुक्षय हो जाने से रागादिरूप परिणमित हो जाता है।** उपशांतमोह गुणस्थान का जो काल है, वह काल ख़तम होते ही यह जीव स्वयं फिर रागरूप परिणमता है।

वह जब स्वयं रागरूप परिणमेगा तो कौनसा राग करेगा ? अनंतानुबंधी करेगा या अप्रत्याख्यानावरणवाला करेगा ? हां साहब ? नहीं क्या होगा हमने पूछा। दोनों में से कोई आयेगा क्या ? *श्रोता: नहीं आयेगा।* नहीं आयेगा। तो कौनसा आयेगा ? *श्रोता:*

संज्वलन। संज्वलन। संज्वलन में से कौनसा आयेगा ? संज्वलन में से कौनसा आयेगा कषाय ? *श्रोता: लोभ।* हां, यह बात चाहिये। संज्वलन सूक्ष्मलोभ का पहले उदय होगा। हमने पहले देखा था अगर आपको याद होगा तो ग्यारहवें से नियम से क्या कहा ? वह जीव दसवें में ही आयेगा। दसवें में हमने सूक्ष्मलोभ का उदय देखा था।

अभी यहां क्या बता रहे हैं ? यह सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध ऐसा होगा कि वहां सूक्ष्मलोभ नामक जो कर्म है उसका उदय होगा और जीव वहां जो अंतरंग में स्थिर थे उनकी स्थिरता कम हो जायेगी। उसको कहा कालक्षय। दूसरी पॉसिबिलिटि कौनसी कही ? तो कहते हैं आयुक्षय या भवक्षय जो भी आप कहो। यानी उस जीव का अगर मरण हो जाये तो वह डायरेक्ट चौथे में जायेगा। उसकी बात छोड़ो लेकिन अगर किसीका मरण नहीं होता है तो एक अंतर्मुहूर्त काल तक उसे तो परिपूर्ण वीतरागता है। फिर बाद में निमित्तरूप से कहेंगे कि वहां सूक्ष्मलोभ का उदय आया, वह भी दसवें गुणस्थान में। ग्यारहवें गुणस्थान में तो सूक्ष्मलोभ का उदय ही नहीं आयेगा। अगर उदय हो तो उसको ग्यारहवां गुणस्थान कौन कहेंगे। लोग ऐसा कहते हैं कि निमित्तरूप से वहां कषाय का उदय हुआ। अरे भाई ! ग्यारहवें में तो उदय है ही नहीं। बात ख्याल में बैठती है गणेशभाई ? देखो हम क्या मानते हैं कि कर्मों के कारण देखो नीचे उतरा कि नहीं ? अरे कर्मों का उदय है ही नहीं वहां पर ! यह सूक्ष्मलोभ जो कषाय है या कर्म है उसका उदय तो दसवें में है। ख्याल में आया ?

यहां यह बात बता रहे हैं तीसरी लाइन में- कालक्षय या आयुक्षय हो जाने से रागादिरूप परिणमित हो जाता है। **ग्यारहवें गुणस्थान में चारित्रमोहनीय कर्म की २१ प्रकृतियों का अंतरकरण उपशम हुआ है।** जीव जब द्वितीयोपशम करता है तो द्वितीयोपशम का इतना बड़ा काल है कि उसमें ही छोटे काल में वह चारित्रमोहनीय की २१ प्रकृतियों का उपशमन करता है। अभी क्या हो गया ? उपशमन हो गया तो लास्ट में जिसको उपशमाया था उसका पहले उदय आयेगा। सूक्ष्मलोभ; उसके बाद बादरलोभ, फिर उसके बाद माया, उसके बाद मान, उसके बाद क्रोध, फिर वेद। ऐसा करते-करते नीचे-नीचे आयेगा। यह अंतरकरणरूप उपशम हुआ है। फिर से पूछ रहे हैं **अंतरकरण उपशम किसे कहते हैं ?** तो **अधःकरणादि द्वारा उपशम विधान से** जो **अनंतानुबंधी चतुष्क बिना मोहनीय कर्म की जो उपशमना** हुयी थी, **उसे प्रशस्त उपशम कहते हैं।** इसीका नाम **अंतरकरणरूप उपशम भी है।** यह भी

हमने देखा था। **आगामी काल में उदय आने योग्य कर्म परमाणुओं को जीव के परिणाम विशेषरूप निमित्त होने से आगे- पीछे उदय में आने योग्य होने को अंतरकरणपूर्वक उपशम भी कहते हैं।**

हमने देखा था न वह जो मिथ्यात्व था अभी उदय वहां सम्यक् प्रकृति का है और सत्ता में सम्यग्मिथ्यात्व और मिथ्यात्व है तो उनका भी अंतरकरण करेंगे। कुछ परमाणु ऊपर के भाग में जायेंगे द्वितीयस्थिति में, कुछ नीचे प्रथमस्थिति में आयेंगे और वहां गॅप तैयार होगी उसको अंतरकरण कहा था। यह अंतर जो हो रहा है वह पहले दर्शनमोहनीय में होगा और बाद में चारित्रमोहनीय में होगा। **अंतरकरणरूप उपशम समझने के लिये परिशिष्ट क्रमांक ५ देखें।** वह हमने देख लिया था। अब **यहां चारित्रमोहनीय की २१ प्रकृतियों को उपरितन** यानी द्वितीयस्थिति तथा **अधस्तन** यानी प्रथम**स्थिति में डालकर बीच का कुछ भाग २१ चारित्रमोहनीय कर्मों से रहित किया गया है। जब जीव अधस्तनस्थिति** यानी प्रथमस्थिति **के कर्मों के उदय को पूर्ण भोगकर खाली जगह में आता है, तब स्वयं ही कर्म के रहितपने के कारण जीव को क्षायिक चारित्र के समान औपशमिक निर्मलभावरूप पूर्ण वीतराग चारित्र हो जाता है।** अब आगे-

अभी **सम्यक्त्व अपेक्षा विचार** करते हैं, २१६ पृष्ठ। **उपशांतमोही मुनिराज द्वितीयोपशम सम्यक्त्व अथवा क्षायिक सम्यक्त्व- इन दोनों सम्यक्त्वों में से किसी भी एक सम्यक्त्व के धारक हो सकते हैं।** यहां सम्यक्त्व की बात है वह तो श्रद्धागुण की पर्याय की अपेक्षा से जो सम्यक्त्व होगा न; हमने तीन देखे थे न, उनमें से यहां दो की बात चल रही है। एक उपशम सम्यक्त्व; यहां उपशम सम्यक्त्व का जो द्वितीयोपशम सम्यक्त्व भेद है उसकी बात है और क्षायिक सम्यक्त्व चौथे, पांचवें, छठे, सातवें जिस भी गुणस्थान में प्राप्त हो गया हो। उन्होंने दर्शनमोहनीय कर्म और चार अनंतानुबंधी का क्षय किया है इसलिये उनको यहां क्षायिक सम्यक्त्वी कहते हैं। लेकिन वह क्षायिक सम्यक्त्वी जब उपशमश्रेणी चढ़ते हैं तो उनका क्षायिक सम्यक्त्व ही रहता है, उपशम सम्यक्त्व नहीं होगा। जो क्षायोपशमिक सम्यक्त्व था जिसमें चल-मल-अगाढ़ दोष था, उसके साथ वह श्रेणी चढ़ नहीं सकता है तो सहजरूप से द्वितीयोपशम सम्यक्त्व होता है।

द्वितीयोपशम यानी दर्शनमोहनीय में उन्होंने अंतर कर दिया और फिर आगे उसको उपशमाया। क्षायिक सम्यक्त्वी जीव को दर्शनमोहनीय को उपशमाने का कार्य ही नहीं है, वह तो खत्म हो गया है। उसका सम्यक्त्व तो क्षायिक ही रहेगा, वह पलटेगा नहीं। दोनों ही प्रकार के सम्यक्त्वी जीव चारित्रमोहनीय की जो २१ प्रकृतियां हैं उनको उपशमायेंगे। हमारे मित्र का प्रश्न था इसलिये यह बता रहे हैं। यहां कह रहे हैं उपशांतमोही मुनिराज द्वितीयोपशम सम्यक्त्व अथवा क्षायिक सम्यक्त्व इन दोनों सम्यक्त्वों में से किसी एक सम्यक्त्व के धारक हो सकते हैं। **किसी भी सम्यक्त्व के कारण इस उपशांतमोह गुणस्थान के सामान्य स्वरूप में अथवा सुखादि में कुछ अंतर नहीं पड़ता है।**

अभी ९९ नंबर का प्रश्न हम देखेंगे। हमने कभी चारित्र की अपेक्षा देखी नहीं, लेकिन यहां औपशमिक चारित्र होगा, उसका नाम है औपशमिक यथाख्यातचारित्र। **अनंतानुबंधी चारों कषायों का क्या हुआ है बताइये ? यदि उपशांतमोही मुनिराज क्षायिक सम्यग्दृष्टि हैं तो उनके अनंतानुबंधी कषायों का अभाव क्षायिक सम्यक्त्व होने के पहले ही विसंयोजना द्वारा हो गया है।** विसंयोजना यानी क्या देखा था ? जो अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ हैं वे अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन और नोकषायरूप संक्रमित हो जाते हैं; उसको कहा विसंयोजना। **यदि उपशांतमोही मुनीश्वर द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के धारक हैं तो उपशमश्रेणी पर आरूढ़ होने के पूर्व सातिशय अप्रमत्त अवस्था में ही उनका क्षायोपशमिक सम्यक्त्व द्वितीयोपशम सम्यक्त्वरूप से परिणमित हो जाता है। उस समय अनंतानुबंधी चतुष्क की विसंयोजना अथवा** क्या ? **सदवस्थारूप उपशम हो जाता है।** यानी वह अन्य प्रकार से, अन्यरूप से उदय में आता है। परोन्मुख उदय होता है यानी संज्वलनरूप से। **इसलिये इनके अनंतानुबंधी की सत्ता भजनीय है,** भजनीय यानी ऑप्शनल है, सत्ता हो भी सकती है या नहीं भी हो सकती है।

अभी फिर से वही प्रश्न जिसका हमने आपको उत्तर बताया था, **विसंयोजना किसे कहते हैं** ? **अनंतानुबंधी चारों कषायों के अप्रत्याख्यानावरणादि बारह कषाय और हास्यादि नोकषायरूप से परिणमित होने को विसंयोजना कहते हैं। यह विसंयोजना का कार्य** सिर्फ सम्यग्दृष्टि जीव ही करता है। ये कौन से सम्यग्दृष्टि करते हैं ? **चौथे गुणस्थान से लेकर सातवें गुणस्थान पर्यंत कहीं पर भी हो सकता**

है। चौथे में, पांचवें में, छठे में, सातवें में विसंयोजना करने का कार्य यह जीव करता है।

अब कहते हैं **उपशांतमोह गुणस्थान के प्रथम समय से ही औपशमिक चारित्र जिसका दूसरा नाम औपशमिक यथाख्यातचारित्र है, वह प्रकट हो जाता है। इस गुणस्थान के प्रथम समय से लेकर अंतिम समय पर्यंत एक ही प्रकार की वीतरागता** कहां पर ? ग्यारहवें गुणस्थान में। यानी पहले में जरा कम वीतरागता फिर बाद में अधिक वीतरागता ऐसा नहीं। पहले समय से आखरी समय तक क्या होता है ? एक ही प्रकार की वीतरागता है, **निर्मलता है, शुद्धि है। अतः चारित्र एक ही प्रकार का** है और उसका नाम है **औपशमिक यथाख्यातचारित्र**। **मोह परिणाम का अभाव इतनी विवक्षा लेकर सोचा जाय तो बारहवें, तेरहवें, और चौदहवें गुणस्थान में जो क्षायिक यथाख्यातचारित्र है उसमें और ग्यारहवें गुणस्थान के औपशमिक यथाख्यातचारित्र में तिलतुष मात्र भी** यानी यत्किंचित भी **अंतर** यानी भेद, फर्क **नहीं है। मोहकर्म की सत्ता का सद्भाव और क्षयरूप अभाव की अपेक्षा से जो अंतर है वह विषय यहां गौण है।** सामान्यतः दोनों में कोई अंतर नहीं है, यह बात बता रहे हैं।

अभी **ग्यारहवें गुणस्थान के काल संबंधी जघन्य, उत्कृष्ट एवं मध्यम, ऐसे तीन भेद होते हैं और बारहवें गुणस्थान के काल संबंधी कोई भेद नहीं है।** हम देखते हैं ग्यारहवें गुणस्थान का जघन्य काल कितना होगा गणेशजी ? ग्यारहवें गुणस्थान का जघन्य काल ? *श्रोता: एक समय।* एक समय और उत्कृष्ट काल ? *श्रोता: यथायोग्य अंतर्मुहूर्त।* यथायोग्य अंतर्मुहूर्त। मध्यम काल दो समय से लेकर यथायोग्य अंतर्मुहूर्त से एक समय कम। इसलिये वहां क्या कह रहे हैं ? ग्यारहवें गुणस्थान के काल संबंधी जघन्य, उत्कृष्ट एवं मध्यम, ऐसे तीन भेद हैं। लेकिन बारहवें गुणस्थान में कोई काल भेद ही नहीं क्योंकि वहां जघन्यवाली कोई बात ही नहीं; कोई मरनेवाला भी नहीं है। इसलिये जो यथायोग्य एक अंतर्मुहूर्त है उतना ही है। इसलिये उसमें कोई भेद नहीं है। **तथापि ग्यारहवें गुणस्थान से महामुनिराज क्रमशः नीचे** दो कारणों से आते हैं। एक है **कालक्षय** और दूसरा है **आयुक्षय**। इस**की अपेक्षा से उतरते ही हैं। इस विषय में मोक्षमार्गप्रकाशक के पृष्ठ २६५ का अंतिम परिच्छेद दृष्टव्य है।** दृष्टव्य यानी देखने योग्य है।

हम भी देख लेते हैं क्या कह रहे हैं ? **देखो, परिणामों की विचित्रता** ! **कोई**

जीव तो ग्यारहवें गुणस्थान में यथाख्यातचारित्र प्राप्त करके पुनः मिथ्यादृष्टि होकर किंचित न्यून अर्धपुद्गलपरावर्तन काल पर्यंत संसार में रुलता है। यानी जो परिपूर्ण वीतरागी हुआ है वह परिपूर्ण रागी हो जाता है। ख्याल में आया ? यानी ग्यारहवें में से दसवें में, दसवें में से नौवें में, नौवें में से आठवें में, आठवें में से सातवें में, सातवें में से छठे में और फिर क्रमशः जहां-जहां जायेगा उसमें पॉसिबिलिटिज् अनेक हैं। मिथ्यात्व में आता है और अर्धपुद्गलपरावर्तन तक दुबारा सम्यक्त्व प्राप्त करता ही नहीं। अभी थोड़ासा समय बाकी है थोड़ासा इन द सेन्स कुछ अंतर्मुहूर्त बाकी हैं तब सम्यक्त्व प्राप्त करेगा, श्रेणी मांडेगा और मुक्त हो जायेगा। इसलिये कहते हैं देखो मिथ्यादृष्टि होकर किंचित न्यून अर्धपुद्गलपरावर्तन काल पर्यंत संसार में रुलता है। **और कोई नित्य निगोद से निकलकर, मनुष्य होकर मिथ्यात्व छूटने के पश्चात् अंतर्मुहूर्त में केवलज्ञान प्राप्त करता है। ऐसा जानकर अपने परिणाम बिगड़ने का भय रखना।** यानी हम कई खोटे रास्ते, खोटे विचारों में नहीं फंसें इसका ध्यान रखना कहते हैं। **उनके सुधारने का उपाय करना।** *डॉ. उज्ज्वला शहा:- जैसे ग्यारहवें गुणस्थान से मिथ्यात्व में सीधा नहीं जाता, क्रम से जाता है। वैसे नित्यनिगोद से सीधे मनुष्यपर्याय में तो आ सकता है परंतु उसे उसी भव में मोक्ष नहीं होगा, हां बीच में दूसरी पर्याय प्राप्त करके फिर मनुष्य होकर मोक्ष जा सकता है। इतरनिगोदवाले बादर निगोद से मनुष्य होकर मोक्ष जा सकता है।*

काल अपेक्षा विचार। वह हमने देख लिया था फिर भी यहां लिखा है तो पढ़ लेंगे। **किसी मुनिराज ने दसवें गुणस्थान से अपनी वीतरागता को उतरोत्तर बढ़ाते-बढ़ाते ग्यारहवें उपशांतमोह गुणस्थान में प्रवेश किया और मात्र एक समय उपशांतमोह गुणस्थान में उपशम यथाख्यातचारित्र के साथ पूर्ण वीतरागी तथा पूर्ण सुखी जीवन व्यतीत करते हुये यदि मनुष्य आयु का क्षय होता है तो मरण की अपेक्षा उपशांतमोह गुणस्थान का जघन्य काल मात्र एक समय घटित हो जाता है।** यह दो ही लाइन लिखते न, आयु का क्षय और यहां होता है बस तो काम होता था लेकिन लंबा बहुत किया है उन्होंने। अच्छा किया, कौन कर रहा है, कैसा कर रहा है ? यह बता रहे हैं। **इसतरह एक ही प्रकार से जघन्य काल घटित होता है। उत्कृष्ट काल- कोई भी महामुनिराज यदि ग्यारहवें गुणस्थान में मरण के बिना पूर्णकाल पर्यंत रहते हैं तो यथायोग्य अंतर्मुहूर्त पर्यंत ही रहते हैं। सभी**

उपशांतमोही मुनिराजों का ग्यारहवें गुणस्थान का उत्कृष्ट काल समान ही रहता है। अभी मध्यम काल हमने देखा है। एक समय से अधिक और अंतर्मुहूर्त से कम वे जो कोई उनके बीचवाले जितने काल हैं वे सब मध्यम काल हैं। अभी पुस्तकें बंद करो। देखना मत, फटाफट बंद करो।

ग्यारहवें गुणस्थान से ऊपर कौन-कौनसे गुणस्थान में जायेगा, गमन कहां करेगा ? बोलो साहब ? ग्यारहवें गुणस्थान से ऊपर कहां जायेगा, तेरहवें में कि चौदहवें में ? हां आप बोलो, बराबर बोलो, बराबर है। *श्रोता: बारहवें के बाद तेरहवें में और उसके बाद चौदहवें में।* हां, बारहवें के बाद तेरहवें में और उसके बाद चौदहवें में। क्या यह बात सही है ? दिलीपभाई के बाजू में भाईसाहब बैठे हैं, उनका नाम ? हां, ग्यारहवें में से कहां जायेंगे ? ऊपर ? कहां जायेंगे ? किताब में लिखा नहीं है न। क्या करें ? हां, ब्रह्मदेवजी आप बतायेंगे ? *श्रोता: ऊपर नहीं जा सकता।* ऊपर नहीं जा सकता। फिर कहां जायेगा साहब ? *श्रोता: दसवें गुणस्थान में।* दसवें - सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में जायेगा। अरे ! ग्यारहवें गुणस्थान में से तो गिरनेवाला ही है भाई। उपशांतमोह आखिर का गुणस्थान है, किसका ? उपशमश्रेणी का। उपशमश्रेणी के बाद ग्यारहवें से नियम से अगर जिन्दा रहेगा तो गिरेगा; और मरेगा तो चौथे में जायेगा। ख्याल में आया ? कोई बात नहीं, अच्छा लगा कि आपने प्रयत्न किया। बोलने में कोई हिचखिचाहट नहीं रखना। भले हमको गलत भी आवे, कोई बात नहीं। एक दिन ऐसा आयेगा कि हम भी उपशांतमोही न होते हुये क्षीणमोही होकर ऊपर जायेंगे। क्या ? फिर तो आपको १२, १३, १४ घूमना पड़ेगा। चलो, अब क्या कह रहे हैं ?

देखो, यह गमन की अपेक्षा हमने देखा तो क्षपकश्रेणीवाला ग्यारहवें गुणस्थान से कहां जायेगा, बहन ? हां, बोलो-बोलो, ना-ना नहीं, क्या है ? मुंह से बोलना। *श्रोता: कहीं नहीं जायेगा।* अरे, क्षपकश्रेणी में ग्यारहवां गुणस्थान ही नहीं होता है, ऐसा जबरदस्ती बोलने का। क्या समझ रखा है हमको ? इतने मूर्ख हैं क्या ? हमको मालूम नहीं है ? ऐसा बोलने का है। घबराना नहीं, हां साहब ? यह कैसे ? अरे यार रहने दो। देखो हम जो पढ़ रहे हैं न, क्या वह हमारे समझ में आया है कि नहीं ? दिमाग में घुसा है कि नहीं ? यह समझने के लिये ऐसे उलटे-पुलटे प्रश्न पूछने पड़ते हैं और आप ही एक कदरदान हैं कि जो हमारी कदर कर रहे हैं। अभी ग्यारहवें गुणस्थान में ऊपर के कौनसे गुणस्थान से आयेगा ? हां बहन आप ? आप नहीं आपके सामने वह हां, आप

होशंगाबाद की हैं न ? बोलो, ऊपर के कौनसे गुणस्थान से आयेगा ग्यारहवें में ? बारहवें से आयेगा या तेरहवें से ? बारहवें से आयेगा ? ग्यारहवें से, क्या बोलते हैं ? *श्रोता: ग्यारहवें से दसवें में आयेगा।* अरे हम ग्यारहवें में कहां से आयेगा पूछ रहे हैं भाई। आप क्या कहती हैं बहन ? हां, देखो बाजूवाली उत्तर देने को एकदम इतनी उत्सुक है क्या बतायें ? उनके चेहरे पर ऐसा हो रहा है कि मेरा नंबर कब आयेगा। बोलो बहन। *श्रोता: ऊपर से कोई आयेगा ही नहीं।* ऊपर से कोई आयेगा ही नहीं।

बारहवें में तो कहीं ऊपर से आता होगा कि नहीं ? ना बारहवें में आयेगा, ना ग्यारहवें में ऊपर से कोई आयेगा। ग्यारहवांवाला ऊपर भी नहीं जायेगा और ऊपर से आयेगा भी नहीं। लेकिन बारहवांवाला ऊपर में जायेगा। यह हम बिलकुल जो पढ़ा नहीं है वह भी हमारे दिमाग में बात होनी चाहिये तो ही हमारे पढ़ने का कुछ फ़ायदा है। कोई बात नहीं, बहुत अच्छा है। अब क्या रह गया ? यह हम ग्यारहवां गुणस्थान पढ़ रहे हैं न,चलो। तो ग्यारहवें गुणस्थान में कहां से आयेगा ? *श्रोता: दसवें में से आयेगा।* दसवें में से आयेगा, बस इतनी बात है। चलो आगे बढ़ते हैं।

अब हम पृष्ठ २१८ पर फिर से आयेंगे। मध्यम काल के बाद **गमनागमन विचार** है। **गमन- ग्यारहवां उपशांतमोह गुणस्थान उपशमश्रेणी का अंतिम गुणस्थान है। अतः इस ग्यारहवें गुणस्थान से आगे क्षीणमोह आदि गुणस्थानों में उपशांतमोही मुनिराज का गमन नहीं होता है।** यह इतना लंबा लिखा है इसलिये मैंने पढ़ने को टाइम ही नहीं दिया है। **उपशमक मुनिराज की उपशांतमोह गुणस्थान पर्यंत ही विकसित होने की पर्यायगत योग्यता रहती है।** अब दूसरा पॉइंट पेज नंबर २१९- **उपशांतमोह गुणस्थानवर्ती मुनिराज यथायोग्य अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत उपशांतमोह गुणस्थान में पूर्ण वीतरागी तथा पूर्ण सुखी रहते हैं। तदनंतर नीचे के उपशमक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में गमन करते हैं। यहां एक सुनिश्चित नियम समझना चाहिये कि कोई भी उपशमक उपशांतमोह गुणस्थान से नीचे उतरते हैं तो वे क्रम-क्रम से** क्रम-क्रम से अर्थात् क्या है ? ग्यारहवें से दसवें में, दसवें से नौवें में। ऐसा डायरेक्ट फ्लाइट ग्यारह से छठे में, ग्यारह से चौथे में कोई नहीं जायेगा। कहते हैं क्रम-क्रम से **छठे गुणस्थान पर्यंत नीचे तो नियम से एक के बाद एक गुणस्थान में गमन करते हैं। ग्यारहवें से सीधे छठे में या चौथे में अथवा मिथ्यात्व गुणस्थान में गमन कभी और कोई भी नहीं करते।** अभी उन्होंने उसके

लिये एक रेफरन्स दिया है वह छोड़कर हम आगे जाते हैं।

यहां कहते हैं नीचे का पॅरेग्राफ- **वास्तव में देखा जाय तो श्रेणी चढ़ते समय मुनिराज की जिस क्रम से कर्मों की उपशमना हुयी है।** वह हमें मालूम नहीं है इसलिये हमें ख्याल में नहीं आयेगा। **ग्यारहवें से वापस नीचे लौटते समय विलोम से उन्हीं उपशमित चारित्रमोहनीय की २१ प्रकृतियों की उदीरणा होती है। अतः छठे गुणस्थान पर्यंत तो क्रम से ही उतरकर आते हैं। तदनंतर किसी भी गुणस्थान में गमन कर सकते हैं।** यानी छठे से नीचे कहां-कहां जीव जायेगा ? हमने देखा था पांचवें में जायेगा, चौथे में जायेगा, तीसरे में जायेगा, पहले में जायेगा; इसतरह से हमने जो देखा था वह यहां हमको देखना है। लेकिन यहां बात क्या कहते हैं ?

एक शब्द नया आया है, दूसरी लाइन में। ग्यारहवें से वापस नीचे लौटते समय विलोम से। यह विलोम क्या होता है ? हमने अभी आवश्यक देखे थे सातवें गुणस्थान में। उसका पहला आवश्यक कौनसा था बहन ? *श्रोताः प्रति समय अनंतगुणी वृद्धि।* प्रति समय अनंतगुणी वृद्धि और हम एक फिर कहते हैं कि स्थितिबंधापसरण, फिर तीसरा, फिर चौथा। अब हम किसीसे पूछेंगे चौथा कौनसा है ? तीसरा कौनसा है ? दूसरा कौनसा है ? पहला कौनसा है ? जैसे हमारे २४ तीर्थंकर हैं। पहले तीर्थंकर कौन हैं ? आदिनाथ। फिर हम दूसरे कौन हैं ? अजितनाथ। ऐसे गिनते, गिनते, गिनते २४ तक जायेंगे। चौबीसवें महावीर भगवान हैं तो फिर चौबीसवें कौन हैं ? फलां-फलां हैं। तेइसवें कौन हैं ? तो पार्श्वनाथजी हैं। बाइसवें कौन हैं ? नेमिनाथ जी हैं। इसतरह उलटे क्रम से आना उसको विलोम कहते हैं। हमको स्कूल में ऐसे ही पहाड़े होते हैं न, यानी आपकी भाषा में टू वनझा टू, टू टूझा फोर वह ऐसा इसतरह से गिनना और उलटा भी गिनना, ऐसा हमको गिनाने को सिखाया था। ऐसा हम गिनेंगे तो पक्का हो जाता है। इसलिये यहां जिसतरह से वे एक-एक प्रकृति को दबाते हुये यानी उपशमित करते-करते गये, आखिर में सूक्ष्मलोभ था उसको भी उपशमाया और ग्यारहवें में गये। ग्यारहवें से नीचे आये तो सबसे पहले सूक्ष्मलोभ का उदय आयेगा, फिर बादरलोभ का। फिर हमने जो देखा था क्रम वेद तक; फिर और नीचे आयेंगे तो आठवें गुणस्थान में जो कुछ होता है। इसतरह से वह होगा। अब आगे बढ़ते हैं।

उपशमश्रेणी चढ़ते समय **आठवें गुणस्थान का प्रथम भाग छोड़कर या**

उतरते समय उपशमक मुनिराज का किसी भी गुणस्थान में मरण संभव है, अर्थात् मरण के अंतिम समय पर्यंत मुनिराज के श्रेणी का वही गुणस्थान रहता है, जिसमें मरण होता है; परंतु मरण के पश्चात् विग्रहगति में वे उपशमक मुनिराज यानी वे भले आठवें में हों, नौवें में हों, ग्यारहवें में हों। अभी तो ग्यारहवें की बात है। कह रहे हैं उपशमक मुनिराज **अक्रम से चौथे अविरतसम्यक्त्व गुणस्थान में ही गमन करते हैं और देवगति में ही जन्म लेते हैं। आगमन** कहां-कहां से है ? तो कहते हैं **उपशांतमोह गुणस्थान में नीचे में मात्र उपशमक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान से ही आगमन होता है।** यानी दसवें से ग्यारहवें में जैसे **आठवें, नौवें, दसवें और तीनों गुणस्थानों के उपशमक और क्षपक ऐसे भेद होते हैं; वैसे उपशांतमोह गुणस्थान के उपशमक और क्षपक दो भेद नहीं हैं।** इसलिये **उपशांतमोह** नामक जो गुणस्थान है **वह एक ही प्रकार का है।**

अब देखते हैं **विशेष अपेक्षा विचार** करते हैं। बता रहे हैं **ग्यारहवें गुणस्थान में केवल सातावेदनीय का ईर्यापथास्रव** है। यह ईर्यापथास्रव देखा न, आस्रव; कैसा है ईर्यापथास्रव ? यानी जाने के लिये जो आये हैं। हमारे घर में मेहमान आते हैं। वे जायेंगे नहीं तो घर के एक सदस्य बन जाते हैं। आयेंगे और जायेंगे तो उनको मेहमान कहेंगे, है न ? तो यह कर्म कैसे हैं ? यह कर्म जो हैं वे जाने के लिये आते हैं। इसलिये कह रहे हैं कि ग्यारहवें गुणस्थान में केवल सातावेदनीय का यानी अन्य कर्मों का नहीं, ईर्यापथास्रव **एक समय मात्र का ही होता है। तदनंतर वह स्थिति-रहित होने के कारण झड़ जाता है। यहां साम्परायिक आस्रव नहीं होता; क्योंकि वे उपशांतमोही मुनिराज पूर्णरूप से कषाय रहित अर्थात् वीतरागी हो गये हैं। यद्यपि ईर्या शब्द का अर्थ गमन भी है; परंतु यहां उसका अर्थ योग लिया गया है। इसलिये ईर्यापथ आस्रव का अर्थ केवल योग द्वारा होनेवाला आस्रव होता है। आशय यह है कि जैसे सूखी भींत पर धूलि आदि के फेंकने पर वह उससे न चिपककर तत्काल जमीन पर गिर जाती है; वैसे ही योग से ग्रहण किया गया जो कर्म, कषाय के अभाव में आत्मा से न चिपककर तत्काल अलग हो जाता है; वह ईर्यापथास्रव है। संसार परंपरा के लिये कारण जो साम्परायिक** यानी कषायरूप जो **आस्रव है, वह इस ग्यारहवें गुणस्थान में नहीं होता।**

आगे बढ़ते हैं, पेज नंबर २२१ पर दूसरी लाइन से पढ़ेंगे हम। **चौथे गुणस्थान**

से ग्यारहवें गुणस्थान पर्यंत औपशमिक सम्यक्त्व भाव रह सकता है नीचे की लाइन में है। अब कहते हैं ३ नंबर का पॉइंट। यह भी कोई विशेष नहीं है। **ग्यारहवें गुणस्थान के नाम में जो वीतराग शब्द आया है वह आदि दीपक है।** अब आगे बढ़ते हैं २२३ नंबर, कह रहे हैं ये बोल्ड अक्षर हैं न, ऊपर से चौथी-पांचवीं लाइन में। **मुनिराज जब तक उपशांतमोह गुणस्थान में हैं, तब तक तो किसी भी चारित्रमोहनीय कर्म के उदय का निमित्तपना बनता ही नहीं।** यह क्यों मैं पढ़ रहा हूं ? कई लोगों की ऐसी मान्यता है कि कर्म का उदय आया इसलिये वे गिर गये। कर्म का उदय ही नहीं है वहां। मोहनीय कर्म उपशमाया है न उन्होंने तो गिरते क्यों हैं ? कालक्षय या आयुक्षय; कालक्षय यानी वह पर्टिक्युलर पिरिअड जो यथायोग्य अंतर्मुहूर्त था वह पूरा हुआ तो नियम से उनके परिणाम भी ऐसे होते हैं। परिणाम के कारण वहां कषाय आते हैं और इसलिये वहां कर्मों को पता लगता है और इसलिये उदय में आते हैं, ऐसा है नहीं है। ख्याल में आया न ?

हां, अब आगे, प्रश्न क्रमांक १०१। यह जो नीचे जो कोई इन्फर्मेशन दी है न, जो मैंने अभी एक मिनट में कहा था कि कालक्षय के कारण नीचे आता है वही बात है। **इस ग्यारहवें गुणस्थान में क्या मुनिराज का मरण नहीं हो सकता ? उपशांतमोह गुणस्थानवर्ती मुनिराज का अंतर्मुहूर्त काल में से किसी भी समय में मरण हो सकता है। मरण तो होता है शुद्धोपयोगरूप ध्यानरूप अवस्था में और तदनंतर तत्काल ही विग्रहगति के प्रथम समय में चौथा गुणस्थान होता है और वे मुनिराज देवगति में ही सौधर्म स्वर्ग से सर्वार्थसिद्धि पर्यंत कहीं भी जन्म लेते हैं।** क्योंकि मुनि अवस्था के थे न तो सर्वार्थसिद्धि तक जा सकते हैं। जो सम्यग्दृष्टि हैं, मुनि अवस्था के नहीं हैं वे सर्वार्थसिद्धि में नहीं जायेंगे। आगे यहां उत्तर दिया है; देखो यह उत्तर में एक पॉइंट है। कालक्षय मिल गया ? और दूसरा कारण क्या है ? भवक्षय। यानी इन दोनों कारणों से ही यह जीव नीचे आ सकता है। अब हम आगे बढ़ते हैं।

पेज नंबर २२५ में हम देखेंगे। मैं सिर्फ कुछ पॉइंट्स आपको बताना चाहता हूं। यह क्षीणमोह गुणस्थान जो है वह क्षपकश्रेणी का अंतिम गुणस्थान है। अभी फिर से पूछूंगा आपको। मैं जल्दी-जल्दी पढ़ रहा हूं इसलिये आप थोड़ेसे बोअर हो गये हो। यह उपशमश्रेणी के गुणस्थानों के नंबर कौन बतायेगा ? हां, बोलो, *श्रोता: सात, आठ, नौ, दस, ग्यारह।* हां, क्या इन्होंने सही बताया है बहन ? हां ? क्या गलत बताया ? *श्रोता:*

सातवां श्रेणी का गुणस्थान नहीं है। सातवां गुणस्थान श्रेणी का नहीं है। चार-चार ही गुणस्थान हैं- क्षपकश्रेणी रहे या उपशमश्रेणी रहे। उपशमश्रेणी के हैं ८ यानी अपूर्वकरण आप चाहें तो मैं नंबर बोलूंगा, आप समझ लेना। ८, ९, १० और ११; और क्षपकश्रेणी के ८, ९, १० और १२। इसलिये यहां कह रहे हैं कि बारहवां गुणस्थान जो है वह अंतिम गुणस्थान है। कौनसा ? क्षपकश्रेणी का।

अब आगे बताते हैं नीचे के पॅरेग्राफ में नीचे से तीसरी लाइन। **हम निम्न प्रकार भी समझ सकते हैं।** उसकी बात है; ऊपर जो बतायी यही बात है। **सूक्ष्मलोभ कषाय का व्यय और पूर्ण वीतरागता का उत्पाद दोनों एक समयवर्ती हैं।** यह सूक्ष्मलोभ की विद्यमानता कहां थी ? तो दसवें गुणस्थान में। दसवें गुणस्थान के अंत तक सूक्ष्मलोभ था। उसका व्यय हुआ और बारहवें गुणस्थान का जो पहला समय वीतरागता का है उसका उत्पाद हुआ। तो ये कहते हैं सूक्ष्मलोभ कषाय का व्यय और पूर्ण वीतरागता का उत्पाद दोनों एक समयवर्ती हैं। **क्योंकि उत्पाद और व्यय दोनों एक ही समय में होते हैं। यह वस्तु व्यवस्था का स्वरूप है।** हमने देखा था कि चौथे गुणस्थान से लेकर सातवें गुणस्थान पर्यंत कोई भी जीव क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है। अभी कहते हैं यह जो बारहवां गुणस्थान है न, तो ग्यारहवें गुणस्थान में इस जीव ने क्या किया था ? जो उपशमश्रेणी चढ़नेवाला जीव है उसने चारित्रमोहनीय की २१ प्रकृतियों को उपशमित करते-करते ग्यारहवें गुणस्थान की प्राप्ति की थी।

अभी यहां हम क्षपकश्रेणी की बात कर रहे हैं तो वहां चढ़नेवाला जीव कौनसा सम्यक्त्व सहित होना चाहिये दीपकभाई ? जोर से बोलना भाई। मैंने क्या पूछा पन्नालाल जी ? उत्तर आप दे दो, जाने दो, *श्रोता: क्षायिक सम्यक्त्वी।* क्षायिक सम्यक्त्वी। आप जरा अगले टाइम में एक वह लाना क्या बोलते हैं ? भोंगा। नहीं तो सामने बैठना भाई। आप आनेवाले हो न अगले शिबिर में ? तो फिर ? हमारे मित्र हैं बाबा। इसी साल मैत्री हुयी उनसे। हां, क्या कह रहे हैं ? देखो, यहां पर जो जीव क्षपकश्रेणी चढ़नेवाले हैं उनके अनंतानुबंधी है ही नहीं और तीन दर्शनमोहनीय कर्म भी विद्यमान नहीं उनका क्षय कर दिया है; इसीलिये वे क्षायिक हुये। अभी जो बचे-कुचे; २५ कषाय में से चार कषाय नहीं हैं तो २१ कषाय हैं उनका भी वे क्षय करते-करते चढ़ेंगे। इसलिये कहते हैं कि **चारित्रमोहनीय की २१ प्रकृतियों की मुख्यता से** यहां **कथन है।** यहां आगे और एक बात बताते हैं **चौदह गुणस्थानों में से अंत के चारों गुणस्थान पूर्ण वीतरागमय**

हैं। यह अंत के चार गुणस्थान के नंबर कौन बतायेगा ? आप बतायेंगे ? *श्रोता: ११, १२, १३, १४।* हां, ११, १२, १३, १४। और विलोम से कहना है तो १४, १३, १२, ११। अब विलोम यानी समझ में आया न क्या है ?

अब आगे बढ़ते हैं। पेज नंबर २२९, बाकी जो हैं न ये प्रश्नोत्तर, यह तो इस बारहवें गुणस्थान से कोई विशेष संबंध है लेकिन हम भूल भी जाये, बाद में पढ़ ले तो आपको आसानी से समझ में आवे ऐसे हैं। देखो यहां क्या लिखते हैं ? यह नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती जो हैं उनके गोम्मटसार की ६२ नंबर की गाथा है। वह बारहवें गुणस्थान संबंधी है। उसका अर्थ हम देखते हैं। देखो, यहां बहुत ही सुंदरता से इसका वर्णन किया है। क्या कह रहे हैं ? यह स्फटिकमणि के पात्र में रखे हुये क्या कहा ? अरे हमारे पास तो पतरे का पात्र है। आपके घर में काहे का है ? सोने का ? चांदी का ? फिर ? स्टील का है। स्टील क्या है ? लोहे का पत्रा तो है। नहीं समझे ? इनके पास क्या है ? स्फटिकमणि का पात्र है। स्फटिकमणि का पात्र क्यों लेना है वह भी देखेंगे हम। क्या कह रहे हैं ? **स्फटिकमणि के पात्र में रखे हुये निर्मल जल के समान संपूर्ण कषायों के क्षय के समय होनेवाले जीव के अत्यंत निर्मल वीतरागी परिणामों को क्षीणमोह गुणस्थान कहते हैं।**

वहां उपशांतमोह में हमने क्या देखा था ? मलिनता थी, वह तो सत्ता में थी। अंदर नीचे दबकर बैठी थी और यहां पानी कैसा है ? बिलकुल निर्मल-निर्मल। हमारे पास जो स्टील का बर्तन होगा तो पता ही नहीं लगेगा। स्फटिक में तो ऐसा होता है कि बाजू में कोई डंक भी लग जाये मतलब कोई रंग आ जाये तो वह स्फटिक पूरा उस रंग का होता है। स्फटिक के पात्र में उन्होंने निर्मल पानी रखा है। वह भी स्फटिक जैसा क्लिअर है। तो यहां वीतरागता कैसी है ? उसमें कोई भी फ्लॉ नहीं है, उसमें कोई भी कषाय कर्म की विद्यमानता नहीं है। पूर्ण वीतरागी हुये।

यहां क्या कह रहे हैं ? देखो, मुनिराज भी कैसा पात्र लाते हैं ? और वे कैसे हैं ? निष्परिग्रही। तो उनके दिमाग में तो यह बात है न कि स्फटिकमणि का जो पात्र होगा; वह कैसा होगा ? कह रहे स्फटिकमणि के पात्र में रखे हुये निर्मल जल के समान क्या हो गया है ? अत्यंत निर्मल वीतरागी परिणाम हुये हैं। वह भी कैसे हैं ? संपूर्ण कषायों के क्षय के समय होनेवाले ऐसे हैं। अभी यहां कषाय बाकी नहीं है। उसके कारण यहां

उनके परिणाम अत्यंत निर्मल और वीतरागी हैं। अभी देखो परिभाषा में उसको क्षीणमोह गुणस्थान कहते हैं।

परिभाषा में क्षीणमोही जीव के वीतराग परिणाम को निर्मल जल की उपमा दी है। वह जल भी स्फटिकमणि के पात्र में रखा हुआ निर्मल जल है। यहां पात्र में से किसी भी प्रकार की गंदगी दुबारा पानी में आने की संभावना की शंका भी न हो, इसलिये स्फटिकमणि का पात्र लिया है। देखो, आचार्यों की सूक्ष्मदृष्टि ने पात्र यानी **बर्तन को कैसा विचारपूर्वक चुना है। महापुरुषों की दृष्टि में दृष्टांत भी अनुपम एवं मूल विषय के पोषक होते हैं। क्षीणमोही मुनिराज के भावी जीवन में किसी भी प्रकार की अशुद्धता की संभावना ही नहीं है। इस अभिप्राय को अत्यंत स्पष्ट करने के लिये ही स्फटिकमणिमयी पात्र में रखा हुआ निर्मल जल लिया है।**

अब देखो, **क्षीणमोही गुणस्थानवर्ती मुनिराज का मोह अब तो अनंतकाल के लिये नष्ट हो गया है। अंतिम सूक्ष्मलोभ कषाय का व्यय और पूर्ण वीतरागता का उत्पाद- इन दोनों की काल प्रत्यासत्ति** काल प्रत्यासत्ति यानी दोनों का काल एक ही है ऐसा बताते हैं। दोनों काल एक ही हैं। कौन-कौनसा ? कि अंतिम सूक्ष्मलोभ कषाय है उसका व्यय होना और पूर्ण वीतरागता का उत्पाद होना। अभी हमने देखा था न दसवें गुणस्थान के अंतिम समय तक तो सूक्ष्मलोभ की विद्यमानता है और दूसरे समय में क्या होगा ? वीतरागता उत्पन्न होगी और यहां कषायों का क्षय हो जायेगा। इसलिये उनकी काल प्रत्यासत्ति, एक समय में दोनों बातें हो रही हैं न। यह काल प्रत्यासत्ति **को अत्यंत स्पष्ट करने के लिये बारहवें गुणस्थान की परिभाषा में कषायों के क्षय के समय इन शब्दों का प्रयोग किया है। बारहवें गुणस्थान के नाम में प्रयुक्त क्षीण शब्द का अर्थ** हमारे प्रवीणभाई जी जैसा **दुबला**, **निर्बल** ऐसा मत समझना बोल रहे हैं। **अशक्त** ऐसा **नहीं करना। यहां क्षीण शब्द का अर्थ अभाव, नाश,** ऐसा समझना। अब आगे बढ़ते हैं। हां, **सम्यक्त्व अपेक्षा विचार**, पेज नंबर २३१ बाकी आप समझ लो हो भाई।

यहां देखो, यह जो बारहवें गुणस्थानवर्ती जीव होगा जो क्षपकश्रेणी चढ़कर ऊपर आया है उसके कौन-कौनसे सम्यक्त्व होंगे ? दिलीपभाई ? *श्रोता: क्षायिक*

सम्यक्त्व एक ही। क्षायिक सम्यक्त्व एक ही, बाकी कोई नहीं ? बहुत अच्छा। सिर्फ क्षायिक सम्यक्त्वी जीव ही क्षपकश्रेणी चढ़ेगा। अभी वे बारहवें गुणस्थान में आये हैं तो उनके क्षायिक सम्यक्त्व ही है। देखो, **बारहवें गुणस्थानवर्ती महामुनिराज को मात्र क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है; क्योंकि औपशमिक सम्यक्त्व तथा औपशमिक चारित्र की सीमा ग्यारहवें गुणस्थान पर्यंत ही रहती है।** अब ये कह रहे हैं कि **क्षीणमोह गुणस्थान में क्षायिक** चारित्र यानी **यथाख्यातचारित्र ही होता है।** अभी वह पॅरेग्राफ छोड़कर हम नीचे के पॅरेग्राफ में आयेंगे। **चारित्रमोहनीय कर्म की २१ प्रकृतियों में से २० प्रकृतियों का क्षय तो नौवें क्षपक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान के अंतिम समय पर्यंत हुआ है। दसवें गुणस्थान में मात्र सूक्ष्मलोभ कषाय शेष बची है। अब इस बारहवें गुणस्थान के प्रथम समय में ही शेष सूक्ष्मलोभ कषाय कर्म का उदय तथा परिणाम- दोनों का क्षय हो जाता है। इसलिये यहां क्षायिक चारित्र पूर्ण हो गया है।**

अभी किताबें बंद करो। देखो-देखो, अभी क्या कहना चाहते हैं ये। यह क्षायिक सम्यक्त्वी जो है उसका गमन कहां-कहां होगा ? बारहवें गुणस्थान से गमन कहां-कहां होगा ? प्रमोदभाई ? हां जी ? गमन, जाना कहां होगा ? *श्रोता: तेरहवें गुणस्थान में।* तेरहवें गुणस्थान में। और नीचे ? *श्रोता: नहीं जायेगा।* नहीं जायेगा। बहुत अच्छा। और आगमन कहां-कहां से होगा ? हां साहब ? *श्रोता: ग्यारहवें से आयेगा।* ग्यारहवें से आयेगा ? आप क्या कहती है बहन ? *श्रोता: दसवें से।* दसवें से। आप लोग सबको एक-एक माइक देना चाहिये। हमारे माणिकलाल कहां गये ? अगले टाइम से उसकी व्यवस्था करेंगे। क्या हुआ ? यहां कह रहे हैं कि ऊपर ही चढ़ेगा, नीचे उतरेगा ही नहीं। इसलिये वहां से गमन केवल तेरहवें गुणस्थान में होगा। आगमन जो है वह कहां से होगा ? नीचे के गुणस्थान से होगा, ऊपर के गुणस्थान से तो आना ही नहीं है। इसलिये दसवां क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय है उधर से आयेगा।

अभी काल की अपेक्षा जब हम विचार करते हैं तो जघन्य काल कितना होगा ? हां, बहन ? हां, जघन्य काल ? *श्रोता: जघन्य काल होगा ही नहीं।* जघन्य काल होगा ही नहीं। तो जो कुछ होगा वह कितना होगा ? बारहवें गुणस्थान का काल कितना होगा ? हां जी ? *श्रोता: यथायोग्य अंतर्मुहूर्त।* यथायोग्य अंतर्मुहूर्त। उसमें जघन्य और उत्कृष्ट की बात ही नहीं कह रहे हैं। जो है वह है, कितना ? यथायोग्य अंतर्मुहूर्त। तो मरण की

अपेक्षा एक समय गिनेंगे कि नहीं ? *श्रोता: नहीं।* नहीं। अच्छा, चलो-चलो।

अभी हम फिर पुस्तक की तरफ मुड़ते हैं। देखो, पेज नंबर २३१, **क्षीणमोह गुणस्थान का काल अंतर्मुहूर्त है। छठे गुणस्थान से सातवें अप्रमत्त गुणस्थान का काल मरण की अपेक्षा छोड़कर आधा रहता है।** हमने पहले देखा था जितना काल छठे का है उससे आधा काल सातवें का है। **सातवें से आठवें अपूर्वकरण का काल कुछ कम** है, उससे छोटा है। **अपूर्वकरण की अपेक्षा अनिवृत्तिकरण** यानी आठवें गुणस्थान की अपेक्षा नौवें गुणस्थान का काल यानी अनिवृत्तिकरण का काल **और कुछ कम** है**।** नौवें से यानी देखो यहां पर एक दफे गुणस्थान के नाम लिखे हैं; कहीं नंबर लिखे हैं। अब कह रहे हैं, अनिवृत्तिकरण से सूक्ष्मसाम्पराय का काल उससे भी कुछ कम। **और क्षपक दसवें से भी इस क्षीणमोह गुणस्थान का काल कुछ** कम रहता है। **तथापि छठे से बारहवें गुणस्थान पर्यंत प्रत्येक गुणस्थान का काल भी अंतर्मुहूर्त ही रहता है।** यह पूरा छठे से लेकर बारहवें तक का मिलकर भी अंतर्मुहूर्त कह सकते हैं हम। **आश्चर्य तो इस बात का है कि छठे गुणस्थान से लेकर क्षीणमोह गुणस्थान पर्यंत श्रेणी के चारों गुणस्थानों के काल का योग** यानी टोटल **भी मात्र एक अंतर्मुहूर्त काल ही होता है**; **क्योंकि अंतर्मुहूर्त के असंख्यात भेद हैं।**

अब कह रहे हैं **गमन। क्षीणमोह गुणस्थानवर्ती महामुनिराज ऊपर की ओर अकेले,** यानी सिर्फ अकेले का अर्थ और साथ में दो-चार मुनि लेकर ऐसा नहीं। क्योंकि भाषा के एक-एक शब्दों के अलग-अलग अनेक अर्थ होते हैं न तो हम उसमें भूल न करें इसलिये यह बता रहा हूं मैं। सिर्फ **तेरहवें** गुणस्थान यानी कौनसे ? **सयोगकेवली गुणस्थान में ही गमन करते हैं।** और आगमन ? अभी अन्य कोई रास्ता ही नहीं न तो तुरंत हम आगमन में आयेंगे। और **इस क्षीणमोह गुणस्थान में आगमन मात्र क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय** यानी दसवें **गुणस्थान से ही होता है।** देखो कितनी अच्छी बात है इसमें गमनागमन में हमें कोई बोर्ड की आवश्यकता नहीं इसलिये उसको उतार दिया।

देखो, **विशेष अपेक्षा** से **विचार** करते हैं। **यहां मात्र सातावेदनीय का ईर्यापथास्रव होता है; क्योंकि बारहवें गुणस्थानवर्ती महामुनिराज को किसी भी प्रकार का कोई भी कषाय** या **नोकषायरूप अर्थात् मोह कर्म का उदय तथा**

परिणाम नहीं रहा; वे सर्वथा वीतरागी हो गये हैं। यहां आस्रव का एक मात्र कारण योग का ही सद्भाव है। हमने पांच कारण देखे थे न बंध के। प्रमोदभाई आपको याद हैं पांच प्रकार के आस्रव कौन-कौनसे बताये थे ? नहीं याद हैं। अच्छा, बोलो साहब, पन्नालालजी आप बोलो। *श्रोता: मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, योग।* अभी याद आ गया न ? मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय सब हट गये। देखो कैसी विचित्रता है ? टाइम है न चलो देख लेते हैं।

नियम से ये जो पांच कारण हैं इन पांच कारणों में पहला कारण अगर नष्ट होता होगा तो वह मिथ्यात्व होता है और जब मिथ्यात्व नष्ट होता है तब उस जीव को चौथा; मिनिमम चौथा गुणस्थान होता है। ख्याल में आया ? जब उसके आगे अविरति नष्ट होती है तो वह जीव पंचम गुणस्थानवर्ती होता है। जब प्रमाद नष्ट होता है तो वह जीव सातवें गुणस्थान में जाता है और जब कषाय नष्ट होती है तब वह जीव बारहवें गुणस्थान में; अभी हम ग्यारहवें की बात नहीं करते हैं और आखिर में योग। जो अनंतचतुष्टय से युक्त है; अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख और अनंतवीर्य के धारक वे भी योग को हटा नहीं सकते। हम ऐसे सिकंदर ए आलम हैं; पहले तो हम योग करना चाहते हैं; योग को ख़तम करना चाहते हैं और नहीं तो ? नहीं हम पहले कषाय तो ओछा करो यानी कषाय को तो कम करो ! कषाय कम करने के पीछे लगते हैं।

अरे भाई ! जो बड़े में बड़ा पाप तेरे साथ है, वह है मिथ्यात्व, उसको तो तू टच भी नहीं करना चाहता क्योंकि मालूम ही नहीं न कि मिथ्यात्व क्या है ? मैं शरीररूप हूं यह मान्यता ही बड़ा मिथ्यात्व है। मैं शरीर की क्रिया कर सकता हूं। मैं योगा करता हूं वह क्या है ? कपालभाती क्या होता है ? कुछ करते न तुम लोग ? अरे प्रभु तू शरीर का परिणमन कर नहीं सकता यह पहले ध्यान में तो ले। हम मिथ्यात्व को वैसा का वैसा साबुत रखे और बाकी सब करने का, कषाय कम करने का प्रयत्न कर रहे हैं। अरे तू जब तक सम्यक्त्व प्राप्त नहीं करता है अनंतानुबंधी तुझ से दूर नहीं होगा और हम अनंतानुबंधी को रखते हुये, मिथ्यात्व को साबुत रखते हुये कषाय कम करने की सोचते हैं। देखो विचित्रता ! कोई सही मार्ग बताता है तो लोग सुनने को भी राजी नहीं हैं !

यहां बताते हैं कि भाई नियम से पहले जायेगा तो मिथ्यात्व जायेगा। ये पांच कारण बताये न, बंध के पांच कारण; उसमें से जावे तो पहले में पहले मिथ्यात्व जायेगा

बाद में अविरति जायेगी। ये क्रम से ही जायेंगे। पहले मिथ्यात्व गया और बाद में कषाय गया और फिर बाद में प्रमाद गया, फिर उसके बाद अविरति गयी ऐसा उलट-पुलट नहीं होगा। ख्याल में आया ? हमने तो शास्त्र पढ़ डाला है। तुमको मालूम नहीं है हम कई गांव जाते हैं दसलक्षण में। बोलते हैं ऐ हमारे यहां तो रोज़ाना तत्त्वार्थसूत्र का ही अभ्यास होना चाहिये। आपको उसमें सिखाने को नहीं आता है ? कोई बात नहीं। देखो हमारे पास ऐसी पुस्तक है उसमें सारे सूत्र लिखे हैं, उतना तो पढ़ोगे कि नहीं ? कोई पढ़नेवाला बैठता है दस मिनट के अंदर दस अध्याय ख़तम। उसमें क्या लिखा है ? लिखनेवाला जाने। मैं तो नियम से ...

अभी मैं क्या बोलूं मेरी भाषा में बहुत गन्दी बात आती है। छाती ठोककर बोलता हूं कि मैंने आजतक जहां-जहां मुझे पर्युषण में भेजा है वहां लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका सीखायी है। दिन में तीन-तीन बार। मैंने कहा अरे एक बात ऐसी हुयी, अभी क्या करें दो मिनट बाकी हैं सुनना। एक गांव गया था तो वहां कोई ऐसे बुजुर्ग थे ८०-८५ वर्ष के और वे ऐसे बाजू में बैठते थे। मुझे मालूम नहीं था कि वे वहां के ट्रस्टी हैं। मैं ७.३० बजे पहुंचा उस गांव में, ८ बजे प्रवचन था। तो मेरे को एक चिट्ठी मिली कि यह गुरुदेवश्री ने बनाया हुआ मंदिर है। यहां पांच परमागम हैं उसमें से आपको स्वाध्याय कराना है। आपको कम से कम पढ़ना तो चाहिये। अगर आपको जो कुछ बोलना है वह बाद में शाम को बोलना।

मैंने कहा आपने हमें बुलाया है हम आपके पीछे लगे नहीं थे। भाईसाहब, आपने हमें बुलाया है। आप कभी डॉक्टर के पास गये थे या नहीं ? आप स्वयं के लिये नहीं गये होंगे लेकिन अन्य किसीके लिये तो अवश्य गये होंगे। आप डॉक्टर को बताते हैं कि कौनसी दवा देनी है ? या वह जो देता है वह गुपचुप खाते हो तुम ? हम जानते हैं हमें क्या बताना है। आपको इतना ही आग्रह हो तो मुझे सिर्फ तीन दिन दीजिये सोमवार, मंगलवार, बुधवार। सोमवार ही था उस समय। गुरुवार के दिन आप कोई भी शास्त्र इस चौकी पर रखना; मैं आऊंगा तब खोलकर कोई भी लाइन पर आप उंगली रखना; वहां उस शास्त्र में से आपको लघु सिद्धान्त प्रवेशिका सिखाऊंगा। यह छाती ठोककर मैं बोल रहा हूं। मुझे सिर्फ तीन दिन की मोहलत देना और मैंने सिद्धान्त प्रवेशिका सिखाना चालू किया।

गुरुवार का दिन आया। तो मैंने कहा कि शायद आप लोग भूल गये होंगे आज गुरुवार है और आपको यहां शास्त्र रखना था। अभी भी आपको शास्त्र रखना है तो आपको याद दिलाता हूं। चुप, कोई हिलने को तैयार नहीं। आपको नया शास्त्र लाना है क्या ? कोई कुछ नहीं बोले। तो क्या मैं सिद्धान्त प्रवेशिका सिखाऊं ? हां-हां, सिखाना-सिखाना। उस समय अगुरुलघुत्व गुण मैंने सिखाया था मुझे पक्का याद है। एक घंटा हो गया तो वह बुजुर्ग यहां बैठे थे वह यहां मेरे तक आने में ५ मिनट लगे उनको इतने बुजुर्ग थे। चलने में तकलीफ थी। बोले पंडित जी, आपने मेरी आंखें खोल दी। मेरे पैर पड़े हो ! आपने मेरी आंखें खोल दी। मैंने कहा साहब, क्या बात हो गयी ? गुरुदेवश्री जो बताते थे वह बात अभी आपके कहने से हमारी समझ में आने लगी है। ४० साल से मैं उनके सान्निध्य में था। जब-जब पूज्य गुरुदेवश्री हमारे गांव पधारते थे वे मेरे घर पर ही उतरते थे। आपको कल मेरे घर भोजन करने के लिये आना है। तब मैं आपको मेरा अल्बम दिखाऊंगा। उन्होंने कहा कि यह नोट जो भेजी थी वह मैंने ही भेजी थी। मुझे मालूम नहीं था कि इसमें इतना माल है।

मैं आपसे यह पूछना चाहता हूं आप तो क्या अभी नये लोग हैं। यहां जो बुजुर्ग लोग बैठें हैं उनसे पूछता हूं कि जब-जब सोनगढ़ में शिबिर लगता था तो उसमें तीन विषय नियम से चलते थे। एक सिद्धान्त प्रवेशिका, एक छहढाला और एक मोक्षमार्गप्रकाशक। जो गुरुदेवश्री ने परंपरा चालू की है उसे हम तोड़े तो हम उनके चेले हैं या उनके दुश्मन हैं ? केवल गुरुदेवश्री की जय बोलने से उनकी जय नहीं होती है। उन्होंने जो मार्ग हमारे हाथ में दिया है उस मार्ग को हम आगे चलायें तो हम गुरुदेवश्री के सच्चे चेले हैं, अन्यथा तो कहने के लिये हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

२९. क्षीणमोह गुणस्थान, सयोगकेवली गुणस्थान

अभी शाम को हम बारहवें गुणस्थान के गमन और आगमन को देख चुके हैं। यह बारहवां गुणस्थान ऐसा है कि उसमें से ऊपर की तरफ ही जाना होगा। यानी तेरहवें गुणस्थान में ही गमन होगा नीचे के लिये भी गुणस्थान में उसका गमन नहीं है, एक बात। दूसरी बात - उसका आगमन भी क्षपकश्रेणी के दसवें गुणस्थान से हो रहा है। क्षपक दसवें सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान से ही बारहवें में आयेगा। अभी वहां से तो और कहीं अन्य गमन और आगमन है ही नहीं। मरण की अपेक्षा भी नहीं है कि हम उसको पहले गुणस्थान में भेज सकें। हम भेज रहे हैं न ? अरे, वे तो जाते हैं तो हम कहेंगे कि वह गये करके।

अभी हम **विशेष अपेक्षा विचार** कर रहे हैं। बारहवें गुणस्थान की क्या-क्या विशेषता है ? यहां मात्र पहला नंबर मैं पढ़ रहा हूं पृष्ठ क्रमांक २३२, **यहां मात्र सातावेदनीय का ईर्यापथास्रव होता है।** क्यों ? **क्योंकि बारहवें गुणस्थानवर्ती महामुनिराज को किसी भी प्रकार का कोई भी कषाय, नोकषायरूप, अर्थात् मोह कर्म का उदय तथा परिणाम नहीं रहा।** अब वे कैसे हो गये ? **वे सर्वथा वीतरागी हो गये हैं।** सर्वथा कहो या परिपूर्ण रीति से वे वीतराग हो गये हैं कहो। इसलिये कहते हैं **यहां आस्रव का एक मात्र कारण योग का ही सद्भाव है।** इस योग के बारे में हमने देखा था कि जो सयोगकेवली तेरहवें गुणस्थानवर्ती जीव हैं उनके भी योग अभी बाकी है। अयोग अवस्था तो केवल चौदहवें गुणस्थान में ही होती है।

अब दूसरा पॉइंट जो है वहां क्या बता रहे हैं ? देखो, कि **क्षपक अपूर्वकरण के प्रथम समय से ही चारित्रमोहनीयादि कर्मों की श्रेणी**गत असंख्यातगुणी निर्जरा प्रारंभ हुयी है। आठवें गुणस्थान से असंख्यातगुणी-असंख्यातगुणी निर्जरा चालू ही है। वह **निर्जरा निरंतर उत्तरोत्तर बढ़ते हुये वीतराग परिणामों के निमित्त से वृद्धिंगत भी होती जा रही है। बारहवें गुणस्थान के प्रथम समय से ही ज्ञानावरणादि तीनों घातिकर्मों का नया बंध होना भी सर्वथा रुक गया है।** हमने देखा था कि उनका बंध तो दसवें गुणस्थान के अंत तक ही होता है। बारहवें गुणस्थान के पहले समय से ये ज्ञानावरणादि तीन घातिकर्म हैं न, ये तीन घातिकर्म कौनसे बचे हैं ? ज्ञानावरणादि में किसको-किसको लेना है हमको ? कविताबहन आप बतायेंगी ? *श्रोता: ज्ञानावरण,*

दर्शनावरण और अंतराय। बहुत अच्छा। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अंतराय। यह आदि में इन दोनों को लेना। अभी यहां बता रहे हैं, हां, नाम और गोत्र वह भी हैं लेकिन घातिकर्मों का कहा न। हां घातिकर्मों में उनको नहीं लेंगे हम। इसलिये कह रहे हैं तीनों घातिकर्मों का नया बंध होना भी सर्वथा रुक गया है।

यहां बारहवें गुणस्थान के अंतिम समय में तीनों घातिकर्मों का सर्वथा नाश होते ही, उसी समय ज्ञान-दर्शन गुण की अल्पज्ञ अवस्था का व्यय और केवलज्ञान तथा केवलदर्शन पर्याय का उत्पाद एक ही समय में होता है। यहां क्या बात बताना चाहते हैं कि बारहवें गुणस्थान का जो आखिरी अंतिम समय है उसका व्यय; वह व्यय कब होता है ? कि तेरहवें गुणस्थान के पहले समय में उसका उत्पाद और यहां बारहवें का जो अंत समय है उसका व्यय। बारहवें के अंत में या अंत तक जीव अल्पज्ञ ही था। अल्पज्ञ का हमने दूसरा नाम देखा था; प्रमोदभाई आपको मालूम है ? हां, दिलीपभाई आप बता रहे है ? उनको नहीं आप हमको बताओ भाई। *श्रोता: प्रश्न नहीं समझ में आया।* अच्छा, प्रश्न नहीं समझ में आया। हमने अल्पज्ञ के लिये दूसरा कौनसा शब्द देखा था ? हां, हमें मालूम नहीं। आप हमें प्रश्न पूछ रहे हैं कि उत्तर दे रहे हैं ? जाने दो, पन्नालालजी आप ही बता दो ? *श्रोता: छद्मस्थ।* छद्मस्थ यही शब्द है। छद्म यानी आवरण और आवरण में स्थित हैं वे छद्मस्थ हैं। यहां जिनके आवरण बाकी हैं; कौनसे ? ज्ञानावरण और दर्शनावरण। वे अभी भी अल्पज्ञ ही हैं।

जो दूसरा पॉइंट है न, उसके दूसरे पॅरेग्राफ की दूसरी लाइन से फिर से पढ़ रहा हूं। यहां बारहवें गुणस्थान के अंतिम समय में तीनों घातिकर्मों का सर्वथा नाश होते ही उसी समय ज्ञान-दर्शन गुण की अल्पज्ञ अवस्था का व्यय और केवलज्ञान तथा केवलदर्शन पर्याय का उत्पाद एक ही समय में होता है। **उसी समय अल्प वीर्य का व्यय होकर अनंतवीर्य का उत्पाद होता है।** देखो यहां ऐसी बात है हम तो शास्त्र में ऐसा पढ़ते हैं कि घातिकर्मों का नाश करके किसी जीव ने अनंतचतुष्टय की प्राप्ति की है। ऐसा पढ़ते हैं न हम ! लेकिन वहां पर मोहनीय कर्म का तो पहले घात होता है। कहां ? बारहवें के पहले समय से तो वह नहीं है। ख्याल में आया ? ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अंतराय का घात तो बारहवें गुणस्थान के अंत में होता है। लेकिन सामान्यतः ऐसा कहा जाता है कि चार घातिकर्मों का नाश हुआ। ख्याल में आया ? लेकिन तीन ॲट अ टाइम नष्ट होते हैं। अंतराय, दर्शनावरण और ज्ञानावरण।

अभी तीसरा पॉइंट देखते हैं। **औदारिकशरीरधारी छद्मस्थ जीवों के शरीर में निरंतर अनंत निगोदिया जीव विद्यमान रहते हैं।** अभी यह किसकी बात चल रही है ? *श्रोता: अपनी।* अपनी। क्यों ? हमारी कैसे ? यह मुनियों की बात हो रही है न। *श्रोता: औदारिकशरीर है।* हां, औदारिकशरीर है। और कौन हो तुम ? छद्मस्थ हो कि नहीं ? तुम यानी हम भी हो ! या हम कोई अपने से अलग हैं ऐसा मत समझना। लेकिन आपने कहा न हमारी बात चल रही है। बिलकुल, हम भी इन्क्लुडेड हैं। लेकिन यहां मुनियों की अपेक्षा से बात बतायी जा रही है। कह रहे हैं कि औदारिकशरीरधारी छद्मस्थ जीवों के शरीर में निरंतर अनंत निगोद जीव विद्यमान रहते हैं।

देखो यह औदारिकशरीरधारी जीव कौनसी-कौनसी गति के होंगे ? आप बता पायेंगी बहन ? हां जी ? *श्रोता: मनुष्य और तिर्यंच।* मनुष्य और तिर्यंच। यह मनुष्यगति का जीव है और तिर्यंचगति का। नारकी और देवों के शरीरों में होगा कि नहीं ? मालूम है आपको ? होगा ? नहीं है बोल रही हैं या मुझे मालूम नहीं है बोल रही हैं ? मालूम नहीं है आपको ? मोना ? जोर से बोल। *श्रोता: वैक्रियिकशरीर में नहीं होते।* आपका कहना है वैक्रियिकशरीर में निगोदिया जीव नहीं होते। तो उनका क्या कहना है ? नारकी और देवगति के जीव इनको वैक्रियिकशरीर होता है। अभी यहां तो केवल औदारिक की बात कर रहे हैं। तिर्यंचों में भी निगोद जीवों की क्या बोलते हैं ? रेलम छेल है। रेलम छेल यानी क्या ? तिर्यंचों में उनकी बहुलता है।

मुझे एक बात याद आयी। हम अमेरिका जाते रहे हैं गये ४-५ साल से। वहां वॉशिंग्टन नाम का एक सेंटर है। वहां तो लिखकर रखा है कि चालू प्रवचन में किसीका मोबाइल बजे तो उसको ५० डॉलर दंड होगा और वह दंड मंदिर में दिया जायेगा किसीके घर में नहीं। *श्रोता: यहां भी लिखा है।* दंड है करके लिखा है ? हां, लिखो फिर प्रवचन सुनने भी नहीं आयेंगे लोग। यहां तो वे पार्ट टाइम सुनने का काम करते हैं। नहीं समझ में आया ? बोलें तो हम ख़राब और करें वह ख़राब नहीं- यही तकलीफ है।

क्या कहा **क्षीणमोही मुनिराज का शरीर भी औदारिकशरीर ही है; परंतु इन मुनिराज के शरीर में से प्रथम समय से ही अनंत बादर निगोदिया जीवों का प्रति समय निकलना अर्थात् मरना प्रारंभ हो जाता है।** अभी मुझे पूछना है कि आपके और मेरे शरीर में निगोद जीव हैं क्या नहीं ? बोलो भाई, *श्रोता: हैं।* हैं। तो हम

उनको प्रति समय मार रहे हैं कि नहीं ? अरे वे अपने मौत से मर रहे हैं। कई लोगों को तो पता ही नहीं कि यहां निगोद जीव हैं करके। देखो भाई मैं किसलिये पूछ रहा हूं आगे वही प्रश्न आनेवाला है। क्या कह रहे हैं ? देखो, मरना तो प्रारंभ हो जाता है। **क्षीणमोह गुणस्थान के अंतिम समय में सभी बादर निगोदिया शरीर के अभाव से अनंतर समयवर्ती,** यानी उसके बाद के समय में **तेरहवें गुणस्थान के प्रथम समय से ही मुनिराज परम औदारिकशरीरधारी अरहंत परमात्मा हो जाते हैं।** यानी अरहंत परमात्मा के शरीर में निगोदिया जीव होते ही नहीं।

अब प्रश्न पूछ रहे हैं देखो। **अनंत निगोदिया जीवों की हिंसा करनेवाले मुनिराज अहिंसा महाव्रती कैसे माने जा सकते हैं ?** तो कह रहे हैं **प्रमत्तयोग का अभाव होने से** यानी अभी प्रमाद हैं नहीं न उनके। **मुनिराज अहिंसा महाव्रती ही हैं। उन बादर निगोदिया जीवों का मरण उनके आयुकर्म के क्षय के निमित्त से ही हुआ है; उसमें औदारिकशरीर धारी मुनीश्वर की कुछ भी निमित्तता नहीं है।** अब चौथा पॉइंट आपको मालूम है कि **चतुर्थ गुणस्थान से बारहवें क्षीणमोह गुणस्थान पर्यंत सर्व जीवों की अंतरात्मा संज्ञा है।** अब पांचवां पॉइंट- '**क्षीणमोह**' **यह शब्द आदि दीपक है।** यानी इसके आगे के सभी गुणस्थानों में मोह रहित जीव हैं। **बारहवें से लेकर उपरिम गुणस्थानवर्ती सर्व जीव क्षीणमोही ही हैं। इस विषय को स्पष्ट समझने के लिये निम्न प्रकार का सुलभ उपाय अच्छा है- क्षीणमोह सयोगकेवली, क्षीणमोह अयोगकेवली, क्षीणमोह सिद्ध भगवान।** वे तो गुणस्थानातीत हैं। गुणस्थान में डालने की आवश्यकता नहीं थी। चलो, '**क्षीणमोह वीतराग छद्मस्थ**' **इस पूर्ण नाम में आये हुये छद्मस्थ शब्द को अंत्य दीपक समझना चाहिये।**

चलो, अब आगे बढ़ते हैं, २३५ पृष्ठ पर सयोगकेवली की बात है। अभी बारहवां गुणस्थान आ गया और थोड़ी ही देर में तेरहवां भी ख़त्म होगा और चौदहवां भी ख़त्म होगा। तो आप सबको मुक्ति मिल जायेगी। किससे ? अरे हमसे भाई ! रिअल मुक्ति मिले तो कितना बढ़िया ? अभी क्या कह रहे हैं ? देखो, **तेरहवें गुणस्थान का नाम सयोगकेवली है। यह क्षपकश्रेणी के चारों गुणस्थानों के बाद प्राप्त होनेवाला प्रथम गुणस्थान है। क्षीणमोह गुणस्थान में जो सुख पूर्णरूप से परिणमित हुआ था, अब वही सुख यहां केवलज्ञान के सद्भाव से अनंत सुखरूप से कहा गया है।** देखो वहां पर भी सुख था। कितना था ? पूर्ण सुख था। अंतराय के सद्भाव में अभी

उनको अनंतसुख प्रकट नहीं हुआ है। बारहवां गुणस्थान कैसा है ? अल्पज्ञ का है। तेरहवां गुणस्थान किसका है ? सर्वज्ञ का है।

तेरहवें गुणस्थान में अनंतसुख प्रकट होता है और अनुभवन की शक्ति, वेदन की शक्ति भी अनंत है। तो इसलिये उस अनंतसुख का अनंतरूप से वेदन करना वहां पॉसिबल है। इसलिये तेरहवें गुणस्थानवर्ती जीवों को अनंत सुखी कहा है और बारहवें गुणस्थानवर्ती जीवों को पूर्ण सुखी कहा है। यह फर्क है। ख्याल में आया ? क्योंकि बारहवें गुणस्थानवर्ती जीव को अनंतसुख प्रकट नहीं है और अनंतसुख का अनुभव करने की कपॅसिटि भी कहां है भाई ? अभी देख लो न, आप में और हम सब में अनंतसुख स्वभावरूप से विद्यमान है तो हमको कितना आनंद हो रहा है ? अरे ! अतीन्द्रिय आनंद का लवलेश भी नहीं है। पर्याय में वैसी योग्यता नहीं है। ख्याल में आया ? बारहवें गुणस्थानवर्ती जीव की पर्याय में भी पूर्ण सुख है; अनंत सुख नहीं है, पर्याय में वह प्रकट नहीं है। योग्यता भी नहीं है कि वह अनंतसुख का अनुभवन कर सके। वह तेरहवें में पॉसिबल है। अब आगे बढ़ते हैं। यहां कह रहे हैं यह जो अभी अनंतज्ञान और अनंतदर्शन यह क्या हो गया है ? यह अभी जो वीतरागता का फल है वह व्यक्त हो गया है। अब देखो यहां क्या बात बताते हैं ? यहां उन्होंने वह चेंज कर दिया लेकिन पूरा नाम तो लिख दिया है।

यह लिखते हैं **अरिहंत अवस्था में निम्नोक्त १८ दोष नष्ट हो गये हैं।** यह १८ दोष किसको होते हैं ? कि जो वीतरागी नहीं हैं उनके और जिनके ये १८ दोष नष्ट हुये हैं, वे नियम से वीतरागी होते हैं। जो बारहवें गुणस्थान में वीतरागी होते हैं वे एक अंतर्मुहूर्त के बाद नियम से सर्वज्ञ होते हैं। देखो यहां क्या कह रहे हैं- यह दोष हैं। हम हमेशा कहते हैं हमारे जो अरिहंत हैं वे १८ दोषों से रहित हैं। ये १८ दोष कौनसे हैं ? तो भूख लगना यह दोष है। क्या ? हमें ७.३० हो गये सुबह के नास्ते के लिये साढ़े सात हो गये तो क्या होता है ? दोष चालू होता है। क्यों ? अरे हमें यह दोष है ऐसा लगता ही नहीं है ! यह भूख लगना, प्यास लगना, नींद आना ये दोष हैं ऐसा हमें लगता ही नहीं। ऐसा हमें लगता तो आज की तारीख में एक भी डॉक्टर ज़िंदा नहीं रहता। क्या कह रहे हैं ? आधे लोग तो वहां इसलिये जाते हैं कि साहब हमको भूख ही नहीं लगती है। आधे लोग तो इसलिये जाते हैं कि मुझे नींद ही नहीं आती है। क्यों ? अरे नींद नहीं आती तो अच्छा है न प्रभु, तुझे निद्रा दर्शनावरण कर्म तो कम हो गया। तुझे नींद नहीं आती तो

तुझे स्वाध्याय के लिये अधिक वक्त मिला कि नहीं ? नहीं-नहीं, रात को नींद नहीं आती है न तो दिन में काम नहीं होता है। अच्छा तू पर का काम भी कर सकता है ?

देखो हमारी एक भूल होती है तो कहां-कहां तक हम पहुंचते हैं। यहां तो कह रहे भूख, प्यास यह बिमारी भी किसको आती है ? आत्मा को आती है या शरीर को आती है ? कई भोले जीवों की ऐसी मान्यता है कि केवली भगवान को दस्त होते हैं, पेट में दुखता है, उसको दवा-पानी करवाना पड़ता है, उनको भूख लगती है - ऐसे माननेवाले को पहचानते हैं आप ? अच्छा-अच्छा, आपके पास ही रखो। हां क्या कहा ? यहां कहते हैं अरे ! अभी बारहवें गुणस्थानवर्ती जीव हैं वीतरागी, उनके भी ये नहीं होंगे। हमारे भगवान को तो होंगे ही नहीं क्योंकि वह तो अरिहंत अवस्था का जीव है।

अभी हमने देखा असंख्यातगुणी निर्जरा-असंख्यातगुणी निर्जरा हो रही है और वह अप्रशस्त कर्मों का अनुभाग अनंतगुणा घटते जा रहा है। कब ? हर समय, हर समय, हर समय। तेरहवें गुणस्थान तक पहुंचेगा तो क्या रहेगा बाकी ? और उसे यह बात होगी कि नहीं ? बीमार पड़ जावे। अरे यह तो भैया कलंक है, अपराध है, दोष है ऐसा बता रहे हैं। और देखो बुढ़ापा ? यह अरिहंतों को कभी बुढ़ापना होता ही नहीं है। भले एक करोड़ पूर्व की आयु हो लेकिन उनमें बुढ़ापे का कोई लवलेश नहीं होता है। कहते हैं उनके जन्म नहीं होता है, मरण नहीं होता है, भय नहीं लगता है। भय क्यों नहीं लगता है ? भय किसीको विशेषरूप से लगता है कि मेरा मरण हो जायेगा तो ? इसीका भय है, वह मरा नहीं है लेकिन भय से मरा जा रहा है। ख्याल में आया ? वैसे ही यह राग नहीं, द्वेष नहीं, गर्व नहीं, मोह नहीं, चिंता नहीं, मद नहीं, अचरज यानी आश्चर्य नहीं ।

ये अरिहंतों को आश्चर्य क्यों नहीं होगा ? कौन बता पायेगा ? हां, बोलो साहब, बोलो-बोलो, *श्रोता: सभी पर्यायों को जानते हैं।* हां, आप कह रहे हैं तीन काल और तीन लोक के सर्व द्रव्यों के सर्व गुणों की सर्व तीन काल की पर्यायें उनके ज्ञान में झलकती हैं। अभी आज कौनसी २५ तारीख है न ? तो कल २४ तारीख को आपकी २०-२० मॅच हुयी जो बहुत लोग यहां नहीं थे न, वे मॅच में बैठे थे। मैं यह पूछता हूं अरे वह फलां-फलां जीत गया ? अभी तक तो हार रहा था। हमें अचरज लग रहा है। तो भगवान को क्यों नहीं अचरज लगता ? मैं बोलता हूं २५०० वर्ष पहले भगवान महावीर अरिहंत बने।

अप्रॉक्सिमेटलि हम बात लेते हैं। जब से उनको मालूम हो गया होगा कि नहीं कि यह २०-२० में कौन जीतनेवाला है ? उनकी बात छोड़ो, आदिनाथ जानते होंगे कि नहीं ? उनको अचरज किस बात का ? हर बात की उन्हें मालूमात है। हर चीज को वे अच्छी तरह से जानते हैं तो उनको अचरज किस बात का ? हमें पता नहीं है कि हम जहां बैठे हैं हमारे नीचे एक मेंढक है और हम उठ जाते हैं। क्यों ? तो हमें आश्चर्य लगता है कि यह कहां से आया ?

यह द्रोणगिरि है न अपना, कहां पर है भाई ? सागर से सिर्फ ४० किलोमीटर दूर है। उतना अंतर काटने को ५ घंटे लगते हैं मोटर में। मुझे बराबर याद है। इ.स. २००३ में हम दोनों वहां दसलक्षण पर्व में प्रवचनार्थ गये थे। बहुत बड़ा ऐसा स्टेज बनाया था, यह जो है न इससे भी बड़ा ऐसा जितना चौड़ा उतना पीछे भी ऐसा। जब हम प्रवचन में बैठे थे तो वह स्टेज के नीचे से सर्प निकला, बोलो। क्योंकि मेंढक आते थे उनके पीछे-पीछे सर्प भी आया होगा। हमें तो आश्चर्य हुआ कि हम कैसे ज़िंदा रहे ? लेकिन केवली भगवान को आश्चर्य नहीं होगा। वे तो जानते हैं कि ऐसा होनेवाला है और यह बचनेवाला है। चलो आगे तो यहां क्या बात हो रही है ? देखो, ये अचरज, निद्रा नहीं होती, अरति नहीं, खेद नहीं और स्वेद यानी उनके पसीना नहीं होता। यह सारी बातें जो हैं ये वीतरागी भगवान को नहीं होते। तो हमारे भगवान कैसे हैं ? वीतरागी हैं न, सर्वज्ञ भी हैं तो उनके यह कोई भी दोष नहीं होंगे।

कोई ऐसा कहता है कि हमारे भगवान को पसीना आ रहा है, देखने को चलो-देखने को चलो। तो भगवान को पसीना आता होगा कि नहीं ? यहां स्वेद दोष बताया वह नहीं होता है। वह बीच में एक बार मालूम है आपको ? हां गणपति दूध पी रहा है, बोलो ! वहां तक ठीक है, हमारे रिश्तेदार का फ़ोन आया; वे कहने लगे अरे भाई हमारे यहां अरिहंत हैं न वे दूध पी रहे हैं। हमने कहा तुम्हारे घर में मंदिर कहां से आया ? तो बोले मंदिर नहीं हमारे यहां कॅलेण्डर है, कॅलेण्डर के सामने हम दूध रखा तो सब दूध ख़त्म हो गया। यह देखो कैसे मिथ्यात्व कहां से कहां घुस जाता है हमें पता ही नहीं लगता है। ख्याल में आया ? क्या बतायें अभी बोलो ? मैं तो कहता हूं भाईसाहब कि जब तक हमें सच्चे देव का स्वरूप पता नहीं है तो हम मूर्ख जैसी मान्यता रखने में कोई कसर नहीं छोड़ते। ख्याल में आया ?

लोग कहते हैं तुम हठी हो। कौन ? तुम यानी दिगम्बर लोग। क्यों साहब ? अपनी ही हांकते हैं, दूसरे का कोई मानते ही नहीं। अरे माने कैसे ? झूठ को झूठ ही कहेंगे और सच्चे को सच्चा ही कहेंगे। तुम झूठ को कितना भी मुलम्मा लगाओ, कुछ भी करो सच थोड़े ही होनेवाला है ? हमारे मराठी में तो ऐसी कहावत है; हिन्दी में मैं ट्रान्स्लेट करके बताऊ 'गधे को कितना भी खरारा करो,' खरारा समझते हैं आप ? हां, उसको ऐसा वह ब्रश आता है उससे उसको घिसते हैं। घोड़े को भी करते हैं। तो उसको 'खरारा करने से वह गधा घोडा बननेवाला नहीं है।' वैसे आप कोई भी, जिनमें ये १८ दोष बाकी हैं, राग बाकी है; क्या यह देखो मैं तो यह छोड़ना चाहता था लेकिन अभी आयेंगे फिर से वापस।

देखो यहां पर बताते हैं **मोक्षमार्गप्रकाशक** में यह बात आयी है वह कौन किसकी बात कर रहे हैं ? कि **देवाधिदेवपने को प्राप्त हुये हैं** यानी कौन ? अरिहंत हुये हैं। यह पेज २३५ पर है। **तथा आयुध** हां आयुध यानी क्या ? शस्त्र, **अंबरादिक** कोई अंबर यानी जिसको हम कहते हैं कि वस्त्र- अंबरादिक, **व अंगविकारादिक जो काम, क्रोध आदि जो निंद्यभावों के चिन्ह, उनसे रहित जिनका परम औदारिकशरीर हुआ है।** देखो हमारे भगवान आयुध से रहित होते हैं। हमने किसीको पूछा क्यों साहब आपके भगवान के हाथ में धनुष क्यों ? गदा क्यों ? क्या बोलते हैं, भाला, परशु क्यों ? जो भी होता हो आप समझ लो सब- तलवार क्यों ? क्यों आपके भगवान डरते हैं क्या ? अरे मूरख, हमारे भगवान काहे को डरेंगे ? अरे वे तो उनके जो अनुयायी हैं - उनको माननेवाले हैं; उनपर अगर कोई संकट आयेगा तो उसके लिये वे तैयार हैं। शेरोवाली मां, क्यों ? तो अभी उनमें राग बाकी है कि नहीं ? दूसरे की मैं कुछ मदद करूं, दूसरे को सहायता करूं। तो वह रागवाला जीव भगवान हो सकेगा क्या ?

शस्त्र की क्या आवश्यकता है। शस्त्र रखना यह हिंसक प्रवृत्ति का चिन्ह है। कहते हैं अंबरादिक यानी वस्त्रादिक रखना। अभी यह बहुत बोलने जैसी बात नहीं। अंगविकारादिक जो काम क्रोध आदि निंद्यभावों के चिन्ह। आप कभी कलकत्ता गये हैं कि नहीं ? गये ? वहां क्या फेमस है ? काली माता, उसकी इतनी लम्बी जीभ दिखाते हैं। ऐसा डरावना भयानक चेहरा होगा क्या किसी भगवान का ? देखो, नाम लेकर मैं इसीलिये बोल रहा हूं कि हम अगर कभी गलती से ऐसे भगवान समझ कर पैर पड़ने

लगें तो हम नींद से जाग जाये; हम क्या कर रहे हैं ! यहां शास्त्रों में तो बात लिखी पड़ी है कि यह बात हो ही नहीं सकती है। जिनके अभी राग परिणाम बाकी हैं, द्वेष परिणाम बाकी हैं और जिनको अभी चिंता रही है कि हमारे अनुयायियों का क्या होगा तो वे कैसे भगवान हैं ? अरे ! हमारे मुनिराज भी अहिंसा महाव्रतधारी हैं और भगवान ? लड़ाई करने जाते हैं, सारथी बनते हैं और क्या-क्या नहीं करते ? चलो, बहुत हो गया। इसमें आप समझ लेना सब कुछ।

अब देखो पेज नंबर २३६। वहां पर **घाति चतुष्क के क्षय के काल में औदयिक अज्ञान नाशक तथा असहाय केवलज्ञानादि नव लब्धिसहित होने पर परमात्मा संज्ञा को प्राप्त जीव की योगसहित वीतराग दशा को सयोगकेवली गुणस्थान कहते हैं।** यह अरिहंतों के कितने गुणस्थान होते हैं ? हां साहब ? *श्रोता: तेरहवां।* हां, आपने कहा तेरहवां, दीपकभाई, इनकी बात सही है ? *श्रोता: सही है।* अच्छा, गणेशजी आप क्या कहना चाहते हैं ? *श्रोता: चौदहवें के आखिर तक होते हैं।* अरे, मैंने पूछा अरिहंतों के कितने गुणस्थान होते हैं ? तो आपको बताना है कितने हैं। गांगजीभाई बोलो साहब ? *श्रोता: तेरहवां सयोगी केवली और चौदहवां अयोगी केवली।* ये दोनों ही अरिहंतों के गुणस्थान हैं। देखो हम तो रोज णमो अरिहंताणं बोलते हैं। वे पहले गुणस्थान में हैं कि दूसरे गुणस्थान में ? यह हमको मालूम नहीं। दो गुणस्थान हैं तो कौनसे ? पहले-दूसरे या तेरहवें-चौदहवें ? भाई हमें जानना पड़ेगा। गणेशजी आपको बुरा लगता है मैं समझता हूं परंतु हम जिनको नमस्कार कर रहे हैं उनके स्वरूप का अगर हमें पता नहीं है, तो हमारा नमस्कार उन तक पहुंचेगा या नहीं ?

देखो, यह क्या बात हुयी मालूम है ? हमारे सुभाषभाई हैं न फलटणवाले, वे उनके गांव में हमें बुलाना चाहते थे। तो उन्होंने हमें लेटर लिखा कि भाई दिनेशभाई, उज्ज्वलाबहन हम आपको यहां आमंत्रण करना चाहते हैं। आप जरूर आना और उन्होंने खत डाल दिया। लेकिन क्या हुआ ? अ लेटर विदाऊट ॲड्रेस। क्या हुआ ? तो पहुंचेगा कि नहीं हमको ? वैसा हम णमो अरिहंताणं कहते हैं परंतु वे कौनसे गुणस्थान में हैं, उनका क्या स्वरूप है, उससे अपने को क्या करने का है ? नमस्कार किया न ? बात ख़तम- ऐसा नहीं चलेगा भाई ! अरिहंतों का तेरहवां और चौदहवां गुणस्थान है यह बात हमें मालूम होनी चाहिये। भाईसाहब ? भले हम ग्यारह अंग और नव पूर्व के पाठी हों उसका कोई मतलब नहीं है। हमें सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का स्वरूप का भान होना

चाहिये, ज्ञान होना चाहिये तो ही अपने स्वभाव का अनुभव होगा। यह बात मैंने प्रवचनसार गाथा ८० से आपको एक बार समझायी थी, जो कुन्दकुन्द आचार्य लिखते हैं। हम बोलते हैं इसलिये बात थोड़ी है ? अब कुन्दकुन्द आचार्य जो कह रहे हैं वे तो साक्षात् सीमंधर भगवान को सुनकर आये थे और बाद में उन्होंने पांच परमागम ग्रंथ लिखें। ख्याल में आया ? अब आगे बढ़ते हैं देखो-देखो।

अभी यहां कह रहे हैं कि **घाति चतुष्क के क्षय के काल में औदयिक अज्ञान नाशक** यह अज्ञान भी दो प्रकार का होता है, यह मालूम है कि देखे हम ? **तथा असहाय केवलज्ञानादि नव लब्धिसहित होने पर परमात्मा संज्ञा को प्राप्त जीव की योगसहित वीतराग दशा को सयोगकेवली गुणस्थान कहते हैं।** देखो यहां २-३ बातें हैं। घाति चतुष्क कौनसे हैं ? कौन बताना चाहेगा घाति चतुष्क ? हां, दो जने मिले हमको। आप भी बतायेंगे ? अच्छा-अच्छा इनको, हमारे रमेशचंद्रजी योगीराज। *श्रोता: ज्ञानावरण कर्म, दर्शनावरण कर्म, मोहनीय कर्म और अंतराय कर्म।* बहुत अच्छा, आपने सही बताया। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय इनको घातिकर्म चतुष्क यानी चार बातें। इनके क्षय के काल में क्या हो गया ? उनका क्षय हो गया एक बात। उस समय क्या हुआ ? औदयिक अज्ञान का नाश हुआ। औदयिक अज्ञान नाशक और क्या है ? वह औदयिक अज्ञान का नाश करनेवाला क्या है ? कहते हैं असहाय केवलज्ञान आदि। यह केवलज्ञान कैसा है ? असहाय है, अनाथ है। प्रमोदभाई असहाय यानी क्या ?

अरे ! उस ज्ञान को परिणमन में किसी सहाय की आवश्यकता नहीं है। वह ज्ञान असहाय है, अनाथ है। हम अनाथ कहते हैं तो समझते हैं अरे गरीब बेचारा, इसको कोई है नहीं, मां-बाप नहीं हैं, अनाथ है। उस अनाथ की बात नहीं; वह नाथ यानी उसका मालिक, उसका स्वामी और कोई नहीं है। असहाय है और वह कैसा है ? केवलज्ञानादि नवलब्धि। यह क्या निकाला साहब ? यह नवलब्धि क्या होती हैं ? बहन आप केहशो ? तमने पूछूं छुं, मने कोइना नाम खबर नथी, याद नथी। हां आप कहेंगी बहन ? जोर से बोलना। हां बोलो- *श्रोता: क्षायिक दान, क्षायिक लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य, केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षायिक सम्यक्त्व और क्षायिक चारित्र।* क्षायिक ज्ञान, दान की बात कर रहे, क्षायिक दान हां ये पांच हो गये। बहुत अच्छा। देखो आपने क्या विलोम पद्धति से चालू किया ? देखो पहले तो पहले हम यह जानते हैं जो अरिहंत होते

हैं उनके क्षायिक ज्ञान; तो आप दान बोले तो मैंने समझा कि गुजराती में आप ग्रान कहते हैं क्या ? कोई बात नहीं। क्षायिक ज्ञान, क्षायिक दर्शन, क्षायिक सम्यक्त्व, क्षायिक चारित्र - ये चार बातें हो गयी। अभी अंतराय कर्म रह गया न तो। क्षायिक दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य ये पांच सब क्षायिक हैं।

क्षायिक हैं यानी क्या ? उनके प्रतिस्पर्धी जो कर्म हैं, उन सबका भुक्का हो गया है। ज्ञानावरण कर्म हट गया है, दर्शनावरण कर्म हट गया है, यह चारित्रमोहनीय, दर्शनमोहनीय, अंतराय सब निकल गये। तो इनको नव प्रकार की क्षायिकलब्धि प्राप्त हुयी है। उसमें से एक कौन है ? केवलज्ञान आदि, आदि में ये आठ को लेना। सुरेशभाई बात समझ में आती है ? यह हमारे अरिहंत नवलब्धि से सहित हैं। उसमें से उन्होंने एक का नाम लिया है- केवलज्ञान। आदि कहने से बाकी के आठ सब मिलकर नौ लब्धि सहित होने पर कौनसी संज्ञा को प्राप्त हुये ? बहिरात्मा ? हां ? कौनसी संज्ञा को प्राप्त हुये हैं ? हां, बोलो-बोलो, परमात्मा पद को यानी संज्ञा को प्राप्त। वे जीव कैसे हैं अभी ? योग सहित हैं। इसलिये उनका नाम सयोगकेवली है।

अभी यह हमने बहुत आहिस्ते से पढ़ा, अभी फटाफट पढ़ेंगे। **घाति चतुष्क अर्थात् ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय कर्मों का क्षय होते ही उसी समय केवलज्ञानादि नव लब्धियां उत्पन्न होती हैं।** ये दोनों कार्य एक समय में होते हैं यानी उनका नष्ट होना और इन लब्धियों का प्राप्त होना। **इस ही एक समय की घटना** यानी **कार्य को चार घाति कर्मों के क्षय के निमित्त से केवलज्ञानादि होते हैं। ऐसा निमित्त-नैमित्तिक** का कथन शास्त्र में मिलता है। **इस विषय को आचार्य श्री उमास्वामी ने तत्त्वार्थसूत्र के दसवें अध्याय में प्रथम सूत्र द्वारा स्पष्ट किया है।** '**मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलम्।**' अभी ऊपर ये अर्थ लिया है हमने। **कर्मों के नाश होने से केवलज्ञानादि की उत्पत्ति नहीं होती। कोई स्वयं मरनेवाला अन्य को कैसे जन्म दे सकता है।** यानी यह क्या बात बताना चाहते हैं ?

इन कर्म का नाश हुआ इसलिये इनको केवलज्ञानादि प्राप्त हुये। अरे जो मर गया, जिसका नाश हो गया वह क्या करेगा ? वह नाश हुआ, नष्ट हुआ, उसकी अवस्था बदली उसके अपने स्वचतुष्टय में और जीवों ने केवलज्ञानादि प्राप्त किये अपने स्वचतुष्टय में। इसलिये कहते हैं कर्मों का नाश केवलज्ञान को उत्पन्न नहीं कर सकता।

ऐसा कहेंगे कि केवलज्ञानावरण कर्म का क्षय हुआ इसलिये केवलज्ञान की प्राप्ति हुयी। यह उपचार का कथन है, निमित्त का कथन है। **केवलज्ञान की पर्याय तो जीवद्रव्य के ज्ञान गुण में से प्रकट होती है।** दसवें गुणस्थान के अंतिम समय में ही मोह कर्म का संपूर्ण क्षय हो गया है। बारहवें गुणस्थान के अंतिम समय में ज्ञानावरणादि तीनों घातिकर्मों का नाश यानी क्षय भी हो गया है। **इनके अभावरूप निमित्त को मुख्य करके और निमित्त का ज्ञान कराने के लिये मोह एवं ज्ञानावरणादि तीनों घातिकर्मों के क्षय से केवलज्ञान हुआ। ऐसा निमित्त-नैमित्तिक संबंध देखकर व्यवहारनय से, उपचार से घातिकर्मों के नाश से केवलज्ञान होता है; ऐसा आचार्यश्री कथन करते हैं।**

उमास्वामीजी का जो सूत्र है उसके लिये यह सारा एक्स्प्लनेशन दिया है। अभी कहते हैं **अज्ञान दो प्रकार का होता है।** दिलीपभाई आपको मालूम है अज्ञान दो प्रकार का है ? एक सम्यक् ज्ञान और एक मिथ्याज्ञान। बराबर है न ? अरे यह ज्ञान की बात नहीं कर रहे हैं, अज्ञान की बात कर रहे हैं। हां, यहां ज्ञान के नहीं, अज्ञान के दो भेद बता रहे हैं। वह भी दो प्रकार का है इसलिये उन्होंने लिखकर रखा है अच्छा है। देखो क्या कहते हैं ? **मिथ्या श्रद्धा के निमित्त से संशयादि विपरीतता के लिये हुये जो व्यक्त ज्ञान होता है, उसे अज्ञान अथवा मिथ्याज्ञान कहते हैं।** क्या कहा ? यह मिथ्या श्रद्धा जिनकी है, अपनी भाषा में कहो तो मिथ्यादर्शन सहित जीव है, उसका ज्ञान भी मिथ्याज्ञान होता है। **यह अज्ञान प्रथम गुणस्थान से लेकर दूसरे सासादनसम्यक्त्व गुणस्थान पर्यंत होता है।** यहां बता रहे हैं कि ये दो ही गुणस्थानों के जीवों को अज्ञानी कहा है और तीसरे गुणस्थानवाले को मिश्रज्ञानी कहा है और चौथे गुणस्थान से आगे सम्यक् ज्ञान कहा है।

अभी बता रहे हैं कि **ज्ञानावरण कर्म के उदय से जो ज्ञान का पर्याय में अभाव रहता है, उसे भी अज्ञान कहते हैं। इस दूसरे प्रकार के अज्ञान का नाम औदयिक अज्ञान है।** अभी देखो इसको जरा हम समझने की कोशिश करेंगे। हम आपसे पूछते हैं, सुरेशभाई को पूछेंगे अपना क्या जाता है। सुरेशभाई आप एअरोप्लेन चलाना जानते हैं ? बोले नहीं साहब। रसोई करना जानते हैं ? अरे वह हमारा काम थोड़ी है ? ऐसी क्या बात करते हो। तो यह क्या हो गया ? यह पाककला जो है यानी रसोई बनाने की कला है, उसका हमें अज्ञान है; उसको कहते हैं औदयिक अज्ञान।

अभी यहां क्या कहा ? हमें एअरोप्लेन चलाने को नहीं आ रहा है तो वह कला या उसका ज्ञान हमें नहीं है क्योंकि हमारे ऊपर उस संबंधी ज्ञानावरण कर्म का आवरण है। आपको गुजराती भाषा बोलने को आती है ? हां आती है भाई, बिलकुल आती है तो वह हमारा अज्ञान नहीं है; गुजराती भाषा को हम जानते हैं। लेकिन आपको जर्मन भाषा नहीं आती है तो आपका जर्मन भाषा का औदयिक अज्ञान है।

अज्ञान दो प्रकार का कहा- एक मिथ्याज्ञान और दूसरा औदयिक अज्ञान। यह औदयिक अज्ञान फिर से मैं पढ़ता हूं। औदयिक यानी कर्मों के उदय से जो बना है उसको औदयिक कहेंगे। देखो क्या कह रहे हैं ? फिर से, ज्ञानावरण कर्म के उदय से जो ज्ञान का पर्याय में अभाव रहता है। तो केवलज्ञानी को कौनसा होगा ? मिथ्याज्ञान होगा कि औदयिक अज्ञान होगा ? हां जी बोलो, कौन बोलना चाहेगा ? अरे बोलो, कोई महिलाओं में से कोई भी बोलने को तैयार नहीं। आप बोलो बहन, केवलीज्ञानी को मिथ्याज्ञान होगा या औदयिक अज्ञान होगा ? *श्रोता: कोई नहीं होगा।* कोई नहीं होगा। अरे उनके तो परिपूर्ण सम्यग्ज्ञान है। पूर्ण ज्ञान है और वह भी विकसित ज्ञान है। क्षायिक ज्ञान है, बहुत अच्छा। क्षायिक ज्ञान का अर्थ क्या होता है ? यह सर्वज्ञ कहो या क्षायिक ज्ञानी कहो एक ही बात है। क्षायिक ज्ञान का अर्थ होता है ज्ञानावरण कर्मों का क्षय हो गया है। अभी अपने पास टाइम नहीं, मेरे पास क्वेश्चन्स बहुत हैं।

देखो अब यहां आगे बढ़ते हैं चलो, यहां कह रहे हैं ज्ञानावरण कर्म के उदय से जो ज्ञान का पर्याय में अभाव रहता है, उसे भी अज्ञान कहते हैं। इस दूसरे प्रकार के अज्ञान का नाम औदयिक अज्ञान है। **यह पहले गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान के अंतिम समय पर्यंत रहता है।** औदयिक अज्ञान, अरे यह गणधरों को भी होता है। क्या ? गणधर का ज्ञान कौनसा है मालूम है आपको ? कितने ज्ञान होते हैं गणधर को ? दिलीपभाई आपको मालूम है ? *श्रोता: केवलज्ञान नहीं रहता है।* केवलज्ञान नहीं रहता है और ? हम पूछते हैं कितने रहते ? हमने पूछा आपने खाना खाया ? हां ? घूमकर आये बोले। *श्रोता: चार ज्ञान होते हैं।* चार ज्ञान हैं। कौन-कौनसे ? नाम बोलो। *श्रोता: मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान।* मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान।

ये चारों ज्ञान कौनसे प्रकार के ज्ञान हैं ? हां रमेशजी ? चारों ज्ञान कौनसे प्रकार

के हैं ? *श्रोता: सम्यग्ज्ञान हैं।* वह नहीं। ज्ञान के प्रकार भी आपको बताने पड़ेंगे, औदयिक अज्ञान है या क्षायोपशमिक ज्ञान है या क्षायिक ज्ञान है ? क्या है क्या ? ये चार ज्ञान जो हैं वे कौनसे ज्ञान हैं ? *श्रोता: क्षायोपशमिक ज्ञान हैं।* क्षायोपशमिक ज्ञान हैं। पहले उसको पकड़ो। तो क्षायोपशमिक ज्ञान है यानी परिपूर्ण ज्ञान नहीं है जिसको हम क्षायिक ज्ञान कहते हैं। मैं बहुत आगे जाना चाहता था, आपने अटका दिया। अच्छा किया। देखो केवलज्ञानावरण कैसा है ? सर्वघाति कर्म है हमने देखा न ? तो जो केवलज्ञान की प्राप्ति करता है उसने किसका नाश किया है ? केवलज्ञानावरण का नाश किया है न ? अनिलजी आप क्या कह रहे हैं ? मुंह से हां या ना में जवाब दो। *श्रोता: केवलज्ञानावरण कर्म का नाश किया है।* केवलज्ञानावरण कर्म का नाश किया है। आप क्या कहते हैं ? मालूम नहीं ? *श्रोता: अपने से ज्ञान प्राप्त किया है।*

हां लेकिन हम निमित्त की भाषा में पूछ रहे हैं तो कौनसे कर्म का नाश किया है उन्होंने ? *श्रोता: केवलज्ञानावरण।* केवलज्ञानावरण। हां, आप कुछ कहना चाहती है ? जोर से बोलना। *श्रोता: केवलज्ञानावरण का नाश किया।* केवलज्ञानावरण का नाश किया। आप क्या कहेंगी बहन ? मैं रुका न यह बहुत फायदेमंद हुआ आपके लिये। हां साहब ? *श्रोता: चार घातिकर्मों का नाश किया।* उससे केवलज्ञान नहीं होता है सुनना। ज्ञानावरण ही तो मैं पूछ रहा हूं। पांच भेद होते हैं न- मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण और केवलज्ञानावरण। तो केवलज्ञानावरण केवलज्ञान को होने नहीं देता है ऐसा हमने देखा था। तो उसने कौनसे ज्ञानावरण कर्म का नाश किया ? हां, *श्रोता: केवलज्ञानावरण।* केवलज्ञानावरण। देखो अभी हमारे हां, अभी हमारे रमेशभाई- *श्रोता: पांचों ही प्रकार के आवरण का नाश किया।* अरे वाह रे वाह, यह हमारी बहन बिलकुल जल्दी जागृत हुयी। अगर हम सिर्फ केवलज्ञानावरण कहेंगे तो अभी मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण बाकी है उसको।

देखो हमको यही पता नहीं है कि हमारे केवलज्ञानी कैसे हैं। भाई तो ये लोग नमस्कार करते हैं किसको ? परमात्मा को और वे कौनसे ज्ञान के धारी हैं वही मालूम नहीं है। देखो, हमारा यह औदयिक अज्ञान ! ख्याल में आया ? मैं इसको छोड़कर आगे भागनेवाला था। तो यहां ध्यान में रखना कि पूरे पांचों ही ज्ञानावरण का क्षय किया है। यहां तो हम यह बात देख रहे थे कि जो क्षायिक ज्ञानी होता है उसके तो सारे ज्ञानावरण

कर्म नष्ट हुये हैं और जो क्षायोपशमिक ज्ञानी है उसका ज्ञानावरण का क्षयोपशम चल रहा है, अभी उसका परिपूर्ण ज्ञान नहीं हुआ है। इसका अर्थ गणधर को भी औदयिक अज्ञान है। भाई यह जो सिद्धान्त कहते हैं वे सिद्धान्त हमारे ज्ञान में होंगे तो यह बातें अपने आंखों से ओझल नहीं होंगी। क्यों मौसी बात बराबर है कि नहीं है ? यह हम सोचते नहीं हैं न इसतरह से। अभी और डिटेल में मत जाना, टाइम कम है अपने पास। अभी सिर्फ एक घंटा और दस मिनट हैं अपने हाथ में और अभी सयोगकेवली और अयोगकेवली दो गुणस्थान को देखना है।

अब हम आगे बढ़ते हैं उसी पेरेग्राफ की तीसरी लाइन से पढ़ते हैं। यह पहले गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान के अंतिम समय पर्यंत रहता है। कौनसा ? औदयिक अज्ञान। कौनसे ? पहले से बारहवें गुणस्थान तक; और गणधर कौनसे गुणस्थान में होते हैं ? बोलो अनिलजी ? *श्रोता: छठे और सातवें गुणस्थान में।* छठे और सातवें में। बराबर ? और कहते हैं **औदयिक अज्ञान का नाश केवलज्ञान होने पर ही होता है। अतः परिभाषा में औदयिक अज्ञान नाशक विशेषण केवलज्ञान के लिये दिया है।** यह परिभाषा देखी थी न हमने। कहते हैं **औदयिक अज्ञान का नाशक** हम परिभाषा को देख रहे २३६ पेज पर। पहले लाइन में बीच से, औदयिक अज्ञान **का नाशक तथा असहाय केवलज्ञान**। यह बात समझ में आयी ? यह परिभाषा ऐसे ही नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवर्ती ने नहीं बनायी। बिलकुल सोच समझकर यह बनायी है। ख्याल में आता है ? **केवलज्ञान का दूसरा विशेषण 'असहाय' दिया है।** उसका अर्थ हमने देख लिया है।

अब हम एकदम लास्ट पॅरेग्राफ पर आते हैं। **केवलज्ञान के लिये न शरीर की आवश्यकता है, न इन्द्रियों की, न बाह्य प्रकाश आदि निमित्तों की। इतना ही नहीं केवलज्ञान को बाह्य ज्ञेय** यानी **ज्ञान जिस वस्तु को जानता है उसे ज्ञेय कहते हैं।** यह ज्ञेय की भी परिभाषा हमको बता दी। कहते हैं इतना ही नहीं, केवलज्ञान को बाह्य ज्ञेय **वस्तुओं की साक्षात् उपस्थिति भी आवश्यक नहीं है।** क्योंकि केवली के ज्ञान में भूतकाल और भविष्यकाल की सारी बातों का ज्ञान होता है। इसलिये हमें तो-सामने कोई होवे तो उसका ज्ञान होगा और दूर होवे तो होगा कि नहीं ? अभी आपका बम्बई का घर आपको याद आ रहा है कि नहीं ? भले अभी नहीं होगा दूसरे को दिया, लेकिन मेरा घर था कि नहीं ? सामने कहां है ? फिर भी। केवली को क्यों नहीं होगा यह

मैं बताना चाहता हूं। तो वस्तुओं की साक्षात् उपस्थिति भी आवश्यक नहीं है, **क्योंकि केवलज्ञान तो जो ज्ञेय पदार्थ वर्तमान में छद्मस्थ को साक्षात् प्रत्यक्ष नहीं, जो ज्ञेय सूक्ष्म, अंतरित और दूर हैं, ऐसे अनादि भूतकालीन सर्व पदार्थों को और भविष्यकालीन अनंतानंत पदार्थों को भी, अर्थात् सर्व द्रव्य, गुण, पर्यायों को युगपत् एक ही समय में** यानी जिसको हम युगपत् और वर्तमान में एक ही समय में **प्रत्यक्ष एवं स्पष्ट जानता है।**

अभी **अनंतज्ञान**, अनंत**दर्शन**, क्षायिक **सम्यक्त्व** और **चारित्र** तथा **अनंतवीर्य को अनंतचतुष्टय कहते हैं। दान, लाभ, भोग, उपभोग** और **वीर्य को** ये कैसे बताया अनंतचतुष्टय में ? अनंतसुख और अनंतवीर्य होना चाहिये। यह सम्यक्त्व और चारित्र को मिलकर सुख कहे, चारित्र और वीर्य रखना बीच में। दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य को **पांचलब्धि कहते हैं।** ये पांच और चार- इसतरह नौ लब्धि होती हैं। **इसतरह चतुष्टय और पंचलब्धि मिलकर क्षायिक नवलब्धि हो जाते हैं।**

अभी **नाम अपेक्षा विचार।** यह थोड़ासा पढ़कर हम आगे बढ़ते हैं। देखो यहां बहुत अच्छी बात बतायी है **सयोगकेवली परमात्मा के ही अरिहंत, अरहंत** और **अरुहंत, ये नाम हैं।** अभी देखो मैं विशेषरूप से आपको समझाना चाहता हूं। यह नॉर्थ यानी उत्तर भारत में सभी लोग णमो अर्हंताणं कहने में विशेष रस धारते हैं और ये महाराष्ट्र के जो लोग हैं, वे णमो अरिहंताणं बोलने में विशेष रस धरते हैं। फिर झगड़ते हैं तुम गलत हो- तुम अरहंत बोलते हो, वे बोलते हैं तुम अरिहंत बोलते हो। अरे परंतु दोनों ही नाम और आगे तो जाओ, अरुहंत भी नाम है। यह आगम में इसका उल्लेख मिलता है और हम झगड़ते हैं कि तुम गलत हो, हम गलत हैं। देखो, इसको हम पुनः देखेंगे। यह नंबर दो का पॉइंट इसके नीचे नाम की अपेक्षा, देखो जो **सर्व जीवों से पूजनीय**; मिल गया आपको ? दो का पॉइंट उसी पेज पर २३८ । नाम की अपेक्षा विचार जो हमने पहले तीन ही नाम देखे। बाकी आपको याद हैं- **केवली** कहे, **परमात्मा** कहे, **सकल परमात्मा** कहे, **सयोगीजिन** कहे, **परम ज्योति** कहे, **सर्वज्ञ** कहे, **जिनेन्द्रदेव**, **जीवनमुक्त, आप्त,** ऐसे **१००८ नाम** अरिहंतों के हैं। अभी उनमें से ये तीन नाम हैं जिन पर लोगों का झगड़ा चलता है।

तो कहा पहले **मिथ्यात्व और क्रोधादि विभाव भावरूपी शत्रुओं को अरि**

यानी **शत्रु**, **हंत** यानी **नष्ट करनेवाले** यानी **जो** शत्रुओं को **नष्ट करते हैं उन्हें अरिहंत कहते हैं।** यह अरिहंत क्यों कहा जाता है ? उसमें कुछ लोग ऐसा आरोप करते हैं कि केवली को कोई शत्रु ही नहीं हो सकता। अरे शत्रुओं को नाश करके वे अरिहंत हुये। यह मोहरूपी शत्रु नहीं था क्या उनके पास ? ख्याल में आया ? अपने ही विकार उनके शत्रु हैं। पर हम क्या करें ? झगड़ा करनेवालों को तो बहाना चाहिये। क्यों ? अब कह रहे हैं दूसरा- **जो सर्व जीवों से पूजनीय एवं आदर्श हैं, उन्हें अरिहंत कहते हैं।** यह भी बिलकुल सरल है। अब आगे तीसरा बता रहे हैं- **आचार्य कुन्दकुन्द ने अपने ग्रंथों में मुख्य रीति से अरहंत शब्द का प्रयोग किया है।** अब आगे **जिनका पुनः जन्मरूप से उत्पन्न होना नष्ट हो गया है** यानी दुबारा अभी जन्म लेनेवाले नहीं है, **उन्हें अरुहंत कहते हैं।**

अभी जरा मैं प्रश्न पूछूंगा, आपको उत्तर देना है। यह तेरहवें गुणस्थानवर्ती जीव कौन-कौनसे गुणस्थानों में गमन करेगा ? पहले नीचे की सोचते हैं हम। नीचे कौन-कौनसे से गुणस्थान में आयेगा ? *श्रोता: नहीं आयेगा।* नहीं आयेगा। क्यों साहब ? *श्रोता: क्षपकश्रेणी चढ़ता है।* हां क्षपकश्रेणी चढ़ता है। तो क्या हुआ ? *श्रोता: वह चौदहवें में जायेगा, नीचे नहीं आयेगा।* वह चौदहवें में जायेगा, नीचे नहीं उतरेगा, बहुत अच्छा। देखो तैयार हो गयी बहन। पहले दिन आयी थी तो ऐसा मुंह करके बैठी थी ऐसा- मैं कुछ नहीं समझती हूं। अभी घर में जाकर सबको सिखायेगी। है न ? शाबाश। हां, और वह कौनसे गुणस्थान से ऊपर आये साहब ? तेरहवें गुणस्थानवर्ती जीव उनका आगमन कहां से हुआ है ? चौदहवें से ? *श्रोता: बारहवें से।* बारहवें से।

आगे अभी यह आपको मालूम नहीं है, उनका जघन्य काल और उत्कृष्ट भी बताया जाता है। अभी अपने पास समय कम है न तो उसको भी हम पुस्तक के माध्यम से ही देखेंगे। अभी यहां तो दो, तीन बातें हैं। अभी उनका जो सम्यक्त्व है वह कौनसा सम्यक्त्व होना चाहिये ? हां, बहन बोलो आप ? हां बोलो, आपको ही पूछ रहा हूं। हां, जोर से बोलो। कौनसा सम्यक्त्व होगा उनको ? *श्रोता: क्षायिक सम्यक्त्व।* क्षायिक सम्यक्त्व। बहुत अच्छा। तेरहवें गुणस्थान में एक क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है और चारित्र कौनसा होगा ? *श्रोता: यथाख्यातचारित्र।* यथाख्यातचारित्र। बहुत अच्छा। इसमें परम यथाख्यात कहा है। अभी देखो **काल अपेक्षा** बात करके हम रुकेंगे शायद। देखो जघन्य काल कितना है ? अरिहंत अवस्था की बात चल रही है; अरिहंत

जो होगा रेग्युलर अरिहंत, तीर्थंकर नहीं, उनका जघन्य काल है अंतर्मुहूर्त। **तीर्थंकर सयोगकेवली को छोड़कर अन्य परमगुरु** देखो अरिहंत को भी परमगुरु कहा; **अपना जीवन कम से कम अंतर्मुहूर्त पर्यंत यहां सयोगकेवली अवस्था में व्यतीत करते हैं। कोई भी सयोगकेवली जिनेन्द्र अंतर्मुहूर्त से कम कालावधि में तेरहवें गुणस्थान को छोड़कर चौदहवें गुणस्थान में गमन नहीं कर सकते।**

अब कहते हैं इसतरह **सयोगी परमात्मा का दिव्यध्वनि से उपदेश हो या न हो**; **विहार हो या न हो,** अथवा **अंतःकृत केवली हो**; **सभी सयोगकेवली परमात्माओं का तेरहवें गुणस्थान का जघन्य काल अंतर्मुहूर्त ही है। तीर्थंकर सयोगकेवली परमात्मा का जघन्य काल** यानी अब ये कौनसे अरिहंत लिये हैं ? जो तीर्थंकर हैं उनका भी जघन्य काल होता है। तो कितना ? **वर्ष पृथक्त्व अर्थात् ३ वर्ष से लेकर ९ वर्ष के अंदर ही होता है।** यानी मिनिमम तीन साल और मॅक्झिमम ९ साल इसके बीच में जो भी काल होगा उस काल को वर्ष पृथक्त्व कहते हैं। तो यह कहा वर्ष पृथक्त्व है। **इसका अर्थ यह हुआ कि तीर्थंकर सयोगकेवली परमात्मा का जघन्य विहार काल भी वर्ष पृथक्त्व ही होता है।**

उत्कृष्ट काल की बात देखेंगे। **गर्भकाल सहित आठ वर्ष तथा** और आठ वर्ष के बाद कुछ अंतर्मुहूर्त में ही उन्होंने तीर्थंकरत्व प्राप्त किया; अरिहंत अवस्था और तीर्थंकर - वह जीव **आठ अंतर्मुहूर्त कम एक पूर्व कोटि काल** तक उनका तीर्थंकरत्व रहेगा। यानी एक कोटि पूर्व को लेना; उसमें से मायनस किसको-किसको करना है ? आठ वर्ष; कबसे ? गर्भ से। बालक गर्भ में आया उस समय से गिनना आठ वर्ष और कुछ अंतर्मुहूर्त। तब तक इनका तेरहवां गुणस्थान रहता है। अभी मध्यम काल तो देखा हमने, यह अंतर्मुहूर्त से बढ़कर और वह बाकी-बाकी समझ लेना। अभी गमनागमन का विचार, अभी हम गमन करेंगे जब आगमन होगा १५ मिनट के बाद, तब करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

३०. सयोगकेवली गुणस्थान, अयोगकेवली गुणस्थान

तेरहवें नंबर का सयोगकेवली गुणस्थान है उसके बारे में हम विशेष जान रहे थे। वहां हमने देखा था कि जो केवली भगवान होते हैं यानी अरिहंत अवस्था का जो जीव है उसका जघन्य काल कितना है ? अंतर्मुहूर्त है और अगर तीर्थंकर की अपेक्षा से देखते हैं तो वह ३ से ९ यानी पृथक्त्व वर्ष इतना ही उनका काल जघन्य काल है।

श्रोता: ३ से ९ यानी पृथक्त्व वर्ष ? हां, देखो यह जो पेज नंबर २३९ है न तो उसमें उत्कृष्ट काल लिखा है उसके ऊपर का पॅरेग्राफ हम पढ़ रहे हैं। देखो एक बात बिलकुल ध्यान रखना सभी तीर्थंकर अरिहंत होते हैं, सभी अरिहंत तीर्थंकर नहीं होते। ख्याल में आया ? यानी जो तीर्थंकर हैं वे अरिहंत हैं। तेरहवें गुणस्थान जो है सयोगकेवली, वह सयोगकेवली में अरिहंत जीव भी होंगे और तीर्थंकर जीव भी होंगे। जो अरिहंत हैं तीर्थंकर नहीं हैं, सयोगी है उनका मिनिमम यानी जघन्य काल अंतर्मुहूर्त है। जो अरिहंत भी हैं और तीर्थंकर भी हैं वे अंतर्मुहूर्त नहीं रहेंगे क्योंकि उनको दिव्यध्वनि आदि जो उनका विशेष पुण्य का उदय है वह होगा। तो कम से कम कितना काल होगा ? कहते हैं वर्ष पृथक्त्व। पृथक्त्व का अर्थ कुछ वर्ष। अभी पृथक्त्व सागर कहेंगे तो ३ सागर से ९ सागर ऐसा होगा। पृथक्त्व मास कहेंगे तो ३ से ९ मास; कभी-कभी ७ से ८ भी आता है उसमें। लेकिन यहां ३ से ९ वर्ष की बात बतायी है। *श्रोता: समय हर तीर्थंकर का अलग-अलग होता होगा ? सबका एक तो नहीं होगा ?* नहीं, हां साहब ? *श्रोता: जघन्य काल ?* जघन्य जो होगा वह सबका जिनका जघन्य होगा, उतना ही जघन्य काल होगा, उत्कृष्ट काल तो अभी बताया आपको तीर्थंकर का।

श्रोता: तीर्थंकर चौबीस, चौबीसों का ही काल ३ से ९ वर्ष के बीच का ही रहेगा या किसी का कम ज्यादा भी होगा ? आपका पूछना ऐसा है हमारे चौबीस तीर्थंकर हैं। सभी तीर्थंकर का काल ३ से लेकर ९ वर्ष का होगा या किसी का कम अधिक होगा ? अभी हम तीर्थंकर को भूल जाते हैं। अभी पंचमकाल चल रहा है यह बात पक्की है, पंचमकाल के मनुष्य कि आयु कितनी है ? अधिक से अधिक ? यहां शास्त्र में बताया १२० वर्ष। अभी अपने में ऐसा भी कोई मनुष्य है कि वह माता के पेट में से अभी जन्म भी नहीं लिया है, दो महीने में मर जाता है। तो अभी सबकी आयु १२० पकड़ेंगे क्या ? *डॉ. उज्ज्वला शहा:- परंतु उत्कृष्ट पूछेंगे तो एकमात्र १२० वर्ष कहेंगे। वैसे तीर्थंकरत्व*

का जघन्य काल विशिष्ट कुछ वर्ष होगा परंतु शास्त्र में उसको केवल पृथक्त्व कहा है, ३ से ९ ऐसा किसी भी शास्त्र में अलग से बताया नहीं है। जघन्य एक विशिष्ट ही होगा उसमें भेद नहीं होंगे। तीर्थंकरत्व का जो जघन्य काल है वह कितना है ? यानी सयोगी गुणस्थान का उनका काल कितना है ? कि जो तीर्थंकर हैं, सयोगीकेवली हैं यानी तेरहवें गुणस्थान में हैं उनका अगर किसीका जघन्य काल गिनना है तो पृथक्त्व वर्ष का है और सिर्फ अरिहंत अवस्था का जीव होगा तो उसका सयोगकेवली गुणस्थान का जघन्य काल अंतर्मुहूर्त है।

अभी जो उत्कृष्ट काल बताया जा रहा है वह तीर्थंकर का भी हो सकता है और किसी अन्य अरिहंत सयोगीकेवली का भी हो सकता है। तो उसका काल कितना कहा है कि एक कोटि पूर्व काल लेकिन उसमें से मायनस किसको करना है ? **गर्भ काल सहित आठ वर्ष अधिक आठ अंतर्मुहूर्त**। यह सब किस में से कम करना है ? एक करोड़ पूर्व में से- **एक पूर्व कोटि में से**।

अब आगे बढते हैं। **गमनागमन अपेक्षा विचार** करेंगे, तेरहवें गुणस्थानवर्ती जीव कहां-कहां गमन करेगा ? हां साहब हां ? श्रोता: चौदहवां गुणस्थान। चौदहवें गुणस्थान में और आयेगा कहां से ? *श्रोता: बारहवें गुणस्थान से।* यह कितना आसान है। हां, अब देखो- गमनगमन अपेक्षा विचार। **गमन- सकल परमात्मा जिनेन्द्र, तेरहवें गुणस्थान से नियमपूर्वक चौदहवें** यानी अयोगी **अयोगकेवली गुणस्थान में ही गमन करते हैं**। **आगमन- मात्र क्षीणमोह गुणस्थान से ही सयोगकेवली गुणस्थान में आगमन होता है।** अभी यहां **विशेष अपेक्षा विचार** करते हैं। **यदि सयोगकेवली परमात्मा को तीर्थंकर नामकर्म का उदय हो तो उनके जन्म के दस, तीर्थंकर प्रकृति नामकर्म के उदय के निमित्त से समवशरण की रचना काल में केवलज्ञान के दस अतिशय** यानी जन्म के दस अतिशय, केवलज्ञान के दस अतिशय, **देवकृत चौदह अतिशय** और **आठ प्रातिहार्य**। ऐसे **सर्व** मिलकर **४२ अलौकिक वैभव** उसीको क्या कहा ? **अतिशयों का सहज संयोग होता है।** यह उनके पुण्य का उदय है इसलिये ये ४२ बातें बतायी हैं वे उनके होती हैं।

अब कहते हैं **सभी सयोगकेवली परमात्माओं को क्षायिक ज्ञानादि अनंतचतुष्टय की प्राप्ति नियम से होती है।** तीसरा पॉइंट- **सामान्य मनुष्यों की**

तरह सयोगकेवली के कवलाहार नहीं होता; परंतु नोकर्माहार यानी नोकर्म आहार। नोकर्म यानी क्या ? शरीर, मन, वाणी के परमाणुओं को ग्रहण करना उसको नोकर्म आहार कहते हैं। **जिससे परमौदारिक शरीर की स्थिति दीर्घकालपर्यंत एक-सी बनी रहती है। रोग तथा जन्म मरणादि अठारह दोष भी नहीं होते एवं असाताजन्य बाधायें नहीं होती।** हमने अभी देखा था न कोई असाता उनके नहीं होती है। अब कहते हैं **सयोगकेवली परमात्मा कई प्रकार के होते हैं।** सयोगकेवली तेरहवें गुणस्थानवर्ती जीवों की अपेक्षा से उन्होंने डिव्हिजन की हुयी है।

कहते हैं- **पंचकल्याणकवाले तीर्थंकर केवली** यानी अपने भरतक्षेत्र में जो तीर्थंकर बनते हैं उनके पांच कल्याणक होते ही होते हैं। **तीन कल्याणकवाले तीर्थंकर केवली** यानी जो गर्भ में आये, जन्म हुआ और जो सम्यग्दृष्टि हैं उन्होंने तीर्थंकर कर्म बांधना चालू किया। उसमें उनका तपकल्याणक भी होगा, ज्ञानकल्याणक भी होगा और मोक्षकल्याणक वे तीन कल्याणकवाले जीव हैं। वैसे ही **दो कल्याणकवाले तीर्थंकर केवली,** ये भी सारे तीर्थंकर होंगे जिनके कल्याणक होते हैं। दो यानी कौनसे ? जो मुनि होने के बाद तीर्थंकर प्रकृति बांधना शुरू करेंगे क्योंकि हमने देखा था तीर्थंकर प्रकृति चौथे गुणस्थान से आठवें गुणस्थान के छठे भाग तक बंधती है। वह मुनि अवस्था चल रही है इसलिये दीक्षाकल्याणक-तपकल्याणक हुआ नहीं; उनका ज्ञानकल्याणक और मोक्षकल्याणक होगा।

अब कहते हैं दो कल्याणकवाले तीर्थंकर केवली और कौनसे भेद हैं ? **मूक केवली**- मूक केवली यानी जो बोलते नहीं हैं, मौन होता है उनका। **अंतःकृत केवली** यानी जिन पर बहुत बड़ा उपसर्ग होता है, उसीमें उनको केवलज्ञान प्राप्त होता है। आगे दिया है अंतःकृत केवली देखो पेज नंबर २४१ पर बात आयी है दूसरा पॅरेग्राफ। मूक केवली के लिये क्या कहते हैं ? **जिन सयोगकेवलियों को वाणी का योग नहीं अर्थात् उनकी दिव्यध्वनि नहीं होती, उन्हें मूक केवली कहते हैं।**

अंतःकृत केवली- **यानी ध्यानारूढ़ अवस्था में विराजमान जिन मुनिराजों को पूर्वभव या इसी भव का बैरी देव अथवा विद्याधरादि उठाकर आकाश में ले जाते हैं और ऊपर से समुद्र या अग्नि में अथवा पहाड़ पर फेक देते हैं। ऐसे अत्यंत प्रतिकूल अवसरों पर आकाश से नीचे समुद्र या अग्नि में गिरने से पहले अथवा**

पहाड़ से टकराने के पहले ही शुक्लध्यान से श्रेणी मांडकर आकाश में ही सयोगकेवली होकर अंतर्मुहूर्त में सिद्धपद प्राप्त कर लेते हैं। अभी ऊपर से कोई गिरा देवे तो कितना ४८ मिनिट लगेगा कि नहीं ? ख्याल में आया न ? आपका जो प्रश्न था। अरे ! ऊपर से गिरते-गिरते श्रेणी मांडते हैं और केवलज्ञान की प्राप्ति होती है। और केवलज्ञान होने के बाद कोई उपसर्ग नहीं होता है। हां, मौसी आपको ख्याल में आयी यह क्या बात है ? आपका प्रश्न था न। तो क्या कहा ? टकराने से पहले शुक्लध्यान में श्रेणी मांडकर आकाश में ही सयोगकेवली होकर अंतर्मुहूर्त में सिद्धपद प्राप्त कर लेते हैं **उन्हें अंतःकृत केवली कहते हैं। जिन्होंने संसार का अंत कर दिया है। जो आठ कर्मों का अंत अर्थात् विनाश करते हैं, वे अंतःकृत केवली कहलाते हैं। उसका अर्थ यह है कि जो अंतःकृत होकर सिद्ध होते हैं, निष्ठित होते हैं व अपने स्वरूप से निष्पन्न होते हैं; वे अंतःकृत केवली** बाकी छोड़ दो अभी।

अब आगे की बात है **उपसर्ग केवली-** उसका भी देख लेते हैं। **मुनि अवस्था में उपसर्ग हो, उस उपसर्ग अवस्था का नाश होते ही जिन्हें केवलज्ञान प्राप्त होता है;** आपके पहचान के कोई हैं क्या ऐसा ? *श्रोता: पार्श्वनाथ।* पार्श्वनाथ, अच्छा, जिन्हें केवलज्ञान प्राप्त होता है **उन्हें उपसर्ग केवली कहते हैं।** जैसे मुनि पार्श्वनाथ लिखा ही है देखा अरे ! वाह रे वाह शाबाश। जैसे मुनि पार्श्वनाथ पर कमठ ने उपसर्ग किया था तत्पश्चात् उन्हें केवलज्ञान हो गया था। ऐसे बहुत सारे हैं न। यह क्या इधर है न, एक इधर है देखो, पढ़ लो। हमारे पांच पांडव हैं, उसमें से तीन पांडव तो मोक्ष गये। **उपसर्ग केवली, सामान्य केवली, समुद्घात केवली, सातिशय केवली**, **अनुबद्ध केवली**। अनुबद्ध केवली यानी एक के बाद दूसरा जो केवली इमीजिएट्लि हो जाते हैं । जैसे किसीका निर्वाण होता है तो दूसरे को केवलज्ञान होता है इसतरह से। अभी हमने देखा था न, महावीर भगवान के बाद तीन जनों का हुआ। यह देखते हुये हम आगे बढ़ेंगे।

अब आगे आते हैं २४२ पृष्ठ पर। यह बीच के तीन लाइन में बोल्ड है न उसके नीचे की बात देखते हैं। **जिनेन्द्र भगवान की स्वभावतः अस्खलित और अनुपम दिव्यध्वनि सर्वांग से तीनों संधिकालों में और मध्यरात्रि में भी छह-छह घड़ी।** एक घड़ी यानी कितना ? २४ मिनट। २ घड़ी का एक मुहूर्त। तो यहां इनका क्या होता है ? छह-छह घड़ी यानी २४ इन टू ६ आप कितने मिनट होते हैं ? देख लेना हो। यहां क्या कहते हैं ? जिनेन्द्र भगवान की स्वभावतः अस्खलित; अस्खलित यानी बिलकुल

कहीं रुकावट नहीं है, स्खलन नहीं होता है। निरंतर वह ॐ ॐ ऐसा चालू है। तो कहते हैं अस्खलित और अनुपम, अनुपम यानी उसके लिये कोई दूसरी हम उपमा ही नहीं दे सकते हैं। किसीसे कंपॅरिझन ही नहीं कर पाते हैं। उनकी दिव्यध्वनि कैसी है ? अनुपम है। वह किसमें से निकलती है ? हम-आप तो मुख से बोलते हैं ऐसा कहने में आता है और हमारे जतिशभाई कहेंगे इनके मुखारविंद से, बहुत पोअेटिक बोलते हैं भाई ! तो वैसा इनके मुखारविंद से नहीं निकलती है। उनके सर्वांग में से दिव्यध्वनि खिरती है और वह भी कब ? तीनों संधिकालों में।

यह संधिकाल यानी क्या होता है ? जिसको हम ट्वाय्लाइट कहते हैं अंग्रेजी में। यानी अभी रात खत्म नहीं हुयी है और सूरज भी नहीं उगा है वह जो कोई संधिकाल है। दोपहर के १२ बजे हैं- जो प्रभात खत्म नहीं हुयी और मध्यान्ह चालू नहीं हुआ है वह जो बीच का काल है। शाम को सूर्यास्त हुआ नहीं, अंधेरा नहीं हुआ और सूर्य प्रकाश अभी खत्म नहीं हुआ है। ये जो संधिकाल- ये तीनों संधिकालों में; क्या कहा ? खिरती है और उनका सबका टोटल करके बताया ९ घंटे ३६ मिनट यानी ६-६ घडी ३ बार यानी ६ त्रिक १८ इन टू २४ करते बैठना और उसके कितने घंटे और मिनट होते हैं मुझे बाद में बताना। **और एक योजन पर्यंत सुनाई देती है** नो लाउड स्पीकर नथिंग। कैसी विशेषता है ? देखो।

इसके अतिरिक्त विशेष पुण्यात्मा कौन है पुण्यात्मा ? **गणधरदेव, इंद्र अथवा चक्रवर्ती के प्रश्नानुसार अर्थ के निरूपणार्थ वह दिव्यध्वनि अन्य समय में भी खिरती है।** वह कभी रात में आते हैं, पूछेंगे तो देंगे उत्तर उनको। देखो वहां उन्होंने प्रश्न पूछा इसलिये दिव्यध्वनि खिरती है ऐसा नहीं। जो ध्वनि है जो भाषावर्गणा का कार्य है उस पुद्गल को भी समझता नहीं है और जिनेन्द्र भगवान रागी-द्वेषी नहीं हैं कि अरे ! आदिनाथ भगवान सोचते होंगे मेरा चक्रवर्ती बेटा आया है, अभी वह बोलेगा तो अपने को बोलना चाहिये न। क्यों सोहम ? तुम आये हो तो कुछ बोलना पड़ेगा न ? ऐसा हमें लगता है, तीर्थंकर को नहीं लगता है। क्या कहा ? देखो, कह रहे हैं गणधरदेव इंद्र अथवा चक्रवर्ती के प्रश्नानुसार अर्थ के निरूपणार्थ वह दिव्यध्वनि शेष समयों में खिरती है।

अब आगे बताते हैं **एक योजन के भीतर दूर अथवा समीप बेठे हुये १८**

महाभाषा और ७०० लघु भाषाओं से युक्त ऐसे तिर्यंच, मनुष्य तथा देव की भाषारूप में परिणत होनेवाली तथा न्यूनता तथा अधिकता से रहित मधुर, मनोहर, गंभीर, विशद विशद यानी क्या ? स्पष्ट **ऐसी भाषा को प्राप्त दिव्यध्वनि होती है।** अभी लास्ट लाइन से पढ़ता हूं। **अवसर्पिणीकाल में होनेवाले २४ तीर्थंकरों के समवशरणों का प्रमाण क्रमशः बारह योजन से प्रारंभ होता है; घटता हुआ अंतिम तीर्थंकर का समवशरण एक योजन का रह जाता है।** एक योजन यानी अभी हम कहते हैं कि ४ कोस, १ कोस इज ईक्वल टू २ माइल्स। *श्रोता: सोलह किलोमीटर।* हां। अरे ! किलोमीटर की बात आप ? हम माइल में गड़बड़ कर रहे साहब। आप किलोमीटर कहां पूछ रहे हैं ? देखो २ माइल का १ कोस होता है अभी हम झगड़ा नहीं करते हैं यहां जो लिखा है उसमें हम गिनेंगे, फिर बाद में हम मॅथेमॅटिक्स देखेंगे। हम तो वीक हैं साहब उसमें।

क्रमशः बारह योजन यानी क्यों साहब बारह योजन क्यों ? अरे ! आदिनाथ की हाइट ही ५०० धनुष की थी और महावीर तो सात हाथ के थे तो उनका एक योजन में सब काम निपट गया। क्या ? ॲकॉर्डिंग टू साइझ वाइज होता है न ! और **उत्सर्पिणिकाल के तीर्थंकरों के समवशरण का प्रमाण उल्टे क्रम से चलता है** अथवा **अर्थात् प्रथम तीर्थंकर का एक योजन से प्रारंभ होता है और बढ़ता हुआ अंतिम तीर्थंकर का बारह योजन प्रमाण होता है।**

अब आगे चलो, पेज नंबर २४४ यहां ९ नंबर का पॉइंट देखते हैं। **सयोग शब्द अंत्य दीपक है। अतः प्रथम गुणस्थान से लेकर इस तेरहवें गुणस्थान पर्यंत के सर्व जीव सयोगी** यानी क्या ? सयोगी बोलना केवली मत बोलना। सयोगी यानी **योगसहित ही हैं। इसे निम्नानुसार स्पष्ट समझ सकते हैं**- वह उनका हमेशा का **सयोग मिथ्यात्व, सयोग सासादनसम्यक्त्व** वगैरह-वगैरह। **केवली शब्द आदि दीपक है** यानी इसके आगे तेरहवां, चौदहवां केवली ही होगा। अभी उन्होंने तो उसको सिद्ध भगवान में भी बिठा दिया चलो। क्योंकि हम गुणस्थान की बात देख रहे न तो वहां उन्होंने सिद्धों की भी बात की है, अच्छी बात है। केवली शब्द आदि दीपक है। अभी आगे बढ़ते हैं बाकी आप पढ़ लेना। उसमें कोई खास बात नहीं है, आप तो बिलकुल समझदार हो, समझोगे।

अब **अयोगकेवली गुणस्थान-** सेकंड पॅरेग्राफ देखते हैं हम, पेज नंबर २४७। **योगों के नष्ट होते ही सयोगकेवली परमात्मा ही अयोगकेवली कहलाने लगते हैं। शरीर में रहते हुये भी योग का निरोध एवं श्वासोच्छ्वास बंद होने से मन-वचन-काय के निमित्त से होनेवाला आत्मप्रदेशों का कंपन रुक गया है।** वास्तव में आत्मप्रदेश का जो कंपन है उसको ही योग कहा गया है। वह उनके नहीं होता है। आत्मप्रदेश निश्चल हो जाते हैं, वे निष्कंप अवस्था को प्राप्त होते हैं। यहां तक कि उनके श्वासोच्छ्वास भी बंद हो जाता है। ख्याल में आया ? तो क्या कहते हैं ? वह शरीर है उनका; अभी देखो हम ऐसा मानते हैं न कि हमने मन-वचन-काय का निरोध किया। वह मन का मतलब जिसको हम कहेंगे कि हमारे मन की चंचलता है उसकी बात है, हां। अभी हम हर मिनट में श्वास ले रहे कि नहीं ? श्वास ले रहे तो क्या होता है ? छाती फूल जाती है, फिर जगह पर आती है। वह हमारा शरीर आगे गया मान लो तो आत्मा के प्रदेश भी वैसे ही आयेंगे। ये दोनों एकक्षेत्रावगाही हैं न ? सिर्फ पुद्गल बाहर आवे और आत्मा अंदर रहे, ऐसा नहीं होता है। तो वहां भी आत्मप्रदेशों का कंपन चल रहा है यह मैं बताना चाहता हूं।

अब जो गाथा है उसके आगे- **संपूर्ण शील के ऐश्वर्य से सम्पन्न, सर्व आस्रव निरोधक, कर्मबंध रहित जीव की योगरहित वीतराग सर्वज्ञ दशा को अयोगकेवली गुणस्थान कहते हैं।** अभी देखो यहां जो शील के ऐश्वर्य से सम्पन्न यानी आत्मा में परिपूर्णता से जो मग्न है उसको शील कहा है, स्वरूप में एकाग्रता है उसको शील कहा है। आगे क्या कहते हैं ? सर्व आस्रव निरोधक; ये सर्व आस्रव निरोधक कौन हो सकते हैं ? भाईसाहब आप जानते हैं ? आस्रव उत्पन्न करनेवाले कौन हैं ? हां बहन जोर से बोलना। *श्रोता: मोह, राग-द्वेष।* हां मोह, राग-द्वेष। अच्छा और दूसरा कोई आस्रव का कारण है ? आप बतायेंगे ? हां नहीं-नहीं आपको पूछ रहा हूं, हां, मिसेस नांदगावकर हां। *श्रोता: मोह और योग।* मोह और योग। अच्छा-अच्छा, आपने तत्त्वार्थसूत्र तो पढ़ा ही है। तत्त्वार्थसूत्र के आठवें अधिकार का पहला सूत्र कौन बतावे ? हां यहां पर कोई ? हां बोलो-बोलो। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग; ये सारे क्या हैं ? ये आस्रव हैं; ये बंध के हेतु कहो, कारण कहो, उत्पन्न करनेवाले हैं।

आपने जो मोह, राग-द्वेष और मोह, योग कहा न वह ठीक है लेकिन बीच में ये भी बताये हैं। इसलिये क्या कहते हैं ? सर्व आस्रव निरोधक। ऐसे कौन हैं ? क्योंकि

उनके योग भी नहीं बचा है न। सयोगकेवली के भी योग है तो वहां भी सातावेदनीय का कर्मबंध हो रहा है और कर्मबंध रहित अभी नया कर्म कोई बंध नहीं रहा है। जीव की योगरहित वीतराग सर्वज्ञ दशा है और तेरहवें गुणस्थानवाले जीव की योगसहित वीतराग दशा है इतना फरक है। उस **दशा को अयोगकेवली गुणस्थान कहते हैं।** अभी **नाम अपेक्षा विचार** करेंगे- **सयोगी जिन इस एक नाम को छोड़कर** क्योंकि तेरहवें गुणस्थान में सयोगकेवली कहा था वह यहां ॲप्लिकेबल नहीं हो सकता है। बाकी के वही के वही नाम हैं और उसके साथ अयोगकेवली आप जोड़ सकते हो । आगे, **सम्यक्त्व अपेक्षा विचार** करते हैं तो उनको कौनसा सम्यक्त्व होना चाहिये ? तो क्षायिक सम्यक्त्व ही होगा और चारित्र है वह भी परम यथाख्यातचारित्र है।

अब **काल की अपेक्षा** बहुत अच्छी बात है जो हम देखेंगे और इसकी बात मेंने पहले आपको बतायी भी थी। पांच ह्रस्व स्वर कौनसे ? - अ, इ, उ, ऋ, लृ। इनका उच्चारण, क्या कह रहे ? *श्रोता: पांच अक्षर होते हैं।* पांच ह्रस्व स्वर, हां, **अ, इ, उ, ऋ, लृ**। इनके **उच्चारण काल पर्यंत अर्थात् अंतर्मुहूर्त काल है। यहां काल के जघन्य, उत्कृष्ट और मध्यम भेद नहीं है। चौदह गुणस्थानों में से यह अयोगकेवली गुणस्थान ही एकमेव ऐसा गुणस्थान है, जो अपने अंतर्मुहूर्त काल का यथार्थ ज्ञान कराने में पूर्ण समर्थ है।** बाकी जगह हमने यथायोग्य अंतर्मुहूर्त इतना ही देखा था। यहां अंतर्मुहूर्त का जो कुछ स्पेसिफिक; अभी भाई हमारे जैसा जिसकी जुबान हेवी क्या बोलते हैं आप ? भारी है वह तो अ, इ, उ, ऋ, लृ ऐसा स्लो बोलेगा और जो फास्ट बोलनेवाला वह अ, इ, उ, ऋ, लृ जल्दी बोलेगा। तो वह अंतर्मुहूर्त भी यथायोग्य समझ लेना। तो कहते हैं, **अन्य गुणस्थानों के अंतर्मुहूर्त काल के लिये हमें केवलज्ञानगम्य यथायोग्य अंतर्मुहूर्त काल ऐसा कहना अनिवार्य हो गया है; क्योंकि अंतर्मुहूर्त के यथार्थ निर्णय के लिये चौदहवें गुणस्थान के समान कोई मापदण्ड हमारे पास नहीं है।** मापदण्ड दिया है लेकिन हर एक की जुबान फास्ट-स्लो चल सकती है, इसमें तुम्हारा या मेरा ऐसा मत करना।

गमनागमन अपेक्षा विचार- अभी क्या कहते हैं ? देखो यह बहुत आसान है। गमन कहां होगा चौदहवें गुणस्थान से ? हां जी ? *श्रोता: सिद्ध अवस्था।* सिद्ध अवस्था। बहुत अच्छा और आयेगा कहां से ? *श्रोता: तेरहवें गुणस्थान से।* हां, कौनसे गुणस्थान से ? तेरहवें गुणस्थान से और मरण की अपेक्षा कहां जायेगा चौथे में ? *श्रोता: नहीं*

जायेगा। नहीं जायेगा। चौथे में भी नहीं जायेगा, चलो बहुत अच्छा है साहब। अभी हमारे पं. बाबूभाईजी आये थे न, उन्होंने बहुत प्रसन्नता व्यक्त की लेकिन एक बात बहुत मार्मिक बतायी। भाई सिद्ध भगवान तो गुणस्थानातीत है, लेकिन मेरा स्वभाव भी गुणस्थानातीत है। यह जो बात हमें गुरुदेवश्री ने समझायी है आपने नहीं समझायी; मेरे को दम दिया जाते जाते। मैंने कहा आपके लिये रखा था वह हां। यह जो है न बार-बार आगम पढ़ते हुये अपने स्वरूप की तरफ आने की जो कला है वह देन तो गुरुदेवश्री की ही है। बाकी तो यहां शास्त्र पढ़ाते हैं, भाग जाते हैं। लेकिन वह जो कुछ बात है वह मेरे लिये है और मैं उसमें किसतरह फिट होता हूं यह बात उन्होंने हमें सिखायी।

कह रहे हैं **चौदहवें अयोगकेवली गुणस्थान से सिद्धदशा में ही ऊर्ध्वगमन होता है।** यह ऊर्ध्वगमन से मुझे एक बात याद आयी। हम जगह-जगह जब प्रवचन में जाते हैं, कई लोगों कि ऐसी प्ररूपणा है कि प्रत्येक जीव मरण के बाद पहले ऊपर ही जाता है और फिर बाद में जहां जाना है वहां जाता है क्योंकि उसका स्वभाव ऊर्ध्वगमन है। लेकिन ऐसा कहना बहुत ढाढ़स होगा। देखो सुभाषभाई मैं आपको बताऊंगा। कोई जीव यह लोकाकाश है न, उसके ऊपर एकदम जिसको हम कहते हैं द एण्ड ऑफ लोकाकाश वहां जो वायुकायिक जीव होगा और उसका मरण होकर यहां अपनी पहली पृथ्वी पर आना। मतलब जहां हम रहते हैं चित्रा पृथ्वी पर मनुष्यलोक में आयेगा; मरकर वहां से यहां दूसरा कोई एकेन्द्रिय होना है। तो वह कैसा ऊपर जायेगा ? कितना फीट जायेगा ? कितना योजन जायेगा ? जो ऋजुगति से जाता है वह नेसेसरीलि सीधा ही जाता है, ऐसा ऊपर थोड़े ही है ? आड़ा इस तरफ भी जा सकता है, इस तरफ भी जा सकता है, नीचे की तरफ भी जा सकता है। तो ऋजुगति या इषुगति जिसको हम कहते हैं तो ऊपर जावे और उसको नीचे आना हो तो कैसा आवे ? यानी एक मोड़ होगा, दो मोड़ होंगे। तो ऋजुगति अस्तित्व में ही नहीं रहेगी और जो लोकाकाश के अंत से ऊपर ही जायेगा तो अलोकाकाश में जावे तो जिनेन्द्र भगवान झूठे ठहरेंगे।

यहां लिखा है ऊर्ध्वगमन होता है लेकिन देखो भैया यह जब जीव सिद्धअवस्था प्राप्त करता है तो उसमें कौनसे गुण का अभी विभाव परिणमन चल रहा है ? बोलो अनिल जी सिद्धअवस्था प्राप्त किया हुआ जीव है उसके कौनसे गुणों में अभी विभाव परिणमन चल रहा है ? कौन बता रहे हैं ? बोलो बहन, हां, मैंने पूछा जिस जीव ने

सिद्धअवस्था प्राप्त की है यानी अभी यहां चौदहवें गुणस्थान से पार हो गये तो उनके कौनसे गुण का विभाव परिणमन चल रहा है ? *श्रोता: कोई नहीं।* कोई नहीं, तो भैया वहां ऊर्ध्वगमन स्वभाव का भी स्वभाव परिणमन होगा और जब वह संसारी है, इधर-उधर जाता है, घूमता है, मरण के बाद भी तो-तो वह ऊर्ध्वगमन स्वभाव का विभाव परिणमन चल रहा है और उधर आप स्वभाव परिणमन लगाओ तो कैसा ? यानी मुझे केवलज्ञान भी है क्योंकि वह मेरा स्वभाव है और बाद में मैं मतिज्ञान से जानता हूं ऐसा बोलना पड़ेगा। ऐसी प्ररूपणा करते हैं तो वहां जरा सावधान रहना हो। मैं तो गया था ३-४ जगह यही बात चली। क्या करें ? चलो, अभी हमने देखा कि यह ऊर्ध्वगमन सिर्फ सिद्ध दशा के प्रथम समय में ही होता है।

क्या कह रहे हैं ? सिद्धदशा में ही ऊर्ध्वगमन होता है **क्योंकि अब किसी भी प्रकार की कमी नहीं रही, जिसकी पूर्ति की जाये**। **आगमन** कहां से होगा ? **इस चौदहवें गुणस्थान में आगमन मात्र सयोगकेवली गुणस्थान से ही होता है** यानी तेरहवें से, **अन्य किसी भी गुणस्थान से नहीं।** अभी यहां विशेषता क्या-क्या है ? **अयोगकेवली गुणस्थान के उपांत्य समय में बहत्तर प्रकृतियों की निर्जरा अर्थात् क्षय हो जाता है और अंतिम समय में** ? तीर्थंकर प्रकृति लेते हुये टोटल ये ८५ प्रकृतियां कही हैं उसमें से **अंतिम समय में तेरह प्रकृतियों का** क्षय हो जाता है। और उसके एक समय पहले यानी लास्ट बट वन, यहां उपांत्य कहा है; उसमें क्या होता है ? यानी चौदहवें गुणस्थान के उपांत्य समय में बहत्तर प्रकृतियों का क्षय होता है और अंतिम समय में, जो लास्ट समय है वहां तेरह इसतरह टोटल ८५ प्रकृतियों का नाश हो जाता है। **इन कर्मों के नाश के समय ही संसार अवस्था का व्यय और सादि अनंत काल के लिये सिद्ध दशा का उत्पाद भी हो जाता है।**

अब **योग के अभाव के कारण अयोगकेवली को ईर्यापथास्रव भी नहीं होता,** क्योंकि उनके तो कषाय कबसे खत्म हो गये हैं, बाद में योग था वह भी तेरहवें गुणस्थान के अंत में खत्म होता है। **जो ग्यारहवें, बारहवें और तेरहवें में भी होता था** क्या ? ईर्यापथास्रव। अब चौथा पॉइंट देखेंगे- **पूर्ण संवर तथा पूर्ण निर्जरा भी अयोगकेवली को ही होती है। यहां प्रयुक्त अयोग शब्द** प्रयुक्त यानी जो युटिलाइझ किया गया - वापरा गया है। जो अयोग शब्द है वह **आदि दीपक है।** यानी वहां उसके पहले सारे योग सहित थे यह अयोग है। **स्वयं अयोगकेवली गुणस्थानवर्ती अरिहंत**

परमात्मा तो अयोगी हैं ही और यहां से उपरिम सिद्ध दशा अयोगरूप और अशरीरी ही है।

अब हम आयेंगे पेज नंबर २५५, किसी भी हालत में हमने आपके चौदह गुणस्थान पार कराये और आपको सिद्धअवस्था में, मुक्त अवस्था में ले आये हैं। अरे ! आप ही मुक्त नहीं हुये हैं मैं भी मुक्त हो गया हूं; क्योंकि हमें सबको, आपको- मुझे नहीं, यह चौदह गुणस्थान कब खत्म करेगा ? यह इतना चिटकता है एक ही गुणस्थान को, हां अरे ! नहीं भाई जो इम्पॉर्टंट-इम्पॉर्टंट बातें हैं उसको हम पकड़ते हुये आगे चढ़े हैं। अभी मैंने जो भी छोड़ा होगा वह आप घर में पढ़ लेना तो आपको पता लगेगा कि यह क्यों छोड़ा था। देखो, यहां पेज नंबर २५५ पर जो सिद्ध परमात्मा हैं उनके बारे में लिखा है, उनकी परिभाषा दी है। यहां कोई गुणस्थान है नहीं, वे गुणस्थानातीत हैं और हम सब स्वभाव से गुणस्थानातीत हैं यह बात भी अभी पं. बाबूभाई हमको बता गये।

आगे- **ज्ञानावरणादि अष्ट कर्म रहित** यानी हमारे सिद्ध भगवान के साथ कोई भी कर्म नहीं हैं। **अनंतसुखामृतस्वादि** क्या बात है ? यानी अनंत सुखामृत सुखरूप जो अमृत है उसका स्वाद लेनेवाले **परम शांतिमय** हैं, **मिथ्यादर्शनादि सर्व विकार रहित- निर्विकार** कोई विकार नहीं रहा। **नित्य, सम्यक्त्व आदि आठ प्रधान गुण संयुक्त** यह कौनसे गुण हैं ? कौन बतायेगा ? सम्यक्त्व आदि आठ गुण युक्त यह प्रधान गुण कहा इसका अर्थ क्या है कि उनके पास अनंत गुण हैं, परंतु मुख्य आठ गुण सिद्धों के कौनसे कहे जाते हैं ? कौन बताना चाहेगा ? महिलाओं में कोई ? बहन आपने खबर छे सिद्धोना आठ गुण ? मिसेस गांधी के बाजू में हां। सिद्धों के आठ गुण, अरे ! हम णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं कहते हैं अरे ! वाह रे वाह यह नहीं चलेगा साहब। हां बोलो। *श्रोता: सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, अव्याबाधत्व, सूक्ष्मत्व।* अभी आपको यह बताना है कि कौनसे कर्मों के अभाव में ये गुण प्रकट होते हैं। अवगाहनत्व कहो, सूक्ष्मत्व कहो ख्याल में आया ?

ये सब बातें हमें ज्ञात होनी चाहिये। नहीं तो हम तो क्या है ? यह पढ़ते हैं, हम वह पढ़ते हैं। अरे ! भैया तू तेरे स्वरूप के बारे में तो सोच। तुझे सिद्ध होना है कि नहीं ? मुक्त होना है कि नहीं ? जो अभी विद्यमान सिद्ध भगवान हैं उनके स्वरूप का ज्ञान होगा तो उनके जैसा होने की अंदर में उमंग जागृत होगी और हमें यही पता नहीं

है कि वे कैसे हैं तो खाली बोलने से थोड़े ही हम उन जैसे होनेवाले हैं ? यह सब कुछ हम जो देख रहे हैं, वह तो हमारे स्वतः के लिये है इतनी बात ध्यान रखना। यहां क्या बता रहे हैं ? सम्यक्त्व आदि आठ प्रधान गुण युक्त केवल आठ गुण नहीं बताये हैं, वे प्रधान हैं, बाकी हैं और; कितने हैं ? अनंत हैं।

अनंत शुद्ध पर्यायों से सहित, कृतकृत्य कृतकृत्य का अर्थ क्या है ? कि अभी करने जैसा कुछ बाकी ही नहीं है, जो करने योग्य था वह सब कर दिया। हम भी लौकिक में बोलते हैं न देखो साहब हमें तो क्या है ? सात बेटियां हैं। सबको अच्छे-अच्छे घर में ब्याह दिया। अभी तो हमारा कुछ काम बाकी नहीं रहा, हम अभी बस। *श्रोता: कृतकृत्य हो गये।* अच्छा कृतकृत्य हो गये। वह कृतकृत्य नहीं, वह करने लायक बात भी नहीं; क्या समझ में आया ? **लोकाग्रस्थित** यानी लोक के अग्रभाग में जो स्थित हैं, **वीतरागी** हैं, **सर्वज्ञ निकल परमात्मा को-** निकल यानी क्या साहब ? जो संसार से निकल गया है वह ? बहन आप जानती हैं निकल परमात्मा यानी क्या ? *श्रोता: शरीर से रहित।* अरे ! ठहरो बहन को पूछा मैंने जो बहन है वह बोले, भाई नहीं बोले। यह बात अभी लास्ट दिन में आखिरी लेक्चर में भी बोलना पड़े हां, अभी बोल दिया तो बोलो तो सही कम से कम। *श्रोता: शरीर से रहित।* कल यानी शरीर। सकल यानी शरीर सहित कौनसे परमात्मा होते हैं बोलो ? *श्रोता: अरिहंत।* अरिहंत और ये कौनसे हैं ? सिद्ध। वे कैसे हैं ? निकल यानी कल से रहित। यहां क्या कहा ? सर्वज्ञ निकल परमात्मा को **सिद्ध भगवान कहते हैं।** बात ख्याल में आयी ?

यह सिद्धों का गुणगान उन्होंने बताया है। अभी उनकी बहुत सारी बातें हैं। **गुणस्थानातीत सिद्ध भगवान को ही व्यवहारातीत, परमशुद्ध कार्यपरमात्मा, लोकाग्रवासी, संसारातीत**, **निरंजन** - निरंजन का अर्थ ? अंजन यानी मलिनता। निरंजन यानी जिनमें मलिनता अभी रही नहीं है, अंजन रहित हो गये। कालिमा रहित हुये। **निराकार** यह निराकार की बात भी हमने कही थी उसको हम रिपीट नहीं करेंगे। **निष्काम, निष्कर्म, साध्यपरमात्मा, परमसुखी, ज्ञानाकारी, ज्ञानशरीरी, चिरवासी, अशरीरी इत्यादि अनेक नाम हैं। इन्हें देह मुक्त भी कहते हैं।** अभी इन्होंने बहुत अच्छा बताया है भैया। **सम्यक्त्व अपेक्षा विचार** करेंगे- तीन सम्यक्त्व में से उनको कौनसा सम्यक्त्व होगा ? हां, साहब कौनसा बता रहे हैं आप ? *श्रोता: क्षायिक सम्यक्त्व।* यह हमारी इंगळेबहन तो वहां दूसरा क्लास चालू कर रही है। हां, क्या बता

रही हैं उनको ? मैंने क्या प्रश्न पूछा था ? आपको ही मैं पूछ रहा हूं। ध्यान देना हो, अभी २० मिनट बाकी हैं क्यों विचलित हो जाते हो ? सिद्ध भगवान को कौनसा सम्यक्त्व होगा ? औपशमिक क्या द्वितीयोपशम कौनसा ? *श्रोता: क्षायिक सम्यक्त्व।* वह बाजूवाली बोल रही इसलिये आप बोल रही हो। आपका निर्णय है क्या ? हां, वह कौनसा होगा ? *श्रोता: क्षायिक सम्यक्त्व।* क्षायिक होगा। देखो बहन ध्यान देना हो ।

यहां कह रहे हैं देखो, **क्षायिक सम्यक्त्व ही परमावगाढ़रूप नाम को प्राप्त होता है।** अवगाढ़ यानी अभी बिलकुल गाढ़ ऐसा है उनका तो। वैसे देखा जाये तो चतुर्थ गुणस्थानवर्ती क्षायिक सम्यक्त्वी है और सिद्धअवस्था का क्षायिक सम्यक्त्वी है उनकी श्रद्धा में कोई अंतर नहीं है; फिर भी सिद्ध भगवान का इसलिये उसको परमावगाढ़ कहा है। **सामान्य दृष्टि से** अरे ! लिखा ही है, **चौथे गुणस्थान में प्रगट होनेवाला सम्यक्त्व और सिद्ध-अवस्था का सम्यक्त्व दोनों समान हैं, यह कथन सत्य है। इसी विषय को विशेष अपेक्षा** से **सोचते हैं तो अंतर का भी हमें स्वीकार करना चाहिये। ज्ञान गुण कि अनंतता व्यक्त हो गयी** है, **चारित्र भी परिपूर्ण शुद्ध हो गया** है। **ऐसे अनेक सहचर गुणों की विशेषता से सम्यक्त्व में भी विशेषता कही जाती है; उसे भी मानना चाहिये; क्योंकि एक गुण की पर्याय, भेद अपेक्षा अन्य गुण की पर्याय से कथंचित् भिन्न होने पर भी सर्वथा भिन्न तो है नहीं।**

एक आत्मा के एक-एक प्रदेश में अनंत गुण और उनकी अनंत पर्यायें अविरोधरूप से रहते हैं। अभी चारित्र के बारे में क्या बताना चाहते हैं ? **चारित्र अपेक्षा विचार** करें तो इनको **परम यथाख्यातचारित्र होता है।** ये सिद्ध भगवान हैं उनका काल कितना होगा ? कौन बतायेगा ? आप बता रही हैं बोलो, जोर से बोलना। मैं जितना जोर से बोलने को रिक्वेस्ट कर रहा हूं उतना आप स्लो बोलती हैं। *श्रोता: सादि अनंतकाल।* हां, किसने बताया ? उन्होंने ही बताया चलो- सादि अनंतकाल। यह जघन्य होगा कि उत्कृष्ट होगा ? यह जघन्य होगा कि उत्कृष्ट ? अरे ! एक का सादिअनंत कहने से जघन्य उत्कृष्ट क्या है ? एक ही ऐसा काल होगा।

अब कहते हैं **गमनागमन की अपेक्षा** हम देखते हैं। सिद्ध भगवान जो हैं, वे कहां से आये हैं ? *श्रोता: चौदहवें गुणस्थान से।* चौदहवें गुणस्थान से और कहां जायेंगे ? कहीं नहीं जायेंगे। गमन कहीं नहीं है। देखो, एक-एक पॉइंट कितने अच्छे दिये

उन्होंने। गमनागमन- **सिद्ध अवस्था से ऊपर अन्य उत्कृष्ट अवस्था है ही नहीं; अतः सिद्ध जीव का अन्यत्र कहीं गमन होता नहीं है। इसलिये वे गमन रहित अवस्थित/स्थिर ही रहते हैं। आगमन- अयोगकेवली गुणस्थान से इस सिद्धावस्था में आगमन हुआ है, अन्य गुणस्थानों से यहां आगमन भी संभव नहीं है। विशेष अपेक्षा विचार** करते हैं- **यद्यपि अनंतानंत सिद्ध भगवानों के ज्ञानादि अनंतानंत गुणों की पर्यायों में किंचित भी अंतर नहीं है; तथापि व्यंजनपर्याय अर्थात् आकार में अंतर होता है।**

यह व्यंजनपर्याय क्या होती है ? दिलीपभाई आप जानते हैं ? *श्रोता: जिसका आकार लंबे समय तक रहे।* हां, यह व्यंजनपर्याय जो है वह कौनसे गुण की है साहब ? *श्रोता: प्रदेशत्व गुण की।* अरे ! चुप बैठो। *श्रोता: प्रदेशत्व गुण की।* हां बहुत अच्छा। यह प्रदेशत्व गुण कौनसे द्रव्य का विशेष गुण है ? आप बोलो बहन ? *श्रोता: सामान्य गुण है।* हां जी ? वह विशेष गुण नहीं है सुनना-सुनना, वह छह द्रव्यों का गुण है तो सामान्य गुण है। पहले आपको बोलना है कि वह सामान्य गुण है, विशेष गुण नहीं है। सामान्य गुण है तो छह ही द्रव्यों में पाया जाता है। देखो, यह सिद्धान्त प्रवेशिका काम करती है। ये छोटे-छोटे प्रश्न हैं। वह प्रदेशत्व गुण किसे कहते हैं ? जिस शक्ति के कारण प्रत्येक द्रव्य का कोई न कोई आकार हो। तो यहां सिद्धों को आकार होगा कि नहीं ? *श्रोता: होगा।* हां। तो उनको निराकार कहा न अभी तो ? अभी हमने बहुत नाम देखे न, उसमें तो उनको निराकार कहा। ऐसी कॉन्ट्रॅडिक्शन क्यों ? विरोधाभास क्यों ? इसकी भी यहां चर्चा हुई थी।

अरे भाई ! पूर्व में जैसे शरीर के निमित्त से आत्मप्रदेशों का आकार था वैसे अभी उन्हें आकार नहीं है। जो कोई उनका आकार है वह असंख्यात प्रदेशी ही है। अगर हम व्यवहार से कहें तो जो पूर्व शरीर था उससे किंचित न्यून, ख्याल में आया ? वह उपचार से कहा है भाई। क्या कहा ? यहां जो कह रहे हैं व्यंजनपर्याय यह प्रदेशत्व गुण की पर्याय है। उसमें सिद्धों में आकार की अपेक्षा से अंतर होगा। ख्याल में आया ? यहां कहते हैं **आकार में अंतर होता है** यानी हम तो जानते हैं न कि आदिनाथ भगवान का आकार और महावीर भगवान का आकार; उनसे किंचित न्यून आकार सिद्धों का होगा उसी जीव का, इसलिये उसमें अंतर है। **जीव स्वयं स्वभाव से तो अमूर्तिक है ही। अब सिद्ध दशा में शरीर का अभाव होने से सर्वथा तथा सदा के**

लिये निराकार एवं अमूर्तिक हो गये हैं।

देखो, **प्रदेशत्व सामान्य गुण की अपेक्षा से कोई न कोई आकार होना बात अलग है और शरीर के अभाव से निराकार होना अलग है। यह निराकारपना प्रदेशत्व गुण का ही कार्य है; तथापि उसे शरीर के अभाव की मुख्यता करके कहा है। इन दोनों के कथन में विरोध नहीं है। इस निराकारपने के कारण ही जिस आकाश के क्षेत्र में एक सिद्ध भगवान विराजमान हैं, उस ही आकाश के क्षेत्र में अन्य अनंत सिद्ध भगवान भी अपनी स्वतंत्र सत्ता से विराजते हैं। यह कार्य अवगाहनत्व प्रतिजीवी गुण का कार्य है।**

अब देखो यह २५९ पेज है न, वहां आठ कर्मों के नाम दिये हैं। उन आठ कर्मों का नाश जब होता है; तब कौनसे गुण प्रकट होते हैं ? गणेशजी गुण प्रकट होते होंगे ? सिद्धों को तो आठ गुण प्रकट हो गये बताया तो गुण प्रकट होते होंगे ? हां, प्रमोदजी आप क्या कह रहे हैं ? *श्रोता: आठ कर्मों का नाश होने के बाद आठ गुण प्रकट होते हैं।* आठ गुण प्रकट होते हैं वही तो मैं पूछ रहा हूं। गुण प्रकट होंगे कि नहीं ? आप कहते हैं, हां। *श्रोता: पर्याय प्रकट होती है गुण नहीं।* हां, देखो-देखो पंडितजी क्या बोल रहे हैं कि गुण नहीं प्रकट होते हैं, पर्यायें प्रकट होती हैं। परिपूर्ण स्वभावरूप पर्याय को गुण कहने में आया है; यह तो बात हुई थी साहब। हमने कहा था शास्त्र में कभी द्रव्य को गुण कहेंगे, पर्याय कहेंगे, कभी पर्याय को गुण कहेंगे, द्रव्य कहेंगे इसका एक्झॅम्पल भी मैंने दिया था।

ज्ञानावरण कर्म के अभाव से अनंतज्ञान प्रकट होता है। अनंतज्ञान जो है न, क्षायिकज्ञान जो है न, केवलज्ञान है यह भी पर्याय है। ज्ञान गुण की पांच पर्यायें हैं मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान और केवलज्ञान। तो वह पर्याय प्रकट हुयी न साहब ? अब कहते हैं **दर्शनावरण कर्म के अभाव से अनंतदर्शन** है। तीसरा जो पॉइंट है उसमें दो गुणों, दो कर्मों को साथ में लिया है **एक दर्शनमोहनीय कर्म के अभाव से क्षायिक सम्यक्त्व** और **चारित्रमोहनीय कर्म के अभाव में क्षायिकचारित्र** और इन दोनों का मिलकर उनको क्या होता है ? **अनंतसुख**।

अब चौथा **अंतराय कर्म के अभाव से अनंतवीर्य**। **वेदनीय कर्म के अभाव से अव्याबाधत्व** यानी अभी उनको कोई बाधा नहीं है बिलकुल कोई अभी उसमें

वेदनीय कर्म बाकी नहीं रहा है। **आयु कर्म के अभाव से अवगाहनत्व**। **नाम कर्म के अभाव से सूक्ष्मत्व** और **गोत्र कर्म के अभाव से अगुरुलघुत्व**। यह हमें बिलकुल ख्याल में होना चाहिये। नेक्स्ट टाइम पुछूंगा साहब मिलोगे तो गलती से। मिलेंगे कि नहीं ? अच्छा, यहां देखो हमें यह घातिकर्म के अभाव से तो फट से याद में आता है लेकिन यह जो बातें हैं बहुत आसान हैं। वेदनीयकर्म के क्या होता है ? कुछ ना कुछ हमें तकलीफ होती है। अभी यहां कोई बाधा ही नहीं रही है- अव्याबाधत्व। कोई तकलीफ ही नहीं रही है, ना बिमारी है, ना कुछ है, ना कुछ है। तो वह अव्याबाधत्व गुण प्रकट हुआ। अभी नामकर्म के कारण हमें शरीर आदि जो मिल रहा था वह भी उड़ गया तो अभी जो मूल है वह सूक्ष्मत्व है। आयुकर्म के अभाव से अवगाहनत्व यानी हमारी अवगाहना अपने स्वयं से है, कोई निमित्त नहीं है। इसलिये उसे कहते हैं आयुकर्म के अभाव से अवगाहनत्व और गोत्रकर्म के अभाव से कभी नीचगोत्र मिलता था कभी उच्चगोत्र मिलता था। अभी उसका अभाव हो गया तो हमारे में अगुरुलघुत्व।

अगुरुलघुत्व का अर्थ क्या है कि अ यानी नहीं; गुरु यानी बड़ापना यानी बड़ा होना नहीं और अलघु; यह अ है दो जगह लगाना है- अगुरु और अलघु तो क्या हुआ कि अभी उच्च-नीचवाली कोई दशा मुझे प्राप्त नहीं होनी है। मैं ना बड़ा होऊंगा, ना छोटा होऊंगा। मैं कैसा होऊंगा ? अगुरुलघुरूप होऊंगा। यह अगुरुलघु जैसा कोई शब्द आपको याद है ? कि जिसमें अ एक ही बार इस्तेमाल किया है ? शास्त्र में बहुत बार आता है। हां आप बतायेंगे ? क्या प्रश्न चाहिये आपको ? यहां अगुरुलघुत्व बताया, अगुरुलघु गुण भी आपको याद होगा; वैसा अ एक ही जगह लिखा है लेकिन उसका इस्तेमाल दो जगह होता है। कौन बताना चाहेगा ? हाथ उठायेंगे। *श्रोता: अनादिनिधन।* बहुत अच्छा, यह रोज का स्वाध्याय का फल है। क्यों रमेशभाई ? मुम्बई में रहेंगे तो वहां स्वाध्याय करेंगे। देवलाली में आयेंगे तो यहां स्वाध्याय करेंगे। चुपचाप बेठेंगे मेरे जैसी ज्यादा बकबक नहीं करेंगे। क्या बताया उन्होंने ? अनादिनिधन यानी क्या है ? अन् आदि यानी जिसको आदि नहीं और अनिधन यानी जिसको अंत भी नहीं, मरण भी नहीं। वह कैसा है ? अनादिनिधन। और काफी शब्द हैं, हां साहब ? *श्रोता: अबद्धस्पृष्ट।* हां समयसार के पाठियों के लिये उन्होंने एक शब्द बताया पंद्रहवीं गाथा में आता है अबद्धस्पृष्ट तो अबद्ध और अस्पृष्ट। बहुत जगह ऐसी बातें आती हैं भाई। ख्याल में आया ? आप ऐसा मत समझना कि हम केवल करणानुयोग को ही देखते हैं, समयसार

आदि को भी थोड़ा बहुत पढ़ा है, चलो।

सिद्धों का स्थान- बहुत अच्छी बात है, देखो, ये सिद्ध कहां विराजमान हैं ? तो सभी लोग क्या उत्तर देंगे ? सिद्धशिला पर विराजमान हैं। ऐसा ही समझती है न तू ? यहां कुछ अन्य बतायेंगे। देखो, **ईषत् प्राग्भार पृथ्वी** यह आठवीं पृथ्वी है, इसका नाम है ईषत् प्राग्भार। **के ठीक मध्य में रजतमय, दिव्य, सुंदर, दैदीप्यमान और सीधे रखे हुये अर्ध गोले के सदृश मोक्षशिला है। यह अत्यंत प्रभायुक्त उत्तान छत्राकार और मनुष्य लोक के सदृश ४५ लाख योजन विस्तारवाली है। इस शिला की मध्य की मोटाई आठ योजन है, आगे अंत पर्यंत क्रमशः हीन होती** जाती **है। सिद्धों का मोक्षशिला, यह स्थान व्यवहारनय से कहा गया है।** अभी इन्होंने क्या बताया ? **निश्चय से प्रत्येक सिद्ध भगवान अपने-अपने आत्मप्रदेशों में अवस्थित हैं।** देखो, अभी मैं जो चाहता था वह लिखा नहीं है।

असल में बात ऐसी है, यह पृथ्वी किसको कहना ? पृथ्वी किसको कहना ? पृथ्वी कहते हैं आप जो लोकाकाश देखते हो न यह फ्रंट साइड, लेकिन वह डेप्थ में ७ राजू और अंदर है, दक्षिणोत्तर ७ राजू है। यहां बता रहे हैं कि यह सामने से जो दिखाया है तो इसके ऊपर यहां पर आठवीं पृथ्वी है। यह पृथ्वी किसको कहना ? एज् टू एज् यानी लोकाकाश की एक ओर से बिलकुल आखिरी ओर तक जो होगी उसको पृथ्वी कहेंगे। यानी मैं क्या कहना चाहता हूं ? पृथ्वी जो होती है यह नीचे हम जहां रहते हैं उसके नीचे सात नरक हैं वहां टोटल सात पृथ्वी हैं और पूर्वपश्चिम और दक्षिणोत्तर पूरी की पूरी है। तो इस एण्ड से लेकर उस एण्ड तक पूरा जो एक एज् तो दूसरे एज् को जो चिपकी हुई है उसको पृथ्वी कहेंगे।

अब ये सात पृथ्वियां तो मध्यलोक से लेकर नीचे हैं। यह आठवीं पृथ्वी जो है वह ऊपर है। जितना हमारा मनुष्यलोक है, ४५ लाख योजनवाला उतनी ही वहां सिद्धशिला है। सिद्धशिला के ऊपर जो तीन वातवलय हैं उन वातवलयों में से जो आखिरी वातवलय है वह भी लोकाकाश में, लोकाकाश का ही भाग है। जो टॉप मोस्ट वातवलय है वहां इन सब सिद्धों के सिर चिपके हुये हैं। हम जो मनुष्यगति के जीव हैं कोई पांच फीटवाला होगा, कोई छह फीटवाला होगा, कोई और अन्य कितना भी ऊंचाई होगा सबके पैर एक लेव्हल में हैं और सिद्धों के ? *श्रोता: सिद्धों के सिर।* हां

और सिद्धों के सिर सबके एक लेव्हल में हैं। अभी मान लेते हैं कि हमारे आदिनाथ भगवान हैं ५०० धनुषवाले मान लेते हैं हो और उनके सामने हमारे महावीर भगवान सात हाथ; उनके सिर एक लेव्हल में हैं। इसतरह कोई पद्मासनस्थ है, कोई खड्गासनस्थ है, जैसे जो आखिरी अवस्था में उनका योगनिरोध होगा।

वह सिद्धशिला जिसको आप कह रहे हो या मानते हो वहां से बहुत ऊंचा है यह अंतिम वातवलय। इन्होंने एक बात बतायी यह सिद्धशिला ४५ लाख योजन विस्तारवाली है और कहते हैं जैसी कोई मौसम्बी होती है उसके दो टुकड़े करेंगे तो ऐसी ऊपर से सीधी और नीचे से गोलाकार, हां ऐसी है कोई ऐसा मानते हैं। कोई कहते हैं ऐसी है। लेकिन है कैसी ? वह भी उन्होंने बताया है, दोनों तरफ से उन्होंने बताया है। यह जो सिद्धशिला है न, वह ऐसी कितनी है ? ऐसी ४५ लाख योजन और उसकी मोटाई है आठ योजन। १ मिलीमीटर इज ईक्वल टू १ योजन मान लेंगे, ४५ लाख मिलीमीटर यानी ४.५ किलोमीटर इतनी तो उसकी चौड़ाई है मान लो और मोटाई कितनी ? ८ मिलीमीटर। तो उसका कर्व्हेचर कितना होगा ? यानी उसकी नीचे की गोलाई नहीं के बराबर होगी। पेपरथिन जैसा आखिरी में हो जायेगा।

कुछ लोग कहते हैं छतरी जैसी उलटी रखी है, लेकिन ऐसा कुछ नहीं है। यह शास्त्रों में कथन है उसके अनुसार वास्तविकता यह है कि वह सेंटर में मोटाई यहां लिखी है साहब आठ योजन की और बिलकुल ऐसी है। हम तो जब सिद्धशिला बतानी है तो चांद जैसी बता देते हैं और कई-कई जगह उलटा चांद भी दिखाते हैं। यह झगड़े में नहीं पड़ना लेकिन वास्तविकता जो यहां पर बतायी जा रही है या मैं जो आपको बता रहा हूं वह त्रिलोकसार आदि की अपेक्षा से बता रहा हूं। इसतरह क्या कहते हैं ? यह ४५ लाख योजन विस्तारवाली है, उसके ऊपर अंतिम वातवलय में हमारे सिद्ध भगवान विराजमान हैं। उनका यह भी बहुत वर्णन आता है लेकिन अभी तो समय खत्म हो गया है और पुस्तक भी खत्म हो गयी।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।